चीनी जनता के जनतंत्र की स्थापना

★

(कॉ. माओ त्से-तुंग का ऐलान)

" हम चीन में जनता के जनतंत्र की स्थापना का ऐलान करते हैं'। अबसे हमारा राष्ट्र नसार के शान्ति और स्वाधीनता-प्रेमी राष्ट्रों के बड़े कुटुम्ब का अग होगा। वह अपनी सस्कृति और खुशहाली का निर्माण करने के लिये साहसपूर्वक और मेहनत से काम करेगा और साथ ही साथ ससार की शान्ति और आजादी को आगे बढ़ायेगा। हमारा राष्ट्र अब कभी भी बेइज्जत न होगा। हम उठकर खड़े हो चुके हैं। सारे ससार की आम जनता ने हमारी क्रान्ति का समर्थन और अभिनन्दन किया है और ससार के हर देश मे हमारे मित्र हैं।

" जनता की क्रान्ति की विजय के फलों की रक्षा करने के लिये और विदेशी तथा देशी शत्रुओं की फिर से सत्ता हथियाने की साजिशों को खतम करने के लिये जनता के जनवादी अभिनायकत्व की हमारी राज्य-व्यवस्था एक शक्तिशाली हथियार है। इस हथियारको हमे मजबूती से सम्हालना है। अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में हमको शान्ति और आजादी चाहनेवाले तमाम देशों और जनता के साथ और सबसे पहले सोवियत सघ और नये जनवादी देशों के साथ मिलकर खड़ा होना चाहिये। इस तरह हम जनता की क्रान्ति की विजय के फलों की रक्षा करने और देशी तथा विदेशी शत्रुओं की फिर से सत्ता हथियाने की साजिशों को खतम करने के अपने सघर्ष में अकेले न होंगे। जबतक हम जनता के जनवादी अधिनाकयत्व को कायम रखेंगे और अपने अन्तरराष्ट्रीय मित्रो के साथ मिलकर खड़े होंगे तब तक हम सदा-सर्वदा विजयी होंगे। "

(चीनी जनता की राजनीतिक सलाहकार काउसिल की पूरी बैठक के सामने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के अध्यक्ष कॉ. माओ त्से-तुंग द्वारा २१ सितम्बर को दिये गये उद्घाटन भाषण का अश)

अक्तूबर, १९४९ मूल्य ६ आना

चन्दा :

वार्षिक ४ रु. ८ आना छमाही २ रु ४ आना तिमाही १ रु २ आना

भारत में भाषाकी समस्या

लेखक: रामविलास शर्मा

(बहस के लिये लेख)

(१) भाषाकी समस्या का महत्व—साधारण रूप से

भाषा की समस्या मजदूर-वर्ग, उसकी पार्टी, तमाम मेहनतकश जनता और प्रगतिशील बुद्धिजीवियों के लिये इसलिये महत्वपूर्ण है कि लेनिन के शब्दों में " भाषा मनुष्य के परस्पर व्यवहार का सबसे महत्वपूर्ण साधन है।" (लेनिन, जातियों के आत्म निर्णय का अधिकार, अं. सं., पृष्ठ १०)

उसका महत्व सामाजिक विकासकी अलग-अलग मंजिलों में बदलता रहता है।

पूँजीवाद से पहले की मंजिल में समाज के दादा-पंथी और सामंती-रिश्ते जिस हद तक अलग-अलग सामाजिक गुटों को एक जाति के रूप में संगठित होने से रोकते हैं, उस हद तक वे आधुनिक भाषाओं की बढ़ती में भी रुकावट डालते हैं। पूँजीवाद जातियों के संगठन में वस्तुगत रूप से एक प्रगतिशील भूमिका पूरी करता है और इसलिये वह आधुनिक भाषाओं के विकास में एक प्रगतिशील भूमिका पूरी करता है।

इससे यह बात साफ हो जाती है कि जातियों के सवाल और भाषाओं के सवाल में बहुत नज़दीकी सम्बंध है। इससे यह जाहिर हो जाता है कि लोगों के सामाजिक विकास में और उस विकास के सांस्कृतिक रूप यानी भाषा में आपसी सम्बंध कितना गहरा है। लेकिन भाषा सामाजिक विकास का प्रतिबिम्ब ही नहीं है, वह अपनी तरफ से उस सामाजिक विकास की रूपरेखा भी बनाती है। इसका मतलब यह हुआ कि भाषाका महत्व सांस्कृतिक और सामाजिक, दोनों है।

सामन्तवादपर पूंजीवाद की फतह के साथ जातियों के बनने में भाषा जो भूमिका पूरी करती है, उसपर लेनिनने यह लिखा था:

> "तमाम दुनिया में सामन्तवादपर पूंजीवाद की आखिरी फ़तह का ज़माना जातीय आन्दोलनों के साथ जुड़ा रहा है। इन आन्दोलनों का आर्थिक आधार यह

बात है कि बिकाऊ माल की पूरी जीत के लिये पूंजीपति वर्गको घरेलू बाजार पर हावी होना चाहिये, उसके लिये राजनीतिक रूपसे सयुक्त प्रदेश होने चाहिये जहांके लोग एक ही भाषा बोलते हैं। उसके लिये जरूरी होता है कि इस भाषा के विकास में और साहित्य में उसे प्रतिष्ठित करने में जो भी रुकावटें हों उन्हें दूर कर दिया जाय। *भाषा मनुष्य के परस्पर व्यवहार का सबसे महत्वपूर्ण साधन है।* भाषा की एकता और उसका बेरोक विकास सबसे जरूरी शर्तें हैं जिनसे कि आधुनिक पूँजीवाद के पैमाने पर दरअसल आजाद और विस्तृत व्यापारी कारबार फैलाया जा सके, जिनसे कि आबादी को अलग-अलग दलों में मोटे तौर पर और आजादी से जमातों में बाँधा जा सके, जिनसे कि बाजार और खरे मालिकों मे चाहे वह छोटे हों या बड़े और ग्राहक और माल बेचने वाले मे नजदीकी सम्बंध क़ायम किया जा सके।" (लेनिन, **जातियोंके आत्मनिर्णय का विकास**, अ. स., पृष्ठ १०)

यहाँ पर लेनिनने आधुनिक भाषाओंके विकासका आर्थिक आधार जाहिर कर दिया है। पूँजीवादी सामाजिक विकासकी जरूरत, फैले हुये व्यापारके कारबारके संगठनकी जरूरत, घरेलू बाजारको बाँधनेकी जरूरत, संक्षेपमें जातीय पैमाने पर समाजके पूँजीवादी रिश्तेके सगठनोंकी जरूरत, भाषाकी एकता और उसके विकासके सिलसिले को आगे बढ़ाती है। इससे पता चलता है कि उठते हुये पूँजीपति वर्गके खुद अपने विकासके लिये भाषा का महत्व होता है। आधुनिक जातियोंके विकासकी हम कल्पना नहीं कर सकते अगर भाषाकी एकता और उसका विकास न हो।

मार्क्सवाद और जातियों का सवाल में स्तालिन ने बताया है कि वे जातियाँ जो समाज के पूँजीवादी विकासमें पीछे रह गयी, जिन्हें बहुजातीय पूंजीवादी राज्य में अपनी रियासत बनाने का हक नहीं मिला वे सतायी गयीं; और वह जाति जो समाज के पूंजीवादी विकास में आगे बढ़ गयी थी, वह उनपर हावी होकर उनका शोषण करने लगी। यह जातीय-उत्पीड़न गैर-रूसी जातियोंकी जबानोंके दबानेके रूप में सामने आया। अपनी भाषा को इस्तेमाल करने का हक पाने के लिये सघर्ष जातीय आन्दोलन का अग बन गया। पीड़ित जातिका पूँजीपति वर्ग तमाम जनता को जाति के मसले पर अपने फायदेके लिये बटोरने की कोशिश करता है। भाषा के मसले पर भी वह यही करने की कोशिश करता है। लेकिन भाषा की समस्या पीड़ित जाति के मजदूर-वर्गके लिये भी महत्वपूर्ण होती है। स्तालिनने कहा है :

> "अगर तातार या यहूदी मजदूरको मीटिंगों और लेक्चरोंमें अपनी भाषा इस्तेमाल करने की इजाजत न हो और अगर उसके स्कूल बंद कर दिये जायें तो उसके बौद्धिक विकासकी संभावना नहीं है।" (स्तालिन—**मार्क्सवाद और जातियों सवाल**, पृ. २६)

इस तरह से यह खुद मजदूर-वर्ग के हितमें है कि वह स्कूलों, लेक्चरों, अखबारों वगैरामें अपनी भाषा इस्तेमाल करने के हक के लिये लड़े।

स्तालिन ने हमें यह भी बताया है कि जातीय उत्पीड़न से पूँजीपति वर्ग के लिये मजदूर-तबके को गुमराह करना किस तरह आसान हो जाता है। पूँजीपति-वर्ग यह समझाना चाहता है कि एक ही जाति के शोषक और शोषितों के हित एक से हैं, जातियों का सवाल समाजकी मुख्य समस्याओंसे ध्यान बँटाता है। जातियोंके सवाल के सिलसिले में जिस हद तक भाषा का सवाल महत्वपूर्ण होता है, उस हद तक भाषा की समस्या मजदूर वर्ग को इनकलाब के रास्ते से हटानेके लिये पूँजीपतियों के हाथ में स्पष्ट रूप से एक हथियार बन जाती है। लेनिन और स्तालिन के नेतृत्व में बोल्शेविक पार्टी ने जार-शाही रूस की तमाम जातियों के आत्म-निर्णय के अधिकार का ऐलान किया। इससे पूँजीकी अन्तरराष्ट्रीय एकता के मुकाबले में मजदूर वर्ग की अन्तरराष्ट्रीय एकता कायम होती थी। जातियों के आत्म-निर्णयके अधिकार में हर जातिका यह हक भी शामिल था कि तमाम राजनीतिक और सांस्कृतिक कामों के लिये वह अपनी भाषाओं का इस्तेमाल करे।

समाजवादी क्रांति की जीत होने के बाद भाषाकी समस्या का महत्व कम नहीं हो गया। इसके बदले वह और बढ़ गया।

भाषा की समस्या का महत्व इसलिये बढ़ गया कि वे जातियाँ जिन्हें हावी होने वाली जाति के पूँजीपति और जमींदार गुलाम बनाये हुये थे, उन्हें समाजवादी क्रांतिसे यह मौका मिला कि बेरोक टोक और आजादीसे आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक उन्नति करें। जातियोंका खुद-मुख्तारीका हक अमलमें लानेके लिये अपनी जातीय भाषाको इस्तेमाल करने और उसे विकसित करनेके सवाल महत्वपूर्ण होकर सामने आये।

स्तालिनने सोवियत खुद-मुख्तारीके शासनको अमलमें लानेके लिये जातियोंकी भाषाओंके महत्व पर इस तरहसे जोर डाला था :

> "सोवियत खुद-मुख़्तारी कोई हवाई या बनावटी चीज नहीं है। वह कोई खोखला और दिखाऊ वादा हो, यह तो और भी नहीं। सोवियत खुद-मुख्तारी केन्द्रीय रूस से सरहदी इलाकोंको जोड़नेका सबसे यथार्थवादी और ठोस तरीका है। इस बातसे कोई इन्कार न करेगा कि यूक्रेन, आजरबैजान, तुर्किस्तान, किरगीज प्रजातंत्र, बाशकीर प्रजातंत्र, तातार प्रजातंत्र और दूसरे सरहदी इलाके अपने आवाम की माली तौर पर खुशहाली और सांस्कृतिक उन्नति की कोशिश कर रहे हैं, इसलिये उनके अपने जातीय स्कूल, कचहरी, सरकारी संस्थायें, शासन की संस्थायें मुख्य तौर से वहीं की जनता के जरिये चलायी जानी चाहिये। इसके अलावा यह **सोचा नहीं जा सकता** कि मुकामी स्कूलों के विस्तृत संगठन के बिना, वहाँकी जनता की जिन्दगी और जबान को जानने-पहचानने वाले लोगोंमें से शासन और सरकार की संस्थाये,

अदालतें वगैरा संगठित किये विना, इन इलाकों को हम दरअसल सोवियत इलाका वना सकते हैं और उन्हें सोवियत इलाका वना कर केन्द्रीय रूपसे जोडते हुये एक राज्य वना सकते हैं। लेकिन उन जातियों की जवान में स्कूल, कचहरी, शासन और सरकार की संस्थायें चलाने का मतलव यही होता कि सोवियत खुद-मुख्तारीको अमलमे लायें। इसका सबब यह है कि सोवियत खुद-मुख्तारी इन तमाम संस्थाओं का जोड़ है जो यूक्रेनी, तुर्किस्तानी या किरगिज लिवास में हैं।" (स्तालिन, **मार्क्सवाद और जातियों और उपनिवेशों का सवाल,**—लॅारेन्स और विशार्ट स., पृष्ठ २४)

ऊपर की वात से जाहिर है कि स्कूल, अदालत, सरकारी सस्थाओं वगैरा में जातियों की अपनी ज़वान इस्तेमाल किये विना सोवियत खुद-मुख्तारी अमल में नहीं आ सकती। इससे जाहिर होता है कि सोवियत क्रांति की विजय के वाद भाषा की समस्या का महत्व क्या होता है।

यह कहा जा सकता है कि सोवियत क्रान्तिकी विजय के वाद भाषाकी समस्या कोई समस्या नहीं रह जाती। एक जाति अपनी भाषा का इस्तेमाल करे उसके इस हकपर अंगुली उठाने वाला कोई नहीं रह जाता।

इसका जवाव यह है कि समाजवादी क्रान्ति की जीत के वाद जातियों का सवाल, सवाल की हैसियत से खतम नही हो गया। इसके वदले १९३४ तक में स्तालिनने आगाह किया कि जातियों के सवाल पर पूँजीवादी तलछट किस तरह जमा रहती है।

उन्होंने कहा था :—

> "मैंने पूँजीवादी तलछट जमा रहनेका जिक्र किया। इस वात पर ध्यान देना चाहिये कि और किसी मसले के मुकावले में जातियों के सवाल पर लोगों के दिमाग में पूँजीवादी तलछट ज़्यादा सख्ती से जमा रहती है। यह तलछट ज़्यादा सख्ती से यों जमा रहती है कि वह अपने को जातीय लिवास में छिपा लेती है।" (स्तालिन—**मार्क्सवाद और जातियों और उपनिवेशों का सवाल**, पृष्ठ २६७)

जातियों के सवाल पर पूँजीवादी तलछट वड़ी जातियों और छोटी जातियों, दोनों ही तरह की जातियों की अध-राष्ट्रवादी प्रवृत्तियों की शक्ल में जाहिर होती है। एक तरफ ऐसे लोग थे जो इस वात से इन्कार करते थे कि यूक्रेनी जाति के नाम की भी कोई चीज है और जो कहते थे कि वोल्शेविक पार्टी इस जातिको नकली तौर पर गढ़ रही है। ऐसे लोग वोल्शेविक पार्टी के वाहर ही नहीं थे, उसके अन्दर भी थे। (देखिये, **मार्क्सवाद और जातियों और उपनिवेशों का सवाल**, पृष्ठ ११०)

ऐसे लोग वे थे जो यह दलील पेश करते थे कि "समाजवाद की जीत के वाद सव जातियाँ मिलकर एक हो जायेंगी और उनकी अपनी ज़वानें एक आम ज़वान वन

जायेंगी, इसलिये वक्त आ गया है कि जातियों के भेद खत्म कर दिये जायें और उन जातियोंकी संस्कृति को विकसित करने और पालने-पोसने की नीति छोड़ दी जाए जो पहले पीड़ित थीं।" (उपरोक्त, पृष्ठ २५६) स्तालिनने जातियों के सवाल पर इस गुमराही के बारे में कहा था कि वह "बड़ी रूसी जाति के राष्ट्रवाद की सबसे चालाक और इसलिये सबसे खतरनाक शकल" थी। (उपरोक्त, पृष्ठ, २५६)

दूसरी तरफ ग़ैर रूसी जातियों के अन्दर ऐसे लोग थे जो इस बात की मांग करते थे कि उनके मजदूर वर्ग की संस्कृति को रूसी मजदूर-तबके की संस्कृति से जुदा कर दिया जाए। कम्युनिस्ट खिलेवोइ ने यह माँग की थी कि "मजदूर वर्ग को तुरन्त गैर-रूसी बनाया जाए" और यह खयाल जाहिर किया था कि "यूक्रेनी कविता जितनी जल्दी हो सके रूसी साहित्य और उसकी शैली से पिण्ड छुड़ा ले।" (उपरोक्त, पृष्ठ २३०) स्तालिन ने इस बात पर जोर दिया कि ऐसे चरमपंथी रुझान रोके जाएँ जिनसे कि "उदीयमान यूक्रेनी संस्कृति और समाजी जीवन सोवियत संस्कृति और सोवियत समाजी जीवन बन सके।" (उपरोक्त, पृष्ठ २३१)

इस तरह से समाजवादी क्रान्ति की जीत के बाद भी जातियों के सवाल पर और इसलिये भाषा के सवाल पर भी अंध-राष्ट्रवाद का खतरा बना रहा। शोषक-वर्ग राजनीतिक और आर्थिक रूप से हरा दिये गये थे इसलिये अंध-राष्ट्रवाद ज़्यादा चतुर और खतरनाक जातीय और सांस्कृतिक रूप अपनाने लगा।

मजदूर वर्गके लिये जरूरी है कि भाषाके सवालका यह दोहरा अर्थ आंके। एक तरफ अपने राजनीतिक और आर्थिक विकासके लिये उसका महत्व समझे और दूसरी तरफ़ यह भी देखे कि क्रान्तिके खिलाफ पूँजीपति-वर्ग उसे गुमराहीका साधन बनाता है।

पूँजीवादसे पहलेके समाजमें मुख्य काम यह होता है कि सामन्ती अलगावके खिलाफ भाषाकी एकताके लिये लड़ा जाये। इस काममें आगे बढ़ी हुई जातिके मजदूर वर्गको जहाँ तक हो सके पिछड़ी हुई जातिके लोगोंकी मदद करनी चाहिये ताकि वे अपने संगठनका काम पूरा कर सकें।

ऐसी जातियों में जो औद्योगिक विकास की मंजिल पार कर चुके हैं लेकिन जिन्हें अपनी भाषा इस्तेमाल करने का हक नहीं मिला, उनके और उन पर हावी होनेवाली जाति के मजदूर-वर्ग का यह फ़र्ज है कि उनकी भाषाको इस्तेमाल करने के हक के लिये अवाम की जनवादी क्रान्ति के आम ढाँचे के लिये लड़ें। पूँजीपतियों पर मजदूर वर्ग की जीतके पहले और बाद भी यह जरूरी होता है कि भाषा के सवाल पर उन छोटी-बड़ी जातियों के अंध-राष्ट्रवाद से गुमराह होने से सावधान रहें।

आम तौर से भाषा की समस्या का यह महत्व है।

(२) भारत में भाषाकी समस्या का विशेष महत्व

भारत में भाषा की समस्या का महत्व सबसे पहले उस संघर्ष के सिलसिले में रहा है जिसे हिन्दुस्तान के तमाम लोग ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ़ करते रहे हैं।

ब्रिटिश साम्राज्यवाद ने हिन्दुस्तान में अंग्रेजी को एक लाजिमी राष्ट्रभाषा इस-लिये बनाया था कि वह जनता के शोषण करने का मतलब पूरा करे। इस तरह उसने हिन्दुस्तान की जातियों की भाषाओं के विकास में बाधा डाली। आजादी की लड़ाईके दौर में बार-बार यह मांग पेश की गयी कि स्कूल, कचहरी, शासन संस्थाओं वगैरा में अंग्रेजी के बदले उनकी भाषा चालू हो, जातीय इलाकोंकी जगह ले। यह सवाल अब भी लोगोंमें सरगर्मी पैदा करता है और १९४७ के राजनीतिक हेर-फेरसे उसका हल कहीं नजदीक नहीं आया।

हिन्दुस्तानमें भाषाका सवाल इसलिये और महत्वपूर्ण बन गया है कि हिन्दी, उर्दू या हिन्दुस्तानीमें किसको राज–भाषा बनाया जाए।

[१] हिन्दुस्तानी इलाकेकी राजभाषा और [२] समूचे हिन्दुस्तानकी राज भाषा इनमें से कौन हो। भाषाकी समस्याके इस पहलूपर सबसे ज़्यादा गर्म बहसें हुईं। ऊँचे तबकोंने हिन्दी–उर्दूके सवालको अपना प्रमुख सांस्कृतिक हथियार बनाया जिससे कि सबसे जरूरी सामाजिक समस्याओंकी तरफसे जनताका ध्यान हट जाए। इस सवालसे खास तौरसे यह काम लिया जाता है कि लोगोंके सम्प्रदायी भाव जगाये जाएँ। इस तरह हिन्दुस्तान में (और जाहिर है, पाकिस्तान में भी) इस सवाल के जरिये सबसे ज़्यादा प्रतिक्रियावादी गुटों और वर्गोंने अपना मतलब गाँठा है।

हिन्दी–उर्दू के सवाल के अलावा हिन्दुस्तान जैसे बहुजातीय देश में भाषा का सवाल महत्वपूर्ण होता है, राजभाषा पद किसी भी जबान को क्यों न दिया जाए। यह सवाल इसलिये महत्वपूर्ण है कि तमाम पूँजीवादी बहुजातीय राज्योंका अनुभव यही बताता है कि लाज़िमी राजभाषा दूसरी जातियों के इस हक पर रोक लगाती है और अकसर उसे खत्म ही कर देती है कि वे अपने राजनीतिक और सांस्कृतिक कामोंमें अपनी जबान इस्तेमाल करें। इसलिये हिन्दुस्तान में राष्ट्रभाषा का सवाल वर्ग आधार पर एक नया महत्व जाहिर करता है जब हम इस सिलसिले में उसपर गौर करते हैं कि हावी होनेवाला पूँजीवादी गुट दूसरी जातियों और जातीय गुटों की तरफ किस तरह के सम्बंध कायम करता है।

इसके बाद भाषा की समस्या उन लोगों के लिये महत्वपूर्ण है जो ऐसे इलाक़ों में रहते हैं जिनकी सीमायें निश्चित हो गयी हैं, जो मिली-जुली बोलियों में बात करते हैं, जहां सामंती रिश्ते अभी भी हावी हैं और इसलिये जहां पर जातीय इलाकेकी अपनी टकसाली जबान नहीं बन पायी। इस तरह के इलाके राजस्थान, पहाड़ी बोलियों वाले हिमालय की तराई के इलाके वगैरा हैं।

भाषा की समस्या उन पिछड़े हुए जातीय और कबीलों के लिये महत्वपूर्ण है जो देश के पूँजीवादी गुटों का शिकार हैं और जिन्हें अपनी भाषा के इस्तेमाल करने का हक तो दिया ही नहीं गया, उनकी भाषा के अस्तित्व से भी इंकार किया जाता है।

हिन्दुस्तानी भाषा की समस्या के अलग-अलग पहलू इतने ही नहीं हैं। लेकिन इनसे जाहिर हो जायेगा कि मजदूर वर्ग और उसकी पार्टी को क्यों इस सवालपर ध्यान देना चाहिये, खुद अपने सांस्कृतिक विकास के वर्ग हित के लिये और इसलिये भी कि इस सवालपर धनी-वर्गों के प्रतिक्रियावादी भटकाव को खत्म किया जाय।

(३) ब्रिटिश साम्राज्यवाद और राज-भाषाके रूपमें अंग्रेज़ी की भूमिका

शिक्षा और संस्कृति के मामलों में ब्रिटिश साम्राज्यवाद की नीति यह रही है कि आम जनता को पिछड़ा हुआ और जाहिल बना कर रखे। उसने अंग्रेजी को एक लाज़िमी विषय बनाया था और शिक्षा देनेका अनिवार्य माध्यम करार दिया था जिससे कि हुकूमतके लिये क्लर्कों की फौज तैयार हो सके। पश्चिमी विचारधारा के सम्पर्क से हिन्दुस्तान की जबानों और उनके साहित्यको जो भी फायदा पहुँचा वह सीधे तौर पर नहीं पहुँचा और न वह फायदा ऐसा था जिसे साम्राज्यवादी शासक कभी भी चाहते थे। लगातार इस बात का प्रचार किया जाता था कि हिन्दुस्तान भाषा के लिहाज से एक चिड़ियाघर है और वहां जो कुछ एकता है वह इसलिये कि अंग्रेजीने राष्ट्र-भाषा बनकर एकता कायम की। ब्रिटिश साम्राज्यवाद की इस थीसिस को योरप के नामी-गरामी भाषा वैज्ञानिकों ने स्वीकार किया, इसलिये और भी कि वे अपने उपनिवेशों में यही खेल खेल रहे थे। फ्रांसीसी भाषा वैज्ञानिक मेइयेने घोषणा कर दी थी, "हिन्दुस्तान में अंग्रेजी एक-मात्र सभ्यता की जबान है, एकमात्र भाषा है जो सारे देशमें समान रूप से काम आती है।" (अ. मेइये—**नये योरप में भाषायें**, पेरिस १९१८, पेज ३३) इसी तरह अलजीरिया में फ्रांसीसी जबान के लिये और काकेशश प्रदेश में रूसी भाषा के लिये उसने यही दावा किया था।

हिन्दुस्तानी जनताने यह मांग की कि उसकी अपनी भाषा स्कूल, कचहरी, शासन-संस्था वगैरामें अंग्रेजी की जगह ले। यह एक बिलकुल वाजिब मांग थी और जिसके लिये उम्मीद की जाती थी कि १९४७ में "आजादी" पाने के बाद राष्ट्रीय नेता उसे पूरा करेंगे। लेकिन कई कारणों से वे इसे पूरा नहीं कर पाये। सबसे पहला कारण यह है कि अक्सर उन पर अंग्रेजियत हावी होती है और हिन्दुस्तानी जबानों की बढ़तीके लिये उन्होंने सबसे कम काम किया है। दूसरा कारण यह है कि वे जातीय भाषाओं को संस्कृत-गर्भित करने की नीतिपर चल रहे हैं जिससे कि आम जनता देश के राजनीतिक और सांस्कृतिक कामों में हिस्सा न ले सके। जब यह उलूल-जलूल संस्कृत-गर्भित भाषा मजाक की चीज़ बनती है और लोगों का उसपर हंसना लाज़िमी होता है तो राष्ट्रीय नेता एक सर्द आह भरते हैं और फिर मायूसी के आलम में अंग्रेजी की तरफ लौट चलते हैं। दलील यह होती है कि उसे पाँच या दस साल तक और कायम रहना चाहिये। उद्योग-धंधों का दस

(पृष्ठ ४१ पर देखिये)

पूँजीवादी देशोंमें मुद्राका मूल्यकाट

एन. सरजिएवा

वाशिंगटन में ब्रिटिश (क्रिप्स और बेविन) और अमरीकियों (एचीसन और स्नाइडर) के बीच आर्थिक मसलेपर बातचीत से पहले वादा किया गया था कि विश्वास और दृढ़ता फिर कायम की जायगी। मगर उसका नतीजा उल्टा ही —यानी एक आर्थिक भूकम्प हुआ। १८ सितम्बर को स्टर्लिंग (पौण्ड—ब्रिटिश सिक्का) का मूल्यकाट कर दिया गया। पौण्डके मूल्य में जितनी कटौती की गयी उतनी, जाहिर है, अन्तरराष्ट्रीय धन-बाजारने सोची भी न थी। ३० फीसदी से अधिक की कटौती की गयी। अब पौण्ड ४.०३ डालर के बजाय २.८० डालर के बराबर है।

खुद तेजी के साथ नीचे गिरने के साथ-साथ स्टर्लिंग ने ब्रिटिश डोमीनियनों और उपनिवेशों, मार्शलीकृत देशों, स्टर्लिंग क्षेत्र के देशों आदि की मुद्राओं को भी अपने साथ घसीटा। दो-तीन दिन के भीतर ही २३ पूँजीवादी देशों ने, जिनमें फ्रांस, कनाडा, स्वीडन, नीदरलैण्ड, डेनमार्क, फिनलैण्ड, भारत और इटली शामिल हैं, अपनी मुद्राओं की परिवर्तन दर कम कर दी। दिखायी देता है कि दूसरे पूँजीवादी देश भी इस लहर में खिंच जायेंगे। स्टॉक एक्सचेन्जों और बिजिनेस केन्द्रों में उथल-पुथल मची हुई है। कीमतों की अवश्यम्भावी बढ़ती की उम्मीद में सट्टेबाज माल को खरीद रहे हैं और वैटिकन (चर्च) के एजेन्ट सोने के सिक्के बटोर रहे हैं।

लगभग दो दर्जन मुद्राओं का मूल्यकाट एक भारी अन्तरराष्ट्रीय महत्व की घटना है। उसके बेहिसाब नतीजे होंगे जिन्हें अभी पूरी तरह आंका नहीं जा सकता। मगर कुछ पहलू तो एकदम साफ हैं।

सबसे पहली बात, यह एकदम साफ़ है कि मूल्यकाट का एक सीधा और फ़ौरी नतीजा यह होगा कि कीमतें और रहन-सहन का खर्चा बढ़ेगा और इसलिये मेहनतकश जनता का रहन-सहन का स्तर और भी नीचे गिरेगा। ब्रिटेन में मूल्यकाट के दूसरे ही दिन रोटी की कीमत ३० फ़ी सदी बढ़ा दी गयी क्योंकि ब्रिटेन अपना गेहूँ अमरीका से खरीदता है। मार्शलीकृत देशों में रोटी, कोयला और तम्बाकू की ज़्यादा कीमतें तो केवल शुरुआत हैं। रहन-सहन का खर्चा बराबर बढ़ता जायगा। असली तनखाओं में कमी एक वास्तविक बात है—कल नहीं होगी बल्कि आज ही हो गयी है। वालस्ट्रीट और 'लन्दन' शहरके धन्नासेठोंने "पैदावार के खर्चेमें कमी करने" की योजना काफ़ी पहले बनायी थी। अब मजदूर वर्ग का पेट काटकर उसे अमल में लाया जा रहा है। इटली के अखबारोंने यह बात बेहद साफ़ तरीके से कही है। वेन्टीक्वाट्रो ओरने लिखा है:

" मुद्राओं का मूल्यकाट केवल और सीधे-सीधे पैदावार के खर्चेको कम करने का एवजी है । या, ज़्यादा निश्चित शब्दोंमें वह पैदावार के खर्चेमें कमी हासिल करने का अप्रत्यक्ष तरीका है क्योंकि मज़दूरों की तनखा में कटौती करने के प्रत्यक्ष तरीके से उसे हासिल नहीं किया जा सकता।"

मैसागेरो और टैम्पो खुलेआम कहते हैं कि मूल्यकाट की जरूरत मुख्यतया इसलिये थी कि "विदेशी बाजारों में होड़ शक्ति बढ़ने" के लिये "देश के भीतर के खर्चे में कमी करने" की आड़ में मज़दूर वर्ग के रहन-सहन के स्तर को नीचे गिराया जाय। विदेशी बाजारों में बढ़ती होड़, गिरती कीमतों और उसके साथ-साथ कच्चे माल की ज़्यादा कीमतों और माल के डालरों में दिये जाने से पैदावार का खर्चा बढ़ता है। यह एकदम साफ़ है कि इस नुकसानको पूरा करने के लिये पूँजीपति मज़दूरों का पेट काटने पर आमादा हैं।

हम जानते हैं कि ब्रिटेन के लेबर मंत्री एक लम्बे अरसे से जोर देते रहे हैं कि मज़दूरों को बलिका बकरा बनाकर पैदावार के खर्चे में कमी की जाय। तनखाओं पर रोक और हड़तालों पर पाबंदी लगाने की उनकी लगातार नीति ट्रेड यूनियन कांग्रेस की जनरल काउंसिल की मददसे थोपी गयी थी। अब यह एकदम साफ हो गया है कि इस तरह वे क्या हासिल करना चाहते थे।

अमरीका और ब्रिटेन के शासकों की अनेक बदनाम कार्रवाइयों में मूल्यकाट सबसे बाजी मार सकता है। इस आर्थिक चालबाजी के खिलाफ़ तमाम देशों की जनता और जनमत गुस्से का इज़हार कर रहा है।

ब्रिटेन में, जहाँ स्टर्लिंग के मूल्यकाट के पहले नतीजों में से एक रोटी की कीमत में बढ़ती हुआ है, यह आमतौर पर सोचा जाता है कि जल्दी ही रहन-सहन के खर्चे में काफ़ी बढ़ती होगी। मूल्यकाट के कारणों की क्रिप्स ने जब पहली उलझी हुई सफ़ाई दी तो उसने इस संभावना से इन्कार नहीं किया। इससे ट्रेड यूनियन शाखाओं में जबर्दस्त हलचल मच गयी। लेबर सरकार की कार्रवाई को मेहनतकश जनता किस रूप मे देखती है यह संयुक्त इंजीनियरिंग की बैरो-इन-फरनेस नं. 1 शाखा के प्रस्तावसे जाँचा जा सकता है। उसमें कहा गया है कि मूल्यकाट "मजदूरों के रहन-सहन के स्टैण्डर्ड पर एक जबर्दस्त हमला है।" ब्रिटिश मजदूर समझते हैं कि अमरीकी इजारेदार पूँजी और (लन्दन) शहर के बीच एक शर्मनाक सौदा हो गया है जिससे आम जनता का रहन-सहन का स्टैण्डर्ड नीचे गिरेगा। उद्देश्य यह है कि ब्रिटिश इजारेदारों को मजदूर सस्ते मिलें और ब्रिटिश साम्राज्य में अमरीकी पूँजीकी पैठ आसान हो जाय।

आम गुस्से और खलबली को देखते हुए टी. यू. सी. के नेताओं ने चुप पड़े रहना और कुछ न कहना ही बेहतर समझा। लाथर, डेकिन और टियूसन ने हाल ही में ट्रेड यूनियन कांग्रेस में एक प्रस्ताव पास कर डाला है जिसका उद्देश्य है कि पूँजीपतियों के हमले के ख़िलाफ़ मजदूरों के मुकाबले को दबाया जाय। जनरल काउंसिल के नेताओं की दुहरी चालबाजी की असलियत मूल्यकाट ने पूरी तरह खोल दी है।

२० सितम्बर की मीटिंगमें उन्होंने अकलमन्दी का फैसला किया कि लेबर सरकार द्वारा पौण्ड स्टर्लिंग के मूल्यकाट पर अपनी राय वे बाद में जाहिर करेंगे। देखनेवालों में से कुछ इस विभाजन' पर आश्चर्यचकित हुए, दूसरों ने समझा कि टी. यू. सी. के नेताओं को कुछ कहना नहीं है और कुछ अन्य ने अनुमान किया कि सरकारी नीति का समर्थन करने के लिये ट्रेड यूनियन कार्यकर्ताओं को मजबूर करनेमें उन्हें काफ़ी मुश्किल पेश आयेगी।

मूल्यकाट से जनता के बीच चिन्ता और गुस्सा पैदा हुआ है, और उधर उससे अन्तरराष्ट्रीय आर्थिक परिस्थिति में वह सुधार भी नहीं हुआ है जिसका वादा किया गया था। न्यूयार्क स्टॉक एक्सचेंज के आँकड़ों में तेज गिरावट हुई। शेयरों के मूल्य में गिरावटसे कुल नुकसान २० सितम्बर को १ अरब डालर था।

हाँ, अमरीकी व्यापारियों का एक निश्चित अंग—सबसे पहले बड़े इजारेदार, अन्तरराष्ट्रीय बैंकर और सट्टेबाज मूल्यकाट से मुनाफा बटोरेंगे। जिन देशों की मुद्राओं में मूल्यकाट हुआ है वहाँ पर अब डालर पहले से ज़्यादा 'मूल्य'—इलाका, शेयर, औद्योगिक कारखाने खरीद सकता है। विशेष रूपसे हथियार तैयार करनेवाली फ़र्में जरूरी युद्ध सामान को मूल्यकाट से पहले की तुलनामें सस्ता खरीद सकती हैं।

बाहर के देशों में ज़्यादा अमरीकी पूँजी लगाने की जिस कार्रवाई का ट्रूमन ने ऐलान किया है उसको अमल में लाना मूल्यकाट की वजह से आसान हो जाता है। इससे दूसरे देशोंके अर्थतंत्रों में अमरीकी पूँजी की पैठ के लिये दरवाज़े ज़्यादा अच्छी तरह खुल जाते हैं। अमरीकी व्यापारी मुनाफा कमाने वाले धन्धों को खरीदे ले रहे हैं। इससे अनेक देशोंके राष्ट्रीय उद्योग और भी मुसीबतमें फंस जायेंगे। फ्रांस, इटली और ब्रिटेन के ट्रेड यूनियन केन्द्र सही कहते हैं कि अमरीकी होड़ की वजह से फैक्टरियों और तमाम उद्योगों का गला घुंट जायगा और इसका अवश्यम्भावी नतीजा होगा कि बेकारी बेहद बढ़ेगी। और यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि अमरीकी मालके लिये टैरिफ (कर) की दीवारों को गिरवाने, अमरीकी पूँजी लगाये जाने पर तमाम बंधनोंको हटवाने और अमरीकियों द्वारा कमाये मुनाफेको स्वतंत्रापूर्वक डालर में बदलवाने की वाशिंग्टन कोशिश कर रहा है (वह कुछ हद तक यह हासिल भी कर चुका है—उदाहरण के लिये फ्रांस में)।

इन माँगों की रोशनी में यह जाहिर हो जाता है कि वालस्ट्रीट की इस अन्तर-राष्ट्रीय आर्थिक चालबाजी से अमरीकी इजारेदारों को कितना धुआँधार मुनाफा होगा।

दूसरी ओर यह बात भी साफ है कि इस चालबाजी से, उसका पैमाना कितना भी बड़ा क्यों न हो, वह बुनियादी समस्या हल नहीं हो सकती जिससे मार्शल योजना असफल हुई है। जब क्रिप्स यह बहाना करता है कि मूल्यकाट से ब्रिटेन की डालर की कमी की समस्या हल होनेमें मदद मिलेगी, कि पौण्ड के परिवर्तन दर में कमी से ब्रिटेनका माल सस्ता होगा और विदेशी बाजारों में—मुख्यतया अमरीकी बाजारों में उसकी होड़ शक्ति बढ़ेगी और इसका नतीजा यह होगा कि निर्यात बढ़ेगा और इसलिये डालरों की आमद खूब होगी—तो वह ब्रिटेन के मजदूर वर्ग को बेवकूफ़ बना रहा है।

इन उम्मीदों के बारे में यही कहा जा सकता है कि वे बालू पर बनी दीवार हैं। इतना ही बता देना काफ़ी होगा कि मूल्यकाट से और अमरीका से ज्यादा कीमतों पर खरीदने तथा उस देश को सस्ती कीमतों पर निर्यात करने की जरूरत से ब्रिटेन को जो नुकसान होगा उसे पूरा करने के लिये उसे अपना निर्यात तिगुना करना होगा। डालरवाले खरीदारों के लिये ब्रिटिश माल सस्ता होगा मगर इस मालको दूसरे देशों की बढ़ी हुई होडका सामना करना पड़ेगा। अन्य मार्शलीकृत देशों के मंत्रियों ने भी ब्रिटिश मंत्रियों की दलीलोंको ही उठाया। उन्होंने भी अपनी मुद्राओं की परिवर्तन दर जल्दी से कम की ताकि विदेशी बाजार में उनका माल ब्रिटिश माल से होड़ ले सके। इस मालकी, जो अमरीकी खरीदार के लिये सस्ता किया गया है, अमरीका में पैठ की क्या सभावना हो सकती है? हरेक जानता है कि अपने बाज़ार को ब्रिटिश या किसी भी दूसरे माल के लिये खोलने का अमरीका का कोई इरादा नहीं है। अमरीकी बाजारको खोलनेका सीधासा तरीका है टैरिफ़ की दीवारों को नीचा करना। मगर इस बात की तरफ़ कोई इशारा भी नहीं किया गया है। आर्थिक संकट पकते जाने के कारण अमरीका का घरका बाजार बढ़ने के बजाय और संकुचित ही होगा।

इस प्रकार मूल्यकाट की बदौलत ब्रिटेन या किसी भी दूसरे देश को डालर संकट से मुक्ति किसी भी हालत में नहीं मिल सकती।

मार्शल योजना की असफलता ने अमरीका की इस उम्मीद पर पानी फेर दिया है कि वह अपने निर्यात का सबसे ऊँचा स्तर कायम रख सकेगा और इस तरह ज़्यादा पैदावार के संकट का असर हलका कर सकेगा। वालस्ट्रीट के लिये मूल्यकाट केवल एक जरिया है जिससे वह योरोपीय और औपनिवेशिक बाजारों में अपना आधिपत्य कायम करनेकी पुरानी नीति को जारी रख रहा है।

वाल स्ट्रीट चाहती है कि आर्थिक संकट से उसे जो भी नुकसान हो उसे वह पश्चिमी योरप के मजदूरों को बलि का बकरा बनाकर पूरा करे। अमरीकी व्यापारी अब इस स्थिति में हैं कि और भी सस्ता खरीद सकें और, और भी महँगा बेच सकें। दूसरे पूँजीवादी देशों के साथ अपने आर्थिक सम्बंध वे इसी आधार पर कायम कर रहे हैं। मगर आसानी से समझा जा सकता है कि इससे इन देशों की आर्थिक मुश्किलें हल नहीं होंगी बल्कि और गंभीर बनेंगी; इससे इन देशों के बीच आपस में और अमरीका के साथ आर्थिक सम्बंधों में सुधार नहीं होगा बल्कि वे और भी उलझ जायेंगे।

मूल्यकाट से न तो मंडराने वाले आर्थिक संकट को फूटने से रोका जा सकता है और न उससे पूँजीवादी अन्तरविरोधों की धार को भोथरा किया जा सकता है। उल्टे होगा यह कि बाजारों के लिये पहले ही से गंभीर संघर्ष और भी ज़्यादा गंभीर बनेगा, देशों के बीच होड़ ज़्यादा तेज होगी, आम जनता की खरीदने की शक्ति और भी नीचे गिरेगी और पूँजीवादी दुनिया में संकट के लक्षण और भी गंभीर रूप में प्रगट होंगे।

[न्यू टाइम्स, अंक ४० से]

★

क्रान्तिकारी जागरूकता तेज़ करो !

कॉमिनफार्म के मुखपत्र का सम्पादकीय

हंगरी के राज्यद्रोही रायक और उसके मददगारों पर बुदापेस्त में चलाये गये मुकदमे का भारी अन्तरराष्ट्रीय महत्व है। अभियुक्तों के बयान इस भेदको खोल देते हैं कि अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियों ने सोवियत संघ और जनता के जनतंत्र देशों के खिलाफ कैसी राक्षसी साजिश रची थी। वे उन जड़ खोदनेवाली कार्रवाइयों का पर्दाफाश कर देते हैं जो अंग्रेज-अमरीकी खुफिया विभाग की एजेन्सी साम्राज्य-विरोधी जनवादी पक्ष के भीतर कर रही थी।

अभियुक्त व्यक्ति साजिश रचनेवालों और हत्यारों का एक घृणित दल है जो झूठे दिखावे करके पार्टी और सरकार में ऊँची जगहों पर पहुँच गया था। ये लोग रंगे हाथों पकड़े गये। और पक्के, इनकार न किये जा सकनेवाले सबूत के आगे उन्हें जड खोदनेवाली सिर्फ अपनी ही कार्रवाइयों का भेद नहीं खोलना पड़ा है। उन्हें साजिश रचनेवाले बेलग्रेद गुट की कार्रवाइयों और अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियों के साथ उसके सम्बंधों का भेद भी खोलना पड़ा है।

रायक, पैलफी, ब्रैनकौव और अन्य अभियुक्तों ने स्वीकार किया कि उन्होंने मध्य और दक्षिणी-पूर्वी योरप में अमरीकी खुफिया विभाग की शाखा—टीटो, कार्देली, दिलास और रांकोविक गुट के हुक्मों के अनुसार जड़ खोदनेका अपना खुफिया काम किया।

पुराने गुप्तचर ब्रैनकौव ने बताया कि टीटो, कार्देली, रांकोविक और दिलास काफी लम्बे अरसे से अंग्रेज और अमरीकियों के जरखरीद एजेन्टों का काम कर रहे हैं। लड़ाई के दौरान में टीटो और उसके गुटने न सिर्फ देश के भीतर बल्कि उसकी सीमा के बाहर भी अंग्रेज-अमरीकी खुफिया विभाग के साथ सम्बंध स्थापित किया। योरप में अमरीकी खुफिया विभाग के अध्यक्ष एलेन डलेस से सम्बंध स्थापित करने के लिये टीटो का एक विशेष प्रतिनिधि स्विट्ज़रलैण्ड भेजा गया था। एक पुराना अंग्रेज

गुप्तचर वेलेब्रेट मौके पर लन्दन में मौजूद था। टीटो के प्रतिनिधियों ने बरी और मार्साईमें अमरीकी खुफ़िया अफसरों से सम्बंध कायम किया।

हंगरीमें काम करनेवाले अमरीकी एजेन्ट अच्छी तरह जानते थे कि यूगोस्लाव खुफिया विभाग तो अमरीकी खुफ़िया विभागकी केवल बेलग्रेड शाखा है। मुकदमेके दौरानमें गुप्तचर जोनीने कहा कि "अक्सर यह पता चलाना मुश्किल हो जाता था की अमरीकी खुफ़िया विभागका काम कहाँ खतम होता है और यूगोस्लाव खुफ़िया विभागका काम कहाँ शुरू होता।"

बुदापेस्तके मुकदमेने साम्राज्यवादी जंगखोरों और उनके एजेन्टोंकी कार्रवाइयों के एक और गन्दे और नफ़रत पैदा करनेवाले पहलू को बेनकाब कर दिया। साम्राज्यवाद के एजेन्ट—टीटो-रांकोविक गुटने झूठे दिखावे करके मजदूर वर्ग का विश्वास प्राप्त किया और फिर कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व पर तथा पूरी राज्य-मशीनरी मे मुख्य जगहों पर कब्जा जमा लिया। इस गुटने कम्युनिस्ट पार्टीके नाम की आड़में, जनताके जनवादी राज्य की आड़में काम किया और जनता की जीतोंको एक-एक करके मिटाना शुरू कर दिया। उसने न सिर्फ अपने देश में बल्कि जनता के जनतंत्रों में भी सोवियत संघ के खिलाफ़ झूठ और साजिशों का जाल फैलाना शुरू कर दिया।

नये जनवादी देशों में जनता ने ज़मींदारों और पूँजीपतियों को मार भगाया, अपने हाथों में सत्ता सम्हाली और अब वे समाजवाद के महान देश की सहयोगी सहायता से विश्वास के साथ नये समाजवादी समाज का निर्माण कर रहे हैं। इन देशों की जनता कम्युनिस्ट पार्टियों को अपना नायक मानती है। इन देशों के पूँजीपति वर्ग मिटाये जा रहे हैं। नतीजा यह है कि वह आधार संकुचित होता जा रहा है जिस पर विश्व पूँजीवाद भरोसा कर सकता है। इसलिये इन देशों में पूँजीवाद का पुनर्स्थापन करने की अपनी लड़ाई में तेजी लानेके लिये साम्राज्यवादियों को अधिकाधिक मजबूर होना पड़ रहा है कि वे ऐसे गुप्तचरों, साजिश रचनेवालों और हत्यारोंके कामपर भरोसा करें जो अपनेको "सौ फी सदी मार्क्सवादी" की तरह पेश करते हैं। टीटो, रांकोविक, कार्देली, दिलास आदि "समाजवाद के निर्माण" के बारेमें लम्बे-चौड़े भाषण करते हैं तो बेकार ही नहीं।

दूसरे देशोंमें खुफियागीरी, साजिश और षड़यंत्र रचने के अनुभव को पूँजीवादी राज्यों ने सदियों से इकट्ठा किया और बढ़ाया है। यूगोस्लाविया में उन्होंने इस अनुभव का पूरी तरह इस्तेमाल किया। साजिश और दबाव-धमकी के टेढ़े ज़रियों से उन्होंने लड़ाई के दौरान में ही यूगोस्लाव पार्टी के नेताओं में और छापेमार आन्दोलन के सदर दफ्तरमें अपनी विश्वसनीय एजेन्सी कायम की। जर्मन फ़ासिस्ट हमलावरों के खिलाफ़ जनताके शक्तिशाली आन्दोलन को अंग्रेज़-अमरीकी साम्राज्यवादियोंको मानना पड़ा था। मगर उन्होंने तै किया कि टीटो, कार्देली, दिलास और रांकोविक के एजेन्टों की मदद से इस आन्दोलन को अपने फ़ायदे के लिये इस्तेमाल करें—यानी इस तरह इस्तेमाल

करें कि लड़ाई का विजय में अन्त होने के बाद वे यूगोस्लाविया को धीरे-धीरे अपनी वैदेशिक नीति के घेरे में ला सकें और जनता की जीतों को धीरे-धीरे मिटा सकें। अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियों की योजनाएँ यूगोस्लाविया के बाहर भी फैली थीं। और यूगोस्लाविया के नेताओं को यह जिम्मा दिया गया था कि वे "कम्युनिज़्म" की बातों की आड़में जनता के जनतंत्रके तमाम देशों में पूँजीवाद के पुनर्स्थापन की नीति अमल में लायें, उन्हें साम्राज्यवाद के पक्ष में ले जायें और उन्हें सोवियत संघ से अलग कर दें।

यह अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवाद की एक चालाकी से भरी और अच्छी तरह सोची हुई योजना थी। टीटो-रांकोविक गुट के रूप में उन्होंने यूगोस्लाविया में अपना मजबूत आधार कायम किया और फिर इस गुट को यह ख़ास जिम्मा सौंपा कि वह जनता के दूसरे जनतंत्र देशोंमें क्रान्ति-विरोधी ताकतों का सत्ता पर कब्ज़ा कराये। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए अमरीकियों ने हंगरी के रायक और उसके भाईबन्दों को टीटो और रांकोविक की मातहती में रखा। रायक ने बताया कि टीटो गुट उसके दल की देखरेख करता था और उसकी सहायता करता था; और रायक दल को काम सौंपा गया था कि वह हंगरी में समाजवादी विकासको पीछे खींचे, सत्ता पर कब्ज़ा करे, कारखानों, फ़ैक्टरियों और बैंकों को पूँजीपतियों को वापस कर दे, ज़मीन ज़मींदारों को दे दे और मज़दूर वर्ग तथा जनता की जीतों को मिटा दे—संक्षेप में पूँजीवाद की पुनर्स्थापना करे।

साम्राज्यवादियों की "अपूर्व योजना" यही थी। उनके ज़रख़रीद एजेन्ट टीटो द्वारा इसका श्रेय अपने माथे लेना बेकार है—वह तो जरूरत से ज़्यादा बेवकूफ़ है! उसका काम तो सिर्फ़ उन लोगों की इच्छा को पूरा करना है जिनकी गुलामी करना उसने अपना पेशा बनाया है। इस ज़रख़रीद एजेन्ट की एकमात्र काबलियत यह रही है कि उसने लड़ाई से पहले और लड़ाई के बाद भी यूगोस्लाव जनता की सबसे अच्छी संतानों, स्त्रियों और पुरुषों को मौत के घाट उतारा—और वह बराबर तोते की तरह दुहराता रहा: "मैं तो सौ फी सदी मार्क्सवादी हूँ।" मुक़दमे के दौरान में अभियुक्तों के बयानों ने इस "मार्क्सवादी" का और साजिश रचने वालों तथा हत्यारों के इस पूरे झुण्ड का पूरी तरह पर्दाफ़ाश कर दिया है।

बुदापेस्त के मुक़दमे का भारी महत्व यह है कि साम्राज्यवादियों ने जनता के जनतंत्र राज्यों की भीतर से जड़ खोदने की जो चालभरी योजनाएँ बनायी थीं, उनका उसने पर्दाफ़ाश कर दिया और उन पर घातक प्रहार किया। साम्राज्यवादियों की ये चालें क्रान्तिकारी जनता की जागरूकता और सबसे पहले बोल्शेविक पार्टी और उसके महान नेता कॉमरेड स्तालिन की बुद्धिमत्तापूर्ण जागरूकता के कारण समय के भीतर ही सामने आ गयीं। इस सम्बंधमें सूचना केन्द्रके प्रस्तावके महत्वको बढ़ा कर बताना मुश्किल है। उसने एक वर्ष पहले ही यूगोस्लाव जनताको, कम्युनिस्ट पार्टियोंको और

अन्य देशोंके मजदूर वर्गको सावधान कर दिया था कि यूगोस्लावियाके टीटो गुटने समाजवादके साथ गद्दारी की है और इस गुटकी नीतिके कारण पूँजीवादका पुनर्स्थापन हो रहा है तथा यूगोस्लाविया साम्राज्यवादका गुलाम बन रहा है।

कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियोंके सूचना केन्द्रका प्रस्ताव प्रकाशित होनेसे पहले अमरीकी गुप्तचरोंके बेलग्रेड दलने योजना बनायी थी कि हंगरीमें जनताकी जनवादी व्यवस्था से पूँजीवादी व्यवस्था में " परिवर्तन शान्तिपूर्ण ढंग से " किया जायगा। उस योजना का आधार उनका यूगोस्लाविया का अनुभव था। प्रस्ताव प्रकाशित होने के बाद साजिश रचने वाले समझ गये कि वे पूँजीवाद का पुनर्स्थापन " शान्तिपूर्ण " ढंग से करने में सफल नहीं होंगे। इसलिये उन्होंने तै किया कि तमाम प्रतिक्रियावादी शक्तियों की मदद से हथियारबन्द पुत्श के जरिये (मुट्ठी भर दल द्वारा शस्त्रबल से यकायक) सत्ता पर कब्जा किया जाय। मदद करनेवाली शक्तियाँ थीं बाहर से आनेवाले फ़ौजी दस्ते, यूगोस्लाव फौजों की सीधी दखलन्दाजी और मुख्य शक्ति के रूपमें अमरीका की मदद। राष्ट्रवादी फासिस्ट एजेन्सी ने खुला फ़ासिस्ट शासन कायम करने और युद्ध छेड़ने का रास्ता अपनाया। अमरीकी साम्राज्यवादियों ने टीटो और रायक पर यही जिम्मा डाला था। अमरीकी साम्राज्यवादियों की योजना है : एक नया महायुद्ध छेड़ना। मध्य और दक्षिणी पूर्वी योरप में एक सोवियत-विरोधी गुट कायम करने की यह कोशिश उसी का एक अंग थी। यही कारण है कि इन गन्दी योजनाओं के भेदका खुलना और उनकी असफलता शान्ति के पक्ष की एक बड़ी जीत है और जंगखोरों की एक भारी हार है।

साम्राज्यवादी पक्षमें जो खलबली मच गयी है और बुदापेस्त के मुकदमे के सम्बंध में वे जिस तरह चीख-चिल्ला रहे हैं, उससे पता चलता है कि वाल स्ट्रीट के शासकों पर कैसा जबर्दस्त प्रहार हुआ है। गुप्तचरों और हत्यारोंका बेलग्रेड दल " बुदा-पेस्त की चाल " के बारेमें होश-हवास खोकर बड़बड़ा रहा है। इससे सिर्फ यही साबित होता है कि उसे डर लग रहा है कि अमरीकी मालिक इस नतीजे हर पहुँच जायेंगे की उनके काट के पत्ते टीटो और कम्पनी अब चले जा चुके हैं; और उनकी ' काट ' अब कारगर नहीं हो सकती। टीटो दलको डर लग रहा है कि उन्हें कहीं उठा कर फेंक न दिया जाय जैसा कि जाने गये गुप्तचरों के साथ हमेशा होता है।

बुदापेस्त का मुकदमा बताता है कि वर्ग संघर्षने—विजयी की तरह आगे बढ़ते समाजवाद और मरते पूँजीवाद के बीच संघर्ष ने उग्र रूप धारण कर लिया है। इस संघर्ष के अनुभव से कम्युनिस्ट पार्टियों को शिक्षा मिलती है कि जनता द्वारा सत्तापर कब्जा कर लेने का मतलब यह नहीं होता कि पछाड़ा हुआ पूँजीपति वर्ग अपनी हारी जगहें फिर से जीतने की कोशिश बन्द कर देगा। इस अनुभव से शिक्षा मिलती है कि अपना आधिपत्य फिर हासिल करने के लिये साम्राज्यवादी हर जरिया—गन्दे और धूर्तता से भरे सभी जरिये, इस्तेमाल करेंगे।

बुदापेस्त का मुकदमा कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियों के सामने इस बात को नये जोर के साथ रखता है कि जागरूकता और क्रान्तिकारी चैतन्यता बढ़ाने की

जरूरत है। इस मुकदमे से शिक्षा मिलती है कि साम्राज्यवादियों की कोशिशों के प्रति निर्ममता से पेश आने की जरूरत है और उनकी उन एजेन्सियों को दृढ़ता के साथ उखाड़ फेंकने की जरूरत है जो धोखा देकर कम्युनिस्ट पार्टियों की कतारों में घुस आयी हैं। मुकदमा बताता है कि और भी ज़्यादा जागरूकता की जरूरत है—यह जरूरत चेकोस्लोवाकिया, पोलैण्ड, रूमानिया और दूसरे जनता के जनतंत्र देशों की कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियों की कतारों के भीतर विशेष रूपसे ज़्यादा है।

बुडापेस्त के मुकदमे में बेनकाब हुए गद्दारों ने भेद खोला कि दूसरे जनता के जनतंत्र देशों में जड़ खोदने का काम करने के लिये टीटो गुटने अपना पूरा एड़ी-चोटी का जोर लगाया। मार्क्सवाद-लेनिनवाद सिखाता है कि मजदूर वर्ग की पार्टी हमेशा और हर जगह दुश्मनसे टक्कर ले सकती है—मगर शर्त यह है कि वह अपने काडरोंका राजनीतिक और सैद्धान्तिक स्तर ऊँचा उठाने की बराबर, ढंगपूर्वक कोशिश करे, मार्क्सवाद-लेनिनवाद की धारा से प्रत्येक भटकाव के प्रति निर्ममता की भावना में उन्हें शिक्षित करे, अपनी कतारों को संगठनात्मक दृष्टि से मजबूत बनाये, शत्रु-तत्वों को दृढ़ता के साथ पार्टी से निकाल बाहर करे, राष्ट्रवादी और सुधारवादी भटकावों का समय के भीतर पर्दाफ़ाश करे और उन्हें खतम करे, और मजदूर वर्ग तथा तमाम मेहनतकशों की वर्ग जाग्रति को गहरा बनाये।

क्रान्तिकारी जागरूकता को तेज करो।

वैज्ञानिक कम्युनिज़्म की एक महान पुस्तक

जोसेफ स्तालिन की महान पुस्तक "लेनिनवाद के मूल सिद्धान्त," सर्वप्रथम आजसे एक-चौथाई शताब्दी पहले, अप्रैल और मई १९२४ में प्रावदा के पन्नोंमें छपी थी। उसने लेनिनवादकी बहुत ही योग्यतापूर्ण व्याख्या की और उसके गंभीर सिद्धान्तों की प्रामाणिकता सिद्ध की। बोल्शेविक पार्टीके नेता, सोवियत राज्यके संस्थापक और तमाम दुनिया के श्रमजीवियों के महान् शिक्षक व्लादिमीर लेनिन ने मार्क्सवाद के भाण्डार को अपने जिन अमर विचारों से संपन्न बनाया था, उनको स्तालिनने अपनी इस पुस्तक में रचनात्मक रूपसे और विकसित किया।

हमारे देश में सोशलिज्म के क्रियाशील निर्माताओं के लिए जोसेफ़ स्तालिन की यह पुस्तक एक गुटका है। इसका अनुवाद दर्जनों भाषाओं में हो चुका है। पिछले पच्चीस वर्षों से साम्राज्यवादी प्रतिक्रिया की गन्दी ताकतों से मोर्चा लेनेवाले मानवता के सबसे आगे बढ़े हुए दलके हाथमें सैद्धान्तिक संघर्ष का यह पुस्तक एक बहुत बड़ा हथियार रही है। उसकी एक-एक पंक्ति कम्युनिज्म के दुश्मनों के ऊपर आज भी उतनी ही जोर से और उतने ही प्रभावशाली ढंग से चोट करती है जैसे वह आज से एक-चौथाई शताब्दी पहले करती थी।

× × × × ×

जोसेफ स्तालिन की पुस्तक ऐसे समयमें निकली थी जब सोवियत राज बड़ी कठिन परीक्षा से गुजर रहा था। जनवरी १९२४ में लेनिन की मृत्यु होगयी थी। वर्षों लम्बे साम्राज्यवादी युद्ध और फिर गृह-युद्ध द्वारा लगाये सोवियत जनता के घाव अभी तक भर नहीं पाये थे। जर्मनी, इटली, बल्गेरिया, पोलेण्ड और दूसरे कई देशों के क्रान्तिकारी आन्दोलन को पूँजीपतियों ने मजदूर वर्ग के साथ गद्दारी करने वाले, दक्षिण-पंथी सोशलिस्टों (सोशल-डिमोक्रेटों) की मददसे कुचल दिया था। सोशलिज्म के दुश्मन—ट्राट्स्कीपंथी, जिनोवियेव के गुट के लोग और उनके दूसरे साथी-समर्थक, *अन्तरराष्ट्रीय पूंजीवाद के तमाम देशी दलाल—लेनिन की मृत्यु* से फायदा उठा कर बोल्शेविज्म की जड़ें काटनेकी साजिशें कर रहे थे। लेनिनवाद के ऊपर खास तौर से वे जले-भुने वार करते थे। वे चाहते थे कि इन वारों से बोल्शेविक पार्टी के सिद्धान्तों को मटियामेट करके उसे निरस्त्र बना दिया जाए, उसके अन्दर गड़बड़ी फैला दी जाए, उसे लेनिन के बताये मार्ग से पथभ्रष्ट कर दिया जाए

और इस तरह सोवियत संघ मे पूंजीवाद की पुनः स्थापना का द्वार खोल दिया जाए। ये सब योजनाएँ निष्फल हुई।

मजदूर वर्ग के इस दृढ़ निश्चय का कि वे लेनिन के बताये मार्ग पर ही चलेंगे एक प्रमाण यह था कि उनकी मृत्यु के तुरन्त बाद लगभग ढ़ाई लाख मजदूर पार्टी मे भर्ती हो गये।

जोसेफ़ स्तालिनने "**लेनिनवाद के मूल सिद्धान्त**" पर स्वर्दलोव विश्व विद्यालय मे दिये लैक्चरो के इस संग्रहको, इसी लेनिन-भर्ती के नाम, उन नौजवान लोगो के नाम जो लेनिनकी मृत्यु के बाद पार्टी में भर्ती हुए थे, समर्पित किया था। इस पुस्तक मे स्तालिनने उन समस्याओं के जो करोड़ों लोगो को परेशान कर रही थीं, स्फटिक की भाति स्पष्ट और बहुत ही साफ़-सुथरे उत्तर दिये, क्योंकि इन समस्याओं के उचित समाधान के ऊपर ही सोशलिज़्मका भाग्य निर्भर करता था। सैद्धान्तिक रूपसे ट्राट्स्कीपंथियों को खतम करने में और सोवियत जनता को पार्टी की आम नीति के आधार पर और अधिक संगठित करने मे स्तालिन की पुस्तक ने बहुत जबरदस्त काम किया— उन्नत क्रान्तिकारी सिद्धान्तो के तीव्र प्रकाश से सोशलिज्म के निर्माण के लिए न जाने कितने अब तक अज्ञात पथों को उसने उजागर कर दिया।

दूसरी इण्टरनेशनल (अन्तरराष्ट्रीय संघ) के शिविर मे सोशलिज़्म के दुश्मनों ने और उनके ट्राट्स्कीपंथी, बुखारिनपंथी नकलचियो ने लेनिनवाद के महत्व को कम करना चाहा। उन्होंने कहा कि लेनिनवाद तो एक संकरी, निरी राष्ट्रीय विचार-धारा है, उसे रूससे बाहर लागू नहीं किया जा सकता। स्तालिनने दिखलाया कि लेनिनवाद अन्तरराष्ट्रीय है, तमाम अन्तरराष्ट्रीय विकास ही उसका आधार है। उन्होंने लेनिनवाद की एक सुस्पष्ट परिभाषा दी और बताया कि वह साम्राज्यवाद और मजदूर क्रान्तियो के युग का मार्क्सवाद है। और भी स्पष्ट शब्दों में उन्होंने कहा कि आम तौर से क्रान्ति के सिद्धान्तो और कार्यनीति का और खासतौर से सर्वहारा वर्ग की डिक्टेटरशिप (अधिनायकत्व) के सिद्धान्तो और कार्य-नीति का ही नाम लेनिनवाद है।

इस तरह से उन्होने मार्क्सवाद और लेनिनवाद की अटूट एकता को दिखलाया और प्रमाणित किया। उन्होंने दिखलाया और प्रमाणित किया कि वैज्ञानिक सोशलिज़्म के एक ही सिद्धान्त के वे दो अंग हैं। जिन ऐतिहासिक परिस्थितियों से लेनिनवाद का जन्म हुआ था, उन परिस्थितियों को स्पष्ट किया गया। मार्क्स और एंगेल्स जिस युग में थे, उसमें पूंजीवादका दिनोंदिन विकास हो रहा था, सर्वहारा क्रान्ति उस समय तक एक प्रत्यक्ष व्यावहारिक अनिवार्यता नहीं बन गयी थी। लेनिन जब आये और उन्होने काम करना शुरू किया तब तक पूंजीवाद अपनी मृत्यु-शैय्या पर पहुँच गया था, और उसकी सत्ता के गढ़ों पर धावे शुरू हो गये थे। उनका युग

सर्वहारा क्रान्ति के उभार का युग था, वह युग था जिसमें सर्वहारा क्रान्ति हमारे देश में विजयी हो चुकी थी।

स्तालिनने अपनी पुस्तक मे दिखलाया कि साम्राज्यवाद पूंजीवाद के तमाम अन्तर्विरोधों को बढ़ा कर चरम सीमा तक पहुँचा देता है और इस तरह पूंजीशाही सत्ता के गढ़ों को खोखला बना देता है। यह बतलाने के बाद कि वह कौनसी अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति थी जिसने लेनिनवादके रूप में मार्क्सवाद के आगे विकास को प्रोत्साहित किया था, स्तालिन ने बतलाया कि इसका क्या कारण था कि रूस ही लेनिनवादका घर बना, रूस ही क्यों सर्वहारा क्रान्तिके सिद्धान्तों और कार्य-नीति का जन्म-स्थान बना।

ज़ारका रूस साम्राज्यवाद के तमाम विरोधोंका केन्द्र था, किसी भी अन्य देश की अपेक्षा सर्वहारा क्रान्ति के लिए वह ज्यादा तैयार था। रूस मे एक बहुत ही बड़ी और जन-प्रिय क्रान्ति उठ रही थी, दुनियाका सबसे क्रान्तिकारी सर्वहारा वर्ग उसका नेतृत्व कर रहा था, किसानों का क्रान्तिकारी जन-वर्ग उसका शक्तिशाली साथी था। ऐसी परिस्थितियों में रूसमें सर्वहारा क्रान्ति के अलावा और कोई क्रान्ति हो ही नहीं सकती थी। विश्व साम्राज्यवाद की जड़ें तक वह न झकझोर डाले यह असंभव था। बीसवीं शताब्दी के शुरू में ही क्रान्तिकारी मजदूर वर्ग के आन्दोलन का केन्द्र रूस बन गया था।

इस स्थिति में रूसी कम्युनिस्टों के लिए अपने कामकाज को रूसी क्रान्ति की संकरी राष्ट्रीय सीमाओं तक ही सीमित रखना असंभव था। राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय, पूरी परिस्थिति उन्हें मजबूर कर रही थी कि वे इन सीमाओं से आगे बढ़ें और साम्राज्यवाद के नासूरों को ब के सामने स्पष्ट कर दें, लोगों को पूँजीवाद के पतन की अनिवार्यता का क़ायल कर दें, "पूंजीवाद को अपने देश में खतम करके सर्वहारा युद्ध के लिए एक नया अस्त्र तैयार करें यानी सर्वहारा क्रान्ति के सिद्धान्तों और कार्यनीति की स्थापना करे" (स्तालिन, "**लेनिनवाद के मूल सिद्धान्त**" पृष्ठ ११)

रूसी और विश्व संस्कृति का सर्वोच्च परिणाम होने के नाते लेनिनवाद एक अन्तरराष्ट्रीय विचारधारा है। सोवियत जनता को इस बात का अभिमान होना कि हमारा देशही लेनिनवाद का जन्म-स्थान है, सर्वथा सही है; उसका यह सोचना कि सोशलिस्ट क्रान्ति को सफल बनाकर सोशलिस्ट समाज का निर्माण करनेका श्रेय इतिहास मे सबसे पहले उसी को है, सर्वथा सही है। इन कार्यों के द्वारा सोवियत जनता तमाम दुनिया के मेहनतकशो और दबी-कुचली जनता के लिए आशा का केन्द्र बन गयी है।

आजके युगमें, साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रान्तियों के इस युग में केवल वही मार्क्सवादी हो सकता है जो लेनिन और स्तालिन की शिक्षाओं को पूर्ण रूपसे स्वीकार करता है। यह चीज तमाम देशों के राजनीतिक कार्यकर्ताओं के लिए एक समान

लागू है। सोवियत संघ की विजयों में मूर्तिमान लेनिन के विचारों की महान शक्तिसे इनकार कर सकना तो पूँजीपतियों के टुकड़खोरों के लिए भी असंभव है, इसलिये वे आज भी लेनिनवाद को एक ऐसे विज्ञान के रूप मे चित्रित करने की कोशिशें करते हैं जिसे केवल रूसी परिस्थितियों मे ही लागू किया जा सकता है। पिछले तीस वर्षों के इतिहास ने इस प्रकार के झूठे प्रचारों का खोखलापन पूर्ण रूपसे दरशा दिया है। इतिहासने दिखला दिया है कि लेनिनवाद के अन्तरराष्ट्रीय स्वरूप से मुकरना महज़ साम्राज्यवादियों की ख़िदमत करने का एक बहाना है। यूगोस्लाविया मे टीटो के राष्ट्रवादी गुट की ग़द्दारी ने इसी बात को एक बार फिर से प्रमाणित कर दिया है। अन्तरराष्ट्रीय मजदूर वर्ग के साथ ग़द्दारी करनेवाले और यूगोस्लाव जनता के दुश्मन इन टीटोपंथियों ने शुरू किया एक विशेष "यूगोस्लाविया-मार्का मार्क्सवाद" की मूर्खतापूर्ण तलाशसे और अन्त मे जाकर खुलेआम साम्राज्यवादियों के साथ मिल गये। अब वे सोवियत संघ और जनता के जनतंत्रों पर कीचड उछालते हैं, दुनिया की कम्युनिस्ट पार्टियों को गालियाँ बकते हैं और अंग्रेज और अमरीकी जंगखोरों के शिविर में जाकर जनतंत्र और सोशलिज्म के सबसे कट्टर दुश्मनों की मदद करते हैं।

जोसेफ स्तालिनने अपनी पुस्तकमें बताया कि मार्क्स-एंगेल्स और लेनिनके बीचमे एक पूरा युग था जिसमे दूसरी इन्टरनेशनलके अवसरवादी छाये हुए थे। दूसरी इन्टरनेशनलके अवसरवादी मुँहसे तो मार्क्सवादकी कसमे खाते थे लेकिन कार्य में उसकी क्रान्तिकारी थ्योरी (सिद्धान्तों) और नीति दोनोंके साथ ग़द्दारी करते थे। उन्होंने अपनी पूरी ताक़तसे कोशिश की कि सर्वहारा वर्गका खुद अपनी शक्तिपर से विश्वास उठ जाए, और सस्ते भत्तोंके टुकड़ोंसे बेईमानीके मार्गपर लगाकर उसे प्रतिक्रियावादी पूंजीशाहों के छकड़े मे जोत दिया जाए। इसलिये इसके पहले कि पूंजीवाद से टक्कर ली जा सके यह जरूरी था की दूसरी इण्टरनेशनल के कचरे को अच्छी तरह साफ़ कर दिया जाए, उसके पुराने और जंग खाए हथियारों को निकालकर फेंक दिया जाए, तमाम बाबूवादी अधकचरेपन, गद्दारी और सामाजिक-अंधराष्ट्रवादिता का अन्त कर दिया जाए और लड़ाई के लिए नयी तरह के हथियार तैयार कर लिये जाएँ।

इस तात्कालिक काम को लेनिन ने पूरा किया था। उन्होंने मार्क्सवादी पद्धति को ही—भौतिकवादी द्वन्द्ववाद को ही संपन्न बनाकर उसका विकास किया। मार्क्सवाद की पद्धति मूलतः आलोचनात्मक और क्रान्तिकारी है। लेनिनके इस कामको स्तालिनने जारी रखा। दूसरी इण्टरनेशनल के सड़े-गले जड़ सिद्धान्तों की जो कि सोशलिज़्म के लिए मजदूर वर्ग की लड़ाई के मार्ग में रोड़े बन गये थे, स्तालिनने अत्यंत निर्ममतासे आलोचना की। महान अक्तूबर सोशलिस्ट क्रान्ति की विजय के बादके दशकों में मजदूर वर्ग के आन्दोलन से जो अनुभव मिला है, उसे आम

सिद्धान्तों के साथ जोड़ते हुए उन्होंने, कई पुस्तकें लिखीं, और अपनी इन महान रचनाओं से मार्क्सवादी-लेनिनवादी विज्ञान के अमर भाण्डारको उन्होंने और संपन्न बनाया। नयी ऐतिहासिक परिस्थिति से उठनेवाली नयी समस्याओं पर उन्होंने रचनात्मक दृष्टिसे विचार किया और उनके समाधान निकाले। दूसरी इण्टरनेशनल के मौजूदा वारिसो—साम्राज्यवाद के दक्षिणपंथी सोशलिस्ट टुकड़खोरों के विश्वास-घातक जड़ सिद्धान्तों के खिलाफ लड़ाई में लेनिन और स्तालिन की रचनाएँ हमारा एक जबर्दस्त हथियार हैं।

लेनिनवाद हमें सिखलाता है कि थ्योरी कोई जड़ वस्तु नही है। जनता के क्रान्तिकारी संघर्ष के साथ अटूट और गहरे सम्पर्क से वह निरन्तर विकसित और संपन्न होती रहती है। तमाम देशों के मजदूर वर्ग के आन्दोलन के अनुभवों के आम निचोड़ का ही नाम थ्योरी हैं। व्यवहार से दूर हो जाने पर वह उद्देश्य-हीन बन जाती है, उसी तरह जिस तरह कि जब व्यवहार अपने पथको क्रान्तिकारी थ्योरी के प्रकाश से नही आलोकित करता तो वह अंधा या पथभ्रष्ट हो जाता है।

> "लेकिन अगर उसकी रचना क्रान्तिकारी व्यवहार से अटूट संबंधके आधार पर की जाए तो मज़दूर-वर्ग के आन्दोलन में थ्योरी एक महान शक्ति बन सकती है; क्योंकि वही, केवल वही एक चीज है जो आन्दोलनमें आत्म-विश्वास पैदा कर सकती है, उसे दिशा-निर्देश करने की शक्ति दे सकती है, और चारों-ओरकी घटनाओं के छिपे पारस्परिक संबंधों की उसे जानकारी करा सकती है; क्योंकि वही, केवल वही एक चीज है जो व्यवहारकी न केवल इस बात का पता लगाने में सहायता कर सकती है कि विभिन्न वर्ग वर्तमान समय में किस दिशामें और क्यो बढ़ रहे हैं, बल्कि इस बातका पता लगाने में भी उसकी सहायता कर सकती है कि निकट भविष्यमें वे किस दिशा मे और क्यो बढ़ेंगे।" [पृष्ठ २०]

अपनी इस पुस्तक में स्तालिनने लेनिन की सोशलिस्ट क्रान्ति की थ्योरी की और उनके इस महान आविष्कार की कि एक देशमें भी सोशलिज़्म का निर्माण करना संभव है, सत्यता को प्रमाणित किया और हर दृष्टि और पहलू से उस थ्योरी का विकास और विस्तार किया। इस कार्यके द्वारा सोवियत जनता के संघर्ष और विजय के मार्ग को स्पष्ट करके उन्होंने उसे लड़ने के लिए लैस कर दिया और उसके अन्दर अपनी शक्ति पर विश्वास करने की भावना भर दी।

आगे की घटनाओ ने लेनिन और स्तालिन की थ्योरीको पूर्ण रूपसे सही साबित किया। जनता के दिमागों पर असर डालकर वह एक जबरदस्त भौतिक शक्ति बन गयी। पिछले पच्चीस वर्षोंका इतिहास पूंजीवाद के आम संकट का इतिहास है। पूंजीवाद सड-गल रहा है। महान अक्तूबर सोशलिस्ट क्रान्ति ने दुनिया के छठवें भाग पर एक नयी और उच्चतर सामाजिक व्यवस्था की, सोशलिज्म की

स्थापना कर दी। पूंजीवाद के आम संकट के मुकाबले में महान सोशलिस्ट देशकी जोरदार प्रगति, उसका विश्वासपूर्वक आगे बढ़ते जाना अत्यंत प्रभावशाली है। आधुनिक पूंजीवाद के पास जोरो-जुल्म, शोषण, ग़रीबी, विनाशकारी संकटों और भूख के अलावा जनता को देने के लिये और कुछ नहीं है। आज वह सम्पूर्ण मानव जातिको विनाशकारी युद्धों की खूनी आगमें झोंक कर स्वाहा कर देनेकी धमकी दे रहा है। लेकिन दूसरे महायुद्ध के परिणाम-स्वरूप सोशलिज़्म और पूंजीवाद की ताक़तोंका आपसी अनुपात सोशलिज़्म के पक्षमें बदल गया है। जनतंत्र और सोशलिज़्मके कैम्प की शक्ति आज बहुत विशाल है और साम्राज्यवादियों के तमाम खूनी और विश्वासघातक षड़यंत्रों को असफल कर देने की उसमें पूरी सामर्थ्य है।

जोसेफ़ स्तालिन ने अपनी पुस्तक में सर्वहारा वर्गकी डिक्टेटरशिप (अधिनायकत्व) के सिद्धान्त पर जो कि लेनिनवाद की मुख्य शिक्षा है, खास तौर से ध्यान से विचार किया। लेनिनने बार-बार कहा था कि मार्क्सवादी केवल उसीको कहा जा सकता है जो वर्ग-संघर्ष के साथ-साथ सर्वहारा वर्ग की डिक्टेटरशिप को भी स्वीकार करता हो। यह बतलाते हुए कि सर्वहारा डिक्टेटरशिप ही सर्वहारा क्रान्तिका मुख्य तत्व है, स्तालिनने लिखा,

> "सर्वहारा क्रान्ति, उसकी प्रगति, उसका अभिप्राय और उसकी सफलताएँ केवल सर्वहारा वर्ग की डिक्टेटरशिप के द्वारा ही वास्तविक बन सकती हैं। सर्वहारा वर्ग की डिक्टेटरशिप सर्वहारा क्रान्तिका हथियार है, वह उसका मूर्त्त स्वरूप और उसका सबसे बड़ा आधार है। उसके निर्माण का उद्देश्य है कि पहले तो उसकी मदद से पराजित शोषकों को कुचलकर सर्वहारा क्रान्ति की विजय को और दृढ़ बनाया जाए; और फिर, सर्वहारा क्रान्ति को पूरा किया जाए, क्रान्तिको सोशलिज्म की पूरी विजय तक ले जाया जाए।" (पृष्ट ३४–३५...)

इस से स्पष्ट है कि सर्वहारा वर्ग की डिक्टेटरशिप को केवल एक क्षण-भंगुर, संक्रमण-कालीन चीज न समझ लेना चाहिए। उसका एक पूरा ऐतिहासिक युग है— जिसमें पूँजीवाद का कम्युनिज्म में पूर्ण संक्रमण होता है।

सोवियत सत्ता, सर्वहारा वर्ग की डिक्टेटरशिप की राजसत्ता का एक रूप है जिसे लेनिनने ढूंढ़ निकाला था। सोवियत सत्ता राजसत्ताके संगठन का एक नया स्वरूप है; यह स्वरूप पुराने पूँजीवादी जनतान्त्रिक और पार्लामेण्टवादी स्वरूपसे सैद्धान्तिक रूपसे भिन्न है। राजसत्ताके इस नये स्वरूपकी रचना श्रमजीवी जनताके शोषण और उत्पीड़न करनेकी दृष्टिसे नहीं होती; उसकी रचना का उद्देश्य श्रमजीवी जनताको हर प्रकारके शोषण और उत्पीड़नसे छुटकारा दिलाना होता है।

पूँजीशाही जनतंत्रके खोखलेपन का पर्दा-फाश करते हुए, स्तालिनने लिखा,

"पूँजीवादके अन्तर्गत शोषित जनता देशकी शासन-व्यवस्थाके कार्य में कोई वास्तविक भाग नहीं लेती, न ले ही सकती है, क्योंकि अगर और सब कारणों को छोड़ दिया जाए तब भी यह तो साफ़ है कि पूँजीवाद के अन्तर्गत अधिक से अधिक जनवादी शासन मे भी सरकारों को जनता नहीं चुनती, उनकी नियुक्ति राथ्सचाइल्ड, स्टिननेस, रौकफैलर और मार्गन ऐसे पूँजीशाह करते हैं। पूँजीवाद के अन्तर्गत जनतंत्र, पूँजीशाही जनतंत्र यानी मुट्ठीभर शोषकों का जनतंत्र होता है, उसका आधार शोषित बहु-संख्यकों के अधिकारों पर कुठाराघात होता है, वह इन बहुसंख्यकों के विरुद्ध होता है। (पृष्ठ ४०)

आज जब कि पूँजीवादका आम संकट और भी गहरा होगया है, पूँजीशाही जनतंत्र भी सड़-गलकर पतन की चरम सीमा पर पहुँच गया है, वह बिल्कुल ही जर्जर हो गया है। शासक वर्ग बहुत तेजीके साथ पूँजीशाही जनतंत्रके ऊपरी आडम्बर को भी खतम करके शोषित जनता का बर्बर दमन कर रहा है। अपने पूँजीवादी देशो में मजदूर वर्ग और आम जनवादी आन्दोलनको दबाने के लिये वह फासिस्ट-उपायों और तरीकों का इस्तेमाल करता है, और उपनिवेशों में वहाँ के स्वातंत्र्य आन्दोलनों को खून में डुबोनेके लिए वह हथियारों की शक्ति का प्रयोग करता है। अपनी पुरानी जर्जर व्यवस्थाको बचाने की कोशिशमें जघन्य से जघन्य ऐसा कोई भी कुकर्म नहीं है जो वह नहीं करता। पूंजीशाही सरकारों के स्वरूप को छिपाने के लिए जनतंत्र का कितनाही ढोल पीटा जाए, लेकिन उसको छिपाना अब दिनोदिन मुश्किल होता जा रहा है।

सोवियत शक्ति जनतंत्र का सर्वोच स्वरुप है। सोवियत राजसत्ता का इतिहास उसके विकास का और उसकी विराट रचनात्मक शक्तियों के प्रस्फुटनका इतिहास है। सोवियत की राजसत्ता वास्तव में जनता की राजसत्ता है; और यही आर्थिक और सास्कृतिक क्षेत्रों मे उसकी महान सफलताओं का, उसकी अजेय राजनीतिक, आर्थिक और सैनिक शक्ति का "रहस्य" है। दुसरे महायुद्ध में इस शक्ति का दुनियाको पर्याप्त परिचय मिल चुका है। जनता के तमाम रचनात्मक अनुभवों के आधार पर स्तालिन ने कई पुस्तिकाएँ लिखीं; और उनके द्वारा सोशलिस्ट राजसत्ता, उसके विकास की विभिन्न अवस्थाओं, उसके कामों, और धीरे-धीरे कम्युनिज़्म की उच्चतर अवस्था में संक्रमण के संबंध मे उसकी भूमिका की एक पूर्ण और सुसंगत थ्योरी का उन्होंने निर्माण किया। इतिहासकी मौजूदा परिस्थितियों में मार्क्सवाद-लेनिनवाद का रचनात्मक ढंगसे विकास करते हुए उन्होंने बहुत ही बड़ा और महत्व का यह परिणाम निकाला कि कम्युनिज़्म की उच्चतर मंज़िल में भी—अगर पूंजीवादी घेरा

तब तक भी कायम रहता है—राजसत्ता को अनिवार्य रूपसे कायम रखा जाएगा।

लेनिनने पहले ही लिखा था कि,

"यह तो निश्चित है कि पूंजीवादसे कम्युनिज़्म के संक्रमण काल में बहुत से और अनेकों तरह के राजनीतिक स्वरूप ऊपर आएँगे, लेकिन उन सबका मूल तत्व अनिवार्य रूपसे एक ही होगा, यानी वे सब सर्वहारा वर्ग की डिक्टेटरशिप होंगे।"

सोवियत राजसत्ता मजदूर वर्ग की राजनीतिक शक्ति का सर्वोच्च स्वरूप है। लेकिन इसके मानी यह नहीं कि उसकी राजसत्ताके और कोई स्वरूप हो ही नहीं सकते। मध्य और दक्षिण-पूर्वी योरप के देशों मे जो कि सोवियत संघ की सहायता से —जिसने फासिज़्म को खतम करने मे मुख्य काम किया है–पूंजीवादी जाल से बाहर निकल आए हैं, पूंजीवाद से सोशलिज़्म मे संक्रमण राजसत्ताके एक दूसरे ही प्रकार के स्वरूप के द्वारा हो रहा है। इस स्वरूपका–जनता के जनवादी जनतंत्रका आविष्कार वही पर हुआ। उसके अन्दर तमाम मुख्य पोजीशनें (स्थान) कम्युनिस्ट पार्टीके नेतृत्वमें मज़दूर वर्गके हाथ मे हैं। इन देशो में सर्वहारा वर्ग की डिक्टेटरशिप का काम जनता की ये जनवादी हुकूमतें ही कर रही हैं, वे सर्वहारा वर्ग की डिक्टेटरशेपका ही एक स्वरूप हैं। इन जनताके जनतंत्रों मे भी सोशलिज्म की ओर संक्रमण का काम एक जबरदस्त वर्ग-संघर्ष के द्वारा हो रहा है। उसके द्वारा पूँजीवादी संबंधोंको खतम किया जा रहा है और शहरों और देहात दोनोंमे सोशलिज़्मके आर्थिक स्वरूपों का अधिकसे अधिक विकास किया जा रहा है।

× × ×

जोसेफ स्तालिनने किसान-समस्याका क्रान्तिकारी सर्वहारा वर्गके एक साथीकी समस्याके रूपमे जबरदस्त विकास किया। सोशलिज़्मकी स्थापनाके संघर्षकी दृष्टिसे सर्वहारा वर्गके लिए किसानोकी तरफ़ एक सही नीतिको अपनाना वास्तवमे इतने अधिक महत्वकी चीज़ है कि उसे आँका नही जा सकता। यह बात तो इस चीजसे ही साफ़ है कि आज तक भी लगभग हर देश मे किसानों का बहुत बडा बहुमत है। लेनिन और स्तालिन सिखलाते हैं कि पूंजीपति वर्ग के विरुद्ध अपने संघर्ष मे सर्वहारा वर्ग को जाँगर चलानेवाली तमाम किसान जनता को अपना रिजर्व समझना चाहिए; वे सिखलाते हैं कि किसानो को सोशलिज़्म की ओर ले जाने की मजदूर वर्ग मे पूर्ण सामर्थ्य है। स्तालिन ने लिखा कि

"सत्ता पर अधिकार करने के बाद सर्वहारा वर्ग इस रिजर्व का उपयोग कर सकता है और उसे उसका अवश्य उपयोग करना चाहिए जिससे कि उद्योग धन्धों का खेती-किसानीके साथ संबंध स्थापित किया जा सके और सोशलिस्ट पुनःनिर्माण के काम को आगे बढ़ाया जा सके, और जिससे कि सर्वहारा वर्ग की डिक्टेटरशिप के लिए वह आवश्यक आधार तैयार किया

जा सके जिसके बिना सोशलिस्ट आर्थिक-व्यवस्था की ओर संक्रमण कर सकना असंभव है...।" (पृष्ठ ५६)

हमारे देशके विकासकी यह रूपरेखा स्तालिनने सोशलिस्ट पुनःनिर्माण कार्य की प्रारंभिक अवस्था में ही बतलायी थी। आगे के विकास ने उसकी सत्यता को पूर्ण रूपसे प्रमाणित कर दिया है। लेनिन और स्तालिन की पार्टीने पहले तो सर्वहारा वर्ग को किसानों के मुख्य भाग से लड़ाने की, सर्वहारा वर्ग और किसान जनताके बीच विरोध की एक खाई खोदनेकी ट्राट्स्कीपंथियों और बुखारिनवादियों की तमाम गन्दी कोशिशों को असफल बनाया और फिर मज़दूरों और किसानों के मेल को उसने मजबूत किया, सोशलिस्ट अर्थ-व्यवस्था की सफल नींव डाली और देश में एक महान क्रान्तिकारी परिवर्तन पैदा कर दिया—छोटे-छोटे खेतवाले करोड़ों किसानोंको बड़े पैमाने पर सामूहिक खेती करनेके मार्ग पर लगा दिया। सोवियत संघ मे सामूहिक खेती की व्यवस्था की विजय लेनिन और स्तालिन के विचारों की शानदार विजय थी। सोवियत संघ का यह अनुभव जनता के जनतंत्रों के लिए असीम महत्व रखता है क्योंकि आज वे भी खेती-किसानी के क्षेत्र में सोशलिज़्म की नींव डालने के जटिल काम में जुटे हुए हैं।

* * *

साम्राज्यवाद के युगमें मुट्ठीभर साम्राज्यवादी ताकतों और उपनिवेशों और परतंत्र देशोंके करोड़ों शोषित और गुलाम लोगों का आपसी विरोध चरम सीमा पर पहुँच गया है। इसलिए राष्ट्रीय और औपनिवेशिक प्रश्न का विशेष महत्व हो जाता है। जोसेफ़ स्तालिनने दिखलाया कि दूसरी इण्टरनेशनल के "बहादुरों" की दृष्टि में राष्ट्रीय समस्याका संबंध केवल योरप की कुछ जातियों से था जिन्हें बराबरी के अधिकार अप्राप्त थे। एशिया और अफ्रीका के करोड़ों लोग जो पाशविक और बर्बर उत्पीड़न की अकथनीय परिस्थितियों में जीवन बिता रहे हैं, उनकी तरफ़ ध्यान देने की इन "बहादुरों" ने कोई जरूरत नहीं समझी थी। पूंजीवादी विद्वेषोंसे प्रभावित इन सज्जनों में इतनी हिम्मत कहाँ हो सकती थी कि विभिन्न रंगों के लोगों को वे एक ही श्रेणी में रख दें! जहाँ तक इस प्रश्नका संबंध है वे पूंजीवादी विचारधारा के इस मतको पूर्ण रूपसे मानते थे कि "सफेद चमड़ेवाली जातियाँ" दूसरी जातियोंकी तुलना में उच्च हैं। सफ़ेदों और कालों, योरपियनों और एशियाइयोंके बीचकी इस दीवालको केवल लेनिनवाद ही ढहा सका। इस दीवालको गिराकर जातियों की समस्याको उसने उपनिवेशों की समस्या के साथ जोड़ दिया।

> "जातियोंकी समस्या इस तरहसे एक खास, और देश के अन्दर की एक समस्या से बदलकर एक आम और अन्तरराष्ट्रीय समस्या बन गयी; वह परतंत्र देशों और उपनिवेशों की उत्पीड़ित जनताको साम्राज्यवादी जुए से मुक्ति दिलाने की एक विश्व समस्या बन गयी।" (पृष्ठ ५८)

फिर, दूसरी इण्टरनेशनले के युग मे जातियों की समस्याको पूँजी की ताकतको खतम करने की आम समस्यासे अलग करके एक बिल्कुल सुधारवादी ढंगसे देखा जाता था। लेनिनवाद ने साबित किया कि जातियो की समस्या सर्वहारा क्रान्तिकी आम समस्याका, सर्वहारा वर्ग की डिक्टेटरशिप की समस्याका ही एक अभिन्न अंग है। स्तालिन ने भविष्यवाणी करते हुए लिखा कि चीन ऐसे बड़े देशों की आज़ादी का आन्दोलन अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि उनकी आज़ादीका हर कदम "साम्राज्यवाद की कमर पर एक ज़बरदस्त हथौड़े की सी चोट है"। (पृष्ठ ६१)

आज अमरीकी साम्राज्यवादियों के टुकड़खोर प्रतिक्रियावादी गुटों के विरुद्ध चीनी जनता के संघर्ष की सफलताओं ने साम्राज्यवादियों के शिविर में निराशा का अंधकार पैदा कर दिया है।

जोसेफ स्तालिन ने अपनी इस महान पुस्तकमें एक नयी प्रकार की पार्टीके बारेमे लेनिनकी शिक्षाको और विकसित किया। इस नये युगने—जिसमें मज़दूरवर्ग के सामने साम्राज्यवादका तख्ता उलटकर ताकतपर अधिकार करनेकी समस्या एक प्रत्यक्ष समस्या बन गयी थी—एक ऐसी परिस्थिति पैदा कर दी थी जिसमें,

> "एक नयी पार्टी, एक जंगजू पार्टी, एक ऐसी क्रान्तिकारी पार्टीकी स्थापना करना आवश्यक हो गया था जिसमें ताकतके संघर्षमे सर्वहारा वर्गका नेतृत्व करनेकी हिम्मत हो, जिसे क्रान्तिकारी अवस्थाकी जटिल परिस्थितियों के बीच भी दिशा-निर्देश कर सकनेका अनुभव हो, और जिसमें मार्गमें छिपी हुई चट्टानोंसे बचते हुए सर्वहारा वर्गके जहाजको खेकर आगे ले जानेकी योग्यता हो।
>
> "ऐसी पार्टी के बिना साम्राज्यवाद का तख्ता उलटने का और सर्वहारा वर्ग की डिक्टेटरशिप कायम करनेका विचार करना भी व्यर्थ है।"
>
> "यह नयी पार्टी लेनिनवाद की पार्टी है।" (पृष्ठ ८३)

नयी तरह की इस मार्क्सवादी पार्टीकी शक्तिका स्रोत यह है कि उसे सामाजिक विकास के वैज्ञानिक नियमो का ज्ञान रहता है। यह ज्ञान उसे मार्क्सवाद-लेनिनवाद की क्रान्तिकारी थ्योरी से मिलता है। उसकी शक्ति का स्रोत इच्छा और कार्य की वह एकता है जो पूंजीपति वर्ग और उसके एजेण्टों के हर तरह के असर के खिलाफ किये जानेवाले संघर्ष की भट्टी में तपकर कायम होती है। पार्टी मजदूर-वर्ग का सबसे आगे बढ़ा हुआ दस्ता है; वह उसके युद्ध के कमाण्डरों की जमात है। ये कमाण्डर श्रमजीवियों के तमाम विभिन्न जन-संगठनों का नेतृत्व करते हैं और उनके हर काम में उनका पथ-प्रदर्शन करते हैं।

"पार्टी सर्वहारा वर्ग के संगठन का सर्वोच्च रूप है। सर्वहारा वर्ग की और उसके तमाम वर्ग संगठनों की पार्टी ही मुख्य पथ-प्रदर्शक शक्ति है।"
(पृष्ठ ८६)

बोल्शेविक पार्टीका निर्माण लेनिन और स्तालिनने अनेकों दुश्मनों के खिलाफ़ संघर्ष के दौरान में किया था। सोवियत सत्ता के लिए मजदूर वर्गका नेतृत्व करके सोवियत संघ में सोशलिज्मके निर्माण के जबरदस्त संघर्षों मे आम जनताका पथ-प्रदर्शन करके, बोल्शेविक पार्टीने तमाम जनता के बीच महान आदर प्राप्त कर लिया है। लेनिन और स्तालिन की पार्टी को हमारे देशकी जनता अपना परखा हुआ नेता और पथ-प्रदर्शक मानती है। वह उसे सोवियत संघ की महान ऐतिहासिक विजयों का संगठनकर्ता मानती है, उन्हे चाहे देश के शान्तिपूर्ण निर्माण के कार्य मे हासिल किया गया हो चाहे देश के तमाम बाहरी दुश्मनोंके खिलाफ लड़ाईमें। वह जानती है कि १६१६ में चर्चिलके क्रान्तिविरोधी हस्तक्षेपसे लेकर १९४१ में हिटलरी दरिन्दों के आक्रमण तक, देश के प्रत्येक दुश्मनको पार्टीके नेतृत्वमें ही हराया गया है। लेनिन और स्तालिन की पार्टीकी नीति ही सोवियत व्यवस्थाका बुनियादी आधार है।

स्तालिन की यह महान पुस्तक मार्क्सवाद-लेनिनवादके भाण्डारमें एक बहुमूल्य इज़ाफ़ा है। उसमें विकसित किये गये विचार करोड़ों आदमियोंके विचार बन गये हैं और सोशलिज़्मके महान संघर्ष में अनुपम वीरता से लड़नेके लिये उन्हें अनुप्राणित कर रहे हैं। यह पुस्तक आज भी उतनी ही सच्ची और उपयोगी है जितनी वह आजसे एक-चौथाई शताब्दी पहले थी। वह तमाम दुनियाके करोड़ों आगे बढ़कर लड़नेवाल लोगोंको लेनिनके विजयके अमर विज्ञानकी सैद्धान्तिक जानकारी कराती है। इस विज्ञानकी सत्यताकी हमारे युगकी महान ऐतिहासिक लड़ाइयोंमें पूरी परीक्षा हो चुकी है। यह पुस्तक दुनियाकी जनताको साम्राज्यवादसे लड़नेका, पूँजीवादी शोषण और उत्पीड़नको खतम करनेका जो एक मात्र तरीका है, उसीकी शिक्षा देती है।

[४ मई, १९४९ के न्यू टाइम्स से उद्धृत]

सोवियत रूस की अपूर्व आर्थिक प्रगति

सोवियत अखबारों में १९४९ के दूसरे चतुर्थांश की सोवियत संघ की राष्ट्रीय-आर्थिक योजना के पूरे होने पर रिपोर्ट प्रकाशित हुई है। वह समाजवादी अर्थतंत्र की महान सफलताओं का नया, ठोस सबूत है।

इन सफलताओं की सबसे पहली खास बात यह है कि सोवियत सरकारने दूसरे चतुर्थांश में औद्योगिक पैदावार के प्रोग्राम को बढ़ाया था मगर न सिर्फ वह, बल्कि उससे ज़्यादा पूरा हुआ है। इसी तरह १९४९ के पहले अर्धांश की कुल औद्योगिक पैदावार की राज्य-योजना ज़्यादा पूरी हुई है।

अगर इस वर्षकी पिछले वर्षसे तुलना की जाय तो सोवियत राष्ट्रीय अर्थतंत्रकी सफलताओंका विस्तार एकदम साफ-साफ़ सामने आ जाता है। लोहा और इस्पात, कोयला और तेल, इंजिन और रेलवे कार, मोटर और बस, ट्रैक्टर और कम्बाइन, लकड़ी और कागज, सीमेन्ट और कांच, सायकिल और रेडियो सेट, घड़ी और कैमरा, कपड़ा और जूते, गोश्त और मछली, चाय और सिगरेट—पैदावारकी हर चीज सोवियत उद्योगने पिछले वर्षके इतने समयकी तुलनामें कहीं ज़्यादा मात्रामें तैयार की। १९४९ के दूसरे चतुर्थांशमें सोवियत संघकी कुल औद्योगिक पैदावार १९४८ के इतने ही समयकी पैदावारसे २० फ़ी सदी ज़्यादा रही।

केवल एक वर्षमें औद्योगिक पैदावारमें २० फ़ी सदी की बढ़ती! आर्थिक प्रगति में यह तेजी केवल समाजवादी व्यवस्थामें ही सभव है।

दूसरे महायुद्ध को—हमारे देश के इतिहास में सबसे अधिक निर्मम और मुश्किल युद्ध को अभी चार वर्षसे भी कम बीते हैं। मगर जून १९४९ में ही सोवियत उद्योग की रोजाना औसत कुल पैदावार लड़ाई से पहले के १९४० के वर्षसे ४१ फ़ी सदी ज़्यादा रही। इस बात के महत्व को बढ़ा कर नहीं कहा जा सकता—विशेष रूप से जब हम यह याद रखे कि लड़ाई में काफी कम नुकसान उठाने वाले योरप के पूँजीवादी देशों के उद्योगों में पैदावार के बढ़ने की नहीं, बल्कि घटने की प्रक्रिया साफ़-साफ नजर आ रही है।

लड़ाई के बाद के पहले वर्ष में सोवियत जनता और उसकी सरकारने आर्थिक पुनर्निर्माण और विकास की अपनी पंच-वर्षी योजना में तै किया था कि उस समय के अन्त तक, १९५० तक वे लड़ाईसे पहले की तुलना में १४८ फीसदी मूल्यकी औद्योगिक पैदावार करेंगे। तब इजारेदारों के टुकड़ख़ोर पूँजीवादी अर्थशास्त्री अविश्वास के

साथ मुस्कराये थे। मगर सिर्फ साढ़े तीन वर्ष बीते हैं और आज ही सोवियत उद्योग की रोज़ाना की औसत पैदावार लगभग उस स्तर पर पहुँच गयी है जो पंचवर्षी काल के अन्ततक के लिये तै किया गया था। सोवियत व्यवस्था, की समाजवादी व्यवस्थाकी ऐसी ही शक्ति है। सोवियत सरकारकी स्तालिन नीतिका ऐसाही स्पष्ट फल है। यह तमाम सोवियत जनता के, जो अपने देशकी भलाई के लिये काम कर रही है स्वेच्छित रचनात्मक प्रयत्नोंका फल है।

पहले अर्धांश में राष्ट्रीयं अर्थतंत्र की अपूर्व सफलताएँ सिर्फ उद्योगके क्षेत्र में ही नहीं हुई हैं बल्कि यातायात और खेती के क्षेत्रमें भी हुई हैं।'इसकी झलक इस बातसे मिलती है कि पिछले वर्ष की तुलना में इस वर्ष ६,०००,००० हैक्टेअर ज्यादा जमीन पर फ़सल बोयी गयी। फ़सल के क्षेत्र में इस बढ़ती का मतलब है कि अनाज, आलू, साग-भाजी, कपास, फ्लैक्स, हैम्प, सूरजमुखीके बीज और दूसरी खाद्य सम्बंधी तथा औद्योगिक फ़सलों में दसियों लाख सेन्टनर ज्यादा पैदावार होगी। और यह ध्यान में रखने की बात है कि इस वर्ष की फसल अच्छी है। और खेती के आगे विकास की संभावानाएँ सचमुच महान हैं। कारण यह कि रेतीले क्षेत्रों और जंगलात में प्रकृति का पुनर्निमाण करने की स्तालिन योजना सफलताके साथ पूरी की जा रही है तथा सोवियत उद्योगके विकास की वजह से खेती के लिये अधिकसे अधिक अच्छे औजार पाना संभव है। १९४९ के पहले वर्ष में खेती को पिछले वर्ष के इतने ही समय की तुलना में ५० से १०० फ़ी सदी तक ज्यादा मोटर-ट्रक, ट्रैक्टर, फ़सल काटने के कम्बाइन, थ्रेशर और दूसरी मशीनें मिलीं।

यह कहने की जरूरत नहीं है कि सोवियत व्यवस्थाके नीचे उद्योग, यातायात और खेती में प्रगति का लाजिमी तौर पर मतलब होता है तमाम मेहनतकश जनता के रहन-सहन के स्टैण्डर्ड में उन्नति। सोवियत संघ के हर क्षेत्र और हर जिले में रहन सहन के बढ़ते स्टैण्डर्ड देखे जाते हैं। खाद्य पदार्थों और तैयार माल की बराबर बढ़ती खपत से यह बात साफ़-साफ़ प्रगट होती है। आँकड़े बताते हैं कि १९४९ के दूसरे अर्धांश में पिछले वर्ष के इतने ही समय की तुलना में १५ फ़ी सदी ज़्यादा खाद्य-पदार्थ बेचे गये। खाद्य पदार्थों के अलावा आम खपत के दूसरे मालोंकी बिक्री में २७ फी सदी की बढ़ती हुई। यह ध्यान देने की बात है कि बिक्री में विशेष रूप से बढ़ती ऐसे मूल्यवान खाद्य पदार्थों की हुई जैसे गोश्तके पदार्थ, मिठाई और चीनी। दूसरे यह बढ़ती खाद्य-पदार्थों के अलावा ऐसे माल की बिक्री में हुई जैसे गरम कपड़े (८७ फी सदी), सिल्क (६० फ़ी सदी), रेडिओ सेट, सायकिल और घड़ियाँ।

तमाम सोवियत जनता की और हर सोवियत नागरिक की खुशहाली राष्ट्रीय अर्थतंत्र के विकास के साथ, समाजवादी निर्माण की सफलताओं के साथ अभिन्न रूप से जुड़ी हुई है। और ये सफलताएँ नजर आती हैं माल की ज़्यादा पैदावार में, उनकी ज़्यादा अच्छी क्वालिटी और ज़्यादा विभिन्नता में, पैदावार के कम ख़र्चे में,

मशीनों आदि के निर्माण-कार्य की अधिकाधिक बढ़ती में, मजदूरों की बराबर बढ़ती कार्य-पटुतामें और श्रम की उत्पादक शक्ति में विशाल बढ़ती में।

हर पूँजीवादी देशमें ऐसे हजारों-लाखों विशेषज्ञ हैं जो अपने ज्ञान को अमल में नहीं ला सकते। सोवियत संघ में १९४९ के दूसरे चतुर्थांशमें यूनीवर्सिटियों, टेक्नीकल कालेजों और अन्य विशेष ट्रेनिंग कालेजों से ३,९०,००० नौजवान विशेषज्ञ शिक्षित होकर निकले और उनमें से एक भी बिना काम के नहीं रहा है—न वह कभी भी अपनी विशेष दिशा में बिना काम के रहेगा। उनमेंसे हरेक देशके अर्थतंत्र में अपनी शक्ति और अपनी योग्यता को अमल में लायेगा।

मजदूरों के बारे में भी यही बात सही है। यह ध्यान देने की बात है कि केवल एक वर्षमें (१९४८के दूसरे चतुर्थांश की तुलनामें) राष्ट्रीय अर्थतंत्रमें काम करनेवाले व्यक्तियों की संख्या में १,६००,००० की बढ़ती हुई। एक तरफ़ सोवियत संघ में काम करनेवालों की संख्या बढ़ रही है और दूसरी तरफ़ पूँजीवादी देशोंमें काममें लगे लोगोंकी संख्या घट रही है; वहाँ करोड़ों जनताकी गरीबी और बेकारी बढ़ रही है। यह तुलना ही इस बातका पक्का सबूत है कि शोषक पूँजीवादी व्यवस्था की अपेक्षा सोवियत व्यवस्था, समाजवादी व्यवस्था कहीं अधिक अच्छी और महान है।

सोवियत संघ के मंत्रियों की काउंसिल के केन्द्रीय आँकडा विभागने १९४९ के दूसरे अर्धांश की अपनी प्रकाशित रिपोर्ट में कहा है कि आँकडे इस बातका सबूत हैं कि सोवियत अर्थतंत्र की लगातार प्रगतिको आगे बढ़ाने में और जनता का माली और सांस्कृतिक स्टैण्डर्ड ऊँचा उठाने में महान सफलताएँ मिली हैं। यह बात कहनेके लिये उसके पास हर कारण है।

और आज पूँजीवादी दुनिया को एक क्रूर आर्थिक संकट अपने गिरिफ्त में ले रहा है—इस संकट की वजह से करोड़ों जनता भुखमरी की भट्ठी में झोंक दी गयी है और भविष्य में और भी भयंकर नतीजा होनेवाला है। इस पृष्ठभूमि में सोवियत संघके आर्थिक विकासका यह सबसे ताजा सर्वे विशेष रूप से महान है।

(न्यू टाइम्स, अंक ३१ से)

पूँजीवादी देशों पर आर्थिक संकट की छाया

पी. तोदोरोव

पूँजीवादी देशों की सरकारें, आर्थिक और औद्योगिक इजारेदार और उनके पालतू अखबार अब आनेवाले आर्थिक संकट के उन पहलुओं का जिक्र करने लगे हैं जिन्हें और छिपाया नहीं जा सकता। "घबराहट दूर करने" और हारने पर भी मुँह ठीक बनाये रखने की कोशिश की जाती है "पश्चिमी योरप में आर्थिक बहाली" और "अमरीका की बढ़ती शक्ति का वर्णन करके"।

मगर खून कहीं छिपता है! बदशकल असलियत ज़्यादा से ज़्यादा सामने आती जाती है, विभिन्न पूँजीवादी अखबारों और अन्तरराष्ट्रीय संगठनों की आँकड़ा-रिपोर्टों तक से वह जाहिर है।

राष्ट्र संघ की सेक्रेटेरियटने २८ जुलाई को संसार की आर्थिक परिस्थिति पर जो रिपोर्ट पेश की उसका आखिरी हिस्सा इस सम्बंधमें बहुत मतलबका है। इस रिपोर्ट में हम पढ़ते हैं कि सन १९४८ में सभी देशों में—सोवियत संघ और जनता के जनतंत्रों को छोड़कर—औद्योगिक और खेती की पैदावार में कमी हुई। रिपोर्ट बताती है कि सोवियत संघ और जनता के जनतंत्रों में उद्योग और खेती में आगे बढ़ती हो रही है। १९४९ की शुरुआत के साथ पूँजीवादी देशोंकी औद्योगिक और खेती की पैदावार में तेजी के साथ मन्दी आयी।

अमरीका में १९४८ के आखिरी तीन महीनों की तुलना में १९४९ के शुरू में औद्योगिक पैदावार में ३ फी सदी की कमी हुई। डालर का मूल्य भी गिरा। बेकारी न सिर्फ औद्योगिक क्षेत्र में बल्कि खेती के क्षेत्र में भी बढ़ी। १९४८ में खेत मजदूरों की संख्या १९४७ की सख्यासे १,८००,००० कम थी। अमरीकाके सरकारी ऑकडों तक के अनुसार आज देशमें ५० लाख आदमी बेकार हैं। और, जैसा कि हेनरी वैलेसने कहा है, यह विश्वास करने का हर कारण है कि अगले वर्ष बेकारों की संख्या १ करोड़ हो जा सकती है।

सरकारी ऑकडों के अनुसार मार्च और जून के बीच औद्योगिक पैदावार में लड़ाई से पहले की अधिक से अधिक पैदावार की तुलना में १० फ़ी सदी की गिरावट आयी। जुलाई में लोहे के गलाने में औसतन २४·२ फी सदी की कमी हुई।

कर्जों और "मार्शल योजना" के हुक्मनामों के बावजूद अमरीका का निर्यात-व्यापार गिर रहा है। १९४७ की तुलनामें १९४८ में अमरीका का निर्यात व्यापार

मूल्य के हिसाव से १८ फी सदी और मात्रा के हिसाव से २३ फ़ी सदी गिरा।

मुनाफों से फूल-फूल कर मोटे हुए अमरीकी इजारेदार कोशिश कर रहे हैं कि दूसरे पूँजीवादी देशों को वरवादी और गुलामी के गढ़ेमें ढकेलकर खुद संकट से बचें। इस तरह वे इन देशोंकी आर्थिक मुसीबतोंको ही और बढ़ा रहे हैं। इन देशोंको भी संकट में धकेलकर वे अपनेको वरवादी से किसी भी तरह बचा नहीं सकते। पूँजीवाद के विकासका यह स्वभाव ही है।

पश्चिमी योरप में १९४९ के पहले चतुर्थांश में औद्योगिक पैदावार १९४८ के उतने ही समयकी तुलना में कम हुई। बेकारी तेजीसे वढ़ रही है। १९४९ के केवल तीन महीनों में ही फ्रांस मे रजिस्टर्ड बेकारों की संख्या में डेढ़ गुनी वढ़ती हुई। जर्मनी के अमरीकी और ब्रिटिश क्षेत्रों में बेकारी दुगुनी वढ़ी। हौलैण्ड में भी वह दुगनी वढ़ी। नार्वेमें वह लगभग दुगुनी हुई। स्विटजरलैण्डमें लगभग तिगुनी वढी, और इसी प्रकार।

पश्चिमी योरपीय देशोंमें से अधिकतर में खेतीकी पैदावार लड़ाईसे पहलेके स्तर तक नहीं पहुँची थी और १९४९ में उसमें गिरावट आ गयी। पश्चिमी योरपके अधिकतर देशोंमे वर्षके पहले चतुर्थांशमें गोश्तकी खपत लड़ाईसे पहलेके ऑकड़ेकी केवल ६०—७० फी सदी हुई। रिपोर्टने नोट किया है कि पश्चिमी योरपमें माल और जरूरी पदार्थोंकी कीमतें १९४८ में वरावर वढ़ती रही हैं और दूसरी ओर तनखाओंमें वढ़ती थोड़ी फ़ी सदी तक ही हुई है। इससे मेहनतकश जनता की असली आमदनी कम हुई है।

१९४८ में पश्चिमी योरोपीय देशों के बीच व्यापार लडाई से पहले के स्तर का केवल ७० फ़ी सदी ही हुआ। ये देश अमरीका पर निर्भर हैं और उसने इन के विदेशी व्यापार को उन्हीं दिशाओं में संचालित किया जो अमरीकी दृष्टिकोण से सबसे अधिक लाभदायक थे। अमरीका ने इनके पास अनाज, कोयला, लकड़ी, कपड़ा और दूसरी चीजें भेजीं। इन सब चीजों को वे योरपमें ही कहीं अधिक अनुकूल शर्तों पर आसानीसे खरीद सकते थे। अमरीका ने पश्चिमी योरप में अपना निर्यात बढ़ाया और इस तरह योरपीय देशों में "दृढ़ डालर का अकाल" वढा दिया। १९४८ में पश्चिमी योरप का निर्यात १९३८ के स्तर तक भी नहीं पहुँचा जो कि खुद लड़ाई से पहले के तमाम वर्षों में सबसे कम था। वह १९४७ के मुकावले में सिर्फ ६६ फ़ी सदी हुआ। फ़िर भी अमरीका से पश्चिमी योरप में निर्यात इन देशों से आनेवाले माल की तुलना में २४६ फी सदी ज़्यादा हुआ। नतीजा यह हुआ कि १९४८ में पश्चिमी योरप के अमरीका के साथ वैदेशिक व्यापार में ३२,४७० लाख डालर की कमी हुई।

देशों के अनुसार देखने पर इस कमी की तस्वीर इस प्रकार सामने आती है: ब्रिटेन—३९०० लाख डालर, फ्रांस—५०९० लाख डालर, इटली—२९७० लाख डालर, पश्चिमी जर्मनी—८६२० लाख डालर, हालैण्ड—२४६० लाख डालर, वेल्जियम और लुक्जेमवर्ग—२००० लाख डालर, स्विटजरलैण्ड—६९० लाख

डालर, नार्वे ५७० लाख डालर, स्वीडन—३०० लाख डालर, डेनमार्क—३५० लाख डालर और इसी प्रकार।

इस तरह पश्चिमी योरप के देशों से उनकी राजनीतिक आजादी छीनने के साथ-साथ अमरीका उनके गले में डालर का फन्दा कसता जा रहा है और उन्हें आर्थिक संकट की खाई में खींचता जा रहा है। इस संकट के पहले आसार हमारे सामने हैं: पैदावार में कमी, बढ़ती बेकारी, मुद्रा के मूल्य में गिरावट, पूँजीवादी देशोंके भीतर वर्ग विरोधों में और इन देशों के बीच विरोधों में गरमाहट। राष्ट्र संघ की सेक्रेरिटेयट की रिपोर्ट में भी इस बात का जिक्र किया गया है।

दूसरा महायुद्ध खतम होने पर अमरीका ने लैटिन अमरीका, एशिया, सुदूर और निकट पूर्व तथा अफ्रीका में अपनी पूँजीका बहाव बढ़ाया और हर जगह से ब्रिटिश पूँजी को दबाकर निकालना शुरू किया। १९४८ में विदेशी राज्यों को अमरीका का कर्जा और 'मदद' और और साथ-साथ इन विदेशों मे अमरीकी इजारेदारों द्वारा लगायी पूँजी ६६,९३० लाख डालर तक पहुँची। इस बात को विशेष रूपसे नोट किया गया है कि अमरीकी इजारेदारों ने १९४९ मे जो कुल १४,९८० लाख डालर पूँजी सीधे सीधे लगायी उसकी ४५ फी सदी उपनिवेश और अर्द्ध-उपनिवेश देशों में लगायी गयी। ब्रिटिश उपनिवेशों और पश्चिमी योरप के देशों में अमरीकी पूँजी की इस बढ़ती पैठ से पश्चिमी योरप के ट्रस्टों और इजारेदारों को चिन्ता ही हो सकती है। वे इस बात के लिये तैयार नहीं है कि बिना लडाई के ही अपने अति-मुनाफे के साधनों को एटलांटिक महासागर के दूसरी ओर के स्टाक-ब्रोकरों के हाथ सौप दें। यह साफ़ है कि जैसे-जैसे संकट गहरा होगा वैसे-वैसे साम्राज्यवादी पक्षके भीतर अन्तर-विरोध तेज होंगे।

राष्ट्र संघकी रिपोर्टके नतीजे बताते हैं कि पूँजीवादी देशोंपर संकट आ रहा है। नये तथ्य इन नतीजोंको रोजाना सच्चा साबित करते हैं। अमरीकाके फ़ेडरल रिजर्व एडमिनिस्ट्रेशनके अनुसार औद्योगिक पैदावारके जुलाईके सूचक अंकमें ४ से ६ पाइन्ट की और कमी होगी। इसका मतलब है पिछले आठ महीने के भीतर १६ फी सदी से भी अधिक की कमी। अमरीका में दिवालियों की संख्या बढ़ती जा रही है। "डान एण्ड ब्रैड स्ट्रीट" के आँकड़ा विभागके अनुसार साल के पहले अर्धांश में ४,५८१ फ़र्में दिवालिया हुई। उनकी पूँजी २३२० लाख डालर से ज्यादा थी। १९४८ के पहले अर्धांश मे दिवालियों की संख्या २,५४३ तक पहुँची। उनकी पूँजी ९७० लाख डालर थी।

ब्रिटिश अखबारों में भी खबरें निकली हैं कि ब्रिटेन की आर्थिक और माली स्थिति ज्यादा गिरती चली जा रही है "डेली मेल" का आर्थिक निरीक्षक लिखता है कि आर्थिक और माली संभावनाओं के बारे में आम घबराहट का नतीजा स्टाक एक्सचेन्ज पर फिर बिक्री हुआ है।

जहाँ-जहाँ भी पैदावार के पूँजीवादी ढंग के नियम चालू है वहाँ-वहाँ आगामी संकट के पैर फैलते जा रहे हैं। इस प्रकार बर्लिन के पश्चिमी भागों में आर्थिक स्थिति तेजीके साथ गिर रही है। अखबारों में खबरें निकली हैं कि बेकारी भयावनी गतिसे बढ़ रही है। जुलाई के केवल पिछले दो सप्ताहों में ही बेकारों की संख्या में १६,००० की बढ़ती हुई। सरकारी आँकड़ों के अनुसार वह २,००००० तक पहुँच गयी। बर्लिन के पश्चिमी भागों में औद्योगिक पैदावार को १९४७ के अन्त की तुलना में आधा कर दिया गया।

ये तमाम बातें साफ़ कर देती हैं कि जिस बदनाम "मार्शल योजना" की वाल स्ट्रीट के पश्चिम योरपीय बगलबच्चों ने इतनी प्रशंसा की थी वह एकदम असफल हुई है। यह योजना न सिर्फ पश्चिमी योरपीय देशों का आर्थिक पुनर्निर्माण आगे बढ़ाने में असफल रही है। उल्टे उसने इन देशों को ऐसे अभूतपूर्व संकट के सामने ले जाकर खड़ा कर दिया है जिससे पश्चिमी योरप की आर्थिक व्यवस्था के दसियों वर्ष पीछे फेंक दिये जाने का खतरा है। केवल अन्धे ही इस चीजको नहीं देख सकते.। "मार्शल योजना" ने अमरीका तक की संकट से रक्षा नहीं की है। यही कारण है कि योजना के रचयिता को रिटायर होने के लिये मजबूर होना पड़ा और अमरीका के शासक गुटों ने अपने पश्चिम योरपीय मातहतों के उपनिवेशों की तरफ ध्यान देना शुरू कर दिया। यही कारण है कि अब वे अमरीका और पश्चिमी योरप दोनों के लिये विशाल हथियारों की तैयारी का नकशा बना रहे हैं। पूँजीवादी देशोंके शासक अब आगामी आर्थिक सकट से बचने की अपनी आखिरी भयंकर कार्रवाई पर उतर रहे हैं। वे हथियारों और लड़ाई की तैयारियाँ कर रहे हैं—वे यह तैयारी सबसे पहले सोवियत सघ और जनता के जनतंत्रों के खिलाफ कर रहे हैं।

यह बात आसानी से समझ में आती है। पूँजीवादी आर्थिक व्यवस्था के साथ-साथ समाजवादी आर्थिक व्यवस्था और जनता के जनतंत्रो की वह व्यवस्था भी मौजूद है जिसने समाजवाद का रास्ता पकड़ा है। वे अपने राष्ट्रीय अर्थतंत्र को बराबर विकसित कर रहे हैं, उनकी संस्कृति फूल-फल रही है और मेहनतकश जनता की जिन्दगी मे तेजी से सुधार हो रहा है। इस तरह वे सारी दुनिया को दिखा रहे हैं कि पूँजीवादी व्यवस्था की अपेक्षा समाजवादी व्यवस्था कितनी अधिक उच्च और महान है। इतना बता देना काफ़ी है कि १९४९ के दूसरे अर्धांश में सोवियत संघ की औद्योगिक पैदावारमें पिछले वर्षके दूसरे अर्धांशकी तुलनामें २० फ़ी सदीकी बढ़ती हुई। १९४९ की रोज़ाना (२४ घन्टे) की कुल औसत पैदावार १९४० के लड़ाईसे पहलेके स्तर से ४१ फ़ी सदी ज़्यादा है। यह ऐसी चीज है जिसे पूँजीवादी अख़बार छिपा नहीं सकते—न तो झूठे आँकड़ोंसे और न "पश्चिमकी खुशहाली" की सुन्दर शब्दावली से।

इसलिये यह आकस्मिक बात नहीं है, कि "गजट द लासेन" ने "आर्थिक मुश्किलें" शीर्षक लेख (२ जुलाई) में अफ़सोसके साथ लिखा है: "जिस पश्चिमी योरप ने ......अभी हाल ही में रूस के साथ बहस में अपनी राजनीतिक उच्चता

दिखायी है (क्या वह फर्मान जारी करने की उस अक्खड़ नीति का जिक्र कर रहा है जो पूरी तरह असफल हुई ?—पी. तोदोरोव), उसके आर्थिक दृष्टि से पीछे जा पड़ने का खतरा है। उससे सब कुछ भरभण्ड होने की नौबत आ जायगी।"

सोवियत संघके समाजवादी अर्थतंत्र की सफलताओं और समाजवाद के निर्माण का रास्ता पकड़नेवाले जनता के जनतंत्रों के राष्ट्रीय अर्थतंत्रों की सफलताओं की पूँजीवादी देशों में गिरती पैदावार, बढ़ती बेकारी और बिगड़ती आर्थिक स्थिति से तथा मेहनतकश जनता की कंगाली से तुलना करके दुनिया की मेहनतकश जनता और प्रगतिशील लोग कामरेड स्तालिन के शब्दों की सचाई को ज़्यादा से ज़्यादा मानना शुरू कर रहे हैं। **स्तालिन** ने कहा था कि पूँजीवादी आर्थिक व्यवस्था डगमग और दिवालिया है, वह अपने आख़िरी दिन गिन रही है और उसे लाजिमी तौर पर दूसरी, ऊँची, सोवियत समाजवादी आर्थिक व्यवस्था को जगह देनी होगी।

पूँजीवादी देशों की आम जनता को जिन्दगी ही दिखा रही है कि आगामी आर्थिक संकट के तमाम परिणामों से बचने का उनके सामने एक ही रास्ता है और वह है जनवादी पक्ष को मजबूत बनाना और जनवाद तथा समाजवाद के संघर्ष को और तेजी से चलाना।

ग्राहकों से

जिन साथियों का चंदा खतम हो चुका है वे फौरन मनिआर्डर से अपना नया चंदा भेज दें ताकि 'जनवादी' भेजनेका सिलसिला जारी रखा जा सके।

आपके गाँव या शहर में 'जनवादी' की एजेंसी यदि नहीं है तो कोशिश कर एजेंसी खुलवायें। और अगर है तो कोशिश करें कि वहाँ पर ज्यादा से ज्यादा 'जनवादी' बेचा जाए।

एजेन्सी के नियम

(१) कम से कम ५ प्रति लेने पर २५ प्रतिशत कमीशन;

(२) पेशगी रकम न आने पर प्रतियां वी. पी. से भेजी जाती हैं; जिसका खर्च एजेंट को देना होता है;

(३) प्रतियां वापिस लेनेका नियम नहीं है।

मैनेजर जनवादी

यूगोस्लाविया में फ़ासिस्ट राक्षसों का नंगा नाच

सोवियत-विरोधी और मार्क्सवाद-विरोधी रास्ता अख्तियार करनेके बाद यूगोस्लाविया का पूँजीवादी-राष्ट्रवादी टीटो-गुट अब स्वाभाविक रूपसे अपने कम्युनिज़्म-विरोध की सीमा पर--फासिज़्म पर पहुँच गया है।

सोवियत सराकर के ११, १८ और २९ अगस्त के नोटोंने टीटो-रांकोविक गुट को बेनकाब किया और उसका पूरी तरह भण्डाफोड़ करके बता दिया कि वह घोर फ़ासिस्टों और विदेशी पूँजी के जरखरीद गुलामों का गुट है। टीटो गुट फासिस्ट साजिश रचनेवालों का एक मिसालिया गुट है। टीटो, कार्देली, दिलास और राकोविक जैसे लोग घर के भीतर राष्ट्रवादी और सामाजिक तकरीरें झाड़ते हैं ताकि जनता की आखों में धूल झोंक सकें। और उधर वे अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियों के आगे नाक रगड़ते हैं। ये लोग साम्राज्यवादी राज्यों के सीधे-सीधे ज़रख़रीद गुलाम, उनके एजेन्ट ही हो सकते हैं। इस सम्बंध में सोवियत सरकार का ११ अगस्त का नोट एक जबर्दस्त आरोप की तरह गूँजता है। उसमें कहा गया था कि "किसी न किसी प्रकार के मज़बूत सूत्र यूगोस्लाविया की सरकार या इस सरकार के मुख्य व्यक्तियों को विदेशी पूँजीपतियों के पक्ष के साथ जोड़ते हैं।"

लेनिन ने एक बार कहा था : एक उदारदली की असलियत उधेड़ो और तुम देखोगे कि वह राजवादी है। लेनिन के ही शब्दों के अनुसार कहा जा सकता कि यूगो-स्लावियाके पूँजीवादी-राष्ट्रवादियोंकी असलियत उधेड़ो और तुम देखोगे कि वे विदेशी पूँजीके छिपे एजेन्ट हैं।

देशके भीतर टीटो गुटकी नीति है कि यूगोस्लावियाको विदेशी पूँजीका मातहत बना दिया जाय। उसने जनताकी जनवादी व्यवस्थाको मिटा दिया है और बोनापार्टी (नेपोलियन बोनापार्ट जैसे—अ.) तरीके इस्तेमाल करके एक पुलिस-फ़ासिस्ट, जनवाद-विरोधी और कम्युनिस्ट-विरोधी शासन कायम किया है।

ऐसे जन-विरोधी और कम्युनिस्ट विरोधी शासनको केवल फ़ौज-पुलिस के आतंक की सहायतासे ही कायम रखा जा सकता है। इसलिये यह आकस्मिक बात नहीं है कि यूगोस्लावियाको एक फ़ौजी कैम्प बना डाला गया है। जब जर्मन हमलावरोंके खिलाफ

छापेमार युद्ध अपने शिखर पर था तो उस समय टीटोने ऐलान किया था कि ३ लाख आदमी हथियारबन्द हैं।

आज विदेशी शत्रुके खिलाफ लड़ाई नहीं हो रही है मगर फिर भी सिर्फ पुलिस और फौजमें ही कमसे कम ८ लाख आदमी हथियारबन्द हैं। हथियारबन्द खुफिया पुलिस और "सिविल" पुलिस एजेन्ट इस आँकड़ेमें शामिल नहीं हैं। यूगोस्लोवियामें टीटो गुट जिन्दा है तो इसी फ़ौजी-पुलिस मशीनरीके सहारे।

शैतानी, पूँजीवादी-राष्ट्रवादी टीटो-रांकोविक गुटने यूगोस्लोवियाकी कम्युनिस्ट पार्टीको चूर-चूर कर दिया है। सोवियत संघ और जनताके जनतंत्रोके साथ मित्रताके तमाम समर्थकों को, यूगोस्लाविया के कम्युनिस्टों और सहयोगी कम्युनिस्ट पार्टियों के बीच मित्रता के तमाम समर्थकों को इस गुटने खतम कर दिया है, जेलमें भर दिया है और पार्टी से निकाल दिया है। नतीजा यह हुआ है कि यूगोस्लाविया की पार्टी अब कम्युनिस्ट पार्टी नहीं रही है; वह पुलिस-मशीनरी का दुमछल्ला वन गयी है--वह पुलिस अफसर रांकोविक का हुक्म बजाती है। यूगोस्लाविया की कम्युनिस्ट पार्टी एक अमरीकी पार्टी है।

आर्थिक नीतिके क्षेत्रमें टीटो गुटने सोवियत संघ और जनता के जनतंत्रों के साथ मित्रतापूर्ण आर्थिक सम्बंधों को खतम कर दिया है। और इससे उसने देशको आर्थिक संकट के भँवर में ला गिराया है। (आर्थिक व्यवस्था का) राज्य अंग अब जनता की सम्पत्ति नहीं रहा है। उद्योगों में राज्य-पूँजीवाद का बोलबाला है। शहरों में—और विशेष रूप से देहातों में निजी पूँजीपति अपना शिकंजा कसते जा रहे हैं।

इस सब की सहायता से मजदूर वर्ग और किसानों का बेलगाम शोषण हो रहा है। यूगोस्लोविया के मजदूर वर्ग को आज से अधिक गयी-गुजरी जिन्दगी पहले कभी भी नहीं बितानी पड़ी थी।

देहातों में गरीब और मंझोले किसानों के ऊपर कुलकों की असीम सत्ता चलती है। स्कोपलीमें भाषण देते हुए टीटोने कहा है कि कौन कुलक हैं, यह इस अथवा उस देहाती नागरिक की आर्थिक हैसियत से तै नहीं होता। टीटो की परिभाषा के अनुसार वह व्यक्ति "कुलक" है जो पूँजीवादी-राष्ट्रवादियों के पुलिस शासन का समर्थन नहीं करता।

टीटो गुट की गृहनीति के यही नतीजे हैं। यूगोस्लाविया में पूँजीवाद के इस पुनर्स्थापन के साथ बेशर्मी के साथ धुआँधार तकरीरें झाड़ी जाती हैं कि इस सबसे, देख लीजिये, समाजवाद का निर्माण रहा हो है आदि-आदि। जनता के बीच टीटो-वादियों की डींगें ढोल की पोल ही हैं; वे वैसी ही हैं जैसी हिटलर बघारा करता था। और इसलिये यह आकस्मिक बात बिलकुल नहीं है कि अब यूगोस्लाविया की जनता टीटो को टिटलर कहती है।

टीटो-रांकोविक गुट की वैदेशिक नीति, बेहद नफ़रत पैदा करनेवाली, अत्यंत घृणित सोवियत-विरोधी नीति का नमूना है। उसकी तुलना हिटलर की सोवियत विरोधी नीति से ही की जा सकती है। यूगोस्लाव सरकार के नेता इस हद तक आगे बढ़ गये हैं कि वे सोवियत सरकार पर आरोप लगाते हैं कि वह युद्ध छेड़ने की नीति पर अमल कर रही है। लगता है कि जैसे युद्ध की साजिश रचनेवाला समाजवादी सोवियत संघ है, अमरीकी साम्राज्यवादी नहीं। टीटो और कार्देली ऐसी ही बकवास करने लगे हैं। यूगोस्लाव फ़ासिस्ट यूगोस्लाविया की जनता के बीच सोवियत संघ के खिलाफ़ घृणा फैलाना चाहते हैं। इसलिये वे ठीक जर्मन फ़ासिस्टों की तरह यूगोस्लाविया में रहनेवाले सोवियत नागरिकों को गिरफ़्तार कर रहे हैं, उन पर ख़ौफनाक अत्याचार ढा रहे हैं और हर तरह की झूठी साज़िशभरी कहानियाँ गढ़ रहे हैं। वे यूगोस्लाविया की जनता के सामने साबित करने की कोशिश कर रहे हैं कि सोवियत संघ यूगोस्लाविया की "जड़ खोद रहा है।" ये सोवियत नागरिक यूगोस्लाविया और सोवियत सघ के बीच मित्रता चाहते हैं और वे यूगोस्लाविया की कम्युनिस्ट पार्टी के भीतर की स्थिति के बारे में कम्युनिस्ट सूचना केन्द्र के प्रसिद्ध प्रस्ताव से सहमति प्रगट करते हैं। इसी बात की आड़ लेकर उन्हें गिरफ़्तार और बेइज्ज़त किया रहा है।

इस प्रकार यूगोस्लाविया की जनता की ही तरह सोवियत नागरिकों को इसलिये गिरफ्तार किया जा रहा है और उनपर अत्याचार ढाये जा रहे हैं कि वे जनवादी विचार प्रगट करते हैं। सोवियत नोटने ठीक-ठीक बताया है कि आज केवल सालदारीस द्वारा शासित फासिस्ट ग्रीस में और केवल फ्रैंको द्वारा शासित फ़ासिस्ट स्पेन में ही जनता पर उसके जनवादी विचारों के कारण दमन किया जाता है। केवल इन देशों में ही सूचना-केन्द्र के प्रस्तावको "शैतानी डाकूमेण्ट" गिना जाता है। यह आकस्मिक बात नही है कि टीटो-राकोविक गुट यूगोस्लाविया में वैसी ही नीति पर चल रहा है। वह भी तो कम्युनिज़्म से वैसी ही घृणा करता है जैसी सालदारिस और फ्रैंको। देश में कायम किया गया फासिस्ट शासन भी उनके शासन से किसी मानीमें भिन्न नहीं है।

अन्तरराष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन की तरफ जर्मन फसिस्टों के बाद ऐसी दुश्मनी और किसीने नहीं बरती है जैसी यूगोस्लाव फ़ासिस्ट बरत रहे हैं। असल में यूगोस्लाव फासिस्टों की गन्दी करतूतें जर्मन फ़ासिस्टों की करतूतों से भी आगे बढ़ जाती है। जर्मन फासिस्टों ने किसी भी कम्युनिस्ट पार्टी पर डोरे डालनेकी कोशिश कभी नहीं की। टीटो गुट अलग-अलग पार्टियोंके खिलाफ़ साजिशका जाल फैलानेकी कोशिश कर रहा है। हाल ही में टीटोवादियोंने चीनकी शानदार कम्युनिस्ट पार्टीको जान-बूझकर बदनाम किया; उन्होंने झूठा प्रचार किया कि वह यूगोस्लावियाके पूँजीवादी-राष्ट्रवादियोंकी समर्थक है। मगर चीनी कम्युनिस्टोंने यूगोस्लावियाके फासिस्टों को निर्ममताके साथ ऐसा मुँहतोड़ जवाब दिया कि गन्दी करतूतें करनेवालोंको लेनेके देने पड़े गये। आज मालूम होता है कि चीनी जनताके संघर्षके प्रति यूगोस्लोवियाके अखबारोंका तमाम "प्रेम" ग़ायब हो गया है।

अन्य देशोंकी कम्युनिस्ट पार्टियाँ जो वीरतापूर्ण संघर्ष कर रही हैं, उनके प्रति यूगोस्लाविया के फ़ासिस्टों को कितनी घृणा है यह इसी बात से जाहिर है कि वे इटली, फ़्रांस और अन्य देशों की कम्युनिस्ट पार्टियों पर रोजाना कीचड़ उछालते हैं और कम्युनिस्टों के ख़िलाफ़ लड़ने में स्केल्बा और जूलिस माख (इटली और फ्रास के हत्यारे गृह-मंत्री--अ.) की पुलिस को हर तरह से मदद देते हैं।

यूगोस्लाविया के फासिस्टों की शायद सबसे अधिक घृणित ग़द्दारी यह है कि उन्होंने ग्रीस की जनवादी फ़ौज के वीर लड़ाकों की पीठ में छुरी भोंकी। तुर्की लुटेरों तकने ग्रीक जनता को इतना नुकसान न पहुँचाया होगा जितना कि यूगोस्लाविया के फ़ासिस्ट टीटो-रांकोविक दलने पहुँचाया है। ग्रीक छापेमारों के संघर्ष के गंभीर अवसर पर यूगोस्लाव फासिस्टोंने ग्रीक फासिस्टों के लिये अपनी सीमा को खोल दिया। और टीटो-कार्देली के शब्दों में, उन्होंने ग्रीक छापेमारों के लिये "सीमा को बन्द कर दिया"।

संसार की कम्युनिस्ट पार्टियों और समाजवादी देशों से नाता तोड़ने के बाद टीटो-रांकोविक गुट ने नये दोस्त पा लिये हैं। ये दोस्त पूँजीवादी राज्यों के हैं जिनमें आगे-आगे अमरीका और ब्रिटेन हैं। यह एक सीधी साफ़ बात है कि टीटो गुटने जहाँ एक ओर ससार की कम्युनिस्ट पार्टियों और समाजवादी देशों, जिनमें आगे सोवियत रूस है, के ख़िलाफ़ लड़ाई छेड़ रखी है, वहाँ दूसरी ओर वह एक भी पूँजीवादी देश के खिलाफ सघर्ष नहीं कर रहा है। साम्राज्यवादी सरकारों के साथ टीटो गुट के कुछ ख़ास प्राईवेट "बिजिनेस" भर हैं और एक भी पूँजीवादी देश के साथ उसका कोई भी ख़ास राजनीतिक मतभेद नहीं है।

यूगोस्लाव सरकार सोवियत सरकार के नोटों को "गलत बताने" की भौंडी कोशिश कर रही है। एक बार फिर जोर-शोर के साथ "विरोध" किया जा रहा है कि टीटो गुट के खिलाफ तथाकथित झूठे आरोप लगाये गये हैं।

जब सारी दुनिया, दुनिया के अख़बार—कम्युनिस्ट और पूँजीवादी भी--मानते हैं कि ये आरोप वाजिब और सच्चे हैं तो फिर यूगोस्लाविया के भीतर इस तमाम शोरगुल से क्या फ़ायदा कि सोवियत नोट "ग़ैरवाजिब" हैं! यूगोस्लाविया के फ़ासिस्ट—समाजवादी पक्ष के ये घृणित ग़द्दार पूँजीपति वर्ग और जंगख़ोरों के ख़िलाफ़ संघर्ष को जो नुकसान पहुँचा रहे हैं, उसे सहयोगी कम्युनिस्ट पार्टियाँ स्वयं अपने अनुभव से जानती हैं।

पूँजीवादी सरकारें भी यह भलीभाति जानती हैं क्योंकि सोवियत संघ के खिलाफ कार्रवाइयों में यूगोस्लाव फासिस्ट उनकी मदद कर रहे हैं। वे जनवादी समाजवादी पक्ष के खिलाफ़ लडाई में जंगखोरों की, अंग्रेज़-अमरीकी साम्राज्यवादियों की मदद कर रहे हैं।

दमनकारियोंको या अपनी जनता के हितों के साथ गद्दारी करनेवालों को मजदूर वर्ग माफ़ नहीं करता। यूगोस्लाविया का मजदूर वर्ग और यूगोस्लाविया की

मेहनतकश जनता इतनी शक्ति संगठित करेगी कि फ़ासिस्ट टीटो-रांकोविक गुटकी शैतानी कार्रवाईयों को जड़-मूल से मिटा दे। यह बात निर्विवाद है कि टीटो गुटके शासनके ख़िलाफ़ संघर्ष ज़ोर पकड़ता जा रहा है। ख़ुद रांकोविक ही अब इसको छिपा नहीं सकता। आज यूगोस्लावियाके कोने-कोनेमें रोज़ाना जो मुक़दमे चलाये जा रहे हैं और रांकोविक के बगलबच्चे जो बर्बर सजाएं दे रहे हैं, उन्हींसे यह जाहिर है। यूगोस्लावियाके अख़बारों में—विशेष रूपसे स्थानीय अख़बारोंमें प्रकाशित होनेवाली रिपोर्टोंसे यह जाहिर है। मजदूर, योजनाओंको पूरा नहीं कर रहे हैं। वे फैक्टरियाँ और खानें छोड़ कर देहातोंमे जा रहे हैं। किसान जनता खानों और फैक्टरियोंके लिये भरती का मुक़ाबला कर रही है। अधिकाधिक जनता द्वारा इस बढ़ते मुक़ाबले का सबूत उन लोगों से मिलता है जिनके पीछे पुलिस शिकारी कुत्तों की तरह पड़ी है और जो बाहर भाग रहे हैं। इसका सबूत यूगोस्लाविया से आये उन अनगिनती पत्रों से मिलता है जो मेहनतकश जनता की अविश्वसनीय हालत और शैतानी पुलिस शासनका बयान करते हैं। बेहद भरे कॉसेन्ट्रेशन कैम्पों और जेलों से भी यह साबित हो जाता है। सैकड़ों-हजारों देशभक्तों को रांकोविक की पुलिस उनमें रोज़ाना फेंकती है। "समाजवादी निर्माण" की धुआँधार बातों से टीटो गुटके फासिस्ट सार को अब और छिपाया नहीं जा सकता।

यूगोस्लाविया के मजदूरों, तमाम सच्चे देशभक्तों और यूगोस्लाव पार्टी में अभी भी मौजूद सच्चे कम्युनिस्टों ने यूगोस्लाविया की कम्युनिस्ट पार्टी का नये सिरे से निर्माण करना शुरू भी कर दिया है। यह पार्टी मार्क्सवाद—लेनिनवाद के प्रति वफ़ादार है, मजदूर वर्ग की अन्तरराष्ट्रीयता के प्रति वफ़ादार है।

अनेक अन्डरग्राउन्ड कम्युनिस्ट संगठन देश भर में, रिपब्लिकों में, फ़ैक्टरियों में और गाँवों मे काम कर रहे हैं। वे छिप कर काम करने की कला सीख रहे हैं और जानते हैं कि रांकोविक के शिकारी कुत्तों से किस तरह बचा जाय। इन संगठनों की संख्या और सदस्य-संख्या बराबर बढती जा रही है।

अब बन रही नयी कम्युनिस्ट पार्टी के साथ और यूगोस्लाविया के तमाम देश-भक्तों के साथ अन्तरराष्ट्रीय मजदूर वर्ग की, संसारकी कम्युनिस्ट पार्टियों की और जनवाद व समाजवाद के तमाम समर्थकों की पूरी भाईचारे की सहानुभूति है। यूगो-स्लाविया के कम्युनिस्ट विश्वास रख सकते हैं कि यूगोस्लाविया को समाजवाद के पक्ष में वापस लाने के लिये वे जो शानदार और वीरतापूर्ण संघर्ष चला रहे हैं उसके साथ तमाम सहयोगी कम्युनिस्ट पार्टियों का पूरा समर्थन है।

टीटो-रांकोविक गुटके फ़ासिस्ट राक्षस नंगा नाच कर रहे हैं; उनकी मौत लिख गयी है।

[कॉमिन्फौर्म के मुखपत्र "**स्थायी शान्ति और जनता के जनतंत्र के लिये**" के १ सितम्बर के अंक का सम्पादकीय]

पृष्ठ ७ से

साल तक राष्ट्रीकरण न हो, इसी तरह पाँच या दस साल तक आम जनता अपनी भाषा के जरिये ऊँची शिक्षा न पाये और राजनीतिक और सांस्कृतिक उन्नति न कर सके।

भाषा को संस्कृत-गर्भित करने की माग कुछ लोगों के जरिये हिन्दी में ही नहीं उठायी जाती। बंगला जैसी भाषा में भी इसी तरह के लोग और एक ही उद्देश्य से यह मांग पेश करते हैं। कुछ दिन पहले पश्चिमी बंगाल की सरकारने बड़े-बड़े विद्वानों की एक कमिटी बनायी थी जिसमे मशहूर भाषा वैज्ञानिक डाक्टर सुनीति कुमार चटर्जी भी शामिल थे। कमिटी इसलिये बनायी गयी थी कि सरकारी और शासन सस्थाओं में इस्तेमाल करने के लिये बंगलाके पारिभाषिक शब्द तैयार करे। इस शब्दावली की भूमिकामे उन विद्वानों ने कुछ प्रचलित शब्दों को इसलिये ठुकरा दिया था कि वे काफी इज्जतदार नहीं थे और उनके बदले ऐसे शब्द गढ़े हैं जिन्हें आम जनता नहीं समझती और कभी-कभी गैर आम लोग भी नहीं समझते। इसलिये विद्वानोंने बंगाली जनता की देशभक्ति को जगाया है कि अंग्रेजीकी तरह अपनी मातृभाषा सीखने में कुछ समय लगाये।

केन्द्र और सूबों की सरकारें आम जनताकी इस मांग को पूरा नहीं कर सकती कि लोकप्रिय शिक्षा हो, अदालत, सरकारी-सस्था वगैरा में लोकप्रिय भाषा का व्यवहार हो। इसका सबब यह है कि जैसे राजनीतिक और आर्थिक मामलों में वैसे ही शिक्षा और संस्कृति के मामले में वे साम्राज्यवादकी नीति चालू रख रही हैं। शिक्षा और संस्कृतिके मामलेमें ब्रिटिश साम्राज्यवाद की विरासत कायम है। पूँजीवादी नेता इसे पालते-पोसते हैं और इसलिये कि यह अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियों से गठबंधन की नीति, सच्ची आजादी, जनतंत्र और समाजवाद के लिये हिन्दुस्तानी अवाम के संघर्ष को दबानेकी नीति और कुल जनता के हितों पर हमला करके मुट्ठीभर मतलबी पूँजीपतियों के वर्ग हितोंकी रक्षा करनेकी नीतिका सीधा और लाजिमी नतीजा है, इसके अलावा और कुछ नहीं है।

इसलिये यह लाजिमी है कि पुराने पूँजीवादी–सामंती औपनिवेशिक ढाँचेका कायम रहना हिन्दुस्तानके जवानोंके पूरे विकासमें बाधा डाले। शासक-वर्ग जनताको इसके अलावा कोई रास्ता नहीं दिखा सकते कि या तो अंग्रेजी कबूल करो या हिन्दुस्तान की भाषाओंको सस्कृत-गर्भित करके गलेके नीचे उतारो।

(४) भारत के लिये राष्ट्र-भाषा का सवाल

किसी जातीय इलाके में अंग्रेजी की जगह वहाँकी जबान चालू करनेकी मांग एक न्यायपूर्ण जनवादी मांग है जिसका समर्थन मजदूर वर्ग को करना चाहिये। लेकिन इस सही जनवादी माग में और इस दूसरी माग में कि तमाम देश के लिये अंग्रेजी की जगह हिन्दुस्तान की कोई भाषा चालू कर दी जाए, भेद है। साफ जाहिर है कि अगर राज-भाषा के रूप में अंग्रेजी लादना एक साम्राज्यवादी काम था तो उसकी जगह हिन्दुस्तान की कोई भाषा लादना भी न्यायपूर्ण और जनवादी काम नहीं कहा जा सकता। लेकिन पूँजीवादी नेताओं के "राष्ट्रीय" कार्यक्रम में बहुत दिन से यह माग कायम रही है कि हिन्दी-उर्दू या हिन्दुस्तानी को (कभी-कभी अंग्रेजी को भी) लाजिमी राष्ट्रभाषा बनाया जाए।

इस माग के वर्ग-रूप को जरा और नजदीक से देखना चाहिये।

गांधीजीने तमाम देश के लिये आम जबान की जरूरत को जातिकी राजनीतिक आशाओं से जोड़ा था। उन्होंने कहा था :

"बहुत साल से कांग्रेस यह कहती आयी है कि आम राजनीतिक आशाओं के साथ-साथ जरूरी तौर से एक आम जबान भी होनी चाहिये।" (**हिन्दुस्तान के लिये राष्ट्रभाषा**, अं. सं., किताबिस्तान, १९४१, पृष्ठ ३१)

पंडित जवाहरलाल नेहरूने कहा था कि राष्ट्रभाषा का सवाल "अदालत, दफ्तर और शिक्षा के सिलसिले में" राज्य को हल करना है। (उप. पृष्ठ ६६)

इसके बाद अभी पिछले दिनों **हिन्दुस्तान टाइम्स** ने भाषा के सवालपर बहुत से लेख छापे हैं। खुद अपनी तरफ से उसने समाज विज्ञान और भाषा विज्ञान में यह अनोखी खोज की है कि हिन्दुस्तान में जातियाँ तो अनेक हैं लेकिन यहाँ कौम एक है।

९ दिसम्बर १९४८ के सम्पादकीय में उसने लिखा था :

"हिन्दुस्तान एक बहुजातीय देश है और रहेगा और चूंकि लाखों आदमियों द्वारा बोली जानेवाली जीवित भाषायें यहाँ पर हैं, इसलिये वे उन लोगोंकी तरक्की के साथ जो उन्हें बोलते हैं, तरक्की करती रहेंगी।

"फिर भी एक आम जबान इसलिये जरूरी हो जाती है कि हमारी एक आम क़ौम है और आम सार्वजनिक जीवन और केन्द्रीय शासन की जरूरतें उसे पूरी करनी है।"

हिन्दुस्तान टाइम्स के लिये कौम के आम होनेका मतलब क्या है, यह साफ़ हो जाता है जब हम केन्द्रीय शासन की जरूरतों के साथ उसका लगाव जाहिर करते हुये उसे देखते हैं।

यह आम सार्वजनिक जीवन कौनसा हो सकता है जिसका हिन्दुस्तान टाइम्स ने हवाला दिया है ? क्या यह विभिन्न जातियों के मजदूर-किसानों का आम सार्वजनिक जीवन हो सकता है, जिनके बेदर्द शोषकोंमें हिन्दुस्तान टाइम्सका मालिक है ? हरगिज नहीं—क्योंकि इसके कॉलम किसी दूसरी ही जिन्दगीके कारनामोंसे रंगे होते हैं। उसके लिये सार्वजनिक जीवनका मतलब कुछ और होना चाहिये।

इस सिलसिलेमें हिन्दुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टी का राजनीतिक प्रस्ताव इस बातका जिक्र करता है कि हिंदुस्तानका पूँजीवादी गुट जातियोंके आत्मनिर्णयकी तरफ शत्रुभाव रखता है। उसमें, पृष्ठ ११२ पर कहा गया है :

> "कांग्रेसके नेताओंने समझौतावादी नीति पर चल कर और आत्मनिर्णयके अधिकारका विरोध करके देशका सत्यानाशी विभाजन कर दिया। अब वे भारतीय संघके अन्दर भी वही अपराध कर रहे हैं और ज़्यादा ताकतवर पूँजीपति वर्गका प्रभुत्व बनाये रखनेके लिये महाराष्ट्र, केरल, तामिलनाड, आदि जातीय इकाइयोंका आत्म-निर्णयका अधिकार माननेसे इन्कार कर रहे हैं।"

इस बातको ध्यानमें रखनेसे यह साफ हो जाता है कि आम कौम, आम सार्वजनिक जीवन वगैरा ऐसे भौंड़े शब्द हैं जिनके जरिये हावी होनेवाला पूँजीवादी गुट जातियोंके आत्म-निर्णयकी तरफ अपने शत्रु-भावको छिपाता है।

हिन्दुस्तान टाइम्सने उसी सम्पादकीय में इस बातके लिये बेचैनी जाहिर की है कि अंग्रेजों के "ताल्लुकात" (क्या तकल्लुफ़ाना अन्दाज़ है!) की अच्छी विरासत बचानेके लिये हिन्दुस्तान की तमाम हाइकोर्टोंमें समान रूपसे एकही जबानका इस्तेमाल किया जाए। उसने लिखा है कि "हाईकोर्टों में संघ की जबानसे सर्वमान्य अदालती भाषा रखना फ़ायदेमंद होगा, क्योंकि ऐसा न होने पर संयुक्त-कानून की समूची धारणा, जो अंग्रेजी ताल्लुकात की चंद अच्छी विरासतों में से है, देशके हाथसे निकल जायेगी।" इसी तरह अलग-अलग सूबोंकी यूनिवर्सिटियोंमें एक संघ भाषा चालू न होने से "ऊँची शिक्षा की उन्नति में बाधा पड़ेगी और इससे भी ज़्यादा यह कि यूनिवर्सिटियाँ एक दूसरे से जुदा हो जायेंगी और उनके आपसी ताल्लुकात खतम हो जायेंगे।"

इस तरह हाईकोर्ट, यूनिवर्सिटियों वग़ैरामें एक भाषा या राज-भाषा या राष्ट्र-भाषाके चलनका समर्थन करके हावी होने वाला पूँजीवादी गुट दूसरी जातियों का यह हक मारता है कि वे पूरी तौर पर और बेरोकटोक तरीके से राजनीतिक और सांस्कृतिक विकास कर सकें।

हिन्दुस्तान टाइम्स के उसी अंक में डा० राजेन्द्र प्रसादका एक लेख छपा है जिसमें उन्होंने यह दलील दी है कि राज-भाषा और विभिन्न जातीय इलाक़ों की भाषाओं मे टक्कर होने पर इस भाषा में ही काट-छांट करनी होगी। उन्होंने कहा है:

"यहां पर हमें समूचे हिन्दुस्तान और भाषावार इलाकों के हकों की पटरी बैठानी है। अगर हम इस चीज को एक बार मान लें, जैसा कि तमाम यूनिट मान चुके हैं कि हिन्दुस्तान को एक यूनिट की शकल में रखना है तो कुल हिन्दुस्तान के हक स्वीकार करने होंगे।...... इसके लिये कुछ इलाकों और प्रदेशों के हक कही जानेवाली चीजों में काट-छाँट करनी पड़ेगी तो उसे बर्दाश्त करना होगा।... लोग इस बात को तहेदिल से मान चुके हैं कि बहुत जरूरी मामलों में केन्द्र की हैसियत सबसे ऊपर है। आम जबान के मामले पर भी यही बात लागू होती है।"

डा. राजेन्द्र प्रसाद ने यहाँ पर यह माग की कि बड़े पूँजीवादी गुटके हितों में जनता अपने हितों में काट छाट किया जाना तहेदिल से मान ले।

यह बात जनता उतने तहे-दिल से नहीं मानती जितनी कि वह चाहते हैं।

पूंजीपति वर्ग की राजनीतिक आशायें कौनसी हैं जिन्हें पूरा करने के लिये समूचे देश में वह आम जबान की मांग करता है?

भारत के बड़े पूजीवादी गुट की राजनीतिक आशायें ये रही हैं कि अंग्रेजों के बदले वह हिन्दुस्तान के शोषकों की जगह ले। ऐसा न हो सके या ऐसा करना ठीक न जॅचे क्योंकि घर मे इन्कलाब का डर है तो विदेशी आकाओं के साथ शोषण के व्यापार मे एक हिस्सा मिल जाए। इस पूँजीवादी गुटने भाषावार इलाकों का आत्म-निर्णयका हक पूरा करनेका वादा किया था—यानी जबतक साम्राज्यवाद से शोषण में आधे साझे की शर्तें वह तै न कर चुका था, तब तक वह दूसरी जातियों के पूँजीपतियों को आत्म-निर्णय का हक देने की बात कहता था। विदेशी आकाओं की छत्र-छाया में एक बार जब राज्य की बागडोर उसके हाथ में आगयी तो वह होड़ करनेवाले पूँजीवादी गुटों से अपने पिछले वादे तोड़ने लगा। इस वादाखिलाफी को वह राष्ट्रीयता, केन्द्र, एकता और न जाने किन-किन नामों से छिपाने की कोशिश करता है। भारत का यह बड़ा पूंजीवादी गुट तमाम देश के लिये एक आम जबान, राष्ट्र-भाषा या राज-भाषा का हामी रहा है क्योंकि इससे समूचे भारत के बाजार को काबू में करना और दूसरी जातियों के पूंजीपतियों को धत्ता बताने में उसे मदद मिलेगी। इस गुट के मुँहमें राष्ट्र-भाषा के नाम उसकी साम्राज्यवादी और उपनिवेश बनाने की हविश जाहिर होती है।

यह मुममिन नहीं है कि हिन्दी उर्दू या हिन्दुस्तानी लिखने बोलनेवाली आम जनता बड़े गुटकी दूसरों पर हावी होनेकी हविश में शामिल हो। ऐसा नहीं होसकता कि यह जनता किसी भी दूसरी जबान को पूरी तरह से और बेरोक बढ़ने का हक न दे। हिन्दुस्तानका बड़ा पूँजीवादी गुट जनता के साम्राज्य-विरोधी भावको अपने वर्ग हित में इस्तेमाल करना चाहता है। वह सवाल करता है: अंग्रेजी जायेगी, बोलो उसकी जगह कौनसी भाषा ले? आम जनता चाहती है कि अग्रेजी उनपर हावी न रहे जैसे

अबतक रही है। बड़ा पूँजीवादी गुट यह समझता है, इसलिये वह कहता है अंग्रेजी जायेगी। लेकिन वह इस बात को सोचने का मौका नहीं देता कि अंग्रेजी जाने के बाद क्या आयेगा। बजाय यह कहने के कि अंग्रेजी के जाने पर हिन्दुस्तान की हर जबान अपना पूरा हक हासिल करेगी, वह सवाल यों करता है कि अंग्रेजी की जगह कौनसी एक जबान होगी। जाहिर है, जबान को यों पेश करने का मकसद लोगों को भटकाना है और पूँजीवादी गुट के वर्ग-हित साधना है।

मजदूर वर्ग और उसकी पार्टी और तमाम प्रगतिशील लोग जो चाहते हैं वह यह कि इस तरह के सवाल जनवादी तरीके पर हल किये जायें, सबसे पहले हर जाति का हक मानें कि वह बिना किसी काट-छाँटके अपने राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक कामों की तमाम मंजिलों में अपनी जबान इस्तेमाल करेंगे। अगर हम यह सिद्धान्त मानें कि "जातियाँ पूरी तरह से स्वतंत्र हैं और सब जातियाँ बराबर हैं" (स्तालिन, **मार्क्सवाद और जातियों का सवाल**, पृष्ठ २८), तो हम इस बातसे कभी सहमत नहीं हो सकते कि हावी होनेवाली जाति के पूँजीपतियों के हितों में किसी भी जाति के हक्कों में काट-छाँट की जाए।

रूसके बहुजातीय पूँजीवादी जमींदाराना राज्यमें बोल्शेविक पार्टीने माँग की कि लाजिमी राजभाषा रद्द की जाये।

१९१७ की अप्रैल कान्फ्रेंसमें बोल्शेविक पार्टीने जातियोंके सवाल पर ऐतिहासिक प्रस्ताव पेश किया। उसमें सबसे पहले कहा गया कि फरवरी क्रान्ति के बाद मास्कोमें जो नयी पूंजीवादी सरकार बनी है वह जातियों का सवाल नहीं हल कर पायी है। यही नहीं, उसने जातीय उत्पीड़न को और तेज बना दिया है।

प्रस्ताव में कहा गया था :

> "अपने वर्ग के विशेषाधिकारों की हिफ़ाजत करने के लिये और अलग जातियों के मजदूरों में फूट डालने के लिये जमींदार और पूँजीपति जातीय उत्पीड़न की नीति की हिमायत करते हैं। यह नीति उन्होंने स्वेच्छाचारी हुकूमत और बादशाहत से विरासत में पायी है। आधुनिक साम्राज्यवाद कमजोर जातियों को दबाने की प्रवृत्ति को और तेज बना देता है। जातीय उत्पीड़न को तेज करने में यह नया कारण है।" (**मार्क्सवाद और जातियों और उपनिवेशों का सवाल**, पृष्ठ २७९, लेनिन, **संक्षिप्त ग्रंथावली**, दूसरा खण्ड, पृष्ठ ५३)

इस तरह प्रस्ताव ने यह दिखाया कि जातीय उत्पीड़न तेज करने में पूँजीपतियों और जमींदारों के वर्ग-हित कौन से हैं। एक तरफ जातियों को दबाने से उनके साम्राज्यवादी उद्देश्य सफल होते थे। दूसरी तरफ़ इससे कामकाजी अवाम का वर्ग एका कमजोर होता था। दूसरी जगह स्तालिन ने दिखाया है कि जातियों की समानता और पूँजीवाद एक साथ कायम नहीं रहते। उन्होंने लिखा है :

" जातियों के उत्पीड़न के बिना पूँजीवाद क़ायम रहे यह बात वैसे ही कल्पना के बाहर है जैसे पीड़ित जातियों को आजाद किये बिना, जातीय स्वाधीनता के बिना समाजवाद क़ायम रहना।" (**मार्क्सवाद और जातियों और उपनिवेशों का सवाल**, पृष्ठ ९१)

ऐसा इसलिये है कि " व्यक्तिगत सम्पत्ति और पूँजी लाजिमी तौर पर जनतामें फूट डालती है, जातियों में वैरभाव भड़काती है और जातीय उत्पीड़न तेज करती है।" (उप.) इस कानून के मुताबिक " ल्वोव मिल्युकोव, करेन्सकी की सरकारने, जातीय उत्पीडन की पालिसी छोड़ना दरकिनार, फिनलैण्ड के ख़िलाफ (१९१७ की गर्मियों में डायट का भंग करना) और यूक्रेन के ख़िलाफ (वहाँ की सांस्कृतिक संस्थाओं का सौ फ़ी सदी दमन करना) एक नयी मुहीम संगठित की।" (उप. पृष्ठ ७९)

करेन्सकी की सरकार जातीय उत्पीड़न की जिस पालिसी पर चल रही थी उसके खिलाफ बोल्शेविक पार्टी ने अपनी नयी जातीय पालिसी रखी जिसका आधार जातियों की पूरी स्वाधीनता और समानता थी।

अप्रैल कान्फ्रेंस के प्रस्ताव में कहा गया था :

" रूस के अन्दर जो तमाम जातियाँ मौजूद हैं वे आज़ादी से अलग हो सकती हैं और अपने आज़ाद राज्य कायम कर सकती हैं, उनका यह हक मानना चाहिये ....

" जातियों के अलगाव का हक इस बात से न उलझा देना चाहिये कि किसी ख़ास वक्त पर एक जाति का अलग होना उचित है या नहीं। मजदूर वर्ग की पार्टी को यह सवाल हर मामलेमें पूरी आज़ादी के साथ हल करना चाहिये। उसे हल करते हुए समूचे सामाजिक विकास के हितों को ध्यान में रखना चाहिये और समाजवादके लिये मज़दूरों के वर्ग संघर्ष के हितों को ध्यान में रखना चाहिये।"

इस तरह बोल्शेविक पार्टी ने जातियों के सवाल पर अपने मत को हावी होनेवाले पूँजीवादी गुट से साफ अलग ज़ाहिर किया। यही नहीं, उसने अपना मत पीड़ित जातियों के पूँजीपति वर्ग से भी साफ़ अलग जाहिर किया।

इसके अलावा प्रस्तावमें प्रादेशिक खुदमुख्तारी और लाज़िमी राजभाषाके सवाल पर यह बात कही गयी है :

"पार्टी यह माँग करती है कि मोटे तौर पर प्रादेशिक खुद-मुख्तारी कायम हो, ऊपरसे देखरेख ख़तम हो, लाजिमी राजभाषा रद्द की जाये, खुद-मुख्तार और अपने ऊपर हुकूमत करनेवाले इलाकोंकी हदें तै की जायें और ये हदें वहाँके रहनेवाले लोग अपनी आर्थिक और सामाजिक हालतके मुताबिक, आबादीके जातीय आधार वगैराके मुताबिक तै करेंगे।"

बोल्शेविक पार्टीने रूसी साम्राज्यमें राजभाषाके सवालपर यह जनवादी हल पेश किया। उसने ऐलान किया कि कोई भी लाजिमी राजभाषा न होना चाहिये, हर जातिको पूरे आत्मनिर्णयका हक है, तमाम राजनीतिक और सांस्कृतिक कामों के लिये अपनी जबान इस्तेमाल करने का हक शामिल है।

क्या यह ऐसी समस्या का जिसका और अमली हल ढूँढ़ना चाहिये था एक हवाई हल नहीं था? आखिर राज्यसत्ता का कुछ भी रूप हो, अगर बोल्शेविक अराजकता न चाहते थे, तो एक केन्द्रीय जबान की जरूरत होती जो देश के तमाम हिस्सों में सूचना-सन्देश का जरिया हो, ऐसे देश में जो एक राज्य के नीचे संयुक्त हो।

यह बात दिलचस्प है कि जातियों के मसले पर बोल्शेविक पार्टीने आम तौरसे जो हल पेश किया था उस पर ग़ैर अमली होनेकी तोहमत लगायी गयी थी। उस पर यह तोहमत पूंजीपतियों ने ही न लगायी थी बल्कि रोजा लुक्जेमबर्ग ने भी लगायी थी। पूँजीपतियों को बोल्शेविकों का हल ग़ैर अमली क्यों मालूम होता था? इसलिये कि हर पूंजीपति गुट दूसरी जातिको दबाकर अपने लिये विशेषाधिकार चाहता था। लेकिन मजदूरवर्ग उसकी इच्छाएँ पूरी करने का भार नहीं उठाता। इसीलिये वह हमेशा "अमली" माँगे पेश किया करता है, यानी ऐसी माँगें पेश करता है जो किसी दूसरी जातिको दबाकर उसके वर्गहित साधने में मदद करें।

लेनिन ने कहा है:

> "हर जातिके **राष्ट्रवादी** पूँजीपति वर्ग की नजर में जातियों के सवाल पर मजदूरों का समूचा कर्तव्य 'ग़ैरअमली' है, इसलिये कि हर तरहके राष्ट्रवाद का विरोधी होने की वजह से मजदूर 'हवाई' समानता की माँग करते हैं। वे माँग करते हैं कि उसूलन किसी को भी रत्तीभर भी विशेषाधिकार न मिले। यह बात न समझकर रोजा लुक्जेमबर्ग ने अमलीपन की ग़लत तारीफ करके अवसरवादियों के लिये दरवाजे खोल दिये, खास तौर से बड़े रूसी राष्ट्रवाद को अवसरवादी सुविधाएँ देने के मामले में।" **(जातियों के आत्म निर्णय का अधिकार, पृष्ठ २५)**

पूँजीपति वर्ग भाषा की समस्या का अमली हल पेश करता है। उसकी समझ में इतनी जबानों में पाठ्य पुस्तकें छपवाना अमली काम नहीं है। तमाम हायकोर्टों; यूनिवर्सिटियों वगैरामें एक केन्द्रीय भाषा चलनी चाहिये, अगर मजदूर वर्ग पूँजीपतियों के इस अमलीपन को मानले तो वह हावी होने वाले पूँजीपतियों के राष्ट्रीय हितों को अवसरवादी सुविधाएँ देने का कसूरवार होगा।

इसी तरह लेनिन ने इस दलील को भी निपटाया कि अलगाव के हित का समर्थन करने से "तुम पीड़ित जातियों के पूँजीवादी राष्ट्रवाद की हिमायत करते हो।" **(जातियों के आत्म निर्णय का अधिकार, पृष्ठ २६)**

लेनिन ने दिखाया कि यह विचारधारा " न सिर्फ़ पूँजीपतियों के हाथ में हमें खिलौना बना देती है बल्कि सामन्ती जमींदारों और पीड़ित जाति की स्वेच्छाचारी हुकूमत के हाथों में खिलौना बना देती है।" (उप.)

इसी तरह लेनिन ने इस आरोप को गलत साबित किया कि वह अलगाव के हामी हैं और राज्य के टुकड़े-टुकड़े कर देना चाहते हैं। उन्होंने कहा, आत्म-निर्णय की आजादी यानी अलगाव की आजादी के समर्थकों पर यह तोहमत लगाना कि वे अल-गाव को बढ़ावा देते हैं, वैसा ही मूर्खतापूर्ण और धूर्ततापूर्ण है जैसे तलाक की आजादीके समर्थकों पर यह तोहमत लगाना कि वे परिवार के रिश्ते ख़तम कर देना चाहते हैं।" (उप., पृष्ठ ३८)

उन्होंने दिखाया है कि अलगाव की समस्या हल करने का जनता का तरीका पूँजीपतियों के तरीके से अलग है। उन्होंने कहा,

> " जो लोग जनवादी उसूलों के हामी हैं यानी इस बात पर जोर देते हैं कि राज्यके सवाल जनता ही हल करे, बहुत अच्छी तरह जानते हैं कि राजनीतिज्ञ जो बातें बघारा करते हैं और जनता जो दरअसल चाहती है, इन दोनों में बहुत बडा फ़र्क होता है। लोग रोजमर्रा के तजुर्बेसे जानते हैं कि भौगोलिक और आर्थिक रिश्तों का मूल्य क्या है और एक बड़े बाजार और एक बड़े राज्य के फायदे क्या हैं। इसलिये वे अलगाव का सहारा तभी लेंगे जब जातीय उत्पीड़न और जातीय कशमकश, उनका एक साथ रहना कतई बेब-र्दाश्त बना देती है और उनके परस्पर आर्थिक व्यवहार में रुकावट पड़ती है। ऐसी हालतमें पूँजीवादी विकास के हित और वर्ग संघर्ष की आजादी के हित सबसे ज्यादा अच्छी तरह अलगाव से सिद्ध होंगे।" (उप. पृष्ठ ३९)

मेन्शेविकों और पूँजीपतियों ने जातियों के मसले पर लेनिन-स्तालिन की पालिसी के खिलाफ जो दलीलें दी थी वे सब रूसी को लाजिमी राजभाषा के पदसे हटाने के ख़िलाफ़ भी दी गयी। ये दलीले रूस के अन्दर ही नहीं उसके बाहर भी दी गयी। मिसाल के लिये मेइये को इस बात पर बड़ा रंज हुआ कि बोल्शेविकों ने रोमानोव साम्राज्य को तहस-नहस कर दिया था और उसके साथ ही स्लाव एकता जो रूसी जबानके जरिये कायम होती, घपलेमें पड़ गयी। और उन्होंने लिखा " अबकी विगड़ी पता नहीं कब बने " (ऊपर उद्धरित, पृष्ठ ३१६)। इस तरह रोमानोव खानदान के पतनके साथ-साथ रूसीके लाजिमी राजभाषा बनानेका सवाल भी गढ़े में गिर गया।

[शेष अगले अंकमें]
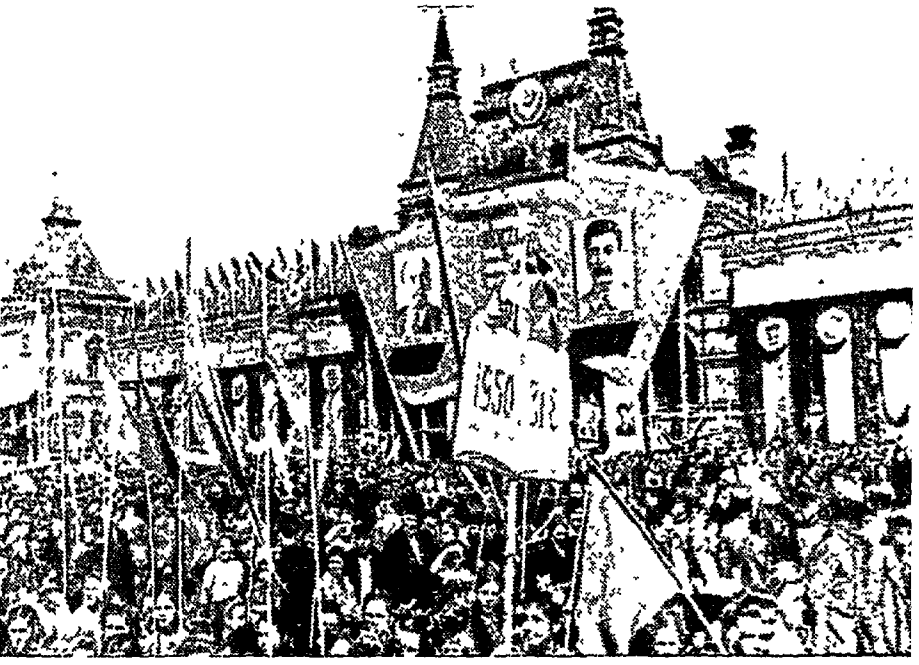
शान्ति का भविष्य सुरक्षित हाथों में हैं

अन्तरराष्ट्रीय शान्ति दिवस— २ अक्तूबर की गूँज

"शान्ति की विजय हासिल की जा सकती है और ज़रूर हासिल की जानी चाहिये। २ अक्तूबर को इस महान और गौरवशाली आन्दोलन का हर लड़ाका शान्ति-समर्थकों की महान फ़ौज पर अपनी नज़र फिरायेगा और इस फ़ौज में आगे-आगे समाजवादके देश को, सोवियत रूस को देखेगा जिसने खूनी फ़ासिज़्म के खिलाफ़ युद्ध में अपनी अजेयता साबित कर दी है। वे इस महान विश्व शक्ति को—उस शक्तिको कम्युनिज़्मका निर्माण करते देखेंगे जो अपनी पूरी नीति के जरिये बराबर और डटकर शान्ति के हित की रक्षा कर रही है। सोवियत संघ की जनता का नैतिक और राजनीतिक एका बोल्शेविक पर्टी और कॉमरेड स्तालिन के नेतृत्व में मज़बूती से संगठित है। वह देश (आर्थिक) संकट नहीं जानता और बराबर बढ़ते पैमाने पर अपनी आर्थिक और राजनीतिक शक्ति बढ़ा रहा है अपने प्रगतिशील विज्ञान और संस्कृति की तमाम कामयाबियों को वह मेहनतकश जनता की भलाई में लगा रहा है। वह साम्राज्यवादी हमलावरों की तमाम साज़िशों का बराबर और निर्ममतापूर्वक पर्दाफ़ाश कर रहा है। सोवियत संघ शान्ति की बुनियादी और सबसे अधिक स्थायी गारंटी है।

" कम्युनिस्ट पार्टियाँ समझती हैं कि अगली क़तार में होना और शान्ति के तमाम समर्थकों के एके के लिये संघर्ष करना उनका पवित्र कर्त्तव्य है। वे एक ही चीज़ की माँग कर रही हैं: शान्ति की रक्षा के लिये सच्ची कोशिश करो। २ अक्तूबर के दिन शान्ति की शक्तियों की मोर्चेबन्दी इस बात का सबूत है कि शान्ति आज़ादी और जनता की स्वतन्त्रता के लिये संघर्ष करनेवाला जनवादी पक्ष साम्राज्यवाद और प्रतिक्रिया के पक्ष से ज़्यादा ताकतवर है। शान्ति और आज़ादी का उद्देश्य विजयी होगा।"

(कॉमिनफार्म के मुखपत्र के ३० सितम्बर के अंक के सम्पादकीय से)

Regd. No. B5607

बी. एम. कौल द्वारा न्यू एज प्रेस, १९० बी. खेतवाडी मेनरोड, बम्बई ४ में मुद्रित और "जनवादी" आफिस, राजभुवन सैंडहर्स्ट रोड, बम्बई ४ से प्रकाशित और सम्पादित

नवम्बर क्रान्ति अंक, १९४९

लेनिन के शब्द

"... हमको इस बात पर गर्व करने का अधिकार है और हमको गर्व है कि यह हमारा सौभाग्य हुआ है कि हम सोवियत राज्य का निर्माण **शुरू करें** और उसके जरिये विश्व इतिहासमे एक नये युग का, एक **नये** वर्ग के शासन के युग का **श्रीगणेश करें**—उस वर्ग के (शासन के युग का) जो हर पूँजीवादी देश मे दबा-शोषित है मगर जो हर जगह नयी जिन्दगी की तरफ, पूँजीपति वर्ग के ऊपर विजय की तरफ और मजदूर वर्ग के अधिनायकत्व की तरफ आगे बढ रहा है—पूँजी के जुए से और साम्राज्यवादी युद्धों से मनुष्य जाति की मुक्ति की तरफ आगे बढ रहा है।

"...**पहली बोल्शेविक क्रान्ति** ने इस पृथ्वी की **पहली दस करोड़** जनता को साम्राज्यवादी युद्ध और साम्राज्यवादी दुनिया के शिकंजे से बाहर खींच लिया है। बाद की क्रान्तियॉ बाकी मनुष्य जाति को ऐसे युद्धों से और इस दुनिया से बचायेगी।"

[नवम्बर क्रान्तिकी चौथी वर्षगाठ (१९२१) के अवसर पर दिये गये भाषण से]

नवम्बर, १९४९ — अंक ८ — मूल्य ६ आना

चन्दा :

वार्षिक ४ रु. ८ आना — छमाही २ रु ४ आना — तिमाही १ रु. २ आना

स्तालिन

अक्तूबर क्रान्तिका अन्तरराष्ट्रीय स्वरूप

★ अक्तूबर क्रान्ति की १०वीं सालगिरह पर दिया गया भाषण

अक्तूबर क्रान्ति सिर्फ " राष्ट्रीय सीमाओंके भीतरकी " क्रान्ति नहीं है। वह सबसे पहले एक अन्तरराष्ट्रीय, विश्व व्यवस्थाकी क्रान्ति है। कारण यह कि वह मनुष्य जाति के विश्व इतिहास में एक क्रान्तिकारी मोड़का, पुरानी पूँजीवादी दुनियासे नयी समाजवादी दुनियाकी तरफ़ मोड़का प्रतीक है।

पिछली क्रान्तियाँ आम तौर पर इस तरह खतम हुई कि सरकारकी गद्दी पर शोषकोंके एक दलकी जगह दूसरा दल बैठ गया। शोषक बदल गये मगर शोषण बना रहा। गुलामों के आजादी आन्दोलनों के दौरानमें यही बात हुई थी। अर्द्ध-गुलामों के विद्रोहों के दौरमें यही बात हुई थी। इंग्लैण्ड, फ्रांस, और जर्मनी की प्रसिद्ध " महान " क्रान्तियों के दौरमें यही बात हुई थी। मैं पेरिस कम्यून की बात नहीं कर रहा हूँ—वह तो मजदूर वर्ग द्वारा पूँजीवाद के खिलाफ इतिहासकी धारा मोड़ने की पहली शानदार, वीरतापूर्ण, मगर असफल कोशिश थी।

अक्तूबर क्रान्ति इन क्रान्तियों से सैद्धान्तिक रूपमें भिन्न है। इसका उद्देश्य शोषण के एक रूपकी जगह शोषण के दूसरे रूपको और शोषकों के एक दल की जगह शोषकोंके दूसरे दल को रखना नहीं है। बल्कि (इसका उद्देश्य) मनुष्य द्वारा मनुष्य के तमाम शोषण को मिटाना है, तमाम शोषक दलों को मिटाना है, मजदूर वर्ग की डिक्टेटरशिप (अधिनायकत्व) क़ायम करना है, किसी भी समय में मौजूद उत्पीड़ित वर्गोंमें से सबसे अधिक क्रातिकारी वर्ग की सत्ता क़ायम करना है, (और) नये वर्गरहित सोशलिस्ट समाज का संगठन करना है।

ठीक यही वह कारण है जिसकी वजह से अक्तूबर क्राति की विजय मनुष्य जाति के इतिहास में एक क्रातिकारी परिवर्तन की, विश्व पूँजीवाद के ऐतिहासिक भविष्य में क्रान्तिकारी परिवर्तन की, विश्व मजदूर वर्ग के मुक्ति आन्दोलन में क्रान्तिकारी परिवर्तन की, (और) सारे संसार की शोषित जनता की लड़ाई के तरीकों तथा संगठन के रूपों में, जिन्दगी तथा परम्परा में और संस्कृति तथा विचार-धारा में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन की प्रतीक है।

यही वह बुनियादी कारण है जिसकी वजह से अक्तूबर क्रान्ति एक अन्तर-राष्ट्रीय, विश्व व्यवस्था की क्रान्ति है।

यही वह मूल कारण भी है जिसकी वजह से तमाम देशों के उत्पीड़ित वर्गों के दिलों में अक्तूबर क्रान्ति के लिये अत्यंत गहरी सहानुभूति है—वे इसे खुद अपनी मुक्ति की प्रतिज्ञा मानते हैं।

ऐसे अनेक बुनियादी मसले बताये जा सकते हैं जिनके सिलसिले में अक्तूबर क्रान्ति सारे संसारके क्रान्तिकारी आन्दोलनके विकास पर असर डालती है।

१. अक्तूबर क्रान्ति महान सबसे पहले इसलिये है, कि उसने विश्व साम्राज्यवाद के मोर्चे मे दरार डाली है। कारण यह कि उसने सबसे बड़े पूंजीवादी देशोंमें से एक में साम्राज्यवादी बुर्जुआ (पूँजीपति) वर्गका तख्ता उलटा है और समाजवादी मजदूर वर्गको सत्ताकी गद्दीपर बिठाया है।

मजूरी पाने वाले मजदूरों का वर्ग, सताये हुओं का वर्ग, उत्पीड़ितो और शोषितों का वर्ग मनुष्य जाति के इतिहास में पहली बार ऊँचा उठकर शासक वर्ग बना है। उसने तमाम देशों के मजदूर वर्गके सामने एक फैलनेवाली मिसाल रखी है।

इसका मतलब है कि अक्तूबर क्रान्तिने साम्राज्यवाद के देशों में एक नया युग, सर्वहारा (मजदूर) क्रान्तियों का युग शुरू किया है।

इसने पैदावार के जरियों और साधनों को जमींदारों और पूंजीपतियों के हाथों से लिया और उन्हें पब्लिक सम्पत्ति में बदल दिया। इस तरह (उसने) पूंजीवादी सम्पत्ति की जगह समाजवादी सम्पत्ति को रखा। इसके जरिये इसने पूजीपतियों की इस झूठ का पर्दाफाश कर दिया कि पूंजीवादी सम्पत्ति को छुआ नहीं जा सकता, (वह) पवित्र है, चिरस्थायी है।

इसने बुर्जुआ (पूंजीपति) वर्ग से सत्ता छीनी, बुर्जुआ वर्ग को राजनीतिक अधिकारों से वंचित किया, बुर्जुआ राज्य मशीनरी को खतम किया और सत्ता सोवियतों को हस्तान्तरित की। इस तरह (उसने) पूंजीवादी जनवाद के रूप में पूंजीवादी पार्लमेन्टवाद के खिलाफ़ सर्वहारा (मजदूर वर्ग के) जनवाद के रूपमे सोवियतों के समाजवादी शासन को रखा। लाफार्ग सही था जब उसने १८८७ में ही कहा था कि क्रान्ति के अगले दिन "तमाम पिछले पूँजीपतियो के चुनाव अधिकार छीन लिये जायेंगे।" इसके जरिये अक्तूबर क्रान्ति ने सोशल-डिमोक्रेटों (नरम दली सोशलिस्टों) की इस झूठ का पर्दाफाश किया कि मौजूदा स्थिति में पूँजीवादी पार्लमेन्टवाद के जरिये समाजवाद मे शान्तिपूर्ण परिवर्तन करना संभव है।

मगर अक्तूबर क्रान्ति वहाँ नहीं रुकी और न रुक सकती थी। पुराने को जो पूँजीवादी था, खतम करने के बाद उसने नये, समाजवादी का निर्माण शुरू कर दिया। अक्तूबर क्रान्ति के बाद के दस बरस पार्टी, ट्रेड यूनियनों, सोवियतों, कोओपरेटिव सोसायटियों, सांस्कृतिक संगठनो, यातायात, उद्योग

और लाल फ़ौज की रचना के दस बरस रहे हैं। सोवियत संघ में रचनात्मक मोर्चे पर समाजवाद की निर्विवाद विजयों ने साबित कर दिया है कि मजदूर वर्ग पूँजीपति वर्ग के बिना और पूँजीपति वर्ग के खिलाफ़ देश का शासन सफलतापूर्वक कर सकता है, कि वह पूँजीपति वर्ग के बिना और पूँजीपति वर्ग के खिलाफ़ उद्योग का निर्माण सफलतापूर्वक कर सकता है, कि वह पूँजीपति वर्ग के बिना और पूँजीपति वर्ग के खिलाफ़ पूरे राष्ट्रीय अर्थतंत्र का निर्माण सफलतापूर्वक कर सकता है, कि वह पूँजीवादी घेरे के बावजूद समाजवाद का निर्माण सफलतापूर्वक कर सकता है। प्राचीन इतिहास का प्रसिद्ध रोमन सिनेटर मीनीनियस अग्रिप्पा ऐसा अकेला नहीं है जो इस पुरानी "थ्योरी" (सिद्धान्त) का दावा कर सकता है कि जिस प्रकार सिर और बदन के दूसरे हिस्से पेट के बिना काम नहीं चला सकते उसी प्रकार शोषित जनता शोषकों के बिना काम नहीं चला सकती। यह "थ्योरी" अब आम तौर पर सोशल-डिमोक्रेसी के राजनीतिक "दर्शन शास्त्र" का और विशेष रूप से साम्राज्यवादी पूंजीपति-वर्ग के साथ मिलकर सरकार बनाने की सोशल-डिमोक्रेटों की नीति का आधार-स्तम्भ है। यह "थ्योरी", जिसने पक्षपात का रूप अख्तियार कर लिया है, अब पूँजीवादी देशों में मजदूर वर्ग को क्रान्तिकारी बनाने के रास्तेमें एक सबसे बड़ी बाधा है। अक्तूबर क्रान्तिका एक सबसे महत्वपूर्ण नतीजा यह है कि उसने इस झूठी "थ्योरी" पर एक घातक प्रहार किया है।

क्या अब भी यह साबित करने की कोई जरूरत है कि अक्तूबर क्रान्तिके ऐसे और ऐसे ही दूसरे नतीजों का पूँजीवादी देशों में मजदूर वर्ग के क्रान्तिकारी आन्दोलन पर जबर्दस्त असर पड़ना लाज़िमी था और लाज़िमी है?

पूँजीवादी देशोंमे कम्युनिज़्म का अधिकाधिक विकास, सोवियत संघ के मजदूरों के लिये तमाम देशोंके सर्वहारा वर्ग में अधिकाधिक बढ़ती सहानुभूति और अन्तमें मजदूरोंके अनेक प्रतिनिधि-मण्डल जो सोवियतोंके देशमें आते हैं, जैसी आम तौर पर जानी हुई बातें बिना किसी शक-शुबहे के साबित कर देती हैं कि अक्तूबर क्रान्ति द्वारा डाले गये बीजोंसे फल आने शुरू भी हो गये हैं।

२. अक्तूबर क्रान्तिने साम्राज्यवाद को न सिर्फ़ अपने आधिपत्यके केन्द्रोंमें ही, न सिर्फ़ "हावी देशोंमें" ही हिला दिया है। उसने उपनिवेश और गुलाम देशोंमें साम्राज्यवादी शासन की जड़ पर वार करके साम्राज्यवाद के पिछवाड़े पर, उसकी परिधिपर भी प्रहार किये हैं।

जमींदारों और पूँजीपतियों का तख्ता उलटकर अक्तूबर क्रान्तिने राष्ट्रीय और औपनिवेशिक उत्पीडन की जंजीरोंको तोड़ा है और विशाल राज्य के तमाम उत्पीड़ित राष्ट्रोंको बिना किसी अपवादके मुक्त किया है। उत्पीड़ित राष्ट्रों को आजाद किये बिना मजदूर वर्ग अपने आपको आजाद नहीं कर सकता। अक्तूबर क्रान्तिकी यह विशेष बात है कि उसने सोवियत संघ में ये राष्ट्रीय-औपनिवेशिक क्रान्तियाँ राष्ट्रीय

दुश्मनी और राष्ट्रोंके बीच संघर्षों के झण्डे के नीचे नहीं बल्कि सोवियत संघ की विभिन्न जातियों के मजदूरों और किसानों के बीच परस्पर विश्वास, भाईचारे के सहयोग के झण्डे नीचे पूरी की। (उसने उन्हे) राष्ट्रवाद के नाम पर नहीं, बल्कि **अन्तरराष्ट्रीयता** के नाम पर किया।

चूँकि हमारे देशमें राष्ट्रीय औपनिवेशिक क्रान्तियाँ मजदूर वर्गके नेतृत्व मे और अन्तरराष्ट्रीयता के झण्डे के नीचे हुईं, ठीक इसी कारण से अछूत राष्ट्र, गुलाम राष्ट्र मनुष्य जाति के इतिहास मे **पहली बार** ऊँचे उठकर ऐसे राष्ट्र बने हैं जो **सचमुच** आजाद हैं और **सचमुच** बराबर हैं। इसके जरिये उसने सारी दुनिया के उत्पीड़ित राष्ट्रोंके सामने एक फैलनेवाली मिसाल रखी है।

इसका मतलब है कि अक्तूबर क्रान्ति ने एक नया युग, **औपनिवेशिक** क्रान्तियोंका एक युग **शुरू किया है**। उन्हे संसार के **उत्पीड़ित देशों में** मजदूर वर्ग के **साथ सहयोग में** और मजदूर वर्ग के **नेतृत्व में** चलाया जा रहा है।

पहले यह " माना हुआ विचार " था कि संसार अनन्त काल से नीची और ऊँची नस्लों मे, कालों और गोरों में बंटा हुआ है और उनमे से पहली संस्कृति के अयोग्य है तथा शोषण का सामान बनना ही उनकी किस्मत का लेखा है जब कि दूसरी संस्कृति की एकमात्र वाहन हैं तथा उनका मिशन पहली का शोषण करना है। इस गाथा को अब तहस-नहस और तिलजलित मानना चाहिये। अक्तूबर क्रान्ति का एक सबसे महत्वपूर्ण नतीजा यह है कि उसने इस गाथा पर एक घातक प्रहार किया। उसने अमल मे यह साबित किया कि सोवियत विकास की धारा में खिंच आये आजाद गैर-योरपीय राष्ट्र एक **सचमुच** प्रगतिशील संस्कृति और एक **सचमुच** प्रगतिशील सभ्यताको आगे बढाने मे योरपीय राष्ट्रों की तुलना में तनिक भी कम योग्य नही हैं!

पहले यह " माना हुआ विचार " था कि उत्पीड़ित राष्ट्रों को आजाद करने का एकमात्र तरीका **पूँजीवादी राष्ट्रवाद** का तरीका है, राष्ट्रों के एक-दूसरे से अलग खिंचने का तरीका है, राष्ट्रों को अलग करने का तरीका है और विभिन्न राष्ट्रों की मेहनतकश जनता के बीच राष्ट्रीय दुश्मनी को और बढ़ाने का तरीका है। इस गाथा को अब झूठी साबित हुई मानना चाहिये। अक्तूबर क्रान्तिका एक सबसे महत्वपूर्ण नतीजा यह है कि उसने इस गाथा पर एक घातक प्रहार किया। उसने अमल में साबित किया कि उत्पीड़ित राष्ट्रों को आजाद करने के एकमात्र सही तरीके के रूपमे **सर्वहारा, अन्तरराष्ट्रीय** तरीका संभव है और समयानुकूल है। उसने अमल में साबित किया कि **स्वेच्छा और अन्तरराष्ट्रीयता** के आधार पर अत्यंत विभिन्न राष्ट्रों के मजदूरों और किसानों का **भाईचारे का संघ** बनना संभव है और समयानुकूल है। सोवियत समाजवादी प्रजातंत्रों के संघ की मौजूदगी लाजिमी रूप से इसका साफ सबूत है। वह तमाम देशों की मेहनतकश

जनता के एक ही विश्व आर्थिक व्यवस्था में भविष्य में शामिल हो जाने का एक आदर्श है।

यह कहने की जरूरत नहीं है कि अक्तूबर क्रान्ति के इस और ऐसे ही दूसरे नतीजोंका उपनिवेश और गुलाम देशों के क्रान्तिकारी आन्दोलन पर जबरदस्त असर पड़ना लाजिमी था और लाजिमी है। चीन, इण्डोनीशिया, भारत आदि उत्पीड़ित राष्ट्रों में क्रान्तिकारी आन्दोलन का फैलाव और सोवियत संघ के लिये इन राष्ट्रों में अधिकाधिक बढ़ती सहानुभूति इस बात को बिना किसी शक-शुबहे के साबित करती है।

उपनिवेश और गुलाम देशों के मनमौजी शोषण और उत्पीड़न का युग बीत गया है।

उपनिवेश और गुलाम देशों में मुक्ति की क्रान्तियों का युग, इन देशो में मजदूर वर्ग के जाग्रत होने का युग और क्रान्ति में उसके नायकत्व का युग शुरू हो गया है।

३. अक्तूबर क्रान्ति ने साम्राज्यवाद के केन्द्रों मे और साथ ही उसके पिछवाड़े में भी, दोनों जगह क्रान्ति के बीज बोये हैं; (उसने) "हावी देशों" में साम्राज्यवाद की शक्ति को कमजोर किया है; और (उसने) उपनिवेशों में उसके आधिपत्य को हिला दिया है। इसके जरिये उसने समूचे विश्व पूँजीवाद की जिन्दगी को ही खतरे की स्थिति में पहुँचा दिया है।

साम्राज्यवाद की परिस्थितियों में पूँजीवाद का स्वयं विकास—उसकी असमानता की वजह से, संघर्षों और सशस्त्र टक्करों की अवश्यम्भाविता की वजह से और अन्तमें अभूतपूर्व साम्राज्यवादी कत्लेआम की वजह से—पूँजीवाद के क्षय और उसके मरने की प्रक्रिया मे पहुँच गया है। ऐसी स्थितिमें अक्तूबर क्रान्ति और उसके परिणाम स्वरूप एक विशाल देश के पूँजीवाद की विश्व व्यवस्था से अलग होने से इस प्रक्रिया का तेज होना और विश्व पूँजीवाद की बुनियादी ईंटों का एक-एक करके खिसकते जाना लाजिमी था।

इससे भी ज्यादा। साम्राज्यवादको हिलाने के साथ ही साथ अक्तूबर क्रान्तिने पहली सर्वहारा डिक्टेटरशिप के रूपमे विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलनका एक शक्तिशाली और खुला आधार कायम किया है। यह ऐसा आधार है जैसा विश्व क्रांतिकारी आन्दोलन के पास पहले कभी नहीं था और जिसपर अब वह भरोसा कर सकता है। उसने विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलनका एक शक्तिशाली और खुला केन्द्र कायम किया है। यह ऐसा केन्द्र है जैसा विश्व क्रान्तिकारी आन्दोलन के पास पहले कभी नहीं था और जिसके चारों तरफ अब वह जमा हो सकता है और साम्राज्यवादके खिलाफ तमाम देशों के सर्वहारा वर्ग और उत्पीड़ित राष्ट्रोंका एक संयुक्त क्रान्तिकारी मोर्चा संगठित कर सकता है।

इसका मतलब एक तो यह है कि अक्तूबर क्रान्ति ने विश्व पूँजीवाद पर एक घातक घाव किया है जिससे वह कभी उबर नहीं सकता। ठीक इसी कारण की वजह

से पूँजीवाद वह "संतुलन" और "स्थायित्व" फिर कभी न पा सकेगा जो उसके पास अक्तूबर से पहले था। पूँजीवाद कुछ हद तक स्थायी हो जाय, वह पैदावार का रेशनैलाइज़ेशन करे, वह देश के शासनको फ़ासिस्टोंके हाथ में सौंप दे, वह मज़दूर-वर्ग को कुछ समय के लिये दबाये रखे, मगर वह उस "शान्ति", "विश्वास", "संतुलन" और "स्थायित्व" को फिर कभी नहीं पायेगा जिसका वह पहले शोर करता था। कारण यह है कि विश्व पूँजीवाद का संकट विकास की ऐसी अवस्था में पहुँच गया है जहाँ क्रान्ति की लपटों का भड़कना अवश्यम्भावी है। इस घड़ी वह साम्राज्यवाद के केन्द्रों में भड़केगी और दूसरी घड़ी उसकी परिधि में। वह पूँजीवाद के इधर-उधर से जोड़े गये शामियाने को चीर-चीर करेगी और पूँजीवाद के अन्त का दिन रोज़ ब-रोज़ क़रीब लायेगी। बात ठीक वही होगी जो प्रसिद्ध कहानी में सारस के साथ हुई थी: "जब उसने अपनी दुमको खींचा तो उसकी चोंच कीचड़ में फंस गयी और जब उसने अपनी चोंच को खींचा तो उसकी दुम फस गयी।"

इसका दूसरा मतलब यह है कि अक्तूबर क्रान्ति ने सारी दुनियाके उत्पीड़ित वर्गों की ताक़त, उसके तुलनात्मक बल और साहस तथा लड़ाकू तैयारी को इस हद तक बढ़ा दिया है कि शासक वर्गों को मजबूर होकर उनका एक नयी, महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में सामना करना होगा। अब संसार की मेहनतकश जनता को एक ऐसी "अन्धी भीड़" नहीं माना जा सकता जो अन्धेरे मे भटक रही है और जिसे भविष्य नही सूझता। कारण यह है कि अक्तूबर क्रान्तिने ऐसी दीपशिखा स्थापित की है जो उसके रास्ते को रोशन करती है और उसके आगे संभावनाओंका द्वार खोल देती है। जहाँ पहले ऐसा कोई विश्वव्यापी खुला मंच नहीं था जिससे उत्पीड़ित वर्गोंकी आकाक्षाओं और कोशिशों को प्रचारित और निर्धारित किया जा सकता, वहाँ अब पहली सर्वहारा डिक्टेटरशिपके रूपमें ऐसा मंच मौजूद है। इस बात में शककी कोई गुंजाइश नहीं है कि इस मंच की बरबादी से "आगे बढ़े" देशों की सामाजिक और राजनीतिक जिन्दगी पर बेलगाम, काली प्रतिक्रिया का अंधियारा एक लम्बे समय तक के लिये छा जायेगा। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि "बोल्शेविक राज्य" की मौजूदगी से ही प्रतिक्रिया की काली शक्तियों पर बाँध लगता है। इस तरह उत्पीड़ित वर्गों को अपनी मुक्ति के संघर्षमे मदद मिलती है। तमाम देशों के शोषकों के दिलों मे बोल्शेविकों के लिये जो पाशविक घृणा है, वह इस बात से अच्छी तरह साफ हो जाती है। इतिहास अपने को दुहराता है—हालाँकि एक नये आधार पर। जिस तरह पहले, सामन्तवाद के पतन के दौर में "जैकोबिन"* शब्द से तमाम देशों के नवाबों के भीतर डर और घृणा पैदा हो जाती थी उसी तरह अब, पूँजीवाद के पतन के दौरमें "बोल्शेविक" शब्द से तमाम देशों के बुर्जुओं (पूँजीपतियों) में डर और घृणा पैदा हो जाती है।

---

* १७८९ की फ्रांसीसी राज्यक्रान्ति के समय उठते पूँजीपतियों की क्रान्तिकारी पार्टी के सदस्य—सं.

और जिस तरह पहले पैरिस उठते पूँजीपति वर्ग के क्रान्तिकारी प्रनिनिधियों का आश्रय-स्थान और स्कूल था उसी तरह आज मास्को उठते मज़दूर वर्ग के क्रान्तिकारी प्रतिनिधियोंका आश्रय-स्थान और स्कूल है। जैकोबिनोंके प्रति घृणासे सामन्तवाद बर्बादीसे न बचा। क्या इसमें कोई शक हो सकता है कि बोल्शेविकोंके प्रति घृणा पूँजीवाद को अवश्यम्भावी बरबादी से न बचायेगी ?

पूंजीवाद के "स्थायित्व" का युग बीत गया है और वह साथ-साथ पूंजीवादी व्यवस्थाकी अटलता की गाथा भी लेता गया है।

पूंजीवाद की बरबादी का युग शुरू हो गया है।

४. अक्तूबर क्रान्ति सिर्फ आर्थिक और सामाजिक-राजनीतिक संम्बधों के क्षेत्र की ही क्रान्ति नहीं है। वह साथ ही साथ मजदूर वर्ग के दिमाग़ में क्रान्ति है, उसकी विचाराधारा में क्रान्ति है। अक्तूबर क्रान्ति पैदा हुई और उसने ताक़त हासिल की मार्क्सवाद के झण्डे के नीचे, मजदूर वर्ग की डिक्टेटरशिप के विचार के झण्डे के नीचे और लेनिनवाद के झण्डे के नीचे जो साम्राज्यवाद और मजदूर क्रान्तियों के युग का मार्क्सवाद है। यही वजह है कि वह सुधारवाद के ऊपर मार्क्सवाद की विजय का, सोशल-डिमोक्रेटवाद के ऊपर लेनिनवाद की विजय का और दूसरे इन्टरनेशनल के ऊपर तीसरे इन्टरनेशनल की विजय का प्रतीक है।

अक्तूबर क्रान्ति ने मार्क्सवाद और सोशल-डिमोक्रेटवाद के बीच, लेनिनवाद की नीति और सोशल-डिमोक्रेटवाद की नीति के बीच एक अलंघ्य खाई खोद दी है। पहले, मज़दूर वर्ग की डिक्टेटरशिप की विजय से पहले जब सोशल डिमोक्रेसी मजदूर वर्ग की डिक्टेटरशिप के विचार को खुलेआम ठोकर मारने से पीछे रहती थी, मगर ऐसा कुछ नहीं, बिलकुल कुछ नहीं करती थी जिससे इस विचारके हासिल होनेमें मदद मिले, तब वह मार्क्सवाद के झण्डेको फरफरा सकती थी। कारण यह कि सोशल डिमोक्रेसीके इस तौर-तरीक़ेमे पूँजीवादके लिये किसी भी तरहका खतरा पैदा नहीं होता था। तब, उस दौरमें सोशल-डिमोक्रेसी मार्क्सवादके साथ ऊपरी रूपमें घुली-मिली थी, या करीब-करीब घुली-मिली थी। अब, मज़दूर-वर्ग की डिक्टेटरशिप की विजय के बाद जब सबके सामने यह साफ़ हो गया है कि मार्क्सवाद किस तरफ़ ले जाता है और उसकी विजयका क्या मतलब होता है, तब सोशल डिमोक्रेसी मार्क्सवाद के झण्डे को अब और फरफराने के योग्य नहीं है। वह पूँजीवाद के लिये कुछ हद तक खतरा पैदा किये बिना मजदूर वर्ग की डिक्टेटरशिप के विचार के साथ अब और रोमान्स नहीं कर सकती। मार्क्सवाद के तत्व से बहुत पहले ही नाता तोड़ चुकने के बाद अब उसे मार्क्सवाद के झण्डे को भी फेंकने के लिये मजबूर होना पड़ा है। उसने अपने को मार्क्सवाद की संतान के खिलाफ़, अक्तूबर क्रान्ति के खिलाफ़, संसार में मजदूर वर्ग की पहली डिक्टेटर-शिप के खिलाफ़ खुलेआम और साफ़-साफ़ खड़ा किया है। अब उसके लिये

मार्क्सवाद से अपना नाता तोड़ना जरूरी है और असलमें उसने अपना नाता तोड लिया है। कारण यह है कि आजकी परिस्थितियोंमें एक व्यक्ति अपने को मार्क्सवादी तब तक नहीं कह सकता जब तक कि वह संसारमें मजदूर वर्ग की पहली डिक्टेटर-शिपका खुलेआम और वफादारी के साथ समर्थन नहीं करता, जब तक कि वह खुद अपने पूँजीपति वर्ग के खिलाफ़ क्रान्तिकारी संघर्ष नहीं लड़ता, जब तक कि वह खुद अपने देशमें मजदूर वर्ग की डिक्टेटरशिप (अधिनायकत्व) की विजय के लिये परिस्थितियाँ तैयार नहीं करता। सोशल डिमोक्रेसी और मार्क्सवाद के बीच एक खाई खुद गयी है, अबसे मार्क्सवाद का **एकमात्र** वाहन और क़िला लेनिनवाद है, कम्युनिज़्म है।

मगर बातें यहीं खतम नहीं हुई। अक्तूबर क्रांति सोशल-डिमोक्रेसी और मार्क्सवाद के बीच फर्क की लाइन खींचने से आगे गयी। उसने सोशल डिमोक्रेसी को संसार में मजदूर वर्ग की पहली डिक्टेटरशिपके खिलाफ़ पूँजीवादके घोर समर्थकों के कैम्प (पक्ष) में फेंक दिया। जब महाशय एडलर और बॉयर, वेल्स और लेवी, लौंगुए और ब्लुम* "सोवियत शासन" को गालियाँ देते हैं और पार्लामेन्टरी "जनवाद" का उछालते हैं तो इन महानुभावोंका मतलब यह है कि वे सोवियत संघ मे पूँजीवादके पुनर्स्थापनके लिये और "सभ्य" राज्योंमें पूँजीवादी गुलामी बरकरार रखने के लिये लड़ रहे हैं और लड़ना जारी रखेंगे। मौजूदा सोशल डिमोक्रेटवाद पूँजीवादका एक सैद्धान्तिक सहारा है। लेनिन हजार बार सही थे जब उन्होंने कहा था कि मौजूदा सोशल-डिमोक्रेट राजनीतिज्ञ "मजदूर आन्दोलनमें पूँजीपति-वर्गके सच्चे एजेंट हैं, पूँजीपति वर्गके लेबर सरदार हैं" कि "मजदूर वर्ग और पूंजीपति वर्ग के बीच गृहयुद्ध" के समय वे अवश्यम्भावी रूप से "कम्युनार्डों के खिलाफ वार्साई की तरफ" ** अपने को खडा करेंगे। **मज़दूर आन्दोलन में सोशल-डिमोक्रेटवाद को खतम किये बिना पूँजीवाद को खतम करना असंभव है**। यही वजह है कि मरनेवाले पूँजीवाद का युग मजदूर आन्दोलन में मरने वाले सोशल-डिमोक्रेटवाद का युग भी है। अक्तूबर क्रान्ति का महान महत्व इस बात में भी है कि वह विश्व मजदूर आन्दोलन में सोशल डिमोक्रेटवाद के ऊपर लेनिनवाद की अवश्यम्भावी विजय की प्रतीक है।

दूसरे इन्टरनेशनल और मजदूर आन्दोलन मे सोशल डिमोक्रेटवाद के आधिपत्य का युग खतम हो गया है।

लेनिनवाद और तीसरे इन्टरनेशनल के आधिपत्य का युग शुरू हो गया है।

प्रावदा, न २५५
६-७ नवम्बर, १९२७

---

* उस समय पश्चिम योरपीय देशों के नरमदली समाजवादी नेता—सं.

** कम्युनार्ड यानी १८७१ की पहली मजदूर क्रान्ति, पैरिस कम्यून के लड़ाके; और वार्साई यानी जर्मन साम्राज्यवादियों के आगे घुटने टेककर उनसे सहयोग करनेवाली फ्रांसीसी पूँजीवादी सरकार का अड्डा—सं.

चीनमें जनताकी जनवादी क्रान्तिकी महान विजय

कामिनफ़ार्मके मुखपत्रका सम्पादकीय

चीनी जनता क्रान्तिकारी दिनोंके बीच रह रही है। जनताकी आज़ाद फ़ौजने एकके बाद दूसरी जीत हासिल करके चीनी जनताके अधिकतर भागको प्रतिक्रियावादी च्यांग काई-शेक के शासनसे मुक्त कर लिया है!

हालमें पेकिंगमें हुई जनताकी राजनीतिक सलाहकार कान्फ्रेंसने चीनको जनताका जनतंत्र घोषित कर दिया है और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी तथा चीनी जनताके नेता कॉमरेड माओ जे-दुंगके नेतृत्वमें जनताकी केन्द्रीय सरकार कायम होनेका ऐलान किया है।

चीनी जनता की जनवादी क्रान्ति ने एक महान जीत, विश्व-महत्व की ऐतिहासिक जीत हासिल की है। चीनी क्रान्ति की जीत से न सिर्फ़ चीन की जनता के भविष्य पर बल्कि पूरब और पच्छिम की दूसरी तमाम जनता के ऐतिहासिक भविष्य पर भी असर पड़ेगा। चीनी क्रान्ति ने घरेलू प्रतिक्रियावाद और चीन में विश्व साम्राज्यवाद की संयुक्त शक्तियों पर घातक प्रहार किया है। उसने विश्व साम्राज्यवाद की पूरी व्यवस्था पर एक नया, शक्तिशाली प्रहार किया है। महान अक्तूबर क्रान्ति तथा सोवियत संघमें समाजवाद की विजय के बाद और हिटलर के फ़ासिस्ट गुट की हारके बाद इस जीतने इस व्यवस्था को सबसे करारी मात दी है।

चीनमें जनताकी जनवादी क्रान्तिकी विजयका ऐतिहासिक महत्व आँकते समय लेनिनके इन शब्दोंको ज़रूर याद करना चाहिये कि: "संघर्षका परिणाम कुल मिलाकर इसी बात से तै होगा कि आबादीकी बहुत विशाल बहुसंख्या रूस, भारत, चीन आदिमें रहती है।" अकेले चीनकी ही आबादी ४७ करोड़ ९० लाख है।

चीनी क्रान्ति की विजयसे चीनके विकासका नया युग शुरू होता है। यह विदेशी साम्राज्यवाद की एक सदीसे ज़्यादा गुलामीके बाद राष्ट्रीय आज़ादीका युग है; राष्ट्रीय सामन्ती व्यवस्था और बेईमान जनरलोंके फ़ौजी नौकरशाही गुटके उत्पीड़नसे जनता की मुक्तिका युग है; सोवियत संघ की जनताके साथ, समाजवादकी तरफ़ बढ़ने वाले मध्य और दक्षिण-पूर्वी योरप के देशों के साथ और संसार की तमाम जनवाद-प्रेमी

जनता के साथ चीनी जनता के भाईचारेपूर्ण सहयोग का युग है; और चीन के अर्थतंत्र, विज्ञान और संस्कृति के फलने-फूलने और समाजवादी समाज के निर्माण की तरफ धीरे-धीरे आगे बढ़ने का युग है।

खेती और उद्योगमें, राजनीतिक व्यवस्था और आम शिक्षामें महत्वपूर्ण जनवादी परिवर्तन करके चीन की जनता की सरकार, देशके विकासकी परिस्थितियाँ तैयार करेगी। उससे चीन इस योग्य होगा कि ऐतिहासिक दृष्टिसे थोड़े ही समय के भीतर अपने पिछड़ेपन को मिटा सके और संसार के प्रमुख देशोंमें से एक बन सके। इसकी गारंटी— जैसा कि चीनी सरकारके ऐलान में कहा गया है—यह बात है कि चीनी जनता का जनतंत्र संसार की शान्ति-प्रेमी जनता के साथ, और सबसे पहले सोवियत संघ और जनता के जनतंत्रों के साथ मिलकर खड़ा है।

आज़ाद चीन के तमाम मित्रों के सामने, और उसके तमाम दुश्मनों के सामने भी, अब यह बात बिलकुल साफ हो गयी है कि चीनी जनता का बीससे ज़्यादा बरस तक उत्पीड़न करने वाला ग़द्दार च्यांग काई-शेक का बेईमान फ़ौजी गुट अब अपने आखिरी दिन गिन रहा है। यह बात साफ है कि जनता की आज़ाद फ़ौज की जीत न सिर्फ पहले से ही निश्चित बात है बल्कि एक हासिल हुई वास्तविकता है।

चीनमें जनताके जनवाद की विजयसे चीनमें ब्रिटेन और अमरीका की नीतिका जनाज़ा निकलता है, चीन को गुलाम बनाने की उनकी योजनाओं का खात्मा होता है और अमरीकी दखलन्दाजी की मात होती है। और यह बात किसीसे छिपी नहीं है कि साम्राज्यवादी चीनमें दखलन्दाजी कर रहे थे।

कॉमरेड स्तालिन की शिक्षा है कि दखलन्दाजीका मतलब सिर्फ़ फौजोंका हमला ही नहीं है और हमला दखलन्दाजी की मुख्य बात नहीं है। आजकी हालत में साम्राज्यवाद यह ज़्यादा अच्छा समझता है कि आश्रित देशमें गृहयुद्ध का संगठन करके, क्रान्तिके खिलाफ प्रतिक्रान्ति की शक्तियों की रुपये-पैसे से मदद करके, और क्रान्ति के खिलाफ़ अपने चीनी एजेन्टोंको नैतिक और आर्थिक मदद देकर दखलन्दाजी करे। १९२६ में कॉ. स्तालिनने बताया था कि अगर तमाम देशोंके साम्राज्यवादियोंने प्रतिक्रियावादी जनरलोंको बढ़ावा न दिया होता, अगर उन्होंने रुपये-पैसे, हथियार, शिक्षक, "सलाहकार" आदि, आदि न भेजे होते तो प्रतिक्रियावादी जनरलोंके लिये चीनमें क्रांतिके खिलाफ़ लड़ाई छेड़ना एकदम असंभव होता।

और चीनमें जनताका स्वाधीनता संग्राम जितना ही ज़्यादा व्यापक हुआ, ब्रिटेन और अमरीकी दखलन्दाजी भी उतनी ही ज्यादा स्पष्ट हुई। उन्होंने च्यांग काई-शेकके पास ज़्यादासे ज़्यादा हथियार, रुपया-पैसा, शिक्षक और "सलाहकार" भेजे। आज़ाद फ़ौज ने कुओमिन्तांग फ़ौजों की लड़ाईके जिस सामान पर कब्ज़ा किया उसमें से ज़्यादातर पर लिखा है: "मेड इन अमरीका"। च्यांग काई-शेक की क्रान्ति-विरोधी कोशिश में अमरीकी साम्राज्यवाद ने अरबों डालर लगाये। ये अरबों

डालर अमरीकी जनता को चूस कर जमा किये गये थे। दुनियापर आधिपत्य जमाने के झूठे उम्मीदवार इन, एटलान्टिक (समुद्र) के उस पार रहनेवालों ने चीन में अमरीकी नीति "समझाने के लिये" एक "ह्वाइट बुक" निकाली है। उसमें खुद उन्होंने माना है कि च्याग काई-शेक को अमरीका ने जो मदद दी वह कुओमिन्तांग सरकार के कुल खर्चे से आधी से ज़्यादा रही।

इस पृष्ठभूमिमें चीनी क्रान्ति की विजयका एक विशेष महत्व हो जाता है। कारण यह कि वह साम्राज्यवादी मोर्चेको और भी ज़्यादा कमजोर करती है, पूंजीवादी व्यवस्थाके आम संकटको और भी गंभीर बनाती है, मानव समाज के विकास के पूरे इतिहास द्वारा निर्धारित पूंजीवादी आधिपत्यके अवश्यम्भावी अन्तका दिन करीब लाती है, और संसार की मेहनतकश जनता की अन्तिम जीत और कम्युनिज़म की सर्वव्यापी विजय का दिन करीब लाती है।

चीनी क्रान्ति की विजय का महान महत्व और उसकी अजेयता की गारंटी इस बातमें है कि उसका नेता मौजूदा समाजका सबसे प्रगतिशील वर्ग—मज़दूर वर्ग है, जिसकी शिक्षक और निर्देशक चीनी कम्युनिस्ट पार्टी है।

लेनिन और स्तालिनकी महान शिक्षाओं (सिद्धांतों) के हथियारसे सुसज्जित और सोवियत संघके मज़दूर-वर्ग तथा सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) के ऐतिहासिक अनुभवको अपना आधार बनाने वाली चीनी कम्युनिस्ट पार्टीने एक क्रान्तिकारी फौज खड़ी की, इस फ़ौजको शिक्षित किया और हथियारोंसे लैस किया और लड़ाईकी आगमें उसे फ़ौलाद बनाया। इस पार्टीने विशाल किसान जनताको क्रान्तिमें खींचा और उसे मज़दूर वर्गका सहयोगी बनाया। उसने चीनी जनताके तमाम अंगोंको संगठित किया और उन्हें प्रतिक्रियावादी सामन्ती तथा उनके साम्राज्य-वादी मालिकोंके खात्मेके वास्ते लड़नेके लिये उत्साहित किया। और आज यह पार्टी विश्वासके साथ आज़ाद चीनका नेतृत्व कर रही है। वह उसे जनताके जनवादी अधि-नायकत्वको सुदृढ़ बनानेके रास्ते पर, राष्ट्रीय अर्थतंत्रकी पुनर्स्थापना और विकासके रास्ते पर और मेहनतकश जनताकी आर्थिक और नैतिक स्थितिमें सुधार और खुशहाली के रास्ते पर आगे ले जा रही है।

अपनी विजयके लिये चीनी जनता अपनी शक्तिशाली, अत्यंत सुसज्जित और अनुशासन पूर्ण क्रान्तिकारी फौजकी आभारी है।

एक प्रान्तके बाद दूसरे प्रान्त को आज़ाद करने के दौरान में जनता की आज़ाद फ़ौज वह शक्ति थी जिसने अपने बर्ताव से, किसानों के प्रति अपनी नीति से और उनकी मदद करने की अपनी तत्परता से आम जनता की चेतना को अनुकूल रूप दिया, जनता की हमदर्दी हासिल की और उसे क्रान्ति के पक्ष में खींच लिया। यही वजह है कि प्रतिक्रियावादी कुओमिन्तांग की फ़ौजों, जापानी साम्राज्यवादियों और

अंग्रेज-अमरीकी दखलन्दाजी जैसे ताकतवर दुश्मनों के खिलाफ लड़ाई के दौरान में जनता की आजाद फ़ौज चालीस लाख की वह मजबूत शक्ति बनी जिसने अपने दुश्मनों को कुचला है और लगभग पूरे देश को आजाद किया है।

अक्तूबर क्रान्ति और सोवियत संघमें समाजवाद की विजयने और उसके साथ-साथ दूसरे महायुद्धमें सोवियत सघ द्वारा जर्मन और जापानी साम्राज्यवादकी शिकस्त ने विश्व साम्राज्यवादकी शक्तियों को इस हद तक खोखला कर दिया कि चीन में जनताकी जनवादी क्रान्ति की विजयके लिये एक निर्णयात्मक पहली जरूरत पूरी कर दी। इस तरह सोवियत जनताने चीनी जनताको महान भाईचारेकी सहायता दी है और दे रही है।

चीनी क्रान्तिकी विशेष बातों के बारेमें बताते हुए कॉमरेड स्तालिनने तेईस बरस पहले कहा था कि चीन की बगल में सोवियत सघ मौजूद है और विकसित हो रहा है; *उसके क्रान्तिकारी अनुभव और उसकी सहायता से चीनमें साम्राज्यवाद और* सामन्ती, मध्ययुगी अवशेषोंके खिलाफ चीनी मजदूर-वर्गके सघर्षको मदद ही मिलेगी। जिन्दगी ने कॉमरेड स्तालिन के शब्दों की सचाई पूरी तरह साबित कर दी है।

इसमें शक--शुबहा की गुंजाइश नहीं है कि चीनी क्रान्ति की विजय से उपनिवेश और गुलाम देशोंकी जनताको राष्ट्रीय स्वाधीनताका सग्राम और ज़ोरसे लड़नेका उत्साह मिलेगा। भारत, बर्मा, इण्डोनीशिया, वियतनाम और पूर्वके दूसरे देश—जिन्हें स्तालिनने विश्व साम्राज्यवादका भारी रिजर्व और मुख्य पिछवाड़ा बताया था—आज या तो अपनी आज़ादी और राष्ट्रीय स्वाधीनता के सग्राम के केन्द्र बन चुके हैं, और या वे पक कर क्रान्ति के रिज़र्व बन गये हैं। साम्राज्यवादके खिलाफ उनकी लड़ाईमें चीनका जनवादी जनतंत्र उनका वफ़ादार दोस्त और विश्वासी गढ़ होगा।

ज़ाहिर है कि स्वतंत्रता प्रेमी जनताके राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलनोंके खिलाफ अपने संघर्षमें विश्व प्रतिक्रियावाद और सबसे पहले अमरीकी साम्राज्यवाद अपने गन्देसे गन्दे हथकण्डे इस्तेमाल करना जारी रखेगा, जैसे कि खुली फौजी दखलन्दाज़ी और गद्दार टीटो व राकोविक जैसे गुप्तचरों और साजिश रचनेवालोंको क्रान्तिकारी आन्दोलनमें पैठाना। मगर जैसा कि माओ जे-दुंगने चीनकी जनताकी राजनीतिक सलाहकार कांफ्रेंस का उद्‌घाटन करते समय कहा है: "...... जनताके जनवादी अधिनायकत्वकी राज्य व्यवस्था जनवादी क्रान्तिकी विजयके फलोंकी रक्षा करनेके लिये और विदेशी तथा देशी शत्रुओंकी पुरानी व्यवस्था फिरसे कायम करनेके उद्देश्यसे की गयी साजिशोंके खिलाफ लड़नेके लिये एक शक्तिशाली हथियार है।"

इतिहास साम्राज्यवादकी मौतका फरमान जारी कर चुका है। हमारे युगमें सब रास्ते कम्युनिज़्मकी तरफ़ जाते हैं।

सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टी के संगठन के सिद्धान्त

★

लेखक
जी. ओवार्स्की

मजदूर वर्गकी पार्टीके बारेमें लेनिन और स्तालिनकी शिक्षा

मजदूर-वर्गकी पार्टीकी शिक्षा और संगठनके बारेमें उसके उसूल, मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तका एक बहुत महत्वपूर्ण हिस्सा है। लेनिन और स्तालिनके मुताबिक मजदूर वर्गकी केवल एक लड़ाकू, क्रान्तिकारी और साहसी पार्टी ही, अवसरवादसे अछूती पार्टी, कम्युनिज्मकी विजयके लिये संघर्षमें एक सही राजनीतिक कार्यक्रमको तै करनेकी योग्यता रखने वाली पार्टी ही, केवल ऐसी पार्टी ही, मेहनतकश जनता द्वारा सत्ताको जीतने और उसे मजबूत बनानेकी लड़ाईमें जनताका सफलतासे नेतृत्व कर सकती है।

वैज्ञानिक समाजवादके प्रवर्तक मार्क्स और एंगेल्सने मजदूर वर्गके अग्रदल के रूपमें पार्टीकी बावत सीखों की मुख्य रुपरेखाओंको तैयार किया था। उन्होंने बताया कि बिना एक पार्टीके सर्वहारा वर्ग अपनी मुक्ति हासिल नहीं कर सकता—बिना एक पार्टी के न तो वह सत्ता हासिल कर सकता है और न पूँजीवाद की जगह एक नये समाजका, समाजवादके उसूलोंके आधारपर एक समाजका, निर्माण कर सकता है

मार्क्स ओर एंगेल्सकी मृत्युके बाद मार्क्सवादी सिद्धान्तके बुनियादी उसूलोंको अवसरवादियोंने तोडा-मरोडा, जिन्होंने दूसरी इन्टरनेशनल की पार्टियोंको अपना गढ बना लिया था।

पुरानी सोशल डिमोक्रेटिक पार्टियोंने अपना काम कमोवेश शान्तिपूर्ण विकास के कालमे किया था, जब कि पार्लियामेण्टरी (वैधानिक) रूपको ही संघर्ष का प्रमुख स्वरूप समझा जाता था। नयी हालतों में, साम्राज्यवादके युगमें, जबकि वर्गोंकी खुली टक्कर शुरू हुई, जब कि मजदूर वर्ग द्वारा साम्राज्यवादको उखाड़ फेंकने के लिये और सत्ता हासिल करने के लिये ताकतों को इकठ्ठा किया जाता है— ऐसे कालमें मजदूर-वर्ग के सघर्ष को चलाने में वे अयोग्य साबित हुए। इस नये युगने, कॉमरेड स्तालिन ने कहा है, पार्टी के सभी कामों को नये क्रान्तिकारी तरीके से फिरसे संगठित करने, सत्ता के लिये क्रान्तिकारी संघर्ष की भावनामें मजदूरों को शिक्षित करने, रिजर्वों को तैयार करने और आगे बढ़ाने, पड़ोसी देशों के सर्व

हारा के साथ सहयोग को शक्तिशाली बनाने, औपनिवेशिक और गुलाम देशों के स्वतंत्रता संग्राम के साथ दृढ़ सम्बंध कायम करने के सवालों को सामने ला रखा है। ये नये काम उन पुरानी पार्टियों के जरिये न तो किये जा सके हैं और न किये जा सकते हैं जिनमें अवसरवाद का घुन लग गया है और जो पतित होते-होते पूँजी के लेफ़्टिनेन्टों की अवस्था में पहुँच गयी हैं।

स्तालिन कहते हैं कि :

" यदि, मजदूर वर्ग के कंधों पर इन कामों को पूरा करने की जिम्मेदारी हो, और वह पुरानी पार्टियोंके नेतृत्वमें ही चलता रहे, तो वह पूरी तरह निहत्था बन जाता है।...

" इसलिये आवश्यकता है एक नयी पार्टी की, एक लड़नेवाली और क्रान्तिकारी पार्टीकी—ऐसी पार्टीकी जिसमें इतना साहस हो कि वह राजसत्ता पर कब्जा करने के संघर्ष में मजदूर-वर्ग का नेतृत्व कर सके; जिसको इतना अनुभव हो कि क्रान्तिकारी परिस्थितिकी अत्यंत जटिल अवस्थाओं में भी सही तरीके से सोच सके और काम कर सके और जो इतनी लचकदार हो कि अपने ध्येय के रास्ते में छिपी हुई तमाम चट्टानों से अपने जहाजको बचाकर उसे आगे ले जा सके। "

(**लेनिनवाद के मूल सिद्धान्त**, हिन्दी, प्रथम संस्करण, पृष्ठ ८२–८३)

यह है वह नयी तरह की पार्टी जिसका लेनिन और स्तालिनने संगठन और निर्माण किया।

सर्वहारा वर्ग की पार्टी के बारेमें मार्क्स और एंगेल्स की रूपरेखा के आधार पर लेनिन और स्तालिनने एक " लड़ाकू पार्टी " के रूप में मजदूर वर्ग की पार्टी के लिये एक अभिन्न सिद्धान्त का विकास किया जिसका उद्देश्य सर्वहारा डिक्टेटरशिप की लड़ाई के लिये, समाजवाद की विजय के लिये मजदूर वर्ग का नेतृत्व करना है।

जैसा कि स्तालिन ने सोवियत रूस की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविकों) के इतिहास में बताया है :

" लेनिनने मार्क्सवादके इतिहासमें पहली बार इस सिद्धांत की व्याख्या की **कि पार्टी** सर्वहारा वर्ग का **प्रमुख संगठन** है। वह सर्वहारा वर्ग का प्रमुख **शस्त्र** है जिसके बिना सर्वहारा वर्गके एकाधिपत्य (डिक्टेटरशिप) की लड़ाई जीती नहीं जा सकती। " (हिन्दी संस्करण, पृ. सं. ५१)

अपनी प्रसिद्ध पुस्तक—**एक क़दम आगे, दो क़दम पीछे**—में लेनिनने मार्क्सवादी पार्टीके संगठन के उसूलोंके बारेमें साफ़-साफ बताया कि वह एक नयी तरह की पार्टी है। लेनिन के महान सहयोगी, उनके काम को आगे बढ़ानेवाले महान प्रतिभाशाली कॉ. स्तालिनने पार्टीके संगठन के बारेमें लेनिन की शिक्षाके उसूलोंको

और भी ज़्यादा विकसित किया। पार्टीकी नीति और संगठन के कामके बीच परस्पर सम्बंधके बारेमें; केडरों (पार्टी कार्यकर्ताओं) के चुनाव, शिक्षा और काम-विभाजन को वैज्ञानिक तरीकेसे संगठित करने के बारेमें; फैसलोंके अमलमें लाये जानेमें जॉचके संगठनके बारेमें; बोल्शेविक जागरूकता बढ़ाने और पार्टीके उन दुश्मनोंके खिलाफ़ लड़ाईके तरीकोंके बारेमें जो मौका पाकर पार्टीकी कतारमें घुस आते है; संघर्षमें पीछे पैर हटाने वालों और दोमुँही नीति पर चलने वालोंको पार्टीकी कतारसे निकाल बाहर करनेके बारेमें; बोल्शेविज्मको पूरी तरह समझने के बारेमें— शिक्षा देकर स्तालिनने पार्टीको हथियारबन्द किया है।

कम्युनिज़्मके महान सैद्धान्तिक और नेता—लेनिन और स्तालिनने सच्ची मार्क्सवादी पार्टीका निर्माण किया जो अवसरवादियों के प्रति निर्मोही और पूँजी-पतियों के खिलाफ़ क्रान्तिकारी है, जो मजबूतीसे गॅठी हुई और एक ढाँचेमें ढली हुई है। अर्थवादियों और मेन्शेविकोंके खिलाफ़, ट्राटस्कीवादियों और बुखारिनवादियों के खिलाफ, दर्शन शास्त्रमें सभी तरहके आदर्शवादियोंके खिलाफ़ संघर्षके दौरानमें बोल्शेविक पार्टीका निर्माण हुआ है और इस संघर्षके दौरानमें वह फौलाद बनी है। एक नयी तरह की पार्टीके रूप में अपने सिद्धांत, रणनीति और संगठनके ज़रिये वह वैसे **सभी लोगोंके लिये एक उदाहरण** पेश करती है जो सही माने में एक क्रान्तिकारी मार्क्सवादी पार्टी बनाना चाहते हैं।

एक नयी तरह की पार्टीके लिये ज़मीन तैयार करने में बुनियादी और निर्णयात्मक काम किया है, लेनिन की इन अनुपम पुस्तकों ने : **क्या करें ?; एक क़दम आगे, दो क़दम पीछे; जनवादी क्रान्ति में सामाजिक जनवाद की दो कार्यनीतियाँ; भौतिकवाद और अनुभव-सिद्ध आलोचना**—तथा स्तालिन की इन महान रचनाओंने : **पार्टी के अन्दर मतभेद सम्बंधी कुछ बातें; एक सामाजिक जनवादी को जवाब; सर्वहारा वर्ग और सर्वहारा पार्टी; अराजकता या समाजवाद**।

आधी शताब्दी के अपने क्रान्तिकारी संघर्ष में लेनिन और स्तालिन की पार्टीने दिखा दिया कि वह दुनिया में सबसे अधिक क्रान्तिकारी और सबसे ज़्यादा शक्तिशाली पार्टी है।

सोवियत रूसकी जनताने जो भी सफलताएँ हासिल की हैं, उन सबके लिये वह सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीके नेतृत्वकी आभारी है जिसने मज़दूर-वर्ग, किसानों और बुद्धिजीवियोंको एक सूत्रमें बांध दिया है।

कम्युनिस्ट पार्टीके नेतृत्वमें मेहनतकश जनताने अपनी सोवियत सरकार कायम की और व्हाइट गार्डों तथा दखलन्दाजी करने वाली विदेशी ताक़तों के खिलाफ उसकी रक्षा की।

पार्टी की सही नीतिने पहले के पिछड़े ज़ारशाही रूस को बदल कर एक विकसित और विशाल समाजवादी राज बना दिया, जो न सिर्फ़ हिटलरी जर्मनी और साम्राज्य-वादी जापानके खिलाफ़ देशभक्तिपूर्ण युद्ध की कठिन परीक्षामें उतीर्ण हुआ, बल्कि और ज़्यादा शक्तिशाली होकर तथा कहीं ज़्यादा फ़ौलाद बनकर उससे बाहर निकला हैं।

लेनिन और स्तालिन की पार्टी के नेतृत्व में अब लड़ाई के बाद, सोवियत जनता राष्ट्रीय अर्थतंत्र के नये विशाल निर्माण के लिये सफलतापूर्वक काम कर रही है।

कम्युनिस्ट पार्टी की असीम शक्ति के कारणों में से एक यह है कि उसके काम उसकी कही हुई बातों से अलहदा नहीं हैं, न उसका अमल उसकी थ्योरी (सिद्धान्त) से अलग है। संघर्ष के उद्देश्यों को आगे बढ़ानेके लिये सही नीति तै करने की योग्यता, और अमल में इन उद्देश्यों के लिये संघर्षोंका संगठन करने का कौशल भी पार्टी के पास है। लेनिन और स्तालिन के अमूल्य ग्रंथों में संगठन के जिन उसूलों को विकसित किया और बताया गया है, वे तीनों रूसी क्रान्तियों के दौरान में ऐतिहासिक परीक्षा में सही साबित हो चुके हैं। उसके बाद समाजवादके निर्माणके सभी अमली कामोंमें, लड़ाईके दौरानमें पार्टीके विशाल संगठनात्मक कामोंके जरिये, और अभी लड़ाईके बादके कालमें जब सोवियत संघके राष्ट्रीय अर्थतंत्रके पुनर्निर्माण तथा और भी ज़्यादा विकासके लिये पंचवर्षी योजनाको पूरा करनेके लिये पूरी ताकत लगायी जा रही है—उनकी दृढ़ता सही साबित हो गयी है।

लेनिन और स्तालिनने मजदूर-वर्गकी पार्टीके उसूलोंको इस रूपमें विकसित किया कि वह सर्वहारा वर्गका अगुआ संगठन है, सबसे ऊँचे किस्मका संगठन है और वह मजदूर-वर्ग का बेहद महत्वपूर्ण हथियार है।

तो, कम्युनिस्ट पार्टी के संगठन के सिद्धांत क्या हैं?

लेनिन और स्तालिन की शिक्षा के मुताबिक कम्युनिस्ट पार्टी मज़दूर-वर्ग की **अगुआ**, वर्ग-जाग्रत टुकड़ी है जो क्रान्तिकारी सिद्धान्त से लैस है।

और भी; कम्युनिस्ट पार्टी न सिर्फ अगुआ है, बल्कि मजदूर वर्ग की **संगठित** टुकड़ी है, जो इच्छाओं की एकता और कामोंकी एकतासे एक सूत्रमें बंधी है, जो पार्टी के कार्यक्रम और नियमों से किसी भी तरह के भटकाव को, अपने अनुशासन के तोड़े जानेको, गुटबन्दी और दोहरी नीतिको बर्दाश्त नहीं करती है।

और आगे; पार्टी मजदूर वर्गके **संगठनका सबसे ऊँचा रूप** है। इसका उद्देश्य मजदूर वर्गके सभी दूसरे संगठनों की रहबरी करना है।

पार्टी, करोड़ों मजदूरोंके साथ मजदूर-वर्गके अग्रदलके सम्बंधका प्रतीक है।

अपने कामों को पूरा करने के लिये **जनवादी केन्द्रीकरण** (डिमोक्रेटिक सेन्ट्रलिज़्म) के उसूलों पर ही पार्टीका संगठन होना चाहिये, एक ही तरहके नियम होने चाहिये और एक ही तरह का अनुशासन होना चाहिये जो सभी सदस्यों पर समान रूपसे लागू हो। निदर्शन करनेवाले एक ही केन्द्र के ज़रिये उसकी अगुआई होनी चाहिये जिसमें अल्पमत बहुमत के आगे, अलग-अलग संगठन केन्द्र के आगे और नीचे के संगठन ऊपर के संगठनों के आगे मातहत हों।

अन्तमें, पार्टी अपने अमली कामों में एक आम और जाग्रत सर्वहारा अनुशासन निश्चय ही लागू करे जो उसके सभी सदस्यों पर समान रूप से लागू हो।

कड़ा अनुशासन: कम्युनिस्ट पार्टी की सफलता के लिये ज़रूरी शर्त

कम्युनिस्ट पार्टी का यह एक प्रमुख संगठनात्मक उसूल है कि उसकी क़तार में बिना किसी शर्तके अनुशासन कायम रखा जाय और लगातार मजबूत बनाया जाय। लेनिन ने एक नहीं, कई बार कहा है कि "पूर्ण केन्द्रीयता और मजदूर-वर्ग का कड़ा अनुशासन पूँजीपति वर्ग के ऊपर विजय पाने के लिये एक बुनियादी शर्त है।" (संक्षिप्त ग्रन्थावली, दो भागोंवाला संस्करण, भाग २, पृ. ५७४)

लेनिन ने पूंजीवादी बुद्धिजीवियों की नवाबी उच्छृंखलता की, जो मार्क्सवादी पार्टी की क़तारों मे सर्वहारा अनुशासन की भावना से नफ़रत करते थे, बड़ी कड़ी आलोचना की है।

> "एक सच्ची पार्टीके निर्माणका काम जब हम शुरू करें," उन्होंने १९०४ में लिखा था, "तब वर्ग-जाग्रत मजदूरको मजदूर-वर्गकी सेनाके सिपाही की दिमागी हरकतोंको उस पूँजीवादी बुद्धिजीवी की दिमागी हरकतों से अलग करके देखना सीखना चाहिये जो ऊटपटॉग बातें बनाने में ही मजा लेता है; उसे इस बात पर अड़ना सीखना चाहिये कि एक पार्टी कार्यकर्ता के जो कर्तव्य हैं उन्हें न सिर्फ़ साधारण कार्यकर्ता ही पूरा करें बल्कि 'चोटी पर के लोग' भी उन्हें पूरा करें।" (संक्षिप्त ग्रन्थावली, दो भागोंवाला संस्करण, भाग १, पृ. ३३३)

बोल्शेविक पार्टी के अनुशासन का विशेष लक्षण यह है कि उसे जाग्रत प्रयत्न से क़ायम रखा जाता है, और ऑख मूद कर नहीं। जाग्रत अनुशासन के लिये ज़रूरी होता है कि पार्टी के जीवन से सम्बंधित सभी प्रश्नों पर होने वाले वाद-विवादों मे पार्टी के सदस्य सक्रिय हिस्सा ले और उन पर फैसले लेने मे हिस्सा लें।

फौलादी अनुशासन का मतलब यह हर्गिज नहीं होता है कि पार्टी संगठनों के अन्दर विचारों के अन्तर की गुंजाइश नहीं रह जाती। इसके विपरीत, उसका मतलब होता है पार्टी की नीति के सम्बंध मे आलोचना और विचारों में अन्तर। जैसा कि स्तालिन ने बताया है:

> "फौलादी अनुशासन सोची-समझी और स्वेच्छापूर्ण सहमति को बलाये ताक़ नहीं करता बल्कि उसे मानकर चलता है। कारण यह है कि सिर्फ सोचा-समझा अनुशासन ही सच्चा फौलादी अनुशासन हो सकता है। मगर मतामत का संघर्ष बन्द हो जाने के बाद, आलोचना पूरी हो चुकने और फैसला हो चुकने के बाद तमाम पार्टी मेम्बरोंकी इच्छाका एका और कामका एका जरूरी होता है। ये ऐसी शर्तें हैं जिनके बिना न तो पार्टी के एके को, और न पार्टी के भीतर फौलादी अनुशासन को ही सोचा जा सकता है।" (लेनिनवाद के मूल सिद्धान्त, पृष्ठ ९१-९२)

और लेनिनने लिखा था :

"एक बार जब योग्य संस्थाये एक फैसला कर लेती हैं, हम सब पार्टी सदस्य **एक इंसान हो कर काम करते हैं** ।"

बोल्शेविकों की सफलता के लिये जरूरी बुनियादी बातों मे से एक का विश्लेषण करते हुए, १९२० मे लेनिनने लिखा था·

"..ढाई साल की बात तो जाने दीजिये, बोल्शेविक ढाई महीने भी सत्ता पर कब्जा क़ायम न रख सकते थे अगर कडे से कडा, सच्चा फौलादी अनुशासन हमारी पार्टी में न होता और उसे मजदूर-वर्ग की समूची जनता का पूरा-पूरा और निस्संकोच समर्थन न हासिल होता।" (**संक्षिप्त ग्रन्थावली**, दो भागों वाला संस्करण, भाग २, पृ. ५७३)

जैसा कि बोल्शेविज्म के अब तक के इतिहास ने दिखाया है, सर्वहारा पार्टी के अन्दर अनुशासन कायम रखा जाता है, पहले तो, सर्वहारा अग्रदल की चेतना, साहस और कुर्बानी से; दूसरे, तमाम मजदूर जनता से उसकी निकट सम्बंध रखने की क्षमता से; और तीसरे, पार्टी द्वारा सही राजनीतिक नेतृत्व, सही रणनीति और कार्यनीति से। इन्हीमे इस अनुशासन की परीक्षा होती है और वह दृढ़ होता है।

इनमे से एक भी शर्त को तोड़ने से अवश्यम्भावी रूप से पार्टी के अन्दर अनुशासन ढीला हो जाता है। इस बात को अच्छी तरह जानते हुए कि पार्टी के कार्यकर्ताओ मे एके और अटूट दृढ़ता का पार्टी के लिये कितना बड़ा महत्व है, ट्राट्स्कीपंथियों, जिनोवियेव-पंथियो, बुखारिनपंथियों और राष्ट्रवादी-गुमराहो तथा दूसरे शत्रु अंगोंने पार्टीके अन्दरूनी अनुशासन को ठुकराने, गुटबन्दी शुरू करने, पार्टीको अलग-अलग टुकड़ियों मे बॉट देनेकी कोशिशों के जरिये पार्टी को तहस-नहस करने का काम शुरू कर दिया।

जब पार्टीने सभी रंगों के गुटबाजो को पार्टी से खदेड़कर बाहर किया और पार्टी की कतारों से घुटनाटेकू लोगों, भगोड़ों और ग़द्दारों को निकाल बाहर किया तो लेनिन की पार्टीने पार्टी की कतारो को और भी मजबूत बनाया, इच्छा और कार्य की एकताको तमाम पार्टी सदस्यों मे दृढ़ बनाया।

स्तालिन ने कहा है कि: "हमारी पार्टी अपने भीतर एकता और अनुपम सहकारिता की भावना उत्पन्न करनेमें मुख्यतः इसीलिये सफल हुई कि उसने ठीक समय पर अपने भीतर की अवसरवादी गंदगी को धो डाला और वह पार्टी की कतारो को विसर्जनवादियो, मेन्शेविको से मुक्त करने मे सफल हुई। अवसरवादियो और सुधारवादियो, सामाजिक-साम्राज्यवादियों और सामाजिक देशाहंकारियो तथा सामाजिक देशभक्तों और सामाजिक-ज्ञातिवादियों को अपने भीतरसे निकाल देने से सर्वहारा पार्टियॉ विकसित होती हैं और दृढ़ बनती है। अवसरवादी तत्वोंको अपने बीचसे निकाल फेंकने से पार्टी सुगठित बनती है।" (**लेनिनवाद के मूल सिद्धान्त**, पृ ९४)

ये सिद्धान्त सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) के नियमों मे प्रकट होते हैं जिनमें कहा गया है :

> " पार्टी एक संयुक्त लड़ाकू संगठन है जो ऐसे जाग्रत अनुशासनके द्वारा गॅठा हुआ है, जो सब पार्टी सदस्यों पर समान रूप से लागू होता है। पार्टी की दृढ़ताका आधार है उसकी एकरूपता, इच्छाशक्ति और कार्य की एकता जिनके कारण पार्टी के नियमों से भटकना, पार्टी के अनुशासनको तोड़ना, गुटबन्दी करना और दो-मुँही नीति बरतना अक्षम्य है। पार्टी अपनी कतारों से उन लोगों को निकाल बाहर करती है जो पार्टी के नियमों और पार्टी अनुशासन को तोड़ते हैं।"

जैसा कि सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) के नियमों में बताया गया है : पार्टी अनुशासन को मानना सभी पार्टी सदस्यों और सभी पार्टी संगठनो का प्रमुख कर्तव्य है। इन नियमो के अनुसार पार्टी के अनुशासनको तोड़ने, ऊँची कमिटियों के फैसला को अमल में न लाने या ऐसे दूसरे अपराध करने पर जिन्हें पार्टी का बहुमत अपराध माने, दण्ड दिया जा सकता है। यह दण्ड चेतावनी से लेकर पार्टी से निकाल बाहर किये जाने तक हो सकता है।

कम्युनिस्ट पार्टियों के बोल्शेविक संगठन के लिये जरूरी बुनियादी शर्तों पर बोलते हुये जोसेफ स्तालिन ने एक जर्मन कम्युनिस्ट से बात करते समय १९२५ में कहा था कि इनमें से एक खास शर्त है कड़ा पार्टी अनुशासन :

> " पार्टी के लिये जरूरी है कि वह सैद्धान्तिक एकसूत्रता, आन्दोलन के उद्देश्यों की स्पष्टता, अमली काम की एकता, पार्टी सदस्यों की बहुसंख्यक जनता द्वारा पार्टी के कर्तव्यों की ओर जागरूकता के आधार पर विकसित फ़ौलादी सर्वहारा अनुशासन को लागू करे।" (**रचनाएँ, रूसी संस्करण, भाग ७, पृ. ४०**)

अपने सदस्यों के सैद्धान्तिक ज्ञान और राजनीतिक चेतना के स्तर को ऊँचा उठाने, जनता से पार्टी के सम्बंध को अधिकाधिक घनिष्ट बनाने, अपने प्रयत्न से फ़ौलादी अनुशासन लागू किये जाने और केन्द्रीय नेतृत्व कायम करने के साथ ही पार्टी में भीतरी जनवाद और साहस के साथ बोल्शेविक आत्म-समालोचनाको विकसित करने की ओर लगातार प्रयत्न ने ही लेनिन और स्तालिन की महान पार्टीकी दृढ़ एकता और अनुपम लचीलेपन को पक्का बना दिया है। इसीके कारण वह एक क्षणमें अपनी कतारो से गंदगी दूर करने में, हजारों-लाखों सदस्यों को किसी भी बड़े काम के लिये जुटाने मे, कम्युनिस्ट समाज के निर्माणके उद्देश्य को पूरा करने के लिये करोड़ों मेहनतकश जनताको संगठित करने में सफल हुई है।

(" सोवियत रूस की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) के संगठन के सिद्धान्त " नामक पुस्तिका से यह पहला और आखिरी अध्याय लिया गया है।)

जर्मन जनवादी जनतंत्र के प्रेसीडेन्ट हर विलियम पीक और प्रधानमंत्री हर ऑटो ग्रॉटेवौल के नाम कॉ. स्तालिन का संदेश

मुझे इजाजत दीजिये कि जर्मन जनवादी जनतंत्र की स्थापना पर और जर्मन जनवादी प्रजातंत्र के प्रेसीडेन्ट और प्रधान मंत्री के पद पर आप लोगों के क्रमशः चुने जाने पर मैं आपको और आपके जरिये जर्मन जनता को बधाई दूँ।

एक शान्तिपूर्ण जर्मन जनवादी जनतंत्र की स्थापना योरप के इतिहास में एक मोड़ है। इस बारेमें कोई सन्देह नहीं हो सकता कि शान्तिपूर्ण सोवियत संघ की मौजूदगी के साथ-साथ शान्ति प्रेमी और जनवादी जर्मनी की मौजूदगी योरप में नये युद्धों की संभावना को एक किनारे कर देती है, योरप मे खून खराबी को खतम कर देती है और विश्व साम्राज्यवादियों द्वारा योरपीय देशों का गुलाम बनाया जाना असंभव बना देती है।

पिछले युद्ध के अनुभवने दिखा दिया है कि लडाई में सबसे अधिक बलिदान जर्मन और सोवियत जनता को देने पडे, कि विश्व महत्व के महान काम पूरे करने के लिये योरप में इन दो देशो की जनता के पास सबसे ज़्यादा शक्ति है। अगर इन दो देशों की जनता शान्ति के वास्ते काम करने के लिये उसी तरह जुट कर कोशिश करने की लगन दिखायें जिस तरह उन्होंने लडाई लड़ी तो यह माना जा सकता है कि योरप मे शान्ति की गारंटी हो गयी है।

इसीलिये एक संयुक्त, जनवादी और शान्तिप्रेमी जर्मनी की नींव रखने के साथ-साथ आप योरप मे स्थायी शान्ति की गारंटी करके तमाम योरप के फायदे का महान काम कर रहे हैं।

आपको इस बात में शक करने की जरूरत नहीं है कि इस रास्ते पर चलने में और शान्ति के ध्येय को सुदृढ़ बनाने मे संसार की तमाम जनता की सर्वाधिक सहानुभूति और सक्रिय सहायता आपके साथ होगी। अमरीकी, ब्रिटिश, फ्रांसीसी, पोल, चेकोस्लोवाक और इटालवी जनता भी उसमे होगी —और शान्तिप्रेमी सोवियत जनता का नाम लेने की तो जरूरत ही नहीं है।

इस नये और गौरवपूर्ण रास्ते पर आगे बढने मे मैं आपकी सफलता चाहता हू।

एक संयुक्त, स्वतंत्र, जनवादी और शान्तिप्रेमी जर्मनी ज़िन्दा रहे और फूले-फले!

१३ अक्तूबर, १९४९

जोसेफ़ स्तालिन

जर्मन जनवादी जनतंत्र की स्थापना का ऐतिहासिक महत्व

★

"न्यू टाइम्स" (अंक ४३) का सम्पादकीय

सोवियत सरकारके प्रमुख जोसेफ़ स्तालिन ने जर्मन जनवादी जनतंत्र के प्रेसीडेन्ट विलियन पीक और प्रधानमंत्री ऑटो ग्रोटेवौल के नाम जो बधाईका संदेश भेजा उसकी प्रतिक्रिया सारे संसार में हुई है। कॉमरेड स्तालिन ने शान्तिप्रेमी जर्मन जनता की जनतंत्र की स्थापना को **योरप के इतिहास मे एक मोड़** बताया है।

दूसरा महायुद्ध खतम होनेके बाद जर्मनी के भविष्य, जर्मन राज्य के स्वरूप और योरप में उसकी भूमिका.के सवाल का विशेष महत्व हो गया। अगर सुदृढ़ शान्ति की गांरटी करनी थी तो यह जरुरी था कि जर्मनी हमलावरों का अड्डा और ससार के लिये निरंतर खतरा न रहे बल्कि उसे शान्तिपूर्ण जनवादी राज्य में बदल दिया जाय जैसा कि पोट्सडम के फैसलों में सोचा गया था।

जर्मन जनवादी जनतंत्र की घोषणा ने दिखा दिया है कि जर्मनी का जनवादी पक्ष शक्तिशाली हो गया है और जर्मन जनता ने शान्ति और जनवाद के रास्ते पर आगे बढ़ने के लिये कमर कस ली है। उसने यह भी दिखा दिया है कि जर्मनी के लड़ाईके बाद के विकास को प्रतिक्रिया और फौजीवादके पुराने ढर्रे पर चलाने की साम्राज्यवादियों की कोशिशें धूल में मिल गयी हैं।

इस, अक्तूबर १९४९ के महीनेमें पूर्वी जर्मनीमें जो ऐतिहासिक घटनाएँ हुई हैं, उनके महत्वको कॉमरेड स्तालिनके संदेशने अनोखी कुशलताके साथ सामने रख दिया है।

> "इस बारेमें कोई सन्देह नहीं हो सकता", संदेशमें कहा गया है, "कि शान्तिपूर्ण सोवियत संघकी मौजूदगीके साथ-साथ शान्ति प्रेमी और जनवादी जर्मनीकी मौजूदगी योरपमें नये युद्धोंकी संभावनाको एक किनारे कर देती है, योरपमें खून खराबीको खतम कर देती है और विश्व साम्राज्यवादियों द्वारा योरपीय देशोंका गुलाम बनाया जाना असंभव बना देती है।"

दो महायुद्धोंकी खूनी घटनाओंमें जर्मन साम्राज्यवादियोंकी जो घातक भूमिका रही है, उसे सभी जानते हैं। योरप के बीच ऐसे जनवादी जर्मन राज्य का अवतरण जो अपने तमाम पड़ोसियों के साथ शान्ति और भाईचारे के साथ रहने को तैयार है, योरप में परिस्थिति को बदल देता है। जर्मन जनवादी प्रजातंत्र के निर्माण से नये युद्ध की आग भड़कानेवालों की योजनाएँ एक बहुत खास क्षेत्र में उल्टी पड़ गयी हैं।

यह बात अत्यंत ही तर्कपूर्ण है कि सोवियत कब्जे का क्षेत्र नये जनवादी जर्मनी का पालना बना है। जिन चार ताकतों ने पोट्सडम समझौते पर दस्तखत किये

थे उनमें से सिर्फ़ सोवियत संघ ही ऐसा अकेला था जिसने कब्ज़ा करने वाली ताक़त के रूपमें अपनी सत्ताका इस्तेमाल जर्मनी के जनतंत्रीकरण और उसके फ़ौजी स्वरूप को खतम करनेके सिद्धान्त को अमल में लाने के लिये और एक संयुक्त, शान्तिपूर्ण राज्य के रूप मे उसके पुनर्स्थापन के लिये बराबर किया। सोवियत संघने अन्तरराष्ट्रीय गोलमेज़ कान्फ्रेंसों के सिद्धान्तों का समर्थन किया और सोवियत फ़ौजी शासन की तमाम कार्रवाइयों में उन्हे बराबर लागू किया।

यह बात जानी जा चुकी है कि जिन पश्चिमी ताक़तों ने बौन का कठपुतली, तथाकथित राज्य कायम करके जर्मनीके विभाजन की अपनी नीतिको पूरा किया है, उन्होंने लड़ाईके दौरान में ही जर्मन राज्य को छिन्न-भिन्न करने की और जर्मन जनताके राष्ट्रीय उत्पीड़नकी योजनाएँ पकायी थी। १९४३ में तेहरान कान्फ्रेंस में अमरीका ने प्रस्ताव रखा था कि जर्मनीको पाँच हिस्सों में बाँट दिया जाय। अक्तूबर १९४४ में चर्चिल और इडेनने अपनी एक योजना पेश की थी जिसमे जर्मनी के तीन टुकड़े करने की बात थी। ये साम्राज्यवादी योजनाएँ असफल हुईं तो सिर्फ इसी वजह से कि जर्मन राज्य को छिन्न-भिन्न करने और जर्मन जनता को उसकी स्वाधीनता से वंचित करने में कोई भी भाग लेनेसे सोवियत सरकार ने दृढ़ता के साथ इन्कार किया।

जर्मनी के टुकड़े करने और उसके अलग-अलग टुकड़ोंको गुलाम बनाने की ब्रिटेन और अमरीकाकी पगली योजनाओं के ठीक विपरीत सोवियत संघ हमेशा इस नीति पर चला कि जर्मनीको संयुक्त रहना चाहिये और उसे एक जनवादी शान्तिप्रेमी राज्यमें बदल देना चाहिये। १९४२ में ही, जब लड़ाई अपने शिखर पर थी, सोवियत जनता के नेता जोसेफ स्तालिन ने ऐलान किया था :

> "...हिटलर के गुट को जर्मन जनता के साथ, जर्मन राज्य के साथ एक-रूप करना बेवकूफी की बात होगी। इतिहास का अनुभव बताता है कि हिटलर आते और चले जाते है मगर जर्मन जनता और जर्मन राज्य की जिन्दगी जारी रहती है।"

९ मई १९४५ को, जर्मनी के आत्मसमर्पण के बाद कॉमरेड स्तालिन ने फिर ऐलान किया था:

> "सोवियत संघ विजयी हुआ है, मगर उसका ऐसा कोई इरादा नहीं है कि जर्मनी को छिन्न-भिन्न करे या खतम करे।"

कॉमरेड स्तालिनके अभी के सन्देश का जर्मन जनताके विशाल अंगों में अत्यंत उत्साहपूर्ण स्वागत हुआ है। अनेकानेक मीटिंगों में, और जनवादी संगठनों के बयानों में और अखबारों में यह बताया गया है कि कॉमरेड स्तालिन का संदेश जर्मनी की जनवादी शक्तियों को उत्साह प्रदान करता है कि वे शान्तिके लिये और संयुक्त, शान्तिप्रेमी राज्य के निर्माण के लिये लड़ें।

> "पिछले युद्ध के अनुभव ने बता दिया है", कॉ. स्तालिन कहते हैं "कि लड़ाईमें सबसे अधिक बलिदान जर्मन और सोवियत जनताको देने पड़े, कि

विश्व महत्व के महान काम पूरे करनेके लिये इन दो देशोंकी जनता के पास सबसे ज़्यादा शक्ति है। अगर इन दो देशों की जनता शान्ति के वास्ते काम करने के लिये उसी तरह जुटकर कोशिश करने की लगन दिखाये जिस तरह उन्होंने लड़ाई लडी तो यह माना जा सकता है कि योरप में शान्ति की गारंटी हो गयी है।"

कॉमरेड जोसेफ़ स्तालिनको अपने जवाबमें जर्मन जनवादी जनतंत्रके प्रेसीडेन्ट विलियम पीक और प्रधान मंत्री ऑटो ग्रौटेवौलने जर्मन जनताकी ओरसे गंभीर वादा किया है कि वे

"जर्मन जनवादी जनतंत्रमें संगठित-बहुत सी शक्तियोंको और भी ज़्यादा पक्के इरादेके साथ मैदानमें उतारनेके लिये सब कुछ करेंगे ताकि शान्ति कायम रहे और सुदृढ़ हो।"

जर्मन जनवादी जनतंत्र कायम होनेके सिलसिलेमें अंग्रेज-अमरीकी प्रचारकी प्रतिक्रिया गुस्सेसे भरी बड़बड़ और बदनामी तथा आरोपोंके तूमारके रूपमें सामने आयी। मगर जिस तरह अमरीकी योजनाओं पर पड़ा प्रहार साफ़ है उसी तरह शान्ति और जनवादके दुश्मनों के कैम्प में गमी भी साफ और समझ मे आनेवाली बात है। उनके (अमरीकियोंके) बौन (राज्यके) कठपुतलोंके पैरोंके नीचे से जमीन निश्चय रूपसे खिसक रही है। वे जर्मनोंको खोखली डींगों और बदले के ख़तरनाक और पगले विचारके अलावा और कुछ नहीं दे सकते।

जर्मन राज्यके राजनीतिक और आर्थिक विकास के लिये ग्रौटेवौल सरकारने एक ठोस कार्यक्रम रखा है। सोवियत सरकारने १० अक्तूबर को ही ऐलान कर दिया था कि जो शासन सम्बंधी काम अभी तक फौजी सोवियत शासन करता था वे अब जर्मन आरज़ी सरकार को सौंप दिये जायेंगे; और अब उसने फ़ैसला किया है कि जर्मन जनवादी जनतंत्र से राजनीतिक दूतों की अदला-बदली करे।

तमाम जनवादी और साम्राज्य-विरोधी पक्ष जर्मन जनवादी जनतंत्र की स्थापना का जर्मन जनताकी जनवादी शक्तियोंकी ऐतिहासिक विजयके रूप में स्वागत करता है।

रूमानिया का अखबार **रोमानिया लिबेरिया** लिखता है कि ऐसा जर्मन राज पहली बार खड़ा हो रहा है जिसे योरप की दूसरी जनता बिना शक-शुबहा के देखती है। पोल अख़बार **त्रिबुना लुदु** लिखता है कि जर्मन जनवादी जनतंत्र निश्चय रूपसे शान्ति पक्ष की कतारों मे खड़ा हो रहा है जिनका नेता सोवियत संघ है—वह जो आगे-आगे है और जिसके साथ-साथ जनता के जनतंत्र आगे बढ़ रहे हैं।

जर्मन जनवादी जनतंत्र की स्थापना योरप में और सारी दुनियामें शान्ति के मोर्चे को मज़बूत बनाती है। और तमाम जर्मन जनता को एक करने के अपने संघर्षमें उसके साथ उत्साहवर्द्धक सहायता है स्तालिन के शब्दों की:

"एक संयुक्त स्वतंत्र जनवादी और शान्तिप्रेमी जर्मनी जिन्दा रहे और फूले फले!"

विश्व शान्ति का रक्षक और पहरुआ ★ सोवियत रूस

एन. तिखोनोव के भाषण का अंश

आज जब कि शान्ति की लड़ाईमे दुनियाके तमाम लोग एक होना चाहते हैं, आपसमें वे नजदीकी और अटूट सहयोग कायम करना चाहते हैं तो सोवियत के हम लोग दुनियाके इन करोडों मेहनत करने वाले शान्तिप्रिय स्त्री-पुरुषोंकी फ़ौज की अगली पाँतमे मार्च करते हैं।...

सोवियतके हम लोगोंको इस बातका अभिमान है कि हमारा महान सोशलिस्ट देश हमेशा अन्तरराष्ट्रीय सुरक्षा का एक जबरदस्त सहारा और शान्ति का पहरेदार रहा है और आज भी है। तमाम दुनिया की जनता जानती है कि दूसरे महायुद्ध में केवल उनका वर्तमान ही नहीं, बल्कि उनका सम्पूर्ण भविष्य भी दाँव पर लगा हुआ था। वह जानती है कि विनाश और गन्दी गुलामी से उसे सोवियत जनता की अपार वीरता ने ही बचाया है।...

आज एक नाम है जो दुनिया के तमाम हिस्सो में, तमाम देशों में, सब जगह, एक समान स्नेह की अत्यंत गहरी भावना से लिया जाता है। दुनिया की तमाम भाषाओं में एक समान वह जनता के बीच सच्ची मैत्री, अटल शान्ति और अन्तरराष्ट्रीय सुरक्षा के सन्देश वाहक का काम करता है, इन चीजोंके लिए जनता का जोरदार आह्वान करता है। वह नाम सबको मालूम है। वह नाम है हमारे महान शिक्षक और नेताका, हमारे परमप्रिय पिता और मित्रका, हमारे अपने **स्तालिन** का।

जीवन की वास्तविकताएँ हमारी तरफ हैं, दुनिया की जनता के दुश्मन पिशाचों के वे खिलाफ हैं। सत्य हमारे साथ है और जो लोग जनता को धोखा देते हैं, उसके साथ गद्दारी करते हैं, उनके वह खिलाफ है। इतिहास का चक्र हमारे पक्षमें चल रहा है, कब्रमे पैर लटकाए हुए पूँजीवादके वह खिलाफ चल रहा है उसे वह उसकी कब्रके गढ़ेमें ढकेल रहा है। भविष्य हमारा है।

लेकिन इस बातको हमे एक क्षण के लिए भी नहीं भूलना चाहिये कि दुनिया के जंगखोरोंके खिलाफ़ जनताका प्रतिरोध जितना ही मजबूत होता है, उनकी जनता-विरोधी शैतानी साजिशे भी उतनी ही अधिक बढ जाती हैं। अपनी साजिशों को आगे बढ़ाने के लिए वे उतने ही ज़्यादा जोरसे कोशिश करने लगते हैं।...

वाल स्ट्रीट के (यानी अमरीकाके-अनु.) इजारेदार, जिन्होंने दूसरे महायुद्धमें बेतहाशा नफ़ा कमाया था, सोचते हैं कि एटम बम की घुड़कियोंसे और डालरों की गड्डियॉं दिखाकर वे तमाम दुनियाको अपना गुलाम बना सकते हैं। निहायत बेशर्मी से अमरीका के ये वर्तमान मालिक आज डरवाने-धमकाने और मार-काटके सत्यानाशी मार्ग पर उतर आये हैं...

उत्तरी-एटलाण्टिक पैक्ट इसी पालिसी का हथियार है, ऐसी पालिसी का जो दुनियामें युद्धकी आग लगा देगी। यह पैक्ट दुनिया पर प्रभुत्व क़ायम करने की उनकी लड़ाई में अंग्रेज-अमरीकी गुटका हथियार है।

लोगों की ऑंखों में धूल झोंकने के लिए और स्वतंत्र रूपसे सोचने-समझने की उनकी शक्ति को हर लेनेके लिए अमरीकी साम्राज्यवाद ने सिनेमा, थियेटर, प्रेस, रेडियो, पुस्तक-प्रकाशन आदि पर अपना लौह कण्ट्रोल लगा रखा है और जनता को गुमराह करने के लिए गन्दे से गन्दे साधनों का इस्तेमाल कर रहा है।...

इस तरह के शोरोगुल और हिस्टीरिया को फैला कर अमरीकी प्रोपेगैण्डा जनता को पथभ्रष्ट करने की कोशिश कर रहा है, उसके दिमाग़ को बेकार बनाने की और उसे डरवाने-धमकाने की कोशिश कर रहा है ताकि उसका आत्म-विश्वास मिट जाय, चीज़ोंको खुद देखने और समझने-परखने की उसकी शक्तिका अन्त हो जाये और सब तरहसे हार कर वह सोचने लगे कि अब असली बमबारी और असली गोलीबारके अलावा और कोई रास्ता नहीं है, अब यही आवश्यक है। अमरीकी प्रोपेगैण्डा जनता की इच्छा-शक्ति को नष्ट करना चाहता है।

* * *

लेकिन दुनियामे सोवियत यूनियन भी है, जो कि जनता के प्रजातंत्रो के साथ मिलकर अन्तरराष्ट्रीय जगतमें स्थायी शान्ति और सुरक्षा क़ायम करनेके लिये तमाम देशोंकी जनताके संघर्ष की अगुआई कर रहा है।

हम जानते हैं कि शान्ति के उद्देश्यकी रक्षा की जा सकती है, शान्ति को बचाया जा सकता है क्योंकि हमारी प्रिय मातृभूमि की शक्ति और क्षमतासे दुनिया के कोने-कोने तक के लोग भलीभाति परिचित हैं। वे भलीभाति जानते हैं कि सोवियत यूनियन शान्ति का वफ़ादार पहरेदार है, वह दुनिया की जनता की आज़ादी का सच्चा मित्र और रक्षक है।

हमारे देशमें महान् अक्तूबर सोशलिस्ट क्रान्ति की विजय के दूसरे ही दिन शान्ति की डिक्री की घोषणा कर दी गयी थी। और उस दिन से आज तक, लगातार और हमेशा, सोवियतो का यह देश, जतियोंके बीच मैत्री और सहयोगका झण्डा ऊँचा किये हुए, अडिग और अविचल गति से शान्ति की नीति पर बढ़ता रहा है।

हमारा देश अनेकों दुश्मनों को अनेकों कटु से कटु संघर्षो में पछाड़ कर विजयी बना है। उसने आज़ादी चाहनेवाली जनता के उस सबसे भयानक शत्रुको,

मनुष्यसे नफरत करनेवाले फाशिज्म को भी,—जो कि उसके वर्तमान वारिसों की तरह ही तमाम दुनिया पर कब्जा करने के हौसले रखता था, परास्त किया है।

अगर सोवियत यूनियन न होता तो फासिज्म के चंगुल मे फसे देशोंकी जनता का क्या होता, इसकी कल्पना करना भी कठिन है। लेकिन हमारा वीरोंका देश विजयी हुआ।

दुनियाकी जनता सोवियत यूनियनसे प्रेम करती है क्योकि वह जानती है कि मनुष्यकी भलाई का, उसकी मेहनतका, उसके विकास और उसकी आत्मिक उन्नतिका उसे कितना खयाल रहता है। वह जानती है कि हमारे देशमे बचपनसे लेकर बुढापे तक मनुष्यकी कितनी देखभाल की जाती है।

हमारा स्तालिनी विधान जीवनकी सुनहली पुस्तक है। सोवियत यूनियनमे मनुष्य के व्यक्तित्व के चतुर्मुखी विकास के मार्ग में कोई बाधाएँ नही हैं, किसी प्रकार का नस्ली भेदभाव नहीं है, धार्मिक जुल्म या दमन नहीं है, बेकारी का भय नहीं है; यहाँ पर जातियो में किसी प्रकार का वैर-भाव नही उभाड़ा जाता।

सोवियत यूनियन नये, सोशलिस्ट समाज की—ऐसे समाज की जिसकी इतिहासमें दूसरी कोई मिसाल नही हैं—ऊँची संस्कृति का अलमबरदार है। ज्ञानको, कलाओं और साहित्यके मनुष्य के प्रयत्नके उस प्रत्येक पहलूको, जिससे हमें इस पृथ्वी परसे दरिद्रता, अन्याय, टुच्ची खुदगर्जीसे भरी हुई 'इच्छा आकाक्षाओं', काहिली, आत्मिक खोखलेपन, शोषण की प्रवृत्ति और बर्बरताको मिटाने में मदद मिलती है, सोवियत यूनियन मे अत्यधिक आदर और श्रद्धा की दृष्टिसे देखा जाता है।

भविष्य के कंधोंपर सवार सोवियतों के देशके स्त्री पुरुष, लेनिन और स्तालिन की महान पार्टी के नेतृत्वमे निरन्तर और जबरदस्त उत्साहके साथ अपने देश की प्रकृति को बदलने क काममे जुटे हुए हैं, वे मनुष्यों के दिलों और आत्माओं को एक नये इन्सानी साँचे में ढाल रहे हैं, वे सोवियत संघकी छोटी-बडी तमाम जातियों का नेतृत्व करके उन्हे श्रम की ऊंची से ऊंची विजयी मंजिलों पर ले जा रहे हैं।

हमारे उद्योगोके और गुणी लोगोंके कामने चीजोंका रूप ही बदल दिया है। सोवियत नागरिक एक महान मजदूर है, वह पहाडोंको हिला देता है, वह नये कम्युनिस्ट समाज का शानदार मेमार है। और लड़ाईके दिनोंमें वह एक महान योद्धा है, और उसपर हमला करके उसके शान्तिपूर्ण काममें जो दखल देने की कोशिश करे उसका फिर खुदा ही मालिक है।

सोवियत देशने उसे स्वाभिमानी, मजबूत और आजाद बना दिया है जैसा कि मनुष्य आज तक कभी नहीं था। सोवियत नागरिक को कलका भय नहीं है। हमारे देशने जिन स्वस्थ लोगों को पैदा किया है, जीवन की तरफ़ उनका दृष्टिकोण आशापूर्ण है।

सोवियत नागरिक एक ऐसे महान और शान्तिप्रिय देश में रहता है जिसमें युद्ध के पैरोकारों के लिए कोई जगह नहीं है, क्योंकि उसके अन्दर युद्ध की आग भडकाने

वाले कोई शोषक वर्ग नहीं रह गये, क्योंकि उसके अन्दर छोटी-छोटी जातियों का औपनिवेशिक शोषण नहीं होता, और क्योंकि सोवियत यूनियन शान्ति की नीति पर चलता है, और किसीपर आक्रमण करना उसके राज्य की प्रकृति के ही खिलाफ है। सोवियत राज्य की सारी कोशिश यही होती है कि शान्तिपूर्ण काम आगे बढ सके, लोगों का जीवन सुखी और शान्तिमय हो सके।

लेनिनने अपनी दूर तक देख सकने वाली दृष्टि की मददसे ३१ वर्ष पहले ही लिखा था :

"प्राकृतिक धन के रूपमे, मानवी शक्ति के भण्डारों के रूप में और महान् क्रान्ति ने जनता की सृजनात्मक शक्तियों मे जो शानदार प्रेरणा भर दी है उसके रूप में हमारे पास वास्तव में एक शक्तिशाली और सम्पन्न रूसका निर्माण करनेके लिये सब साधन मौजूद हैं।"

सोशलिस्ट निर्माण के काममें लगे हुए, जीवन के नये मूल्यों की रचना के काम में व्यस्त सोवियत के लोग बराबर आगे बढ़ रहे हैं। जो मार्ग वे तय कर आये हैं उसे वे कभी नहीं भूलते। आगे उन्हें किधर जाना है इससे भी वे भली-भांति परिचित हैं।

निर्माण के काम में उनकी पहली सफलताएँ बहुत महँगी थीं। उस समय उन्हें उस सबको फिरसे बनाना पड़ा था जिसे पहले साम्राज्यवादी युद्धने और चर्चिल और उसके साथियों द्वारा संगठित किये गये १४ देशों के हस्तक्षेपके युद्धने बर्बाद कर दिया था।

१९२० में अक्तूबर क्रान्ति की वर्षगाँठ के अवसर पर बाकू सोवियत की मीटिंग के सामने भाषण देते हुए कामरेड स्तालिन के कहा था :

"निर्माण का काम हमें गोलियों की बौछारके बीच करना पड़ा था। ऐसे राज (कारीगर) की कल्पना कीजिए जो एक हाथ से तो ईंटें जमा रहा हो और दूसरे हाथ से उसी मकान की जिसे वह बना रहा है, रक्षा कर रहा हो।"

दूसरे महायुद्ध में हमें बहुत ही ज्यादा नुकसान उठाना पड़ा। हिटलर के जनरल स्टुल्पनेगेलके अपने फ्यूरर को घमण्ड-पूर्वक लिखा था "हमने जितनी बर्बादी की हैं उसे फिरसे बनानेके लिए रूसको २५ वर्षोंकी जरूरत होगी।"

उसका हिसाब गलत था। वे लोग भी जो उन दिनों हमें अपना दोस्त कहते थे लेकिन आज सोवियत जनताकी विजयों को देखकर जलते हैं, गलत थे। सोवियत यूनियनने अपने स्वतंत्र देशको फिरसे आबाद करनेके लिए करोड़ों-अरबों रूबल लगा दिये हैं और देशकी आर्थिक व्यवस्था और संस्कृतिको नवजीवन दे दिया है।

हमारे दुश्मन और विरोधी आशा करते थे कि थककर और कमजोर होकर हम उनकी मदद और दानकी भिक्षा माँगगे। लेकिन जब उन्होंने देखा कि हमारे महान देशवासियों ने पाँच वर्षीय स्तालिन योजना (प्लान) को चार ही वर्षों मे सफलतापूर्वक पूरा कर लिया है तो उनके क्रोध का कोई ठिकाना न रहा।

इन लोगों को चाहिए कि अमरीका की तरफ़ एक नज़र डालें, देखें कहाँ पर क्या हो रहा है, साधारण आदमी की वहाँ आज क्या हालत है और भविष्य में उसे किस चीज़ की आशा है।

अमरीका का मोनोपली (एकाधिकारी) पूंजीवाद लड़ाईके पहले के दिनोंसे भी ज़्यादा हिंसा से मेहनतकश जनता का दमन कर रहा है। आजके अमरीका में साधारण आदमी के जीवनकी परिस्थितियाँ असह्य हो गयी हैं, प्रतिक्रिया की कतों का, और तरह-तरह के फ़ासिस्टी संगठनोंका ज़ोर वहाँ पर दिनोंदिन बढ़ रहा है। अमरीका की आर्थिक स्थिति तेज़ी से गिर रही है, उसे कोई संभाल नहीं सकता, और साधारण अमरीकी को आगे अब संकट और बढ़ती हुई बेकारी ही दिखती है। करोड़ों लोग इन चीज़ों के शिकार अभी ही हो चुके हैं।...

दुनिया पर कब्ज़ा करने के ख़्वाहिशमन्द मुट्ठी भर लोग जिन पर हिटलरियत का भूत सवार है, हिटलर की करतूतों को फिर से दोहराना चाहते हैं। जिस तरह नाज़ियोंने अपने सिपाहियों को रोबटों में—मशीनके पुतलों में—बदल दिया था जो फ़्यूरर का हुक्म पाते ही जर्मनी के लिए दुनिया को जीतने निकल पड़े थे, उसी तरह ये लोग भी अमरीका के साधारण लोगों को आत्मा-रहित रोबट बना देना चाहते हैं। सबको याद है कि इस तरह की कोशिशों का क्या हश्र हुआ था।

अमरीका के मेहनतकश के भाग्यकी सोवियत नागरिक की किस्मत के साथ भला क्या तुलना हो सकती है? अमरीकी मेहनतकश पूँजीवाद के नीचे रौंदा जा रहा है और सोवियत नागरिक एक स्वतंत्र मेमार है जो एक नयी दुनिया रच रहा है, वह समाज का एक जीवित और कार्यशील सदस्य है, उसके सामने जीवन का हर मार्ग खुला हुआ है।

जर्मन फ़ासिस्ट हमलावरों ने सोवियत की जनता और सोवियत व्यवस्था को बदनाम करने की कोशिश की थी। आज उनके अमरीकी नक़्क़ाल उसी रास्ते पर चलने की कोशिश कर रहे हैं। वे झूठ बोलते हैं और असलियत को बिगाड़ कर दिखलाते हैं। वे मार्क्सवाद-लेनिनवाद की पुस्तकों में से इधर-उधर के कुछ टुकड़े निकाल कर अर्थका कु-अर्थ करते हैं और उल्टे-सीधे रूपमें पेश करते हैं।

अपनी जंगख़ोर पालिसी के समर्थन में एक मुख्य "तर्क" वे यह देते हैं कि उनके कथनानुसार मार्क्सवाद-लेनिनवाद की थ्योरी इस बातसे इनकार करती है कि दो विरोधी व्यवस्थाएँ शान्तिपूर्वक एक साथ रह सकती हैं; मार्क्सवाद-लेनिनवाद के अनुसार, वे कहते हैं, इन दो व्यवस्थाओं के बीच युद्ध होना अनिवार्य है। इस बातका प्रोपेगैण्डा अमरीकी पूंजीवादी चारों तरफ़ कर रहे है। चिंघाडते हुए वे कहते हैं कि यू. एस. एस. आर. (सोवियत सोशलिस्ट प्रजातंत्रों के संघ) और पूंजीवादी मुल्कोंके बीच सहयोग असंभव है।

इस बिल्कुल झूठी बातको ही अमरीका की युद्धखोर नीतिका मुख्य आधार बनाया जाता है और वहाँ के जंगखोर अपनी स्पीचों में बराबर उसीका हवाला देते हैं। कहने की जरूरत नहीं कि यह गढी बात जानबूझ कर गढ़ी गयी है।

'९ अप्रैल १९४७ को हेरल्ड स्टैसेन से एक इन्टरव्यू में हमारे महान नेता, स्तालिन ने कहा था :

"दो व्यवस्थाओं के बीच सहयोग की धारणा की व्याख्या सबसे पहले लेनिनने की थी। लेनिन हमारे शिक्षक हैं; और हम, सोवियत के सब लोग, लेनिनके शिष्य हैं। हम लोगों ने लेनिन की शिक्षाओं को कभी नहीं छोड़ा और न आगे कभी छोड़ेंगे।"

कामरेड स्तालिनने कहा कि,

"अगर ये दोनों व्यवस्थाएँ लड़ाई के दिनोंमें सहयोग कर सकीं तो शान्ति के दिनों में क्यों नहीं सहयोग कर सकती ? अगर सहयोग करने की इच्छा हो तो निस्सन्देह दो विभिन्न आर्थिक सिस्टमो (व्यवस्थाओं) के होते हुए भी सहयोग संभव है। लेकिन अगर सहयोग करने की इच्छा न हो तो एक ही व्यवस्था के होते हुए भी राज्य और व्यक्ति एक दूसरेसे लड सकते हैं।"

यह तो सच है कि हमारे साथ कम्पटीशन (होड) करनेमें साम्राज्यवादियोंको कोई फायदा नहीं है, क्योंकि वे हमसे जीत सकें इसकी जरा भी संभावना नहीं है। सोशलिज़्म जीवनके पूरे उठान के साथ आगे बढ़ता जा रहा है, जब कि पूंजीवाद अन्दर ही अन्दर खोखला हो चुका है और अपनी मौतकी घडी को अब खतरनाक और जुआचोर चालो के जरिए टालना चाहता है। वह लोगों को युद्धका भय दिखाकर, विनाशकी विभीषिकाओं का चित्र खींचकर और एटम-बम और बीमारीके कीड़ों (कीटाणुओं) के बमों आदि की धमकियाँ देकर डरवाना चाहता है।

सोवियत के लोग, उनके ऊपर आज जो खास जिम्मेदारी हैं, उसे समझते हैं। इसे भी वे उसी तरह समझते हैं जिस तरह वे उस समयकी जिम्मेदारीको उस वक्त समझते थे जिस वक्त वे जातियोंकी आजादी के लिए लड रहे थे। उस समय न वे अपना खून बहाने में सकुचाये थे न अपने जीवन तक की बलि चढ़ा देनेमें पीछे हटे थे। वे जानते हैं कि बहादुरी के माने क्या होते हैं, जीवनकी सबसे बड़ी कुर्बानीके माने क्या होते हैं।

सोवियत सरकारने हमारी इच्छा प्रकट करते हुए, सोवियत की तमाम जनताकी इच्छा प्रकट करते हुए, आजसे पूरे ढाई वर्ष पहले शान्तिके नाम पर यह प्रस्ताव किया था कि लड़ाई के अस्त्रके रूपमें एटम बम के इस्तेमाल को बन्द कर दिया जाए।

लेकिन अमरीका और इंगलैण्ड के शासक वर्गों ने युद्ध के नामपर इस प्रस्ताव को आज तक पास नहीं होने दिया।

सोवियत सरकार ने शान्तिके नाम पर बराबर इस बात की माँग की है कि बड़ी ताक़तें अस्त्रो-शस्त्रों की अपनी शक्ति को बुनियादी तौरसे कम कर दें।

लेकिन वालस्ट्रीट (अमरीका) और लन्दन सिटी के साम्राज्यवादियों के गुट ने युद्ध के नाम पर, न सिर्फ़ इस माँग को नामंजूर कर दिया है बल्कि, और ऊपरसे अस्त्रो-शस्त्रोंकी एक मतवाली दौड़ शुरू कर दी है।

शान्ति चाहनेवाली सोवियत सरकार, बड़ी ताक़तों द्वारा पोट्सडम मे लिये गये फ़ैसलों के प्रति, उनके शब्दो और उनकी भावना के प्रति पूर्ण रूपसे वफ़ादार है; वह अन्तरराष्ट्रीय सहयोग के लक्ष्य के प्रति पूर्ण रूपसे वफ़ादार है।

लेकिन युद्ध चाहनेवाले वाशिंगटन और लन्दन के शासकोंने पोट्सडम में जो ज़िम्मेदारियाँ ली थीं, उनको पैरोंतले रौंद डाला है, शान्तिपूर्ण अन्तरराष्ट्रीय सहयोग के तमाम प्रयत्नों के रास्ते में उन्होने बाधाएँ खडी की हैं और आज भी कर रहे हैं। सहयोग के स्थान में उन्होंने मार्शल प्लान और उत्तरी एटलाण्टिक पैक्ट के ज़रिए दूसरों को गुलाम बनाने की नीति अपनायी है।

अन्तरराष्ट्रीय जगत मे आज यही दो नीतियाँ हैं।

शक्तिशाली सोवियत राज हमेशा शान्ति और अन्तरराष्ट्रीय सुरक्षाका गढ़ रहा है और आगे भी ऐसा ही रहेगा।

* * *

साम्राज्यवादी जिस युद्ध की आग लगाने पर उतारू हैं उससे सभी देशों को एकसा खतरा है। यही कारण है कि आज तमाम देशों की जनता जंगखोरों के खिलाफ एक होकर शान्ति और अन्तरराष्ट्रीय सहयोग की आवाज़ उठा रही है।

पैरिस की विश्व शान्ति कांग्रेसने—जिसमें ७२ देशो की ६० करोड़ जनता के प्रतिनिधियों ने भाग लिया था—दुनिया के तमाम लोगो को शान्ति की रक्षा के लिए संगठित होने का सन्देश दिया था। शान्ति की ताकतों को बटोरने और एक करने के लिए कांग्रेसने एक स्थायी कमिटी बनायी थी। इस कमिटी की ज़िम्मेदारी है कि उस कामको, जिसे पैरिस और प्राग मे शुरू किया गया था, जारी रखे।

हम सोवियत के लोग विश्व कांग्रेसके काम का और छोटे-बड़े तमाम देशों के प्रतिनिधियो की स्थायी कमिटी की स्थापना का स्वागत करते हैं। इस कमिटी का काम हैं कि सब लोगोंके सहयोग से प्रतिक्रियावादियो और साम्राज्यवादियो की हर युद्धखोर चाल पर तेज नज़र रखे और इन चालों को नाकाम करनेके लिये हर तरह की कोशिश करे।

शान्तिकी रक्षाके वर्तमान संघर्षमें शान्ति के पहरूओं के—शान्तिके तरफ़दारोंके आन्दोलनको हम बहुत ही उपयोगी चीज़ समझते हैं। इस आन्दोलनमें लाखो-करोड़ो मेहनतकश लोगों को साथ लिया जा सकता है।......

शान्तिके समर्थकों को एक करनेके लिए हमें तमाम देशोंमें एक व्यापक आन्दोलन छेड़ देना चाहिए ताकि जंग खोरोंकी " साजिशोंका उसके हर कदम पर " हम जोरों से मुकाबला कर सकें।

हमारे उद्देश्य हर साधारण स्त्री और पुरुष को प्रिय है, वह चाहे किसी भी नस्ल, जाति या धर्म का हो।

लेकिन हमें एक लम्बे और कठिन संघर्ष के लिये तैयार रहना चाहिए, हमें शान्तिके समर्थकों की तमाम ताकतों को बटोरना चाहिये। युद्धके खिलाफ केवल " नहीं " कह देना काफी नहीं है। हमारे " नहीं " को वास्तविक जीवन दिया जाना चाहिए, उसे अमली कामों के द्वारा जाहिर किया जाना चाए।

हमारा देश जो आज कम्युनिज़्म का निर्माण करने मे लगा हुआ है, एक शान्तिपूर्ण देश है। वह शान्तिके उद्योगों में व्यस्त है। वह आर्थिक विकास की विशाल योजनाओं को पूरा करने में जुटा है। वह जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रगतिकी नयी-नयी राहें खोल रहा है और जीवन को उच्चतर स्तर पर ले जा रहा है।

शान्तिपूर्ण और सृजनात्मक श्रम में लगे हुए सोवियत के लोग युद्ध नहीं चाहते, वे नहीं चाहते कि उनकी तमाम सफलताएँ फिर एक बार युद्ध के खतरे में पड़ जाएँ।

हमने, अपने जीवन और अपनी आजादी के द्वेषी दुश्मनों की बहुतसी कोशिशों को नाकाम किया है। हम युद्ध से डरते नहीं, हम धमकियों से भय नहीं खाते फिर वे धमकियाँ चाहे जहाँसे आती हों। हम शान्ति की भीख नहीं मॉगते, हम उसके लिये लड़ते हैं। हम शान्तिका समर्थन इसलिए नहीं करते कि हम आक्रमणकारियों के मुकाबले में अपने को कमजोर महसूस करते हैं। हम आज हमेशासे भी ज्यादा शक्तिशाली हैं। फिर भी हम शान्ति का समर्थन करते हैं क्योंकि हम चाहते हैं कि तमाम दुनिया की जनता शान्ति और स्वतंत्रता से रह सके। हम तमाम देशों की जनता की भलाई चाहते हैं; हम तमाम साधारण स्त्री-पुरुषों के हितों के, उन स्त्री-पुरुषों के हितों के जिनसे इतनी बड़ी-बड़ी और बेजोड़ कुर्बानियॉ करायी गयी हैं, समर्थक हैं।

हम लोग सिर्फ अपनी ही बात नहीं सोच रहे हैं। सोवियत के लोग सभ्यता की सफलताओं को जी-जानसे चाहते हैं। दुनियाकी सभ्यता की उन्होंने हिटलरी दरिन्दों से हिफाजत की थी। आगे के नये खतरों से उसकी हिफ़ाजत करने की भी उनमें पूरी ताब है।......

हमारा सोवियत संघ का शान्ति सम्मेलन दुनिया की जनता के बीचके आपसी सम्बंध और मैत्री की कड़ियों को मजबूत करता है........पैरिस और प्रागकी शान्ति कांग्रेसो के फैसलों का समर्थन करते हुए विश्व-शान्ति कांग्रेसकी स्थायी कमिटी के काममें हमें अपनी पूरी शक्तिसे हाथ बंटाना चाहिए, दुनिया

मरम शान्ति के पहरूओंको एक करनेके लिए उसके प्रोपेगेण्डा और संगठन के काम में पूरी मदद देनी चाहिए।

दूसरे देशोंके शान्तिके तमाम सच्चे लडाके हमारे सम्मेलन की तरफ़ देख रहे हैं। और आजके दिन—जब कि मनुष्यता, शान्ति, श्रम और स्वतंत्रता की रक्षा के लिए हम अपनी ताकतों को संगठित कर रहे हैं—विश्व शान्ति की हिफाजत के उच्च कार्य में संलग्न अपने तमाम मित्रों और साथी-लड़ाकुओं को हम अपने पूरे दिलसे सलाम करते हैं।

हम युद्धके खिलाफ़ हैं। हम कहीं भी युद्ध नहीं चाहते। लेकिन हम अपने दुश्मनोंसे जो कि शान्ति और मनुष्य जातिके भी दुश्मन हैं—डरते नहीं। हम ऐलान करते हैं कि हम बराबर हाशियार हैं, नीच और चालबाज युद्धखोरोंपर हम बराबर कड़ी नज़र रखते हैं।

शान्तिकी समर्थक और युद्धके खिलाफ़ ताकतें विराट और अकूत हैं। नये युद्धोंको उसकानेवालोंको जनताका समर्थन नहीं है, न कभी मिल सकता है। जैसा कि कॉमरेड स्तालिनने कहा है,

> "पिछले युद्धकी विभीषकाएँ अभी तक लोगोंके दिमाग़में बहुत ताजी है, और जनताकी शक्तियाँ जो शान्तिकी समर्थक हैं, अत्यधिक बलशाली हैं। ऐसी हालतमें चर्चिल और उसके आक्रमणकारी चाले-चेटियोंके लिए उन्हें हराकर लोगोंको एक नये युद्धकी तरफ़ मोड़ सकना नामुमकिन है।"

हम दुनिया भरके अपने मित्रोंसे, शान्तिके तमाम समर्थकोंसे कहते हैं :—

शान्ति और अन्तरराष्ट्रीय सुरक्षाके झण्डेको और भी ऊँचा करो। शान्तिके मानने वालोंको डरवाकर कमजोर करने, घबड़वाने और उनकी सफोंमें फूट पैदा करनेके लिये युद्धखोरोंने बार-बार कोशिशें की हैं, आज भी कर रहे हैं और आगे भविष्यमें भी करते रहेंगे। लेकिन युद्धकी इस बेतहाशा चिल्ल पुकार (हिस्टीरिया) और "बातोंकी लड़ाई" (कोल्डवार) के पीछे युद्धखोरोंकी कमजोरी छिपी हुई है।

हमेशा और हर जगह जंगखोरोंकी स्कीमोंका जवाब विश्व शान्ति कॉग्रेसके मेनीफेस्टो के शब्दोंमें यही होना चाहिये :

"शान्ति के संघर्ष में विश्वास रखो और हिम्मतसे काम लो।"

[यह अंश निकोलाई तिखोनोव की उस रिपोर्ट से लिया गया है जो उन्होंने सोवियत संघ के शान्ति सम्मेलन में पेश की थी]

भारत में भाषा की समस्या

★

लेखक
डॉ० रामविलास शर्मा

(गतांक से आगे)

सोवियत यूनियन के अन्दर रूसी ज़बान क्या आजकल राजभाषा है ?

नहीं, ऐसा नहीं है। सोवियत यूनियनमें राजभाषा नहीं है। मेरे एक सवाल के जवाब में सोविएत दूतावास के सेक्रेटरीने यही सूचना भेजी थी।

तब सुप्रीम सोवियत का काम किस तरह चलता है ? सुप्रीम सोवियत के अन्दर हर कोई अपनी ज़बान इस्तेमाल कर सकता है। और लोग ग़ैर रूसी जबानों के तर्जुमे की माग कर सकते हैं।

ग़ैर रूसी प्रजातंत्रों में क्या सैकण्डरी और मिडिल की पढ़ाई मे रूसी ज़बान लाज़िमी है ?

हॉ, रूसी ज़बान लाजिमी है। इसम कुछ वजा नहीं है। जातियों की सोवियत की मर्ज़ी के खिलाफ—जिसमें हर जातिके बराबर नुमाइन्दे हैं, उसे लाज़िमी नहीं करार दिया गया। अगर हिन्दुस्तान में हर जातिके बराबर नुमाइन्दे जो जनवादी तरीक़े से चुने गये हों किसी एक ज़बान को पढ़ाई की किन्हीं मंज़िलों में लाजिमी करना चाहें और किसी जाति के नुमाइन्दे उसका विरोध न करें तो उसे लाजिमी करना बेजा न होगा। मुख्य बात यह है कि किसी भी जाति पर उसकी मर्ज़ी के खिलाफ़ कोई ज़बान लादी नहीं जा सकती।

दिल्ली की विधान सभा में जातियों से जनवादी तरीके से चुने हुए बराबर संख्या मे सदस्य नहीं हैं। इसलिये उसको कोई हक नहीं कि वह तै करे कि कौन सी ज़बान पढ़ाई की किन मंज़िलों में लाज़िमी की जायेगी।

लेकिन पढ़ाईकी किन्हीं मंज़िलोंमें लाज़िमी की जानेवाली ज़बान राजभाषा नहीं बन जाती। प्रजातंत्रोंमें तमाम राजनीतिक और सांस्कृतिक काम शुरूसे आखिर तक उन्हीं की ज़बानों में होता है। इसी तरह सुप्रीम सोवियतकी तमाम कार्रवाई सोवियत यूनियनकी तमाम ज़बानोंमें छापी जाती है। पूँजीपतियों की नज़र में यह सब झमेला है। लेकिन यही एक रास्ता है और वह मार्क्सवादी रास्ता है जिससे कि जातियों की समानता अमल में लायी जा सकती है।

बहुजातीय पूँजीवादी राज्य में लाज़िमी राजभाषा—और राजभाषा जातीय उत्पीड़न की वजहसे ज़ोर-ज़बर्दस्ती से ही लादी जा सकती है—हमेशा हावी

होनेवाले पूँजीवादी गुटके वर्ग-हित साधती है। वह एक क़ौम के कामकाजी अवाम को दूसरी क़ौम के कामकाजी अवाम से नहीं मिलाता जिसका कि हावी होनेवाला पूँजीवादी गुट ग़लत दावा करता है। एकता के हित साधना दरकिनार, दरअसल उससे जनता में फूट पड़ती है और अलग-अलग कौमों के मज़दूरों के अन्दर वह द्वेषभाव पैदा करती है। इसलिये बहुजातीय पूँजीवादी राज्यमें राजभाषा की हिमायत करने का लाज़िमी नतीजा यह होता है कि हावी होनेवाली जाति के पूँजीपतियों के वर्ग हितों को सुविधाएँ दी जाये।

जब पूँजीपति यह सवाल करते हैं, अंग्रेज़ी जायेगी, कौनसी ज़बान राजभाषा हो? तब हम ऊपर से भोलेभाले दिखनेवाले सवाल के तरीक़े को चुपचाप न मान लेंगे। इसके बदले हम कहेंगे, हम जानते हैं कि तुम्हारा राज्य किसलिये है। हम नहीं चाहते कि कोई ज़बान अंग्रेज़ी की जगह राजभाषा हो। विदेशी साम्राज्यवादने अंग्रेज़ी को हमारे ऊपर राजभाषा बनाकर लादा था। हम नहीं चाहते कि देशी साम्राज्यवाद उसी राहपर चले और किसी भी तरह दूसरी जातियों का यह हक़ छीने कि वे अपनी ज़बानों का पूरा विकास करें। तुम उन जातियों के हकमें कतर-ब्योंत कर रहे हो जो आर्थिक रूपसे कमोवेश आगे बढ़ी हुई हैं। लेकिन जहाँ तक और ज़्यादा पिछड़ी हुई जातियोंका सवाल है, तुम उनके राजनीतिक और सांस्कृतिक विकासका गला घोंट रहे हो। तुम्हारा कहना है कि उन पर जो राजभाषा थोप रहे हो उसके अलावा उनकी अपनी कोई ज़बान नहीं। हम इस पालिसीका विरोध करेंगे।

सोवियत यूनियनमें जब बहुजातीय पूँजीवादी राज्यसत्ता ख़तम कर दी गयी तब सोवियत-विधानमें रूसी भाषाको राजभाषा नहीं स्वीकार किया गया। रूसी ज़बानको कोई विशेषाधिकार देना तो दूर जिससे कि किसी भी क़ौमी ज़बानके अपने इलाकेमें राजनीतिक और सांस्कृतिक मामलोंमें काममें आनेसे रुकावट पड़े, स्तालिन ने ख़ास तौरसे इस तरह की माँगोंको अंध-राष्ट्रवादका इज़हार कहा था।

उन्होंने कहा था :

"क्या यह बात साफ़ नहीं कि हमारे माननीय भटकैल झूठी अन्तर-राष्ट्रीयता के पीछे दौड़कर कात्स्कीवादी सामाजिक-अन्तरराष्ट्रवाद के शिकार बन गये हैं। क्या यह बात साफ़ नहीं है कि एक राज्य की सीमाओं के अन्दर, सोवियत यूनियन की सीमाओं के अन्दर एक आम ज़बान के लिये आन्दोलन करके वे दरअसल उस ज़बान के **विशेषाधिकारों** को फिर क़ायम करने की माँग कर रहे हैं जो पहले दूसरों पर हावी थी, यानी **रूसी ज़बान** के विशेषाधिकारों की माँग! यहाँ पर अन्तरदेशीयता किस बात में है।"

(मार्क्सवाद और जातियों और उपनिवेशों का सवाल, पृ. २५८)

इस तरह बहुजातीय देशमे समाजवादी राज्य क़ायम होने पर दबायी हुई जातियाँ नयी ज़िन्दगीमें सिर उठायेंगी। उनकी ज़बानें और संस्कृतियाँ नये सिरे से विकसित होंगी। ऐसा न होगा कि ज़बानें खतम हो जायें और उनकी जगह बड़ी जाति की ज़बान ले ले। इस तरह बहुजातीय सोशलिस्ट राज्य मे भी कोई लाज़िमी राज्यभाषा न होगी।

१० दिसम्बर १९४८ के साप्ताहिक **जनशक्ति** में राजभाषा के सवाल पर लिखते हुए मोहन मांझी ने दिखाया है कि किस तरह पूँजीपति दूसरी कौमों पर राष्ट्रभाषा लादकर अपनी ज़बान इस्तेमाल करने का हक उनसे छीनना चाहते हैं। वह भाषा के लादे जाने के खिलाफ हैं। लेकिन उन्हे विश्वास है कि हिन्दी भाषा ही स्वाभाविक ढंग की अखिल भारतीय भाषा बन जायेगी। **अखिल भारतीय भाषा,** ये शब्द अस्पष्ट हैं और अंधराष्ट्रवादी विचार धारा के प्रवेश की गुंजाइश छोड़ देते हैं। उन्होंने लिखा है :

"अंग्रेजी जबान के खिलाफ आन्दोलन आजादी के लिये आन्दोलन था; आजादी के लिये उस आन्दोलनमें हिन्दी को एकता के प्रतीक की तरह पेश किया गया था। इसलिये उस पृष्ठभूमि में जनता हिन्दी को विशेष इज़्ज़त की नज़र से देखती है। अनेक लोग सोच सकते हैं कि जब हिन्दी अंग्रेजी की जगह लेगी तो यह अपनी आज़ादी का एक अधिकार हासिल करना होगा। ज़बान के मसले पर अपनी नीति तै करते समय मज़दूर-वर्ग को इन तमाम बातों पर विचार करना चाहिये। हमारे देशवासियों की बड़ी बहुसंख्या हिन्दी समझती है। थोड़ी सी मेहनत से दूसरे लोग भी उसे समझ सकते हैं। यह ज़बान पिछले ज़माने में जनताका राजनीतिक एका हासिल करनेमें फ़ायदेमन्द हुई है। ये तमाम बातें हिन्दुस्तान की तरहके बहुभाषी देशमें पूरे देशकी भाषा बनने के लायक विशेष उपयोगी होनेके लक्षण हैं।"

इसके आगे उन्होंने लिखा है :

"जनता के जनवादी प्रजातंत्र में हिन्दी की यह उपयोगिता और भी काम देगी।"

वह इस बात का विरोध करते हैं कि दूसरी क़ौमों पर पूँजीपति यह ज़बान लादें, लेकिन उन्हें भरोसा है कि जब जनवादी प्रजातंत्र में हर जातिको अपनी भाषा इस्तेमाल करने का हक़ मिलेगा, तब सारे देश के मेहनतकश लोग खुद स्वाभाविक तरीक़े से हिन्दी को अखिल भारतीय भाषा मान लेंगे।

("तमाम जातियों की भाषाओं को बराबरी का हक़ देना ही पड़ेगा। हर भाषा में बड़े से बड़े पैमाने पर शिक्षा का प्रचार करके आम जनता को जल्दी से जल्दी हर काम के योग्य बनाना पड़ेगा। तभी

और इसी के ज़रिये ऐसी हालत पैदा होगी जब पूरे देशकी मेहनतकश जनता स्वाभाविक तौर पर हिन्दी को खुद कबूल कर लेगी।")

यह समझना मुश्किल है कि यह कहने से कि "यह जबान पिछले जमाने मे जनताका राजनीतिक एका हासिल करने में फ़ायदेमन्द हुई है" और उसमें "पूरे देशकी भाषा बनने के लायक विशेष उपयोगी होने के लक्षण हैं," मोहन मांझीका क्या मतलब है।

सबसे पहले वह हावी होनेवाले पूँजीवादी गुटके वर्ग-हितोंको भूल जाते हैं जिसने हिन्दी से पिछले दिनों इस तथाकथित एकता का काम लिया था। हावी होने वाले पूँजीपति और उनके नुमाइन्दे सारे हिन्दुस्तान के लिये एक आम जबान की मॉग इसलिये करते थे कि वे अपने लिये सारे देशको मंडीके रूपमें संगठित करें और अपने तमाम प्रान्तीय (यानी दूसरी जातियों के) प्रतिद्वन्द्वियों को जो ग़ैर हिन्दी इलाकों में हैं, निकाल बाहर करें। हावी होनेवाले पूँजीवादी गुटकी "सामान्य राजनीतिक आशाएँ" हिन्दुस्तान की तमाम जातियों पर एक आम जबान लादने से ही पूरी हो सकती थीं। मजदूर-वर्ग की आम राजनीतिक आशाएँ हमारे बहुजातीय देशमें सभी भाषाओं के फलने-फूलने से पूरी हो सकती हैं।

दूसरी बात यह कि जनता का जनवादी प्रजातंत्र क़ायम होनेपर हिन्दी सारे देशकी स्वाभाविक ढंग से आम भाषा न बनेगी। दूसरे जातीय इलाकों में अगर उसे आम जबान के रूप में फैलाने की कोशिश की जाये तो वह अस्वाभाविक तरीक़ा ही होगा। आनेवाले दिनों में हो सकता है कि हिन्दुस्तान की एक जबान हो जिसे यहॉ की तमाम जनता बोले। लेकिन वह भाषा आज की हिन्दी से बहुत भिन्न होगी।

समाजवादी बहुजातीय राज्य में आम जबान के मसले पर स्तालिन की यही सीख है। चेक लोगोंको जर्मन बना दिया जाय— कॉट्स्की की इस अंधराष्ट्रवादी थ्योरीका जोरों से खण्डन करते हुए स्तालिन ने कहा है :

> "मैं इसका विरोध करता हूँ इसलिये कि तमाम जातियों का एकीकरण, मसलन सोवियत यूनियन की तमाम जातियोंका एक सामान्य रूसी जाति बनना जिसकी आम जबान रूसी भाषा हो, यह एक लेनिनवाद विरोधी थ्योरी है। लेनिनवाद के मूल सिद्धान्तों के वह खिलाफ है जिनके अनुसार निकट भविष्य मे जातियों के भेद खतम नहीं हो सकते बल्कि बहुत दिनों तक, तमाम **दुनियामें** मजदूर-क्रान्ति के विजयी होने के बाद उनका क़ायम रहना लाजिमी है। जहॉ तक जातीय संस्कृति और जातीय भाषाओं के सुदूर भविष्य का सवाल है, मैंने हमेशा इस लेनिनवादी धारणा को माना है और मानता हूँ कि जब **तमाम दुनियामें** समाजवाद की जीत हो चुकेगी, समाजवाद दृढ़तासे क़ायम हो जायगा और रोजमर्रा जिन्दगीकी चीज बन चुकेगा तब लाजिमी तौरसे जातियोंकी भाषाएँ एक

आम जबानके रूपमे घुलमिल जायेंगी और जाहिर है कि यह जबान न रूसी होगी न जर्मन बल्कि एक नयी चीज होगी"। (**मार्क्सवाद और जातियों और उपनिवेशोंका सवाल, पृष्ठ २६४**)

इससे जाहिर है कि रूसी भाषा जो सोवियत यूनियनमें सबसे ज़्यादा समझी जानेवाली भाषा है, गैर-रूसी जातियोंकी आम जबान तब तक नही हो सकती थी जब तक उन जातियोंका रूसीकरण न हो जाता। स्तालिनने दिखाया कि तमाम दुनियामें समाजवादी क्रान्ति की जीत के बाद भी भाषा और संस्कृति के जातीय भेद कायम रहेंगे। सुदूर भविष्यमें जब समाजवाद रोजमर्रा जिन्दगी की चीज बन जायेगा तब मनुष्य मात्र की एक भाषा होगी जो आजकी मौजूदा जबानों से भिन्न होगी।

आम जबान के मसले पर स्तालिन की धारणा से यह बात साफ हो जाती है कि निकट भविष्य मे जनता का जनवादी प्रजातंत्र कायम होने पर समूचे देश में एक भाषा का चालू होना मुमकिन न होगा। सुदूर भविष्य में हिन्दुस्तान मे कम जबाने और आखिर में एक जबान हो सकती है, लेकिन वह आम जबान हिन्दी या देश की और किसी मौजूदा भाषा से बिलकुल अलग होगी। इसलिये यह कहना कि जनताके जनवादी राज्य में हिन्दी स्वाभाविक तरीके से सारे देश की भाषा बन जायेगी, हावी होने वाले पूँजीवादी गुट के वर्ग हितों को अवसरवादी सुविधा देना है। यह दलील फिजूल है कि जनता के जनवादी राज्य में कोई हावी होनेवाला पूँजीवादी गुट न रहेगा और इसलिये उसे सुविधाएँ देने का सवाल न उठेगा। हम देख चुके हैं कि सोवियत यूनियन मे समाजवादी क्रान्ति की जीत के बहुत दिन बाद, छोटे बड़े तमाम पूँजीपतियों के पूरी तरह खतम होने के बाद बड़ी जाति की अंधराष्ट्रवादी गुमराहियाँ उभड़ती रही हैं। इसलिये हिन्दुस्तान मे हमारे लिये खतरा कम नहीं है, खास तौर से आज जब हमने जनता का जनवादी राज्य कायम नहीं किया। खतरा यह है कि हम जातियों की समानता मुँह से तो मान लें लेकिन मजदूर-वर्ग की (अन्तरजातीय) एकता के नाम पर अमल मे उसे खतम कर दे।

इसलिये हिन्दी या और कोई भाषा अभी या जनता के जनवादी राज्य मे समूचे देश की आम जबान या राजभाषा न बनेगी। इस रूप में कोई भाषा न लादी जा सकती है, न स्वाभाविक रूप से स्वीकार की जा सकती है। स्वाभाविक रूप, बड़ी जातिके अंधराष्ट्रवाद को अवसरवादी सुविधाएँ देने के लिए एक नकाब भर है। इस बात से कुछ आता-जाता नहीं है कि कॉ. मोहन मांझी खुद इस बड़ी जाति के हैं या नहीं। रोजा लुक्जेमबर्ग जो पोलैण्ड-निवासियों को आत्म-निर्णयका अधिकार देनेका विरोध करती थी, खुद रूसी नहीं थी।

यह पूछा जा सकता है कि रूसी जातिकी तरह आज हिन्दुस्तान मे कोई हावी होनेवाली जाति है या नहीं।

हिन्दुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टी ने अपने **राजनीतिक प्रस्ताव** में एक हावी होनेवाले पूँजीवादी गुट की साफ-साफ बात कही है जो केरल, महाराष्ट्र, आंध्र आदि जातियों के अलगाव के अधिकार का विरोध करता है।

इस हावी होनेवाले पूँजीवादी गुटका कोई जातीय आधार भी होना चाहिये। दूसरे शब्दो में जो महाजन, इजारेदार और उद्योगपति इस हावी होनेवाले पूँजीवादी गुटमें शामिल हैं वे किसी कौमके ही होंगे।

हिन्दुस्तानमें हावी होनेवाला पूँजीवादी गुट मुख्य रूप से मारवाड़ी जाति का है। बिड़ला, डालमिया, सिंहानिया, गोयनका वग़ैरा जिन्होंने देश में दूर-दूर तक अपने पंजे गडा रखे हैं, इसी कौममें पैदा हुए हैं। इस गुटमें दूसरे लोग भी शामिल हैं जिनकी जाति मारवाड़ी नहीं है। यह बात किसी भी बहुजातीय देशमें हो सकती है। जारशाही रूसमें बड़ी पूँजी पर सिर्फ रूसियो का कब्जा नहीं था। मिसालके लिये यूक्रेनमें, फ्रास, बेलजियम, जर्मनी और ब्रिटेनके इजारेदार " ८० फी सदी लोहे की भट्टियों, ९० फी सदी कोक और उससे छटैल चीज़ोंके कारखानों, ८० फी सदी धातुके कारखानों, ७० फ़ी सदी अबरख की खानों और बहुत बड़ी तादाद में कोयले की खानों के मालिक थे।" (स्तालिन के नाम यूक्रेनियोंका खत, १९ नवम्बर १९४७)। इससे इस बात में कोई फ़र्क नहीं पड़ा कि जारशाही रूसकी पालिसी यूक्रेनके रूसीकरण की थी। रूसीकरण की यह पालिसी रूसी शोषकों के ही हितमें नहीं थी बल्कि उन तमाम विदेशी रक्त शोषकों के हितमें भी थी जो जारशाही के सहयोगी थे। रूसीकरण से उन्हें बेरोक शोषण करने में मदद मिलती थी।

इसी तरह हिन्दुस्तानमें इस बातसे कुछ आता-जाता नहीं है कि हावी होनेवाले पूँजीवादी गुट में ग़ैर मारवाड़ी गुट भी हैं। इस गुट के तमाम लोगोंके सामान्य हित इस बातसे सधते हैं कि एक लाज़िमी राजभाषा चालू की जाये और दूसरी जातियों का अलगाव का हक़ न माना जाये।

और इस बात से भी कुछ आता-जाता नहीं कि बिड़ला-गोयनका वैग़रा की मूलं भाषा हिन्दी नहीं बल्कि राजस्थानी (राजस्थानकी किसी एक बोलीके रूपमें) है।

ब्रिटिश साम्राज्यवादने राजस्थानमें साम्राज्यशाही क़ायम रखी। ये सज्जन पहले अपने घरका बाजार संगठित करके पूँजीपति नहीं बने बल्कि शुरूसे ही उद्योग और व्यापार फैलानेके लिये वे हिन्दुस्तानके दूसरे हिस्सों पर निर्भर रहे। ये ही सबब हैं कि देशके हर हिस्सेमें ये पूँजीपति इतने हिन्दी अखबारोंमें पैसा लगा रहे हैं और खुद अपनी भाषा राजस्थानीके विकासके लिये रत्ती भर काम नहीं किया। हिन्दीमें उन्हें एक ऐसा उपयोगी माध्यम मिल गया है जिससे वे समूचे हिन्दुस्तानी बाजारको संगठित कर सकें और दूसरी क़ौमोंके पूँजीपतियोंको निकाल बाहर करें। इसलिये उन्हें कहीं भी हिचकिचाहट नहीं होती और जिन पर भी वे असर डाल सकते हैं, उनके गन्देसे गन्दे और घोर साम्प्रदायिक भावों को वे जगाते हैं। दूसरी जातियों के हितों को नुकसान पहुँचाने के अलावा राष्ट्रभाषाके रूपमें हिन्दी की हिमायत करनेसे

देशके दूसरे हिस्सोंमें खुद इस भाषाको बहुत नुकसान पहुँचेगा। दक्खिनमें और दूसरी जगह लोग हिन्दी को एक हावी होनेवाली जाति की भाषा की तरह देखने लगे हैं। बिड़ला और उनके नाते-रिश्तेदार इस बात के लिये जिम्मेदार हैं कि जबान के मसले पर उन्होंने विभिन्न जातियोंके बीच द्वेष और शत्रुभाव पैदा किया है। जो क़ौमी वैर-भाव वे भडका रहे हैं उनसे इन भाषाओंके आपसी आदान-प्रदान में रुकावट पड़ती है और हिन्दी के बहुतसे अंधराष्ट्रवादी समझने लगे हैं कि और सब लोगोंका काम उनकी भाषा सीखना है, उनका काम किसी दूसरे की भाषा सीखना नहीं। इसलिये हावी होनेवाले पूँजीवादी गुट की हिमायत से हिन्दीका भी भला नहीं हो रहा है।

हावी होनेवाले पूँजीवादी गुट के मुक़ाबले में जो हिन्दी को लाजिमी राजभाषा बनाने की पालिसी पर चल रहा है, दूसरी कौमों के पूँजीपति हैं, जो अपने प्रतिद्वान्दियों पर भाषागत साम्राज्यवाद का दोष लगाते हैं और अपनी जातिको पूरा आत्मनिर्णय दिलाने का वादा करते हैं, बशर्ते कि इस सवाल पर मजदूर-वर्ग उनके झण्डे के नीचे आ जाये। इन कौमोंके पूँजीपतियों के इन झूठे वादोंका पर्दाफाश करना चाहिये।

सूबों के पूँजीपति खुद साम्राज्यवादी हौसले रखते हैं, इसमें शक-शुबहे की गुंजाइश नहीं। मिसालके लिये बिहारके आदिवासी इलाके हैं जिनके लिये बंगाल और बिहारके पूँजीपति झगड़ रहे हैं (जैसा कि मोहन मांझी ने जनशक्ति वाले लेखमें दिखाया है)। उनमें से किसीको भी आदिवासियोंको आत्मनिर्णयका अधिकार देनेमें दिलचस्पी नहीं है। इसी तरह बम्बई और मद्रासके सवाल पर आपसी होड़ करनेवाले पूँजीवादी गुट साम्राज्यवादी हौसले जाहिर करते हैं और जहाँ बन पड़ता है वे दूसरी क़ौमके इलाके में छीना-झपटी करते हैं। इसलिये पट्टाभि सीतारमय्या सम्प्रदाय जो कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी सम्प्रदाय के भाषागत साम्राज्यवाद का विरोध करता है, अपने हौसलों में उससे अलग नहीं, दोनों एक ही थैलीके चट्टे-बट्टे हैं।

जातियों के राजनीतिक और सांस्कृतिक विकास का अधिकार तभी हासिल हो सकता है जब मजदूर-वर्ग के नेतृत्वमें उन जातियों के तमाम मेहनतकश अवाम, केन्द्रीय और प्रान्तीय दोनों तरह के पूँजीपतियों और सामन्तों-जमींदारों के खिलाफ मिल-जुलकर संघर्ष करें। यही एक तरीक़ा है जिससे कि तमाम क़ौमोंको अपनी जबानें पूरी तरह विकसित करनेका मौका मिलेगा और हावी होने वाला पूँजीवादी गुट उन पर लाजिमी राजभाषा न लाद सकेगा।

बहुजातीय पूँजीवादी राज्यमें लाजिमी राजभाषाके सवाल पर मार्क्सवाद हमें यह रवैया अख्तियार करना सिखाता है। हिन्दुस्तान में कोई राजभाषा न आज क़ायम हो सकती है, न कल, जब तक भी हिन्दुस्तानका बहुजातीय रूप क़ायम रहेगा।

लाजिमी राजभाषाके खिलाफ सिर्फ़ मजदूर-वर्ग लड़ाईका नेतृत्व कर सकता है। यह लड़ाई पूँजीके खिलाफ तमाम मजदूरों की एकताके हितोंमें होगी। सूबोंके पूँजीपति अपने वर्ग-हितों को नजर में रखकर ये सवाल उठा रहे हैं। उनका मक़सद

है कि कम विकसित जातियों के साथ वह वैसा ही सलूक करें जैसा कि हावी होनेवाला पूँजीवादी गुट उनके साथ कर रहा है।

यही एक रास्ता है जिससे हिन्दुस्तानकी तमाम जातियों के मेहनतकश अवाम को उन सब के दुश्मन—पूँजीपतियों, सामन्तशाही और साम्राज्यवाद के गंठबंधन के खिलाफ़ एक किया जा सकता है।

(५) हिन्दी–उर्दू–हिन्दुस्तानी का सवाल

हिन्दी–उर्दू–हिन्दुस्तानी का सवाल यह है : इनमें से कौन सी एक, या एक से ज़्यादा भारत की राष्ट्रभाषा है। सवाल के इस पहलू के बारे में ऊपर कहा जा चुका है।

सवाल का दूसरा और ज़्यादा महत्वपूर्ण पहलू है कि हिन्दी–उर्दू–हिन्दुस्तानी वाले क्षेत्र में इनमें से कौन सी एक या एक से ज़्यादा वहाँ की जनता की भाषा है।

इस क्षेत्र की भाषा एकमात्र हिन्दी मानने के लिये नीचे लिखी दलीलें पेश की जाती हैं :

यहाँ की जनता हिन्दी बोलती है और हिन्दी समझती है। वह महज़ हिन्दुओं की भी भाषा नहीं है। मुसलमान जनता भी उसे बोलती और समझती है। पढ़े लिखे मुसलमानोंने आम ज़बानमें फारसी के लब्ज़ जोड़ दिये हैं और लिखने के इस तरीके को वे उर्दू कहते हैं। वह विदेशी है और हमारा उससे कोई वास्ता नहीं हो सकता।

हिन्दीका समर्थन करने वाले, जो जरा ज़्यादा उग्र हैं, कहते हैं कि हिन्दी, हिन्दुओं की भाषा है। वह हिन्दू संस्कृति और हिन्दू धर्म पर आधारित है।

इसलिये हिन्दू धर्म और इस्लाम मानने वाली दो जातियोंकी भाषा हिन्दी और उर्दू नहीं हो सकती।

चूँकि जाति, धर्मकी बुनियाद पर आधारित नहीं होती इसलिये क्या यह सम्भव नहीं कि एक ही जातिमें दो भाषाएँ बोली जायें।

स्तालिनने जातिकी जो परिभाषा दी है, और जिसे ऊपर उधृत किया जा चुका है, उससे यह साफ है कि एक जातिकी एक आम भाषा होनी चाहिये।

स्तालिनने और आगे बताया है कि हालाँकि हरेक जातिकी एक आम ज़बान होती है तो भी यह जरूरी नहीं कि एक ही भाषा को दो या दोसे ज़्यादा जातियाँ न बोलें। स्तालिनने कहा है :

> "हर जातिके लिये आम ज़बान होती है, लेकिन ज़रूरी नहीं कि अलग-अलग जातियोंके लिये अलग-अलग ज़बानें हों।..."

और आगे उन्होंने कहा है :

> "ऐसी कोई जाति नहीं जो एक साथ कई भाषाएँ बोलती हो, किन्तु इसका यह मतलब नहीं कि एक ही भाषा बोलने वाली दो जातियाँ नहीं हो सकतीं। अंग्रेज़ और अमरीकी एक ही भाषा बोलते हैं, किन्तु वे एक ही जातिके नहीं हैं। यही बात नारवेजिनों और डेनों, अंग्रेज़ों और आयरलैण्ड-वासियों के बारेमें भी सही है।" (**मार्क्सवाद और जातियोंका प्रश्न**, अं. सं., पृ. ६.

"कोई भी ऐसी एक जाति नहीं जो एक ही समय कई भाषाएँ बोलती हो"
—स्तालिनका यह वक्तव्य हिन्दी-उर्दू-हिदुस्तानी की समस्या के झाड़-झखाड़ को साफ़ करके आगे बढ़नेमें बहुत बड़ी मदद करता है। अगर इन भाषाओं को बोलने-वाले लोग एक से ज्यादा जाति नहीं हैं, तो यह लाजिमी है कि इनके बीच का अन्तर अन्तर-जातीय अन्तर नहीं है; यह लार्जमी है कि इन तीनों भाषाओं को बोलने-लिखने वाली क़ौम एक है और और एक से ज्यादा नहीं है ओर यह लाजिमी है कि बुनियादी तौर पर तीनों ही श्रेणियाँ एक हैं।

हिन्दी और उर्दू बुनियादी तौर पर एक ही भाषा हैं क्योंकि वे दोनों ही आम जनता की जबान पर आधारित हैं जो कि दोनों के ही लिये निहायत जरूरी है। हम इस आम जबान को हिन्दुस्तानी कहें या कुछ और—यह बेमतलब है। मगर यह बात सच है कि हिन्दी या उर्दू का एक भी वाक्य आम जनता में प्रचलित जबान के रूपों को इस्तेमाल किये बिना नहीं लिखा जा सकता।

स्तालिन ने इस बात को साफ कर दिया है कि जब वह एक जाति कहाने-वाले लोगों की आम भाषा की बात कहते हैं तब उनका मतलब उनकी बोलचालकी जबान से होता है।

> "चेक जाति का आस्ट्रिया में और पोलिश जाति का रूस मे अस्तित्व असम्भव होता", उन्होंने कहा है, "अगर इनमें से हरेक की अपनी आम जबान न होती। दूसरी ओर रूस या आस्ट्रियामे कई भाषायें होनेपर उनका अस्तित्व खतरेमें नहीं पड़ता। यहाँ हमारा मतलब जनताकी बोलचाल की जबानसे है, हुकूमत की सरकारी भाषासे नही।" (मार्क्सवाद और जातियोंका प्रश्न, हिं.सं, पृ. १०)

जनताकी बोलचाल की जबानको हिन्दी या उर्दूमें नहीं बाँटा जा सकता है। हिन्दुस्तानी बोलने वाली जाति की आम जबान अपने बोलचाल क स्वरूपमें एक है।

जब उर्दू के दावेदार उसे जनताकी भाषा बताते हैं, तो उनकी बातमें सचाई सिर्फ़ इतनी है कि जनता की बोलचाल की जबान के बिना जो कि असली आधार है, हम हिन्दी की कल्पना तक नहीं कर सकते।

जब हिन्दुस्तानी के दावेदार उसे जनता की भाषा बताते हैं तो उनकी बातमें सचाई सिर्फ़ इतनी है कि वे जनता की बोलचाल की जबान से उसका मिलान करते हैं।

लेकिन हिन्दी और उर्दू किसी एक जगह पहुँचकर आम बोलचाल के आधार से दूर चली जाती हैं। हिन्दुस्तानी के बारे मे भी, जब उसका इनमें से किसी एक से मिलान किया जाता है, या दोनोंका सम्मिश्रण बनाया जाता है, यही बात सच है। इस तरह, बुनियादी तौर पर हिन्दी और उर्दू एक हैं, ऊपरी ढँग से वे दो हैं। हमें इस अन्तर के कारण का पता लगाने की कोशिश करना चाहिये।

हिन्दी और उर्दू के बीच अन्तर का, उसी एक ज़बान के साहित्यिक स्वरूपोंमें अन्तर का पहला कारण ब्रिटिश साम्राज्यवाद की मातहती में हमारी जनता का असमान सामाजिक विकास है।

भारत में विदेशी पूँजी के आधिपत्य ने सामन्तवाद को अपना सहयोगी बना कर, भारतीय उद्योगों के विकास का गला घोंट कर, विशाल जनता का निर्मम आर्थिक शोषण करके, छोटे पैमाने पर किसानी व्यवस्था को अपने हितों में क़ायम रख कर, ज़मींदारों के वर्ग में अपना सामाजिक आधार क़ायम करके, औपनिवेशिक शोषण जारी रखने के लिये जनता को सांस्कृतिक रूप में पिछड़ा बनाये रख कर, जनता पर एक विदेशी भाषा लाद कर और उनकी अपनी ज़बान और अपनी संस्कृति की उन्नति और विकासका दमन करके और कुचलकर, और अन्त में देश के आम शोषण के लिये ग़द्दार बड़े पूँजीपति वर्ग से समझौता करके उसने जनता के सामाजिक और आर्थिक विकास की बाढ़ मार दी है।

यह सब संस्कृति और भाषा के क्षेत्र में भी साफ़ देखने में आता है।

आम जनता भाषा के क्षेत्र मे अपनी वर्ग-एकता को अमल में नहीं ला पायी। पश्चिमी शिक्षा, भाषा और साहित्य के सम्पर्क से बुद्धिजीवी-वर्ग को जो जोश-खरोश मिला वह ऊपरी तबक़े तक सीमित रह गया। आम जनता को इस बातका अवसर नहीं मिल सका कि सांस्कृतिक प्रश्नों पर वह अपने साम्राज्यवाद-विरोधी, सामन्तवाद-विरोधी और पूँजीवाद-विरोधी दृष्टिकोण को लागू करे।

ब्रिटिश साम्राज्यवाद ने रायबहादुरों, राय साहबों, नाइटों और बैरनों की पूरी फ़ौज की फ़ौज तैयार की और ये लोग हिन्दी और उर्दू के साहित्य में नेता बन बैठे। हिन्दी और उर्दू के विकास में उन्होंने अपने-अपने जन-विरोधी, साम्राज्यवाद परस्त नज़रिये को लागू किया।

ब्रिटिश साम्राज्यवाद की मातहती में, हैदराबाद का निज़ाम, बीकानेर, अलवर और भरतपुर के महाराजा हिन्दू और मुस्लिम संस्कृति के, हिन्दी और उर्दू भाषा के, यहाँ तक कि संस्कृत भाषा के सरपरस्त बन गये। संस्कृत को भारत की राजभाषा बनाने के पक्ष में खड़े होने का सम्मान डा० काट्जू के साथ महाराजा अलवर को प्राप्त है।

अपने सहयोगियों के ज़रिये भाषा और संस्कृति के क्षेत्र में ब्रिटिश साम्राज्यवादने खुलेआम और छिपे रूपसे दोनो तरह दख़लन्दाज़ी की। राजनीति के क्षेत्र में जिस तरह भारतीय पूँजीपति वर्ग के बीच वह मज़हबी आधार पर दरार डाल रहा था उसी तरह उसने भाषा और संस्कृति के क्षेत्र में भी मज़हबी दुश्मनी बढ़ाने की पूरी कोशिश की। उसकी रक़म पर सिविलियन भाषा-ज्ञानी मैदान में वैज्ञानिक सिद्धान्त लेकर उतरे कि भाषाओं का आधार नस्ल और धर्म को बनाया जाय।

इन सिविलियन भाषा-ज्ञानियों में सबसे ख़ास ग्रियर्सन था। भारतमें भाषाओं की जाँच को पूरा करने के लिये तीस साल तक उसे और उसके सलाहकारों की फ़ौज को भारतीय कोष से रक़म मिलती रही। अपने इस बड़े काम को पूरा करने के परिश्रमके बाद, जो इतने अरसे तक चला जितनी लम्बी एक आम हिन्दुस्तानी की जिन्दगी होती है, ग्रियर्सन इस नतीजे पर पहुँचा कि,

(१) " इस लम्बे चौड़े क्षेत्रमें राजपूताना, मध्य भारत, और गुजरात को मिलाकर ...हिन्दी और हिन्दुस्तानी हर जगह शासन प्रबन्ध की भाषा है... और कोई भी होश-हवाश ठीक रखने वाला आदमी यह न चाहेगा कि अलग अलग बोलियों के घोटाले को शुरू करके शासन प्रबंधके काममें गड़बड़ी पैदा कर दे। " [भारतमें भाषाओं की जाँच, भूमिका, पृ. १२];

(२) " इण्डो-आर्यन भाषाएँ...... लगातार उन भाषाओं को पीछे छोड़ती जा रही हैं, जिन्हें सूक्ष्मता के खयालसे, आदिम भाषाएँ कहा जा सकता है जैसे वे भाषाएँ जो द्रविड़, मुण्डा और तिब्बती-बर्मी परिवारोंमें बोली जाती हैं। " (उपरोक्त, पृ. २९);

(३) " इस्लामने उर्दूको दूर दूर तक पहुँचाया है और बंगाल और उड़ीसामें भी हमे ऐसे मुसलमान बाशिन्दे मिलते हैं जिनकी जबान् उनके सह-वासियों की जबान नहीं है बल्कि एक कोशिश (अक्सर बुरी कोशिश) इस बात की है कि दिल्ली और लखनऊ की जबान बोली जाय " (उपरोक्त, पृ. ३०);

(४) " सिर्फ़ मुसलमानों की उर्दू में ही फ़ारसी लफ्ज़ों से वाक्य बनाने की तरतीब हमें मिलती है। " (उपरोक्त, पृष्ठ. १३३) और

(५) " विदेशी वाक्य-विन्यास के प्रयोग के खिलाफ़ देशी भावना इतनी तीव्र है कि हिन्दू लेखक एक जबान को—हिन्दुस्तानी पर थोड़ा फ़ारसी रंग चढ़ जाने को उर्दू कहते हैं, उसके शब्दों की बुनियाद पर नहीं बल्कि उसमें इस्तेमाल किये गये लफ्ज़ों की तरतीब के आधार पर। " (उपरोक्त)

" भाषाओं की जाँच " में इस तरह के तमाम अमूल्य रत्न बिखरे हुये हैं, खास तौर से भूमिका में।

यहाँ यह देखने में देर न लगेगी कि ग्रियर्सन के भाषा-विज्ञान का वर्ग-आधार क्या है। उसका रवैया एक साम्राज्यवादी का है जो कम विकसित जातियों की भाषाओं को कुचल देना चाहता है, इसलिये कि " शासन प्रबन्ध " के हितों को धक्का न लगे—ठीक वही दलील जो भारत के बड़े पूँजीपति-वर्ग के प्रतिनिधि अब दे रहे हैं। उसने बड़ी ढीठता से कहा है कि उर्दूको इस्लाम ने दूर-दूर तक पहुँचाया है। वह कुछ ऐतिहासिक तथ्यों को भूल गया जो यह बताते हैं कि इस्लाम को माननेवालों के भारत आने और यहाँ बस जाने के बहुत दिनों बाद उर्दू का एक भाषा के रूप में विकास हुआ। और भी; किसी कारण से, जिसका हवाला देना ग्रियर्सन भूल गया है,

इस्लाम उर्दू को सिर्फ भारत ही लाया, और, यों कहिये कि, मिश्र, अलजीरिया, टर्की यहाँ तक कि अरब भी नहीं ले गया। जाहिर है, ग्रियर्सन के सामने एक दूसरी समस्या भी थी कि हिन्दुओं की बहुत बड़ी सख्या क्यों उर्दू को अपनी जबान मानती है और क्यों उर्दू लिखती है। इसलिये उसने एक दूसरी महान् खोज की, यानी यह कि मुसलमान, उर्दू, फारसी-लफ़्ज़ों की तरतीबमें लिखते हैं और हिन्दू, जाहिर है, उर्दू संस्कृत शब्दों की तरतीब में लिखते हैं।

ग्रियर्सन की "भाषाओं की जाँच" ने पूँजीवादी भाषा-वैज्ञानिकों पर, यहाँ और बाहर के लोगोंपर, जो गहरा असर छोड़ा है उससे यही साबित होता है कि भाषाके क्षेत्र मे ब्रिटिश साम्राज्यवाद की दखलन्दाजी किस हद तक और कितनी खतरनाक रही है। इस विरासत को खतम करना अभी बाक़ी है।

ब्रिटिश साम्राज्यवाद ने सामन्तवाद को अपना सहयोगी बना कर उसे कायम रखा और उसे पाला-पोसा। पुनरुत्थानवाद सामन्तवाद का विशेष वर्ग-सिद्धान्त है। जब कभी भी सामन्तवाद ने क़ौमी जबान और अदब में दखल दी है, तब हमेशा अपने साथ-साथ उसने पुनरुत्थानवादी प्रतिक्रियावादी धाराओं का असर छोड़ा है। इनसे धार्मिक और साम्प्रदायिक मतभेदों को गहरा करने में मदद मिली है। ये पूँजीपति-वर्ग द्वारा वर्ग-भेदों को छिपानेके लिये पर्दे की तरह काम मे लायी जाती हैं।

ब्रिटिश साम्राज्यवादने हर जातिके और भी टुकड़े किये। उसने उन्हें प्रान्तों और रियासतोंमें तक़सीम किया। इस बँटवार ने खास जातियों की सांस्कृतिक और राजनीतिक एकता को रोक दिया।

भारतकी जनताके सांस्कृतिक और सामाजिक विकास के असमान होनेके ये खास कारण हैं। ये ही कारण हिन्दुस्तानी बोलेजाने वाले इलाके के बारेमें भी लागू होते हैं। इन सब की सीधी जिम्मेदारी ब्रिटिश साम्राज्यवाद पर है।

दूसरे, जनवादी ढंगसे जनता के आम सांस्कृतिक और राजनीतिक विकासकी प्रक्रियाके रास्तेमें रुकावटें डालनेकी जिम्मेदारी भारतीय पूँजीपति वर्गकी नीति पर है।

भारत के राष्ट्रीय नेता, जब वे साम्राज्यवाद विरोधी खेमे में ढुलमुला रहे थे, तब वे एक ऐसी आम जबान और आम संस्कृति की बातें करते थे जो किसी धर्म पर आधारित न थी बल्कि जिसकी बुनियाद राष्ट्रीय थी। उनमें से बहुत से हिन्दुस्तानी को राष्ट्रभाषा मानते थे और उसके दो लिपियों मे लिखे जाने के पक्ष मे थे। तमाम भारत के लिये राष्ट्रभाषा की उनकी माँग का वर्ग-आधार हम देख चुके हैं। अब हम देखेंगे कि खुद हिन्दुस्तानी बोले जाने वाले इलाके के लिये आम भाषा और आम संस्कृति के विकास के लिये उन्होंने क्या किया।

भारत के राष्ट्रीय नेता आम जबान और आम संस्कृति की बातें तो जरूर करते थे, मगर उस बुनियाद को मिटाने में जो इसके लिये जरूरी थी उन्होंने कुछ भी नहीं उठा रखा। यह इसलिये कि वे साम्राज्यवाद के साथ समझौते की नीति

पर चलते थे, और जनता की जनवादी आकांक्षाओं के प्रति दुश्मनी की नीति पर चलते थे। एक तरफ़ तो उन्होंने हर मौके पर साम्राज्यवाद के खिलाफ़ जनता की उठानको सैबोटाज किया,—इसलिये कि उन्हें डर था कि यह उठान न सिर्फ़ विदेशी आधिपत्यको उखाड़ कर फेंक देगी बल्कि उनके वर्ग-शोषण को भी। दूसरी तरफ़, कांग्रेस के अन्दर और कांग्रेस के बाहर उन्होंने मजदूरों और किसानों के वर्ग-संगठनों की बढ़ती का विरोध किया। ये संगठन ही सारे हिन्दुस्तान की एकता की, या किसी भी खास जाति की वहाँ की भाषा और संस्कृति की एकता की, गारण्टी कर सकते थे। साम्राज्यवाद के साथ समझौते और जनता के जनवादी संघर्षों से दुश्मनी की नीति के कारण ही भारत के राष्ट्रीय नेता न सिर्फ हिन्दुस्तान के साम्राज्यवादी बँटवारे के तरफ़दार बने, बल्कि उन्होंने अपने बीच कुंठावाद और अंधराष्ट्रवादकी प्रवृत्तियों को खूब बढ़ाया। जहाँ उन्होंने हद दर्जेकी फ़ासिस्ट प्रवृत्तियों—जैसे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ—के खिलाफ़ जूझने का दिखावा किया है, वहाँ उन्होंने इन प्रवृत्तियों को खुद कांग्रेस के अन्दर बढ़ाया है। भाषा और संस्कृति के सवाल पर वे धीरे-धीरे आम भाषा और आम संस्कृति की लच्छेदार बातोंसे अपने हाथ धो चुके हैं। और अब वे इस क्षेत्रमें गंदीसे गंदी पुरातनवादी, धार्मिक और साम्प्रदायिक प्रवृत्तियाँ लेकर सामने आ रहे हैं। पहलेसे कहीं ज़्यादा आज वे जनताकी रोजी, जनवाद, और सच्ची आजादीके लिये जनवादी संघर्षों पर हमला बोल रहे हैं। सबसे पहले वे हमला करते हैं जनताके अधिक राजनीतिक रूपसे सचेत तबके पर जिसका नेतृत्त्व मजदूर-वर्ग कर रहा है। दूसरे, इस हमलेको वे तमाम जनताके—जमींदारों और पूँजीपतियों को छोड़ कर—हितों पर आम आक्रमण के रूपमें बदल रहे हैं। इस नीति से न तो कभी पहले आम जबान और आम संस्कृतिका विकास हुआ है और न आज हो सकता है; अगर उनका विकास पहले हुआ है और आज हो रहा है तो पूँजीपति-वर्ग और राष्ट्रीय नेताओं के विरोधके बावजूद।

राष्ट्रीय नेता आज जनवाद और समाजवाद के लिये संघर्ष के रास्ते से जनताको अलग हटाने में क्रियापूर्ण दिलचस्पी ले रहे हैं। भाषा संबंधी वाद-विवाद और वे दूसरे वाद-विवाद जिनका संबंध प्रान्तों की सीमाओं में तबदीली करने से है राष्ट्रीय नेताओं के हाथ में एक ऐसा हथियार हैं जिसका इस्तेमाल वे जनता का ध्यान खास सामाजिक समस्याओं की तरफ़ से हटाने में करते हैं। वे जनता के बीच खाइयाँ खड़ी करने की साम्राज्यवाद की हर चालका इस्तेमाल कर रहे है जिससे कि अधिक से अधिक जितने दिन हो सके वे जनताका सामन्तवादी-पूंजीवादी शोषण कायम रख सकें। इसलिये यह आशा लगाना कि इन समस्याओं को सुलझाने में वे कुछ भी मदद कर सकते हैं या करेंगे, घातक है।

भारत में पहलेसे कहीं ज़्यादा आज यह मजदूर वर्ग है और उसके सहयोगी किसान और मेहनतकश मध्यवर्गी हैं जो भारत की हर जाति की आम जबान और आम संस्कृतिका निर्माण कर सकते हैं और वे करेंगे।

क्या कानपुर या आगरा की एक ही मिल या एक ही वर्कशाप में काम करने वाले मज़दूर—हिन्दू और मुसलमान दोनों—दो ज़बानें बोलते हैं ? नहीं, वे दो ज़बानें नहीं बोलते। इसी तरह, सयुक्त प्रान्त के किसान, जिनका शोषण एक ही वर्ग-शत्रु करता है एक ज़बान बोलते हैं और एक दूसरे की बात समझते हैं। शहरी मध्यमवर्गियों के मेहनतकश तबके अपने आफिसों और मोहल्लों में एक ही ज़बान बोलते हैं और रोज-ब-रोज की अपनी सामाजिक ज़रूरतों में कोई कठिनाई महसूस नहीं करते।

इस तरह, हिन्दू और मुसलमान मज़दूरों की आम ज़बान, हिन्दू और मुसल-मान किसानों की आम ज़बान, हिन्दू और मुसलमान मध्यवर्गियों की आम ज़बान उनके अपने इलाके मे एक है। इस ज़बान में स्थानीय अन्तर हो सकते हैं लेकिन ऐसे अन्तर नहीं जिनका आधार बोलनेवालो का मज़हब हो।

यह अन्तर सामने आता है आम ज़बान के ऊपरी ढाँचे में जब हम उसका इस्तेमाल साहित्यिक या ऊँचे सास्कृतिक कामों के लिये करना चाहते हैं।

यह अन्तर्विरोध कि हिन्दी और उर्दू बुनियादी तौर पर एक ज़बान हैं लेकिन ऊपरी ढाँचे को देखने पर दो, खुद हमारे सामाजिक विकास के अन्तर्विरोध का प्रतिबिम्ब है।

इस अन्तर्विरोध का कारण है राष्ट्रीय पूँजीपति-वर्ग का दो हिस्सोंमें बँट जाना,—हिन्दू पूँजीपति वर्ग और मुसलमान पूँजीपति वर्ग। यह बँटवारा साम्राज्य-वादका किया हुआ है। इसका कारण है सामन्तवाद का क़ायम रहना। भारतके पूँजीपति-वर्ग की समझौतावादी नीतिने साम्राज्यवाद द्वारा शुरू की गयी प्रक्रिया को पूरा कर दिया।

इस अन्तर्विरोधने एक भाषा के रूपमें आम ज़बान की बाढ़को रोक दिया है और एक ही बुनियादी ज़बान की दो शैलियों के रूपमें हिन्दी और उर्दूके बीच अन्तर को बढ़ा दिया है।

यह कहना कि हिन्दी और उर्दू अपने ऊपरी ढाँचे के स्वरूपमें एक हैं या यह कि हिन्दुस्तानी—वह बुनियादी स्वरूप जो दोनों के लिये आम है—सभी संस्कृति और शिक्षा संबंधी उँची ज़रूरतोंको पूरा कर सकती है, अपनी आँखें सामा-जिक विकास के उस अान्तर्विरोध की ओरमे बन्द कर लेना है जो सामने मौजूद है।

तो क्या हिन्दी और उर्दू को हिन्दूधर्म और इस्लाम के माननेवालों की भाषा कहना सही होगा ?

ऐसा कहना सही नहीं होगा क्योंकि इन दोनों की साहित्यिक और सांस्कृतिक परम्परा में जनवादी तत्त्व मौजूद है। यह तत्व ही आम ज़बान के बढ़कर एक उँचे सास्कृतिक स्वरूप लेने की बुनियाद बनेगा।

अगर धर्म नहीं तो क्या चीज़ हिन्दी और उर्दू को अलग-अलग करती है ?

हिन्दी और उर्दू जहाँ वे आम बोलचाल की ज़बान से अलग होती हैं, वहाँ वे एक दूसरे से भी अलग होती हैं। इस दूर हट जानेका कारण है (१) प्राचीन

भारत या ईरान और अरब की चन्द साहित्यिक परम्पराओं से चिपके रहना, और (२) साहित्यिक रूपों (फार्म्स) में संस्कृत या अरबी-फ़ारसी की शब्दावली से चिपके रहना।

सभी वर्तमान भाषाओं के विकास में हम देखते हैं कि पुराने धार्मिक रीति-रिवाजों, और परम्पराओं का असर दिन पर-दिन कम होता जाता है। पुराने कथानक और पुरानी परम्परायें जो बाकी हैं वे धार्मिक नहीं रह गयीं हैं। आम संस्कृति और आम जबान की उन्नति के लिये आम जिन्दा वातावरण सबस महत्त्व की चीज है। इसलिये, इस तरह की छाप जो एकदम इस्लामी या हिन्दू है (धार्मिक मानों में) धीरे-धीरे खतम होती जा रही है और उन वर्गों के खतम होते ही जो उनको बढ़ावा देते हैं, वह जरूर ही एकदम ला पता हो जायेगी। पुराने कथानकों और आख्यायिकाओं का धर्म-रहित रूप में घुला-मिला कर प्रयोग हो रहा है। और अपने बहुत से लेखकों और कवियों में, खास तौर से हिन्दी और उर्दू के प्रमुख प्रगतिशील लेखकों में, हम एक आम सास्कृतिक और साहित्यिक परम्परा को देखते हैं। इस आम साहित्यिक और सास्कृतिक परम्परा को बढ़ावा देनेमें और विकास करने में खासतौर से जन नाट्य संघ काम कर रहा है जो आम जनता के बीच नाटक पेश करता है और जिसे परिस्थितियों की जरूरतों के कारण आम सांस्कृतिक परम्पराओं का आधार लेना पड़ता है।

इस तरह, हिन्दी और उर्दू में विभिन्न साहित्यिक परम्पराओं की मौजूदगी कोई ऐसी रुकावट नहीं है जिसे दोनों की अन्तिम एकता और संमिश्रण के लिये लाँघा न जा सके, जो आम जनता के लिये ऊँची सांस्कृतिक जरूरतों के लिये जनवादी आन्दोलन की प्रगति के साथ-साथ आम जबान के विकास से पूरा न किया जा सके।

संस्कृत या अरबी और फ़ारसी से चिपके रहने की समस्या, दूसरे शब्दोंमें साहित्यिक और ऊँची सास्कृतिक जरूरतों को पूरा करने के लिये इन भाषाओं से शब्द लेने की समस्या को सिर्फ़ आम जबान के निर्माण और विकास के नियमों को उसके ऊँचे स्वरूपों में भी लागू करके ही सुलझाया जा सकता है।

क्या हिन्दी और उर्दू अपने बोले जानेवाले रूप में संस्कृत या उर्दू और फ़ारसी के शब्दों से अलग से चिपकी रहती हैं?

बेशक ऐसा नहीं है, जैसा कि अमल मे देखा जा सकता है। बोलचाल की जबान जब वह इन भाषाओंसे शब्द लेती है तो प्रायः किन नियमोंके आधार पर?

(१) इस तरह शब्द लेने में वह अलगाव नहीं दिखाती।

(२) वह सिर्फ़ ऐसे शब्द लेती है जो उसकी अपनी प्रकृति के उपयुक्त हों,—ऐसी भाषा की प्रकृति के उपयुक्त जो संस्कृत और फ़ारसी से भिन्न है। दूसरे शब्दों में, पुरानी भाषा से कोई भी और कैसा भी शब्द नहीं लिया जा

सकता; वही लिया जा सकता है जो बोली जानेवाली जबान के रूप-रंग के—जो उनसे भिन्न है—उपयुक्त हो।

(३) जिन शब्दों को वह लेती है अक्सर उनका उच्चारण बदल देती है जैसे संस्कृत का **अग्नि, आग** हो जाता है और फ़ारसीका **मसवद्दा, मसौदा** हो जाता है।

(४) अक्सर शब्दों को लेते हुये वह उनका मतलब बदल देती है या उनका एकदम नये अर्थ में उपयोग करती है।

(५) वह अक्सर एक नये रूप और नये माने के साथ-साथ शब्द के पुराने रूप को भी क़ायम रखती है, जैसे **चक्र** और **चक्कर**, **चरित्र** और **चरित्तर** इत्यादि।

(६) दूसरी भाषाओंसे शब्दोंको बोलचालकी जबान लेती है, लेकिन खुद अपने अन्दरसे नये शब्द पैदा करनेकी संभावनाओंको वह त्यागती नहीं है। यह बात खास तौरसे मजदूरों और किसानों पर लागू होती है जो नयी सामाजिक जरूरतों को पूरा करने के लिये जबानके विकासमें महान् रचनात्मक खूबी दिखाते है।

ये कुछ थोड़ेसे नियम हैं जिन्हे बोलचाल की जबान पुरानी भाषाओंके सम्बंध में बरतती है।

क्या शब्दोंके आमफ़हम इस्तेमालके नियमोंके विरोधम साहित्यिक ऊपरी ढाँचा बना सकना और आनेवाले कई वर्षों तक साहित्यिक माध्यम के रूपमें क़ायम रख सकना संभव है?

पुराने युगोंका अनुभव हमें सिखाता है कि जब भी और जहाँ भी इस तरह की कोशिशें की गयी हैं वे अन्त में असफल हुई हैं—जब नये वर्गोंने सत्ता ग्रहण की और उन्होंने दबी-कुचली गंदी जबानोंके विकासका दायरा बढ़ाया। कुछ लोग बड़े दावे के साथ कहते हैं कि जनता की जबान और साहित्य की जबान के बीच हमेशा अन्तर बना रहेगा। इसलिये, इन लोगों की रायमें, भले ही आम बोलचालकी जबान कुछ नियमों का अनुसरण करे, यह क़तई जरूरी नहीं कि साहित्य की जबान में भी इन नियमों को अपनाया जाये।

इस दलील के जवाब में यह कहा जाना चाहिये कि इस तरह के अन्तर ऊँचे वर्गों की संस्कृति और आम जनता की संस्कृति के बीच के अन्तर का नतीजा हैं। आखिरी तौर पर उनकी जड़ वर्गों के अन्तर में है। जनवाद और समाजवाद की तरफ जैसे-जैसे जनता आगे बढ़ेगी वैसे-वैसे उन वर्गों के साथ जो इस तरह के अन्तरों को बढ़ावा देते हैं ये अन्तर भी मिट जायेंगे। आज भी प्रगतिशाली साहित्य में—जब हम साहित्यको जनता के संघर्ष का हथियार बनाने की कोशिश करते हैं यह अन्तर मिट रहा है। साहित्य से इस माँग का असर जबान पर—जो बातोंको पहुँचाने का यंत्र है—साफ़ नजर आता है।

(अगले अंक में समाप्त)

Regd. No. B5607

स्तालिन की महान पुस्तक

सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीका इतिहास

सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीके इतिहाससे हम उस महत्त्वपूर्ण अनुभवसे परिचित होंगे जिसे हमारे देशके किसानों और मजदूरोंने समाजवाद के लिये लडकर प्राप्त किया है।

सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीके इतिहासका अध्ययन, मजदूर-वर्ग और मार्क्सवाद-लेनिनवादके सभी शत्रुओंसे हमारी पार्टीके युद्धके इतिहासका अध्ययन, बोल्शेविज़्ममें दक्षता प्राप्त करनेमें सहायक होता है और हमारी राजनीतिक जागरूकता को सतेज करता है।

सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीका इतिहास वीरोंका इतिहास है। उसके अध्ययनसे हमें सामाजिक विकास और राजनीतिक संघर्षके नियमोंका ज्ञान होता है, क्रांतिकी मूल प्रेरक शक्तियोंका ज्ञान होता है।

सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीके इतिहासके अध्ययनसे लेनिन और स्तालिन की पार्टीके ध्येयमें हमारा विश्वास दृढ़ होता है, संसार भरमें कम्युनिज्मकी विजयमें हमारा विश्वास दृढ होता है।

(परिचय · सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टीका इतिहास)

मूल्य ६ रु० ४ आ०

अक्तूबर क्रान्ति और रूसी कम्युनिस्टों की कार्यनीति

(अक्तूबर क्रान्ति के मार्ग पर पुस्तक की स्तालिन द्वारा लिखी भूमिका)

मूल्य ४ आना

वी. एम. कौल द्वारा न्यू एज प्रिंटिंग प्रेस, १९० बी. खेतवाडी मेनरोड, बम्बई ४ में मुद्रित और "जनवादी" आफिस, राजभुवन सैण्डहर्स्ट रोड, बम्बई ४ से प्रकाशित और सम्पादित।

जनवादी

" आप यक़ीन रखें कि भविष्यमें भी, मजदूर-वर्गके लिए, सर्वहारा क्रान्ति और विश्व-कम्युनिज्मके लिए इसी तरह मैं अपनी सारी शक्ति, अपनी सारी बुद्धि और ज़रूरत पड़ने पर अपने हृदयका सारा खून, खूनकी आखिरी बूँद तक लगा दूँगा।"

स्तालिन

[ऊपरके शब्द स्तालिनने अपनी पचासवी वर्षगाठके अवसर पर दुनियाके सभी हिस्सोंसे आये असंख्य अभिनन्दनोका उत्तर देते हुए कहे थे।]

दिसम्बर १९४९ | अंक ९ | मूल्य ६ आना

चन्दा

वार्षिक ४ रु. ८ आ. | छमाही २ रु. ४ आ. | तिमाही १ रु. २ आ.

कॉ. स्तालिन की ६० वीं वर्षगाँठ के अवसर पर १९३९ में लिखा गया लेख

कॉमरेड स्तालिन: विश्व सर्वहाराके महान नेता

★ लेखक जार्जी दिमित्रोव

कॉमरेड स्तालिनकी साठवीं वर्षगाँठ मनाने के लिये सोशलिज्म के विशाल देश की जनताके साथ शामिल होते समय तमाम पूंजीवादी दुनियाके करोड़ों लोगोंके दिल में खुशी और अभिमानकी भावना है, गहरे आदर और अपार स्नेह की भावना है।

पूंजीवादी देशोंके करोड़ों मेहनत करनेवाले लोग स्तालिन को अपना नजदीकी मित्र, बुद्धिमान शिक्षक और महान नेता मानते हैं। मजदूर-वर्गके आन्दोलनके अन्दर, तमाम देशोंके मेहनत करनेवाले लोगोंके अन्दर दुनियाके किसी भी आदमी को इतना अटल विश्वास और आदर नहीं प्राप्त है जितना हमारे स्तालिनको प्राप्त है, जितना इस महान व्यक्तिको प्राप्त है जो मार्क्स, एंगेल्स और लेनिनके कामको आगे बढ़ा रहा है।

कॉमरेड स्तालिन के प्रत्येक सार्वजनिक वक्तव्य को करोड़ों लोग उत्सुकता से सुनते हैं और ध्यानपूर्वक उसका अध्ययन करते हैं। कॉमरेड स्तालिन के शब्दों से प्रेरणा पाकर वे एक से एक वीरतापूर्ण कार्य करते हैं और तमाम दुनिया में सोशलिज़्म की विजय के सम्बंधमें उन्हें उनसे नया विश्वास मिलता है।

स्तालिन के प्रभाव की इस अकूत शक्ति का कारण क्या है? मेहनतकश लोग क्यों उनका इतना आदर करते हैं, क्यों उनको इतना प्यार करते हैं? क्योंकि वे जानते हैं कि उत्पीड़ित और दुखमें पड़ी मनुष्यता के हितों की रक्षा करने के अलावा स्तालिन की और कोई चाह नहीं है, मेहनतकश जनता की भलाई के लिए अर्पित जीवनके अलावा उनका अपना और कोई जीवन नहीं है। क्योंकि वे जानते हैं कि स्तालिन के सम्पूर्ण सैद्धान्तिक और व्यावहारिक कामोंको, उनके सम्पूर्ण जीवनको सोशालिज़्म से अलग नहीं किया जा सकता; वे जानते हैं कि यह उन्हींका नेतृत्व है जिसमें काम करके सोवियत की जनताने सोशलिस्ट समाज का निर्माण किया है और मनुष्य जातिके श्रेष्ठतम विचारकों के युगों-युगोंके स्वप्नों को आजकी गौरवशाली वास्तविकतामें बदल दिया है। क्योंकि मेहनतकश लोग सोवियत संघको अपनी आजादी के

संघर्षका एक अत्यंत शक्तिशाली किला और स्तालिन को विजयी सोशलिज्म के देशका —तमाम दुनिया के मेहनतकशों की मातृभूमिका योग्य खेवनहार समझते हैं। क्योंकि वे जानते हैं कि स्तालिनका और सोवियत जनताका विचार एक है, उनकी और सोवियत जनताकी इच्छाशक्ति एक है, और वह तमाम उत्पीड़ितों, शोषितों और लुटे हुओं की सेवामें लगी हुई है।

स्तालिन के प्रभाव की शक्ति है उनकी महान शिक्षाओं में—जिनकी करोड़ों के अनुभवों के द्वारा परीक्षा हो चुकी है, वह है उनके उद्देश्यों के न्यायपूर्ण होने में, जो अमर कार्यों के द्वारा साबित किये जा चुके हैं। दशाब्दियों से पूँजीपति-वर्ग के मुसाहिब विद्वान लोग कहते आये थे कि सोशलिज़्म एक यूटोपिया है (एक काल्पनिक चीज़ है)। स्तालिनने अब दुनिया की करोड़ों जनताको दिखला दिया है कि सोशलिज़्म एक जीवित वास्तविकता है। दशाब्दियोंसे पूँजीपति वर्गके सिद्धान्तकार कहते आये थे कि किसान की "खोपड़ी सामूहिकता के खिलाफ है" और वह कभी भी सोशलिज़्म को मंजूर नहीं करेगा। स्तालिनने दिखला दिया है कि अगर मजदूर वर्ग का राज कायम हो जाए तो उसके नेतृत्व में किसान अपनी नैयाको हमेशा के लिये सोशलिज़्म के तट पर बाँध देंगे। सोशल-डेमोक्रेटिक धोखेबाज़ कहते थे कि पूंजीवादी जनतंत्र के ज़रिये सोशलिज़्म तक पहुँचा जा सकता है। स्तालिनने कहा कि जनता सोशलिज्म तक केवल सर्वहारा वर्ग की डिक्टेटरशिपके द्वारा ही पहुँच सकती है, पूंजीवादी जनतंत्र प्रतिक्रिया का द्वार खोल देता है और साम्राज्यवादी युद्धों की आग धधकाता है। वे कहते थे कि पूंजीवादी टिकाव (स्थायित्व) के द्वारा मानव जाति "संगठित पूंजीवाद" की मंजिल मे प्रवेश कर जायगी। स्तालिन ने कहा कि पूंजीवाद गहरे गढ़े में गिरेगा, और जबरदस्त उथल-पुथलों से उसका अस्थि-पंजर ढीला पड़ जायेगा।

सही कॉमरेड स्तालिन ही साबित हुए।

जनता अब देख सकती है कि जब कि पूंजीवाद उसे ग़रीबी, भूख और बेकारी के गढ़े में ढकेलता है, जब कि वह ज़बरदस्ती उसे विनाशकारी युद्धोंकी खूनी आग में झोंक देता है; तब, उसी समय, स्तालिन के नेतृत्वमें सोवियत संघ, न सिर्फ अपनी भूमिकी १८ करोड़ ३० लाख जनता को साम्राज्यवादी युद्ध की लपटोंमें फंसने से दूर रखता है, बल्कि युद्धको एक भीषण विश्वव्यापी मार-काट का रूप लेनेके मार्ग में एक जबरदस्त रुकावट की दीवाल भी खड़ी करता है।

दुनिया भर में करोड़ों मेहनतकश लोग स्तालिन को, उनकी शिक्षाओंको और उनके नेतृत्व को, **बोल्शेविक पार्टी की और मार्क्सवाद-लेनिनवाद के क्रान्तिकारी सिद्धान्तों की सर्व-विजयी शक्तिका जीवित रूप मानते हैं, वे उन्हें मज़दूर वर्ग की सर्व-विजयी शक्तिका जीवित रूप मानते हैं।** यही उनके दृढ़ बौद्धिक विश्वास का आधार है; इस विश्वास की तीव्र प्रगतिको कोई भी बाधाएँ नहीं रोक सकतीं; पूंजीवाद की दुनियामें यही विश्वास क्रान्तिकारी योद्धाओं की फौजों को आगे बढ़ा रहा है।

२

पूँजीवादी देशोंका मजदूर-वर्ग, **वर्ग-दुश्मनसे लड़नेकी और उसे हराकर खतम कर देनेकी बोल्शेविक कला स्तालिनसे सीख रहा है और सीखेगा।** सोशलिज्मके विजयी संघर्षके विशाल अनुभवों द्वारा परखी और परीक्षित स्तालिनकी शिक्षाएँ तमाम दुनियाके सर्वहारा वर्गके लिए बौद्धिक हथियारोंका एक अक्षय शस्त्रागार हैं।

जुझारू सर्वहारा-वर्ग स्तालिनसे सबसे पहले यह सीख रहा है कि मजदूर-वर्गकी आज़ादीके संघर्षमें क्रान्तिकारी थ्योरी (सिद्धान्तों) का कितना जबरदस्त महत्व है।

लेनिनने कहा था कि "क्रान्तिकारी थ्योरीके बिना कोई क्रान्तिकारी आन्दोलन नहीं हो सकता"। स्तालिनने अपने तमाम क्रान्तिकारी कामोंमें, बिना जरा भी विचलित हुए, सदा इसी प्रसिद्ध उक्तिको सामने रखा है।

थ्योरी को कॉमरेड स्तालिन कितना अधिक महत्व देते हैं, यह बात सम्भवतः दो साधारण उदाहरणों से कहीं अधिक अच्छी तरह साफ़ हो जायगी। कॉमरेड स्तालिनने पहली रूसी क्रान्ति के ठीक पहले, उसी समय जिस समय कि वे बोल्शेविक पार्टी के निर्माण के और लेनिन की शिक्षाओं पर अवसरवादियों के आक्रमणों के खिलाफ़ संघर्ष में जुटे हुए थे, यह बतलाया था कि मजदूर-वर्गके आन्दोलनका सोशलिस्ट थ्योरीके साथ सम्बंध स्थापित करना कितना जरूरी है। **पार्टी के मतभेदों पर एक नज़र** (१९०५) नामके अपने पैम्फलेट में उन्होंने लिखा था :

> " एक **अपने आप चलनेवाला** (स्वतःस्फूर्त) मजदूर आन्दोलन, ऐसा आन्दोलन जिसमें **सोशलिज़्म नहीं** है, लाज़िमी तौरसे टुटपुंजिया हो जाता है और एक हुनर के मजदूरों के मजदूर सभावादी आन्दोलन का रूप ले लेता है, अपने को पूंजीवादी विचारधारा के मातहत कर लेता है......दूसरी तरफ़, **मज़दूर आन्दोलन के बाहर** सोशलिज़्म केवल एक मुहावरा रह जाता है, और अपना अर्थ खो बैठता है, फिर वह चाहे किन्हीं भी वैज्ञानिक विचारों पर क्यों न आधारित हो...
>
> " नतीजा क्या निकलता है ? मजदूर आन्दोलन को सोशलिज़्म के साथ एक होना चाहिये; व्यावहारिक कामों को थ्योरी के साथ अभिन्न रूपसे जुड़ा होना चाहिए, ताकि अपने-आप चलनेवाले मजदूर आन्दोलन को सोशल-डेमोक्रेटिक अर्थ और रूप दिया जा सके।" +

+ एल. बेरिया, **स्तालिन की आरम्भिक कालकी रचनाएँ और काम;** अ. सं., पृष्ठ ५३-५४।

दूसरा उदाहरण अभी बहुत हालका है। सोशलिस्ट राज्यके पथ-प्रदर्शनके कार्यमें अत्यधिक व्यस्त होनेके बावजूद कॉमरेड स्तालिनने **सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) का इतिहास** की सामग्री इकट्ठा करनेका काम किया और मार्क्सवादी दार्शनिक विज्ञान के सर्वोच्च शिखर द्वन्द्वात्मक और ऐतिहासिक भौतिकवाद वाले भाग को लिखा है। कॉमरेड स्तालिनके इन प्रयत्नोंके फलस्वरूप अब हमें एक अद्वितीय सैद्धान्तिक ग्रंथ, मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तोंसे सम्बंधित बुनियादी ज्ञानका एक विश्व कोष और पूँजीवाद का खात्मा करने और सोशलिज़्मकी स्थापना करनेके संघर्षमें दुनियाके सर्वहारा वर्ग को एक विश्वासी पथ-दर्शक मिल गया है।

कॉमरेड स्तालिन कई दशाब्दियोंसे मार्क्सवादी-लेनिनवादी शिक्षाओंको विकसित करते आये हैं, उनको पूर्णतर और सम्पन्न बनाते आये हैं। उनका विराट परिश्रम **रचनात्मक मार्क्सवाद का मूर्त स्वरूप** है। हर प्रकारके मतवाद के वे कट्टर दुश्मन हैं। सर्वहारा वर्गके वर्ग-संघर्ष की जीवित समस्याओं को बने-बनाए जवाबों और मुर्दा सूत्रोंके द्वारा हल करने की कोशिशों को वे कभी बर्दाश्त नहीं कर सकते।

सिद्धान्तों पर बोल्शेविक दृढ़ता के साथ अडिग रहते हुए भी उनका कितने अत्यधिक लचकीलेपन के साथ इस्तेमाल किया जाना चाहिए, और मार्क्सवादी डायलेक्टिक्स (द्वंद्ववाद) को कितनी योग्यतासे लागू करना चाहिए, इसका खुद एक अत्यंत तेजस्वी उदाहरण पेश करते हुए कॉमरेड स्तालिन ने अनथक रूपसे, हमेशा हमें इस बातकी चेतावनी दी है कि एक देशके मजदूर वर्गके अनुभवको यों ही, यंत्रवत हम दूसरे देशोंमें, जहाँकी परिस्थितियाँ अलग हैं, न लागू करें। वे कहते हैं कि प्रत्येक देशमें, वहाँ की राष्ट्रीय विशेषताओं को ध्यानमें रखते हुए, हमें उसकी प्रत्येक ठोस ऐतिहासिक परिस्थिति का पूरा-पूरा विश्लेषण करना चाहिए, उसकी वर्ग शक्तियाँ किस प्रकार से बँटी हुई हैं इसकी अच्छी तरह जाँच-पड़ताल करनी चाहिए। वे सिखलाते हैं कि कम्युनिस्टों को अपनी रण-नीति और कार्य-नीति का आधार ठोस वास्तविकताओं को बनाना चाहिए, और **थ्योरी (सिद्धान्तों) को निर्जीव मतवादों का संग्रह न समझकर, कार्य का पथ-दर्शक मानना चाहिए।**

लेनिन की पचासवीं वर्षगाँठ के अवसर पर लिखे गये अपने लेखमें कॉमरेड स्तालिनने रचनात्मक मार्क्सवाद और मतवादी (या जड़) मार्क्सवाद के फ़र्क को बहुत जोरदार तरहसे बताया था। मार्क्सवाद के सम्बंधमें प्रथम युद्धसे पहले के दूसरे इन्टर नेशनल वाले अवसरवादियों के दृष्टिकोण से लेनिनके नेतृत्व में रहनेवाले बोल्शेविकों के दृष्टिकोण की तुलना करते हुए, उन्होंने लिखा था :

"दूसरी तरफ, दूसरा दल [अर्थात्, बोल्शेविक—जा. दि.] मुख्य महत्व मार्क्सवाद को ऊपरी रूपमें मान लेने को नहीं देता, बल्कि उसको सफल बनानेको, उसको वास्तविकता का रूप देनेको देता है। यह दल जिस चीज़ पर मुख्य ध्यान देता है वह है उन उपायों और साधनों को ढूंढ़ निकालना जिनके द्वारा दी हुई परिस्थितिमें मार्क्सवाद को सफल बनाया जा सके, और जब यह परिस्थिति बदल जाए तो उन उपायों और साधनों को भी बदल दिया जाए। वह इतिहास के उदाहरणों और समान घटनाओं के आधार पर अपना पथ निश्चित नहीं करता, उनसे नहीं सीखता, बल्कि वह अपने मार्गको चारों तरफ़ की परिस्थितियों के आधार पर निर्धारित करता है। अपने कामोंका आधार वह उद्धरणों और उक्तियों को नहीं, बल्कि व्यावहारिक अनुभव को बनाता है; अपने हर कदम को वह अनुभव की कसौटी पर कसता है, अपनी गल्तियों से वह सीखता है और दूसरों को सिखलाता है कि नये जीवनका निर्माण किस प्रकार किया जाना चाहिए। वास्तव में यही कारण है जिससे इस दल के कामों में कथनी और करनी का फर्क नहीं होता और मार्क्स की शिक्षाओं की जीवित, क्रान्तिकारी शक्ति पूर्णतया कायम रहती है। मार्क्स के इस कथन को कि मार्क्सवादी केवल दुनिया की व्याख्या करके ही नहीं सन्तुष्ट हो सकते, उन्हें आगे बढ़ना चाहिये और उसे बदल देना चाहिये— इस दल के ऊपर पूर्ण रूपसे लागू किया जा सकता है। इस दल का नाम है—बोल्शेविक, कम्युनिस्ट।"

मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तों को आगे बढ़ाने के साथ ही साथ कामरेड स्तालिनने अवसरवादियों द्वारा लेनिनवाद को तोड़ने-मरोड़ने और उसको गलत रूपमें पेश करने की तमाम कोशिशों के विरुद्ध निर्मम संघर्ष किया है और आज भी कर रहे हैं।

नीति की ग़द्दारी का आरंभ आम तौर से सिद्धान्तों के संशोधनवाद से हुआ है। यही दूसरे इण्टरनेशनल के अवसरवादियों के केसमें हुआ था। यही मेन्शेविकों के केसमें हुआ था। यही ट्राटस्की-पंथियों, बुखारिनवादियों और जिनोवियेववादियों तथा पार्टी और मजदूर वर्ग के दूसरे दुश्मनों के केस में हुआ था। क्रान्तिकारी थ्योरी की शुद्धता को कायम रखने के लिए संघर्ष चलाना और उसे भ्रष्ट करने और तोड़ने-मरोड़ने की कोशिशों के विरुद्ध निर्मम संग्राम करना, बोल्शेविज़्म की अभिन्न विशेषताएँ हैं। बोल्शेविज़्म के नेता और सिद्धान्तकार, लेनिन और स्तालिनने इस संघर्ष को सबसे ऊँचा महत्व दिया है और उसमें खुद भी निरन्तर लगे रहे हैं।

लेनिनवादकी रक्षा किस तरह करनी चाहिए—कॉमरेड स्तालिनके तमाम काम इस बातका एक ऐसा अद्वितीय उदाहरण हैं कि उससे बेहतर कोई चीज़ हो नहीं सकती। जिस तरह कि एक लम्बे संघर्ष के द्वारा लेनिनने मार्क्सवादको संशोधनवादी

" सिद्धान्तकारों " के एक पूरे गिरोहसे बचाया था, और उसे बधिया करनेकी, उसके क्रान्तिकारी रूपको हरनेकी उनकी तमाम कोशिशोंको निष्फल किया था, उसी तरहसे कॉमरेड स्तालिनने-मार्क्सवाद-लेनिनवादको बचाया है और दुश्मनके एजेण्टोंके द्वारा इस थ्योरीको गन्दा करनेकी, और इस तरह सर्वहारा वर्गको नपुंसक कर देनेकी निकम्मी कोशिशोंको नाकाम किया है।

मजदूर-वर्ग की उन्नत थ्योरी की शुद्धता को कायम रखनेके लिये कॉमरेड स्तालिन की निरन्तर चिन्ताका और इस थ्योरी के विकास में दी हुई उनकी सहायता का महत्त्व आज की परिस्थितियों में और भी विशेष है। मजदूर-वर्ग के दुश्मनों ने तमाम पूंजीवादी मुल्कोंके अन्दर इस थ्योरी (सिद्धान्त) के खिलाफ़ जेहाद छेड़ दिया है। साम्राज्यवादी युद्धके और दुनिया के प्रतिक्रियावादियों के आक्रमणके सम्बंधमें क्रान्तिकारी मार्क्सवाद के विरुद्ध, कम्युनिज़्म के विरुद्ध एक बर्बर आन्दोलन शुरू कर दिया गया है। दुश्मन मार्क्सवादी-लेनिनवादी थ्योरी से जी-जानसे नफ़रत करते हैं क्योंकि वे देखते हैं कि जनता के ऊपर उसका प्रभाव फैल रहा है, वह एक भौतिक शक्ति बनती जा रही है, और मेहनतकश जनताको वह बतला रही है कि साम्राज्यवादी युद्ध का मुकाबला करनेका, पूंजीवादी प्रतिक्रिया और पूंजीवादी गुलामी से युद्ध करनेका सही रास्ता क्या है।

मजदूर वर्ग को सैद्धान्तिक रूपसे निरस्त्र करने के लिये पूँजीपति-वर्गने अपनी सारी ताकत अड़ा दी है। पूँजीपति-वर्ग के विद्वान ख़िदमतगारों की मददसे ईसाइयोंके गिर्जोंने मार्क्सवाद के विरुद्ध जंग छेड़ दी हैं। दूसरे इण्टरनेशनल के साम्राज्यवादी एजेण्ट उनका समर्थन कर रहे हैं। प्रोपेगैण्डा के लिए विशेष प्रचार-विभाग तैनात किये गये हैं, और वे मार्क्सवाद के विरुद्ध एक बकवासी और बुद्धिहीन वितण्डावाद फैला रहे हैं। प्रतिक्रियावादियों के रखैल गुण्डों के बर्बर जत्थे लेनिन और स्तालिन की पुस्तकों को जला और नष्ट कर रहे हैं।

लेकिन पूँजीवादियों की तमाम कोशिशें—सूक्ष्म धोखाधड़ी के साथ-साथ पुलिसके भीषण दमन, मिलाने-फुसलानेकी कोशिशों के साथ-साथ धमकियाँ, भ्रष्ट करनेकी कोशिशोंके साथ-साथ कोर्ट-मार्शलकी सजाएँ, जो वे अपने मार्क्स-विरोधी जेहादमें कर रहे हैं— बेकार हैं। वे बेकार हैं क्योंकि आगे बढ़े हुए मजदूर मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तों को कॉमरेड स्तालिनसे सीख रहे हैं; वे उनसे सीख रहे हैं कि इन सिद्धान्तोंके तमाम दुश्मनोंके आक्रमणोंसे किस तरह उनकी रक्षा की जाय, किस तरह उन्हें तमाम आम मजदूरों तक ले जाया जाए, किस तरह उनका सम्बंध असली वर्ग संघर्ष के साथ जोड़ा जाय, और किस तरहसे अन्तरराष्ट्रीय मजदूर वर्गके आन्दोलन पर उनके अविभाजित प्रभुत्वको कायम किया जाय।

[३]

पूँजीवादी देशोंके मजदूर कॉमरेड स्तालिनसे **मज़दूर वर्गकी पार्टीकी अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिकाको समझना भी** सीख रहे हैं। वे उनसे उसे बनाने और मजबूत करनेकी कला, उसके लड़नेकी शक्तिको और हर तरहकी पैंतरेबाज़ीकी योग्यता को बढ़ाने की कला सीख रहे हैं, वे उनसे मजदूर जनता के साथ उसके सम्बंधोंको और व्यापक बनाने की कला सीख रहे हैं। वे उनसे दूसरी तमाम श्रमजीवी जनता के ऊपर मज़दूर-वर्ग का नेतृत्व स्थापित करने की बोल्शेविक कला सीख रहे हैं। स्तालिन द्वारा लिखे सोवियत संघकी कम्युनिस्ट (बोल्शेविक) पार्टीके गौरवशाली और वीरतापूर्ण इतिहास के शानदार अहवालमें मज़दूर-वर्ग के उद्देश्य के लिए पार्टीका क्या महत्व है, इसका अद्वितीय विवरण दिया गया है।

> "पार्टीका इतिहास, सबसे पहले, हमें यह सिखलाता है कि सर्वहारा क्रान्ति की विजय, सर्वहारा वर्ग की डिक्टेटरशिप, सर्वहारा वर्गकी क्रान्तिकारी पार्टीके बिना असंभव है, वह एक ऐसी पार्टी के बिना असंभव है जो अवसरवादसे मुक्त हो, जो समझौतापरस्तों और घुटना टेकने वालों के प्रति निर्मम हो और जिसका दृष्टिकोण पूंजीपति वर्ग और राज्य-शक्तिके सम्बंधमें क्रान्तिकारी हो।"
> **(सो. सं. की क. पार्टी (बो०) का इतिहास,** दूसरा हिन्दी संस्करण, पृष्ठ ३७८)

इस पार्टी को—जिसके समान इतिहासमें दूसरी कोई पार्टी नहीं हुई—बनाना, मजबूत करना, ढालना और उसका अधिक से अधिक विकास करना, यही कॉमरेड स्तालिन के प्रयत्नोंका मुख्य उद्देश्य रहा है और आज भी है।

अक्तूबर क्रान्ति के दशाब्दियों पहलेसे ज़ार-कालीन रूस में एक क्रान्तिकारी का कठिन जीवन बिताते हुए और अण्डरग्राउण्ड रहकर काम करते हुए, और बादमें, नयी सोवियत राज की परिस्थितियों में भी, कॉमरेड स्तालिनने, लेनिन के साथ मिलकर, बोल्शेविक पार्टी को बनाने, पक्का करने और मजबूत बनानेका काम लगातार, हर दिन, किया है। पार्टी के निर्माण के इस कामको कोई भी चीज़ नहीं रोक सकी थी, न ज़ारकी पुलिसका ज़ोरो-ज़ुल्म, न अस्थायी सरकारका दमन, न पूंजीपतियोंके हथकण्डे, और न मेन्शेविकों, ट्राट्स्की-पंथियों और दूसरे एजेण्टोंकी विरोधी कार्रवाईयाँ।

लेनिन और स्तालिनने हर रुकावटको रास्ते से साफ़ कर दिया और पुरानी दुनिया की तमाम ताकतों के विरोध को चकनाचूर कर दिया क्योंकि इस लड़ाई में बोल्शेविक नेताओं के पीछे मज़दूर-वर्ग की जबरदस्त ताकत थी और वे उसके ऐतिहासिक कार्यको पूरा कर रहे थे। न बोल्शेविक पार्टीको और गठी हुई बनानेका और उसका विकास करनेका काम, ट्राट्स्की-पंथियों, ज़िनोवियेव-पंथियों और बुख़ारिन-पंथियों की—

जिन्होंने लेनिनकी मृत्युके बाद पार्टीके ऊपर और बोल्शेविक पार्टीके मूल सिद्धान्तों के ऊपर और भी चौगुनी खूंखारीके साथ हमला बोल दिया था—तोड़-फोड़की घृणित हरकतों से ही रुक सका था।

स्तालिन ने दुश्मनों के तमाम हथकण्डों को बेकार कर दिया, मजदूर वर्गके विजयी मार्गसे हटाकर उनका सफाया कर दिया, पार्टीकी लौह एकता को और भी दृढ़ किया और उसे विजय के सर्वोच्च शिखर पर पहुँचा दिया। पूंजीवादी-जनवादी और सोशलिस्ट—दोनों क्रान्तियों के युगों में बोल्शेविक पार्टी के निर्माण-कार्य में जो महान ऐतिहासिक अनुभव मिला था, स्तालिन ने उस सब को बटोरकर इकट्ठा किया, उसके आधार पर आम परिणाम निकाले और उनके अस्त्रसे दुनिया भर के सर्वहारा वर्ग को लैस कर दिया।

स्तालिन द्वारा लिखा हुयी **सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) का इतिहास** का " परिणाम " अत्यधिक स्पष्टता, गहराई और शुद्धता के साथ बतलाता है कि बोल्शेविक पार्टी क्या थी और है—पूंजीवादी मुल्कोंकी सर्वहारा पार्टियों के लिए वह एक आदर्श है।

मजदूर-वर्ग के लिये संगठनका क्या महत्व है, इस बात को बोल्शेविज़्म के उदय कालमें ही लेनिनने अपनी प्रसिद्ध थीसिसमें स्पष्ट कर दिया था। उन्होंने सिखलाया था कि " राज्यसत्ता पर कब्जा करनेके संघर्ष में सर्वहारा वर्गके पास अपने संगठनके अलावा और कोई अस्त्र नहीं है। " और सर्वहारा वर्गके इस संगठनका सबसे मूर्त रूप है उसकी **पार्टी**। पार्टी मजदूर वर्गका हिरावल है, उसकी सेनानायक है, जिसके बिना सर्वहारा वर्ग की शक्तियों को संगठित करना या उसके शक्तिशाली वर्ग-संगठनों को बना सकना या विजय प्राप्त करने के लिये शहरों और गाँवों में मजदूर वर्ग और दूसरे मजदूर पेशा लोगों के बीच मैत्री कायम करना असंभव होता। इसलिए पूंजीवादी **देशों के मज़दूर वर्गके सामने** एक बड़ा और बुनियादी काम, **अत्याधिक महत्वका काम यह है कि वे सच्ची क्रान्तिकारी पार्टियोंका निर्माण करें, नयी तरह की पार्टियाँ बनाएँ**।

इस तरह की पार्टियाँ बनाने के लिये जरूरत किस चीज की है?—कम्युनिस्ट पार्टियों को बोल्शेविक बनाने के एक अनवरत संघर्ष की। कॉमरेड स्तालिनने एक तरफ़ बोल्शेविक पार्टी के ऐतिहासिक अनुभवको लेकर, और दूसरी तरफ उन विशेष परिस्थितियों को देखते हुए जिनके अन्दर पूँजीवादी देशोंमें कम्युनिस्ट आन्दोलन बढ़ रहा है, हमें बताया है कि **बोल्शेविक बनाने (बोल्शेवीकरण) के माने क्या हैं और इस कामको कैसे किया जा सकता है**।

१९२५ में उन्होंने लिखा था :

" बोल्शेविक बनाने के लिए कमसे कम कुछ बुनियादी शर्तें जरूरी हैं, जिनके बिना कम्युनिस्ट पार्टियों का बोल्शेवी-करण करना आम तौरसे असंभव है।

"(१) पार्टियोंको अपनेको न तो पार्लामेन्टकी चुनाव मशीनका एक पुछल्ला समझना चाहिए, जैसा कि सोशल-डेमोक्रेटिक पार्टियाँ वास्तवमें अपनेको समझती हैं; और न उन्हें अपनेको मजदूर सभाओं का स्वतंत्र परिशिष्ट (उनका उपयोगी अंश जो अलग है—अनु०) समझना चाहिए, जैसा कि कुछ अराजकतावादी सिण्डीकल-वादी दावा करते हैं; बल्कि, उन्हे अपनेको सर्वहारा वर्ग के वर्ग संगठन का ऐसा **सबसे ऊंचा** स्वरूप समझना चाहिए जिसका उद्देश्य सर्वहाराके संगठनके तमाम दूसरे स्वरूपों का—मजदूर सभाओं से लेकर पार्लामेण्टरी दलों तक का-नेतृत्व करना है।

"(२) पार्टी को, खास तौर से उसके मुख्य व्यक्तियों को मार्क्सवाद की क्रान्तिकारी थ्योरी में—जो कि अटूट रूपसे क्रान्तिकारी व्यवहारसे जुड़ी हुई है—पूर्ण रूपसे पारंगत होना चाहिए।

"(३) पार्टीको अपने नारों और आदेशोंका आधार रटे हुए सूत्रों और ऐतिहासिक उदाहरणों को नहीं बनाना चाहिए, बल्कि, उनका आधार उसे बनाना चाहिए देश और विदेश की प्रत्यक्ष परिस्थितियों के सावधानी से किये गये विश्लेषणको—जिसमें कि तमाम देशोंकी क्रान्तियों का अनुभवका शामिल किया जाना नितान्त आवश्यक है।

"(४) पार्टीको अपने नारों और आदेशोंको जनताके क्रान्तिकारी संघर्षों की आगमें परखना चाहिए।

"(५) पार्टीके पूरे कामको—खास तौरसे अगर वह सोशल डेमोक्रेटिक परम्पराओं से अभी तक अपना पल्ला नहीं छुड़ा सकी है—एक नये, क्रान्तिकारी आधार पर इस तरहसे संगठित करना चाहिए कि उसके हर कदम और हर कार्य से स्वाभाविक रूपसे जनता क्रान्तिकारी बने, मजदूर-वर्ग की जनताको क्रान्ति की भावना में ट्रेनिंग और शिक्षा मिले।

"(६) पार्टी को इस योग्य होना चाहिये कि अपने काममें सिद्धान्तों के प्रति पूर्णतम वफ़ादारी के साथ-साथ (जिसको संकुचित मनोवृत्तिसे नहीं मिला देना चाहिये!) वह जनताके साथ अधिकसे अधिक सम्बंध और सम्पर्क भी (जिसको पुच्छवाद से नहीं मिला देना चाहिये!) स्थापित कर सके, जिसके विना पार्टीके लिये न सिर्फ जनताको सिखाना बल्कि उससे सीख सकना भी असंभव है। इसके विना न सिर्फ़ जनताका नेतृत्व करके उसे पार्टीके स्तर तक उठाना, बल्कि जनता की आवाज को सुनना और उसकी आवश्यकताओंको समझना भी असंभव है।

"(७) पार्टी को इस योग्य होना चाहिये कि अपने काममें निर्द्वन्द क्रान्तिकारी भावना के साथ-साथ (जिसको क्रान्तिकारी दुस्साहसिकतासे नहीं मिला देना चाहिये!) वह अधिक से अधिक लचकीलेपन और पैंतरेबाजीकी

क्षमताका (जिसे अवसरवाद से नहीं मिला देना चाहिए !) मेल कर सके, जिसके बिना पार्टीके लिए संघर्ष और संगठनके तमाम रूपों में पारंगत होना, सर्वहारा वर्गके रोजमर्रा के हितों के साथ अपना सम्बंध जोड़ पाना और कानूनी संघर्षको गैर-कानूनी संघर्षके साथ मिलाकर चलाना असंभव है।

"(८) पार्टीको अपनी ग़ल्तियोंको छिपाना नहीं चाहिए, उसे आलोचनासे नहीं डरना चाहिए, उसमें इस बातकी योग्यता होनी चाहिए कि अपनी ग़ल्तियोंके उदाहरणोंका इस्तेमाल करते हुए अपनी शक्तियोंको उन्नत और शिक्षित कर सके।

"(९) पार्टीको इस योग्य होना चाहिए कि वह सबसे आगे बढ़े हुए लड़ाकों के सर्वश्रेष्ठ लोगों का नेतृत्व करनेवाला एक बुनियादी दल बना सके जो इतना तत्पर हो कि क्रान्तिकारी सर्वहारा वर्ग की इच्छा-आकाक्षाओं का सच्चा प्रतिनिधि बन सके, और इतना अनुभवी हो कि सर्वहारा क्रान्ति का वास्तविक नेता बन सके, लेनिनवाद की कार्यनीति और रण-नीति को लागू कर सके।

"(१०) पार्टीको व्यवस्थित रूपसे अपने सगठनोंके सामाजिक गठनको उन्नत करना चाहिए, और अपने सदस्यों को अधिकसे अधिक मात्रा में एकरंगी (मोनोलिथिक) बनाने के उद्देश्यसे गंदगी फैलानेवाले तमाम अवसरवादी तत्वों को अपने से बाहर कर देना चाहिए।

"(११) पार्टी को, विचाराधारा सम्बंधी पूर्णतम एकता, आन्दोलन के उद्देश्योंके सम्बंध में स्पष्टता, व्यावहारिक कार्यों के सूत्रोंको उचित ढंगसे मिलाने की शक्ति और पार्टी के उद्देश्यों के सम्बंध में आम सदस्यों की सही समझ के आधार पर अपने अन्दर लौह अनुशासन कायम करना चाहिए।

"(१२) पार्टीको, उसके फैसलों और आदेशोंको किस तरहसे पूरा किया जा रहा है, इसको व्यवस्थित रूपसे चेक करना चाहिए; इसके बिना खतरा है कि उसके फैसले और आदेश केवल खोखले वादे बन जाएँ, जिससे पार्टीमें आम सर्वहारा जनता का विश्वास केवल घट ही सकता है।

"इनके और इसी तरह की दूसरी चीजों के बिना बोल्शेविक बनाने की बात केवल एक खाली बकवास है।" [**प्रावदा, ३ फ़रवरी, १९२५**]

बोल्शेवीकरण की स्तालिन द्वारा बतायी हुई शर्तों ने अन्तराष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन के विकास और सगठन में बहुत जबरदस्त मदद दी है और अब भी दे रही हैं। पार्टी के इतिहास में उनके महत्व की तुलना लेनिन की सर्व-प्रसिद्ध पुस्तकों, **क्या करना है ?** और **एक क़दम आगे, दो कदम पीछे** की भूमिका से की जा सकती है।

कॉमरेड स्तालिन द्वारा निर्धारित किये गये इन उच्च सिद्धान्तोंका महत्व आज की परिस्थितियोंके कारण असीम रूपसे बढ गया है। उसके बढनेका कारण यह है कि साम्राज्यवादी युद्ध और जोरोंसे फैली हुई विश्व-व्यापी प्रतिक्रियाके बीच मजदूर वर्गके

अन्तरराष्ट्रीय आन्दोलनके अन्दर गहरी तब्दीलियाँ हो रही हैं जिनकी वजहसे कम्युनिस्ट पार्टियोंके सामने नित नये-नये और जटिल काम आ रहे हैं। उसके बढ़नेका कारण यह है कि सोशल-डेमोक्रेटिक लीडरोंकी दगाबाजीके कारण करोड़ों सोशल-डेमोक्रेटिक मजदूर आज अपनेको एक दोराहे पर खड़ा पाते हैं; उनमे जो सबसे अच्छे हैं वे अधिकाधिक स्पष्टतासे इस बातको समझते जा रहे हैं कि कम्युनिस्टोंके साथ मिलकर संयुक्त संघर्ष चलाना आवश्यक है। और मजदूर वर्गकी लड़ाकू एकता अब कितनी तेजीसे कायम की जा सकती है यह अधिकतर कम्युनिस्टों की बोल्शेविक निपुणता पर निर्भर करेगा। स्तालिन के सिद्धान्तोंका महत्व इस बातसे और भी ज़्यादा बढ़ जाता है कि कम्युनिस्ट पार्टियों को मजदूर वर्गके आन्दोलन के अन्दरसे पूंजीपति वर्ग के एजेण्टों को निकाल बाहर करनेके अत्यधिक जरूरी काम को पूरा करना है, जिससे कि उसे (आन्दोलनको) निर्णयात्मक रूपसे एक सच्ची-सर्वहारा नीतिके अनुसार चलाया जा सके।

कॉमरेड स्तालिन से सीखकर पूँजीवादी देशोंकी कम्युनिस्ट पार्टियोंने भी अपनी पार्टियोंको बोल्शेविक बनाने में काफी सफलताएँ प्राप्त की हैं। सैद्धान्तिक रूपसे, राजनीतिक रूपसे और संगठनात्मक रूपसे उन्होंने विकास किया है; अपने अन्दर से बाहर के अवसरवादी लोगोंको निकाल बाहर करके अपनी सफ़ाई के लिए उन्होंने काफ़ी ज़्यादा काम किया है; अपने सदस्यों के मेलको उन्होने मजबूत किया है; और, जैसा कि हालकी घटनाओं ने दिखला दिया है, सही मार्ग से हटे बिना वे कठिन परीक्षाओं में सफल हुई हैं। लेकिन वे महसूस करती हैं और समझती हैं कि वास्तविक बोल्शेविक पार्टियाँ बनने के लिए उनमें अब भी बहुत कमी है।

और **कम्युनिस्ट आन्दोलन के अन्दर बोल्शेवी-करण के स्तालिनी सिद्धान्तों को व्यावहारिक रूप देनेके लिए** कम्युनिस्ट लोग और भी अधिक शक्ति और लगन से काम करेंगे, क्योंकि इसके बिना मजदूर वर्गकी विजय नहीं हो सकती।

[४]

पूंजीवादी देशोंके उन्नत मजदूरोंने कॉमरेड स्तालिन से सीखा है और अब भी सीख रहे हैं कि **मज़दूर वर्गके अन्दर घुसे हुये पूंजीपति-वर्ग के असर और उसके एजेण्टोंके ख़िलाफ़ बोल्शेविक संघर्ष किस प्रकार करना चाहिए।** सम्पूर्ण मजदूर वर्गके बुनियादी हितों के लिए जरूरी है कि इस बात का पता फौरन लगा लिया जाय कि यह असर (पूंजीपति-वर्गका असर—अनु०) किन व्यक्तियों और रास्तों के जरिए अन्दर आता है; उन लोगो का नकाब फाड दिया जाए जो सर्वहारा

सोशल डेमोक्रेटवाद, जो शुरू हुआ था मार्क्सवाद में संशोधन करनेसे और खतम हुआ उसकी पूर्ण तिलांजलि से, जिसने दशाब्दियों से मजदूर-वर्ग के आन्दोलन के अन्दर लोगों के मनोबल को कमजोर करने और आन्दोलन को असंगठित करने के एक अस्त्र का काम किया है, अब मज़दूर-वर्ग को दबाने का एक अस्त्र, प्रतिक्रिया, साम्राज्यवादी युद्ध और सोशलिज़्म के देश पर क्रान्ति-विरोधी हमले का एक अस्त्र, बन गया है।

एक सेवा जो कॉमरेड स्तालिनने दुनियाके सर्वहारा वर्ग की है यह है कि सोशल-डेमोक्रेटवाद के खिलाफ उन्होंने दशाब्दियों से निर्मम संघर्ष किया है, उन्होंने उसकी सामाजिक जड़ों को और उसके प्रभावके कारणों को खोल कर रख दिया है और उसे परास्त करने और मिटानेके उपाय और साधन भी बताये हैं। अक्तूबर क्रान्ति की दसवीं वर्ष गाँठ के अवसर पर कॉमरेड स्तालिनने लिखा था,

> "सोशल-डेमोक्रेटवाद आज पूंजीवादका सैद्धान्तिक स्तम्भ है......जब तक हम मज़दूर-वर्गके आन्दोलन को सोशल-डेमोक्रेटवाद से छुटकारा नहीं दिलाते तब तक हम पूंजीवाद से भी छुटकारा नहीं पा सकते।"

इस परिणाम के गंभीर सत्यको पूंजीवादी देशोंके मजदूर वर्ग के आन्दोलन के सम्पूर्ण अनुभव ने सिद्ध कर दिया है। अब सोशल-डेमोक्रेटिक मजदूर भी इसे समझ रहे हैं और अपने लीडरों की विश्वासघातक नीति के खिलाफ़ अधिकाधिक क्रोध दिखला रहे हैं।

कम्युनिस्ट पार्टियों का एक सब से अधिक महत्वपूर्ण काम यह है कि वे उन मजदूरोंको जो सोशल-डेमोक्रेटवाद के नुकसानदेह चक्कर में फंस गये हैं, उसके प्रभाव से निकालने के लिये संघर्ष करें, उन्हें कम्युनिस्ट मजदूरों के साथ संयुक्त संघर्षों में लायें; और मज़दूर-वर्ग के अन्दर से सोशल-डेमोक्रेटवाद को पूर्णतया मिटा देने के लिए डटकर मोर्चा लें। और वे इस काम को सफलतापूर्वक पूरा करने की कला कॉमरेड स्तालिन से सीख रहे हैं और बराबर सीखते रहेंगे।

[५]

दुनिया के मजदूर वर्ग की नजरोंमें कॉमरेड स्तालिन ऐसे सर्वहारा नेता हैं जिनमें उस वर्गकी,—जिसका ऐतिहासिक कार्य दुनिया का पुनः निर्माण करना है, समस्त श्रेष्ठतम विशेषताओं, खूबियों और गुणों का आदर्श रूप से समावेश है।

स्तालिन सर्वहारा अन्तरराष्ट्रीयता के हमारे सर्वश्रेष्ठ समर्थक हैं। उनका तमाम काम और शिक्षाएँ—मार्क्स, एंगेल्स और लेनिनके काम और शिक्षाओं की ही तरह

पूर्ण रूपसे सर्वहारा अन्तरराष्ट्रीयता की भावनासे ओत-प्रोत हैं। इस अन्तरराष्ट्रीयता की गहरी जड़ें मजदूर वर्गकी प्रकृतिमें ही मौजूद हैं।

स्तालिन उतने ही अन्तरराष्ट्रीय हैं जितना कि मजदूर वर्ग अन्तरराष्ट्रीय है। स्तालिन उतने ही अन्तरराष्ट्रीय हैं जितना कि बोल्शेविज्म अन्तरराष्ट्रीय है। स्तालिन उतने ही अन्तरराष्ट्रीय हैं जितनी कि वे मार्क्सवादी–लेनिनवादी शिक्षाएँ अन्तरराष्ट्रीय हैं, जो दुनिया के तमाम शोषितों और उत्पीड़ितों को उनकी मुक्ति का मार्ग वतलाती हैं। कॉमरेड स्तालिन के सैद्धान्तिक और व्यावहारिक कार्योंका सम्बंध तमाम देशों, राष्ट्रों और नस्लों के मजदूरोंके हितों से है।

कॉमरेड स्तालिन राष्ट्रवाद और अंध-राष्ट्रवाद के खिलाफ़—जिन्हें पूँजीवादी और उनके सिद्धान्तकार जी-जान से बढ़ाने की कोशिशें करते हैं—अत्यंत निर्मम संघर्ष करते हैं। लेनिन ही की तरह उन्होंने भी दुनिया के सर्वहारा लोगों के और सोवियत संघ की काम करनेवाली जनता के दिमाग में हमेशा सर्वहारा अन्तरराष्ट्रीयता की भावना भरी है। हमे वे सिखाते हैं कि सोवियत सोशलिस्ट प्रजातंत्रों के सघ में सोशलिज्म की विजय पूजीवादी देशों की श्रमजीवी जनता के मुक्ति संग्राम का एक अत्यंत शक्तिशाली सम्बल है। सोवियत जनताको वे सिखलाते हैं कि उसकी यह विजय अन्तरराष्ट्रीय मजदूर वर्ग के समर्थन के विना असभव होती। वे हमें सिखलाते हैं कि सोवियत संघ की जनता की सफलताएँ पूँजीवादी देशोंकी श्रमजीवी जनताको शोषकोंके विरुद्ध संघर्षमे शक्तिशाली बनानेमें मदद देती हैं। वे हमें सिखलाते हैं कि पूँजीवादी देशोंकी श्रमजीवी जनताका संघर्ष कम्युनिज़्मकी ओर प्रगतिमें सोवियत संघको सहायता पहुँचाता है। कॉमरेड स्तालिनकी प्रगाढ़ सर्वहारा अन्तरराष्ट्रीयता को पूँजीवादी देशोंके मजदूर हर रोज महसूस करते हैं। वे स्तालिनको केवल सोवियत संघकी जनताका ही नेता नहीं समझते, बल्कि तमाम दुनियाके सर्वहारा-वर्गका नेता समझते है, ऐसा नेता जिसने उनकी सबसे प्रिय आशाओं और आकांक्षाओंकी पूर्तिके काममे अपना जीवन लगा दिया है।

अन्तरराष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलनका उद्देश्य कॉमरेड स्तालिनके नामके साथ अभिन्न रूपसे जुड़ा है। बोल्शेविक पार्टीका निर्माण करनेके लिये अपने अनथक प्रयत्नोंसे, रूस और अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्रमें अवसरवादके खिलाफ़ अपने लम्बे और निर्मम संघर्षसे, वर्ग सघर्षकी नयी परिस्थितियोंके अनुसार मार्क्सवादका विकास करके और सोवियत संघके अन्दर महान सोशलिस्ट क्रान्तिको विजयी वनाकर लेनिन और स्तालिनने कम्युनिस्ट इन्टरनेशनलकी नींव डाली थी। कम्युनिस्ट इन्टरनेशनलकी रचना उनकी महान शिक्षाओंके अराधापर की गयी थी, इन्हीं शिक्षाओंके आधार पर उसने सघर्ष किया है और आज भी कर रहा है। उसके तमाम कार्योंका निर्देशन उसी गौरवशाली वोल्शेविक पार्टीके सघर्षोंसे मिली शिक्षाओंके आधार पर हुआ है जिसके वे निर्माता हैं। **कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल लेनिन और स्तालिनका इन्टरनेशनल है,** उसी तरह जिस तरह पहला इण्टरनेशनल मार्क्स और एंगेलसका इण्टरनेशनल था।

सोशल-डेमोक्रेटिक टहलुए, कम्युनिस्टों को चोट पहुँचाने की कोशिश में, ताना देते हुए उन्हें "स्तालिनवादी" कहते हैं। लेकिन हम कम्युनिस्टों को इस सम्मानपूर्ण नामसे पुकारे जाने पर अभिमान है, उसी तरह जिस तरह कि हमें लेनिनवादी कहे जाने पर अभिमान है। एक सर्वहारा क्रान्तिकारी के लिए एक असली **लेनिनवादी** होनेसे, एक असली **स्तालिनवादी** होनेसे बढ़कर इज्जतकी और कोई चीज नहीं है, उसके लिए लेनिन और स्तालिन का पूर्ण रूपसे वफादार शिष्य होने से बढ़ कर इज्जत की और कोई चीज नहीं है। कम्युनिस्टों के लिए दुनिया के सर्वहारा-वर्ग के न्यायपूर्ण उद्देश्यों की विजय के लिए महान स्तालिनके नेतृत्वमें लड़ने से बढ़कर खुशी की और कोई चीज नहीं है।

हर आदमी स्तालिनवादी नहीं हो सकता। लेनिनवादी-स्तालिनवादी की सम्मान-पूर्ण उपाधि बोल्शेविक प्रयत्नों और वफ़ादारी के द्वारा, मजदूर-वर्ग के उद्देश्यों के प्रति पूर्णतम लगन के द्वारा प्राप्त की जा सकती है। **सर्वहारा-वर्ग के लेनिनवादी-स्तालिनवादी वीरों का रक्षक-दल—अन्तरराष्ट्रीय सर्वहारा आन्दोलन का बहुमूल्य रिज़र्व**—दिनोंदिन बढ़ रहा है, दुनिया के कोने-कोने में फैल रहा है और शक्ति-सपन्न हो रहा है। मजदूर वर्ग के हितों और उसकी आवश्यकताओं के बारे में बोलने का हक केवल उन्हीं को है—साम्राज्यवाद के घृणित सोशल-डैमोक्रेटिक चाकरों को नहीं। और मार्क्स-एंगेल्स-लेनिन-स्तालिन के झण्डे के नीचे यही गौरवशाली रक्षक दल—पुरानी दुनिया की ताकतों के खिलाफ़ दुनिया के अन्तरराष्ट्रीय सर्वहारा-वर्ग की विजय-यात्राका नेतृत्व करेगा।

लेकिन बोल्शेविक जानते हैं कि विजय अपने आप कभी नहीं आती, उसे हासिल करने के लिये लड़ना होता है। **हमें स्तालिनसे सीखना चाहिए कि रचनात्मक मार्क्सवादका अर्थ क्या है; हमें स्तालिनसे सीखना चाहिए कि बोल्शेविक पार्टी को किस तरह बनाना चाहिए; हमें स्तालिनसे सीखना चाहिए कि जनता के साथ अपने सम्बंधोंको प्रत्येक परिस्थितिमें किस प्रकार मज़बूत करना चाहिए; हमें स्तालिनसे सीखना चाहिए कि सोशल-डेमोक्रेटवाद के खिलाफ़ किस तरह लड़ना चाहिए; हमें स्तालिनसे क्रान्तिकारी साहसिकता और क्रान्तिकारी यथार्थवाद सीखना चाहिये; हमें स्तालिन से युद्ध में निर्भय और वर्ग-शत्रु के प्रति कठोर होना सीखना चाहिये; हमें स्तालिनसे दुर्दम्य इच्छा-शक्ति दिखलाना तथा तमाम कठिनाइयों पर विजय पाना और दुश्मन को परास्त करना सीखना चाहिए; हमें स्तालिन से सर्वहारा अन्तरराष्ट्रीताके उद्देश्योंके प्रति पूर्णरूपसे वफ़ादार होना सीखना चाहिए—क्योंकि मज़दूर वर्ग की विजयका मार्ग प्रशस्त करने और विजय प्राप्त करने के लिए ये चीज़ें नितान्त आवश्यक हैं।**

२१ दिसम्बर, १९३९ को कॉ. स्तालिन की साठवीं वर्षगाँठ के अवसर पर

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट (बोल्शेविक) पार्टी की केन्द्रीय कमिटी द्वारा कॉ. स्तालिन का अभिनन्दन

हमारी मंज़िल के प्यारे दोस्त और कॉमरेड !

लेनिन के दोस्त, उनकी मंजिलके महान उत्तराधिकारी और पार्टी और सोवियत जनता के नेता, तुम्हारी साठवीं वर्षगाँठ के अवसर पर बोल्शेविक पार्टी की केन्द्रीय कमिटी अत्यंत स्नेह के साथ तुम्हारा अभिनन्दन करती है !

तुम चालीस वर्षसे अधिकसे सर्वहारा क्रान्तिके उद्देश्यकी, मजदूर-वर्ग और तमाम मेहनतकश जनताके उद्देश्यकी सेवा करते आये हो। पार्टी और सर्वहारा-वर्ग की डिक्टेटरशिपके लिए लेनिनके संघर्षमे तुम उनके सबसे वफ़ादार साथी थे। बलशाली बोल्शेविक पार्टीको बनाने और ढालनेके लिये लेनिनके साथ तुमने अनेकों वर्ष काम किया था। अक्तूबर, १९१७ की सशस्त्र क्रान्तिमें लेनिनके साथ तुमने पार्टी और मजदूर-वर्गका नेतृत्व किया था। लेनिनके सबसे नजदीकी सहायककी हैसियत से अक्तूबर-क्रान्ति और सत्तापर मजदूर वर्ग द्वारा सफलतापूर्वक कब्जा करने की तमाम तैयारियों का तुमने खुद संचालन किया था।

गृहयुद्ध के दिनों में—विदेशी हमलावरों और पूंजीपतियों और जमींदारों की व्हाइट गार्ड फौजोंसे मातृभूमि की रक्षाके युद्ध के दिनों में—उन तमाम मोर्चों पर जहाँ क्रान्तिका भविष्य संकट मे था, लेनिनके नेतृत्व में तुमने ही लाल फौजकी जीतों को प्रत्यक्ष प्रेरणा दी थी और संगठित किया था।

लेनिन की मृत्युके बाद, बोल्शेविक पार्टीने, ज़बरदस्त कठिनाइयों को परास्त करते हुए तुम्हारे ही कुशल नेतृत्व मे हमारे देश में सोशलिज़्म को विजयी बनाया।

मजदूर-वर्ग और सोवियत जनता के घृणित शत्रुओंने—ट्राटस्कीवादियों, जिनोवियेवादियों और बुखारिनवादियोंने, जो हमारे देशमें सोशलिज़्म की विजय की संभावनामें मजदूर वर्ग और सोवियत जनता के विश्वासको तोड़ना चाहते थे, बार-बार

कोशिश की कि बोल्शेविक पार्टी की ताकत को अन्दर से कमजोर कर दिया जाय, उसकी एकता को खतम कर दिया जाय और सोवियत व्यवस्था और सोशलिस्ट क्रान्ति को नष्ट कर दिया जाय। लेनिनवाद के सिद्धान्तों की रक्षा करनेके लिए केन्द्रीय कमिटी और हमारी पूरी पार्टीने तुम्हारे नेतृत्व मे पूरी तरह से संगठित होकर सोशलिज़्म और पार्टी के दुश्मनों के खिलाफ़ डट कर संघर्ष किया। तुमने लेनिन के एक देश में सोशलिज़्म की विजय की संभावना के सिद्धान्त के झण्डे को ऊँचा रखा, उस महान् सिद्धान्त को तुमने और विकसित किया और पार्टी और सोवियत संघ के करोड़ों मेहनतकश लोगों को उसके ज्ञानसे लैस किया, और इस तरह क्रान्ति के दुश्मनोंका भण्डाफोड करके उनकी पूर्ण पराजयको निश्चित बना दिया।

बोल्शेविक पार्टीने तुम्हारे नेतृत्वमें देशके सोशलिस्ट औद्योगीकरणको पूरा किया, नये औद्योगिक केन्द्रों और क्षेत्रोंका निर्माण किया, पहली श्रेणीके भारी और हलके औद्योगिक कारखानोंको और मशीनोंको बनानेवाले जबरदस्त ताकतके मशीन-घरोंको बनाया, जिससे कि टेकनीकल रूपसे पूरी राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्थाका फिरसे निर्माण करना और सोवियत संघके शस्त्रागारोंको बचावके नयेसे नये हथियारोंसे लैस करना संभव हुआ। तुम्हारे नेतृत्वमे पार्टीने देहातोंमे ऐसी जबरदस्त क्रान्ति कर दी है कि खेती का सामूहीकरण पूरा हो गया है और कुलकों का वर्ग के रूपमे सम्पूर्ण रूपसे खात्मा हो गया है; और इस प्रकार सामूहिक खेती की व्यवस्थाकी विजय के दृढ़ आधारके ऊपर, करोड़ों किसानों के लिए एक सुसंस्कृत और संपन्न जीवन की नींव डाल दी गयी है। हमारा देश एक बलशाली औद्योगिक देश, बडे पैमाने पर सामूहिक खेतीका देश, एक ऐसा देश बन गया है जहाँ सोशलिज़्म की विजय हुई है।

इन सफलताओंके कारण सोवियत संघ के देश तेजीसे सांस्कृतिक प्रगति कर रहे हैं। सोवियत शासन-व्यवस्था और सोशलिज़्म के उद्देश्य के प्रति वफादार एक सोवियत बुद्धिजीवी वर्ग उत्पन्न हो गया है।

तुम्हारे नेतृत्वमें पार्टी और सोवियत सरकार ने, प्रथम श्रेणी के अस्त्र-शस्त्रों और मशीनों से सुसज्जित एक जबरदस्त और अजेय लाल फ़ौज का निर्माण किया है। देश को तमाम विदेशी दुश्मनों से बचाने के सम्बंध में उसपर पूर्ण रूपसे भरोसा किया जा सकता है।

बोल्शेविक पार्टी के नेतृत्वमे मजदूर वर्गने—किसानोंके सहयोग से—मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण को हमेशा के लिए मिटा दिया है और सोवियत सोशलिस्ट प्रजातंत्रों के संघ में एक ऐसी नयी व्यवस्था, सोशलिस्ट व्यवस्था की स्थापना कर दी है जिसमें न आर्थिक संकट होते हैं, न बेकारी होती है और जो इस बातकी गारण्टी करती है कि मेहनतकश जनता के जीवनका और संस्कृतिका स्टैण्डर्ड (धरातल) निरन्तर ऊँचा होता जायगा। हमारे संघर्ष का यह सबसे महत्व-

पूर्ण परिणाम युगान्तरकारी महत्व का है। सोशलिज़्म की विजय मे यह तमाम दुनिया के मेहनतकशों के विश्वासको और भी दृढ़ बनाता है।

तुम्हारे अत्यंत क्रियाशील व्यक्तिगत नेतृत्वमें हमारी पार्टी ने एक बलशाली बहु-राष्ट्रीय सोवियत राज्य का निर्माण किया है और सोवियत सोशलिस्ट प्रजातंत्रों के संघ के राष्ट्रों की गहरी और अमिट मित्रता को—जो उनकी सम्पन्नत और अजेयता की दृढ़ गारण्टी है--सुदृढ़ बनाया है। यह ठीक ही है कि सोवियत सोशलिस्ट प्रजातंत्रों के संघ के नये विधान को—विजयी सोशलिज्म और विकसित सोशलिस्ट जनवाद के विधानको--जनता स्तालिन विधान कहती है।

लेनिन की तरह तुमने भी क्रान्तिकारी सिद्धान्तों को विकसित करने और फैलानेके कामको हमेशा अत्यधिक महत्व दिया है। तुम्हारी अद्वितीय सैद्धान्तिक पुस्तकोंमें, जो हमारे देश और दुनिया भर के करोड़ों लोगो की सम्पत्ति बन चुकी हैं, नयी परिस्थितियोंमें, साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रान्तिके युग की परिस्थितियों में, उस युग की परिस्थितियों में जिसमे पृथ्वी के छठवें भाग पर सोशलिज़्म विजयी हो चुका है--मार्क्सवाद-लेनिनवाद का आगे विकास हुआ है। तुमने मार्क्सवाद-लेनिनवाद के राजसत्ता-सम्बंधी सिद्धान्त को विकसित किया है और पूंजीवादी देशोंसे घिरे सोशलिस्ट राज्य के सिद्धान्त का निर्माण किया है। पार्टी को मार्क्सवाद-लेनिनवादके अस्त्रों से लैस करके उसको संगठनात्मक रूपसे एक करने के लिए तुमने अनथक परिश्रम किया हैं। यही हमारी पार्टी की स्तालिनी एकता का आधार बना है।

बोल्शेविक पार्टी की एक सबसे विलक्षण सफलता—जो तुम्हारी देखभाल और पथ-प्रदर्शन के ही कारण प्राप्त हुई है--काडरो (पार्टी, और सोवियत राज्यके कार्य-कर्त्ताओं) की तेज बढ़ती है, सोशलिस्ट निर्माणके और सोशलिज़्म के देश की रक्षाके काम में लगे हुए हजारों नये लोगों की तरक्की (प्रोमोशन) है।

तुम्हारी तमाम ताकत और शक्ति जनता के महान उद्देश्य के लिए ही लगी है; लेनिन की ही तरह तुम अपनी जनता को प्यार करते हो और उससे अभिन्न हो। लेनिन की ही तरह तुमको सोवियत संघकी और तमाम दुनिया की मेहनतकश जनता अत्यधिक प्यार करती है।

आज, तुम्हारी साठवी वर्षगाँठ पर तुम्हारा अभिनन्दन करते समय, सोवियत संघकी पार्टी और तमाम जनता अपनी केन्द्रीय कमिटी के चारों ओर लेनिन और स्तालिनके झण्डेके नीचे हमेशासे भी अधिक एक है और कम्युनिज्मकी पूर्ण विजयकी लड़ाईको आगे बढ़ानेके लिए कटिबद्ध है।

अजेय बोल्शेविक पार्टी, लेनिन और स्तालिनकी पार्टी चिरजीवी हो!

हमारी पार्टीकी खुशी के लिये, मज़दूर वर्ग और सोवियत संघ और पूरी दुनिया की जनता की खुशी के लिये—हमारे प्यारे स्तालिन तुम चिरजीवी हो!!

जिनका नाम शान्ति और आज़ादी के लड़ाकों का महान झण्डा बन गया है—

स्तालिनका शांति आह्वान

वालेसके खुले-पत्रके सम्बंधमें मई, १९४८ में कॉ. स्तालिनने कहा था:—

यह तो नहीं कहा जा सकता कि मि० वालेस की खुली चिट्ठी में (सोवियत सघ और सरकार के बीच) मतभेद के तमाम प्वाइण्टों को बिना किसी अपवाद के ले लिया गया है। न यही कहा जा सकता है कि खुली चिट्ठी में कही गयी कुछ बातों और टिप्पणियों मे सुधार करने की जरूरत नहीं है। लेकिन इस समय मुख्य चीज वह नहीं है। मुख्य चीज यह है कि अपनी चिट्ठी मे मि. वालेस ने सोवियत संघ और सयुक्त राष्ट्र अमरीका के बीच शान्तिपूर्ण समझौते के लिए एक ठोस कार्यक्रम देने की, उनके मतभेद के तमाम मुख्य प्वाइण्टों के सम्बंध में एक ठोस प्रस्ताव पेश करने की खुली और ईमानदार कोशिश की है।

ये प्रस्ताव आमतौर से लोगों को विदित हैं: अस्त्रों-शस्त्रों में आम कमी कर दी जाय और एटम हथियारों की मनाही कर दी जाय; जर्मनी और जापान के साथ शान्ति की सधियाँ पूरी करली जाये और इन मुल्कों से फौजों को हटा लिया जाय; चीन और कोरिया से फ़ौजें हटा ली जाये; तमाम मुल्कों की पूर्ण सत्ता का आदर किया जाय और उनके आन्तरिक मामलों में किसी प्रकारका दख़ल न दिया जाय; सयुक्त राष्ट्र सघ के सदस्य देशोंके अन्दर फ़ौजी अड्डों के कायम किये जाने की मनाही कर दी जाय; अन्तरराष्ट्रीय व्यापार को बिना किसी प्रकार के भेदभाव के हर सभव तरीके से बढ़ाया जाय; जिन मुल्कोंने युद्ध में नुकसान उठाया है उनकी——सयुक्त राष्ट्र सघ के ढॉचेके अन्दर——सहायता की जाय और आर्थिक रूपसे फिरसे आबाद होनेमें उनको मदद दी जाय; सब देशोंमें जनवादकी रक्षा की जाय और नागरिक अधिकारों की गारण्टी की जाय; वगैरा।......

मै नहीं जानता कि सोवियत संघ और सयुक्त राष्ट्र अमरीका के बीच समझौतेके लिये मि० वालेसके इस कार्यक्रम को एक आधार के रूपमें संयुक्त राष्ट्र अमरीका की सरकार पसन्द करती है या नहीं। लेकिन जहाँ तक सोवियत संघ की सरकार का संबंध है, वह तो विश्वास करती है कि इस तरह के समझौते के लिये और अन्तरराष्ट्रीय सहयोग को बढ़ानेके लिए मि. वालेसके कार्यक्रमको एक अच्छा और लाभदायक आधार बनाया जा सकता है, क्योंकि सोवियत संघ का विश्वास है कि सोवियत संघ और अमरीका की आर्थिक व्यवस्थाओं और विचार-धाराओं के बीच के फर्कों के बावजूद, उनका साथ-साथ रहना और उनके आपसी मतभेदों का शान्तिपूर्ण ढंगसे हल करना न सिर्फ संभव है, बल्कि सार्वत्रिक शान्ति के हित में नितान्त आवश्यक है।

मास्को, १७ मई, १९४८

अक्तूबर १९४८ में प्रावदा द्वारा पूछे गये प्रश्नों का उत्तर देते हुये कॉ. स्तालिनने कहा था :

प्रश्न : असल बात क्या है ? क्या इसकी (बर्लिनके प्रश्नपर मास्को और अमरीका में दो-दो बार हुए समझौतोंको अमरीका और ब्रिटेनके प्रतिनिधियों द्वारा तोड़ दिये जानेकी) व्याख्या नहीं की जा सकती ?

उत्तर : यह जाहिर करता है कि जो लोग अमरीका और ब्रिटेनकी आक्रमणकारी नीति को प्रेरणा देते हैं वे नहीं समझते कि सोवियत संघके साथ समझौते और सहयोग में उनकी कोई दिलचस्पी है। वे समझौता और सहयोग नहीं चाहते; लेकिन वे समझौते और सहयोगकी बात करते हैं जिससे कि समझौते की कोशिशोंको वे असफल बना सकें, जिससे कि वे सोवियत संघको दोषी ठहरा सकें, और, इस प्रकार, यह साबित कर सकें कि सोवियत संघके साथ समझौता होना असंभव हैं। युद्धखोर, जो एक नये युद्धकी आग लगानेकी कोशिश कर रहे हैं, किसी भी चीजसे इतना नहीं डरते जितना वे सोवियत संघके साथ समझौते और सहयोगकी बातसे डरते है, क्योंकि सोवियत संघके साथ समझौतेकी नीति युद्धखोरोंकी स्थितिको कमजोर बनाती है और इन महानुभावोंकी आक्रमणकारी नीतिके उद्देश्यको ही मटियामेट कर देती है।

ठीक इसी वजहसे हुए-हुआये समझौतोंको वे तोड़ देते हैं; अपने उन प्रतिनिधियों को जिन्होंने सोवियत सघ के साथ समझौते कर लिये हैं, वे धता बता देते हैं; संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर को तोड़ कर प्रश्न को वे सुरक्षा काउंसिल में—जहाँ उनका पक्का बहुमत है और वे चाहे जो कुछ " साबित कर सकते हैं "—भेज देते हैं।

यह सब सोवियत सघ के साथ सहयोग करने की असभावना दिखलाने के लिए, एक नये युद्ध की आवश्यकता दिखलाने के लिए, और, इस प्रकार, एक नया युद्ध छेड़ने की परिस्थितियाँ तैयार करने के लिए किया जाता हैं।

सयुक्त राष्ट्र अमरीका और ब्रिटेन के मौजूदा नेताओं की नीति आक्रमण की और एक नये युद्ध की आग लगाने की नीति है।

प्रश्न : इस सबका खात्मा कैसे हो सकता है ?

उत्तर : इसका खात्मा नये युद्धकी आग भड़काने वालोंके शर्मनाक पतनके द्वारा ही हो सकता है। नये युद्ध को भडकाने वालोंमें सबसे अव्वल चर्चिल अपने देश तथा तमाम दुनियाकी जनवादी ताकतों का विश्वास पूरी तरह खो चुका है। यही हाल दूसरे तमाम जंगखोरों का भी होगा। पिछले युद्धकी भयानकता जनताके दिमागमें अभी भी बहुत ताजा है। और शान्तिकी समर्थक ताकतें इतनी विशाल हैं कि चर्चिल और उस के हमलावर चेलों-चाटोंके लिए उन पर काबू करके उन्हें नये युद्धकी तरफ मोड़ सकना नामुमकिन है।

२८ अक्तूबर, १९४८

शान्ति, जनवाद और समाजवाद का आधार स्तम्भ—सोवियत रूस

(कामिन्फार्म का सम्पादकीय लेख)

समाजवादी सोवियत संघ को कायम हुए ३२ वर्ष बीत चुके हैं।

समाजवादी क्रान्ति की विजय और सोवियत संघ में सर्वहारा डिक्टेटरशिप की स्थापना विश्व ऐतिहासिक महत्व की घटनाएँ हैं। उन्होंने विश्व मानवता के इतिहास में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन का—पुरानी पूँजीवादी दुनिया को एक नयी समाजवादी दुनिया में बदलनेका—डंका बजाया।

इतिहास में पहली बार मेहनतकश जनता के एक राज्य की सृष्टि हुई—सोवियत राज्य की। यह एक नये किस्म का राज्य है—जो पूँजीवादी राज्यों से सैद्धान्तिक रूप से भिन्न है। सोवियत राज्य की सृष्टि का मतलब एक ऐसे किस्म के राज्य की ठोस बुनियाद का पड़ना था जिसका शासन-सूत्र मौजूदा समाजके सबसे क्रान्तिकारी वर्ग—मजदूर वर्ग—के नेतृत्व में मेहनतकश जनता के हाथों में था। इस तरह उस पुरानी धारणा को खतम कर दिया गया कि केवल शोषक और उनके प्रतिनिधि ही राज्य का संचालन कर सकते हैं। मेहनतकश जनता को मुक्ति का मार्ग दिखानेवाले मार्क्सवाद-लेनिनवादकी विजय हुई।

क्रान्ति के महान नेताओं—लेनिन और स्तालिन—द्वारा कायम किये गये और संचालित सोवियत राज्यने अपनी विशाल भूमि पर विभिन्न जनता को संयुक्त किया जो पहले ऐतिहासिक विकासके अलग-अलग स्तर पर थी और ऐतिहासिक और सांस्कृतिक परम्पराओं में भिन्न थी। इस तमाम जनताको एक बहु-जातीय राज्यमें संगठित करके तथा सच्ची समानता के आधार पर जातियों के सवालको पूरी तरहसे सुलझा कर, और सभी जातियो के आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक विकास के लिये सभी परिस्थितियो को पैदा करके—सोवियत राज्य दूसरे तमाम राज्यों में, सबसे ज़्यादा शक्तिशाली और स्थायी राज्य बन गया।

अपने सम्पूर्ण रूप में, इस बातके कारण कि वह मजदूरों और किसानों का राज्य है, कि यह राज्य शोषणसे, राजनीतिक और जातीय उत्पीड़नसे मुक्ति दिलाता है, कि इसने पूंजीवादका खात्मा कर दिया है और समाजवादकी स्थापना की है—सोवियत राज्यने दुनिया भर की मेहनतकश जनताका, बिना किसी देश या जातियोंके भेदभावके प्यार और आदर हासिल कर लिया है।

दूसरे देशोंके साथ अपने पारस्परिक सम्बधमे सोवियत सरकारकी लगातार शान्तिपूर्ण नीतिने शान्तिके सभी सच्चे समर्थकोंकी सहानुभूति हासिल कर ली है। सभी ईमानदार लोग जानते हैं और विश्वास रखते हैं कि सोवियत राज्य की नीति का रुख हमेशा साम्राज्यवादी युद्धोंके खिलाफ और शान्तिकी रक्षाके हकमें रहता है। सोवियत राज्य जनताकी खुशहाली और उसके हितोंको दूसरी सभी बातोसे सबसे ऊँचा स्थान देता है। वह युद्धों मे दिलचस्पी नहीं रखता क्योंकि वह दूसरे देशों की जनता को गुलाम बनाने के उद्देश्य पर नहीं चलता; सिद्धान्ततः वह दूसरे इलाकों को हड़पने और लूटने की नीति को ठोकर मारता है। सोवियत राज्य इसलिये भी शान्ति की इच्छा रखता है क्योंकि केवल शान्तिपूर्ण परिस्थितियो में ही सोवियत की जनता एक कम्युनिस्ट समाज के निर्माण के लिये अपनी विशाल सृजनात्मक शक्तियों का पूरी तरह विकास कर सकती है। सोवियतकी जनता और दुनिया भरकी मेहनतकश जनता जानती है कि सोवियत रूस में समाजवादी समाज का विकास और उसकी खुशहाली अन्तरराष्ट्रीय पूंजीवादी पर घातक प्रहार हैं।

द्वितीय विश्व युद्धके पहले सोवियत राज्यने युद्धको छिड़नेसे रोकनेके लिये सभी कुछ किया। लेकिन अमरीका, ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रांस, इटली और जापानकी साम्राज्यवादी सरकारोंने उसकी मुखालफत की।

अगर सोवियत सरकारने शान्तिपूर्ण नीतिपर अमल न किया होता—जिसके कारण शान्तिके खिलाफ साम्राज्यवादियोंकी साज़िशोंको कई बार धूल चाटनी पड़ी—तो द्वितीय विश्व-युद्ध बहुत पहले ही छिड़ गया होता।

द्वितीय विश्व युद्धमें ऐतिहासिक विजय हासिल करके सोवियत जनताने विश्व-शान्तिको ठोस बनानेमे अनमोल सहायता दी है।

युद्ध के बाद के पिछले तीन वर्षों से अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादी युद्ध की धमकियाँ देते और युद्ध मनोवृत्ति को भड़काते आये हैं। वे दुनिया के सभी हिस्सों में फ़ौजी अड्डे कायम कर रहे हैं, फ़ौजी गुटबन्दियाँ बना रहे हैं और अपनी फ़ौजों तथा हथियारों मे बढ़ती कर रहे हैं।

सोवियत यूनियन अपनी शान्तिपूर्ण नीति को आगे ला कर साम्राज्यवादियों की आक्रमणकारी योजना का पर्दाफाश करती है। सोवियत यूनियन की इस नीति को

सभी शान्तिपूर्ण जनता और राज्यों का, दुनिया भर की तमाम मेहनतकश जनता का जोरदार समर्थन मिलता है। यदि सोवियत राज्य के पास विशाल शक्ति न होती, यदि उसकी नीति ने नये युद्ध का भड़कावा देनेवाले अंग्रेज-अमरीकियों का पर्दाफ़ाश न किया होता, यदि हिटलर के इन वारिसों के खिलाफ सभी देशों की जनता का शक्तिशाली आन्दोलन न हुआ होता तो नये विश्व-युद्धकी लपटोंका धू-धू कर लहकना शुरू भी हो गया होता, मनुष्योंके खूनकी नदियाँ फिर बहने लगी होतीं।

कुत्ते के कुत्ते को खा जानेका नियम पूंजीवादी दुनियामें राज करता है : बलवान कमजोरोंको निगल जाता है। साम्राज्यवादियों की चालों का मुकाबला करने के लिये, जो सोवियत रूस पर हमला बोलनेके लिये पूरी ताकतके साथ खुलेआम फौजी तैयारियाँ कर रहे हैं, सोवियत राज्यको अपनी फ़ौजी शक्तिको भी देखना पड़ता है। फ़ौजी दुस्साहसिकताके रास्ते पर आगे बढनेसे साम्राज्यवादियोको रोकनेके लिये सोवियत यूनि-यनकी विशाल राजनीतिक और आर्थिक शक्ति सबसे कारगर हथियारोंमें से एक है।

एटम हथियारों की इजारेदारी की अपनी हवाई भावना से संतुष्ट होकर अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियोंने एटम हथियारके ज़रिये समाजवादके कैम्प को डराने की कोशिश की थी। लेकिन २५ सितम्बरकी **तास** रिपोर्टका, जिसमें इस बातको पुष्ट किया गया कि सोवियत यूनियनके पास बहुत दिनों से एटम हथियार मौजूद हैं, सभी देशोंकी मेहनतकश जनता ने, शान्ति के सभी लड़ाकोंने बेहद खुशी के साथ स्वागत किया। अपनी शान्तिपूर्ण नीतिके प्रति वफ़ादार रहते हुए सोवियत सरकारने बार-बार माँग की है कि नागरिक जनताके सामूहिक विनाश के अस्त्रके रूप में एटम हथियारों पर रोक लगा दी जाय।

सोवियत यूनियन जनता की शान्ति और सुरक्षाका सबसे शक्तिशाली और विश्वस्त किला है। सोवियत यूनियन सबसे सुसगत जनवाद का देश है।

पहले के पूरे इतिहास में सोवियत व्यवस्था जैसी व्यवस्था कभी नहीं रही है, जहाँ की पूरी आबादी को राजनीतिक अधिकार हासिल है, वह राज्य को चलाने मे और देश के पूरे सामाजिक जीवन में सक्रिय हिस्सा लेती है। सोवियत जनवाद एक नया, समाजवादी जनवाद है। वह सबसे अधिक विकसित विधान पर—सोवियत सघ के विधान पर—आधारित है जिसे जनता स्तालिन विधान के नाम से पुकारती है। सोवियत का जनवाद मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण के पूरी तरह खात्मे पर आधारित है। पैदावारके सभी साधन, सभी भौतिक सम्पत्ति देश की सम्पत्ति हैं। यही भौतिक आधारशिला है जिस पर समाजवादी जनवाद हर प्रकार से फला-फूला है। इसी तरीके से, और केवल इसी तरीके से मजदूर-वर्ग जनवाद के सार-तत्वको समझता है। जब अमरीका में बेकार और अर्द्ध-बेकार मजदूरों की संख्या १ करोड़ ८० लाख है, तो "पश्चिमी जनवाद" की श्रेष्ठताके बारेमें अमरीकी या अंग्रेज साम्राज्यवादियोंकी बकवास पर गंभीरतासे विचार करना भी असम्भव है। क्योंकि मेहनतकश जनताके

लिये जनवादका मतलब न सिर्फ काम मिलनेकी सम्भावना, बल्कि बेकारीके खिलाफ़ सुरक्षा भी होनी चाहिये। ऐसी गारंटी केवल समाजवादी व्यवस्थामें ही की जा सकती है, और सोवियत यूनियनकी करोड़ों जनताको यह गारण्टी दे दी गयी है। जनताके जनवादी देशोंमें भी जो समाजवादके निर्माणके रास्ते पर आगे बढ़ रहे हैं, इस गारण्टीकी बुनियाद डाल दी गयी है।

महान अक्तूबर क्रान्तिसे पैदा हुई सोवियत समाजवादी व्यवस्थाकी श्रेष्ठता देश-भक्तिपूर्ण युद्धके दौरानमें साफ़-साफ जाहिर हो गयी जब कि लेनिन और स्तालिनकी पार्टी द्वारा शिक्षित सोवियत जनताने विजयके लिये अपनी अजेय भावना और दुर्दम इच्छा-शक्तिका परिचय दिया। गोकि युद्धके दौरानमें सोवियत यूनियनने बेशुमार कुर्बानियॉं की थी फिर भी युद्धके बादके वर्षोंमें सोवियतने किसी भी दूसरे देशकी अपेक्षा कहीं ज्यादा तेज़ीसे अपनी अर्थ-व्यवस्थाका पुनर्निर्माण किया और अब बहुत यतसे जनता की आवश्यकता की चीज़ों को पैदा कर रहा है। इस वर्षकी तीसरी तिमाही में वहॉंकी पैदावार पिछले सालकी पैदावारकी अपेक्षा १७ फ़ी सदी ज़्यादा थी। सोवियत यूनियनमें समाजवादी व्यवस्थाका सारतत्व संक्षेपमें यही है कि वह जनताकी भौतिक खुशहाली और सांस्कृतिक विकासका सबसे ज्यादा ध्यान रखती है। सोवियत यूनियन की सामाजिक व्यवस्था विज्ञान, कला और साहित्य को तमाम मेहनतकश जनता तक पहुँचा रही है। क्या पूंजीवादी व्यवस्था के अन्तर्गत जनता के लिये ऐसी परिस्थितियॉं पैदा की जा सकती हैं?

सोवियत समाजवादी जनवाद को आम तौर पर सभी मेहनतकश जनता मानती है। तमाम दुनिया का मज़दूर वर्ग, मेहनतकश जनता सोवियत यूनियन की ओर प्यार और विश्वास से देखते हैं। वे सोवियत यूनियन में अपना आनेवाला कल, अपना सुनहरा भविष्य देखते हैं जब तमाम दुनियामें कम्युनिज़्म लाजिमी तौर पर विजयी होगा।

अक्तूबर क्रान्ति की विजय और सोवियत यूनियन में समाजवाद का निर्माण केवल सोवियत यूनियन की मेहनतकश जनता की कोशिशों का ही नतीजा नहीं है। सोवियत यूनियन का मजदूर वर्ग और वहॉं के किसान ३२ वर्ष पहले विजयी हो सके और समाजवाद का निर्माण कर सके तो तमाम दुनियाके मेहनतकशों के सक्रिय मदद के सहारे ही। सोवियत समाजवादी संघ—तमाम अन्तरराष्ट्रीय सर्वहारा की, सभी देशोंकी मेहनतकश जनता की सबसे महान विजय है।

सोवियत यूनियन सबसे शक्तिशाली अन्तरराष्ट्रीय क्रान्तिकारी तत्व है। उसके जिन्दा रहने से ही मेहनतकश जनता के सभी शोषकों और अत्याचारियों के दिलोंमें मौतके भयकी कॅपकॅपी होती रहती है। सोवियत यूनियत की मौजूदगी ही वास्तविक प्रतिक्रियाकी काली ताकतोंको दाबे रहती है, और इस तरह उससे कुचले वर्गोंको अपनी मुक्ति के संग्राम में सहायता मिलती है। सोवियत यूनियन तमाम दुनियाके करोड़ों-

करोड़ मेहनतकशों में—शोषकों पर उनकी विजयका विश्वास भर देता है। सोवियत यूनियन की मेहनतकश जनता के उदाहरणसे पूँजीवाद और औपनिवेशिक उत्पीड़न के खिलाफ लड़नेवालोंको सबसे ज्यादा क्रान्तिकारी प्रेरणा मिलती है।

अपने वीरतापूर्ण संघर्ष के जरिये और द्वितीय विश्व-युद्ध में फासिज्म की काली ताकतों पर अपनी विजय के जरिये सही माने में सोवियत यूनियनने दुनिया को बहुत बड़ी मदद पहुँचायी है। उसके लिये मानवता, सोवियत यूनियनकी बेहद आभारी है। जर्मन-इटाली-जापानी साम्राज्यवाद के मुख्य प्रहार को अपनी छाती पर झेल कर और फासिज्म की संयुक्त शक्तियों को कुचल कर सोवियत यूनियन ने मानवता को उस गुलामी और पागलपन से बचाया हैं जिसे फासिज्म ने दुनिया पर लादने का मंसूबा बाँधा था।

सोवियत यूनियन के हाथों जर्मन फासिस्ट डाकुओं के कुचल दिये जानेके परिणाम स्वरूप दुनिया के पैमाने पर शक्ति संतुलन में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ और जनवाद तथा समाजवाद का पलड़ा भारी हो गया। इस तरह सभी योरपीय देशों मे फासिज़्म पर जनता की विजयकी परिस्थितियाँ पैदा हुई। मध्य और दक्षिण-पूर्वी योरप के देशोंमे जनता ने अपनी विजय को ठोस बनाया और जनता की जनवादी व्यवस्था की स्थापना की जो सर्वहारा के डिक्टेटरशिप के कामों को पूरा कर रही है, इस तरह समाजवाद की विजय को सुरक्षित बना रही है। सोवियत यूनियन समाजवाद के निर्माण के लिये इन देशों की निस्वार्थ सहायता कर रहा है।

जापानी साम्राज्यवाद की फौजी ताकतों को चकनाचूर करके सोवियत यूनियन की फौजने पूरब में राजनीतिक परिस्थिति को जनवाद और समाजवाद की ताकतों के हकमें बदल दिया। और इस तरह सोवियत रूसने चीनी जनता की क्रान्ति की महान मदद की, जिसके कारण वह विश्व ऐतिहासिक महत्व की विजय प्राप्त कर सकी।

सोवियत यूनियने ही सबसे पहले चीनी जनताके जनतंत्रको माना और वह चीनमें समाजवादके निर्माणके महान काममें सभी तरहकी सहायता देनेके लिये तैयार है।

यह देखकर कि तमाम दुनियाकी मेहनतकश जनताकी सहानुभूति सोवियत यूनियनके प्रति दिनोंदिन बढती जा रही हैं—साम्राज्यवादी सोवियत यूनियनके खिलाफ गन्दे आन्दोलनको बढावा दे रहे हैं। इस आन्दोलनमें उस गद्दार, फासिस्ट गेस्टापो टीटो-गुटको, जो यूगोस्लावियाको साम्राज्यवादी कैम्पमें घसीट ले गया, एक खास पार्ट दिया गया है। यूगोस्लाविया—जहाँ बेमिसाल दमनका राज है, जहाँ सच्चे कम्युनिस्टों और साधारण मेहनतकशोको एक बार फिर अत्याचार, लूट और शोषणका शिकार बना दिया गया है—सोवियत यूनियनसे नाता टूटनेके नतीजोंको साफ-साफ बता देता है।

कम्युनिज्म की ओर अपने विजय-अभियान में सोवियत यूनियन ने अपने रास्ते से कितने ही विदेशी और देशी दुश्मनों को हटाकर दूर फेंक दिया। हिटलर और मुसोलिनी ने सोवियत यूनियन को बदनाम किया और उसे नष्ट कर देनेकी धमकी दी थी। टीटो और उसका गुट अब उसी काम मे लगा है,—अमरीकी साम्राज्यवादियों के हुक्म पर वह सोवियत यूनियन के खिलाफ युद्धको उकसावा दे रहा है। लेकिन यूगोस्लाविया के फासिस्टोंको यह सोचने का कोई कारण नहीं है कि सोवियत यूनियन के खिलाफ लड़ाई चलाने पर उन की किस्मत उससे जरा भी भिन्न होगी जो कि उनके जर्मन और इटालवी पूर्वजों की हुई थी।

सोवियत यूनियन के साथ अपनी मित्रता के प्रति वफादार यूगोस्लाविया की जनता को यह शक्ति हासिल होगी कि वह उस फ़ासिस्ट गिरोह का खात्मा कर सके, जिसने उस देशमें शक्तिको हथिया लिया है।

अपने जीवन काल के अबतक के ३२ वर्षों मे सोवियत यूनियनने दुनिया की मेहनतकश जनता के सबसे ज़्यादा प्यार और भक्तिको हासिल किया है।

सभी देशों के कम्युनिस्ट और क्रान्तिकारी लड़ाके सोवियत यूनियनको और सोवियत यूनियन की कम्युनिस्ट (बोल्शेविक) पार्टीको अपने महान शिक्षक और नेता के रूपमें देखते हैं। दुनिया की सभी प्रगतिशील और क्रान्तिकारी ताक्तों की सहायता करने के लिये सोवियत यूनियन हमेशा तैयार मिलता है। यह सहायता सहानुभूति और राजनीतिक समर्थन में, विश्व प्रतिक्रियावाद और साम्राज्यवाद की ताकतों के खिलाफ सच्चे संघर्ष में जाहिर होती है।

सभी देशोंकी कम्युनिस्ट पार्टियाँ और सभी देशो का मजदूर-वर्ग दुनिया भर मे कम्युनिज़्म की विजय के संघर्ष में सोवियत यूनियनको, सोवियत संघ की कम्युनिस्ट (बोल्शेविक) पार्टी को, कॉमरेड स्तालिन को— जो समाजवादी भूमिकी सभी गौरव-गरिमा के मूर्त रूप हैं--अपना तपा हुआ नेता, अपना शिक्षक, अटल गारण्टी और सबसे दृढ़ किला मानता है।

महान अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति की ३२ वीं सालगिरह ज़िन्दाबाद!

अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति का चीनी क्रान्ति पर प्रभाव

लेखक
चेन पो-ता
(चीनकी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमिटी के सदस्य)

अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति ने चीनी क्रान्ति पर विशाल चौमुखी प्रभाव डाला है और उस पर स्थायी छाप छोड़ी है। उसने चीनी जनता को सैद्धान्तिक रूप से बहुत आगे बढ़ाया है, और साथ ही साथ चीन के इतिहास की पूरी धारा को प्रभावित किया है।

इस सवाल के बहुतसे रूपों पर विस्तार से बताना असम्भव है। अक्तूबर क्रान्तिने चीनी क्रान्तिके सबसे महत्वपूर्ण सवालोंमें से केवल एक सवाल पर जो प्रभाव डाला है, उसे यहाँ मैं संक्षेपमें बताना चाहता हूँ—वह है चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना के बारे में।

चीन की कम्युनिस्ट पार्टी चीनी मजदूर-वर्ग की राजनीतिक पार्टी और उसका हिरावल है। चीन में बड़े उद्योग-धन्धों के विकास के जरूरी नतीजे के रूप में इस राजनीतिक पार्टी का जन्म हुआ। १९११ की चीनी क्रान्ति के समय डा. सुनयात सेनके सिद्धान्तों की टीका करते समय ही लेनिनने देख लिया था कि चीन में बहुत जल्द ही मजदूर-वर्ग की एक राजनीतिक पार्टी का जन्म होगा।

लेनिनने ऐतिहासिक विकासके नियमों के मुताबिक यह भविष्यवाणी की थी। लेकिन, हम जानते हैं कि हमारे चीनी मजदूर-वर्ग की राजनीतिक पार्टी का जन्म हुआ अक्तूबर समाजवादी क्रान्तिके बाद और सर्वहारा क्रान्तिके युगमें, लेनिन तथा स्तालिन के युगमें।

इस प्रभावने चीनी मजदूर वर्ग की राजनीतिक पार्टी की स्थापना में और योरपीय देशो के—या ज्यादातर योरपीय देशोंके—मजदूर वर्ग की राजनीतिक पार्टियों के विकास के इतिहास में फर्क पैदा कर दिया।

बुनियादी तौर से यह फर्क, जिसका कि कॉमरेड माओ त्से-तुंग और कॉ. लियो शाओ-ची ने बार-बार जिक्र किया है, यह है कि हमारी पार्टी की नींव लेनिन और स्तालिन के बोल्शेविज़्म के ढांचे पर डाली गयी जो सोशल डिमोक्रेसी की परम्पराओं से अछूती थी।

कॉ० माओ त्ज़े-तुंग ने अपने लेख " जनता के जनवादी अधिनायकत्व " में कहा है कि : " चीनी जनता ने मार्क्सवाद को रूसियों के ज़रिये पाया। अक्तूबर क्रान्तिसे पहले चीनी जनता न सिर्फ़ यह कि लेनिन और स्तालिन को नहीं जानती थी, बल्कि मार्क्स या एंगेल्स को भी नहीं जानती थी। अक्तूबर क्रान्तिकी दुंदुभी ने हमें मार्क्सवाद और लेनिनवाद दिया।"

अक्तूबर क्रान्तिके ज़रिये चीनी जनताको जो मार्क्सवाद मिला, वह लेनिन और स्तालिन द्वारा प्रतिष्ठित और विकसित क्रान्तिकारी मार्क्सवाद है, यानी बोल्शेविज़्म है।

यह बोल्शेविज़्म उस सोशल-डिमोक्रेसी के खिलाफ लम्बे संघर्षों के बीच आगे बढ़ा जिसने मार्क्सवाद के साथ ग़द्दारी की और जिसने सुधारवाद की वकालत की, सामाजिक क्रान्ति का विरोध किया, साम्राज्यवाद के साथ गँठजोड़ा किया। और यह बोल्शेविज़्म पूरी तरह से सोशल डिमोक्रेसी के एकदम विपरीत है।

१९४१ में लिखे गये " पार्टी के अन्दरूनी संघर्षों के बारेमें " अपने लेखमें कॉ. लियो शाओ-ची ने बताया कि हमारी पार्टी का जन्म नीचे लिखी परिस्थितियों में हुआ था :

पहली बात तो यह कि चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का निर्माण अक्तूबर क्रान्ति के बाद, रूसी बोल्शेविज़्म की विजय के बाद हुआ जब अनुसरण करने के लिये एक जीवित उदाहरण मौजूद था। इसलिये चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का निर्माण एकदम शुरू से ही लेनिन के सिद्धान्तों के मुताबिक कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल के सम्पर्क में हुआ।

दूसरे, अपने जन्मकाल के समय से ही चीन की पार्टी दूसरे इन्टरनेशनल के असरसे, योरपकी सोशलडिमोक्रेटिक पार्टियोंके असरसे— सैद्धान्तिक और संगठनात्मक, दोनों ही तरह के असरसे—अछूती रही।

तीसरे, योरप की तरह चीनमें पूंजीवादके " विकासका शान्तिपूर्ण युग " नहीं था जिससे कि मजदूर-वर्गको शान्तिपूर्ण पार्लमेण्टरी संघर्षका अवसर मिलता और मजदूरोंक सम्पन्न तबका भी नहीं था।

चीनके मजदूर-वर्गकी राजनीतिक पार्टीका सम्बंध एकदम शुरूसे ही बोल्शेविज़्म के साथ जुडा हुआ था। इस परिस्थितिने हमारी पार्टीको बहुत ही माकूल हालतमें रखा और चीनी क्रान्तिको आगे बढ़ानेमें नेतृत्व करने के उसके कामको आसान बनाया।

चीन के मजदूर वर्गकी राजनीतिक पार्टी की सोशल-डिमोक्रेसी की कोई परम्परा नहीं है और इसी से यह साफ़ हो जाता है कि चीन के मजदूर आन्दोलन में सोशल डिमोक्रेसी की परम्परा क्यों नहीं है। चीन का विशाल मजदूर आन्दोलन चीनी कम्युनिस्ट पार्टीके नेतृत्वमें आगे बढ़ा, इसलिये चीन की आम मजदूर जनता केवल इसी पार्टी मे विश्वास करती है।

मजदूर-वर्ग के अन्दर चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की एकछत्र प्रतिष्ठा है और यह बोल्शेविज्म के झण्डे की प्रतिष्ठा है।

एक जमानेमें चीन के कुछ मुट्ठी भर अराजकतावादी कैण्टन के मजदूरों के एक छोटे से हिस्से पर अपना प्रभाव जमाने में कामयाब हो गये थे। चूँकि ये अराजकतावादी कैम्प्रेडोर के—बड़े पूँजीपति-वर्गके—कुत्ते थे, इसलिये वे सही माने में क्रान्ति-विरोधी थे। वे अपना कुछ असर जमा सके क्योंकि उन्होंने अपने धोखेभरे कामके लिये मजदूरों के पिछड़े हुए तबके का इस्तेमाल किया।

यह सच है कि हमारी पार्टीके विकासको एकदम "शुद्ध" नहीं कहा जा सकता। ऐसा कहना सचाई के अनुरूप नहीं होगा। यह सच है कि चीनी मजदूर आन्दोलन में सोशल डिमोक्रेसी, अराजकतावाद या सिण्डिकलिज़्मकी कोई परम्परा नहीं है। लेकिन, इसी कारणसे बहुतसे निम्न पूँजीवादी और पूँजीवादी तत्वोंने—जिनके सिद्धात या तो उसी तरहके या सार रूपमे सोशल-डिमोक्रेसी, अराजकतावाद, सिण्डिकलिज़्म और निम्न पूँजीवादी तथा पूँजीवादी सिद्धातोंकी अन्य विचारधाराओं जैसे ही थे—अपनी पार्टी अलग नही बनायी, बल्कि वे अपनी विचारधाराको हमारी पार्टीके अन्दर ले आये।

वे कम्युनिस्ट पार्टीके मेम्बर केवल नाम के लिये ही थे और काममें अपनी पुरानी विचारधाराओके मुताबिक ही चलते थे।

यह अवश्य बता दिया जाना चाहिये कि उनमे से ज्यादातर सही माने में क्रान्ति के लिये काम करने के इच्छुक थे और क्रान्तिकारी आग में अपने को निर्ममता से तपा कर और ठीक करके उन्होंने अपने अन्दर से कूडा-करकट को निकाल फेंका और बोल्शेविज्म को अंगीकार किया।

बेशक उनमें से कुछ ऐसे थे जो अपनी गलतियों से चिपके रहे और उन्होंने बोल्शेविज्म का विरोध किया। मिसाल के लिये चेन तु-सियो और चाग कु-ताओ, जो एक बार पार्टी मे घुस आये थे, उन लोगों के मुख्य प्रतिनिधि थे जो अपने मार्क्सवाद–विरोधी, बोल्शेविमज़–विरोधी प्रतिक्रियावादी सिद्धान्त से चिपके रहे।

क्रातिकारी कतारों में रहकर उन्होंने क्रान्ति के आगे बढ़ते कदमों को रोका। लेकिन चीनकी कम्युनिस्ट पार्टी के अन्दर लेनिन और स्तालिन के बोल्शेविज्म की अपार प्रतिष्ठा के कारण वे फ़ौरन ही जनता के बीच, पार्टी के अन्दर और बाहर, दिवालिया साबित हो गये।

चेन तु-सियो जैसे कुछ लोग बेशर्म और घृणित क्रान्ति-विरोधी ट्राटस्कीवादी और साम्राज्यवाद के फासिस्ट दलाल बन गये। चाग कु-ताओ जैसे कुछ दूसरे लोग खुलेआम कुओमिन्ताग के खुफ़िया संगठन मे भर्ती हो गये।

लेनिन और स्तालिनके बोल्शेविज़्म के सिद्धान्तों के आधार पर चीनके मजदूर-वर्ग की राजनीतिक पार्टी का निर्माण और सोशल–डिमोक्रेसी की परम्पराओं

से अछूता रहना—चीनी क्रान्तिपर अक्तूबर क्रान्तिके ये सबसे केन्द्रित और बुनियादी प्रभाव हैं।

यह प्रभाव चीनी क्रान्तिके भाग्य का निर्णायक सिद्ध हुआ। जैसा कि सभी जानते हैं चीनमे जनवादी क्रान्तिकी विजय चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के, जिसके नेता कॉ. माओ जे-तुंग है, नेतृत्व का और अन्तरराष्ट्रीय क्रान्तिकारी ताकतोंसे विभिन्न रूपोमे सहायता मिलनेका परिणाम है।

कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व के बिना साम्राज्यवाद, सामन्तवाद और नौकरशाही पूंजीवाद के जुए से अपने को मुक्त कर लेना चीनी जनता के लिये असम्भव था। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी चीनी जनता को विजय की मंजिल पर पहुँचाने मे कामयाब हुई, क्योंकि उसने लेनिन और स्तालिन के बोल्शेविज़्म को अंगीकार किया और उसने चीनी जनता की जरूरतों के मुताबिक तथा चीन की खास परिस्थितियों के मुताबिक चीनी क्रान्ति को आगे बढ़ाया।

लेनिन और स्तालिन के बोल्शेविज्म पर आधारित चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने चीनी क्रान्ति के बुनियादी सिद्धान्तों का पता लगाया अर्थात यह कि इस क्रान्तिका नेतृत्व चीनी मजदूर वर्ग के ही हाथोंमे होना चाहिये और कोई दूसरा वर्ग इसका नेतृत्व नहीं कर सकता। लेनिन और स्तालिन के बोल्शेविज्म को लागू करते हुए कॉ० माओ जे-तुंग ने दो परस्पर-सम्बंधित सवालों के इस प्रसिद्ध फार्मूले को—चीनी मजदूर वर्ग का नेतृत्व कायम करने और जनता का क्रान्तिकारी सयुक्त मोर्चा बनाने के फॉर्मूल को—आगे बढ़ाया।

यह फार्मूला है: मजदूर वर्गके नेतृत्वमें विशाल जनताकी क्रान्ति हो और वह साम्राज्यवाद, सामन्तवाद और नौकरशाही पूंजीके खिलाफ मजदूरों-किसानों की मैत्री पर आधारित हो।

लेनिन और स्तालिनके बोल्शेविज्मकी क्रान्तिकारी भावना पर आधारित और चीनकी परिस्थितियोंके उपयुक्त, चीनकी कम्युनिस्ट पार्टीने उसके साथ ही साथ हथियार-बन्द विद्रोहकी विचारधाराको आगे बढ़ाया और चीनकी परिस्थितियों के अनुरूप मजदूर-वर्गके नेतृत्वमे किसानोंकी क्रान्तिकारी लड़ाईके नजरियेको खास तौरसे आगे बढाया।

१९२६ मे कॉ. स्तालिन ने चीनी-क्रान्ति के बारे मे जो एकदम सही बात कही थी, उस पर का० माओ जे-तुंग ने बार-बार जोर दिया। कॉ. स्तालिन ने कहा था :

चीन मे हथियारबन्द-क्रान्ति, हथियारबन्द-क्रान्ति विरोध के खिलाफ जूझ रही है। यह बात चीनी क्रान्ति की विशेषताओं और फायदों में से एक है।

हथियारबन्द लड़ाई के जरिये अपने उत्पीडकोको उखाड फेंकने के लिये जनता की बगावत चीन की क्रान्तिकारी परम्परा रही है जो पिछले दो हजार वर्षों से

भी ज्यादा अरसे में सैकड़ों बार स्थानीय या देशव्यापी पैमाने पर बार-बार दुहरायी गयी है।

जनता की हथियारबन्द लड़ाई की यह परम्परा किसानों की लड़ाई है।

कुछ ऊपरी बातों से विचार करने पर पिछले दो दशकों के दौरान में हुई चीनी जनता की क्रान्तिकारी लड़ाई की प्रगति और सफलता भी संघर्ष के ऐसे ही अनुभवों के मुताबिक बढ़ी है।

लेकिन सचाई यह है कि हमारी लड़ाई के गुण और उद्देश्य न सिर्फ़ एकदम नये हैं, पुरानी तरह की किसानों की लड़ाईयों से एकदम भिन्न हैं और पूँजीपतियों के नेतृत्व वाली क्रान्ति से एकदम भिन्न हैं, बल्कि संघर्षका हमारा तरीक़ा और संगठन का रूप भी एकदम नया है।

क्रान्तिकारी लड़ाईके नेतृत्वकी बागडोर संभालनेके समय ही कॉ. माओ जे-तुंगने पुराने किस्मकी किसान लड़ाईयों के खिलाफ निर्मम संघर्ष चलाया।

पिछले २० वर्षों से या उससे भी ज्यादा दिनोंसे चलने वाला हमारी जनताका स्वाधीनता संग्राम विशाल जनताका, खास तौरसे विशाल किसान जन-समुदायका हथियारबन्द संघर्ष है—जो मजदूर-वर्गके नेतृत्वमें चलता है।

यहाँ सबसे बुनियादी बात मजदूरवर्गका नेतृत्व, यानी कम्युनिस्ट पार्टी का, बोल्शेविज़्म की पार्टी का नेतृत्व है।

इस नेतृत्व ने चीनी क्रान्ति के वर्तमान का और भविष्य का भी फ़ैसला कर दिया है।

चीनी जनता के संघर्षों के परम्परागत अनुभवो को ध्यान में रखना जरूरी है। इन क्रान्तिकारी परम्पराओ और संघर्षों के अनुभवों पर विचार करते समय हमें निश्चय ही मार्क्सवाद—लेनिनवाद के सिद्धान्तों और तरीक़ों का इस्तेमाल करना चाहिये — हानिकारक बातों को निकाल देना चाहिये और मजदूर वर्ग के क्रान्तिकारी विज्ञान और मजदूर वर्ग के वर्तमान संघर्ष के स्तर तक उन चीजोंको उठाना चाहिये जो उठाई जा सकती हैं।

ऐसा न करने पर संघर्ष की ये परम्पराएँ और अनुभव चीन की वर्तमान परिस्थिति में बेकार होंगे।

बेशक, जनताका हमारा स्वाधीनता संग्राम एक नये ढंग का, बोल्शेविकों के क्रान्तिकारी संग्राम के ढंग का है। हमारी जनताकी महान क्रान्ति बोल्शेविक ढंग की क्रान्ति है।

तरह-तरह की बोल्शेविक-विरोधी विचार-धाराओं के खिलाफ़ कॉ. माओ जे-तुंग की अगुआई में चीनी बोल्शेविकों के लगातार संघर्ष के जरिये ही हमारी जनवादी क्रान्ति निरन्तर आगे बढ़ सकती है, नयी सफलताएँ हासिल कर सकती है और नये जनवाद से आगे बढ़कर समाजवाद और विश्व कम्युनिज़्म की मंजिल तक पहुँचने का शानदार मार्ग प्रशस्त कर सकती है।

कॉ. माओ जे तुंगने कहा है : " मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन के क्रान्तिकारी सिद्धांत और अमल के मुताबिक एक क्रान्तिकारी पार्टी के निर्माण के बिना, साम्राज्यवाद और उसके पालतू कुत्तों को हराने के लिये मजदूर-वर्ग और विशाल जनता का नेतृत्व कर सकना संभव नहीं होगा। "

यह ठीक अक्तूबर क्रान्ति ही थी जिसने चीन पर असर डाला और हमें इस तरहकी क्रान्तिकारी पार्टी और चीनी बोल्शेविकोंका निर्माण करनेके योग्य बनाया, जिसके मूर्त रूप कॉ. माओ जे-तुंग हैं।

चीनको देखने पर अक्तूबर क्रान्तिने वही कर दिखाया जो कॉ. स्तालिन ने अपने लेख " अक्तूबर क्रान्तिका अन्तरराष्ट्रीय स्वरूप " में बताया है :

" अक्तूबर क्रान्ति सिर्फ 'राष्ट्रीय सीमाओं के भीतर की' क्रान्ति नहीं है। वह सबसे पहले, एक अन्तरराष्ट्रीय विश्व-व्यवस्था की क्रान्ति है; कारण यह कि वह मनुष्य जाति के विश्व इतिहास मे एक क्रान्तिकारी मोड़का, पुरानी पूंजीवादी दुनिया से नयी समाजवादी दुनियाकी तरफ़ मोड़का प्रतीक है।

" अक्तूबर क्रान्तिकी **विजय** मनुष्य जातिके इतिहास में एक क्रान्तिकारी परिवर्तनकी, विश्व पूंजीवाद के ऐतिहासिक भविष्यमें क्रान्तिकारी परिवर्तन की, विश्व मजदूर वर्ग के मुक्ति आन्दोलन में क्रान्तिकारी परिवर्तन की और सारे संसारकी- शोषित जनताकी- लड़ाई के तरीकों तथा संगठन के रूपोंमे, जिन्दगी तथा परम्परामें और संस्कृति तथा विचारधारामें एक क्रान्तिकारी परिवर्तकी प्रतीक है। "

चीनको देखनेसे यह भी जाहिर हो जाता है कि अक्तूबर क्रान्तिने वह जौहर भी दिखाया जिसे कॉ. स्तालिनने अपने उसी लेखमे बताया था कि,

"अक्तूबर क्रान्तिने एक नया युग, **औपनिवेशिक** क्रान्तियोंका एक युग **शुरू किया है** जिन्हें संसारके **उत्पीड़ित देशोंमे**, मजदूर वर्गके साथ **सहयोग में** और मजदूर वर्गके **नेतृत्वमें** चलाया जा रहा है। "

अक्तूबर क्रान्तिके बताये मुताबिक, मजदूर वर्गके नेतृत्वमे ही चीनकी जनता साम्राज्यवादी शासनको उखाड़कर फेंक देनेके रास्तेपर आगे बढ़ी।

कितने ही कंटकाकीर्ण रास्तोंको पार करके और कठिन और लम्बी लड़ाईयों को लड़कर चीनी जनताने विजय हासिल की है। यह विजय बोल्शेविज़्म की विजय है।

बोल्शेविज़्म की विजय हुई क्योंकि वह एक सही विज्ञान है और वह मानवता की आशा-आकांक्षाओं का प्रतिनिधित्व करता है। वह रूस में विजयी हुआ है, पूर्वी योरप के जनवादी देशों में और चनि में विजयी हुआ है और तमाम दुनिया में एक के बाद दूसरे देशों में वह विजयी होगा, क्योंकि कोई भी प्रतिक्रियावादी ताक़त इस क्रान्तिकारी सचाई के मुक़ाबले नहीं ठहर सकती।

बोल्शेविज़्म का महान और अजेय झण्डा, लेनिन और स्तालिनका झण्डा जिन्दाबाद ! !

भारत में भाषा की समस्या

लेखक

★ डा. रामविलास शर्मा

(गतांकसे आगे)

पिछले जमाने में उदारपंथी पूँजीवादी नताओं ने हिन्दी और उर्दू को एक दूसरे मे घुलाने-मिलाने की कोशिश की मगर वे नाकामयाब हुये।

वे इसलिये असफल हुये कि जबान के मसले पर उनका नजरिया उदारपंथी पूँजीवादी वर्ग-नजरिया था। उन्होंने समस्या को इस तरह पेश किया कि हिन्दी और उर्दू को उनके मौजूदा रूप मे घुलाया-मिलाया जाय।

आम जबान के मसलेको (हिन्दी और उर्दू के सम्बंध में) पेश करने का क्या यह तरीका सही था?

यह सवाल को पेश करने का सही तरीका नहीं था क्योंकि इसने उन सामाजिक बातों को भुला दिया जो आम ज़बान के एक ऊँचे सांस्कृतिक रूप लेने के विकास में बाधा डाल रही थी और ऊँचे सास्कृतिक रूप को टुकड़े-टुकड़े करने का काम कर रही थीं। उन्होंने सवाल को जनता की राजनीतिक और सास्कृतिक प्रगति से नहीं जोडा, उन्होंने उसे जनता की निरक्षरता को दूर करने के, सस्कृति और साहित्य को आम जनता तक पहुँचाने के, और बुद्धिजीवियोंके कुछ तबकों में मौजूद पुनरुत्थानवादी और दूसरी प्रतिक्रियावादी धाराओं से जिन्हें साम्राज्यवाद की समर्थक ताकतों ने बढ़ावा दिया था, लोहा लेने के सवाल के रूप मे नहीं देखा। इसलिये भाषा के सवाल पर उनका नजरिया सही माने में पूँजीवादी सुधारवादी नजरिया था।

जिस तरह से राजनीतिक क्षेत्र में हिन्दू-मुस्लिम समस्या को जनता की जनवादी प्रगति के द्वारा नहीं, बल्कि साम्प्रदायिक अनुपात को एक न एक रूप में लागू करके हल करने की कोशिश की जा रही थी, उसी तरह भाषा के क्षेत्र में नरमदली पूँजीवादी लीडरों और लेखकों ने एक नयी ज़बान— ऊँची सांस्कृतिक जरूरतों को पूरा करने वाली एक नयी ज़बान—बनानेकी कोशिश इन जरूरतों को पूरा करनेके लिये आम जबान का विकास करके नहीं, बल्कि डिक्शनरियों से संस्कृत और फ़ारसी शब्दों को एक न एक रूप मे साम्प्रदायिक अनुपात के आधार पर जोड़-मिला कर की।

डिक्शनरी से पैदा हुई यह हिन्दुस्तानी निर्जीव थी। जिस मकसदके लिये उसे बनाया गया था उसे पूरा करने में वह नाकाम हुई।

दो लिपियोंमें हिन्दुस्तानीका लिखा जाना आज भी जबानके मसलेका कोई हल नहीं है। अगर दो लिपियोंमें इस्तेमाल किये गये लफ्ज अलग-अलग हैं, और तब भी दोनों शैलियों को हिन्दुस्तानी कहा जाता है तो इससे कभी न खत्म होने वाली गड़बड़ी और तू-तू मै-मै ही पैदा होती हैं।

अगर हिन्दुस्तानी के दो लिपियों में लिखे जाने से हमारा मतलब हिन्दी और उर्दू के दो लिपियों में लिखे जाने से नहीं, बल्कि भाषाके एक आम और प्रचलित रूप के दो लिपियों में लिखे जानेसे है, तो यह सुलझाव भी आज सही नहीं ठहरता। जब हम आम जबान को ऊँचे सांस्कृतिक कामों के लिये इस्तेमाल करते हैं तब वह हिन्दी और उर्दू के बीच के असली फ़र्क को भुला देता है। यह फर्क ज्यों-ज्यों समय बीतेगा, खत्म होता जायगा—मगर यह कितनी जल्दी होगा, यह इसपर निर्भर है कि हम उसे भुला देने के बजाय उसकी तरफ ध्यान देते हैं या नहीं और उसे इस तरह से दूर करने में जुट जाते हैं या नहीं जो उसे दूर करने का सबसे कारगर तरीका है। ऐसी लोकप्रिय हिन्दुस्तानी, जिससे फ़ौरन हिन्दी और उर्दू को उड़ा दिया जाय, चुटकी बजाते तैयार नहीं की जा सकती। इसलिये एक या दो लिपियों में लिखी हिन्दुस्तानी को सवाल का फ़ौरी सुलझाव नहीं माना जा सकता।

तब फिर हिन्दुस्तानी इलाकेके लिये जबानके मसलेका सिर्फ एक हल रह जाता है। हिन्दी और उर्दू दोनोंको उनके अपने मौजूदा रूपोंमें कायम रहने दिया जाय जिससे कि निकट भविष्यमें दोनोंका प्राकृतिक सम्मिश्रण सम्भव बन सके।

हिन्दी और उर्दूका मसला इस तरह हल नहीं हो सकता कि एकको खतम करके दूसरी कायम रहे। दोनोंका प्राकृतिक सम्मिश्रण ही सम्भव हल है। यह सम्मिश्रण अवामकी आम जबानको आधार बना कर, इस जबानके नियमोंका ऊपरी ढाँचे पर भी अनुसरण करके और अपने साहित्य और संघर्षोंको जनतासे जोड़कर, जिनके बिना भाषा और साहित्यकी बात सोची भी नहीं जा सकती, उसे कारगर बनाया जा सकता है।

पूँजीवादी-जमींदारी सरकारें, एकता के नाम पर एक जबान को कुचल कर दूसरी जबान को ऊपर उठाने की कोशिश कर रही हैं। इस तरह की नीति एकता की तरफ नहीं, बल्कि जबान के सवाल पर मेहनतकश जनता में साम्प्रदायिक भेदभाव और फूट की तरफ़ ले जाती है। ठीक यही आज पूँजीवादी लीडर चाहते भी हैं।

मावलंकर खुलेआम और बेशर्मी से कहते हैं कि भाषा की समस्या को अल्पमत की भाषा और संस्कृति को कुचल करके ही सुलझाया जा सकता है।

"हिन्दुस्तान टाइम्स" के उसी अंकमें जिसका जिक्र ऊपर हुआ है उन्होंने कहा है

" हम बड़े संकटमें फँसे हुए हैं; और अगर आखीर में किसी ग्रुप की संस्कृति और सभ्यता का नाश होना निश्चित है तो यही तर्क संगत है कि वह ग्रुप अल्पसंख्यक ग्रुप हो और बहुसंख्यक नहीं। "

पूँजीवादी लीडरों के सामने वेशक संकट मौजूद है। लेकिन संकट यह नहीं है कि बहुसख्यकों या अल्पसख्यकों की जबान कायम रहे। संकट यह है कि जिस वर्ग के वे प्रतिनिधि हैं उसे वे कैसे बचायें। उस वर्गके हितों की रक्षा में जो कि भारत की समूची जनताका शत्रु है, भाषाके सवाल पर वे बहुमत और अल्पमत में विद्वेष भड़का रहे हैं। मावलंकर ने संकट और समस्या का जो हल पेश किया है उसका यही मतलब है।

इस तरह का हल मजदूर-वर्ग को मंजूर नहीं हो सकता। जिस इन्सान के दिल में जनवाद की जरा भी भावना मौजूद है उसे यह मंजूर नहीं हो सकता। इस हलका मतलव है जबान के मसले पर शासक वर्गके हितों में जनता में और भी खून-खराबी और भेदभाव—उस वर्ग के हितों की हिफ़ाज़त में जो कि जनवाद और समाजवाद के लिये जनता के संघर्षों से घबड़ाया हुआ है।

एक वर्ग के रूपमें पूँजीपतियों और जमींदारों का कोई भविष्य नहीं है। वे उस अर्द्ध-औपनिवेशिक व्यवस्थाके मरते हुये वर्ग हैं, जो साम्राज्यवाद के साथ, जिसने कि उसे पाला-पोसा था, ढह रही है। ये मरते हुये वर्ग—एकता, समान संस्कृति और जनता की समान भाषा की बात सोच तक नहीं सकते। इस तरह की एकता जनता के बीच भेदभाव बढाने और उसका शोषण करने की उनकी योजना के लिये खतरे का बायस है। यही वजह है कि वे जनता के सामने यह हल पेश कर रहे हैं जिसका स्वीकार करना जनवादी सघर्षों के लिये आत्म-घातक होगा।

सगठित मजदूर-वर्ग के नेतृत्व में भारत की मेहनतकश जनता एशिया की उठती हुई जनता है। ये ही वे वर्ग हैं जो कल के महान और प्रतिभाशाली भारत का निर्माण करेंगे। केवल ये वर्ग ही वह दृष्टि रखते हैं जिससे कि उस एकता को मौजूदा वाद-विवाद के कुहरे को भेदकर देखा जा सकता है जिसका निर्माण आज भी जनता के आम संघर्षों के दौरान में हो रहा है। भारत की आम जनताके सामने कोई सकट नहीं है। उसका भविष्य स्पष्ट और प्रकाशमय है। इस भविष्य में धर्म और सम्प्रदाय के आधार पर कोई भेद-भाव नहीं हो सकता। इस भविष्य में एक को मारकर दूसरे को जिन्दा रखने के आधार पर जबरदस्ती लादी गयी एकता नहीं हो सकती। यह भविष्य समीप है। उसे जनता के आज के संघर्षों में तैयार किया जा रहा है।

इसलिये, मेहनतकशों और सभी जनवादी लोगों को हिन्दुस्तानी क्षेत्र में हिन्दी और उर्दू की समान सुरक्षा की मॉग करनी चाहिये। एक आम जबान का किस रूप में विकास होगा इसका निर्णय मौतकी कगारपर खड़े वर्गोंके प्रतिनिधियोंके हाथमें नहीं है। यह आम जनता है जिसने कि अपनी आम बोलचालकी जबानमें एकता हासिल की है। अपने क्षेत्रमें एक आम जबानके ऊँचे सांस्कृतिक स्वरूपके मसलेको भी वही हल करेगी। उसे दोनोंकी समान सुरक्षाकी माँग उठाना चाहिये जिससे कि संस्कृतिके

क्षेत्रमें अपनी वर्ग-एकताको लागू करनेका उसे समय मिल सके और अपनी बोलचाल की ज़बानके स्वाभाविक और जनवादी ढंगसे विकासके ज़रिये वह हिन्दी और उर्दूका सम्मिश्रण हासिल कर सके।

यह हल ज़बान के मसले पर आपसी नोंच-खसोटको कम करेगा, और एकताकी ताकतें बहुत ज़्यादा मज़बूत हो जायेंगी। और पूँजीपति-वर्ग ज़बान के सवाल को जनता को जनवादी क्रान्ति के मार्ग से हटानेके हथियार के रूप में इस्तेमाल करने में सफल नहीं हो पायेगा।

६. टेक्नीकल शब्दों की समस्या

यह समस्या पुनरुत्थानवादी के हाथ में आखिरी हथियार है जो हिन्दी का संस्कृतकरण और उर्दू का फ़ारसीकरण करने पर तुला हुआ है। जनप्रिय ज़बान, वह कहता है, उपन्यासों और नाटकों के लिये उचित हो सकती है; लेकिन दर्शन और साहित्य, विज्ञान और टेक्नीकल लफ्ज़ों के लिये शब्द क्लासिकल ज़बानसे लेने पर मजबूर होंगे। कहाँ रह जाती है तब तुम्हारी जनप्रिय जबान, तुम्हारी आम ज़बान और तुम्हारी आम संस्कृति?

संस्कृतकरण करनेवाला कहता है: चूंकि संस्कृत शब्द भारत की सभी भाषाओं में प्रचुर मात्रामें मौजूद हैं या वे थोड़ी कोशिश से समझे जा सकते हैं इसलिए सभी भारतीय भाषाओं में संस्कृत के शब्दों को क्यों न ले लिया जाय?

पहले तो यह याद रखना चाहिये कि भारतीय ज़बानें जो संस्कृत से उसके अपभ्रंश रूपों में पैदा हुई मानी जाती हैं, पिछले ५०० से भी ज़्यादा वर्षों से गैर-संस्कृत जनप्रिय स्वरूपों की तरफ़ बढ़ रही हैं।

ये स्वरूप अशुद्ध हैं या शुद्ध, यह एक दूसरा मसला है। मगर इसमें सन्देह की गुंजाइश नहीं कि वे जनप्रिय हैं। इन भाषाओं के प्रवाह के रास्ते को बदलने की और उनका संस्कृतकरण करनेकी कोशिश करना इतिहास के खिलाफ़ बाँध खड़ा करना है, जो लाज़िमी है कि टूट जायेगा और अपने साथ बांध खड़ा करने वालों को भी बहा ले जायेगा।

दूसरे, इस बात का कोई निश्चय नहीं कि संस्कृत शब्द जिस तरह संस्कृतकरण करनेवाले उन्हें अपना रहे हैं—इतने जनप्रिय हैं जितना कि कुछ लोग समझते हैं।

भारत की सबसे ज़्यादा संस्कृतमयी ज़बानों में बंगाली एक समझी जाती है। एक ज़माने में डा. सुनीत कुमार चटर्जी ने "बंगाली भाषा की उत्पत्ति और विकास" में लिखा था: "मौजूदा बंगाली में, बोलचाल की ज़बान में इतने कम संस्कृत शब्द हैं कि आश्चर्य होता है" (भाग १, पृ. २२१)। इसका कारण यह है कि "तद्भव शब्द दैनिक जीवन से जुड़े हुये हैं, और कहना चाहिये कि, भाषा में उन्हें ही सबसे ज़्यादा काम करना पड़ता है।" (उपरोक्त, पृ. १९७-९८)

इस तरह संस्कृत से सम्बंधित बोलचाल की भाषाओं में जो संस्कृत शब्द रहते हैं वे अपने **तद्भव** रूपों में होते हैं--उन रूपों में जो " शुद्ध " नहीं हैं, बल्कि शुद्धतावादी के लिये " अशुद्ध " हैं। मौजूदा बोलचाल की जबानों में, न सिर्फ़ बंगाली में बल्कि सस्कृत से सम्बंधित सभी भाषाओं में " आश्चर्यजनक रूपसे " **तत्सम** शब्द (अपने शुद्ध रूप में सस्कृत शब्द) बहुत कम हैं।

इसलिये हिन्दी का सस्कृतकरण करके उसे जनप्रिय बनाने की माँग जनप्रिय भाषा के रूप में हिन्दी की प्रकृति के विरुद्ध है। इसीलिये, हिन्दी से प्रेम रखनेवाले सभी लोगों को उसका विरोध करना चाहिये।

उर्दू का फारसीकरण करने की माँग इसी प्रकार जनप्रिय भाषा के रूप में उर्दू की प्रकृति के विरुद्ध है। इसीलिये, उर्दू से प्रेम रखने वाले सभी लोगों को उसका विरोध करना चाहिये।

इसका यह मतलब नहीं है कि हिन्दी और उर्दू को क्लासीकल भाषाओं से शब्द नहीं लेने और गढ़ने चाहिये। अगर यह काम आम बोलचाल की जबान की प्रकृति को ध्यान में रखकर बुद्धिमानी से किया जाता है, तो जबान के जनप्रिय रूप को खराब किये बिना वह उसे और धनी बनायेगा। शब्दों को लेने और गढ़ने में आम जबान के सृजनात्मक गुणों को नजरन्दाज नहीं करना चाहिये। ना ही हिन्दी और उर्दू में जहाँ तक ऊपरी ढाँचे का ताल्लुक है अंग्रेजी लफ्जों के दाखिले पर रोक लगाई जानी चाहिये। कितने ही लोगोंने, जो टेक्नीकल लफ्जोंकी विराट् डिक्शनरियाँ (हो सकता है कि छोटी भी) तैयार कर रहे हैं, उन लफ्जोंकी तरफ जो जनप्रिय होकर इस्तेमालमें आते हैं, तिरस्कार का रुख अख्तियार किया है। वे सोचते हैं कि जो **जनप्रिय** है वह **टेक्नीकल** नहीं हो सकता। विधानके मसौदेका तर्जुमा करनेवालोंका यही रुख रहा है। घनश्याम दास गुप्ता कहते हैं :

> " सभी भाषाओं में प्रचलित शब्द ढीले हैं और वे विशिष्ट अर्थ के परिचायक नहीं हैं...सभी भाषाओं में विशेष विषय की अपनी विशिष्ट शब्दावली होती है जो साधारण बोलचाल की परिधिसे विभिन्न होती है। " (**भारतीय संविधान का प्रारूप**, दिल्ली, १९४८)

विधान के मसौदे की विशिष्ट शब्दावली को समझने में सहायता के लिये अधपढे हिन्दी पाठक के लिये डा० रघुबीर ने एक ग्लासरी (शब्दसूची) तैयार की है। यह ग्लासरी (शब्दसूची) आम लफ्जों और विशिष्ट शब्दावली के रिश्ते पर गहरी रोशनी डालती है।

ग्लासरी के पहले तीन पन्नों के इन अग्रेजी लफ्जों को देखिये :

पार्टली, कान्ट्रीब्यूशन, ओपन; फायर-आर्म्स, ऑडिट; आउटस्टैंडिंग; अलाउंस; एक्ट (पार्लामेण्टी), वारंट; एडवोकेट, असेम्बल्ड, मीटिंग, नेस्ट, सीट; नोटीफाइड;

क्लेम; ऑर्डिनेन्स; आर्टिकिल; लाइसेन्स; ग्रान्ट; प्रैक्टिस; इन्टरवीन; डिप्लॉमैटिक; डीसेन्ट; रिमूवल; डिलीटेड; एक्सक्लूडेड; अनफोरसीन; फ्री; सेफ्टी; एजेण्ट; एडाप्ट; रिकगनाइज्ड; सब्सक्रिप्शन; प्रिवेल; स्ट्राइव; इंजीनियरिंग; डिमान्ड; एंगेज्ड; प्लीड; फ्रीडम ऑफ एक्सप्रेशन; एक्सप्रेस; एसाइन; रेलवे; लीस्ट; हायर, अण्डरस्टैंडिंग; माइनर; डिटेल्ड; वाइन्डिंग अप; एक्वायर; इत्यादि।

इनमें से एक भी शब्द ऐसा नहीं है जो गैर-टेक्नीकल ढंग की साधारण अंग्रेजी गद्य में इस्तेमाल न किया जाता हो। ये अच्छे साधारण अंग्रेजी शब्द हैं। ये शब्द न सिर्फ जनप्रिय हैं बल्कि बिना ढीले बने टेक्नीकल कामके भी हैं,--जैसा कि हर जबान में जनप्रिय शब्दों को माना गया है। इनमें से बहुतों को इस देश की अपढ़ और अशिक्षित जनता तक जानती है (वारंट, सीट, रेलवे—जिनके लिये डा. रघुवीर ने शब्द रचे हैं : **अधिपात्र, अधिष्ठान, अयोमार्ग**, आदि)। अगर ऊपर बताये गये अंग्रेजी शब्द और टर्म जनप्रिय होने के बावजूद टेक्नीकल माने जा सकते हैं तो कोई कारण नहीं कि यही नियम हिन्दी शब्दों पर भी लागू न किया जाय। उन्हें न अपनाने की घातक नीति का कारण सिर्फ एक ही हो सकता है। वह यह कि संस्कृति और साहित्य को जनता से दूर रखा जाय। जिस तरह पुराने दिनों में संस्कृति और साहित्यको कुछ थोड़ेसे लोगों की सम्पत्ति बना दिया जाता था, और जबान इन कुछ थोडे से सत्ताधारी लोगों की इस पवित्र सम्पत्ति की हिफ़ाजत करने का पार्ट अदा करती थी, उसी तरह आज कुछ लोग संस्कृति और साहित्य को थोड़े से सत्ताधारी लोगों की ही सम्पत्ति बनाये रखने पर तुले हैं। (लेकिन डा० रघुवीर की शब्दसूची की मुसीबत यह है कि थोड़े से सत्ताधारी लोग भी उसे नहीं समझ सकते।) इस अस्पष्टता को न्यायपूर्ण ठहराने की कोशिश की जाती है भारत की एकता और पिछले युग की महानत के नाम पर। ग्लासरी (शब्दसूची) की भूमिका में डा० रघुवीर ने कहा है :

> "हमने भारत की एकता को केवल भौगोलिक दृष्टिकोण से ही नहीं बल्कि ऐतिहासिक दृष्टिकोण से भी ध्यान में रखा है। भारत के विशाल और महान पुरातन युग में जो भी लाभदायक है, उसे हमने ले लिया है।"

दरअसल जो कुछ उन्होंने किया है वह इसका बिल्कुल उल्टा है। उन्होंने उन सभी शब्दों को छोड दिया है जो न सिर्फ़ हिन्दी बोले जानेवाले प्रान्तों में बल्कि दक्षिण में और दूसरी जगहों पर भी समझे जाते हैं। ऐसे शब्द उनके लिये टेक्नीकल नहीं हैं क्योंकि उन पर जनप्रियता का रंग चढ़ गया है। उन्होंने उन शब्दोंको भी भुला दिया जो पिछले दिनोंमें जनताके आदान-प्रदानके परिणाम स्वरूप प्रचलित हुये हैं।

डा० रघुवीरने जो तिरस्कारका दृष्टिकोण अपनाया है वह ऐसे बेहूदा और भद्दे शब्दोंकी रचना और बनावटमें सामने आया है जिन्हें देखकर संस्कृतकरणके घोर

समर्थकोंके भी छक्के छूट जाते हैं क्योंकि वह अवैज्ञानिक शब्दोंकी चरम सीमा है। यहाँ तक कि राहुल साकृत्यायनने डा० रघुवीरकी इस कोशिश की आलोचना करना जरूरी समझा और उनके अनुवादकी जगह उन्होंने अपना अनुवाद तैयार किया। इस अनुवादकी भूमिकामें उनकी माँग डा० रघुवीरकी माँगसे बुनियादी तौरसे भिन्न नहीं है अर्थात यह कि भारतकी राष्ट्रभाषा सस्कृतमय हिन्दी हो।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि बहुत से नये शब्द या तो दूसरी भाषाओं से लेने पडेंगे, या क्लासीकल शब्दों या धातुओं के आधार पर गढ़ने पड़ेंगे। यह काम ज़्यादा आसानी से और ज्यादा सन्तोषपूर्ण ढंग से किया जायेगा अगर उन लोगों की जरूरतों और सहूलियतों की तरफ भी ध्यान दिया जाय जो उन्हें अन्तमें इस्तेमाल करेंगे। इन शब्दों और टर्मों के रचयिताओं ने यह मान लिया है कि जिन लोगों को टेक्नीकल शब्दों की जरूरत होगी वे उनकी रची हुई डिक्शनरियाँ खोलेंगे और शब्दों का प्रयोग करने लगेंगे। यह प्राकृतिक प्रक्रिया को उल्टा कर देना है। पहले तो, ऐसे तमाम शब्दों को देखना चाहिये जो मौजूदा हालत में उन कामोंमें प्रचलित हैं जिनके लिये नये शब्दों को गढने की जरूरत है। दूसरे, जबान के मुहावरे को ध्यान में रखे बगैर सस्कृत, फ़ारसी और अंग्रेजी से शब्द नहीं लिये जाने चाहिये। तीसरे, अंग्रेजी शब्द जो योरप की दूसरी भाषाओं में प्रचलित हैं (यानी वे शब्द जो दरअसल अंग्रेजी नहीं बल्कि ग्रीक और लैटिन से लिये गये हैं) उन्हें सिर्फ़ इसलिये नहीं छोड़ देना चाहिये कि वे विदेशी हैं। बजाय इसके कि बिना किसी अपवाद के हर बार नयी शब्दावली गढ़ने का तमाशा खड़ा किया जाय जब जरूरी समझा जाय तब उनकी जगह अधिक जनप्रिय हिन्दुस्तानी शब्द रख लिये जायें।

आम बोलचाल की जबान के ऊपरी ढाँचे में जहाँ तक टेक्नीकल शब्दों का ताल्लुक है हो सकता है कि उनका सम्मिश्रण सबसे अखीरमें हो। लेकिन इस बातमें सन्देह नहीं किया जा सकता कि बुनियादी जबानकी तरह हिन्दी और उर्दूमें टेक्नीकल शब्दों की शब्दावली भी समान बनेगी। आज भी हम देखते हैं कि संस्कृतकरण के ऐसे समर्थक जैसे राहुल साकृत्यायन **प्रारूप** के बदले जिसे डा० रघुवीर ने इस्तेमाल किया है, उर्दू के **मसौदा**को मानते हैं। यह इस बातको दिखाता है कि वह दिन दूर नहीं जब हिन्दी और उर्दू के टेक्नीकल शब्दों में अदला-बदली और उनके एक-दूसरे में घुल-मिल जानेकी हम प्रक्रिया देखेंगे, और साक्षरता तथा जन-प्रिय शिक्षाके प्रसार के साथ ही लाजिमी तौरसे दोनोंकी एक ही समान टेक्नीकल शब्दावली होगी।

इसमें शक की गुंजाइश नहीं कि ऐसे टेक्नीकल शब्द जो शुद्धताके आधार पर नहीं बल्कि आम बोलचाल की जबान की प्रकृति की अनुकूलता के आधार पर गढ़े गये हैं ज़्यादा समय तक ठहरने वाले और जनता-द्वारा मान्य होंगे।

इस तरह हिन्दी और उर्दू के जनप्रिय स्वरूपको कायम रखने और विकास करनेके हितोंकी दृष्टिसे केवल संस्कृत और विदेशी भाषाओंसे शब्द गढ़ना अनुचित है। वे

नियम जो बोलचालकी जबानके निर्माण और उन्नतिको संचालित करते हैं लाजिमी तौरसे ऊँची टेक्नीकल शब्दावली पर भी असर डालेंगे।

७. लिपिका सवाल

यह जानी-मानी बात है कि लिपि भाषाका अभिन्न अंग नहीं है। योरपकी अनेक भाषाओंमें लैटिन अल्फावेटों (अक्षरों) का इस्तेमाल किया जाता है, लेकिन इससे वे एक भाषा नहीं बन जातीं। भारतमें, हिन्दी और मराठीमे लगभग एक ही लिपिका प्रयोग होता है, फिर भी दोनों जबानोंमें बहुत ज़्यादा अन्तर है। इस मानीमें लिपिका सवाल गौण है। खास सवाल है शब्दावलीका, राष्ट्रके सभी सास्कृतिक और राजनीतिक कामोंके लिये समान भाषाके विकासका।

फिर भी, लिपियों की भिन्नता ने हिन्दी और उर्दू को एक दूसरे से अलग रखने में और उनके अन्तरको कायम रखने में मदद की है। इनमें से एक जबान के पाठकों और लेखकोंका दूसरी जबान का थोड़ा और ज्ञान कर लेने से जहाँ यह अन्तर दूर किया जा सकता था, वहाँ इस कारण से वह कायम रहा है। इसलिये, एक लिपि, लिखने की दोनों शैलियों को निकट लाने और उनकी प्राकृतिक सम्मिश्रण की प्रक्रियामें मदद करेगी।

एक लिपि का अपनाना स्वेच्छित रूपसे ही हो सकता है। किसीकी मर्जीके खिलाफ़ कोई लिपि उस पर नहीं लादी जा सकती। परन्तु मजदूर-वर्ग को एक समान जबान अपनानेका आन्दोलन चलाना चाहिये जिससे कि हिन्दी और उर्दू का सम्मिश्रण जल्दीसे जल्दी सफल हो सके। यह लिपि मेरी रायमें थोड़ी रद्दोबदलके बाद देवनागरी होनी चाहिये।

८. पिछड़ी हुई जातियोंकी ज़बानोंका सवाल

भारत में मराठी, बंगाली, तामिल, तेलगू वगैरा अच्छी तरह से विकसित जबानों के अलावा ऐसे भाषा-क्षेत्र हैं जहाँ सामन्तवाद के हावी रहने की वजह से कई बोलियों (डाइलेक्टों) को मिला कर एक स्टैण्डर्ड जबान का बन जाना मुमकिन नहीं हो सका है। ऐसा एक क्षेत्र राजस्थान है जहाँ एक-दूसरी से मिली-जुली कई बोलियाँ बोली जाती हैं। इन क्षेत्रों को अपनी भाषा और संस्कृति को विकसित करने का हक देने से इन्कार किया जा रहा है और कहा जा रहा है कि चूँकि वहाँ सिर्फ बोलियाँ हैं जिनका वर्तमान भाषाओं में विकसित होना अभी बाकी है, इसलिये ऐसे क्षेत्रोंकी जनता को अपनी जबान के रूपमें हिन्दी स्वीकार कर लेनी चाहिये।

इस तरह का दृष्टिकोण जनवाद-विरोधी है और उस जगहको शोषण का क्षेत्र बनाये रखने की किसी एक जाति या एकसे ज्यादा जाति के पूँजीपति-वर्ग की महत्वाकांक्षा को प्रकट करता है।

इस तरह की निश्चित सीमाओं वाले क्षेत्रों के अलावा ऐसे क्षेत्र हैं जिन पर दो पड़ोसी जातियों के पूँजीपति हावी होने के लिये लड़ते हैं जैसे बिहार का आदिबासी इलाका, जिस पर बंगाल और बिहार, दोनों का पूँजीपति-वर्ग अपना हक जताता है। इस तरह के इलाकों में रहने वाली जनता को शिक्षा के कामों के लिये अपनी ज़बान इस्तेमाल करने का हक नहीं दिया जा रहा है और उनकी अपनी ज़बान के बदले हिन्दी या कोई दूसरी ज़बान लादी जा रही है।

इस तरह की नीति जनवाद-विरोधी है और इन इलाकों की पिछड़ी हुई जनता का शोषण करने की पूँजीवादी ग्रुपों की महत्वाकांक्षा को प्रकट करती है।

इस आदिबासी जनता के अलावा ऐसी जनता भी है जो अब भी आदिकालीन सामाजिक व्यवस्था में रह रही है और पड़ोसी जातियों में पूँजीवाद का विकास जिनका धीरे-धीरे सफ़ाया किये दे रहा है। इस तरह के लोग हैं मध्यप्रान्त और राजपूताना के आदिबासी जिनकी ज़बान इन आदिकालीन लोगोंके साथ-साथ मिटती जा रही है।

ऊपर बताये इन तीन तरह के लोगों के सांस्कृतिक और राजनीतिक हकों के लिये लड़ना मजदूर-वर्ग और सभी जनवादियोंका कर्तव्य है। इसलिये उनकी ज़बानका सवाल सिर्फ़ किताबी महत्वका नहीं है; यह उनका शोषण करने और उनकी ज़बानको कुचलने की पूँजीवादी नीति के विरोध में उनकी अपनी ज़बान के ज़रिये सांस्कृतिक और सामाजिक विकास का सवाल है।

९. बोली या ज़बान के अनुसार जनपद बनाने का सवाल

यह सबको अच्छी तरह मालूम है कि राहुल सांकृत्यायन अभी हाल तक अवधी, ब्रजभाषा, बुन्देलखण्डी इत्यादि बोले जानेवाले इलाक़ों में जनपद कायम करने की माँग करते आये हैं। इसमें उनका अनुसरण किया शिवदान सिंह चौहान ने (उनकी पुस्तक **प्रगतिवाद** में **जनपद आन्दोलन** पर उनकी रिपोर्ट देखिये)। इनके अलावा दूसरे और भी कई लेखक थे जो प्रगतिशील विचारों के लिये प्रख्यात नहीं थे जैसे व्यौहार राजेन्द्र सिंह, पं. बनारसी दास चतुर्वेदी, इत्यादि जिन्होंने उनका अनुकरण किया। यहाँ हमारे सामने दो सवाल हैं: (१) अवधी, ब्रजभाषा, बुन्देलखण्डी इत्यादि बोलियाँ (डाइलेक्ट्स) हैं या भाषाएँ? दूसरे शब्दों में, इनको बोलनेवाले लोग, एक जाति कहे जा सकते हैं जिनमें जातियों के शक्तिशाली तत्व मौजूद हैं या वे हिन्दुस्तानी बोलनेवाली ज्यादा बड़ी जाति के ही हिस्से हैं? (२) क्या इनमें से हर एक का एक जनपद या प्रान्त होना चाहिये?

पहले सवाल के सिलसिले में हम जाति के बारे में स्तालिन की परिभाषा को देखें।

अवधी, ब्रजभाषा इत्यादि बोलने वालों पर इस परिभाषा को लागू करने पर हम क्या पाते हैं?

ऊपर की बोलियों या जबानों को बोलने वालों के सिलसिले में हम कुछ ख़ास बातें पाते हैं। देहातों में लोग कई बोलियाँ बोलते हैं जो एक साथ मिलाने पर अवधी या ब्रज-भाषा कही जाती हैं। इस तरह उन्नाव, सीतापुर, इलाहाबाद जिलों की अवधी में बहुत अन्तर है और यह सिर्फ़ उच्चारण इत्यादि तक ही सीमित नहीं है। यह अन्तर व्याकरण के रूपों तक जाता है। अपने बीच के कुछ पढ़े-लिखे लोगों को छोड़कर समूची किसान जनता अवधी और ब्रजभाषा को अलग-अलग रूपों में बोलती है।

मजदूर-वर्गमें, ख़ास तौर से औद्योगिक सर्वहारामें हम देखते हैं कि उसकी जबान अलग-अलग इलाकों के किसानों की बोलियोंसे किसी तरह मेल नहीं खाती। मिसालके लिये कानपुर में हम उन्नाव, रायबरेली, सीतापुर, गोण्डा, यहाँ तक कि छपरा और गाजी-पुरसे आनेवाले मजदूरोंको एक ही मिलमें काम करते और इस तरह कानपुरके औद्योगिक सर्वहारा वर्गके रूपमें देखते हैं। यही हम लखनऊमें (रेलवे वर्क-शॉपोंमें) देखते हैं और कुछ कम मात्रामें आगरा और झाँसी में। यूनियनों, मीटिंगों आदिमें मजदूर बातचीत और काम कैसे करते हैं? वह मजदूर जो देहातसे नया-नया आया है उसी जबानमें बातचीत करता है जो अब तक एक किसानकी तरह वह अपने गाँवमें बोलता था। उसके नये साथी जो उसकी जबानको नहीं बोलते आये हैं आसानीसे उसे समझ लेते हैं। कुछ वक्त बाद वह खड़ी बोली या हिन्दुस्तानी सीख लेता है और इस जबानमें अपने साथियोंसे वह आसानीसे बातचीत करता है गोकि घरमें वह वही जबान बोलता रह सकता है और अक्सर बोलता रहता है जो वह गाँवमें बोलता था।

इस तरह हिन्दुस्तानी बोले जानेवाले इलाकेमें मजदूर-वर्ग अवधी, ब्रजभाषा, इत्यादि बोले जाने वाले इलाकोंसे आये लोगोंसे बना है। उसका समान वातावरण, समान आर्थिक सम्बंध उसके एक जबानमें बातचीत करनेमें, जो ऊपर बतायी गयी जबानोंमेंसे एक भी नहीं बल्कि खड़ी-बोली या हिन्दुस्तानी है, मदद करते हैं। अखबारों, अर्जियों या हैण्डबिलों में झाँसी, आगरा, कानपुर और लखनऊ के मजदूर को बुन्देलखण्डी, ब्रजभाषा या अवधी इस्तेमाल करते अभी तक नहीं देखा गया है। वे बिना अपवादके हिन्दी या उर्दूका सहारा लेते हैं और उनकी बातचीत में उनका (हिन्दी या उर्दू का) खास रंग नहीं मौजूद रहता है।

मध्यवर्गोंके सिलसिले में भी हम यही बात पाते हैं। शहरों के शहरी मध्यवर्ग जिनका ऊपर जिक्र किया जा चुका है, घनिष्ठ आर्थिक और सामाजिक कड़ियों से बँधे होते हैं और वे नियमित रूप से हिन्दुस्तानी बोलते हैं। मिसाल के लिये, ब्रज, अवधी और बुन्देलखण्डी इलाकों के युवकों और युवतियों में विवाह मध्यवर्गमें बिल्कुल आम चीज हैं, और ऐसे बहुत थोड़े लोग होंगे जो सोचते होंगे कि इस प्रकार वे अन्तरजातीय विवाह-सम्बंधों की कोशिशें कर रहे हैं। यह बात यू. पी. के उन साहसिक नौजवानों और युवतियों पर लागू नहीं है जो अपना संगी उन में से चुनते हैं जो बंगाल या गुजरातमें रहते आये हैं और बंगाली या गुजराती भाषाएँ बोलते आये हैं।

साहित्य के सिलसिले में हम एक और दिलचस्प बात देखते हैं। मध्ययुगमें, मुगल सम्राटों के काल में और नवाबों और राजाओं के शासन के दिनों में (जो आज भी देश के बहुत से हिस्सों मे खत्म नहीं हुये हैं) ब्रजभाषा और अवधी दोनों ही साहित्यिक अभिव्यंजना का माध्यम थीं। कुछ कवियों ने, जैसे महान तुलसीदासने दोनों में लिखा है। और कुछ कवियों ने जैसे सूरदास और जायसी ने क्रमशः ब्रजभाषा और अवधी में लिखा है। उनमें बहुतसे मुसलमान कवि भी थे जिन्होंने ब्रजभाषा या अवधी में लिखा है। १९ वीं सदी में हम एक नयी प्रवृत्ति देखते हैं। हम देखते हैं कि बहुतसे लेखक जो घरोंमें ब्रजभाषा या अवधी बोलते थे, गद्यके लिये खड़ी बोलीकी तरफ़ मुड़े। यह बात हिन्दी और उर्दू दोनों में ही थी। हिन्दी में कविता का माध्यम बनने के लिये ब्रजभाषा और खड़ी बोलीका सघर्ष बहुत दिनों तक चलता रहा और अन्तमें ब्रजभाषा की जगह खड़ी बोली ने ली। उर्दू में सघर्ष खड़ी बोली और ब्रजभाषा के बीच में नहीं बल्कि फ़ारसी और खडी बोली में था। अन्त में फारसी को कविता के माध्यम के लिये खड़ी बोली के सामने झुकना पड़ा। गालिब की तरह के कवियों की सख्या कम थी जिन्होंने उर्दू से ज़्यादा फ़ारसी में लिखा। हिन्दी लेखकों में हम देखते हैं कि भारतेन्दु भोजपुरी बोलते थे, प्रताप नारायण मिश्र अवधी बोलते थे, राधा चरण गोस्वामी ब्रजभाषा बोलते थे लेकिन वे सब गद्य खडी बोली में लिखते थे। ये लेखक अवधी और बृजभाषा का प्रयोग सिर्फ कविता के लिये करते थे, और ये बोलियाँ आज भी उसके लिये इस्तेमाल की जाती हैं, खास तौर से ग्राम्य कविताओं के लिये। ऐसा न सिर्फ गाँव के गवैये करते हैं बल्कि कुछ शहरके कवि भी करते हैं।

साहित्य में जिस नयी प्रवृत्ति का ज़िक्र ऊपर किया गया है, वह सिर्फ १९ वीं सदी में ही नहीं शुरू हुई। वह और पहले शुरू हुई थी। लेकिन इसमें कोई सन्देह नहीं कि एक निश्चित साहित्यिक प्रवृत्ति के रूप में वह १९ वीं सदी में ही विकसित हुई, फली-फूली और उसने अपना असर दिखाया।

इस प्रवृत्ति का कारण क्या था? ऊपर बताये गये तथ्यों का क्या कारण है?

ऊपर बतायी गयी प्रवृत्ति का कारण था १९ वीं सदी में भारत का आर्थिक विकास। यह नया आर्थिक विकास इस देश में पूँजीवाद की बढ़ती थी। यह १९ सदी में शुरू नहीं हुआ। शुरू-शुरू का व्यापारी-पूँजीवाद उन व्यापारियों से शुरू हुआ जो सुदूर दक्षिण में, हैदराबाद में, खड़ी बोली अपने साथ ले गये। लेकिन ब्रिटेन और दूसरे पश्चिमी राष्ट्रों के औद्योगिक पूँजीवाद से जब उसकी टक्कर हुई तो वह आगे नहीं बढ पाया। इससे उसका स्वाभाविक विकास मारा गया लेकिन इससे उसकी बाढ़ एकदम रुकी नहीं। १९ वीं सदी का काल वह काल है जब देश के बहुत से हिस्सों में नये पूँजीवादी सम्बंध पुराने सामन्ती सम्बंधों की जगह लेने लगे थे। खडी बोली की बढ़ती और उन दूसरे इलाकों में उसका प्रसार जहाँ मिली-जुली बोलियाँ बोली जाती थीं, नये आर्थिक सम्बंधों के विकास के ठीक साथ-साथ हुआ। इससे पता चल जाता

है कि क्यों मिलों और वर्कशापों में, समान आर्थिक सम्बंधों से बँधे हुये मजदूरों को हम एक आम जबान, अर्थात खड़ी बोली या हिन्दुस्तानी बोलते देखते हैं। इससे पता चलता है कि क्यों देहातों में, जहाँ सामन्ती सम्बंधोंका हावी बना रहना जारी रहा है, जहाँ आवागमन के साधन अब भी अविकसित हैं, शहर के मजदूरो की भाँति भाषा-सम्बंधी सम्मिश्रण और एकताकी प्रक्रियासे किसान नहीं गुजरे हैं। इससे पता चलता है कि क्यों मध्य वर्गों ने, जो वर्गोंके रूप में नये पूँजीवादी सम्बंधों के विकासकी सीधी उत्पत्ति हैं, किसानों से ज़्यादा खड़ी बोलीको अपनी जबान के रूप में अपनाया है और उसे विकसित किया है। इससे पता चलता है कि क्यों हिन्दी और उर्दू लेखकों में हम ऐसे लोगों को पाते हैं जो खड़ी बोलीसे भिन्न बोलियाँ बोलते रहे हैं। मैथिलीशरण गुप्त घरमें बुन्देलखण्डी बोलते हैं; राहुल साकृत्यायन भोजपुरी बोलते हैं; हिन्दी के कवि सुमन और उर्दू के शायर अली सरदार जाफ़री अवधी बोलते हैं या कभी बोलते थे। लेकिन वे सब खड़ी बोलीमें--उसके हिन्दी और उर्दू रूपों में लिखते हैं।

इसका मतलब है कि नये पूँजीवादी सम्बंधों के विकास के साथ, ऊपर बतायी बोलियों को बोलने वाले, घुलमिल कर एक जाति बन गये हैं। वे घुलमिल कर जनता का एक ऐसा स्थायी समुदाय बन गये हैं जो एक आम जबान बोलता है और जिनका एक समान जीवन है। फिर भी, यह विकास अपनी पूर्णता पर नहीं पहुँचा है, क्योंकि जैसा ऊपर कहा जा चुका है, अभी भी देश के बहुत से भागों मे, उस इलाके समेत जिसका हम हिन्दुस्तानी बोले जाने वाले इलाके के नाम से खास जिक्र कर रहे हैं, सामन्ती सम्बंध हावी हैं। सामन्ती सम्बंधों का हावी रहना ही वह कारण है जिससे कि यह सवाल, यानी कौन बोली है और कौन भाषा, एक विवादास्पद सवाल बना रहा है।

१९ वीं सदी में खड़ी बोली और और उससे सम्बंधित बोलियों के सिलसिले में जो बात सामने आयी वह सिर्फ इसी देश की विशेषता नहीं है। सभी देशों में जहाँ पूँजीवादी सम्बंधोंने सामन्ती सम्बंधोंकी जगह ली, वहाँ भी यही या इसी तरहकी प्रवृत्तियाँ सामने आयीं। लन्दनके आसपास बोली जानेवाली अंग्रेजी जबान, पेरिस के आस-पास बोली जानेवाली फ्रेंच जबान, मास्को के आस-पास बोली जाने वाली रूसी जबान, दूसरी बोलियों, जैसे इंग्लैण्डमे वेल्श और फ्रांसकी अत्यधिक विकसित साहित्यिक जबान प्रोवन्काल को पीछे छोड़कर साहित्यिक और सामाजिक आदान-प्रदानकी नयी ज़बानें बन गयीं। यह नये पूँजीवादी सम्बंधोंके विकासका सीधा परिणाम था जो सामन्ती सम्बंधोंके ऊपर हावी हुआ और जिसने नयी भाषा-सम्बंधी एकता कायम की। वर्गोंमे बँटे हुये समाजमें इस तरह की एकता दूसरी बोलियोंको दबाकर-कुचलकर कायम होती है। एक बोली द्वारा, जिसका कि आधिपत्य कायम हुआ है दूसरी बोलियोंके अच्छेसे अच्छे तत्वोंके स्वाभाविक रूपसे ग्रहण किये जानेके बजाय प्रक्रिया अधिकतर यह होती है कि दूसरी बोलियोंको दबा-कुचलकर एक बोली अपना आधिपत्य कायम कर लेती है। सोवियत संघमें हम देखते हैं कि अलग-अलग बोलियाँ बोलनेवालोंके जातीय विकासके साथ-साथ जबानके

स्टैण्डर्डाइज़ेशनकी प्रक्रिया दूसरे ढंगसे होती है। यहाँ सवाल एक बोली द्वारा दूसरी बोलियों को कुचलकर आधिपत्य ग्रहण करनेका नहीं होता, बल्कि सवाल होता है उस बोली द्वारा (दूसरी बोलियोंकी) अच्छी खूबियों, कुछ व्याकरण-सम्बंधी रूपों, मुहावरों, विशेष शब्दों आदिके ग्रहण करनेका जो स्टैण्डर्ड ज़बान बन रही है।

और यह बात कि किसान और मज़दूर-वर्ग के कुछ हिस्से स्टैण्डर्ड ज़बान भी बोलते हैं और अपनी घरेलू बोलियाँ भी सिर्फ़ भारत या हिन्दुस्तानी बोले जाने वाले इलाके की ही विशेषता नहीं है। हम उसे फ्रांस जैसे विकसित पूँजीवादी देश में भी पाते हैं। फ्रास में ब्रेटन डाइलेक्ट के सम्बंध में जे. वेन्द्रीएस ने कहा है : "एक ख़ास ज़बान के रूप में ब्रेटन, सार्डाइन मछलियों को पकड़ने और पैक करने की जगहों में काम करनेवाले मज़दूरों के कुछ ग्रुपों, नमक निकालने की जगहों में काम करने वाले 'पालूदियरों,' स्लेट मज़दूरों और बिसातियों में लम्बे अरसे तक कायम रह सकती है, और इस रूप में वह कब तक कायम रहेगी इसका संभवतः कोई अन्दाज़ा नहीं लगा सकता।" (जे. वेन्द्रीएस; लैन्ग्वेज; लन्दन, १९३१, पृ० २८६) इसी तरह बास्क डाइलेक्ट जो भाषा-वेत्ताओं द्वारा अध्ययन का बहुत प्रिय विषय होती है पश्चिमी पिरेनीज़ के प्रदेश में बोली जाती है। इसलिये मीले इस परिणाम पर पहुँचता है कि फ्रांस में हम ऐसी "अदृष्य परिवर्तनों की एक श्रृंखला देखते हैं जिसकी भौगोलिक सीमाएँ निश्चित रूप से नहीं बतायी जा सकतीं।" इसलिये यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि हिन्दुस्तानी बोले जाने वाले इलाके में स्टैण्डर्ड ज़बान के साथ-साथ भिन्न-भिन्न बोलियों का क़ायम रहना जारी है।

एक डायलेट (बोली) और ज़बान में अन्तर केवल भाषा सम्बंधी अन्तर नहीं है; यह अन्तर सामाजिक भी है। मध्ययुग में भारत में ब्रजभाषा और फ्रास में प्रोवन्काल पूरी तरह विकसित साहित्यिक ज़बानें थीं। लेकिन पूँजीवाद के आने के साथ-साथ स्टैण्डर्ड ज़बान से बदल कर उनकी भूमिका बोली की हो गयी। उसके बदले पेरिस और दिल्ली (और मेरठ) के इर्द-गिर्द की बोलियाँ व्यापारियों के एक नये वर्ग के द्वारा दूर-दूर तक फैलाई गयीं। बोलियों (डाइलेक्टों) से बदलकर वे ज़बानें बन गयीं। दग़स्तान में बहुत सी बोलियाँ बोली जाती थीं और उनमें से एक भी विकसित हो कर स्टैण्डर्ड ज़बान नहीं बनी। सोवियत सत्ता की स्थापना से ज़बान के एकीकरण और स्टैण्डर्डइज़ेशन में जिस ढंग से मदद पहुँची वह पूँजीवाद से भिन्न था।

ऊपर के तथ्यों को जाँचने पर इसी परिणाम पर पहुँचा जा सकता है कि उन क्षेत्रों में जहाँ देहातों में अवधी, ब्रजभाषा आदि अब भी बोली जाती हैं, खड़ी बोली स्टैण्डर्ड ज़बान के रूपमें विकसित हुई। इस स्टैण्डर्डाइज़ेशन ने इन बोलियों (डाइलेक्टों) को बोलनेवाले लोगों की सामाजिक और सास्कृतिक उन्नति में—थोड़ी-बहुत जितनी भी वे साम्राज्यवाद और पूँजीवाद के जुए के नीचे कर सकते थे—मदद दी है। जहाँ ये

बोलियाँ (डाइलेक्टें) बोली जाती हैं वे उन क्षेत्रों से आनेवाले मज़दूरों को एक-दूसरे के निकट लाने में उनकी मदद करती हैं। और इस तरह ज़बान के स्टैण्डर्डाइज़ेशन का जनता की जनवादी क्रान्ति के लिये बहुत बड़ा महत्व है। इन बोलियों में बहुत सी ग्रामीण कविता लिखी गयी है। इस तरह की कविता और ज़्यादा लिखी जानी चाहिये क्योंकि वह इन बोलियों के सांस्कृतिक सम्मिश्रण में सहायक होती है। हिन्दी और उर्दू के इन बोलियों के उन मूल्यवान तत्वों को खतम करके उन पर आधिपत्य कायम करने के बजाय इन बोलियों में से इन तत्वों को ग्रहण करने में वह सहायक होता है। इस क्षेत्र में सामाजिक और साहित्यिक कामों के लिये एक स्टैण्डर्ड ज़बान के इस्तेमाल में वह आड़े नहीं आता। **जनयुग** और **नया ज़माना** ऊपर बतायी गयी ज़बानों के क्षेत्र के मज़दूरों और किसानों को एक-दूसरे के निकट लाये हैं और उनकी वर्ग-एकता को उन्होंने मज़बूत बनाया है। अगर हम आज इन अखबारों को अवधी और ब्रजभाषा आदि में निकालने की बात सोचें तो यह सम्भव नहीं होगा। मैंने **जनयुग** के लेखों का यह देखने के लिये अवधी मे अनुवाद करने की कोशिश की है कि इससे उन्नाव और रायबरेली के किसान और मज़दूर के लिये क्या फ़र्क होगा। मैने देखा कि व्याकरण के रूपों को छोड़ कर ९८ प्रतिशत शब्द ज्यों के त्यों रखना पड़ते हैं। बात यह है कि ये बोलियाँ एक दूसरे से इतनी निकट हैं कि अगर हमें उसी चीज़को—खास तौरसे अखबारों की चीज को—सभी बोलियों में लिखना पड़े, तो हम ९८ फ़ी सदी समान शब्दों को इस्तेमाल करके ही ऐसा कर सकते हैं। जो २ फ़ी सदी अन्तर रहता है वह व्याकरण के स्वरूपों और कुछ स्थानीय शब्दों का अन्तर है। यह भी सच है कि ये बोलियाँ ऐसे मुहावरों, प्रवाह युक्त अभिव्यंजनाओं और सूक्ष्म अर्थों और सौन्दर्य से भरे शब्दों और वाक्यों से भरी-पूरी हैं जिन्हें स्टैण्डर्ड ज़बान के लेखकों ने सीखने-समझनेकी बहुत कम कोशिश की है। आम जनता की बोलियों में रत्नों का ऐसा भण्डार भरा है जिसे अवतक टटोला नहीं गया है। यह स्टैण्डर्ड ज़बान की व्यंजना-शक्ति को बेहद बढ़ा देगा। लेकिन इन ज़बानों को बोलनेवालोंको जातियाँ मानने की माँग से यह एकदम भिन्न है।

इसलिये, अवधी, ब्रजभाषा, बुन्देलखण्डी इत्यादि को स्वाधीन जातियों की स्टैण्डर्ड ज़बान मानने की राहुल सांकृत्यायन और दूसरों की माँग प्रतिक्रियावादी माँग है जो उन सामन्ती-वर्गों की मदद करती है जो तेजी से ढहती हुई एक सामाजिक व्यवस्था को इस तरीके से कायम रखना चाहते है। यह उन मज़दूरों की एकता के रास्तेमें रुकावट डालती है जो दरअसल हिन्दुस्तानी बोलनेवाली एक जाति के अंग हैं।

हमे खड़ी-बोलीसे सम्बंधित इन बोलियों और उन बोलियोंके अन्तर को भी देखना चाहिये जो दूसरे इलाकोंमें बोली जाती हैं जैसे हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, गढवाल इत्यादिमें जहाँ सामन्ती सम्बंधोंके कायम रहनेसे राष्ट्रीय एकता और भाषाओंके सम्मि-

श्रणमें रुकावट आई है। इन क्षेत्रोंकी जनताके जातीय विकासको अपने वर्ग-स्वार्थोंके हितमें कुचल कर पड़ोसी जातियोंके पूँजीपति उनका शोषण करनेकी घात लगाये हैं।

दूसरा सवाल कि क्या इन बोलियोंमेंसे हरेकका अपना जनपद होना चाहिये ज़्यादा जल्द निपट जाता है। सोवियत यूनियनमें जबानोंकी संख्या ६० से ज्यादा है और जैसा कि हर कोई जानता है उन रिपब्लिकों की संख्या जिनको मिलाकर सोवियत यूनियन बना है इससे बहुत कम है। यह इसलिये कि स्तालिनके शब्दोंमें "जातीय समस्याको हल करनेमें **प्रादेशिक स्वायत्त शासन बहुत ज़रूरी तत्त्व है।"** **(मार्क्सवाद और जातियोंका सवाल,** अ. सं. पृ. ५८)। स्तालिन ने बताया है कि क्यों प्रादेशिक स्वायत्त शासन "बिना एक समान केन्द्रके फैसलेका इन्तजार किये हुये उस प्रदेशके प्राकृतिक साधनोंका इस्तेमाल करने और उसकी उत्पादक शक्तियोंका सबसे अच्छी तरह विकासे करनका—यानी ऐसे कामोंका जो जातीय सांस्कृतिक स्वायत्तशासन के लिये अनुकूल नहीं, मौका देता है।" (उप.) इस तरह यदि अवधी, व्रजभाषा इत्यादि जातियोंकी जबानें होतीं भी तो इसका मतलब यह किसी तरह न होता की उतनी ही सख्यामें रिपब्लिकें बनायी जायें। उनमेंसे हर एक के लिये रिपब्लिक (जनपद) की माँग तब और भी हास्यास्पद हो जाती है जब उन्हें बोलियाँ (डाइलेक्ट) मान लिया जाता है। यह कोई अर्थहीन बात नहीं है कि महाराजा ओरछा जैसे लोग भी इस तरह की माँगों में खास दिलचस्पी लेते आये हैं।

भारत में भाषा की समस्या के ये चन्द पहलू हैं।

(समाप्त)

Regd. No. B5607

बी. एम कौल द्वारा न्यू एज प्रि. प्रेस, १९० वी खेतवाडी मेनरोड, बम्बई ४ मे मुद्रित और " जनवादी " आफिस, राजभुवन सैण्डहर्स्ट रोड, बम्बई ४ से प्रकाशित और सम्पादित।

इस अंक में—

- कॉ. स्तालिन की ७० वीं वर्षगाँठ के अवसर पर "जनवादी" के सम्पादक-मंडल का अभिनन्दन-प्रस्ताव
- लेनिन—रूसी कम्युनिस्ट पार्टी के संगठनकर्ता और नेता
- अ. भा. शान्ति सम्मेलनका ऐतिहासिक महत्व
- गाँधीवाद का वर्ग-सार
- मजदूर-वर्गके एके के लिये संघर्ष—कम्युनिस्ट पार्टियोंका सबसे जरूरी काम
- नये साल में-नयी कामयाबियों की तरफ

१०

एकमात्र मार्क्सवादी-लेनिनवादी हिन्दी मासिक

★

लेनिन—हमारे शिक्षक और नेताको याद करो, उन्हें प्यार करो और उनका अध्ययन करो।

दुश्मनों, भीतरी और विदेशी, के ख़िलाफ़ लड़ो और उन्हें मिटा दो— जैसा कि लेनिन ने हमें सिखाया है।

नये जीवन, नयी व्यवस्था और नयी संस्कृति का निर्माण करो—जैसा कि लेनिन ने हमें सिखाया है।

छोटी छोटी चीज़ों को करने से कभी इनकार न करो क्योंकि छोटी छोटी चीज़ों से ही बड़ी चीज़ें बनती हैं— यह लेनिन का एक महत्त्वपूर्ण आदेश है।

—जोसेफ़ स्तालिन

[जनवादी के पाठकों से अपील : देखिये पृष्ठ ६३]

जनवरी, १९५०	अंक १०	मूल्य ८ आना
	चन्दा	
वार्षिक ५ रु.	छमाही ३ रु.	तिमाही १ रु. ८ आ.

वी. एम. कौल द्वारा न्यू. एज. प्रिं. प्रेस, १९० बी. खेतवाडी मेनरोड बम्बई ४ में मुद्रित और "जनवादी" आफ़िस, राजभवन, सैण्डहर्स्ट रोड, बम्बई ४ से प्रकाशित और संपादित।

कॉमरेड स्तालिन की ७० वीं वर्षगाँठ के अवसर पर "जनवादी" के सम्पादक मण्डल का अभिनन्दन-प्रस्ताव

अन्तरराष्ट्रीय मजदूर-वर्ग के अद्वितीय नेता, मजलूम मानवता के सच्चे साथी और मुक्तिदाता, दुनिया के कम्युनिस्ट आन्दोलन और दुनिया की कम्युनिस्ट पार्टियों के पथ-प्रदर्शक और शिक्षक, कामरेड जोसेफ़ स्तालिन के सत्तरवें जन्म-दिवस पर '**जनवादी**' का सम्पादक-मण्डल उनका अभिनन्दन और अभ्यर्थना करता है।

हिन्दुस्तान का मजदूर-वर्ग कामरेड स्तालिन का चिर ऋणी है। कामरेड स्तालिन ने हमें चीन और हिन्दुस्तान पर अपने ऐतिहासिक भाषण और लेख दिये। और कामरेड स्तालिन ने हमें उपनिवेशो के मुक्ति-सग्राम का एक गहरा विश्लेषण देकर बतलाया कि विश्व-साम्राज्यवाद के खिलाफ़ युद्ध में वे सर्वहारा की कोतल हैं। इनसे हिन्दुस्तान के मजदूरो को अपने राष्ट्रीय तथा अन्तरराष्ट्रीय कर्तव्यों के भार की एकता को समझने और साम्राज्यशाही के शिकंजे से अपने देश की आजादी के लिये समझौताहीन सघर्ष चलाने में भारी मदद मिली।

लेनिन और स्तालिन द्वारा संस्थापित, तथा लेनिन की मृत्यु के बाद स्तालिन द्वारा संचालित, कम्युनिस्ट इण्टरनेशनल ने हिन्दुस्ताान के कम्युनिस्ट आन्दोलन को पाल-पोस कर बढाने और उसे रूप देने में निर्णायक पार्ट अदा किया। कम्युनिस्ट इण्टरनेशनल के प्रेरणाप्रद नेतृत्व की ही कीर्ति है कि आज से २५ वर्ष पहले हिन्दुस्तान के मजदूर-वर्ग ने पूँजीपतियो के एजेण्टों के असर से मुक्त एक संयुक्त ट्रेड युनियन आन्दोलन को संगठित करने का काम हाथ मे लिया।

कम्युनिस्ट इण्टरनेगनल की ही रहनुमाईमें हिन्दुतानके मजदूर-वर्गने सर्वहारा-अन्तरराष्ट्रीयताका पहला पाठ पढ़ा।

लेनिन और स्तालिनके लेखोंने हमारे पहले मार्क्सवादी कार्यकर्ताओंको तैयार किया।

स्तालिनके महान ग्रंथ "लेनिनवादके मूल-सिद्धान्त" ने हिन्दुस्तानके मजदूरोंको अपनी एक वर्ग-पार्टी स्थापित करनेकी जरूरत बतलायी, उसने उन्हे राष्ट्रीय और सामाजिक आजादीकी अपनी जंगका नेतृत्व करना सिखलाया। इसीसे " हिन्दुस्तानकी

म्युनिस्ट पार्टी" की नींव पड़ी जिसने कि लेनिन और स्तालिनके सिखाये बोल्शेविक पार्टीके सगठनात्मक सिद्धान्तोंको ही अपनी बनावटका आधार बनाया।

स्तालिन का महान ग्रंथ "सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) का इतिहास" हमारे सर्वहारा को उनके शान्ति के सघर्ष, अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवाद की गुलामी के नागपाश के खिलाफ सघर्ष, हिन्दुस्तान में जनवाद और समाजवाद लाने के सघर्ष में उनकी रहनुमाई करता है।

हिन्दुस्तान का मजदूर-वर्ग कामरेड स्तालिन का चिर ऋणी है।

यह बिल्कुल उचित भी है। कारण कि मार्क्स, एंगेल्स और लेनिन की तरह स्तालिन भी मानवता की उन महान् विभूतियों में हैं जिनका जीवन उस युगका जीवन है जिसमें कि वे रहते हैं, और जो अपने लेखों, कामों और शब्दों में अपने युग के समस्त अनुभव का निचोड़ रख देते हैं, जो वर्षों आगे देखते हैं, और जो सामाजिक विकास के विज्ञान में पूर्ण दखल रखने के कारण दुनिया के इतिहास में महान परिवर्तनों का आरम्भ करने की क्षमता रखते है, जो इतिहास के निर्माता और सृष्टिकर्ता हैं।

स्तालिन का जीवन हमारे युग की दुनिया को हिला देनेवाली सबसे बड़ी घटनाओं के साथ अभिन्न रूप से सम्बंधित है। अक्तूबर क्रान्ति, हस्तक्षेपकारियों के आक्रमण से सोवियत संघ की रक्षा, सोवियत संघ में समाजवाद का निर्माण, हिटलरी भेड़ियों के हमले से सोवियत की रक्षा और उनको परी तरह परास्त करना; सोवियत में तेजी से समाजवाद का पुर्ननिर्माण सोवियत सघ को कम्युनिस्ट समाज की स्थापना की ओर ले चलना—हमारे युग की इन सबसे बड़ी ऐतिहासिक घटनाओं से कामरेड स्तालिन का जीवन अभिन्न रूप से सम्बंधित है।

उतना ही उनका जीवन चीन के महान मुक्ति-संग्राम के साथ सम्बंधित है जिसकी उनकी भविष्यवाणी चालीस करोड़ चीनी जनता की पूरी आजादी द्वारा आज चरितार्थ हुई है। उनका जीवन उतना ही हिन्दुस्तान तथा दूसरे औपनिवेशिक देशोंकी आजादी की लड़ाई के साथ और पूँजीवादी देशोंके समाजवाद के सग्राम से सम्बंधित है। जब कभी किसी देशके आन्दोलन या उसके नेतृत्व ने ठोकर खायी, या गलत रास्ते पर चला गया, कामरेड स्तालिन के प्रेरणाप्रद और, बुद्धिमत्तापूर्ण सलाहों ने उसे सभाल कर खड़ा होने और फिर अपने मार्ग पर आगे बढ़नेमें मदद पहुँचायी।

कामरेड स्तालिन वह बोल्शेविक नेता हैं जिन्होंने लेनिन के साथ रहकर उस बोल्शेविक पार्टीको खड़ा किया जो कि सभी सर्वहारा-पार्टियोंके लिये आदर्श-नमूना है। कामरेड स्तालिन, लेनिनके वह साथी और शिष्य हैं जिसने मार्क्सवाद-लेनिनवाद का सच्चा और सही अर्थ रखना चाहनेवाले तीन लोगोंके हाथों से उद्धार किया। कामरेड स्तालिन महान अन्तर्राष्ट्रीयतावादी हैं जिन्होंने राष्ट्रों की समानता और आत्मनिर्णयके

अधिकार की हिमायत करके सोवियत संघ में बसनेवाली विभिन्न जातियों मे एकता और मित्रता स्थापित की। कामरेड स्तालिन वह महान मेमार हैं जिन्होंनें सभी पंचवर्षी योजनाओं का नकशा तैयार किया। कामरेड स्तालिन वह योद्धा और फौजी नेता हैं जिन्होंनें खुद ही हिटलरी फौजो की हार की योजना बनायी थी और जिनके नेतृत्व में अब सोवियत संघ लम्बे डग भरता हुआ कम्युनिज़मके लक्ष्यकी ओर बढ रहा है। कामरेड स्तालिन वह मुक्तिदाता हैं जिन्होने पूर्वी योरपके देशोकी जनताको फासिस्टो और उनके गुर्गों की राष्ट्रीय और सामाजिक गुलामीके बंधनोसे छुड़ाया है। कामरेड-स्तालिन वह मुक्तिदाता हैं जिन्होंनें जापानी और जर्मन फासिस्टोको परास्त करके करोडो चीनी जनता को आजादी और जनवाद दिलाया है।

स्तालिनकी ऐतिहासिक कामयाबियो और फतहयाबियोंने विश्व-साम्राज्यवादको करारी हारे खानेंको मजबूर किया है और दुनियाके मजदूरो और तमाम स्वतंत्रताप्रेमी मानवताके लिये निर्णायक जीते हासिल की हैं। दुनिया की अस्सी करोड़ जनता आजाद होकर शान्ति, जनवाद और समाजवाद की रक्षा के लिये मुस्तैद है। पूँजीवादी देशों और गुलाम उपनिवेशोके करोडो लोग भी साम्राज्यवाद और पूँजीवाद के खिलाफ आखिरी जंग के लिये तैयार हैं।

विश्व-पूँजीवाद मैदान हार चुका है। उसकी किला-बन्दियॉ एक-एक कर ढहती जा रही हैं। दुनिया के लोग अपनी ऑखो के सामने पूँजीवादी जनता की घुलती हुई शक्ति और शान्ति जनवाद तथा समाजवाद की आगे बढी हुई जबर्दस्त ताकत को देख रहे हैं। सभी देशो के लोग महसूस कर रहे हैं कि उनकी मुक्ति का दिन पास आ पहुॅचा है।

इसीलिये स्तालिन का नाम सभी देशो की जनता की आजादी—राष्ट्रीय और सामाजिक आजादी—का प्रतीक है।

दूसरे सभी देशो की जनता की ही भॉति, हिन्दुस्तान की जंगी जनता भी स्तालिन को सभी देशो के महान मुक्तिदाता, मजलूमो के सच्चे साथी, और उस नेता के रूप मे देख रही है जिसके नेतृत्व का मतलब है दुनिया भर मे समाजवाद की निश्चित विजय।

स्तालिन-विधान, दुनिया का सबसे जनवादी विधान है। सोवियत संघ ने युद्ध के पहले के वर्षों मे लोगो के जीवन की अवस्था सुधारने और खुशहाली लाने मे महान तरक्की की जिसकी वजह से वहॉ समाजवाद की अटल विजय हुई। सोवियत सघ की जनता ने तमाम देशो की आजादी, हिफाजत और हिटलरी फौजो को परास्त करने के लिये धन-जन का अपार बलिदान किया। युद्धके बाद, स्तालिनके नेतृत्व मे सोवियत सघने उत्पादन के क्षेत्र में अभूतपूर्व सफलता हासिल की जिससे कि चौतरफा खुशहाली का राज छा गया है और जनता का जीवनमान इतनी ऊँची सतह

पर पहुँच गया है कि सोवियत संघ आज लम्बे डग भरता हुआ कम्युनिज़्म की ओर बढ़ रहा है। पूंजीवादी दुनिया घुल-घुल कर मौतकी ओर रवाना हो रही है, संकट ने उसका दम घुट रहा है, और वह हर ओर अपार कष्ट, मुहताजी और बेकारी फैला रही है। अन्त, सोवियत संघ की सैनिक शक्ति अजेय है। इन सारी चीजों ने लोगों के दिलों में सोवियत संघ की जनता और उसके नेता स्तालिन के प्रति गहरे प्रेम, श्रद्धा और आदर की भावना भर दी है।

बाकी दुनिया के लोगों की भाँति, हिन्दुस्तान के लोग भी इन कामयाबियों की वजह से पूँजीवादी व्यवस्था से समाजवादी व्यवस्था की श्रेष्ठता को मानते हैं; दूसरी सभी नीतियों से स्तालिन-नीति की श्रेष्ठता को मानते है।

आपस के ये सम्बंध इस बात से और दृढ़ हो गये हैं कि एक ओर अमरीकी साम्राज्यवादी स्वतंत्रता प्रेमी जनता को एटम बम से मिटा डालने की धमकी दे रहे हैं; दूसरी ओर स्तालिन के नेतृत्व में सोवियत संघ सभी एटम-हथियारों के इस्तेमाल पर एकदम रोक लगा देने का प्रस्ताव कर रहा है और एटम की ताकत को मनुष्य की मेहनत को कम करने और चौतरफा शांति और खुशहाली कायम करने के लिये लगाना चाहता है।

आपस के ये सम्बंध इस बात से और दृढ़ हो गये हैं कि एक ओर जब कि अमरीकी साम्राज्यवादी दुनिया की जनता को एक नये महायुद्ध की आग में-सोवियत संघ और जनता के जनवादी देशों के खिलाफ युद्ध की आग में—झोंकना चाहते हैं, स्तालिन की रहनुमाई में सोवियत संघ सारी दुनियाकी जनताको शांति, देश-देश की मित्रता और सभी देशोंकी जनताके परस्पर सहयोगके रास्ते पर ले जाना चाहता है।

शांति और तमाम देशों की जनता में मित्रता की स्तालिन-नीतिमें सभी देशोंके लोगोंके हित छिपे हुये हैं, सभी देशोंकी आजादी अंतर्हित है। और वह नीति दुनियाके मजदूरोंकी अंतरराष्ट्रीय दृढ़ता और एकताके आपसी बंधनोंके बोलहो आना अनुरूप है।

दूसरी ओर अमरीकी साम्राज्यवाद की नीति है—सारी दुनियाको अपना गुलाम बनानेकी, अपनी चालके चलते, नये युद्धकी आग लगाने की। इस नीतिका मतलब है, सभी देशोंकी जनताका राष्ट्रीय गुलामीके बंधनों में जकड़ा जाना—पूँजीवादी इजारेदारों के शोषण और जुल्मका शिकार बनना।

अपनी इस नीतिमें अमरीकी साम्राज्यवादियों को हिन्दुस्तानके शासक हलकोंकी नीतिसे, जोकि हिन्दुस्तान को ब्रिटिश कॉमनवेल्थ में ले जाकर लड़ाई वालोंके दलमें पहले ही शामिल हो चुके हैं, मदद मिल रही है।

नेहरू सरकारने अमरीकी साम्राज्यवादियों को हिन्दुस्तानमें आ कर उसका शोषण करने का न्योता दिया है। उसने उन्हें इस बातकी गारंटी दी है कि मजदूरों और जनता

के आन्दोलनको दवा कर मुनाफे की गठरी काटने की छूट मिलेगी। यह न्योता पाकर अमरीकी साम्राज्यवादी हिन्दुस्तान को पूरा निगल जाने की योजना बना रहे हैं।

उनकी चाल है कि हिन्दुस्तान को सोवियत संघ के खिलाफ, दक्षिण-पूरवी एशिया के देशो के स्वतंत्रता-आन्दोलन के खिलाफ, युद्ध का अपना अड्डा बनाये। वे हिन्दुस्तान को लडाईबाज आर्थिक-नीति के चक्के से बाँधना चाहते हैं और उसके आर्थिक जीवन को पूरे तौर से अपनी मुट्ठी मे कर लेना चाहते हैं।

अमरीकी साम्राज्यशाही की युद्ध-नीति, साथ ही साथ हिन्दुस्तान पर, उसकी जनता पर, राष्ट्रीय गुलामी का जुआ लादने की नीति है।

इस काममे—हिन्दुस्तानकी जनता पर नये युद्ध और गुलामीका शिकंजा लादनेमें—नेहरू-सरकार उनकी टंडैल बनी हुई है।

साम्राज्यवादियोंको अपनी शैतानी चालोंमें हिन्दुस्तानकी सोशलिस्ट पार्टीके गद्दार नेताओंकी मदद मिल रही है जो तटस्थताकी आड़में सोवियन संघके खिलाफ झूठी बातोका प्रचार करते हैं और मजदूर-वर्गकी एकता भंग करते है।

हिन्दुस्तानके मार्क्सवादी और लेनिनवादी और उनके नेतृत्वमे चलनेवाले अवाम बिलकुल एक होकर शांति और राष्ट्रोंकी मित्रताके लिये निरंतर और अथक सघर्ष करेगे। क्योंकि वे जानते हैं कि शांतिका आन्दोलन उनकी अपनी राष्ट्रीय और सामाजिक आजादीका आन्दोलन है।

हिन्दुस्तान पर गुलामी का नागपाश चलाने वाले अंग्रेज-अमरीकियों के हुक्म के मुताबिक हिन्दुस्तान के प्रतिक्रियावादी शासक हलके हिन्दुस्तान की जमीन पर नये युद्ध का षडयंत्र रच रहे हैं। हिन्दुस्तान के मार्क्सवादी-लेनिनवादी उनके इस युद्ध षड्यंत्र को वेनकाव करेंगे। सारी जनता के सामने वे उनका भंडाफोड़ करेंगे और हिन्दुस्तान के धन और जन को सोवियत सघ तथा दूसरे देशो के लोगोंके खिलाफ हमले के गंदे उद्देश्य के लिये हरगिज इस्तेमाल न होने देंगे।

हिन्दुस्तान की प्रतिक्रियावादी ताकतो के खिलाफ, ब्रिटिश-अमरीकी गुलाम बनानेवालो के खिलाफ, अपने संघर्ष मे, शांति, जनवाद और समाजवाद की अपनी लडाई मे, हमे कामरेड स्तालिन के महान सिखावनो से निरंतर प्रेरणा मिल रही है।

दुनियाके जनवादी पक्षकी, जिसके कि नेता कॉमरेड स्तालिन हैं, महान जीतोंसे प्रेरणा पाकर, और दिल मे पक्का विश्वास लेकर कि साम्राज्यवादी लड़ाईबाजों और उनके राष्ट्रीय दलालोंका अंत बिल्कुल नजदीक है—हिन्दुस्तान की जनता—मजदूर, किसान, विद्यार्थी और महिलायें—गुलामी का नागपाश डालनेवाले अमरीकियो और उनके दलालो से लडने के लिये आँधी बनकर उमड़ रही है। साम्राज्यवादियों, पूंजीवादियो और जमींदारोंके गुटको जो भारतीय जनता पर जुल्म ढाता है, जो राष्ट्रीय आजादी की रक्षा करने, जनवादी और ट्रेड यूनियन अधिकारोके लिये लडने के क्रममें

मजदूरों और किसानोंको गोलियोंका निशाना बनाता है, पछाड़नेके लिए वह तूफान बन कर बढ़ रही है।

हिन्दुस्तान की प्रतिक्रियावादी ताकतोंके जुल्म से लड़ते हुये, और सोशलिस्ट नेताओं की गद्दारीका मुकाबला करते हुए, हिन्दुस्तानके अवाम दुनियाकी जनता की महान मुक्ति-फौज के लश्कर में शामिल हो रहे हैं। यह वह फ़ौज है जो आजादी, शांति और जनता के जनतंत्र के लिये लड़ती है। यह दुनिया के जनवादी दल की वह महान फौज है जिसके नेता जोसेफ स्तालिन हैं।

"**जनवादी**" का सम्पादक-मण्डल महान् स्तालिन को सलाम करता है जिनके शानदार नेतृत्व ने पूरी दुनिया की मुक्ति की तमाम पूर्व-अवस्थाएँ तैयार कर दी हैं।

सम्पादक-मण्डल सभी मार्क्सवादियों—लेनिनवादियों का आह्वान करता है कि अपने महान् नेता की शिक्षाओं को मनोयोगपूर्वक पढ़-समझ कर वे उस पर अधिकार पाने का प्रयत्न करें जिससे की मजदूर-वर्ग बिना भूल-चूक किये अपनी महान् जिम्मेदारी को पूरा कर सके।

स्तालिन ज़िन्दाबाद! सभी कम्युनिस्ट पार्टियों के शिक्षक, दुनिया के मज़दूर-आन्दोलन के नेता, सभी मुल्कों की जनता के सच्चे साथी और मुक्तिदाता कॉमरेड स्तालिन ज़िंदाबाद!

राष्ट्रों की आज़ादी और शांति का ध्येय--स्तालिन का ध्येय ज़िंदाबाद!

जोसेफ़ स्तालिन

लेनिन—रूसी कम्युनिस्ट पार्टी के संगठनकर्ता और नेता

(लेनिन की ५० वीं वर्षगाँठ के अवसर पर लिखा गया लेख)

मार्क्सवादियो के दो दल हैं। दोनों मार्क्सवाद के झण्डे के नीचे काम करते हैं और अपने को "सच्चा" मार्क्सवादी समझते हैं। मगर फिर भी वे एकरूप नहीं हैं। और इससे भी ज़्यादा बात, उनके बीच एक बड़ी खाई है, क्योंकि उनके काम के तरीके एक दूसरे के बिल्कुल उल्टे हैं।

पहला दल अपनेको, आम तौर पर ऊपरी मंजूरी तक, मार्क्सवाद की दिखावटी मानता तक ही सीमित रखता है। मार्क्सवाद का सार समझने मे असमर्थ या अनिच्छुक होने की वजह से, उसे अमल मे लानेमें असमर्थ या अनिच्छुक होने की वजह से वह मार्क्सवाद के जीवित और क्रान्तिकारी सिद्धान्तोंको जीवनरहित और अर्थ-रहित सूत्रोमे बदल देता है। वह अपनी कार्रवाइयोंको अनुभव पर, अमली काम जो सिखाता है उसपर आधारित नही करता बल्कि मार्क्सके उद्धरणों पर करता है। वह अपने काम और दिशायें असली वास्तविकताके विश्लेषणसे तै नहीं करता, बल्कि समानताओं और ऐतिहासिक अनुरूप घटनाओं से करता है। बातों और कामके बीच फर्क़ इस दलकी खास बीमारी है। इसीलिये निराशा और किस्मतके खिलाफ सदा शिकायत होती है जो बार-बार उसके पल्ले पड़ती है और उसे "अधरमे" छोड़ देती है। यह दल मेन्शेविक (रूस मे) या अवसरवादी (योरप में) कहलाता है। कॉ. तीष्का (योगिचिश) ने लंदन कांग्रेस में जब कहा था कि यह मार्क्सवादी दृष्टिकोण के सहारे खड़ा नहीं होता बल्कि **उस पर लेट जाता** है तो उन्होंने इस दल का खूब सही वर्णन किया था।

दूसरी ओर, दूसरा दल मार्क्सवाद की ऊपरी मंजूरी को नहीं बल्कि उसे हासिल करने को, उसे अमल मे लाने को पहला महत्व देता है। यह दल जिस बात पर

अपना ध्यान खास तौर से केन्द्रित करता है वह है परिस्थिति के सबसे अधिक अनुकूल रूपमें मार्क्सवादको हासिल करने के रास्ते और ज़रिये तै करना और जैसे परिस्थिति बदले वैसे इन रास्तों और ज़रियोंको बदलना। वह अपनी दिशाएँ और काम ऐतिहासिक समानताओं और अनुरूप घटनाओं से तै नहीं करता बल्कि आसपास की परिस्थितियों के अध्ययन से तै करता है। वह अपनी कार्रवाईयों को उद्धरणों और सूक्तियों पर आधारित नहीं करता बल्कि अमली अनुभव पर करता है। वह हर क़दम को अनुभवसे जाँचता है, अपनी गलतियोंसे सीखता है और दूसरोंको सिखाता है कि नयी जिन्दगीका निर्माण कैसे किया जाय। इससे असलमें यह बात साफ़ हो जाती है कि इस दल की कार्रवाईयों में बातों और कामों में कोई फ़र्क क्यों नहीं है और मार्क्स की शिक्षाएँ अपनी जीवित, क्रान्तिकारी शक्ति क्यों बनाये रखती हैं। इस दल पर मार्क्स का यह कथन पूरी तरह लागू किया जा सकता है कि मार्क्सवादी दुनियाको समझने से ही सन्तुष्ट नहीं रह सकते बल्कि उन्हें आगे बढ़ना और उसे बदलना चाहिये। यह दल बोल्शेविक, कम्युनिस्ट कहलाता है।

इस दलके संगठनकर्ता और नेता वी. आई. लेनिन हैं।

[१]

लेनिन—रूसी कम्युनिस्ट पार्टीके संगठन कर्ताके रूपमें

रूसमे सर्वहारा पार्टीका निर्माण विशेष परिस्थितियों में हुआ। ये परिस्थितियाँ उनसे भिन्न थीं जो पश्चिम में, उस समय थीं जब वहाँ मजदूर पार्टियाँ बनी थीं। पश्चिम में, फ्रास में और जर्मनी में मजदूर पार्टी ट्रेड यूनियनों से उस समय पैदा हुई थीं जब ट्रेड यूनियनें और पार्टियाँ कानूनी थीं, जब पूँजीवादी क्रान्ति की जा चुकी थी, जब पूँजीवादी पार्लामेण्टें मौजूद थीं, जब पूँजीपति वर्ग ने सत्ता की गद्दी पर पहुँच चुकने के बाद अपने को सर्वहारा के आमने-सामने पाया था। इसके विपरीत रूस में सर्वहारा पार्टीका निर्माण एक बेहद खूँख़ार निरंकुशशाही के नीचे, पूँजीवादी जनवादी क्रान्ति की उम्मीद में हुआ। वह ऐसे समय में हुआ जब एक तरफ पार्टी-संगठन ऐसे पूँजीवादी "कानूनी मार्क्सवादियो" से लबालब भरे थे जो मजदूर-वर्गका पूँजीवादी क्रान्तिके लिये इस्तेमाल करनेके प्यासे थे और जब दूसरी ओर ज़ारके दस्ते पार्टी की कतारों से उसके सबसे अच्छे कार्यकर्त्ताओं को छीन रहे थे। और उधर स्वयं उठे क्रान्तिकारी आन्दोलन के विकास की माँग थी कि क्रान्तिकारियों की एक ऐसी दृढ, सुगठित और काफी गुप्त लड़ाकू मुख्य शक्ति मौजूद हो जो निरंकुशशाही का तख्ता उलटने के लिये आन्दोलनका नेतृत्व करनें में समर्थ हो।

काम यह था कि भेडों को बकरियों से अलग किया जाय, अपने को विरोधी तत्वों से अलहदा किया जाय, मुकामों में अनुभवी क्रान्तिकारियों के कादर (कार्यकर्ता) संगठित किये जाये, उन्हे स्पष्ट कार्यक्रम और दृढ़ कार्य-नीति दी जाये और अन्त मे इन कादरो को पेशेवर क्रान्तिकारियो का ऐसा एक ही लडाकू संगठन बना दिया जाय जो पुलिस के हमलों के सामने ठहर सकने के लिये काफी गुप्त हो और साथ ही जनता के साथ इतना काफी सम्बंधित हो कि जरूरी मौके पर लडाई में उसका नेतृत्व कर सके।

मेन्शेविकोंने, उन लोगोंने जो मार्क्सवादी दृष्टिकोण पर "लेट जाते हैं", सवालको बड़ी आसानी से हल कर दिया। चूँकि पश्चिममें मजदूर-पार्टी ऐसी ग़ैर-पार्टी ट्रेड यूनियनोंसे पैदा हुई थी जो मजदूर-वर्ग की आर्थिक हालतोंको सुधारनेके लिये लड रही थीं, इसलिये, जहाँ तक संभव हो, वही बात रूस में भी होनी चाहिये। यानी विभिन्न मुकामोंमें "मालिकों और सरकारके खिलाफ़ मजदूरोंकी आर्थिक लड़ाई" फिलहाल काफी थी, कोई अखिल रूसी लडाकू संगठन नहीं बनाया जाना चाहिये, और बादमें .....हाँ, बादमे अगर उस समय तक ट्रेड यूनियनें खडीं नहीं होतीं तो एक ग़ैर-पार्टी मजदूर-कॉंग्रेस बुलानी चाहिये और पार्टीकी घोषणा कर देनी चाहिये।

मेन्शेविकोकी इस "मार्क्सवादी" "योजना" के लिये—हालॉकि रूसी परिस्थितियोमें यह काल्पनिक थी—व्यापक प्रचारात्मक कामकी जरूरत पड़ेगी यह मेन्शेविकों ने और शायद बहुतसे बोल्शेविकोंने भी उस समय मुश्किलसे सोचा था। इसका उद्देश्य पार्टीके विचारको ही गिराना, पार्टी कादरोंको खतम करना, सर्वहाराको बिना पार्टीके छोड़ना और मजदूर-वर्गको उदारदलियोंकी दया पर छोडना था।

जब यह "योजना" बीज रूपमे ही थी, जब इसके रचयिता भी इसकी रूप-रेखाएं मुश्किल से देखपाये थे उस समय मेन्शेविकों की संगठन की इस "योजना" के निपट खतरे का पर्दाफाश करके और पर्दाफ़ाश कर चुकने के बाद संगठन के मामलों मे मेन्शेविकों के मनमानेपन पर भयंकर हमला बोलकर और सक्रिय कार्यकर्ताओं का पूरा ध्यान इसी पर केन्द्रित करके लेनिन ने रूसी सर्वहारा और उसकी पार्टी के लिये बहुत बड़ा काम किया। कारण यह कि पार्टी की जिन्दगी ही दॉव पर लगी थी, यह पार्टी के लिये जिन्दगी और मौत का सवाल था।

लेनिन ने अपनी प्रसिद्ध किताबों "**क्या करें?**" और "**एक क़दम आगे, दो क़दम पीछे**" में जो योजना विकसित की वह यह थी। पार्टी शक्तियों के संगठन-केन्द्र के रूप मे एक अखिल रूसी राजनीतिक अखबार कायम किया जाय, दृढ़ पार्टी कादरों को मुकामों में पार्टी के "नियमित दस्तों" के रूप में संगठित किया जाय, अखबार के माध्यम के जरिये उन कादरो को एक साथ जमा किया जाय और उन्हें संयुक्त करके एक अखिल रूसी लड़ाकू पार्टी बनायी जाय जिसकी साफ़-साफ

निर्धारित सीमा हो, जिसका स्पष्ट कार्यक्रम हो, दृढ़ कार्यनीति हो और एक ही इच्छा शक्ति हो। इस योजना की खूबी इस बात में थी कि यह रूसी वास्तविकताओं के पूरी तरह अनुकूल थी और यह कि सबसे अच्छे सक्रिय कार्यकर्त्ताओं के संगठनात्मक अनुभव का यह अपूर्व कुशलता से निकाला हुआ सार थी। इस योजना के लिये लडाई में रूसी सक्रिय कार्यकर्त्ताओं की बहुसंख्या ने दृढ़ता के साथ लेनिन का साथ दिया और फूट के डर से पैर पीछे नहीं खींचा। इस योजना की विजय ने उस घनिष्ट रूप से गठी और फौलाद बनी कम्युनिस्ट पार्टी की नींव डाली जिसकी दुनिया मे कोई बराबरी नहीं है।

हमारे कॉमरेडों ने भी (और सिर्फ़ मेन्शेविकों ने ही नहीं!) लेनिन पर अक्सर आरोप लगाये कि उन्हें झगड़ों और फूटों से बेहद प्रेम है, कि समझौतावादियों के खिलाफ अपनी लड़ाईमे वह निर्मम हैं, आदि-आदि। कभी-कभी बिना किसी शक-शुबहा के ऐसी ही बात थी। मगर यह आसानी से समझ में आजायेगा कि अगर हमारी पार्टी ने गैर-सर्वहारा, अवसरवादी तत्वों को अपने बीच से निकाल बाहर न किया होता तो वह अपनी भीतरी कमजोरी और अस्पष्टता से निजात न पा सकती थी, वह अपनी विशेष क्रियाशीलता और ताकत हासिल न कर सकती थी। पूँजीवादी शासन के युगमे एक सर्वहारा पार्टी सिर्फ़ उसी हद तक बढ़ सकती है और ताकत हासिल कर सकती हैं जिस हद तक वह अपने बीच और मजदूर-वर्ग के बीच अवसरवादी, क्रान्ति-विरोधी और पार्टी-विरोधी तत्वों से लडती है। लासाल सही था जब उसने कहा था: "पार्टी अपने को शुद्ध करके ताकतवर बनती है।" आरोप लगानेवालों ने आम तौर पर जर्मन पार्टी की मिसाल दी जहाँ उस समय "एका" व्याप रहा था। मगर पहली बात तो यह कि हर तरह का एका ताकत की निशानी नहीं होता और दूसरे, एक तरफ़ शीडमान और नोस्के, और दूसरी तरफ लीबनेख्त और लुक्ज़ेमबर्ग के बीच "एके" के एकदम झूठेपन और बनावटीपन को समझने के लिये हालकी जर्मन पार्टी पर नजर डालने की जरूरत है जो अब तीन पार्टियों में बँट गयी है। और कौन कह सकता है कि यह जर्मन सर्वहाराके लिये ज़्यादा अच्छा न होता कि जर्मन पार्टी के क्रान्तिकारी तत्व उसके क्रान्ति-विरोधी तत्वों से समय रहते अलग हो गये होते.. नहीं, पार्टी-विरोधी और क्रान्ति-विरोधी तत्वों के खिलाफ समझौता-रहित संघर्ष के रास्ते पर पार्टी का नेतृत्व करनेमें लेनिन हजार बार सही थे। कारण यह कि यह संगठन की सिर्फ़ ऐसी ही नीतिकी बदौलत था कि हमारी पार्टी ऐसा भीतरी एका और आश्चर्यजनक मेल पैदा कर सकी जिसकी वजह से वह केरेन्सकी शासन के दौर मे जुलाई संकटसे बिना घाव लगे निकलने मे समर्थ हुई, अक्तूबर विद्रोह के भार को सम्हाल सकी, ब्रेस्त लितोव्स्क दौर के संकट को बिना डगमगाये पार कर सकी, अन्तात के ऊपर विजयका संगठन कर सकी और अन्तमे, वह अभूतपूर्व लचीलापन हासिल कर सकी जो उसके लिये सम्भव बनाता है कि किसी भी समय वह अपनी कतारो की नयी जत्थेबन्दी कर सके और अपने बीच गडबड़ी फैलाये बिना अपने लाखों सदस्यो को किसी भी बडे काम पर केन्द्रित कर सके।

[२]

लेनिन—रूसी कम्युनिस्ट पार्टी के नेता के रूप में

मगर संगठनके क्षेत्रमे रूसी कम्युनिस्ट पार्टीकी खूबियॉ इस बातका सिर्फ एक पहलू हैं। पार्टी इतनी तेजीसे न बढ़ी होती और अपनेको सुदृढ़ न बना सकी होती अगर उसके काम की राजनीतिक विषय-वस्तु, उसका कार्यक्रम और कार्यनीति रूसी वास्तविकताओंके अनुकूल न होतीं, अगर उसके नारों ने मजदूर जनतामें जीवन न फूकॉ होता और क्रान्तिकारी आन्दोलनको आगे न प्रेरित किया होता। अब हम इस पहलूके बारेमें कहेंगे।

रूसी पूँजीवादी-जनवादी क्रान्ति (१९०५) ऐसी परिस्थितियों में हुई जो उनसे भिन्न थीं जो पश्चिम में, मिसाल के लिये फ्रांस और जर्मनी में, क्रान्तिकारी उथल-पुथलोंके दौरान में थीं। पश्चिममें क्रान्ति हाथ-कारखानों के और अविकसित वर्ग संघर्ष के दौर मे हुई जब सर्वहारा कमजोर था, और संख्या मे कम था और अपनी मॉगें निर्धारित करने के लिये उसकी अपनी पार्टी नही थी और जब पूँजी-पति वर्ग इतना काफी क्रान्तिकारी था कि मजदूरों और किसानों का विश्वास जीत सका और नवाबशाही के खिलाफ संघर्ष में उनका नेतृत्व कर सका। इसके विपरीत रूसमें क्रान्ति (१९०५) मशीन उद्योग, विकसित-वर्ग संघर्षके दौरमें शुरू हुई, जब कि रूसी सर्वहाराकी सापेक्ष रूपसे संख्या काफ़ी थी और वह पूँजीवाद द्वारा संगठित हुआ था, पूँजीपति वर्गसे अनेक लड़ाइयॉ लड़ भी चुका था, उसकी अपनी पार्टी थी—जो पूँजीवादी पार्टीसे ज़्यादा संयुक्त थी—और अपनी वर्ग माँगे थीं, और जब रूसी पूंजीपति वर्ग—जो सरकारी ठेकों पर निर्भर करता था—सर्वहाराकी क्रान्तिकारी भावनासे इतना काफ़ी घबरा गया था कि मजदूरों और किसानोंके खिलाफ सरकार और जमींदारोंके साथ सहयोग की कोशिश करें। रूसी क्रान्ति मंचूरिया के मैदानों में फ़ौजी हारों के परिणाम स्वरूप फूट पड़ी, इस बात ने घटनाओं को मुख्य रूप से बदले बिना ही उनके प्रवाह को और तेज कर दिया।

परिस्थिति की मॉग थी कि सर्वहारा क्रान्तिका नेतृत्व करे, क्रान्तिकारी किसानों को संगठित करे और जारशाही तथा पूँजीपति-वर्ग के खिलाफ़ एक साथ डटकर लड़ाई लड़े ताकि देश मे पूरा जनवाद कायम कर सके और अपने वर्ग हितों की गारंटी कर सके।

मगर मेन्शेविकों ने, उन लोगों ने जो मार्क्सवादी दृष्टिकोण पर "लेट जाते हैं," सवाल को अपने तरीके से ही हल किया। चूँकि रूसी क्रान्ति एक पूँजीवादी क्रान्ति थी और चूँकि ये पूँजीपति वर्ग के प्रतिनिधि ही थे जो पूँजीवादी क्रान्तियोंका नेतृत्व करते थे (देखिये फ्रासीसी और जर्मन क्रान्तियों का "इतिहास"),

इसलिये सर्वहारा रूसी क्रान्ति का नायकत्व नही कर सकता था, नेतृत्व रूसी पूँजी-पति वर्ग के हाथमे (जो क्रान्ति के साथ ग़द्दारी कर रहा था) छोड़ना चाहिये और किसानों को भी, पूँजीपति वर्ग की मातहती मे छोड़ना चाहिये जब कि सर्वहारा को एकदम उग्र विरोधी दल रहना चाहिये।

घृणित उदारदलियों की वाणी की इस गन्दी नकल को मेन्शेविकों ने "सच्चे" मार्क्सवाद की आखिरी बात के रूप में रखा!

मेन्शेविकों की ऐतिहासिक अनुरूपताओ के बेकारपन और मेन्शेविकों की "क्रान्ति की योजना"—जो मजदूरों के ध्येयको पूँजीपतियों की दया पर निछावर कर दे—के खतरे का पूरी तरह पर्दाफाश करके लेनिनने रूसी क्रान्तिके लिये बहुत बड़ा काम किया। लेनिनने अपनी प्रसिद्ध पुस्तिकाओं, "**दो कार्यनितियाँ**" और "**कैडिटों की विजय**" में जो कार्यनीति की योजना विकसितकी वह इस प्रकार थी: पूँजीपति वर्गकी डिक्टेटरशिपकी जगह सर्वहारा और किसानोंकी एक क्रान्तिकारी जनवादी डिक्टेटरशिप, दूमामें शरीक होने और उसके भीतर सम्बंधित काम करनेकी जगह बुलीगिनी दूमा का बायकाट और हथियारबन्द विद्रोह, कैडिट मंत्रिमण्डल और दूमा के प्रति प्रतिक्रियावादी "प्रेम" की जगह जब दूमा आखिर बुलायी गयी तो "उग्र मोर्चे" का विचार और दूमा के बाहर लड़े जाने वाले संघर्ष के लिये दूमा के मंच का इस्तेमाल, कैडिट पार्टी के साथ "गुट" बनाने के बजाय एक क्रान्तिविरोधी शक्ति के रूप में उसके खिलाफ लड़ाई।

इस योजना की खूबी यह थी कि इसने रूस में **पूँजीवादी-जनवादी** क्रान्ति के युगमें सर्वहारा की वर्ग माँगों को खरे रूप मे और निश्चयात्मक तरीके से निर्धारित किया, समाजवादी क्रान्तिमे परिवर्तन को आसान बनाया और यह कि उसके भीतर **सर्वहारा की डिक्टेटरशिप** के विचार का बीज था। इस कार्यनीति सम्बंधी योजना के लिये संघर्ष में रूसी सक्रिय कार्यकर्ताओं की बहुसंख्याने डटकर और बिना डगमगाये लेनिन का अनुसरण किया। इस योजना की विजय से उन क्रांतिकारी कार्यनीतियो की नींव पडी जिनकी मदद से हमारी पार्टी अब विश्व साम्राज्यवाद की नींवो को हिला रही है।

घटनाओं के बाद के विकासने: चार बरसके साम्राज्यवादी युद्ध और देशके पूरे आर्थिक जीवनके छिन्न-भिन्न होने, फ़रवरी क्रान्ति और प्रसिद्ध दोहरी सत्ता, आरजी हुकूमत जो पूँजीवादी क्रान्ति-विरोध का केन्द्र थी और पेत्रोग्राद की सोवियत जो अस्फुट सर्वहारा डिक्टेटरशिप का रूप थी, अक्तूबर क्रान्ति और विधान परिषदकी बरखास्तगी, पूँजीवादी धारा सभावाद का खात्मा और सोवियतों के प्रजातंत्र का ऐलान, साम्राज्यवादी युद्ध की गृह-युद्धमें तब्दीली और विश्व साम्राज्यवाद का तथा-कथित मार्क्सवादियों के साथ मिल कर सर्वहारा क्रान्तिके खिलाफ हमला और अन्तमें, मेन्शेविकों की तुच्छ स्थिति, जो विधान परिषद से चिपके रहे और जिन्हें सर्वहारा ने उठा कर फेंक दिया तथा जिन्हे क्रान्ति की लहरों ने पूँजीवाद के तट पर धकेल

दिया—इन सब बातोंने क्रान्तिकारी कार्यनीतियोंके इन सिद्धान्तों की सचाई को सही साबित किया जिन्हें लेनिन ने अपनी किताब **दो कार्यनीतियाँ** मे निर्धारित किया था। ऐसी परम्परा-वाली पार्टी छिपी हुई चट्टानों से निडर होकर अपना जहाज साहसपूर्वक आगे बढ़ा सकती थी।

× × ×

सर्वहारा क्रान्तिके इन दिनोंमें जब हर पार्टी नारा और नेता का हर वाक्य अमल में जॉचा जाता है तो सर्वहारा अपने नेताओं से विशेष तकाजा करता है। इतिहास में ऐसे सर्वहारा के नेता हुए हैं जो तूफ़ान के दिनों में नेता थे, अमली नेता थे, आत्मबलिदानी और साहसी थे मगर जो सिद्धान्त मे कच्चे थे। ऐसे नेताओं के नामों को जनता जल्दी ही नहीं भूल जाती। ऐसे उदाहरण के लिये, जर्मनी में लासाल और फ्रास मे ब्लांकी थे। मगर समूचा आन्दोलन सिर्फ़ संस्मरणों पर ही जिन्दा नहीं रह सकता; उसके आगे एक स्पष्ट ध्येय (कार्यक्रम) और एक दृढ़ नीति (कार्यनीति) होना चाहिये।

एक और किस्मके नेता भी हैं—शान्तिके समयके नेता जो सिद्धान्तमे मजबूत हैं मगर संगठनके सवालों और अमली मामलोंमें कच्चे हैं। ऐसे नेता सर्वहाराके सिर्फ ऊपरी स्तरमे ही प्रसिद्ध हैं और वह भी सिर्फ़ एक सीमा तक ही। जब क्रान्ति का दौर शुरू हो जाता है, जब नेताओंसे अमली, क्रान्तिकारी नारोंकी मॉग होती है तो सिद्धान्तशास्त्री मंच छोड़ देते हैं और नये आदमियोंके लिये जगह कर देते हैं। ऐसे, उदाहरणके लिये, रूसमें प्लैखानौव और जर्मनीमें कॉट्स्की थे।

सर्वहारा क्रान्तिके और सर्वहारा पार्टीके नेताकी जगह पर बने रहनेके लिये व्यक्ति में सर्वहारा आन्दोलन के अमली संगठन मे अनुभव के साथ-साथ सिद्धान्त की शक्ति का संयोग भी होना चाहिये। पी. एक्सेलरोड जब मार्क्सवादी था तो उसने लेनिन के बारे में लिखा था कि उनमें "एक अच्छे अमली कार्यकर्ता के अनुभव, सिद्धान्त की शिक्षा और विशाल राजनीतिक दृष्टिकोण का सुखद संयोग है।" (देखिये लेनिन की पुस्तिका "**रूसी सोशल-डिमोक्रेटों के काम**" में पी. एक्सेलरोड की भूमिका) "सभ्य" पूँजीवाद के सिद्धान्तशास्त्री मि. एक्सेलरोड अब लेनिन के बारे मे क्या कहेंगे यह अनुमान लगाना मुश्किल नहीं है। मगर हम लोगोंको जो लेनिनको अच्छी तरह जानते हैं और निर्विकार रूपसे जॉच सकते हैं, इस बात में कोई शक नहीं है कि लेनिन ने अपने पुराने गुणको पूरी तरह क़ायम रखा है। यह भी कह दें कि इसी बातमें इसका कारण ढूँढना चाहिये कि दुनिया में सबसे ताकतवर और सबसे ज्यादा तपी हुई सर्वहारा पार्टी के नेता आज लेनिन ही क्यों हैं और दूसरा कोई क्यों नहीं है।

प्रावदा, नं. ८६
२३ अप्रैल, १९२०

अ. भा. शान्ति सम्मेलन का ऐतिहासिक महत्व

[१]

२६ से २७ नवम्बर तक कलकत्तेमें हुए अखिल भारतीय शान्ति सम्मेलनने अमरीका के नेतृत्व मे चलनेवाली जंगखोर साम्राज्यवादी ताकतो पर और उनके भारतीय गद्दारोंकी प्रतिनिधि नेहरू सरकार पर एक शक्तिशाली प्रहार किया है। स्थायी शान्ति, जनता के जनतंत्र और समाजवाद के शत्रुओ पर यह जनता का करारा हमला था।

२६ नवम्बर को कलकत्ते के मैदान में हुई १,००,००० की रैली भारत की जनता की इस इच्छा और दृढता का जोरदार इजहार थी कि वह जंगखोरों पर शान्ति को लादेगी, और "आजादी, जनवाद और जीवन" के लिये साम्राज्यवादियो से डटकर मोर्चा लेगी। साम्राज्यवाद-विरोधी अन्तरराष्ट्रीय पक्ष की यह एक नयी जीत है।

२६ और २७ नवम्बरको कलकत्तेकी सड़कों पर अपने हाथोंमें जलती हुई मशालें लिये कदम बढाते हुए हजारोंकी सख्यामें शान्ति सैनिको के प्रदर्शनके दृश्यने मेहनत-कश जनताके दिलोंमें एक ज्योति जगा दी है। उसने उनके अन्दर यह विश्वास पैदा कर दिया है कि पूँजीपतियो और जमींदारोंमें ताकत नहीं है कि साम्राज्यवादी युद्धमें भारत की जनताको मरनेके लिए वे झोंक दें। साम्राज्यवादी पक्ष की यह एक नयी पराजय है।

शान्ति सम्मेलन द्वारा सर्व-सम्मतिसे स्वीकृत, और जीवनके सभी क्षेत्रोंसे आये स्त्री पुरुषोंके १,००,००० के विराट जन-समूह द्वारा आकाशको हिला देनेवाली हर्ष-ध्वनिसे मंजूर किये गये "शान्ति-पर वक्तव्य" के अन्दर निरंकुश सरकारसे फैक्टरियों, दफ्तरों और खेतों-खलिहानोंमें रोजमर्रा लोहा लेनेवाली शान्ति-प्रेमी जनताकी तमाम माँगें, उनकी तमाम इच्छा-आकाक्षाएँ मूर्त हैं। वह साम्राज्यवादी जंगखोरों और भारतके उनके सहयोगियोंको मुजरिम ठहराता है और विजयोल्लासके साथ घोषित करता है कि :

"लडाईकी तैयारियों और लड़ाईकी कार्रवाइयोंकी निन्दा करनेके लिये, दूसरे देशोंकी जनताकी आजादीको कुचलनेके लिये हिन्दुस्तानके साधनोंके इस्तेमालका विरोध करनेके लिये, फौजी खर्चे के भारी बोझका विरोध करनेके लिये और युद्ध की तैयारियों में इस्तेमाल किये जानेसे इनकार करनेके लिये, हम सभी नस्लों, धर्मों और पेशोंके लोगोंको सगठित करेंगे।"

यह वक्तव्य "शान्ति की रक्षा की लडाईको जीतनेके लिये एक होने" का जनतासे आह्वान करता है विश्व-शान्ति के खिलाफ तमाम साजिशें रचनेवालोंको यह आह्वान एक जबरदस्त चुनौती है।

एक लाख जनताकी विराट रैलीके रूपमें समाप्त होनेवाले अखिल भारतीय शान्ति सम्मेलन की शानदार सफलता इस बात का एक दूसरा सबूत है कि "शान्ति और जनवादके विश्व कैम्प की शक्ति पहलेसे कहीं ज़्यादा तेजीसे बढ रही है", साम्राज्य-वादके खेमे की कमजोरी और अलगाव सबको साफ हो गये हैं।

[२]

अखिल भारतीय शान्ति सम्मेलन हिन्दुस्तान की जनता के जनवादी मोर्चे के जीवित रूपका ऐतिहासिक प्रदर्शन था। कांग्रेसी शासन के अपूर्व दमन और आतंक के खिलाफ महान संघर्षों की भट्ठी मे तपकर इस्पात बने हुए हिन्दुस्तान के मेहनतकशों और उनकी जनवादी ताकतों का वह एक प्रतिनिधिपूर्ण जुडाव था। वह लड़ाकू जनता की एकता का प्रदर्शन था।

सम्मेलन मे तीन हजार प्रतिनिधियो ने भाग लिया (इनमें १,७०० सह-प्रतिनिधि भी शामिल थे)। ये प्रतिनिधि कुल मिलाकर बीस लाख स्त्री-पुरुषोंके २५० जन सगठनों के प्रतिनिधि थे। इन बीस लाख सगठित मेहनतकशोंके पीछे जनवाद, जमीन और अन्न के लिये लडनेवाले लाखो लडाको की ताकत है।

इस शक्तिशाली मोर्चेके आगे-आगे हिन्दुस्तानका मजदूर-वर्ग है जो वर्तमान समाजका सबसे प्रगतिशील-वर्ग है और जनवादी संघर्षोंका नेता है। आठ लाख सदस्य सख्यावाली अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस जिसे दूसरे लाखो असगठित मजदूरों का भी समर्थन हासिल है, इस सम्मेलनकी अगुआ शक्ति थी। तीन हजार प्रतिनिधियो मे से लगभग ७५ फी सदी औद्योगिक मजदूर और खेतिहर मजदूर थे।

ये केवल साधारण मजदूर नहीं हैं, बल्कि वे मजदूर हैं जो सरकारके और पूँजीपतियोंके फासिस्ट हमलेका अपने वीरतापूर्ण हडताली संघर्षों के जरिये मुकाबला करने वाले लाखों लोगोंके आगे-आगे और संघर्षकी सबसे अगली पाँत में है। १९४९ के केवल शुरू के ६ महीनो मे हडतालों और तालाबन्दियों में लगभग ४० लाख काम के दिन जाया हुये; और कितने ही लाख दिन खेत मजदूरो की हडतालोंकी

वजह से आया हुये हैं। अ भा. ट्रेड यूनियन कांग्रेस के नेतृत्व में चलनेवाली लड़ाकू ताकतों की एक झलक इससे भी मिल जाती है।

दूसरा महत्व अखिल भारतीय किसान सभाके झण्डेके नीचे संगठित मेहनतकश किसानों के प्रतिनिधियों का है। उनमें तेलंगाना के प्रतिनिधि थे, जहाँ लड़ाकू किसानों ने ३,००० गांवों को निजामके शासनसे आजाद कर लिया है और जो अब फ़ौजी शासनके दमन से अपने हकोंकी रक्षा कर रहे हैं। उनमें काकद्वीप के प्रतिनिधि थे जहां लड़ाकू किसानों और खेतिहर मजदूरोंने तेलंगानाके रास्ते पर कदम बढ़ाया है और जो दिल्ली से अपनी रक्षा कर रहे हैं। उनमें उन अनेकों प्रान्तों और जिलोंके प्रतिनिधि थे जहाँ अखिल भारतीय किसान सभाके झण्डेके नीचे किसानों के स्त्री और पुरुष महीनों ने—हिन्दुस्तान के जनवादी आन्दोलनके इतिहासमें अपने रक्त और कुर्बानी के अक्षरों से एक गौरवशाली अध्याय लिखा है।

इस लड़ाकू फौजमें अस्सी हजार सदस्य संख्या वाला अखिल भारतीय विद्यार्थी संघ शामिल था जो जनवादी शिक्षा और राजनीतिक अधिकारोंके लिये युगान्तकारी विशाल संघर्षों में जुटे हुए युवकोंके सर्वश्रेष्ठ तत्वोंका प्रतिनिधित्व करता है। वे उस नये विद्यार्थी आन्दोलन के प्रतिनिधि हैं जो हमारे देश में जन्म ले रहा है और "जिसे मजदूर-वर्ग की वीरता से प्रोत्साहन मिल रहा है, जो अधिकाधिक सहानुभूति और श्रद्धा से मजदूर-वर्ग की तरफ देखता है, जो सभी तरह के शोषण से मुक्त करना और भुखमरी और गुलामी की जंजीरों को तोड़नेके लिये जनताके संघर्षों के नेतृत्व के लिये मजदूर-वर्ग की तरफ देखना सीख रहा है।"

बीस हजार स्त्रियों की सदस्य संख्यावाली और वीरता तथा शहादत के गौरवशाली इतिहासवाली महिला आत्म-रक्षा समिति, शान्ति सम्मेलन में जमा होनेवाले क्रान्तिकारी जनवादी लड़ाकोंकी महान फौज के सबसे लड़ाकू दस्तोंमें से एक थी। केवल पश्चिमी बंगाल में ही दो वर्षों के दौरानमें २१ स्त्री शहीदोंने महिला आत्म-रक्षा समितिके नेतृत्व में चलने वाले रोटी और जनवादी अधिकारों के संघर्षमें अपने प्राणोंको न्यौछावर कर दिया है।

हिन्दुस्तान के हर कोने से खेल-कूद और सांस्कृतिक संगठनों की एक बड़ी संख्याके प्रतिनिधि कितने ही प्रमुख कलाकार, शिक्षा-विशारद और पत्रकार; फारवर्ड ब्लाकके एक अंगके और लगभग ५० अखबारों तथा पत्र-पत्रिकाओंके सम्पादक-मण्डलों के प्रतिनिधि—अ० भा० शान्ति सम्मेलन में शरीक थे। साम्राज्यवादी युद्धके खिलाफ फासिज्म को फिरसे जिलाने और जनवादी अधिकारों के दमन के खिलाफ़ अपनी आवाज उठाने के लिये सभी सच्ची प्रगतिशील शक्तियाँ इस सम्मेलनमें पूरी सामर्थ्यके साथ आ जुटी थीं।

अखिल भारतीय शान्ति सम्मेलन कोई साधारण जमाव नहीं था, बल्कि वह साम्राज्यवाद-विरोधी एक राष्ट्रीय जत्थेबन्दी थी जिसकी आवाजमें जनता के सभी अंगों

की भावनाओं और हितो की सच्ची प्रतिध्वनि थी। अखिल भारतीय शान्ति सम्मेलन उस गम्भीर सचाई का प्रत्यक्ष प्रदर्शन थी जिसकी अक्तूबर क्रान्ति की ३२ वीं वर्षगांठ के मौके पर मालेन्कोव ने घोषणा की थी, कि

> "शान्तिकी रक्षा के लिए उठनेवाली आवाजों की गूँज दिनोदिन जोरदार होती जा रही है; आक्रमणकारियो और जंगखोरो के खिलाफ और राष्ट्रीय आजादी और देशो के बीच शान्तिपूर्ण सहयोग के लिए जनता का विशाल आन्दोलन दिनोदिन ज़्यादा फैलता जा रहा है। वह दिन बीत गये जब साम्राज्यवादी बिल्कुल गुप्त रूपसे युद्ध की साजिश रच लिया करते थे और जब कि युद्ध लोगों के सिर पर अचानक आ पड़ता था और वे देखते थे कि लड़ाई तो छिड़ भी गयी है। शान्तिके समर्थकों का शक्तिशाली आन्दोलन इस बात की गवाही है कि आक्रमणकारियो को रोकने लायक ताकत जनतामे मौजूद है।"

अखिल भारतीय शान्ति सम्मेलन उन साधारण लोगोका सम्मेलन था जो अब इस बात से अपरिचित नही हैं कि अगर लडाई छिड जाती है तो उसमें पूंजीवादी और जमीदार, जो अपने स्वार्थोंके लिए उसे छेड़नेकी साजिश कर रहे हैं, नहीं लड़ेगे बल्कि उसमें साधारण जनताको मरवाया जायेगा और उसीको मौत और विनाशका बोझ सहना पडेगा। उन्होने साम्राज्यवादी जंगखोरो और उनके हिन्दुस्तानी दुमछल्लोको साफ बता दिया है कि उनके स्वार्थोंको पूरा करनेके लिए साधारण इन्सान अपने जीवन की बलि चढानेसे इनकार करता है।

अखिल-भारतीय शांति सम्मेलन उन लोगोका जमाव था जो सिर्फ बातें नही करते, बल्कि जो जनवादी अधिकारोंके लिये मौतको चुनौती देनेवाली वीरतासे वास्तवमें लड रहे हैं, और उसी सरकारकी हथियारबन्द ताकतो का मुकाबला कर रहे हैं जो युद्धका प्रचार करनेवाली ताकतो की सेवा कर रही है।

शान्तिके लडाके जो शान्ति सम्मेलन मे इकट्ठा हुये थे पोच शांतिवादी नहीं थे जो शब्दो में तो शान्तिकी बातें बघारते हैं और अमल मे साम्राज्यवादी जंगखोरो के सामने चुपचाप घुटने टेक देते है। वे ऐसे जुझारू लड़ाके थे जिनके ऐलान शान्तिकी रक्षाके लिये सक्रिय रूपसे लडनेवाली ताकतों को मैदान में ले आएँगे।

कलकत्ते के मैदानमें १००,००० स्त्री-पुरुषो की विराट सभा नेहरू सरकार की युद्ध-नीति के खिलाफ, जो ब्रिटिश कामनवेल्थ मे शामिल हो कर अंग्रेज-अमरीकियो के युद्ध-कैम्प में दाखिल हो गयी है और जो अमरीकी पूँजीको हिन्दुस्तान मे आनेका न्यौता देकर हिन्दुस्तान की स्वाधीनता और सार्वभौमिक सत्ता को अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियों के हाथो बेंच रही है, एक कारगर प्रदर्शन थी। इस नीतिका स्वाभाविक नतीजा है युद्धका संगठन करना, विश्व-समाजवाद, स्थायी शान्ति और राष्ट्रोंकी पूर्ण स्वाधीनता के गढ़ सोवियत संघके खिलाफ तैयारियाँ करना।

शान्ति सम्मेलन कांग्रेस सरकार द्वारा कदम-कदम पर खड़ी की गयी रुकावटों और दमन को हरा कर विजयी हुआ है। कांग्रेस सरकार ने सम्मेलन की तैयारियों को नाकाम करने के लिए अपनी पूरी शक्ति लगा दी थी।

शासकों ने पहले सोचा कि दमन करके तमाम तैयारियों को वे असफल बना देंगे। इस नीति पर अमल करते हुये उन्होंने तैयारी कमिटी के एक के बाद एक, दो सेक्रेटरियों और कई सदस्यों को गिरफ्तार कर लिया। तैयारी कमिटी के दफ्तर की तलाशी ली और तमाम कागज-पत्र उठा ले गये। प्रचार-टुकड़ियों के बहुतसे लोगों को उन्होंने गिरफ्तार कर लिया। लेकिन अगर एक आदमी गिरफ्तार हुआ तो उसकी जगह पूरी करने के लिये एक दर्जन नये आदमी आगे बढ़ आये। शांति सम्मेलन की तैयारियों को न रोका जा सका।

तब विधान राय की पुलिस ने और खूंखार हमले शुरू किये। ७ नवम्बर को कलकत्ते में अचानक एक शान्ति प्रदर्शन पर हथियारबन्द पुलिस और सार्जेण्टों ने आंसू गैस के गोलों, लाठियों और डण्डों से हमला कर दिया। पूरे जुलूसने इस अकारण आक्रमण का सराहनीय वीरता और दृढ़ता के साथ सामना किया।

इसके बाद से लगातार पाँच दिनों तक तैयारी कमिटी की अलग-अलग शाखाओं द्वारा संगठित की गयी मीटिंगों और जुलूसों पर इस पाशविकता से हमले किये गये कि सारा शहर क्रोध से खौल रहा था। पुलिस की कार्रवाइयों के खिलाफ जनता में रोष की लहर फैल गयी और उसने विरोध किया। कुछ दैनिक पत्रों ने भी, जिन्हें कम्युनिस्टों का समर्थक होने का दोषी नहीं ठहराया जा सकता, सरकार और उसकी पुलिस की निन्दा करते हुये सम्पादकीय लेख लिखे।

सरकार के दमन-चक्र का परिणाम एकदम उलटा हुआ; जनता को शान्ति आन्दोलन से दूर हटाने के बजाय, उसने शान्ति आन्दोलन के लिए जनता के अन्दर एक क्रियाशील दिलचस्पी जगा दी और लोगों में उसके लिये समर्थन और सहयोग बढ़ा। तैयारी कमिटी द्वारा प्रचार करने और चन्दा इकट्ठा करने के लिये आयोजित किया गया १० नवम्बर का झण्डा-दिवस जोरोंसे सफल हुआ। चन्दे के बक्स पूरे-पूरे भर गये: ९०० प्रचारकों ने एक लाख जनता तक सम्मेलन का सन्देश पहुँचाया और २५,००० झण्डे बेचे। प्रचार टुकड़ियों का हर जगह जोरोंसे स्वागत हुआ और स्वागत के लिये छीना-झपटी मच गयी। लगभग १० दिनों के छोटे से अरसे में शान्ति सम्मेलन के चन्दे में १०,००० रुपये इकट्ठा हो गये।

सरकार सभी भांति जानते थे कि दमन कामयाब न होगा। इसीलिये, उन्होंने दस्तकों पर निर्भर होने की सोची जिनके लिये वे खुद जिम्मेदार थे। उन्होंने सोचा कि वे इस बिना पर कान्फ्रेंस पर रोक लगा देंगे कि शान्ति सम्मेलन के

संगठन-कर्त्ता उपद्रव और हिंसा मचाने पर तुले हैं। इन तरीकों पर उन्हें इतना भरोसा था कि ८ नवम्बर को पुलिस कमिश्नर ने तैयारी कमिटी को सूचना दी कि "यहाँ की मौजूदा हालत को देखते हुये उपरोक्त ढंगके सम्मेलनको खुली जगह में करने की इजाजत नहीं दी जा सकती।" लेकिन, पुलिस कमिश्नर खुद ही मूर्ख बना और बादमें उसे यह कबूल करने पर मजबूर होना पड़ा कि सरकार ने सम्मेलन पर कोई रोक नहीं लगाई थी।

तैयारी कमिटीने ऐलान किया कि "शान्ति सम्मेलन खुले-आम और कानूनी तौर पर होगा"। अपने पत्रके द्वारा जनता के हकों पर मनमाने तौरसे हमला करने की पुलिस कमिश्नर की चालका भण्डाफोड़ हो गया। पूरे देशमें जनता के क्रोध का तूफान उठ पड़ा और सम्मेलन में पुलिस के लिये किसी भी तरह की दखलन्दाजी करना असम्भव हो गया।

यह देखकर कि सम्मेलनके कानूनी होने के सिलसिले में कुछ भी नहीं किया जा सकता और जनता हर हालतमें उसमे हजारों की संख्या में हिस्सा लेगी, वे और भी नीच कार्रवाइयों पर उतर आये। उन्होने प्रतिनिधियों की सभाके लिये खुले मैदानो में पण्डाल बनाने की इजाजत देनेसे इनकार करने की नीति अपनायी; और साथ ही साथ सभा-भवनों और मकानों के मालिकोंको उन्होने आगाह कर दिया कि शान्ति-सम्मेलनके लिये किसी भी सभा-भवन या मकान को इस्तेमाल करने की इजाजत नहीं दी जायेगी। लेकिन, ऐसी चालोसे उन्होंने अपनी ही हालतको और हास्यास्पद बनाया। सभा-भवनो और पण्डालो की इजाजत देनेसे इनकार करके सम्मेलन को रोका नहीं जा सकता था। वे खुद समझ गये कि सरकार की क्रोध उभाड़नेवाली और नीच कार्रवाइयो ने जनता के क्रोधको इतना बढा दिया है कि चाहे जो रुकावटें खड़ी की जायँ, जनता उनकी परवाह नहीं करेगी और उन्हें रौंदती हुई हजारो की संख्या मे शान्ति-सम्मेलन मे भाग लेगी।

अपने आखिरी हमले के रूप में नेहरू सरकार ने विदेशो से आनेवाले प्रतिनिधियो को प्रवेश-पत्र (विसा) देने से इनकार कर दिया। सोवियत संघ का प्रतिनिधि-मंडल करॉची तक आया। वियतनाम का प्रतिनिधि-मंडल रंगून से आगे नहीं बढ़ सका। और, विश्व-शान्ति सम्मेलन की स्थायी कमिटी के प्रतिनिधियों को कैरो से वापिस लौट जाना पड़ा। सोवियत यूनियन तथा दूसरे देशो के प्रतिनिधि-मण्डलो के शांति-सम्मेलन में भाग लेने के लिये हिन्दुस्तान में आने पर रोक लगा कर नेहरू सरकारने अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादी जंगखोरो के खुली सहयोगी होने के अपने रूप को ही दिखा दिया।

नेहरू की "तटस्था" का पाखण्ड समूची जनता के सामने बेपर्दा हो गया। जनता ने खुद अपनी ऑखों से देखा कि सरकार द्वारा आयोजित शांतिनिकेतन में होनेवाली पोच-शांतिवादियो की कान्फ्रेंस के लिए आये ब्रिटिश और अमरीकी प्रति-

निधियों को सरकारी मेहमान बना कर रखा गया था, जब कि सोवियत संघ के प्रतिनिधियों के अखिल भारतीय शांति सम्मेलन मे शामिल होने के लिये भारत में आनेपर भी बेशर्मी के साथ रोक लगा दी गयी थी और वह भी ऐसी हालत में जब कि पाकिस्तान सरकार तक ने उन्हे पाकिस्तान मे आने से रोकना अक्लमन्दी का काम नहीं समझा था। अपनी इस कार्रवाई से, जैसा कि जाहिर है, नेहरू सरकार शांति-सम्मेलनको चोट न पहुँचा सकी। उल्टे, जनता की आँखोमें उसने अपने आपको गिरा लिया। अखिल भारतीय शांति सम्मेलन के पहले दिन के अधिवेशन ने पहला काम जो किया वह था सोवियत यूनियन के तथा दूसरे देशो के प्रतिनिधि-मण्डलो के भारत मे आनेपर रोक लगाने के लिए सरकार की घोर निन्दा करते हुए सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव पास करना।

नौकरशाह इतना सब करके भी संतुष्ट नहीं हुये। जब शांति सम्मेलन का अधिवेशन हो रहा था, तब उन्होंने उसकी शक्ति को कम करने के लिये कुछ भी उठा नहीं रखा। उन्होंने प्रतिनिधियो के कैम्पो पर कडी चौकसी लगाई, पुलिस ने इन कैम्पो पर धावे किये और अधिक से अधिक प्रतिनिधियो को गिरफ़्तार करने की कोशिश की। उन्हे अधिवेशनमें गिरफ्तार करनेका तो पुलिस को साहस नहीं था, क्योकि उसे डर था कि जनता उसे तुरत जवाब देगी। इसलिये उसने उन्हें कैम्पो में चुपचाप गिरफ्तार कर लेना चाहा। लेकिन ये कैम्प जनतासे दूर बसे हुए नहीं थे। प्रतिनिधियो के रहने और खाने का इन्तजाम मजदूरों और अन्य जनता के घरों में किया गया था। मजदूर और दूसरे लोग प्रतिनिधियों की हिफाजत करने में सफल हुये। तीन हजार प्रतिनिधियो मे से आधे-दर्जन से भी कम को पुलिस गिरफ्तार कर सकी। बाकी तमाम ने चारो दिनों के अधिवेशनों तथा अन्य सम्बंधित जलसों में पूरा-पूरा हिस्सा लिया, अपने कामो को शानसे पूरा किया। और, जिसके लिये वे आये थे, अपने उस ऐतिहासिक काम को पूरा कर चुकने के बाद कलकत्ते से सलामती से वापिस लौट गये। जनता की शक्ति और शूरता का ऐसा ही प्रताप है।

सरकार ने उन दो साप्ताहिक पत्रो को बन्द करके भी, जो पूरी तरह से शान्ति सम्मेलन के प्रचार काम मे ही लगे हुए थे, सम्मेलन की आवाज को कुचलना चाहा। **शिविर** पर छपने के पहले सब मैटर दिखाने का सेंसर लगा दिया गया, और **मतामत** जिस समय छप रहा था उसी समय उसकी लिखी हुई सामग्री और प्रूफो पर कब्जा कर लिया गया और जब्त कर लिया गया। प्रेस के मैनेजर को गिरफ्तार कर लिया गया। ऐसा करके सरकार ने सोचा था कि पूंजीवादी प्रेस जो तमाम खबरों पर इजारेदारी कायम किये हुये है, शान्ति सम्मेलन की तमाम खबरो को दबाने मे सफल होगा। अपनी इन उम्मीदो मे उन्होने जनताको और शान्ति सम्मेलन को आगे बढानेवाली तैयारी कमिटी,— जिसका निर्देशन अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस कर रही थी—की संगठन-शक्तिको भुला दिया था।

लगभग ३००,००० हैण्डबिल छापे और बाँटे गये। हर यूनियन ने पहल की और शान्ति सम्मेलन के समाचारों तथा तैयारी कमिटी की अपीलो का प्रचार करते हुये परचे बाँटे। सोवियत मित्र मण्डल (फ्रेण्ड्स ऑफ दि सोवियत यूनियन) ने दैनिक बुलेटिने निकाली। गैर-कानूनी साप्ताहिक पत्र **स्वाधीनता** की हजारो प्रतियाँ कानूनी अखबार की तरह बेची गयीं। मजदूर नौजवानो के सगठन **मजदूर नौजवान संघ** ने प्रचार का बहुत अच्छा आन्दोलन सगठित किया और उसकी प्रचार टुकड़ियों ने जीते-जागते अखबारों की तरह काम किया। आखीर में, जब खबरें दबाने का घेरा तोड़ दिया गया तब "सम्माननीय" अखबारो को मजबूर होकर रोज कुछ इन्च स्थान खबरो के लिये देने को मजबूर होना पड़ा क्योकि शाति सम्मेलन की अब किसी तरह अवहेलना नहीं की जा सकती थी। जिन दिनो शाति सम्मेलन का अधिवेशन हो रहा था उन दिनो दो बंगाली दैनिक पत्रों ने उनका काफी समाचार दिया। पर जनता ने देखा कि **अमृत बाज़ार पत्रिका, स्टेट्स्मैन** तथा उन्हीं की क़ौम के दूसरे प्रमुख दैनिक अखबारो ने शाति सम्मेलन के समाचार के लिये, जिसमे एक लाख व्यक्तियो ने भाग लिया था, उतनी भी जगह नही दी थी जितनी उन्होंने अमरीकी जनरल मैकार्थर के जापान को भेंट किये गये नेहरू के हाथी को दी थी। यह इन अखबारोके लिए डूब मरनेकी चीज है।

ऑल-इण्डिया रेडियोने अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियोंके हुक्मको बजाते हुये शाति-सम्मेलनकी अवहेलना की। मॉस्को रेडियोने जनता की मदद की। उसने हर रोज सारी दुनियामे अखिल भारतीय शांति सम्मेलनके अधिवेशनका पूरा-पूरा समाचार पहुँचाया। हिन्दुस्तानी रेडियोने जिसके लिये रुपया हिन्दुस्तानी जनता देती है विदेशी साम्राज्यवादियोकी इच्छानुसार उसकी सेवा करनेसे इनकार कर दिया।

शान्ति सम्मेलनने न सिर्फ नेहरूकी वैदेशिक नीति और विधान राय के कानून और व्यवस्था के ढकोसलो का पर्दाफाश कर दिया है, बल्कि उसने हिन्दुस्तान के धन्नासेठोके पूरे शासक वर्गको—उसके प्रेस, रेडियो आदि सबका—अमरीकी जंगखोरों के जरखरीद गुलामोके रूपमे पर्दाफाश कर दिया है।

लेकिन अन्तरराष्ट्रीय भाइचारेकी कड़ियाँ इतनी मजबूत हैं, शान्ति आन्दोलन की अपील इतनी शक्तिशाली है, जनता की पहलकदमी और एकता इतनी शानदार है कि एक बार फिर यह साबित हो गया कि जनताका कैम्प अजेय है।

लेकिन, जनताने जो जीत हासिल की है उसकी मात्रा का अनुमान तबतक पूरा नहीं हो सकता जबतक कि इस बातका भी खयाल नहीं किया जाता कि कम्युनिस्ट पार्टी, जो मजदूर-वर्ग की नेता है—उस वर्गकी जो शाति-सम्मेलनकी प्रेरकशक्ति और उसका सगठनकर्ता है—पश्चिमी बंगाल मे गैर-कानूनी है; उसके नेताओं और सक्रिय कार्यकर्ताओं की बहुत बड़ी सख्या या तो जेलोमे है या उसे भूमिगत (अण्डर ग्राउण्ड) होने के लिये मजबूर होना पडा है; उसकी प्रेस और अखबारो को जब्त कर

लिया गया हैं, हर तरह की कम्युनिस्ट कार्रवाई सारे देश में गैर-कानूनी है। सत्ता-धारी वर्ग द्वारा रास्ते मे अपनी पूरी ताकत से खड़ी की गयी हर रुकावट को कुचल कर शाति सम्मेलन की कामयाबी, और एक लाख व्यक्तियो के विराट् प्रदर्शन ने सिद्ध कर दिया है कि कितना भी दमन क्यो न हो वह मजदूर-वर्ग की पार्टी की प्रगति का गला नहीं घोट सकता, वह जन-आन्दोलन के तूफान को नहीं रोक सकता।

कलकत्ते मे होनेवाले अखिल भारतीय शांति सम्मेलन के पहले और उसकी तैयारी में अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियो और उनके हिन्दुस्तानी मददगारो की युद्ध साजिशों के खिलाफ और शान्ति के समर्थन मे एक शक्तिशाली और देशव्यापी आन्दोलन चला था।

अप्रैल १९४९ में पैरिस में हुये विश्व शाति-सम्मेलन के फैसलो के आधार पर अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन काग्रेस के २३ वें अधिवेशन ने हिन्दुस्तान की मेहनतकश जनता के तमाम प्रगतिशील और जनवादी सगठनों के सहयोग से एक अखिल भारतीय शाति सम्मेलन बुलाने का फैसला किया। उसने अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन काग्रेस के भिन्न-भिन्न प्रान्तीय और प्रादेशिक केन्द्रों का आह्वान किया कि वे दूसरे प्रगतिशील सगठनो के सहयोग से प्रान्तीय शाति-सम्मेलन करें।

२६ जून १९४९ को बम्बई शहर और उप-नगरों का शान्ति-सम्मेलन हुआ जिसमें लगभग २५ सगठनो ने, जैसे गिरनी कामगार यूनियन, रेलवेमैन्स यूनियन, महिला सघ, तथा विद्यार्थी सघ, सोवियत मित्र-मण्डल, प्रगतिशील लेखक संघ, भारतीय जन-नाट्य सघ तथा दूसरे कई सगठन थे, उसमे हिस्सा लिया। खुले अधिवेशन पर पुलिस के रोक लगा देने पर भी ४०० प्रतिनिधियो तथा ५० महिलाओंने भाग लेकर उसे सफल बनाया। यह पहला शान्ति सम्मेलन था।

इसके बाद अनेकों प्रान्तीय तथा प्रादेशिक सम्मेलन हुये जिनका सगठन अ. भा. ट्रेड यूनियन काग्रेस के प्रान्तीय तथा प्रादेशिक केन्द्रो ने दूसरे प्रगतिशील संगठनो के सहयोग से किया था।

जुलाई महीने में आसाम का प्रान्तीय शाति सम्मेलन दिब्रूगढमें, जो आसाम का एक महत्वपूर्ण रेलवे-केन्द्र है, हुआ। हजारो मजदूरों और दूसरे मेहनतकशों ने इसमें भाग लिया। पुलिस ने सम्मेलन मे दखलन्दाजी की और गोली चलाई जिससे ९ व्यक्ति मारे गये। इनमे ४ महिलायें भी थी।

सितम्बरमें झाँसीमें एक प्रादेशिक शाति-सम्मेलन हुआ। सितम्बरके अखीरमें पश्चिमी बंगालका शाति सम्मेलन कलकत्तेमें हुआ। कलकत्तेके प्रान्तीय शाति-सम्मेलन मे मजदूरो, किसानो, विद्यार्थियों, महिलाओ तथा दूसरे प्रगतिशील लोगोंके ६० सगठनों ने भाग लिया। २ अक्तूबरको शोलापूरमें एक शांति सम्मेलन हुआ जिसमे ४०० प्रतिनिधि शामिल हुये। फिर, दिल्ली और सयुक्त-प्रांतमें शाति सम्मेलन हुये।

बम्बई का प्रान्तीय शांति सम्मेलन ३० अक्तूबरको हुआ जिसमें प्रान्तके अलग-अलग हिस्सोंसे आनेवाले १०० प्रतिनिधि शामिल हुये तथा खुले प्रदर्शनमें १०,००० मजदूरों तथा दूसरे नागरिकोंने भाग लिया।

अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन काग्रेसके अनेको प्रान्तीय तथा प्रादेशिक केन्द्र शांतिके सघर्षके लिये मजदूरों तथा दूसरे लोगोंको समेट रहे थे।

विश्व-मजदूर सघ तथा विश्व शांति सम्मेलनके आह्वान पर दो अक्तूबरको यहा देश भरमे शांतिके लिये सघर्षका दिवस मनाया गया। बम्बईमे बीस हजार मजदूरों तथा दूसरे नागरिकोकी एक शांति सभा हुई। कलकत्तामे एक विशाल शांति-सभा हुई और ६००० का जलूस निकला। शोलापूर, मद्रास, अलप्पी, (कोचीन-त्रावणकोर रियासतमे), कानपुर, इन्दौर, भोपाल, अलीगढ़, मेरठ, गोरखपुर (युक्त प्रान्त), रामपुर तथा कई दूसरी जगहोंमे २ अक्तूबरको शांति-सभाएँ हुई।

अक्तूबर ३० से ७ नवम्बर तक अ भा ट्रे. यू का द्वारा आयोजित मजदूर वर्ग एकता सप्ताह मनाया गया जिसमे आगे आने वाले अखिल भारतीय शांति सम्मेलनका प्रचार किया गया। ७ नवम्बर को हिन्दुस्तान भरमे अक्तूबर क्रान्ति की ३२ वीं वर्षगॉठ मनाई गयी। इस दिन हिन्दुस्तान के मजदूर-वर्ग और मेहनतकश जनता ने प्रण किया कि महान सोवियत सघके नेतृत्वमे वह शान्तिकी विश्व-शक्तियोके पीछे एकत्रित होगी।

कलकत्ता शान्ति सम्मेलनके लिये इसी तरह पूरे जोर शोरसे तैयारियॉ हुई थीं।

अखिल भारतीय शांति सम्मेलन इसी देशव्यापी शान्ति आन्दोलनका, विशेष रूपसे मजदूर-वर्ग के अन्दर शान्ति आन्दोलनका परिणाम था। उसने **मजदूर-वर्ग की एकता** को पुख्ता बनाया, इतना जितना कि वह पहले कभी नहीं थी। यही इसकी सफलताका रहस्य है।

[४]

शान्ति सम्मेलन के ठीक पहले अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन काग्रेस तथा उससे सम्बंधित दूसरे जन-संगठनों द्वारा सगठित किये गये शांति-आन्दोलनका सदेश १५ दिनके अन्दर कलकत्ता और उसके उपनगरोके पॉच लाख लोगों तक पहुॅच गया था। अधिकाश मीटिंगे तथा प्रदर्शन मजदूर-बस्तियो में हुए थे।

अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन काग्रेस से सम्बंधित बहुतसी यूनियनोंने शांति सम्मेलन किये थे और अपने-अपने उद्योगके तमाम साधारण कार्यकर्ताओं के बीच एकता स्थापित की थी। इंजिनियरिंग के कामगार, निस्सन्देह, इस आन्दोलन मे सबसे आगे थे। ट्राम मजदूरों के बीच से भी, जिनकी एकता को सरकार के सोशलिस्ट पिट्ठुओंने तोड दिया है, साधारण मजदूरोंने शांति सम्मेलन का आगे बढ़ कर समर्थन

किया और फूटपरस्तो की बोलती बन्द करदी। विभिन्न पार्टियो के साथ अपने सम्बंधके बावजूद ट्राम मजदूरोने एक हो कर शांति सम्मेलन के प्रतिनिधियोको पुलिस की गिरफ्तारी से बचाया।

जूट-मिलोमे, मिसाल के लिये बज-बज मे, आम मजदूरोने मालिको के विरोधको खत्म करने मे खुद ही पहलकदमी की और प्रचारके परचो को शान्ति-दलोके हाथ से लेकर खुद ही तमाम मजदूरो के बीच बॉटा। जूटके पूरे इलाके में न तो मिलके अधिकारी ही और न राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस वाले ही (आई. एन. टी. यू. सी वाले) हजारोंकी सख्या में मजदूरोंको शाति सम्मेलन मे इकट्ठा होनेसे रोक सके।

कासीपुर मे १५ यूनियनो तथा दूसरी कलबोने मिल कर ७० प्रतिनिधियों का एक शाति सम्मेलन किया। उन्होने मजदूरों का आह्वान किया कि वे शांति सम्मेलन में भाग ले। गन एण्ड शेल फैक्टरी में मजदूरो ने अपने हाथ से दीवालो पर शांतिके नारे लिखे थे। अखिल भारतीय शाति सम्मेलन होनेके पहले, किदरपुर, टॉलीगंज, बटरनाला, शाहपुर, हावडा तथा दूसरे इलाको में शान्ति कान्फ्रेंसे हुई थीं। बेलियाघाट के बहादुर पाटरी मजदूरो ने जो १०० दिनो से ज़्यादा से हड्ताल पर हैं सरकार के एजेन्टो के नीच हमले का मुकाबला करते हुये अपना शाति सम्मेलन किया था।

इन तमाम सम्मेलनो में राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस के नेताओ, सोशलिस्ट पंचायत के नेताओ तथा कम्पनी के ऐसे ही दूसरे दलालो को खदेड कर भगा दिया गया था। शहरो और उपनगरो के मजदूर वर्गने साम्राज्यवादी जंगखोरो के खिलाफ़ सघर्ष मे अपनी एकता का जबरदस्त इज़हार किया।

वह कौन सी चीज़ थी जिसने मज़दूरो को इतना उत्साहित किया, उनकी पहल कदमी को इतना जगाया?

इस सवाल का जवाब एक संगठनकर्ता ने दिया जिसने कलकत्ते के म्यूनिसिपल मजदूरो के बीच शाति सम्मेलन के प्रचार के सबंध में अपने अनुभव बताये थे। उसने जो कुछ कहा, थोडे शब्दो मे उसका अर्थ इस प्रकार है:

"मै राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस के पीछे चलनेवाले बहुतसे मजदूरों के बीच खडा था। पहले तो वे लाल झण्डे की यूनियन के किसी आदमी की बात तक सुनने को तैयार नही होते थे। उन्होंने मुझसे प्रश्न पूछे कि अखिल भारतीय शाति सम्मेलन करनेवालो का असली उद्देश्य क्या है। मैने उनको बताया कि ब्रिटिश और अमरीकी साम्राज्यवादी नयी जंग छेडने की साजिशें रच रहे हैं, हमारे मुल्क की कांग्रेसी सरकार छॅटनी, ऊंचे दामो और सच्ची तनखा में कटौती का बोझा तुम्हारे कंधों पर डाल रही है क्योंकि सोवियत यूनियन के खिलाफ एक नयी जंग छेड़ने की तैयारियॉ करने के संबंध में साम्राज्यवादियोंके हुक्म के मुताबिक काम करने का वह वादा कर चुकी है। शांति सम्मेलन

दुनिया को यह दिखा देने के लिये बुलाया जा रहा है कि हम—हिन्दुस्तान की जनता—युद्ध के लिए तोपो का निशाना बनने से इनकार करते हैं।

"मजदूरो ने पूरे ध्यान से ये बाते सुनी। इस वक्त तक मेरे चारो तरफ भीड़ बढ़ गयी थी और मैंने देखा कि एक आदमी जो पुलिसवाले की तरह लग रहा था, नजदीक ही खड़ा था। मैने मजदूरों को बताया कि अपनी बातचीत को मै आगे नहीं बढा सकता क्योकि नजदीक ही ऐसे आदमी खड़े हैं जो पुलिस को बुला कर मुझे पकड़वा सकते हैं, और मेरी यूनियन ने मुझे आदेश दिया है कि मै अपने को पकड़ा न जाने दूँ। यह सुनते ही चारो तरफसे मजदूर बोले: तुम अपनी बात जारी रखो, कॉमरेड। हमारी यूनियन के लीडर ये सच्ची बाते हमे कभी नहीं बताते। हम किसी को तुम्हें गिरफ़्तार नहीं करने देंगे। कोई तुम्हें हाथ लगाने की हिम्मत तो करे, हम देख लेंगे।

"आपको ध्यान में रखना चाहिये कि मैं मजदूरोंके उस हिस्सेसे बात कर रहा था जो राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन काग्रेस के पीछे आँख बन्द करके चलता है और जो कुछ दिन पहले आई. एन. टी. यू. सी. लीडरोका इशारा पाकर मुझे मारने में भी न हिचकिचाता। जब मै अपनी बातें कह चुका तब उन्होंने मुझसे कहा कि मै दुबारा जाऊँ और उनको अपनी बातें समझाऊँ।"

शान्ति सम्मेलन के एक संगठनकर्ता द्वारा बतायी गयी यह छोटीसी घटना कुछ हद तक यह बता देती है कि युद्ध-विरोधी अपील मजदूरों को क्यों भाती है और उनकी कतारोंको क्यों दृढ़ बनाती है। पहले तो सोवियत संघके लिये, जिसमें वे अपने कलका, अपने भविष्यका प्रतिबिम्ब देखते हैं, मजदूरोंमें महान प्रेम है। सोवियत सघको साम्राज्यवादी अपने हमलेका निशाना बना रहे है इससे उनका क्रोध भड़क उठता है। दूसरे, मुनाफाखोरो के स्वार्थोंको पूरा करने के लिये वे मौत और विनाश नहीं चाहते। तीसरे, मजदूर समझ गये हैं कि शांतिकी लड़ाई भी उनके उन्ही दुश्मनों के खिलाफ है जिनसे वे अपनी नौकरी और अपनी तनखा की हिफाजत करने के लिये लड़ रहे हैं। नवम्बरके दूसरे और तीसरे सप्ताह मे मिलोंकी सैकड़ों गेट-मीटिंगोमें बोलनेवाले तमाम प्रचार-दलोका यही अनुभव है।

दुकानोके छोटे कर्मचारियोंने, खासतौर से बीड़ी मजदूरोने, शहरकी गरीब जनताका समर्थन संगठित करनेमे बहुमूल्य पार्ट अदा किया था।

सोवियत संघके लिये प्रेम और श्रद्धा मजदूर-वर्ग की एकताको पुख़्ता बनाने मे एक बडी शक्तिका काम कर रही है। सरकारी कर्मचारी यूनियनने शान्ति सम्मेलनके समर्थनमें डलहौजी स्क्वायरके आस-पास मे बड़ी सख्या में मीटिंगें और प्रदर्शन सगठित किये थे। उसने अपनी रिपोर्ट में बताया कि सोवियन यूनियनके समर्थनके नारोका कितने जोरोसे स्वागत हुआ था। केन्द्रीय सरकारी कर्मचारी यूनियनने जो शांति कान्फ्रेंस बुलाई थी उसमे एक प्रतिनिधिने संशोधन पेश किया कि मुख्य प्रस्ताव

से सोवियत यूनियन समर्थन सम्बंधी वाक्य निकाल दिया जाय। पूरे के पूरे प्रतिनिधी-मण्डल ने इस संशोधन को ठुकरा दिया—केवल दो या तीन लोगोंने उसके समर्थन में वोट दिये थे।

शाति सम्मेलनसे पहले जो तैयारी-कान्फ्रेंसें हुई थी उनका विरोध करनेका साहस न तो राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन वालोंको और न सोशलिस्ट पार्टीको हुआ था। उनके एजेण्टोंने कोशिश की कि सोवियतके विरुद्ध झूठा प्रचार किया जाय और शाति सम्मेलन को कम्युनिस्टोंका एक तमाशा कह दिया जाय। लेकिन उनकी तमाम कोशिशें मिट्टीमें मिल गयी।

सोवियतके खिलाफ गंदा प्रचार और शाति सम्मेलन कम्युनिस्टोका तमाशा है, यह प्रचार विद्यार्थियों और अध्यापकोके बीच भी कोई असर न डाल सका। शांति सम्मेलनका विरोध करनेकी कार्रवाइयोंमें न सिर्फ सोशलिस्ट पार्टी, बल्कि शरत बोस द्वारा चलाई गयी सोशलिस्ट कांग्रेससे सम्बंधित गुट भी विद्यार्थियोंके बीच सक्रिय थे। लेकिन उन्हें किस बुरी तरह मुँहकी खानी पडी वह नीचेकी बातसे समझा जा सकता है.

अ. भा. विद्यार्थी संघने अखिल भारतीय शान्ति सम्मेलन के समर्थन में कलकत्तेके विद्यासागर कालेजमें एक शान्ति कान्फ्रेंस की आयोजना की। विद्यार्थियों के तमाम अगोंके ३०० प्रतिनिधि अपने अलग-अलग राजनीतिक विचारों के बावजूद इसमें सम्मिलित हुए। " रेवोल्यूशनरी (क्रान्तिकारी) सोशलिस्ट पार्टी " तथा " रेवोल्यूशनरी (क्रान्तिकारी) कम्युनिस्ट पार्टी " के प्रतिनिधियोंने मुख्य प्रस्ताव में सशोधन पेश किये कि सोवियत यूनियन और जनवादी प्रजातंत्रोंके समर्थनको प्रस्तावसे निकाल दिया जाय; लेकिन जब उनके संशोधनों पर वोट लिये गये तो ३०० प्रतिनिधियों में से केवल चारने उनके समर्थनमें वोट दिये, बाकी सबने विरोध किया। यह एक ऐसे कालेज में हुआ था जहाँ अ. भा. विद्यार्थी संघ बहुत मजबूत नहीं है। इससे कोई भी अन्दाजा लगा सकता है कि दूसरे कालेजों और स्कूलोंमें क्या हुआ होगा।

फूट डालने वालों का नीच और गंदा प्रचार कितना निकम्मा और नपुंसक था, इसका पता इस बातसे भी चल जाता है कि बहुतसे शाति दलोसे सवाल पूछा जाता था : तुम सरकार की खड़ी की गयी शांतिवादियोंकी कान्फ्रेंस की तरफ से आये हो या " कम्युनिस्टो के " शान्ति-सम्मेलन की तरफसे ? हमारे शाति-दलोंने फौरन आगे बढकर बताया कि शातिके दुश्मन ही शांति सम्मेलन को " कम्युनिस्टों द्वारा खडा किया गया " कह कर गंदा प्रचार करते हैं। लेकिन अन्तमें सवाल पूछनेवाला यह सुनकर ही कि " कम्युनिस्ट उसमें शामिल हैं " पैसे निकाल कर चन्देके बक्सोंमे डालता था।

कलकत्ता के मध्यमवर्ग के लोगो में शान्ति सम्मेलन के लिए अपूर्व रूप से समर्थन मिला था। ट्रामो के अन्दर चन्दा इकट्ठा करनेवाले शांति-दलों को चन्दा देने से ट्राम में बैठे लोगो ने शायद ही कभी इनकार किया हो। आन्दोलन की सफलता के लिये कलकत्ता के मध्यमवर्गियो के परिवारो ने तरह-तरह से मदद की। उन्होंने दिल खोल कर चन्दा दिया और शांति कांग्रेस के घोषणा-पत्र का समर्थन करने के लिये वे हजारों की संख्या में एकत्रित हुये।

उनका समर्थन इतना ज़्यादा था कि २७ नवम्बर को भी, यानी एक लाख की सभा के ठीक दूसरे दिन, लगभग ५०,००० स्त्री-पुरुष, जिनमें से अधिकतर मध्यवर्गी थे, मैदान में जन नाट्य संघ के नाटक देखने के लिये आकर इकट्ठा हो गये थे। जन नाट्य संघ ने शांति सम्मेलन के सम्बंध में नाटक इत्यादि दिखाने का कार्यक्रम बनाया था। सब लोगो के इकट्ठा हो जाने पर अचानक ऐलान किया गया कि पुलिस कमिश्नर ने १८७६ के नाटक प्रदर्शन एक्ट के आधार पर प्रदर्शन पर रोक लगा दी है। इससे उनके क्रोध में ऐसा उबाल आया कि पूरे जमाव ने एक साथ हाथ उठाकर वोट दिये कि प्रतिबन्ध को तोड़ा जाय और प्रदर्शन किया जाय। नाटक तो नहीं हो सका, लेकिन तालियों की गड़गड़ाहट के बीच कई गाने गाये गये। पुलिस कमिश्नर के हुक्म के खिलाफ सभा ने निन्दा का प्रस्ताव पास किया और उसके बाद सड़को पर जलती मशालो का एक लम्बा जलूस निकाला गया।

इस प्रकार अखिल भारतीय शांति सम्मेलन इस सचाई का उत्कृष्ट प्रदर्शन था कि विश्व-शांति के लिये संघर्ष एक ऐसा समान कार्यक्रम है जिसके आधार पर मजदूर-वर्ग की एकता हासिल की जा सकती है, और तमाम प्रगतिशील जनता का संयुक्त मोर्चा कायम किया जा सकता है। साम्राज्यवाद के विरुद्ध और उसके भारतीय छुटभैयो के विरुद्ध यह एका और यह संयुक्त मोर्चा तमाम झूठे-समाजवादियों का निर्ममता के साथ पर्दाफ़ाश करके किया जा सकता है। जितनी ही यह एकता हासिल की जायेगी, जनता का पक्ष उतना ही दुर्जेय होता जायगा। शांति-आन्दोलन जनता का आन्दोलन बन जाता है क्योंकि वह जनता के दुश्मनो के खिलाफ़ है।

[५]

किसी भी कीमत पर शांति की सुरक्षा करने के जनता के दृढ़ निश्चय को सम्मेलन की कार्रवाइयों ने साफ-साफ प्रकट कर दिया। सम्मेलन के प्रस्ताव और प्रस्तावो पर होनेवाले तमाम भाषण मेहनत करने वाली जनता तथा प्रगतिशील बुद्धिजीवियों की समान भावनाओं से ओत-प्रोत थे। पोच शांतिवादियों की चीख-पुकार और झूठे-जनवादियों की ढुलमुलाहट के मुकाबले में वे एक नयी चीज थे। उनमें दृढ़ता और ठोसपन था।

२४ नवम्बर को, पहले दिन के अधिवेशन में सभापति-मण्डल के अध्यक्ष, कॉमरेड चक्कराय चेट्टियर ने अपने भाषण में ऐलान किया :

"भारत की जनता यह कभी बर्दाश्त नहीं करेगी कि भारत सोवियत-विरोधी गुट में सम्मिलित हो।"

उन्होंने नेहरु की अमरीका यात्रा की तुलना चैम्बरलेन की योरप यात्रा से की और तब जनता को उन सभी नतीजों से आगाह किया जो चैम्बरलेन की यात्रा से पैदा हुए थे। पोच शांतिवादियों और शांतिके लड़ाकों का भेद बताते हुये उन्होंने सीधे-सादे और साफ-साफ शब्दोंमें बताया कि पोच शांतिवादी जनता से इस बातको छिपाते हैं कि युद्ध-भड़कानेवाले लोग कौन हैं, और वे क्यों युद्ध की साजिश रच रहे हैं। और तब कामरेड चक्काराय चेट्टियरने प्रतिनिधियों को सीधे-सीधे बताया कि

"सोवियत संघ युद्ध नहीं चाहता और युद्ध नही चाह सकता, और हमारी जनता इस बातको अच्छी तरह जानती है कि युद्ध भड़कानेवाली असली ताकतें अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियो की ताकतें हैं।"

उन्होंने अपना भाषण इस गम्भीर चेतावनी के साथ खतम किया,

"साम्राज्यवादी आधिपत्य विदेशी मदद का बाना धारण करता है, उससे सावधान हो जाओ! जनता की मर्जी पर आधारित जनवादी शासन ही शांति की एकमात्र सच्ची गारंटी है।"

अध्यक्षके भाषणको देशप्रिय पार्कमें उपस्थित तीन हजार प्रतिनिधियो और बारह हजार निमंत्रित लोगोंने तालियों की गडगडाहट से मंजूर किया।

शांतिके वक्तव्य पर बहस को विद्यार्थी नेता, कॉ मुल्तान नियाजीने शुरू किया। उन्होंने अंग्रेज-अमरीकी ताकतो की युद्ध की तैयारियो पर जोरोसे हमला किया और पूछा "युद्ध और शांतिके, दूसरे राष्ट्रोंके मामलों में हथियारबन्द दखलन्दाजी और राष्ट्रों की समानताके, साम्राज्यवाद और औपनिवेशिक स्वाधीनताके—इन दो पक्षोंमें से नेहरू किस पक्षमें हैं? क्या न्याय और अन्याय के बीच कोई मध्य का रास्ता भी है? नेहरू की "तटस्थता" का पर्दाफाश हो चुका है और वह अमरीकियोके युद्ध के खेमे में शामिल हो रहे हैं।"

दूसरे दिनके अधिवेशनमें उनके भाषणका हिन्दी और बंगलामें अनुवाद हुआ। प्रतिनिधियों और आगन्तुकोंने आजाद चीन और तेलंगानाकी लड़ाकू जनताके अभिनन्दनके नारोंकी गुंजसे मुल्तानके भाषणका समर्थन किया।

दूसरे वक्ता, मद्रासके नागरिक आजादी संघ (सिविल लिबर्टीज लीग) के सी. वी राजगोपालाचारीने तमाम प्रतिनिधियोंकी भावनाको यह कह कर साफ-साफ रख दिया कि "यहाँ हम शांतिकी भीख मॉगनेके लिये नहीं, बल्कि शान्तिके लिये लड़ने और उसे जीतनेके लिये इकट्ठा हुए है।"

पन्द्रह हजार जनताकी पूरी सभाकी लगातार तालियोंकी गडगडाहट के बीच पूर्वी पंजाब से आये कॉमरेड शार्दूल सिंह ने ऐलान किया, "हम जंगखोरों को चुनौती

देते हैं की वे युद्ध छेड़ें। उन्हें अवकी एक सबक सिखा दिया जायेगा। अपने मुनाफो की हिफाजत के लिये साम्राज्यवादियों ने पंजाब के अवाम को धोखा देकर हमेशा उसे जंग में घसीटा है। लेकिन अब पंजाब उनके लिये नहीं लड़ेगा।"

अप्रैल महीने में महिला आत्म रक्षा समिति के एक जुलूस का नेतृत्व करते हुये जो विधान राय की पुलिस के गोलीबार से मरी थीं उन कामरेड प्रतिभा गांगुली के ११ वर्ष के बेटे विवेकरंजन ने, न सिर्फ अपनी भावनाओं को बल्कि सभा में उपस्थित तमाम लोगो की भावना को इन शब्दोंमें खोल कर रख दिया · "शांति की गारंटी तब तक नहीं हो सकती जब तक उन लोगोंको जिन्होंने मेरी माँ को मारा है सत्तासे हटा कर अलग नहीं कर दिया जाता।"

कॉ. इब्राहीम ने, जो कलकत्ते की एक फैक्टरी मे मजदूर हैं और जिन्हें शांति सम्मेलन के सभापति-मण्डल में चुना गया था, मजदूर-वर्ग के आन्दोलन को कुचलने के लिये की जानेवाली दमन की कार्रवाइयों का यह बताकर पर्दाफाश किया कि "सरकार मजदूरो के सगठन को कुचल देना चाहती है जिससे कि बिना किसी विरोध के भारत को लड़ाई में घसीटा जा सके। नेहरू की तटस्थता, और कुछ नहीं, एक धोखा है।"

महिला विद्यार्थी, कॉमरेड रेहाना ने शांति के वक्तव्य के मसौदे पर भाषण देते हुये प्रतिनिधियोंसे कहा कि जनवादी हको के लिये जो विद्यार्थी लड़ रहे हैं, वे सोवियत सघ के साथ हैं।

आन्ध्र से आये कॉमरेड नम्बियार ने ऐलान किया कि, "तेलंगाना के बहादुर लोगो ने शोषको के खिलाफ लड़कर शांति का रास्ता दिखा दिया है।" उनके बाद तामिलनाड के एक मजदूर कॉ. होमी दानी ने ऐलान किया : "अगर जंगखोरो ने हमारे ऊपर युद्ध लादा तो साउथ इण्डियन रेलवे के मजदूर फौजी टुकड़ियाँ ले जाने वाली एक भी रेल नहीं चलायेंगे।" सभा में उपस्थित तमाम लोगोंने तेलंगाना के वीर लड़ाकों के अभिनन्दन के नारो से इस ऐलान का स्वागत किया। तेलंगान के एक प्रतिनिधि ने अपने भाषण के दौरान मे बताया कि फौजी शासनने तेलंगाना की जनता का दमन करने कि लिये ५०,००० फौजें रख छोड़ी हैं, ३० से भी ज़्यादा लोगो को फाँसी की सजा दी है और एक १० वरस के बच्चे को ४६ साल कैद की सजा सुनाई है।

यह स्तब्ध कर देने वाली खबर ज्यों ही सुनायी गयी कि वहाँ उपस्थित लोगों का चेहरा क्रोध से तमतमा उठा और उनके कण्ठ से एक बारगी ही "शर्म" "शर्म" के नारे जोरो से फूट निकले।

फौरन ही तालियों की गड़गड़ाहट के बीच एक प्रस्ताव पास हुआ कि हैदराबाद के इन वीरो की फाँसी की सजा वापिस ली जाय। "फासिस्ट दमनकारियों का नाश हो" के नारे गूँज उठे।

कॉ. खोटे ने बम्बई के मजदूरों की तरफ से ऐलान किया-"हम लोग जब शांति और रोटी की मॉग करते हैं तब गोलियॉ मिलती हैं। बम्बई के मजदूर सोवियत रूस के खिलाफ नहीं लड़ेंगे।" ध्यान रहे कि १९३९ में जब हिटलरने योरप में जंग छेड़ी थी तो जंग के खिलाफ विरोध प्रदर्शित करने के लिये बम्बई के ९०,००० मजदूर एक दिन की विरोध हड़ताल पर निकल आये थे। बम्बई के मजदूर कवि कॉ. अन्नाभाऊ साठे ने कहा "साम्राज्यवादियों ने हार पर हार खायी है। पहले विश्व युद्ध में, शांतिके लिये संघर्ष ने सोवियत रूस को जन्म दिया। दूसरे विश्व-युद्ध में साम्राज्यवादी जंगखोरों के खिलाफ संघर्ष ने जनता के जनतंत्रों और विजयी चीन को जन्म दिया। अगर साम्राज्यवादियोंने तीसरा विश्व युद्ध छेड़ा तो साम्राज्यवाद को दुनिया भर से खतम करके शांति स्थापित की जायेगी।"

इस तरह, प्रतिनिधियों के अधिवेशन और खुले भाषणों ने तमाम जातियों की, अधिवेशन में आये सभी लाखों-करोड़ों जनता की युद्ध विरोधी भावनाओं से पैदा होनेवाले विचारों और उद्देश्य की एकता को जाहिर किया।

भाषणों में ज्यों ही सोवियत संघ और कामरेड स्तालिन का जिक्र आता था कि फौरन तालियों की गड़गड़ाहट और "सोवियत यूनियन—जिन्दाबाद", "कॉमरेड स्तालिन जिन्दाबाद" के नारों से वातावरण गूँज उठता था। सोवियत यूनियन और उसके महान नेता कॉमरेड स्तालिन—जिनका नाम स्थायी शान्ति, आज़ादी, जनवाद और समाजवाद के करोड़ों लड़ाकों के लिये उत्साह का प्रतीक बन गया है—के नेतृत्व में चलने वाली दुनियाकी जनवाद और शान्तिकी शक्तियोंके साथ भारतके मेहनतकशों की अन्तरराष्ट्रीय एकता का यह एक शक्तिशाली प्रदर्शन था।

जब शान्ति के बारे में बयानको, जिसमें पैरिस और प्राग में हुई विश्व शान्ति कांग्रेस के घोषणा पत्र का पूरी तरह समर्थन किया गया था, वोट के लिये पेश किया गया तो तालियों की जोरदार गड़गड़ाहट के बीच उसे एक स्वर से पास किया गया। और आसमान को गुंजा देनेवाले ये नारे लगने लगे

—हम युद्ध नहीं चाहते

—हम शान्ति चाहते हैं

—शांति का दुश्मन कौन है? ट्रूमन, एटली, नेहरू है!

—भारत, सोवियत संघ के खिलाफ़ नहीं लड़ेगा।

दुनिया भर के मजदूर-वर्ग के नेता और समाजवाद के मेमार कॉ. स्तालिन के नाम पर पूरी रैली तालियाँ बजाती हुई खुशी से झूम उठी। जनता के इस हर्षोन्माद ने बता दिया कि हिटलर को धूल चटानेवाले, शांति और जनवादी आजादी के दृढ़ अलमबरदार और उपनिवेशों के स्वाधीनता संग्रामों के स्थिर समर्थक के रूप में—

उस रूप में जिसका नाम सभी देशों की जनता की राष्ट्रीय और सामाजिक आजादी का प्रतीक है—हमारी जनता के हृदय में कॉ. स्तालिन के लिये कितना गहरा प्यार और कितनी श्रद्धा है !

अधिवेशन चल ही रहा था कि अलीपुर जेल से रिहा एक वन्दी सीधा सम्मेलन में आया और उसने ऐलान किया कि जेल के अन्दर राजनीतिक वन्दी एक शांति सम्मेलन कर रहे थे और जेल-अधिकारियों ने उन पर वर्वर लाठी-चार्ज किया है, उनके शरीरसे रक्त वह रहा है। उसी वक्त तमाम जनताने नारा उठाया—" राज-वन्दियों को रिह करो ! "

प्रतिनिधियोके अधिवेशन में पास किये गये शांति के वारेमें वक्तव्यों और दूसरे प्रस्तावों पर १,००,००० जनता की रैलीने—स्त्रियों और पुरुषों ने—अपनी सहमति की मुहर लगाई। यह २६ नवम्वरको हुआ। इस प्रकार शांति पर वक्तव्य तथा दूसरे प्रस्ताव शांति, आजादी और जनवादके लिये जनताके चार्टर (अधिकार-पत्र) वन गये हैं।

सम्मेलन ने एक जाहिरनामा पास करके ही अपना काम खतम नहीं कर दिया। उसने ७५ सदस्योंकी एक शांति-कमिटी चुनी और उन्हें आदेश दिया कि वे शांति कांग्रेस के उद्देश्यको पूरा करने के लिये उसके काम को जारी रखें

अ. भा. शांति कांग्रेसका होना ही शान्ति आन्दोलनकी समाप्ति नहीं है। वल्कि, यह उस शांति आन्दोलन की प्रचण्ड शुरूआत है जिसका वेग साम्राज्यवादियों और उनके वगल-वच्चोंके युद्ध-सम्वंधी प्रचारको उखाड़ फेंकेगा। जनताकी जागरूकताको वार-वार जगाना होगा, देश के कोने-कोने में शांति-कमिटियों का जाल फैल जाना चाहिये, शान्ति आन्दोलनको जनतामें अधिकाधिक गहरी जड़ें जमानी चाहिए। अखिल भारतीय शांति सम्मेलन अपनी इन जिम्मेदारियों से वाकिफ था। इसलिये, उसने संगठनके वारेमें प्रस्ताव पास किया कि विश्व-व्यापी शांति आन्दोलनके साथ एक हो-कर शांति के लिये लड़ाई जारी रखी जाय और पेरिस और प्राग में हुये विश्व-शांति सम्मेलन की स्थायी शांति कमिटी के निर्देशन में उसे चलाया जाय।

जैसा कि सोवियत सरकार के मुखपत्र **इज़्वेस्तिया** ने एकदम ठीक वताया है कि जनता को यह मालूम हो जाना चाहिये कि,

> " शांति और जनवाद की ताकतें जितनी ही ज़्यादा शक्तिशाली होती जाती हैं, उतनी ही ज़्यादा वौखलाहट के साथ साम्राज्यवादी अपना प्रभुत्व जमाये रखने की कोशिशें करते हैं। यह वात जनवादी कैम्प के लिये लाज़िमी वना देती है कि शांति की लड़ाई में वह अपनी जागरूकता को और अपनी कोशिशों को दुगना और तिगुना वढ़ाये। युद्ध के ख़िलाफ़, शांति के लिये

और राष्ट्रों के बीच मित्रता के लिये लड़नेवाली लाखों-करोड़ों जनता की आवाज और भी जोरों से बुलन्द होनी चाहिये।" (२ अक्तूबर, १९४९)

शान्ति आन्दोलन विजयी होगा, क्योंकि अखिल भारतीय शान्ति सम्मेलन ने जनता को यह बता दिया है कि शान्ति आन्दोलन की शक्ति इस बात में है कि उसकी आधारशिला जनवाद और समाजवाद का महान पक्ष है, जिसका नेता सोवियत संघ है—जो दुनिया में शान्ति का सबसे प्रमुख किला है। और यह पक्ष सोवियत संघ के साथ मित्रता और एकता के नारेके झण्डे के नीचे आगे बढ रहा है। वह विजयी होगा क्योंकि, जैसा कि **प्रावदा** ने बडी खूबी से जोर देकर बताया है :

"शान्ति और जनवाद के अनगिनती समर्थकों की फौज साम्राज्यवादी प्रतिक्रिया की हमलावर साजिशों से मानव जाति की रक्षा करने के महान, उच्च ध्येय के कारण एक साथ संगठित है—वह एक अजेय शक्ति है और शान्ति तथा जनताकी सुरक्षा कायम रखने की क्षमता रखती है।"

गांधीवाद का वर्ग-सार

लेखक : एस. एम. वाकार

३० जनवरी, १९४८ को, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सबसे ज़्यादा असरवाले नेता और हिन्दुस्तान के एक सबसे अधिक जनप्रिय राजनीतिक लीडर, मोहनदास करमचन्द गांधी की दिल्ली में हत्या कर दी गयी।

इसके बावजूद कि अपने कार्य का उद्देश्य गांधी हिन्दुस्तानी जनता का एकीकरण और आजादी समझते थे, उनके सामाजिक सिद्धान्तों का प्रतिक्रियावादी–कल्पनावादी तत्व और उससे जुडे हुए संघर्ष के सुधारवादी तरीकों का परिणाम यह हुआ कि उनके कामोंसे औपनिवेशिक जुएको फेंकने में न सिर्फ़ मदद नहीं मिली, बल्कि ब्रिटिश साम्राज्यवादियोंने अपने स्वार्थ साधनेके लिये उनका भरपूर इस्तेमाल किया।

दूसरे युद्धके बाद ब्रिटिश औपनिवेशिक व्यवस्थाके संकटने जो पूँजीवाद के आम सकटसे जुड़ा हुआ था ब्रिटिश साम्राज्यवादियोंको एक नया राजनीतिक दॉव चलने के लिये मजबूर किया। यह राजनीतिक दॉव था यह कोशिश करना कि हिन्दुस्तान को दो राज्योंमें बॉट दिया जाय और उन दोनोंके बीच अधिकसे अधिक शत्रुताको भड़का कर उनके ऊपर अपने प्रभुत्व को कायम रखा जाय। हिन्दुस्तान में ब्रिटिश औपनिवेशिक मालिकों द्वारा भडकायी गयी हिन्दू–मुसलिम घृणा ने राज्यों के बीच सशस्त्र टक्करों का रूप ले लिया (उदाहरण के लिये कश्मीर और पंजाब मे)। गाधीने, जो कि संयुक्त भारत के समर्थक थे ब्रिटिश साम्राज्यवाद द्वारा उकसायी गयी इन धार्मिक–साम्प्रदायिक खूनी टक्करों को रोकनेकी कोशिश की और हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच शांति के लिये अपील की। हिन्दुस्तानके बॅटवारेके ६ महीने बाद हिन्दू महासभाके, एक अर्द्ध-फ़ासिस्ट किस्मके हिन्दू संगठनके, एक सक्रिय कार्यकर्ताने गांधीकी हत्या कर डाली। ब्रिटिश साम्राज्यवादी पूँजीपतियोंने जबतक संभव था गांधीका पूरा-पूरा इस्तेमाल किया था, लेकिन अब अपने प्रभुत्वको कायम रखनेकी इस नयी मंजिलमें उन्होंने देखा कि वह एक बाधा बन रहे थे। इसलिए गाधीको रास्तेसे हटा दिया गया। गाधीवाद के सामाजिक सार और हिन्दुस्तान की राष्ट्रीय आजादीके आन्दोलन में उसकी बुनियादी तौरसे प्रतिक्रिया-वादी भूमिका का मार्क्सवादी साहित्यके अंदर लगभग अभी तक खुलासा नहीं किया

गया है। इस बीच ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ संघर्ष के लिये उभड़ती हुई भारतीय जनता की चेतना के विकास का गांधीवाद आज भी गला घोंट रहा है।

साम्राज्यवाद की औपनिवेशिक व्यवस्थाका वर्तमान संकट, पूर्व के औपनिवेशिक देशोंके राष्ट्रीय स्वाधीनता के आन्दोलनों के शक्तिशाली बढ़ाव से घनिष्ट रूपसे जुड़ा हुआ है। दूसरे युद्धके खात्मे ने हिन्दुस्तानके—जोकि उपनिवेशोंके अन्दर एक सबसे बड़ा, औद्योगिक रूपसे सबसे अधिक उन्नत देश है—राष्ट्रीय आजादी के आन्दोलन के विकास में, एक नया दौर शुरू कर दिया। मजदूर वर्गके और किसानोंके आन्दोलन का व्यापक प्रसार, राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग का साम्राज्यवादकी छावनीमें चला जाना और जनताके साम्राज्यवाद विरोधी और सामंतवाद विरोधी आन्दोलन के अन्दर हिन्दुस्तान के मजदूर वर्ग की प्रमुख भूमिका का मजबूत होना, इस दौरकी विशेषतायें हैं।

हिन्दुस्तान के सर्वहारा वर्ग के सामने सबसे बड़ा काम इस दौर में है करोड़ों किसान जनता को पूँजीपति वर्ग के सैद्धान्तिक और राजनीतिक असर से, और खास तौर से गांधीवादी विचार-धारा के प्रभाव से मुक्त करना। बिना इस मुक्ति के, जैसा कि कामरेड स्तालिन कहते हैं :

> "क्रान्ति को आगे नहीं बढाया जा सकता और पूँजीवादी दृष्टि से विकसित उपनिवेशों और पराधीन देशों की पूर्ण स्वतंत्रता हासिल नहीं की जा सकती।"
> **(पूर्व के श्रम-जीवियों के विश्व विद्यालय में स्तालिन का भाषण.)**[1]

महान अक्तूबर क्रांति ने उपनिवेशों और पराधीन देशोंके राष्ट्रीय आन्दोलनों के विकास में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन ला दिया था।

> "... ...अक्तूबर क्रान्ति ही दुनियाके इतिहासमें वह पहली क्रांति है जिसने पूर्वके दबे-कुचले देशोंकी श्रमजीवी जनता की युगों-युगोंकी नींद को तोड दिया है और उसे विश्व-साम्राज्यवाद के खिलाफ संघर्ष में खींच लाई है।"—स्तालिन।[2]

अक्तूबर क्रान्तिके बाद राष्ट्रीय आन्दोलनों की सामाजिक बनावट में होनेवाले क्रान्तिकारी परिवर्तन की ओर ध्यान दिलाते हुये कॉमरेड स्तालिन जोर देते हैं कि—

> "मुख्य चीज यहाँ पर यह नहीं है कि प्रतिद्वन्दिता के संघर्ष में एक जाति का पूँजीपति वर्ग दूसरी जाति के पूँजीपति वर्ग को पछाड़ रहा है या पछाड़

---

१. "**औपनिवेशिक प्रश्न पर**"—लेनिन-स्तालिन-जुकोव (अंग्रेजी में), पृष्ठ १७।

२. "**अक्तूबर क्रान्ति और राष्ट्रीय प्रश्न**"-**लारेंस एण्ड विशर्ट**, लंदन द्वारा प्रकाशित "**मार्क्सवाद और राष्ट्रीय और औपनिवेशिक प्रश्न**" १९४२, पृष्ठ७४ से उद्धृत।

देगा; बल्कि यह है कि शासक जातिका साम्राज्यवादी गुट उपनिवेशों और पराधीन देशो की जातियों के अधिकांश जन-समुदायका और सबसे अधिक किसान जन-समुदायका, शोषण और उत्पीड़न कर रहा है; और उनके उत्पीड़न और शोषण के द्वारा वह उनको साम्राज्यवादके खिलाफ संघर्षमें खींच रहा है और सर्वहारा क्रांतिका दोस्त बना रहा है।"—स्तालिन (उपरोक्त, पृष्ठ २२५)

अक्तूबर-क्रातिने हिन्दुस्तान के किसान वर्ग को भी क्रियाशील बनाया। उसकी राजनीतिक जागृतिने हिन्दुस्तानके आजादीके पूँजीवादी आन्दोलनको राष्ट्रीय आजादी के आन्दोलनमें बदलना शुरू कर दिया।

हिन्दुस्तान की आजादी के आन्दोलन का नया दौर, जिसे अक्तूबर क्रान्तिने प्रेरणा दी थी, १९१९-२२ के शक्तिशाली आन्दोलन से शुरू हुआ। हिन्दुस्तानके बड़े पूँजीपतियों ने देखा कि उनके सामने हिन्दुस्तान की जनता का साम्राज्यवाद-विरोधी आन्दोलन जबरदस्त रूपसे बढ़ रहा है। इस जन-आन्दोलनकी ताकत को ब्रिटिश-साम्राज्यवाद के खिलाफ दबावके एक हथियारके रूपमें इस्तेमाल करनेके साथ-साथ हिन्दुस्तान का पूँजीपति वर्ग एक ऐसे उपाय को भी ढूंढ़ने की कोशिश कर रहा था जिसके द्वारा जनता की क्रान्तिकारी ताकत को वह अपनी जरूरतकी सीमाओंके अन्दर बाध कर रोक सके। हिन्दुस्तान के राष्ट्रीय पूंजीपति वर्गके इसी चिन्ता-पूर्ण क्षण मे हिन्दुस्तान के राजनीतिक क्षेत्र में अपने "अहिंसा" के सिद्धान्त और "अहिंसात्मक" कार्यनीति को लेकर गांधी ने प्रवेश किया। गाधी ने बीस वर्ष तक दक्षिण अफ्रीका मे राजनीतिक काम किया था और भारतीयों के खिलाफ वर्ण-भेद की नीति के विरुद्ध सघर्ष में वहाँपर काफी सफलता हासिल कर ली थी, जिससे उन्हे एक अर्द्ध-सन्त की कीर्ति मिल गयी थी। उसीको लेकर वह हिन्दुस्तान के राजनीतिक क्षेत्र मे आये।

गाधी ने अपनी सामाजिक राजनीतिक शिक्षा का आधार हिन्दू धर्म को बनाया जो भारतीय किसान-वर्ग के अन्दर व्यापक रूप से प्रचलित है और जिसका एक बुनियादी अधविश्वास है कि किसी भी आदमी के खिलाफ हिंसा न की जाय। उन टाल्सटाय-वादी तत्वों ने जिसके साथ यह धार्मिक सिद्धान्त मिला हुआ है गाधीवाद को सत्य और न्याय की प्राप्ति के लिए, प्रेम, कष्ट और आत्मत्यागको साधन बतलाकर एक अजीब तरह के सत्य की खोज करनेवाला रूप दे दिया है।

गाधीवाद चूंकि एक बडी हद तक हिन्दुस्तान की जनता की धार्मिक विचारधारा के अन्दर से उठा है, इसलिए ठीक बतलाना मुश्किल है कि गान्धीवाद का असर कहाँ खतम होता है और कहाँसे धर्म का असर शुरू होता है। आम धर्मकी तरह गांधीवाद भी "आत्मिक उत्पीड़न" का एक रूप है, "जो दूसरेके लिए मेहनतमें पिसती, दरिद्रता, और अकेलेपनसे दबी जनताके ऊपर एक भारी बोझा बना हुआ है।" (लेनिन, संक्षिप्त ग्रंथावली (अंग्रेजी), भाग ११, लारेंस एण्ड विशर्ट, लन्दन, पृ. ६५८)

वर्तमान कालके धर्म के आधारों के बारेमें बात करते हुए, व्लादीमीर इलिच लेनिनने लिखा था,

" धर्म का सबसे गहरा आधार आज, मेहनतकश जनताका सामाजिक उत्पीड़न और पूंजीवादकी अंधी ताकतोंके सन्मुख उसकी पूर्ण असहाय अवस्था है।" (वी. आई. लेनिन-**मज़दूरों की पार्टीका धर्म के संबंध में दृष्टिकोण,** मार्क्स-एंगेल्स इन्स्टीट्यूट, अंग्रेज़ी संस्करण, मॉस्को, १९४७, पृ. १४३-४४)

जैसा कि लेनिनने ऊपर बतलाया है, एक व्यापक किसान विचारधारा के रूप मे गांधीवाद की भी मूल-जड़ वही है जो मौजूदा धर्म की है। गांधीवादमें जो पूंजीवाद-विरोधी तत्व मिलते हैं (जैसे कि पूंजीवादी उद्योग-धंधों और पूंजीवादी संस्कृति के संबंध में गांधीका आलोचनात्मक दृष्टिकोण) वे कमज़ोर रूपमें और अत्यंत असंगत रूपमें ज़ाहिर किये गये हैं। लेकिन जिस चीज़ ने गांधीवाद को आम जनताके बीच फैलने में मदद दी वह यही चीज़ थी। हिन्दुस्तान में, जहॉ कि ब्रिटिश औपनिवेशिक शासकोंने विकासको अर्द्ध-सामन्ती सम्बंधों तक ही कृत्रिम रूपसे रोक रखा था जीवन की सामाजिक-आर्थिक हालतोंने गॉधीवादके फैलनेमें, जिसकी कड़ियॉं सीधे सामन्ती सिद्धान्तोंसे जुड़ी हुई थी, मदद की। यह याद रखना चाहिये कि हिन्दुस्तानमे मौजूदा काल तक ज़मीन का ४५ फी सदी हिस्सा जिसमें ९ करोड़ जनता की आबादी है ६०० सामन्ती रजवाड़ोंके कब्जे में थी। इन पूर्वी निरंकुश रियासतोंके अलावा जहॉं गुलामी प्रथा कायम थी और सभी तरहके सामन्ती बन्धन—यहॉ तक कि कर्ज न चुकाने पर गुलामी कराना—हावी थे, हिन्दुस्तान भर में सामन्तवादके बहुत मज़बूत अवशेष, अलग-अलग रूपोंमें और अलग-अलग ढंगसे अभी भी बाकी हैं। मिसालके लिये सामन्ती सबंधोंका ऐसा एक अवशेष जाति प्रथा है, जिसकी आजके भारतमें कम महत्वपूर्ण भूमिका नहीं है। इसके साथ ही हिन्दुस्तानके देहातोंको हावी होनेके लिये आगे बढ़ते पूँजीवादी सम्बंधोंके विनाशकारी असरको भी बर्दाश्त करना पड़ रहा है —वहॉकी आबादीके बीच अन्तर बढ़ रहा है, जिन्दगीका पिछला तौर-तरीका टूट रहा है, जीवनका पुरातन रवैया बदल रहा है।

लेनिनने कहा है कि, " जब समूची पुरानी व्यवस्था मिटा दी गयी होती है, और इस पुरानी व्यवस्थामें पली जनता, जिसने अपनी मॉंके दूधके साथ इस व्यवस्था के उसूलों, आदतों, परम्पराओं और विश्वासोंको पाया है; यह नहीं समझती और नहीं समझ पाती कि "कायम होनेवाली" नयी व्यवस्था क्या है, कौनसी सामाजिक शक्तियॉ उसे बना रही हैं, तथा उन बेगिनती और बेहद कडी यातनाओंसे जो " टूटने के कालो में " स्वाभाविक होती हैं, कौनसी सामाजिक ताकतें और ठीक किस तरह उसे छुटकारा दिलाने की **क्षमता** रखती हैं ", तभी, ऐसे ही कालोंमें, " आत्मा " के प्रति " विरोध हीनता " की-अपीलें एक विचारधाराके रूपमें आवश्यक रूपसे उठ खडी होती हैं। (लेनिन, उप. पृ० ६८९)

गाँधी इतिहासके चक्रको उल्टा घुमानेकी आवाज़ उठाते हैं। वे उसे मध्य-युगी कम्यून के उस ढाँचे की तरफ ले जानेको कहते हैं जो पूर्वी निरंकुशशाही की आधार-शिला है। वह दरिद्रता, वैराग और आदिम ज़मानेके देहाती जीवन की प्रशंसा करते हैं। वह ग़रीबी के मारे किसानों के रहन-सहन के स्तर को उठाने की बात नहीं करते बल्कि कहते हैं कि सभी वर्गों से रहन-सहन के स्तर को उस स्तर तक गिराया जाय—जिसमें लाखों हिन्दुस्तानी पहले से ही पड़े हुये हैं। ('कन्फेशन आफ़ फेथ', यंग इण्डिया, जुलाई १३, १९२०, पृ. ७८३)। "कन्फेशन आफ़ फेथ" में आर्थिक विकास पर गाँधी ने अपने प्रतिक्रियावादी काल्पनिक विचारों को पेश किया है।

गाँधीवाद का कार्यक्रम हिन्दुस्तान के देहाती इलाकों में सामन्ती पिछड़ेपन को रोक रखने और औद्योगीकरण का (गाधी के शब्दों में "मशीनवाद" का) विरोध करने में है। इस कार्यक्रम का अमल में पूरा होना गाँधी इस तरह देखते हैं: (अ) देहातों के घरेलू दस्तकारी उद्योग का विकास करना, (ब) चरखे के इस्तेमाल को फैलाना, (स) खादी का प्रचार करना।

गाँधी की आर्थिक सुधार की योजनाओं की आधार-शिला श्रम की कम उत्पादन शक्ति, आदमकाल की टेक्नीक और उत्पादन के आदमकालीन तरीके हैं—इसीलिये हिन्दुस्तान की समास्याओं के हल के रूप में आदमकालीन अर्थ-व्यवस्था का गाधीवादी प्रचार हद दर्जे में हानिकारक है। औद्योगीकरण की ओर गांधी के जो विचार हैं वे देहाती धन्धों के लिये प्रचार के साथ सीधे जुड़े हुये हैं। इस प्रश्न पर गाँधी के विचारों में कुछ रद्दोबद्दल हुआ है—"शैतानी" सभ्यता और "मशीनवाद" से पूरी तरह इन्कार करने से हटकर विशेष परिस्थितियों में उसकी जरूरत मानी गयी है।

१९०९ मे मशीनीकरण को ठुकराने से शुरुआत करके गांधी तीस बरस बाद इस नतीजे पर आते हैं कि जिस काम को पूरा करने का इरादा है उसे करने वाले आदमी जब बहुत कम हैं तो मशीनीकरण अच्छा है। जब काम के लिये जरूरत से ज़्यादा आदमी हैं, जैसा कि हिन्दुस्तान के सम्बंध में है, तो यह एक बुराई है। (रजनी पामदत्त, **आज का भारत**, हिन्दी संस्करण, बम्बई १९४८)

गाधीका सामाजिक-आर्थिक कार्यक्रम न सुलझने वाले अन्तर्विरोधों से भरा हुआ है। इस तरह गाधी हिन्दुस्तान मे सामन्ती-ज़मींदार ज़मीन-मिल्कियत बरकरार रखने की जरूरत (संभावना नहीं बल्कि जरूरत!) को मानते हैं। गांधी ऐलान करते हैं कि उनकी आर्थिक कार्रवाइयों का उद्देश्य उन हिन्दुस्तानके किसानों की जिन्दगी की भौतिक हालतोंको बेहतर बनाना है जो ज़मींदारों-साहूकारों के जुएके नीचे दबे हैं। मगर साथ ही साथ गाधी ऐलान करते हैं कि किसानोंकी सामाजिक मुसीबतोंके मुख्य श्रोत—शोषण की सामन्ती—पूँजीवादी व्यवस्थाको—छुआ भी नहीं जाना चाहिये। वह सिर्फ यह चाहते हैं कि अपने काल्पनिक सुधारों की मदद से मुसीबतोंको कम कर दें।

हिन्दुस्तानी रजवाड़ों जैसे प्रतिक्रिया और निरंकुशता के स्तम्भों को बरकार रखने की जरूरत पर गांधी जोर देते हैं। खुद अपनी विचारधारा के बुनियादी उसूलों से भटककर गांधी सामाजिक असमानता को खुले तौर पर उचित ठहराने और जातों की जरूरत मानने की स्थिति पर आ जाते हैं। गांधी के शब्दों में जातों को बरकरार रखने की जरूरत "सामाजिक कार्यशक्तिकी किफायत पर (उसके उचित वितरणपर) और अपनी इच्छाशक्तिके जरिये मनुष्य द्वारा स्वस्थ आत्म-नियंत्रण पर आधारित है।" (रोम्यॉ रोलॉकी पुस्तक "महात्मा गांधी" से उद्धरित, पृष्ठ ३४, १९२४) इस तरह गांधीकी रायमें शोषक वर्गोंकी विशेषाधिकारकी स्थिति कायम रख कर "सामाजिक कार्यशक्तिमें किफायत" होनी चाहिये; "स्वस्थ आत्म नियंत्रण" के लिये गांधी सिर्फ़ भूखे निचले वर्गोंको अपील करते हैं।

इस झूठे वैज्ञानिक शब्द-जाल के पीछे यह पकड़ लेना मुश्किल नहीं है कि सामाजिक विशेषाधिकारों को उचित ठहराया गया है, वर्ग-विरोधों की तरफ़ से आँख मूँदी गयी है और दकियानूसीपन तथा प्रतिक्रिया की प्रशंसा की गयी है।

सामाजिक असमानता की तारीफ करनेवाले और बर्बरता तथा अन्धकार को फैलानेवाले हिन्दू धर्म के अंध-विश्वास और व्यवस्थाओंको आसमान पर चढ़ाकर गांधी हिन्दुस्तानी जनता की आध्यात्मिक-गुलामीके रक्षकके रूपमें सामने आते हैं। वह "इस दुनिया में मौजूद सबसे घृणित चीजोंमें से एक—स्पष्ट रूपमें धर्म" (लेनिन) का प्रचार करके जनताकी चेतनाको बड़ा नुकसान पहुँचाते हैं।

इस तरह गांधी का सामाजिक-आर्थिक कार्यक्रम दकियानूसीपन और प्रतिक्रिया का कार्यक्रम है। गांधी द्वारा प्रचारित सामाजिक आदर्शों ने उसी चीज को बल पहुँचाया है जो हिन्दुस्तानी किसानकी जिन्दगी और चेतना में सबसे ज्यादा स्थिर निर्जीव और अपने में सड़ने वाली है। और यह बात ब्रिटिश साम्राज्यवाद के अनूकूल थी जो हिन्दुस्तानी जनता का शोषण करने में हिन्दुस्तानी समाज के प्रतिक्रिया-वादी सामन्ती तत्वों पर भरोसा करता है।

जैसा कि **हिंदुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टी** के ऐलानमें कहा गया है:

> "रजवाड़ों को ब्रिटिश सरकार ने पैदा किया है। उन्हें अंग्रेजों की बन्दूकों ने पिछले जमानेमें सहारा दिया है और आज भी सहारा दे रही हैं क्योंकि वे ब्रिटिश शासन के पाये हैं।" (**आज़ादी का ऐलान**, १९४६, पृष्ठ ४)

सवाल को ठोस ऐतिहासिक तरीके से रखने से अपरिचित होने की वजहसे गांधी नैतिकता और धर्म के तथाकथित "शाश्वत" उसूलों के दृष्टिकोण से निराकार तरीके से दलील करते हैं। मगर सोचने का यह तरीका पुरानी सामन्ती व्यवस्था का सैद्धान्तिक प्रतिबिम्ब है।

टॉल्सटाय के इसी तरह के इतिहास से परे दार्शनिक विचारों के वारे में लेनिनने लिखा था :

"टॉल्सटायवाद की असली ऐतिहासिक विषय-वस्तु पूर्वी व्यवस्था की, एशियाई व्यवस्था की विचारधारा है। इसीलिये योगवाद और बुराई के खिलाफ़ मुखालफ़त और निराशावाद का गंभीर स्वर तथा "सबकुछ कुछ नहीं" है, "जो कुछ भौतिक है, वह नहीं है" का विश्वास भी उसका तार्किक परिणाम होता है।" (लेनिन, **सम्पूर्ण ग्रंथावली,** भाग ९, लारेंस एण्ड विशर्ट, पृष्ठ ६८८)

गाधीका अहिंसा का सिद्धान्त रूप में लगभग टालसटाय की "बुराई के खिलाफ़ गैर-मुखालफ़त" जैसा ही है। मगर गाँधीवाद की सामाजिक विषय-वस्तु टालसटाय-वाद से एकदम उल्टी है। दूसरा, वी. आई. लेनिन के शब्दों में, रूस के पितृसत्तात्मक किसानों के खुद पैदा हुए विरोध और गुस्से को जाहिर करता है और उसके ताकतवर तथा कमजोर, दोनों पहलुओं को प्रगट करता है। मगर गांधीवाद हिन्दुस्तानी जनता के क्रान्तिकारी आन्दोलनके खिलाफ हिन्दुस्तानके प्रतिक्रियावादी पूँजीपति वर्गके वर्ग-संघर्षके एक विशेष रूपमें पैदा हुआ। कुल मिलाकर सार यह है कि गांधी दुहरे जुएके नीचे पिसनेवाली हिन्दुस्तानकी किसान जनताके "खुद पैदा हुए विरोध और गुस्से" को इस्तेमाल करते हैं। वह हिन्दुस्तानके पूँजीपति-जमींदार, ऊपरी स्तरके वर्ग-उद्देश्यों के लिये किसानों की धार्मिक विचारधारा का फ़ायदा उठाते हैं। अगर टालसटाय की किताबों में ऐसा किसान सामने आता है जो "अधिकारी चर्च, जमींदारों और जमींदार सरकार का पूरी तरह सफ़ाया करने और ज़मीन-मिल्कियत के तमाम पुराने रूपों और व्यवस्थाओं को खतम करने के लिये कोशिश कर रहा है" तो गांधी में हम ऐसी कोई भी चीज नहीं पाते जो समानता में किसानों की इन क्रान्तिकारी आकांक्षाओं के निकट भी पहुँचती हो।

अपने सामाजिक-आर्थिक कार्यक्रम के अलावा गाधीवाद "अहिंसा" का "धार्मिक-नैतिक" सिद्धान्त है जिसका अमल में तरीका है "अहिंसात्मक विरोध"। वह "वर्ग हितों के मेल" का सिद्धान्त भी है जिससे अमली नतीजा वर्ग-सहयोग के लिये आह्वान निकलता है।

धर्म और राजनीतिका मेल, जो गांधीवादकी विशेषता है, सिद्धान्तमें कोई नयी चीज नहीं है। धर्मकी ऐतिहासिक भूमिका यही है कि वह आम जनताको आध्यात्मिक रूपसे गुलाम बनानेका हथियार है और इसलिये निश्चय ही एक राजनीतिक हथियार है। गाधीवादमें धर्मने शोषक वर्गोंके हितोंको अवश्यम्भावी रूपसे साधा। हिन्दुतानके पूँजीवादी-जमींदार उच्च स्तरने गांधीवाद को इस्तेमाल किया ताकि हिन्दुस्तान की जनता को अंधेरे और गुलामी में रख सके और धृष्टता से उसका शोषण कर सके। ब्रिटिश साम्राज्यवादी पूँजीपति-वर्ग ने भी गांधीवाद के इन पहलुओं को इस्तेमाल

किया ताकि हिन्दुस्तान भर में फैले राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन को छिन्न-भिन्न कर सके और कमजोर बना दे।

गांधीके धार्मिक-नैतिक विचारों की आधार-शिला है "अहिंसा" का सिद्धान्त। "अहिंसा" के बारेमें शिक्षाएँ अनेक धर्मोंमें (ईसाई धर्म, हिन्दू धर्म, बुद्ध धर्ममें) मिलती हैं। गांधीवादमें नयी चीज यह है, कि गाधीने पहली बार इस शिक्षाको अपने अमली कामों का सैद्धान्तिक आधार बनाया।

गाधी ऐलान करते हैं कि "अहिंसा" उनकी विचार धाराका आदि और अन्त है। और वह ब्रिटिश औपनिवेशिकोंसे आजादीके एकमात्र रास्तेके रूपमें इसे हिन्दुस्तानके सामने रखते हैं (मोहनदास करमचन्द गांधी, "**महान परीक्षा**", **यंग इण्डिया,** २३ मार्च १९२२, पृष्ठ १०५३)। नैतिक उच्चताकी शक्तिसे हथियारोंकी शक्तिका विरोध करनेमें ही गाधीवादी "अहिंसा" का सार है (मोहनदास करमचन्द गांधी, **तलवारका सिद्धान्त, यंग इण्डिया,** ११ अगस्त, १९२०, पृ० २६२)। अमली सवालोंकी तरफ, गुलाम हिन्दुस्तान और उसके साम्राज्यवादी शोषक ब्रिटिश साम्राज्यवादके बीच आपसी सम्बंधों के सवालों की तरफ ध्यान देने पर गाधी तार्किक रूप से इस प्रस्ताव पर आते हैं कि ब्रिटिश बन्दूकों का विरोध हिन्दुस्तान की 'आत्मा' से किया जाय (मोहनदास करमचन्द गाधी, **हिन्द स्वराज, यंग इण्डिया,** २६ जनवरी, १९२१, पृ. ८६७)।

इस प्रकार "अहिंसा" का गाधीवादी सिद्धान्त अन्त में हथियारबन्द साम्राज्यवादी विरोधी के मुकाबले मे हिन्दुस्तानी जनता को पूरी तरह निरस्त्र कर देता है।

ब्रिटिश साम्राज्यवादियों ने जिस खूनी दमन से जन-आन्दोलन को कुचला, उसके जवाब में गाधीने हिन्दुस्तानी जनता का आह्वान किया कि वह "......एक हजार नहीं बल्कि कई हजार बेकसूर मर्दों और औरतों की हत्या होने पर भी आत्मिक सन्तुलन रखना सीखे।......हरेक फॉसी को जिन्दगी में एक साधारण चीज समझे।" (रोम्या रोलॉ ने अपनी किताब **महात्मा गांधी** में उद्धृत किया है, पृ. ४८, १९२४)।

हिन्दुस्तान के राष्ट्रीय आन्दोलन के अनुभव ने दिखा दिया है कि गाधीवादी "अहिंसा" के शिकारों की संख्या गांधी की कल्पना से भी आगे बढ़ गयी। हथियारों के बल पर आजादी हासिल करना, जैसा कि गाधी ने खुद स्वीकार किया, आसानी से और जल्दी हो सकता था, (गांधी, **तलवार का सिद्धान्त, यंग इण्डिया,** १९२२,-पृ. २६३), गांधी की फरवरी १९२२ की यह स्पष्ट स्वीकारोक्ति विशेष महत्व की है: "मैं अपनी मुक्ति को किसी भी चीज से ज़्यादा, मूल्यवान मानता हूँ। और इसलिये मै पहले एक हिन्दू हूँ और सिर्फ उसके बाद ही एक देशभक्त" (मोहनदास करमचन्द गाधी, **मेरे दुखों का अन्त नहीं, यंग इण्डिया** २३ फरवरी, १९२२, पृ. ६८१)।

हिन्दुस्तान के राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन का विकास और विशेष रूपसे जन-आन्दोलन इस बात का पक्का सबूत है कि साम्राज्यवादी जुए से हिन्दुस्तान की मुक्ति को गांधी ने हमेशा बदनाम "अहिंसा" के पालन पर प्रत्यक्ष रूप में और पूरी तरह निर्भर माना। इस तरह १९२२ में हुआ; जब जनता का क्रान्तिकारी आन्दोलन गांधीवादी कार्यनीति की सीमाओं को तोड़ने लगा तो गांधी ने आन्दोलन को बरबाद कर देना बेहतर समझा और साम्राज्यवाद के साथ समझौता किया।

ऐसी ही स्थिति १९३०–३१ में पैदा हुई जब क्रान्तिकारी आन्दोलन की नयी और और भी ज़्यादा खतरनाक तरह की वजहसे इस आन्दोलनके नेता गांधी ने एक नया विश्वासघात किया। अन्तमें, १९४२ में भी यही हुआ जब जपानी साम्राज्यवाद के हमले के सीधे खतरे के सामने शान्तवाद और जापानी हमलावर के सामने "अहिंसात्मक" विरोधका प्रचार किया और इस तरह फासिस्ट हमले के खतरे के सामने हिन्दुस्तान को खुला छोड़ दिया। ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ़ संघर्ष के उद्देश्य को हासिल करनेके लिये गांधी ने संघर्षके सिर्फ़ शान्तिपूर्ण तरीके को—ब्रिटिश मालके बायकाट से लेकर सरकारको टैक्स देनेसे इनकार करने तक ही माना। उन्होंने व्यक्तिगत या आम रूपमें "अहिंसा", "असहयोग" और "सिविल नाफ़रमानी" को अपनी कार्यनीतियों का बुनियादी रूप माना। गांधी अपने काम के तरीके को "होम्योपैथिक" कहते हैं। इस तरीकेका उद्देश्य एक बुनियादी सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तन नहीं है, बल्कि समझौते और ब्रिटिश अधिकारियों से सुविधाएँ जीतने के आधार पर सामाजिक हालतों में धीमा और धीरे-धीरे सुधार करना है।

असलमें हिन्दुस्तानी पूँजीपति वर्गके पक्षमें भी माना जाता था कि गांधीवादी "अहिंसा" के पीछे "बड़ी सामाजिक समस्याओं को हल करने और सामाजिक परिस्थितियोंको बदलनेका...कोई विचार नहीं था" (जवाहरलाल नेहरू, **मेरी कहानी**, १९३७, अं. सं., पृ० ५३७)। जब गांधी नाफ़रमानीके लिये आह्वान करते हैं तो वह माँग करते हैं कि नाफरमानी "शान्त", "नम्र" और "स्वेच्छित" हो। उत्पीड़कों के प्रति प्रेम और साम्राज्यवादी औपनिवेशिकोंके आगे नम्रता और आत्मसमर्पण—यही कुल मिलाकर वह चीज़ है जिसकी गांधीने अपनी बेहद दुखी जनतासे माँग की। ध्यान देनेकी बात है कि जनताकी क्रांतिकारी कार्रवाईका दूसरे सबसे ज़्यादा अनुभव करने वाले गांधी ने अपनी लम्बी सामाजिक-राजनीतिक जिन्दगी के दौरान मैं खुद कभी भी आम सिविल नाफरमानी के आन्दोलन के लिये आह्वान नहीं किया।

१९१९-२२ में राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन की प्रगति ने अक्तूबर-क्रान्ति द्वारा शुरू किये गये नये युग की—औपनिवेशिक क्रान्तियों के युग की—हिन्दुस्तान में शुरुआतको ज़ाहिर किया। ये बरस हिन्दुस्तानकी ज़मीन पर गांधीके राजनीतिक दर्शन, कार्यनीति और नेतृत्व की कसौटी थे।

इस दौरमें हिन्दुस्तानका सर्वहारा खुद अपने राजनीतिक नारों और संघर्ष के खुद अपने सर्वहारा तरीक़ोंके साथ एक स्वतंत्र राजनीतिक शक्ति के रूपमें सामने आने

लगा। बहुत से कम्युनिस्ट दल (१९२०-३० में) बने जो बाद में (१९३३) में एक अकेली हिन्दुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टी में संयुक्त हुए।

१९१९-२२ का क्रान्तिकारी आन्दोलन जब अपने शिखर पर था तो ब्रिटिश सरकारने एक कानून लागू किया जिसने अदालतकी साधारण कार्रवाइयों को बलायेताक रखा और बिना मुकदमा चलाये जेलमें बन्द करनेका अधिकार दिया (तथाकथित रौलट एक्ट)। इस एक्ट से विशाल जनता में गुस्सा पैदा हुआ। हिन्दुस्तानी राष्ट्रीय कांग्रेस से अधिकार पाकर और उसके नाम पर और इसलिये हिन्दुस्तानी पूँजीपति वर्ग के नाम पर काम करने वाले गांधी ने जन आन्दोलन को इस एक्ट के खिलाफ़ " अहिंसात्मक " विरोध संगठित करने के रास्ते पर बाँधने की कोशिश की। मगर जनता ने गांधीके आह्वान का जवाब ऐसी कार्रवाइयाँ करनेसे दिया जो " महात्मा " की इच्छा से कहीं आगे थीं। देश में हड़तालों, प्रदर्शनों और विद्रोहों की एक लहर उठ खड़ी हुई जिसमें हिन्दुस्तान की तमाम जनता का अभूतपूर्व एका जात, धर्म और भाषा के भेदभाव के बिना जाहिर हुआ। बेहद खूँखार दमन के जरिये इस आन्दोलन को कुचला गया। मगर जनता की क्रान्तिकारी कार्रवाइयोंसे घबराये हुये गांधीने जनताके हितोंको त्याग दिया और " अव्यवस्था फैलाने वाले अविश्वसनीय तत्वों " के साथ किसी भी तरहके सम्बंधसे इन्कार किया। आन्दोलनको ऐसी सीमाओंके भीतर बांध रखनेकी कोशिश करते हुए जो कांग्रेसी नेताओंकी पकड़में रहे, गांधीने हिन्दुस्तान में पहली बार " अहिंसात्मक असहयोग " की योजना रखी। उनके विचारों के अनुसार उसका उद्देश्य हिन्दुस्तानी जनता को आजादी देनेके लिये ब्रिटिश साम्राज्यवादियों को मजबूर करना था। शान्तिपूर्ण " कानूनी " तरीकोंके जरिये आजादी की लड़ाई की यह विशिष्ट पूंजीवादी सुधारवादी योजना थी। उसमें संघर्ष की विभिन्न मंजिलें बनायी गयीं—अंग्रेजी मालका बायकाट, धारासभाओं, शिक्षा संस्थाओं का बायकाट और आखीरमें अन्तिम निर्णायक कार्रवाई के रूपमें टैक्स देनेसे इन्कार करना।

मगर जनताका आन्दोलन बिलकुल शुरूकी मंजिलसे ही गांधीके सुधारवादी राजनीतिक कार्यक्रम की सीमाओंसे आगे बढ़ गया। आम जनता शोषकों से सुविधाओं की इन्तजारी करनेकी पक्षपाती नहीं थी। जनताकी हड़तालों, विद्रोह, जमींदारों के खिलाफ़ आन्दोलन और अन्तमें आम हड़ताल—यही जन आन्दोलनके वे रूप थे जिन्हें गांधी सुधारके रास्ते पर भटकाने की कोशिश कर रहे थे।

१९१९-२२ के राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलनका जबर्दस्त बढ़ाव हिन्दुस्तानमें अंग्रेजी शासनके लिये खतरा था। ब्रिटिश सरकारी हल्कों की स्वीकारोक्ति के अनुसार हिन्दुस्तानी " आन्दोलन ने ब्रिटिश राजके खिलाफ़ संगठित विद्रोहका निर्विवाद रूप अख्तियार कर लिया था " (वी. चिरोल, भारत, १९४६, पृ. २०७)। अनेक करोड़ किसान जनता क्रान्तिकी लहर में आयी। हिन्दुस्तान के लिये इस निर्णायक घड़ी पर

आन्दोलन के माने हुए नेता गांधी ने ब्रिटिश सरकार के साथ समझौता कर लिया और क्रान्तिकारी जन-आन्दोलन को खुद ही अपंग कर दिया (फ़रवरी १९२२)।

अपने लेख **'मेरा अपराध'** में गांधी राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलनको "वापस लेने" (ज्यादा सच्चे माने में गद्दारी करने) का कारण यह बताते हैं कि जनता ने 'अहिंसा' के सिद्धान्त के तोड़ दिया था। १९२२ की घटनाओंके दौरान में क्रान्तिकारी अनुभवने पहली बार ऐसा मसाला दिया जिसने गांधीवादी 'अहिंसा' के वर्ग-सारको बेनकाब कर दिया। उसने इस सवाल का साफ-साफ जवाब दे दिया कि 'अहिंसा' किसका काम बनाती है, और किसके हितोंकी रक्षा करती है। यह पता चला कि 'अहिंसा' उसके हिन्दुस्तानी प्रतिपादक की नजरोंमें हमेशा अपने मे ही उद्देश्य नहीं थी और कुछ मौकों पर गांधीकी 'अहिंसा' की अपील का ज़्यादा असली और ठोस उद्देश्य सामने आया।

जमींदारों के जमीनका लगान देनेसे किसानों को इन्कार करनेको गाधी "आम हिंसा" कहकर गर्हित बताते हैं (देखिये, हिन्दुस्तानी राष्ट्रीय कांग्रेसका **बारदोली प्रस्ताव, मार्च, १९२२**)। यह सिर्फ वर्ग-हितका तर्क ही था जिसकी वजहसे विरोधके ऐसे शान्तिपूर्ण तरीकेमें गांधीने "हिंसात्मक" कार्रवाई देखी। मगर फिर भी, शान्तिपूर्ण होते हुए भी विरोधका यह स्वरूप वर्ग-संघर्षका जाहिरा रूप भी था। इस तरह 'अहिंसा' के लिये सिद्धान्तकी खोखली गांधीवादी नीतिका पर्दाफाश हुआ और उसका दुहरा वर्ग-सार खुले रूपमें सामने आगया। गाधीकी अहिंसा का मतलब मजदूरों के वर्ग संघर्षकी—उसके तमाम रूपोंकी निन्दा था। उसका मतलब आम हिन्दुस्तानी सर्वहारा और हिन्दुस्तानी किसानोंकी क्रान्तिकारी कार्रवाइयोंकी निन्दा था। इस तरह गांधी-वादी 'अहिंसा' शोषक-वर्गोंके हितोंकी संरक्षक के रूपमें खुले आम खड़ी होती है और उनके हाथोंमें जनताके क्रान्तिकारी आन्दोलनके खिलाफ वह एक हथियारकी भूमिका पूर्ण करती है।

गांधीवादी 'अहिंसा' के अमलका हर अनुभव इस बातको साबित करता है कि हिन्दुस्तान के तमाम शोषक वर्गोंके साथ-साथ गांधी ब्रिटिश साम्राज्यवाद की—हिन्दुस्तानी जनताके सबसे कट्टर दुश्मन की—बनिस्बत खुद हिन्दुस्तानी जनतासे ज़्यादा डरते हैं। "किसी भी परिस्थितिमें जनता द्वारा हिंसा नहीं"—यही गाधी का बुनियादी नारा है। गांधीवाद का वर्ग-सार यहाँ बिल्कुल साफ-साफ और निश्चत रूपसे जाहिर हो जाता है।

इस सम्बंधमें गांधीका नीचे दिया बयान विशेष महत्व का है:

"अगर हम यह नहीं चाहते कि बुराई के खिलाफ हमारी गैर-मुख़ालफ़त का नतीजा हिंसा हो तो हमें जल्दी से जल्दी पीछे हटना चाहिये। ...दुश्मन हमें

कायर कहता है तो कहे, मगर एक बुरा नाम खुद अपने ईश्वर के प्रति गद्दारी से बेहतर है।" (रोम्याँ रोलॉ द्वारा उद्धृत, **महात्मा गांधी**, १९२४, पृ. ११०)

ब्रिटिश साम्राज्यवादियों ने, जिनके हिन्दुस्तान में शासन को राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन के हर बढ़ाव से खतरा बढ़ता जाता था, गांधीवाद को साम्राज्यवादी औपनिवेशिकों के एकमात्र निर्मम शत्रु के पक्षमें—यानी हिन्दुस्तानी जनताके आम-स्वाधीनता आन्दोलन के पक्षमें—अपना मददगार माना। और गांधीवाद ब्रिटिश साम्राज्यवादका सबसे ज़्यादा वफ़ादार मददगार बन गया—चाहे गांधीने यह चाहा हो या नहीं। वह साम्राज्यवादके और उस जन-आन्दोलन के बीचमें खड़ा हुआ जो अवश्यम्भावी रूपसे पहलेका खात्मा करेगा। जिससे हिन्दुस्तान में ब्रिटिश शासनका तख्ता उलटना आसान होता, उसे गाधीने हिन्दुस्तानके लिये घातक बताया। इस तरह वह इस हद तक चले जाते हैं कि कहते हैं: "भयंकर उकसावे के जवाब तक में" भीड़ की हिंसा मंजूर नहीं की जा सकती (सी. एफ. ऐण्ड्रूज द्वारा उद्धृत, **महात्मा गांधी के विचार**, १९२९, पृ. २८९)।

और फिर, जब जनता का आन्दोलन अहिंसा की उन सीमाओं को पार करने लगता है जो गाधी ने दूरदर्शिताके साथ उसके लिये निर्धारित की थी, ठीक उसी समय वह आन्दोलन के साथ ग़द्दारी करते हैं और ब्रिटिश सरकारके सीधे मददगार बन जाते हैं। इस तरह गाधीवाद न सिर्फ हिन्दुस्तानी जमींदारों और पूँजीपति-वर्ग का वर्ग-हथियार बन जाता है बल्कि वास्तविक रूप में वह ब्रिटिश साम्राज्यवादियों का हथियार भी बन जाता है। और यह बात पूरी तरह तर्कपूर्ण है, क्योंकि हिन्दुस्तानी जनता के सामने शोषकों के दो दल हैं—"खुद अपने" राष्ट्रीय शोषक और विदेशी साम्राज्यवादी। जनता के क्रान्तिकारी आन्दोलन के विकास का नतीजा कुछ समय बाद यह होता है कि पहले और दूसरे दोनों अपने को क्रान्ति के दुश्मनों के एक ही पक्ष में पाते हैं। देशी शोषकों का हथियार होने की वजहसे गाधीवाद के लिये यह लाजिमी है कि वह ब्रिटिश औपनिवेशिकों का हथियार भी बने। अहिंसाका गाधीवादी सिद्धान्त जनता के बढ़ते स्वाधीनता आन्दोलन के सामने शोषक-वर्गोंके डर का प्रकट रूप था। बादमें (१९३० में) गाधीने दो मोर्चों पर लड़ने की ज़रूरतको खुले आम माना—बाहर के दुश्मन ब्रिटिश साम्राज्यवादके खिलाफ, और भीतर के दुश्मन, हिन्दुस्तानी जनताके क्रान्तिकारी आन्दोलन के खिलाफ।

हिन्दुस्तान के वायसराय को अपने पत्रमें गाधीने लिखा: "मेरा उद्देश्य ब्रिटिश साम्राज्य की सगठित हिंसात्मक शक्तिके खिलाफ और.....हिंसा की बढ़ती पार्टीके भी खिलाफ उस शक्ति (अहिंसा) को कार्यशील करना है" (मोहनदास करमचन्द गाधी, **वायसरायको पत्र**, २ मार्च, १९३०)।

दो मोर्चें पर लड़ाई के गांधीके नारेने इस बात को प्रतिबिम्बित किया कि हिन्दुस्तान का राष्ट्रीय आन्दोलन दो मेल न खानेवाले पक्षोंमें—क्रान्तिकारी और समझौतावादी पक्षोंमें बँट गया है। और उसने बताया कि राष्ट्रीय पूँजीपति-वर्ग और गाधीराष्ट्रीयवादी स्वाधीनता आन्दोलन के विरुद्ध संघर्ष चलानेवाले पक्ष में चले गये हैं।

हिन्दुस्तानी जनता की क्रान्तिकारी लडाई के खिलाफ हथियार के रूप मे "अहिंसा" के गाधीवादी सिद्धान्त का और वर्ग शान्ति की समझौतावादी कार्यनीति के रूप में "अहिंसक विरोध" की गाधीवादी कार्यनीति का वर्ग-महत्व और उसकी प्रतिक्रियावादी भूमिका वास्तविक रूप में यही है।

शोषितों और शोषकों के हितोंमें मेल के जिस सिद्धान्तका गांधीने प्रचार किया उसमे गाधीवादका वर्ग-सार ख़ास तौरसे साफ-साफ बेनकाब हो जाता है। यह सिद्धान्त गाधीवाद का मुख्यतत्व है। उसीसे गांधीकी राजनीति और कार्यनीतिका सुधारवादी रूप और समझौता करने तथा वर्ग-सहयोग करने की उनकी लगातार प्रवृत्ति स्वाभाविक रूपसे पैदा होती है। विभिन्न सामाजिक दलोंके प्रति खुद गाधीका रुख यहाँ और भी साफ तरीके से सामने आता है। इसलिये गाधीवाद का यह पहलू वह कुंजी है जो उसके दूसरे हिस्सों के—अहिंसा के धार्मिक नैतिक सिद्धान्त, 'अहिंसात्मक विरोध' की कार्यनीति, सामाजिक-आर्थिक कार्यक्रम के सामाजिक महत्व को खोलती है। हिन्दुस्तानी किसानों और जमींदारों तथा ताल्लुकेदारों (हिन्दुस्तानी जमींदारों) के बीच सम्बंधों के सिलसिले में गाधी दूसरे पक्ष को विश्वास दिलाते हैं कि "उनके कानूनी अधिकारों पर हमला करने का काग्रेस आन्दोलन का जरा भी इरादा नहीं है।" (**बारदोली प्रस्ताव**, २ मार्च, १९२२)

गाधी ऐलान करते हैं कि किसान और जमींदार के बीच झगड़ा सुलझाने का एकमात्र जरिया पंच फैसला है। वर्ग-संघर्ष को साफ-साफ और पूरी तरह पाप ठहराया गया है। हिन्दुस्तानी किसानों के रक्षक के रूपमें सामने आनेका दिखावा करने के साथ-साथ गाधी कोशिश करते हैं कि हिन्दुस्तान के देहातों की सामाजिक जिन्दगी की बुनियादी बात—किसानों और जमीदारों के ऊपरी स्तर के बीच के दुश्मनी के विरोध को—बराबर कर दें।

इस बात पर भी विरोध और असंगति साफ-साफ जाहिर होते हैं। गांधी, एक तरफ़ आदर्श बनायी गयी "साधारण, देहाती जिन्दगी" में "सच्चा जनवाद" देखते हैं। और दूसरी तरफ इस टाल्सटायी ढंगसे नैतिकता के प्रचार के बावजूद गांधी न सिर्फ जमींदारी व्यवस्था को बरकरार रखने की जरूरत को मानते हैं, बल्कि यह भी मानते हैं कि यह व्यवस्था—किसानों के लिये इतनी घातक व्यवस्था—हिन्दुस्तान की आर्थिक व्यवस्था के हितके दृष्टिकोण से "वाछनीय" है। सूदखोरों को, जो हिन्दुस्तानी किसानोंके सबसे बड़े दुश्मन हैं और करोड़ों किसानोंको कर्ज-गुलामी के जालमें फाँसे रखते है उन्हें गांधी "अभागी जनता के ट्रस्टी" करार देते हैं (देखिये, जवाहरलाल नेहरू, **मेरी कहानी**, अ.स., १९३७, पृष्ठ ५१७)। मजदूर और

पूँजीपति के बीच सम्बंध के बारे में गांधी मजदूर से कहते हैं कि वह पूँजीपतियों की अच्छी प्रवृत्ति को अपील करे और संघर्ष को इन्सानी अधिकार नहीं बल्कि "मालिकों के दिल" "जीतने के उद्देश्य से चलाये" (मोहनदास करमचन्द गाधी, **दक्षिणी अफ्रीका में सत्याग्रह**, १९२८, पृ. ४)।

अपने लेख '**तनख्वा और मूल्य**' में गांधीने मजदूरों और पूँजीपतियों के बीच सम्बंध के सवालपर अपनेको बिलकुल निश्चित तौर पर जाहिर किया है। "मै जानता हूँ कि हड़ताल करनेका हक मजदूरका न छीना जा सकनेवाला हक है ताकि वह इन्साफ़ हासिल कर सके। मगर पूँजीपति ज्यों ही बीच-बचावके सिद्धान्तको मान लेता है त्यों ही इसे एक अपराध मानना चाहिये।......जब फैक्टरी मजदूर अपनेको, अपने हितोंको, फैक्टरी मालिकों के हितों के साथ एक रूप करना सीख जाता है और अपने को ऊँचा उठाता है तो वे और उनके साथ-साथ हमारे देश का उद्योग भी फूलता-फलता है" (मोहनदास करमचन्द गाधी, **तनख्वा और मूल्य, यंग इण्डिया**, ६ अक्तूबर, १९२०, पृ. ७३२)।

यहाँ हम देखते हैं कि यह पूँजीपति वर्ग और सर्वहारा के हितों के बीच और जमींदारों तथा किसानों के हितों के बीच 'मेल' ('एकरूपता' तक) की विशेष पूँजीवादी शिक्षा है।

इस शिक्षा को अमल में कोशिश करने और लागू करने के लिये गांधी ने अहमदाबाद (गुजरात) मे एक अलगवादी मजदूर सघ कायम किया। यह सगठन मालिकों द्वारा खड़ा किया गया था और आज भी उनके साथ घनिष्ठ रूप से सम्बंधित है। पटेलवादी भारतीय राष्ट्रीय मजदूर कांग्रेस का यह बीज-रूप था। जैसा कि रजनी पाम दत्त ने अपनी किताब में बताया है, अहमदाबाद का संघ असली अमल में मजदूर आदोलन में पूँजीपति वर्ग के एजेन्टों का सगठन होने के नाते हिन्दुस्तानी मजदूर आन्दोलन से हमेशा अलहदा रहा है। गॉधीवाद और मजदूर आन्दोलन का घृणित जोड़ यही है।

जब "पूँजीवादी व्यवस्थाकी मुख्य बात शोषकों और शोषितों के बीच बेहद तेज वर्ग-संघर्ष है" (**सोवियत संघ का कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) का इतिहास**) तब गाधी जोर देकर कहते हैं कि पूँजीवाद [illegible] हालतों में वर्ग-शान्ति और वर्गोंका सहयोग जरूरी और संभव, दोनों है। सचमुच, गाधीका "वर्गोंका सहयोग" "घुड़-सवार और घोड़ेका सहयोग है।" [illegible] शिक्षा की तरह—जिसकी व्लादिमिर इलिच लेनिनने इतनी निर्दयतापूर्वक खिल्ली उडायी है—गाधी वर्ग संघर्ष की जगह शोषकों और शोषितों दोनों की न[illegible] आत्मशुद्धि रखते हैं।

वैज्ञानिक समाजवाद के विचारों के खिलाफ गांधी अपने समाजवाद का—सभी वर्गोंके लिये, शोषकों के लिये और शोषितों के लिये समाजवाद का—प्रचार करते हैं। १९३४ में उन्होंने लिखा "......हमारा समाजवाद या कम्युनिज़म अहिंसा और मज़दूर तथा पूँजीपति, ज़मींदार तथा किसानके बीच प्रेमपूर्ण सहयोग पर आधारित होना चाहिये" (जवाहर लाल नेहरू द्वारा उद्धृत, **मेरी कहानी**, १९३७, पृ. ५३५)। और ६ बरस बाद गांधीने अपने अख़बार **हरिजन**में खुले आम ऐलान किया "...मैं उम्मीद करता हूँ कि मेरे बारे में यह ख्याल नहीं किया जाता कि मैं जानबूझकर ऐसी लडाई लडूँगा जिसका अंत अराजकता और लाल बरबादी हो" (**हरिजन**, अप्रैल, १९४०)। "लाल बरबादी" के डर ने हिन्दुस्तानी शोषकों, ब्रिटिश साम्राज्यवादियों और गांधी की तरह के राष्ट्रीय सुधारवादियों को एक ही खेमे में ला खड़ा किया।

संभव क्रान्ति होने की हालतमें गाधी ने अपनी स्थिति की परिभाषा इस प्रकार दी: "बिना न्यायपूर्ण (!) कारण के धनवान वर्गों से उनकी निजी संपत्ति छीनने में मैं शामिल नहीं होऊँगा। ...आप इस बारे में निश्चित हो सकते हैं कि मै अपने असर का पूरा वजन वर्ग-युद्ध रोकने में लगा दूँगा।...मान लीजिये कि आपसे आपकी सम्पत्ति अन्यायपूर्वक छीनने की कोशिश की जाती है तो आप देखेंगे कि मैं आपकी तरफ लड़ रहा हूँ......" (मोहनदास करमचन्द गांधी, **संयुक्त प्रान्त के जमींदारों के प्रतिनिधि मण्डल से मुलाकात**, पृ. ६२)

इस तरह इस बारे में कोई संदेह नहीं रह जाता कि गांधी के सिद्धान्त शोषण करने वाले ऊपरी-स्तर के हितों की पहरेदारी करते हैं। मज़दूर वर्ग के ख़िलाफ़ संघर्षमें वे सामन्ती स्तर और पूँजीपति वर्ग दोनों के हित साधते हैं।

पामदत्त नीचे लिखी बात बताते हैं जो गांधीवादके जन-विरोधी सारका साफ़-साफ़ भण्डाफोड़ करती है। यह घटना, जैसा कि पामदत्त ने बताया है, पूँजीवादी अखबारों द्वारा (कांग्रेसी अखबारों समेत) पूरी तरह दबा दी गयी थी। यह उस घटना के बारेमें है जो १९३० मे पेशावर में हुई। जब जन-आन्दोलन बहुत व्यापक हो गया तो आन्दोलन को कुचलने के लिये भेजी गयी हिन्दू फौजोंने (१८ वीं रायल गढ़वाली राइफल्स की दूसरी बटालियन की दो टुकड़ियों ने) मुस्लिम भीड़पर गोली चलानेसे इन्कार कर दिया। आपसमें भाईचारा शुरू हो गया और बहुतसे फ़ौजियोंने अपने हथियार पेशावर की जनताके हवाले कर दिये। आन्दोलनके बादके विकास के लिये इस घटना का बहुत भारी महत्व था। फ़ौजों को पेशावर से फ़ौरन वापस बुला लिया गया और दस दिन तक (२५ अप्रैलसे ४ मई तक) शहर जनता के हाथमें था। बादमें सात गढ़वाली फौजियों को कोर्ट-मार्शल द्वारा कड़ी सज़ाएँ दी गयीं।

धर्म और वर्गों के बीच " मेल " के इस जाहिर रूप की तरफ गाधी का रुख क्या था ?

जहाँ तक इस " अहिंसा " और " वर्गों के सहयोग " ने न सिर्फ हिन्दुस्तान में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के लिये, बल्कि, राष्ट्रीय शोषक शासक वर्गों की मौजूदगी के लिये भी सच्चा खतरा पैदा कर दिया था वहाँ गाधी ने एकदम स्पष्ट शब्दों में गढ़वालियों की निन्दा की। " एक सिपाही जो गोली चलाने का हुक्म मानने से इन्कार करता है अपनी शपथको तोड़ता है और अपनेको भयंकर अनुशासनहीनताका अपराधी बना देता है " (देखिये रजनी पामदत्त, **आजका भारत**, बम्बई, १९४७ पृष्ट ३३३)। बहुत समय बाद (१९४६ में) गाधी ने अन्तमें १९३० में अपने गुस्से के असली कारण का साफ-साफ इजहार कर दिया। अब वह उसे " शपथ " और " अनुशासनहीनता " के शब्दों के पीछे नहीं छिपाते, बल्कि खुलेआम ऐलान करते हैं कि यह मजदूरों और किसानों का एका था, हिन्दुओं और मुसलमानों का एका था " जिसका मतलब हिन्दुस्तान को बरबादी में झोंक देना होता। " अपने को " सच्चा जनवादी " कहते हुए गाधी ने आगे कहा, " यह स्वप्न-पूर्ति देखने के लिये मैं १२५ बरस तक जिन्दा रहना नहीं चाहूँगा। मैं लपटों में भस्म हो जाना बेहतर समझूँगा " (**वही**, पृष्ठ ५१८)। गाधी की यह सफाई उनके तमाम " दार्शनिक " सिद्धान्तों और अहिंसा के शब्द-जाल से ज़्यादा साफ है।

वर्ग हितों के " मेल " का गाँधी का प्रचार और उसके साथ कामके " अहिंसक " तरीके, जिन्होंने असल में जनता द्वारा लड़े जानेवाले-वर्ग संघर्ष को बलाये ताक रखा, गाधीवाद और हिन्दुस्तानी मजदूर वर्गके बीच मेल न खानेवाले विरोध के कारण थे। सिर्फ सर्वहारा, एकमात्र जो सुसंगत रूपसे क्रान्तिकारी वर्ग है वही पूँजीपति वर्ग और उसके राष्ट्रीय सुधारवादी बगलबच्चोंकी कब्र खोदनेवाले की भूमिका पूरी कर सकता है। यह बिना कारण ही नहीं है कि दत्त हिन्दुस्तानी मजदूर-वर्गको ऐसी एकमात्र शक्ति बताते हैं जो गाधीके खिलाफ लड़ती है।

गांधीवाद और हिन्दुस्तानी सर्वहारा के बीच का विरोध सर्वहारा की वर्ग-जागृति में बढ़ती और उनके संगठन के परिणाम स्वरूप हर हड़ताल, आन्दोलन में हर नयी मंजिल के साथ बढ़ता है।

२० वी सदी के तीसरे दशक में अक्तूबर क्रान्ति के महान क्रान्तिकारी असर की वजहसे हिन्दुस्तानका मजदूर-वर्ग अपनी स्वतंत्र माँगें लेकर पहली बार आगे आया। उसने संघर्ष के अपने क्रान्तिकारी सर्वहारा तरीकों से गाधीवादी " अहिंसात्मक " तरीकोंका विरोध किया। ठीक इसी मौके पर गाधीवाद का संकट तेजी से गहरा होता है और जन-आन्दोलनके गाधीवादी नेतृत्वका प्रतिक्रियावादी स्वरूप और नपुंसकता बढ़ती है।

दूसरे-विश्व युद्ध के दौरानमें और उसके बाद गाधीवाद और हिन्दुस्तानी सर्वहारा जिसने राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन का नायकत्व सम्हालना शुरू कर दिया था,

के विरोध की वजह से हिन्दुस्तान की किसान जनता के गाधीवाद से राजनीतिक और सैद्धान्तिक दृष्टि से धीरे-धीरे मुंह मोड़ने में तेजी आयी है।

हिन्दुस्तान के करोड़ों किसान जो राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन की भारी शक्ति हैं, शुरू में गाधीवाद के मुख्य सामाजिक आधार थे।

गांधीवाद के हिन्दुस्तान मे सामने आने के पहले दौर मे उसके भारी असर का कारण हिन्दुस्तानी किसानों की सामाजिक-अर्थिक परिस्थितियोंमें, उनकी वर्ग-चेतनाके निचले स्तर में और उन अविश्वसनीय अन्धकार की हालतोंमें ढूंढ़ना चाहिये जिनमें बिना अधिकारों और अन्धविश्वासों तथा धार्मिक पक्षपातों के शिकंजे में जिसे देशी और साम्राज्यवादी दुहरा और निर्बाध शोषण बढ़ाता है, रहते हैं। इन हालतोंमें गाधी के काल्पनिक सिद्धान्तोंका जिन्होंने बीते जमाने की ओर मुँह किया, जिन्होंने जिन्दगी के पितृसत्तात्मक तरीकेका गुणगान किया और हिन्दू धर्म के उसूलों और पुरानी परम्पराओं को पवित्र ठहराया, किसान जनता ने आसानी से स्वागत किया।

मगर किसान-आन्दोलनके नेताके रूप में गाधी के पहले अवतरण (चम्पारण सत्याग्रह) ने ही दिखा दिया कि राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन का किसानों पर आधारित गाधीवादी नेतृत्व सुसंगत नहीं हो सकता और असल में हमेशा पूँजीवादी-सुधारवादी रहता है। उसने दिखाया कि गांधीवाद और हिन्दुस्तानी किसानों के हितोंके बीच भी एक मेल न खानेवाला अन्तर्विरोध मौजूद है जो विरोधी उद्देश्यों और सघर्ष के तरीकोंसे पैदा होता है।

राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलनका ऐतिहासिक उद्देश्य ब्रिटिश साम्राज्यवादी जुएको उतार फेंकना है और फिर किसान क्रान्तिकी तरफ आगे बढ़ना है (क्योंकि किसानों का सवाल खेतिहर हिन्दुस्तान का बुनियादी सवाल है)।

गाधीने कभी भी ब्रिटिश शासन का तख्ता उलटने के कामको सामने नहीं रखा। उनका उद्देश्य ब्रिटिश औपनिवेशिकों पर नैतिक रूपसे असर डालने तक सीमित था ताकि हिन्दुस्तानको स्वराज बख्शनेकी जरूरत के लिये उन्हे "मनाया जाए"। जहाँ तक किसान-क्रान्तिका सवाल है, गांधी उसके बेहद कट्टर विरोधी थे— उसी तरह जैसे कि वह आम क्रान्तिके विरोधी थे।

मगर, जैसा कि कॉमरेड स्तालिनने बताया है, राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलनका किसान क्रान्ति के साथ न जुड़ा होना असंभव है, क्योंकि साम्राज्यवाद के संकट के युग में "किसान राष्ट्रीय आन्दोलन की खास फ़ौज हैं" (स्तालिन, **सम्पूर्ण ग्रंथावली**, भाग ७, पृ. ७१, रूसी संस्करण)। स्तालिन इस बातपर भी जोर देते हैं कि "जातीय और औपनिवेशिक सवाल को पूँजी के जुए से मुक्ति के सवाल से अलग नहीं किया जा सकता।"

घटनाओं के तर्क की वजह से गाधी यह महत्वपूर्ण और एकदम सही बात मंजूर करने पर मजबूर हुए कि "कांग्रेसने जीतके लिये कभी कोई जंग नहीं छेड़ी" (मोहनदास करमचंद गाधी, **भाषण और लेख**, पृ. ७७८)। अगर हम हिन्दुस्तानके

राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलनके उद्देश्यों और कामोंको ध्यानमें रखे तो अहिंसात्मक आन्दोलनका अनुभव हमें यही बताता है। यह बिना कारण नहीं है कि पामदत्त गांधी को "लगातार मातोंका सेनापति" कहते हैं।

क्रांतिकारी आन्दोलन की पाठशाला में शिक्षित हो कर किसान जनता राजनीतिक दृष्टिसे परिपक्व हो रही है और अपनी वर्ग-चेतना तथा संगठनको बढा रही है।

हिन्दुस्तानी पूँजीपति वर्ग द्वारा हिन्दुस्तानकी आजादी के ध्येय के साथ अन्तिम रूप से गद्दारी और इस पूँजीपति-वर्ग के साम्राज्यवादके पक्ष में चले जाने—विशेष रूप से दूसरे विश्व युद्ध के बाद—की वजह से हिन्दुस्तानी किसानों की वर्ग-जागृति में तेजी से बढ़ती हुई। हिन्दुस्तानका मजदूर वर्ग जो राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलनका अगुआ है, किसान जनता को अपने झण्डेके नीचे ज्यादा से ज्यादा खींच रहा है।

* * *

वर्ग समाज की हालतों में एक निश्चित विचारधाराके रूप में गांधीवाद का महत्व इस बात में है कि वह अमल में हमेशा हिन्दुस्तानी समाज के पूँजीवादी सामन्ती ऊपरी स्तरके वर्ग-हितों को प्रतिबिम्बित करता है और उनकी रक्षा करता है और हिन्दुस्तानी जनताकी कमजोर बातोंको—उसके धार्मिक विश्वासों और सामाजिक उत्पीड़न को इस ऊपरी स्तरके हितमें इस्तेमाल करता है। जनताके क्रान्तिकारी आन्दोलनके विकासके रास्तेमे गान्धीवाद हमेशा सबसे ताकतवर रोड़ा रहा है और आज भी है। वह हिन्दुस्तानी जनताके आन्दोलनको कुचलने में और ब्रिटिश साम्राज्यवादके हाथोंमे उसे बनाये रखने में मदद करके उसके हाथ में खेलता है। गांधी जब किसी सवाल का हल बताते हैं तो वह इस बात को मानकर चलते हैं कि मौजूदा स्थिति—शासक वर्गोंकी ताकत और विशेषाधिकार की स्थिति—बरकरार रखनी चाहिये।

अपने लेख **द्वन्द्वात्मक और ऐतिहासिक भौतिकवाद** में कॉमरेड स्तालिन ने समाजके विकास में विचारों और सिद्धान्तों का ऐतिहासिक महत्व बताया है :

> "ऐसे पुराने विचार और सिद्धान्त हैं जिनकी जिन्दगी पूरी हो चुकी है और जो समाज की मरनहाल शक्तियों के हित साधते हैं। उनका महत्व इसी बात में है कि वे समाज के विश्वास, उसकी प्रगति में बाधा डालते हैं।"

आज के हिन्दुस्तान में गांधीवाद की भूमिका ठीक यही है। राष्ट्रीय स्वाधीनता-आन्दोलन के विकास में गांधी के सिद्धान्त और कार्यनीति ने **एक रोड़ा डालने-वाली और प्रतिक्रियावादी भूमिका** अदा की है।

इस बातमें यह देखना चाहिये कि गांधीवादका ऐतिहासिक ध्येय यह रहा है कि वह हिन्दुस्तान के राष्ट्रीय स्वाधीनता और जनवादी आन्दोलनके विकासके रास्तेमें एक जबरदस्त बाधा है। इस बातमें यह देखना चाहिये कि गांधीवादका ऐतिहासिक ध्येय ब्रिटिश साम्राज्यवादके हाथका हथियार बनना रहा है।

अपनी औपनिवेशिक नीतिमें ब्रिटिश साम्राज्यवादियोंने गांधीवादको अपने सैद्धान्तिक और राजनीतिक हथियारकी तरह इस्तेमाल किया ।

उपनिवेशोंका बढ़ता हुआ साम्राज्य-विरोधी आन्दोलन साम्राज्यवादके पिछवाड़ेमे यानी हिन्दुस्तानमे ब्रिटिश शासन की मौजूदगी के लिये खतरा था। नयी ऐतिहासिक परिस्थिति में "आग और तलवार" के सिद्धान्त से उत्पन्न शोषण का पुराना खुला औपनिवेशिक तरीका नाकाफ़ी या एकदम अनुपयुक्त साबित हुआ। यह जरूरी हो गया कि देशी शोषकों के ऊपरी स्तर को खरीदा जाय और उपनिवेशों के साम्राज्य-विरोधी आन्दोलनको कमजोर और छिन्न-भिन्न किया जाय, "फूट डालने और राज करने" के पुराने सिद्धान्त और सामन्ती अवशेषों को बरकरार रखने और भीतरी सामाजिक प्रतिक्रियावादको मदद देनेकी पुरानी साम्राज्यवादी नीति भी उसके साथ जारी रखी जाय।

गाधीवादकी प्रतिक्रियावादी विचारधाराकी बदौलत इस कार्यक्रमको अमलमें लाने में बहुत मदद मिली। गांधीवादके हिन्दूवादी झुकावकी वजहसे राष्ट्रीय स्वाधीनताके संयुक्त आन्दोलनके धार्मिक जातके तरीके पर छिन्न-भिन्न होनेमे मदद मिली यानी वास्तवमें उसने ब्रिटिश साम्राज्यवादी नीतिका लादा जाना आसान बनाया।

अपने सामाजिक-आर्थिक कार्यक्रम में गांधी ने मध्ययुगीन भारत के अवशेषों और परम्पराओं को ऊँचा उठाया यानी उनकी नीति सामाजिक प्रगति नहीं बल्कि समाज को पीछे ले जाने की थी और इससे ब्रिटिश साम्राज्यवादियों को हिन्दुस्तान में अपना शासन मजबूत बनाने में मदद मिली।

"अहिंसा" का सामाजिक और राजनीतिक लड़ाई के बुनियादी तरीके के रूप में प्रचार करके गांधीवाद ने वर्ग-संघर्ष और राष्ट्रीय स्वाधीनता की लड़ाई को सबसे ज्यादा नुकसान पहुँचाया क्योंकि उसने जन-आन्दोलन को क्रान्तिकारी उद्देश्यों से हटाया और राष्ट्रीय-सुधारवाद की दिशामें उसका नेतृत्व किया।

गाधीवाद एक आकस्मित उत्पत्ति नहीं है। वह उस समय पैदा हुआ जब हिन्दुस्तानी जनता ने पहली बार राजनीतिक दृष्टि से जागना शुरू किया था, जब सर्वहारा और किसानों की वर्ग-जागृति और एक वर्ग के रूप में उनका संगठन एक बहुत ऊँचे स्तर पर नहीं पहुँचा था। उत्पीड़न, पिछड़ेपन, हिन्दुस्तानी जनता की वर्ग-जागृतिका नीचा स्तर और साथ-साथ धर्म की विशाल भूमिका गाधीवादके पनपने के लिये उपजाऊ जमीन थी और उसने आम जनता में उसके असर को मजबूत बनाया।

दूसरे विश्व युद्धने अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति मे भारी परिवर्तन किये। नयी ऐतिहासिक परिस्थितिकी विशेषता विश्व-पूँजीवाद का और विशेष रूपसे उसकी औपनिवेशिक-व्यवस्था का आम संकट है। इसके साथ ब्रिटिश साम्राज्यवाद की बाहरी और भीतरी स्थितिका कमजोर होना भी जुड़ा हुआ है। "दूसरे विश्व युद्ध ने औपनिवेशिक व्यवस्था के संकट को तेज किया जैसा कि उपनिवेशों और आधीन देशोंमें राष्ट्रीय स्वाधीनता के शक्तिशाली आन्दोलनके उठान में

स्पष्ट रूप से सामने आया है। इसने पूँजीवादी व्यवस्था के पिछवाड़ेको खतरेमें डाल दिया है।" (ए ज़्दानोव, **अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति**, पृ. ११)

औपनिवेशिक साम्राज्यवादी व्यवस्थाके अत्यंत गहरे संकट की हालतों मे ब्रिटिश औपनिवेशिक शासक इस बातके लिये मजबूर हुए कि औपनिवेशिक आधिपत्यके नये रूप निकालें—ऐसे रूप जो पहले से ज़्यादा लचकदार और छिपे हुए हों।

> "उपनिवेशोंकी जनता अब पुराने तरीके से रहना नहीं चाहती, हावी देशोंके शासक वर्ग अब उपनिवेशोंपर पुराने तरीकेसे शासन नहीं कर सकते।"

दूसरा विश्वयुद्ध खतम होनेके बादसे हिन्दुस्तानका राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन विकासके एक नये और ऊँचे दौरमें दाखिल हुआ। फ़रवरी, १९४६ में हिन्दुस्तानी जहाजी बेड़ेका विद्रोह और बम्बईके मजदूरों की वीरतापूर्ण लड़ाई स्वाधीनता आन्दोलन के नये दौरकी शुरूआत साबित हुए।

इस दौरकी विशेष बात हिन्दुस्तानी सर्वहारा का काफी संगठित होना, वर्ग-जागृतिमें बढती और हिन्दुस्तानके राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलनमें सर्वहाराके नायकत्वका मजबूत होना है। एक और विशेष बात किसान-आन्दोलन में तेजी से बढती है जो (मिसाल के लिये हैदराबाद की नवाबशाही में तेलंगाना के इलाके में) किसान-क्रान्ति का रूप धारण करने की तरफ़ बढ रहा है। नये दौर की एक तीसरी विशेषता हिन्दुस्तान की रियासतों मे साम्राज्य-विरोधी और सामन्त-विरोधी आन्दोलन का नयी मंजिल पर पहुँचना है (हैदराबाद, कश्मीर और दूसरी रियासतों में)। हिन्दुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टी का असर न सिर्फ़ मजदूर वर्गमें बल्कि हिन्दुस्तान के किसानों के बीच भी बढ़ रहा है। इस बात को हिन्दुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टी की दूसरी काग्रेस ने, जो मार्च, १९४८ में हुई, दिखाया। हिन्दुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टी सच्ची आजादी और लोकशाही की लिये लडाई की हिरावल है।

जनता की क्रान्तिकारी लड़ाई में बढ़ती की वजहसे हिन्दुस्तान में सामाजिक शक्तियाँ अलग-अलग हो गयी हैं। हिन्दुस्तान में वे दो पक्षों में बँट गयी हैं। एक तरफ साम्राज्य-विरोधी पक्ष है जो समाज की क्रान्तिकारी शक्तियों को मजदूर-वर्ग की अगुआई में एकत्रित कर रही है और दूसरी तरफ साम्राज्यवाद का पक्ष है जिसमें हिन्दुस्तान का बड़ा पूँजीपति वर्ग, सामन्ती तत्व और साम्राज्यवादी पूँजीपति-वर्ग है।

समझौतावादी राष्ट्रीय पूँजीपति-वर्ग द्वारा अपने देश की राष्ट्रीय मुक्ति के ध्येय के साथ गद्दारी को कॉमरेड स्तालिन ने इस प्रकार बताया है:

> "साम्राज्यवाद से ज़्यादा क्रान्तिसे डरनेवाला, अपने देशके हितों से ज़्यादा अपनी थैलियोंके बारेमे चिन्तित पूँजीपति-वर्गका यह अंग, सबसे ज़्यादा धनी और सबसे ज़्यादा असरवाला अब खुद अपने देशके मजदूरों और किसानोंके खिलाफ साम्राज्यवाद के गुटमें शामिल हो कर क्रान्ति के निर्मम दुश्मनोंके पक्षमें पूरी तरह जा रहा है।" (**पूर्व के मेहनतकशों की**

यूनिवर्सिटी में स्तालिन का भाषण, लेनिन, स्तालिन, जुकोव, औपनिवेशिक सवाल, पी. पी. एच, बम्बई, १९४८, अं. सं, पृष्ठ १९)

सोवियत सघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) की १६ वीं काग्रेस के सामने केन्द्रीय कमिटी की राजनीतिक रिपोर्ट में कॉमरेड स्तालिन ने हिन्दुस्तान, हिन्द चीन, इण्डोनीशिया और दूसरे देशों के क्रान्तिकारी आन्दोलन मे बढ़ती के बारे मे बोलते हुए गाधी की तरह के पूँजीवादी नेताओं की यह रूपरेखा खींची :

" महानुभाव पूँजीपति इन देशों को खून में डुबोने की उम्मीद कर रहे हैं और पुलिस की संगीनों पर तथा गाधी जैसे व्यक्तियों को मदद के लिये अपील करने पर भरोसा करते हैं । इसमें कोई शक नहीं कि पुलिसकी संगीने एक बुरा सहारा हैं । अपने जीवनकालमें जारशाहीने भी पुलिसकी सगीनोंपर भरोसा करनेकी कोशिश की थी, मगर यह भरोसा किस तरहका साबित हुआ यह हरेकको मालूम है । जहाँ तक गाधीकी तरहके सहायकोंका सवाल है, जारशाहीके पास हर तरहके समझौतावादी उदारदलियोंके रूपमे उनका झुण्डका झुण्ड था । मगर उससे सिवा गड़बड़ीके और कुछ नतीजा न निकला । "

(जोसेफ स्तालिन, १६ वीं काँग्रेसके सामने रिपोर्ट)

माउन्टबैटन योजना और हिन्दुस्तानका बँटवारा ब्रिटिश साम्राज्यवाद और हिन्दुस्तानके शोषक ऊपरी स्तर के बीच समझौते का सीधा नतीजा है । हिन्दुस्तान मे बढती हुई औपनिवेशिक क्रान्ति को सामने देखकर ब्रिटिश सरकार को हिन्दुस्तानके बड़े पूँजीपति वर्ग को खरीदना पड़ा—उसने उसे इजाजत दी कि मातहत साझीदार के रूप मे वह देश का शासन चलाये । सत्ता की गद्दी पर बैठने के बाद नेहरू-पटेल सरकारने हर प्रगतिशील चीज का दमन करने और अत्यंत हिंसात्मक प्रतिक्रियावादका समर्थन करनेका रास्ता अख्तियार किया । उसने आतंक बरपा करनेकी नीति अपनायी । उसने मजदूर-वर्ग और किसान आन्दोलन पर और हिन्दुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टीके सदस्यों और ट्रेड यूनियनों पर आतंक ढानेकी नीति अख्तियार की । हिन्दुस्तानी ट्रेड यूनियन नेताओं की गिरफ्तारी का विरोध करते हुए ग्रेट ब्रिटेनकी कम्युनिस्ट पार्टी ने लिखा : " हिन्दुस्तानी राष्ट्रीय सरकार उन तमाम दमनकारी निरंकुश राजनीतिक तरीकों को बेशर्मी के साथ इस्तेमाल कर रही है जो हमेशा साम्राज्यवादी शासनके साथ जुड़े रहे हैं । " (प्रावदा, १८ अप्रैल, १९४८)

इन नयी ऐतिहासिक परिस्थितियों में हिन्दुस्तान मे ब्रिटिश शासन की एक नयी सैद्धान्तिक " प्रशंसा " जरूरी है । प्रतिक्रियावादी काल्पनिक गाधीवाद की विचार-धारा से अधिक दमन-चक्र की विचार-धारा साम्राज्यवादी प्रतिक्रियावाद की नयी जरूरतों के ज़्यादा अनुकूल है । गाधीवाद एक गहरे भीतरी संकट का शिकार है जिसके लिये ऐतिहासिक रूप से स्थिति तैयार हुई है । राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन के

विकास ने गाधीवाद का संकट गहरा बनाने में निर्णायक भूमिका अदा की है। शोषण करने वाले ऊपरी स्तर के दृष्टिकोण से गाधीवाद का ऐतिहाक ध्येय खतम हो चुका है। गाधी अब जनता के क्रान्तिकारी आन्दोलन को थाम कर नहीं रख सकते। नये दौर में हिन्दुस्तान का बड़ा पूँजीपति-वर्ग ब्रिटिश और अमरीकी पूँजी के आगे बिनाशर्त आत्मसमर्पण की नीति अख्तियार कर रहा है।

मगर हिन्दुस्तान की पिछड़ी जनता के आध्यात्मिक दमन के हथियार के रूप में गाधीवाद की भूमिका अभी खतम नहीं हुई है। हिन्दुस्तानी शोषक और ब्रिटिश औपनिवेशिक शासक अभी भी गाधीवाद को इस्तेमाल करेंगे ताकि दबी-कुचली हिन्दुस्तानी जनता की चेतना का फायदा उठा सकें। इस इस्तेमाल की एक स्पष्ट मिसाल इसमें दिखायी दी कि फरवरी, १९४६ में हिन्दुस्तानी जहाजियों की पहली सबसे ज़्यादा संगठित और क्रान्तिकारी कार्रवाई को ठीक गाधीवाद की "मदद" से ही निशस्त्र किया गया।

विचारधारा दकयानूसीपन की शक्ति हो सकती हैं। पुरानी विचारधारा के अवशेष तब भी खिंचते चले आते हैं जब इस विचारधारा को पैदा करनेवाली ज़मीन गायब हो चुकी होती है। गॉधीवाद की सामाजिक ज़मीन अभी खतम नहीं हुई है। प्रतिक्रियावादी विचारधारा के अवशेष जनता की चेतना से खुद-ब-खुद ही गायब नहीं हो जाते और उनके खिलाफ निर्मम लड़ाई चलाना जरूरी होता है। गाधीवाद के खिलाफ संघर्ष हिन्दुस्तानी सर्वहारा के वर्ग-सघर्ष का एक रूप है—एक सैद्धान्तिक वर्ग-सघर्ष है। गाधीवादी विचारधारा के असरके खिलाफ लड़ाई और भी ज़्यादा जरूरी इसलिये है कि ब्रिटिश औपनिवेशिक "पुराने पितृसत्तात्मक" गांधीवादको एक "नया" फासिस्ट-पक्षी जामा पहनाने और इस रूप-रंग के गाधीवाद को हिन्दुस्तान में मौजूदा साम्राज्यावादी प्रतिक्रियावादका झण्डा बनाने की कोशिश कर रहे हैं।

१९२४ में ही कॉमरेड स्तालिन ने बताया था कि हिन्दुस्तानमें बेहद क्रान्तिकारी सभावनाएँ मौजूद हैं, क्योंकि

> "वहॉ एक नौजवान लड़ाकू क्रान्तिकारी सर्वहारा मौजूद है जिसका राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन जैसा सहयोगी है, निस्सदेह एक बड़ा और महत्वपूर्ण सहयोगी, क्योंकि क्रान्ति के सामने विदेशी 'साम्राज्यवाद जैसा बदनाम विरोधी खड़ा है जिसकी कोई नैतिक साख नहीं है और जो हिन्दुस्तान की उत्पीड़ित और शोषित जनता की समान घृणा का पात्र है।" (जोसेफ स्तालिन, **सम्पूर्ण ग्रंथावली**, भाग ६, पृ. ९८, रूसी सस्करण)

गांधीवादी विचारधारा के असरसे हिन्दुस्तान की मेहनतकश जनता की मुक्ति हिन्दुस्तानी क्रान्ति की विजय के रास्तेपर आगे बढ़ने के लिये एक जरूरी कदम है।

(सोवियत पत्र, "**दर्शन की समस्याएँ**", नं. ३ (१९४८) से)

मजदूर-वर्ग के एके के लिये संघर्ष—कम्युनिस्ट पार्टियों का सबसे जरूरी काम

साम्राज्यवादियों द्वारा एक नयी जंग छेड़ने की योजनाओके खिलाफ और शाति, रोटी, जनवाद तथा समाजवाद के लिये दिनोदिन तेज होते हुये संघर्ष की हालतो में मजदूर-वर्ग की एकता के बारे मे इन्फॉर्मेशन व्यूरे का फैसला कम्युनिस्ट और मजदूर (वर्कर्स) पार्टियो के लिये बहुत भारी महत्व का है। इन्फॉर्मेशन ब्यूरो ने साफ-साफ और बिना लाग-लपेट के मेहनत करने वाली जनता को बताया है कि,

> "अग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादी जिस नये युद्ध की तैयारी कर रहे हैं, मजदूर-वर्ग और तमाम आम जनता के जनवादी अधिकारो और आर्थिक हितो के खिलाफ पूँजीवादी प्रतिक्रियावाद जो आन्दोलन चला रहा है—उनका तकाजा है कि शाति की हिफाजत और उसे दृढ बनाने के लिये तथा जंगखोरो और प्रतिगामी साम्राज्यवादियो के हमलों के खिलाफ दृढ मुकाबले के संगठन के लिये मजदूर-वर्ग के सघर्ष को दृढ़ बनाया जाय।
>
> "मजदूर-वर्ग की कतार में एकता ही इस सघर्ष की सफलता की गारंटी है।"

फासिज़्मके खिलाफ युद्धके दिनोमें कम्युनिस्ट, सोशलिस्ट, कैथोलिक और गैर-पार्टी लोग कन्धेसे कन्धा मिलाकर आम दुश्मनके खिलाफ एक साथ लड़े थे। और लडाई खतम होनेके बाद के कालमे मेहनत करनेवाली जनताकी सफलताओको पुख्ता करने और उनका विस्तार करनेके संघर्षमें भी मजदूरोके बीच एके की भावनाने गहरी जड़ें जमा ली हैं। कम्युनिस्ट पार्टियोने अपनी पूरी कोशिश मजदूर-वर्गमे फूटसे लगे घावों को पूरनेमे लगा दी।

कई देशो में कम्युनिस्ट इस उद्देश्यको पूरा कर सकने मे सफल हुए। पोलैण्ड, हंगरी, रूमानिया, बल्गेरिया, चेकोस्लोवाकिया, अल्बानिया, तथा पूर्वी जर्मनी मे सयुक्त मजदूर वर्गी पार्टियाँ, संयुक्त ट्रेड यूनियनें, कोआपरेटिवें, नौजवान और स्त्री सगठन तथा दूसरे सगठन बने। जनता के जनतंत्रो में जो सफलताएँ हासिल की गयी उनमें मजदूर-वर्ग की इस एकता ने निर्णयात्मक पार्ट अदा किया।

फ्रांस और इटली में मजदूर-वर्ग मे एका स्थापित करने के संघर्ष मे गंभीर सफलताएँ हासिल की गयी। ये सफलताएँ फौरी मॅागो को हासिल करने के लिये, शान्ति के लिये और साम्राज्यवादियो की लड़ाई की तैयारियो के खिलाफ की गयी मजदूर-वर्ग की लडाकू कार्रवाईयो मे प्रकट हुई हैं।

चीनी सर्वहारा की संयुक्त ताकते अपने हिरावल के—चीनी कम्युनिस्ट पार्टीके चारो तरफ सगठित हुई, यह चीनी जनताकी विश्व-ऐतिहासिक महत्वकी विजय और चीनी जनता की क्रान्ति की सफलता की निर्णायक शर्तों में से एक शर्त थी।

मजदूर-वर्ग का अन्तरराष्ट्रीय एका बढ़ रहा है और शक्तिशाली हो रहा है।

यह बात दिखायी देती है ७ करोड़ मेहनतकश जनता को संयुक्त करने वाले विश्व मजदूर संघ, ८ करोड सदस्य संख्या वाले अन्तरराष्ट्रीय जनवादी महिला संघ, ६ करोड़ से अधिक सदस्य संख्यावाले विश्व जनवादी युवक संघ जैसे शक्तिशाली जन-संगठनों के निर्माण में और विश्व शांति सम्मेलनके वुलाये जानेमे जिसमें ६० करोड़ जनताको सगठित करनेवाली ५६१ राष्ट्रीय और १२ अन्तरराष्ट्रीय संस्थाओ के प्रतिनिधियो ने भाग लिया था। ये बातें जन आन्दोलनका विस्तार तथा जनताके सघर्षों के इतिहासमें अपूर्व पैमाने पर संयुक्त कार्रवाई के लिए मेहनतकश जनताकी उत्सुकता, दोनो बताती हैं।

अपनी कतारोमें एका कायम करने के संघर्षमें मजदूर-वर्गकी इन सफलताओ से दुश्मनमें घबराहट ही हो सकती थी। नया युद्ध छेड़नें तथा जनवाद और समाजवाद की ताकतों को कुचलनें पर आमादा साम्राज्यवादी पक्ष ने अपनी तिकड़मो में से एक खास, यानी, मजदूर-वर्गके आन्दोलनमें फूट डालनेकी तिकडमको चुना। अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादी मजदूर-वर्ग के हाथों से उसका सबसे खास हथियार—उसके एकेको—छीन लेना चाहते हैं।

साम्राज्यवादियो के हुक्म की तामील करते हुये दक्षिण-पंथी समाजवादी नेता कम्युनिस्टो के साथ मिल कर काम करने की नीति को—जिस पर चलने के लिये जनता के दवाव के कारण और लम्बी-लम्बी डीगें हॅाक सकनें के लिये लड़ाई के बाद के दिनों में वे मजबूर हुये थे—अब त्याग रहे हैं।

फ्रांस के निर्लज्ज सुधारवादी उकसावापरस्त जोहो और इटली के दक्षिण-पंथी समाजवादियो ने ट्रेड यूनियनों में फूट डालने की कोशिश कामयाब बनाने के लिये "अपनी निजी" ट्रेड यूनियनें बनाने का प्रयत्न किया। वाल स्ट्रीट और (लंदन) सिटी के जरखरीद गुलाम पीली (सुधारवादी) ट्रेड यूनियनो के नेताओने—डीकिनो और कैरेयो ने—विश्व मजदूर-संघसे अलग होकर मजदूर-वर्ग के अन्तरराष्ट्रीय एके पर जबर्दस्त वार करने का मंसूबा बॅाधा था। वाल स्ट्रीट के मातहत गद्दारो का एक ट्रेड यूनियन केन्द्र उन्होनें स्थापित किया है!

सड़ाँध की बदबू फेंकती हुई, दूसरे इण्टरनेशनल की एक नयी अभागी सन्तान का जन्म हुआ है। कामिस्को के नाम से यह सगठन, जो ब्रिटिश और अमरीकी गुप्त कार्रवाई का खुफिया केन्द्र है, मजदूर-वर्गके आन्दोलनमें तमाम फूट डालने वालो और उसे असगठित करनेवालो को गले से लगाता है। जैसा कि हाल में पेरिस में देखा गया है, समय-समय पर इस खुफिया केंद्र के "नेता गण" जीवित होने के चिन्ह प्रगट करते हैं और अपनी आवाज लोगों के कानों तक पहुँचाते हैं।

मजदूर-वर्ग मे फूट फैलानेवालों और गद्दारो की चीख-पुकार में फ़ासिस्ट टीटो-गुटकी कर्कश आवाज भी सुनाई पड़ती है। सोवियत रूस और जनताके जनवादी देशों के खिलाफ बेलगाम अंधराष्ट्रवादी प्रचार और गंदी गालियो के जरिये यह गुट यूगोस्लावी जनता के दिमाग मे जहर भरने और समाजवादी पक्ष से उसे अलग घसीट ले जाने की कोशिशें कर रहा है।

लेकिन, साम्राज्यवाद के एजेण्टोंकी—दक्षिणपंथी सोशलिस्ट नेताओ, टीटो गुट, कैथोलिक प्रतिक्रियावादी और वाल स्ट्रीट की जेब के ट्रेड यूनियन के नेताओं की—ये निकम्मी कोशिशें मजदूर-वर्ग की ताकतों के बढ़ते हुये एके के मुकाबले में कितनी भी तुच्छ क्यो न लगें, फिर भी, वे एक गंभीर खतरा हैं। मजदूर-वर्गमे फूट डालनेवालों के खिलाफ दृढ संघर्ष चलाये बिना, दक्षिणपंथी सोशलिस्टो की लम्बी-चौडी डींगों और साम्राज्यवादियो की नीच साजिशोका पर्दाफाश किये बिना मजदूर-वर्गका एका नहीं हासिल किया जा सकता।

इन्फॉर्मेशन ब्यूरोके प्रस्ताव में कहा गया है कि

> "आज की अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति में सीधे-सीधे कम्युनिस्ट पार्टीयो का यह कर्तव्य है कि वे मजदूर-वर्गको यह बतायें कि यदि मजदूर-वर्ग अपनी कतारो में एकता हासिल नही कर लेता है, तो नये विश्व-युद्धके दिनोदिन बढते खतरे के खिलाफ और मेहनकश जनताके रहन-सहन के स्तर पर प्रतिगामी साम्राज्यवादियो के हमले के खिलाफ सघर्ष मे मजदूर-वर्ग अपने सबसे महत्व-पूर्ण हथियारसे वंचित हो जायेगा।"

मजदूर-वर्ग की विजय हासिल करने के लिये शान्ति और समाजवाद की परिस्थितियाँ तैयार करने के सघर्ष मे इन्फॉर्मेशन ब्यूरो के फैसलो ने कम्युनिस्ट और वर्कर्स पार्टियोंको एक नये, शक्तिशाली हथियार से लैस कर दिया है। ये फैसले न सिर्फ उद्देश्य को साफ-साफ बताते हैं, बल्कि यह भी बताते हैं कि उसे कैसे हासिल किया जाय।

दक्षिणपंथी समाजवादियो और प्रतिक्रियावादी ट्रेड यूनियनो के नेताओं के खिलाफ सिद्धान्त और अमल में निर्मम और दृढ संघर्ष चलाने के काम के साथ-साथ सोशल डिमोक्रैटिक मजदूरो को शांति, रोटी और जनवादी अधिकारो के लिये सक्रिय संघर्ष मे घसीट कर उनके बीच लगातार समझाने-बुझाने का काम करना भी जरूरी है। फैक्टरी और दफ्तर मे फौरी माँगों के लिये लड़ाई के दौरान मे नीचे के सगठनो मे एका कायम करना, फैक्टरियो मे, पूरे के पूरे उद्योगो मे, शहर के पैमाने पर,

जिले के पैमाने पर, राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय पैमाने पर, एक साथ की जानेवाली कार्रवाइयो का सगठन करना— ये मजदूर-वर्ग मे एका हासिल करने के संघर्ष के जांचे और परखे हुये तरीके हैं।

कैथौलिक मजदूरो की तरफ़ पूरा ध्यान देना, उनके साथ मिलकर की जानेवाली कार्रवाइयोंको सगठित करना, ट्रेड यूनियन एकताके लिये लड़ाई चलाना और असंगठित मजदूरोंको ट्रेड यूनियनोंमे लाना और उन्हे सक्रिय सघर्षमें घसीटना—मजदूर-वर्गमें एका हासिल करने और उसे पुख्ता बनानेके लिये यह सब करना एक जरूरी शर्त है।

कम्युनिस्ट इन्फार्मेशन ब्यूरोके फैसलोका जनताके बीच व्यापक स्वागत हुआ और दुनियाकी सर्वहारा जनताका उन्हे शक्तिशाली समर्थन मिला। यह इस बातको बनाता है कि मजदूर-वर्गके एकेका सवाल जिसको कि इन्फार्मेशन ब्यूरोने मजदूर-वर्गके आन्दोलन का एक अहम काम बताया है, मजदूर-वर्गके जरूरी हितो और जनवाद और समाजवाद के लिये मजदूर-वर्ग की लड़ाई से एकदम मेल खाता है।

ब्रिटेन, फ्रास, चीन, अमरीका की कम्युनिस्ट पार्टियो, सोवियत सघ की कम्युनिस्ट (बोल्शेविक) पार्टी, जनता के जनतंत्रो तथा दूसरे देशो की कम्युनिस्ट पार्टियों ने इन्फॉर्मेशन ब्यूरो के फैसलो का एकमत से समर्थन किया है, क्योकि इन फैसलोमें उन्होंने साम्राज्यवादियो और उनके बगल-बच्चों की नीच हरकतो पर विजय पाने की गारंटी के लिये एक लडाकू कार्यक्रम देखा। अब कर्तव्य है निस्वार्थ रूप से रोजमर्रा के काम मे इस कार्यक्रम को लागू करना, इन्फॉर्मेशन ब्यूरो के फैसलो को अमल मे लाना और मजदूर-वर्ग के आन्दोलन को एक नये तथा ऊँचे स्तर पर उठाना।

पिछले दिनोंकी घटनाये यह बताती हैं कि मजदूर-वर्गकी एकता और जनवादी पक्षकी मजबूती दिनोंदिन ज़्यादा बढ रही है। यह बात इटली और फ्रासमे हालमे हुई २४ घंटे की हडतालो से जाहिर होती है—ऐसी हड़ताले जिन्होंने अपनी फौरी मांगो को हासिल करने के संघर्षमे मेहनत करनेवाली जनता की दृढ़ताको दिखाया है। यह बात एशिया और आस्ट्रेलेशिया की ट्रेड यूनियन कान्फ्रेंससे भी जाहिर होती है, जो पेकिंगमे हुई थी।—

तमाम श्रमजीवी जनताके नेता और शिक्षक, कॉ० स्तालिनकी ७० वी वर्षगॉठ मनानेकी तैयारियोंके सिलसिलेमे जो महान जन-प्रिय आन्दोलन दुनिया भरमे तेजीसे बढ रहा है उससे भी यही बात जाहिर होती है।-स्तालिनका नाम तमाम प्रगतिशील मानवताको सगठित करनेवाली पताका है।

कम्युनिस्ट पार्टियॉ मजदूर-वर्ग के एके के लिये लेनिन और स्तालिन के झण्डे के नीचे लड रही है। इस झंडेके नीचे मजदूर-वर्ग का अन्तरराष्ट्रीय एका मजबूत हो रहा है—ऐसा एका जो लोहे की दीवार की तरह ऊँचा खडा है और जिससे टकराकर पतनशील साम्राज्यवादी पक्ष की तमाम साजिशें चूर-चूर हो रही हैं। यह झण्डा कम्युनिज़्म के विचार की विजय का झण्डा है।

['**फ़ॉर ए लास्टिंग पीस, फ़ॉर ए पीपुल्स डेमोक्रैसी**' के १६ दिसम्बर के अंक का सम्पादकीय लेख]

नये साल में—
नयी कामयाबियों की तरफ़

१९४९ के साल से, जो खतम हो रहा है, बिदा लेते हुये तमाम देशों के लोग अपनी ताक़तों में और भी दृढ़ विश्वास के साथ पार की हुई मंजिलके परिणामों का लेखा-जोखा कर रहे हैं। शान्ति और राष्ट्रीय आजादीके लिए, जनवाद और समाजवादके लिए जंगखोरोंके खिलाफ संघर्ष मे जनवादी साम्राज्यवाद-विरोधी पक्ष ने नयी कामयाबियाँ हासिल की हैं। नये साल और बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में प्रवेश करते समय आज दुनियाकी अस्सी करोड़ जनता साम्राज्यवादकी जंजीरों से मुक्त हो चुकी है।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) के नेतृत्वमें और महान स्तालिन केबताये हुये रास्ते पर चलकर सोवियत संघकी जनताने जो महान सफलताएँ हासिल की हैं उनके लिये आगे बढ़ी हुयी और प्रगतिशील सम्पूर्ण मानवजातिके दिलमें प्रशंसा के अलावा और कुछ नहीं है। सोवियत संघकी जनता पूरे आत्म-विश्वासके साथ नयी आर्थिक और राजनीतिक कामयाबियों की तरफ़ आगे बढ़ रही है, वह कम्युनिज़्मकी तरफ आगे बढ़ रही है।

१९४९-का साल चीनी जनताकी क्रान्तिकी महान विजय का साल था। चीनी जनताने राष्ट्रके साथ गद्दारी करनेवाली कुओमिन्तांग सरकारका तख्ता उलट दिया और विश्व साम्राज्यवादको करारी मात दी। चीनमें जनताकी सरकारके कायम हो जाने से शांति, जनवाद और समाजवादके पक्षकी ताकत बेहद बढ़ गयी है।

जनता के जनतंत्रों को भी—पोलैण्ड, चेकोस्लोवाकिया, हंगरी, रूमानिया, बल्गेरिया, अल्बानिया को भी—पिछले सालके दौरान मे बड़ी-बड़ी सफलताएँ हासिल करनेका श्रेय प्राप्त है। सोवियत संघमें समाजवादी निर्माण के अनुभव से शिक्षा लेते हुए और सोवियत संघ की दैनिक निस्वार्थ मदद के आधार पर ये देश समाजवादकी दृढ नींव डाल रहे हैं।

लड़ाई के पहलेके उत्पादन का स्तर इन देशों में बहुत पीछे छूट गया है। उदाहरण के लिये हंगरी मे लड़ाईके पहलेके उत्पादन के स्तर की अपेक्षा ४० फ़ी सदी और चेकोस्लोवाकिया में २३ फी सदी बढ़ती हुई है।

१९४९ का रहन-सहन का स्तर (इन देशोंमें) लड़ाई के पहले के रहन-सहनके स्तर से बहुत ऊँचा था। पोलैण्ड में लड़ाई के पहले के मुकाबले वह २३ फी सदी

ऊँचा था। बेरोजगारी को एकदम मिटा दिया गया है। मेहनतकश किसानों के बीच सहकारी (कोआपरेटिव) आन्दोलन की जड़ें गहरी जम चुकी हैं। पूँजीवादी विचार-धाराको खतम करके नयी समाजवादी संस्कृति की स्थापना करने के संघर्षने व्यापक रूप धारण कर लिया है।

१९४९ के साल की एक और विशेषता जर्मन जनवादी प्रजातंत्र की स्थापना है जो एक संयुक्त, शान्ति-प्रेमी और जनवादी जर्मनी की स्थापना के लिये संघर्ष कर रहा है। जर्मन जनवादी प्रजातंत्र की स्थापना योरपके इतिहासमें एक नया मोड़ है।

शान्ति, जनवाद और समाजवादके झण्डे एल्बसे लेकर कान्टन तक और बल्गारिया से लेकर कोरियाके जनताके जनवादी प्रजातंत्र तक लहरा रहे हैं।

जंगखोरों की दुनिया की—साम्राज्यवादी, जनवाद-विरोधी पक्षकी तसबीर कुछ दूसरी ही है।

१९४९ में पूँजीवादका नये आर्थिक संकटके दलदलमें और भी गहरे धँसना जारी रहा। इतना ही कह देना काफ़ी है कि बदनाम "जीवनके अमरीकी ढंग" के देशमें केवल एक सालमें, यानी अक्तूबर १९४८ से अक्तूबर १९४९ तक, उत्पादन में २१ फ़ी सदी कमी हुई है। इस तरह, यह कमी, १९२९-३३ के विश्व-आर्थिक संकटके पहले साल में अमरीकामें औद्योगिक पैदावार की गतिमे जो कमी हुई थी, उससे भी ज़्यादा बढ़ गयी है।

"मार्शल-योजना" को, जिसे अमरीकाको अवश्यम्भावी संकटसे बचाने की नीयत से अमरीकी साम्राज्यवादियों द्वारा गढ़ा गया था, भारी असफलता का सामना करना पड़ रहा है। यह सच है कि ब्रिटेन, फ्रास और इटलीकी पहले से ही बिगड़ी हुई आर्थिक व्यवस्थाको, उन देशोंकी सरकारों द्वारा राष्ट्रीय हितोंके साथ गद्दारी करनेके कारण, छिन्न-भिन्न करने मे अमरीकी साम्राज्यवादी सफल हुये हैं। लेकिन, इससे अमरीकामे आर्थिक संकट के लक्षणोंके घटनेकी बात तो दूर, उल्टे वे और भी ज़्यादा बढ गये हैं।

पिछले साल अमरीका में १ करोड़ ४० लाख इन्सान पूरी-पूरी और आंशिक बेकारी के शिकार थे और समूची पूँजीवादी दुनिया में उनकी संख्या ४ करोड थी।

मुद्रा-प्रसार और मूल्य-काट के कारण असली तनखा में गिरावट की वजह से, मेहनत करने वाली जनता के रहन-सहन का स्तर दिनोंदिन गिरता जा रहा है।

१९४९ में पूँजीके हमले के खिलाफ मेहनतकश जनताका सगठित संघर्ष और भी तेज हुआ। बहुत से देशों में—और इन में अमरीका भी है, यह सघर्ष रहन-सहन का अच्छा स्तर हासिल करने और साम्राज्यवादियों की नयी जंग की साजिशोंको चकनाचूर करने के लिये लड़ते हुये मजदूर-वर्ग के जवाबी हमले का रूप धारण कर रहा है।

फ्रांस और इटलीकी बड़ी-बड़ी हड़तालें, युद्धके लिये सामान तैयार किये जाने के खिलाफ फ्रांस के मजदूरोंकी लड़ाकू कार्रवाईयाँ बता देती हैं कि दक्षिणपंथी सोशलिस्ट नेताओं और मजदूर-वर्ग में फूट डालने वालों के बावजूद पूँजीवाद के लिये बढ़ते संकट और नये साम्राज्यवादी युद्ध की तैयारियों के बोझे को मेहनतकश जनता के कंधों पर थोपने की नीति चला सकना आगे आने वाले साल मे और भी ज़्यादा कठिन होगा।

१९४९ में वियतनाम, मलाया और बर्मा की जनता ने राष्ट्रीय स्वाधीनता के अपने महान संघर्ष को जारी रखा। चीनी जनता का ऐतिहासिक संग्राम और उसकी विजय, अपनी मुक्तिके लिये लड़नेवाली उपनिवेशों और अर्द्ध-उपनिवेशों की जनता मे उत्साह भरनेवाली सदा एक महान नैतिक शक्ति रही हैं और आज भी है। ग्रीस के वीर लडाकों की पीठ मे टीटो-गुट द्वारा छुरी भोंके जाने के बावजूद ग्रीस की जनता खूनी राजवादी फासिस्ट हुकूमत के खिलाफ अपने देशकी राष्ट्रीय स्वाधीनता की लड़ाई को जारी किये हुए है।

१९४९ में साम्राज्यवादियों के एटलांटिक पैक्ट का सूत्रपात हुआ—उस पैक्ट का जो सोवियत रूस और जनता के जनतंत्रों के खिलाफ़ रचा गया है। यह मानने पर मजबूर होकर कि चीनमें उन्हे मुहँ की खानी पडी है और इस बात की बौखलाहट से कि "डालर नीति" और एटम बम की इजारेदारी का स्वाग असफल हुआ है, अमरीकी साम्राज्यवादी दुनिया पर अपना आधिपत्य कायम करने के लिये खुलेआम अब एक तीसरे विश्व-हत्याकाण्ड की तैयारियाँ कर रहे हैं। एटलाटिक पैक्ट का उद्देश्य यही है।

ऐसी हालतों में जनता का सबसे जरूरी काम युद्ध के बढ़ते हुये खतरे के खिलाफ़ लड़ना, जंगखोरों के खिलाफ और विश्व-शांति के लिये लड़ना था और आज भी है।

१९४९ में हमलावर एटलांटिक पैक्ट के खिलाफ जनता के शक्तिशाली आन्दोलनका जन्म हुआ। इसी साल पैरिस और प्रागमें विश्व शान्ति सम्मेलन हुआ और शाति के ६० करोड़ लड़ाकों का विश्व संगठन कायम हुआ।

मजदूर-वर्ग—जिसका अगला दस्ता कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियाँ हैं—शान्ति के आन्दोलन की नायक शक्ति है। इसी ताकत को विश्व-प्रतिक्रियावाद अन्तरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय पैमाने पर अपने खास हमलों का निशाना बना रहा है। टीटी, ब्लूम, ग्रीन और अपने दूसरे एजण्टों को साम्राज्यवादने जो खास काम सौंपा हैं वह यह है कि मजदूर-वर्ग और उसकी पार्टियों की ताकत को वे अन्दरसे कमजोर बनाये।

१९४९ मे साम्राज्यवादियोंकी घृणित टीटो-एजेन्सीको—जिसका रायक और कोस्तोव मुकदमोंमे पूरी तरह पर्दाफाश हो गया है—बुरी तरह मात खानी पडी। इतने

पर भी अन्तरराष्ट्रीय प्रतिक्रियावादके टीटो-एजेण्ट, दक्षिण-पंथी और सोशलिस्टों तथा प्रतिक्रियावादी ट्रेड यूनियन नेताओंके साथ मिलकर अन्तरराष्ट्रीय, मजदूर-वर्गके आन्दोलनके खिलाफ, सोवियत रूस और जनताके जनतंत्रोंके खिलाफ, अपनी नीच हरकतें जारी रखनेकी कोशिश करेंगे।

नवम्बर १९४९ के दूसरे पखवारेमें हंगरीमें हुई कम्युनिस्ट और वर्कर्स-पार्टियोंके इन्फ़ार्मेशन ब्यूरोकी कान्फ्रेंसने अपने प्रस्तावों " शांतिकी रक्षा और जंगखोरोंके खिलाफ संघर्ष", " मजदूर-वर्ग की एकता और कम्युनिस्ट तथा वर्कर्स पार्टियों के कर्तव्य " और " यूगोस्लोवाकिया की कम्युनिस्ट पार्टी, हत्यारों और गुप्तचरों के हाथ में " में मज़दूर-वर्ग, जनवाद तथा शांति के उद्देश्य के साथ गद्दारी करनेवालों तथा फूट-परस्तों के खिलाफ निर्मम संघर्ष छेड़ने की महत्व-पूर्ण ज़रूरत पर खास ज़ोर दिया है।

कम्युनिस्ट तथा वर्कर्स (मज़दूर) पार्टियाँ इस संघर्ष को आन्दोलन के चौतरफ़ा विकास के साथ जोड़ रही हैं ताकि वे मजदूर-वर्ग की तमाम टुकड़ियों, मजदूरों के तमाम संगठनों को पूँजीपतियों और जंगखोरों के खिलाफ संगठित कर सकें।

मजदूर-वर्ग की ताकतों में, शांति जनवाद तथा समाजवाद की ताकतों में बेहद बढ़ती हुई है। जनता के महान नेता और शिक्षक, लेनिन के अमर ध्येय को आगे बढ़ानेवाले, कॉमरेड जोसेफ विसारियोनोविच स्तालिन की ७० वीं वर्षगाँठ के सम्मान में हुये उत्सव, शान्ति की ताकतों में इस शक्तिशाली बढ़ती के उत्साह से भर देनेवाले स्पष्ट और विशाल प्रतीक हैं।

दुनिया के कोने-कोने में होनेवाले ये उत्सव बताते हैं कि दुनिया की मेहनत करनेवाली तमाम जनता, दुनिया के तमाम साधारण लोग कितनी अच्छी तरह जानते हैं कि स्तालीन का अर्थ है सामाजिक और राष्ट्रीय आजादी, स्तालिन का अर्थ है दुनिया भर में शान्ति, तमाम शोषण और उत्पीड़न से छुटकारा और स्तालिन का अर्थ है मानवता की सच्चाई।

१९५० में—शान्ति और आजादी के लिये और भी ज़्यादा संघर्षके सालमे, कम्युनिस्ट तथा वर्कर्स पार्टियाँ, दुनिया भरकी मेहनत करनेवाली जनता, लेनिन और स्तालिनके झण्डेके नीचे कदम रख रही हैं।

['**फॉर ए लास्टिंग पीस, फॉर ए पीपुल्स डेमोक्रैसी**' के दिसम्बर ३०, १९४९ के अंक का सम्पादकीय।]

'जनवादी' के पाठकों से अपील

प्रिय पाठक,

इस अक के साथ हम ६४ पृष्ठों का 'जनवादी' आपके हाथों में दे रहे हैं।

प्रतिदिन ज़्यादा से ज़्यादा मार्क्सवादी साहित्य 'जनवादी' के पाठकों को मिल सके, राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय महत्व के विभिन्न सवालो और घटनाओ के बारे मे मार्क्सवादी दृष्टिकोण से लिखे गये लेख ज़्यादासे ज़्यादा तादाद मे आपको मिल सकें, और भारत में जनवादी क्रान्ति की उठती लहर से पैदा हुई मार्क्सवादी साहित्य की दिनोंदिन बढती भूख को यथासंभव पूरा किया जा सके—इन्हीं कारणों से "जनवादी" का आकार बढ़ाया जा रहा है।

जिस उत्साह से अब तक आपने 'जनवादी' का स्वागत किया है और उसके प्रचार में हिस्सा लिया है, उसी उत्साह से आप 'जनवादी' के इस नये स्वरूप का भी स्वागत करेंगे, इस बात में हमें थोड़ी भी शंका नहीं है।

'जनवादी' क्रान्तिकारी आन्दोलन का मासिक पत्र है। वह क्रान्तिकारी आन्दोलन की आधार-शिला मार्क्सवाद-लेनिनवादके क्रान्तिकारी सिद्धान्तोसे वर्ग-सघर्षमे जूझने वाले लाखों लड़ाकोको लैस करने वाला मासिक पत्र है।

आज अपने देशमे मजदूर वर्गके नेतृत्वमें, मजदूर-वर्गकी पार्टी मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टीके नेतृत्वमे, जनताकी जनवादी क्रान्तिके लिये, समाजवाद और विश्व शान्तिके लिये मेहनतकशोका जो विशाल सघर्ष उठ खडा हुआ है, उसका वेग दिनोदिन तेज और व्यापक होता जा रहा है। इस संघर्षको विजयी बनाकर हिन्दुस्तानमे जनताके जनवादी राज्यकी स्थापना करने के लिये मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तका मनन करना और शक्तिशाली और अचूक हथियारके रूपमे लगातार इस्तेमाल करना बेहद महत्वपूर्ण है।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तोसे—मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिनकी सीखोसे लैस होकर ही सोवियत रूसकी महान अक्तूबर क्रान्ति विजयी हुई थी जिसने दुनियाके सभी शोषक साम्राज्यवादियोंके दिलोंमे कॅपकॅपी पैदा कर दी है।

मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिनकी सीखोसे लैस होकर ही महान चीनी जनताकी क्रान्ति विजयी हुई है जिसने अमरीकी साम्राज्यवाद और उसके टुकडखोर च्याग काई-शेकका तख्ता उलट दिया है।

दुनियाकी ८० करोड, यानी एक-तिहाईसे भी अधिक मुक्त जनताने साबित कर दिया है कि मार्क्सवाद—लेनिनवादके सिद्धान्तोंका, लेनिन और स्तालिनकी रणनीति और कार्यनीतियोंका रास्ता ही मुक्तिका एकमात्र रास्ता है। तेलंगाना और बंगालके संघर्षोंमें भी यही प्रमाणित हो रहा है।

कॉ. लेनिन ने सभी मार्क्सवादी कार्यकर्ताओं को बताया है कि "क्रान्तिकारी सिद्धान्त' के बिना क्रान्तिकारी आन्दोलन भी नहीं चल सकता"। अन्तरराष्ट्रीय मजदूर वर्ग के महान नेता और शिक्षक **का. स्तालिन** नें बताया है कि "क्रान्तिकारी सिद्धान्तका आलोक न मिलनेपर व्यवहार अंधेरेमें ही भटकता रह जाता है।" (**लेनिनवाद के मूल सिद्धान्त**, दूसरा संस्करण, पृ. १६)।

हिन्दुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टी की दूसरी कांग्रेस मे कहा गया है की जनवादी क्रान्ति को विजयी बनाने के लिये मजदूर वर्ग के लड़ाकू मजदूरो और कार्यकर्ताओं को मार्क्सवाद-लेनिनवाद की शिक्षा देने और उसे देश की क्रान्तिकारी परिस्थितियों में लागू करना सिखाने की दिशा मे जाग्रत प्रयत्न होना चाहिये (देखिए, **राजनीतिक प्रस्ताव**, पृ० ११५)। हिन्दुस्तानी क्रान्ति की—रणनीति और कार्यनीतिको बतानेवाली पुस्तक "**जनताके जनतंत्र और समाजवादके लिये संघर्ष**" में बताया गया है कि मजदूर आन्दोलन के बीच से सुधारवाद को उखाड फेंकने के लिये मार्क्सवादी-लेनिनवादी हथियारों से लैस होना चाहिये और विचार तथा संगठन, दोनो ही क्षेत्रो मे मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टी को मजदूर-वर्गीय स्वरूप देने का काम पूरा किया जाना चाहिये (देखिये, **जनताके जनतंत्र और समाजवाद के लिये संघर्ष**, पृष्ठ ४०)।

इस कामको पूरा करने के लिये "जनवादी" बहुत ही महत्वपूर्ण हथियार है।

हिन्दुस्तानमें जनवादी क्रान्तिके लिये संघर्षोंकी उठती लहरको केवल दमनके जोरसे नहीं कुचला जा सकता है, इसे शोषक-वर्गोंने देख लिया है। उन्होंने यह भी देख लिया है कि तमाम दुनियामें सोवियत यूनियनके नेतृत्वमें जनता का जनवादी और समाजवादी मोर्चा फैलता और फौलादी बनता जा रहा है। इसलिये पूँजीपति वर्ग और उसके बगलबच्चे, दक्षिण-पन्थी सोशलिस्ट जनता के क्रान्तिकारी संघर्षों में फूट डालने और उसे क्रान्तिकारी रास्ते से विचलित करके अलग रखने के लिये जनता मे विचारों की घपलेबाजी फैलाने की सरतोड कोशिशें करते हैं।

जनतान्त्रिक समाजवाद की माला जपकर, विधानवादी तरीके से समाजवाद लानेका का दावा करके हिन्दुस्तानकी सोशलिस्ट पार्टीके नेता लगातार मजदूर वर्ग और मेहनतकशों में भ्रम फैलाने की कोशिश करते हैं, उनकी लडाइयों में फूट डाल कर वे पूंजीपतियों की दलाली करते हैं। "तीसरी शक्ति" के थोथे दावेको बढ़ानेका दुस्साहस करके वे मजदूर-किसानों के सबसे पहले राज्य, सोवियत रूस को बदनाम करते हैं और जगखोर अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियों की खुलेआम मदद करते हैं। जनतांत्रिक

समाजवाद के नाम पर आज ये सोशलिस्ट नेता खुले रूप मे पूंजीपतियों के, अमरीकी और स्थानीय फासिज़्म के और औपनिवेशिक देशो मे साम्राज्यवादी आक्रमण के भड़ैत प्रचारक वन गये हैं, उनके मददगार वन गये हैं।

इन गद्दारो के असली चेहरेको जनताके सामने खोलकर रखने के, जनताको मार्क्सवाद–लेनिनवाद के क्रान्तिकारी रास्तेको दिखानेके, मार्क्सवादी सिद्धान्तोके आधार पर मजदूर–वर्गके तपे-नेतृत्वको खड़ा करनेके और लड़ाकू कार्यकर्ताओ को मार्क्सवादी शिक्षामें मदद देनेके—इन्ही एकदम जरूरी कामोको पूरा करने के लिये "जनवादी" का जन्म हुआ था।

पिछले एक वर्षमे 'जनवादी' ने पाठको और कार्यकर्ताओके हाथोंमें मार्क्सवादी साहित्यका अमूल्य और शक्तिशाली हथियार दिया है और मजदूर वर्गके दुश्मनो तथा सुधारवादियोंके प्रतिगामी-प्रचारोके खिलाफ लड़नेमें उन्हें महत्वपूर्ण मदद दी है। इसी कामको अब और अच्छी तरहसे कर सकनेके लिये "जनवादी" के पृष्ठोको वढ़ाया जा रहा है।

"जनवादी" को और भी अधिक प्रभावशाली और उपयोगी बनानेके लिये होना यह चाहिये की मार्क्सवाद-लेनिनवाद के झण्डे के नीचे काम करनेवाले सभी कार्यकर्ता, समाजवाद के सच्चे समर्थक "जनवादी" का ज़्यादा से ज़्यादा प्रचार करें; उसके ज़्यादा ग्राहक वनाये, "जनवादी" को हर कारखाने मे, हर गॉव में, हर स्कूल और हर दफ्तर मे पहुँचाये. हर गांव और शहर मे उसकी विक्री का इन्तजाम करें।

'जनवादी' की ८ आने कीमत की वजह से यदि कोई लडाकू मजदूर और किसान उसे न खरीद पाये, तो दो तीन लोग मिलकर जनवादी खरीदें और उसे मिलकर पढे।

हिन्दुस्तान के कोने कोने में जनता के लडाकू सघर्षो की लहर दिनोदिन जोरदार होती जा रही है और वर्ग-सघर्ष मे जूझनेवाले लड़ाकू मजदूरों और किसानो मे मार्क्सवादी साहित्य की भूख ज़्यादा तेज होती जा रही है। उन तक "जनवादी" को न पहुचाना, मार्क्सवाद–लेनिनवाद के क्रान्तिकारी हथियार से उन्हे वंचित करना और जनवादी क्रान्तिके सघर्ष मे उन्हे सिद्धान्तो से लैस करने से इन्कार करना है।

यदि ऊपर वताये गये तरीके के मुताविक हमने "जनवादी" के प्रचारका काम किया तो "जनवादी" की विक्री वहुत तेजीसे आगे वढ़ेगी और वह सघर्ष में हमी जनता और मार्क्सवादी लेनिनवादी कार्यकर्ताओ के हाथोंमे अचूक और शक्तिशालीतु हथियार वन कर रहेगा।

प्रकाशक,- "जनवादी"

इस अंक में—

११

मात्र मार्क्सवादी-लेनिनवादी हिन्दी मासिक

गांधीवाद का वर्ग-सार

गांधीवाद का वर्ग-सार क्या है? हिन्दुस्तान के राष्ट्रीय आन्दोलनके इतिहास में उसकी क्या भूमिका रही है, उसने किस तरह देशी स्वार्थी वर्गों और और विदेशी साम्राज्यवादियों का हित साधन किया और आज वह किस तरह प्रतिक्रियावाद की काली शक्तियों के हाथ का हथियार बन रहा है--और उसके खिलाफ सैद्धान्तिक संघर्ष चलाना क्यों जरूरी है?

पढ़िये सोवियत लेखक याकार का विशेष लेख

जनवादी

अंक १०

अन्य महत्वपूर्ण लेख

[१] लेनिन-रूसी कम्युनिस्ट पार्टी के नेता और संगठनकर्ता
—ले. स्तालिन

[२] अ. भा. शान्ति सम्मेलन का ऐतिहासिक महत्व

[३] मजदूर वर्ग के एके के लिये संघर्ष—कम्युनिस्ट पार्टियों का सबसे जरूरी काम

[४] नये साल में—नयी कामयाबियों की तरफ

फरवरी, १९५० अंक ११ मूल्य ८ आना

चन्दा

वार्षिक ५ रु. छमाही ३ रु. तिमाही १ रु. ८ आ.

बी. एम. कौल द्वारा न्यू. एज. प्रिं. प्रेस, १९० बी. खेतवाडी मेनरोड बम्बई ४ से मुद्रित और "जनवादी" आफ़िस, राजभवन, सैण्डहर्स्ट रोड, बम्बई ४ से प्रकाशित और सपादित।

लेनिनवाद—विश्व सर्वहारा के संघर्ष का फरहरा

व्लादिमिर इलिच लेनिन की मृत्यु के बाद २६ वरस बीत चुके हैं। वह विश्व कम्युनिज़्म के नेता थे, मार्क्सवाद के सबसे बड़े विचारक और सिद्धान्तवेत्ता थे। वह वह व्यक्ति थे जिन्होंने बहादुर बोल्शेविक पार्टी का और दुनियामें मजदूरों और किसानो के पहले समाजवादी राज्य का निर्माण किया।

नयी ऐतिहासिक परिस्थितियो में लेनिन ने और उनके महान सहयोगी तथा उनके अमर काम को आगे बढ़ानेवाले स्तालिन ने अन्तरराष्ट्रीय सर्वहारा के वर्ग संघर्ष के विशाल अनुभव, महान अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति के अनुभव और समाजवादी सोवियत प्रजातंत्र संघ में समाजवादी निर्माण के अमल के आधार पर मार्क्सवादी सिद्धान्त को आगे बढाया और नये विचारो से उसका भण्डार भरा। उन्होंने मार्क्स-वाद-लेनिनवाद को दुनिया मे सबसे ज़्यादा ताकतवर क्रान्तिकारी सिद्धान्त बनाया।

लेनिनवाद साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रान्तियोंके युगमें मार्क्सवादका और आगे विकास है। वह दुनियाकी जमीनके छठे हिस्से पर समाजवादकी विजयके युगमे, अनेक देशोंमे समाजवादके लिये विजयी लडाईके युगमे मार्क्सवादका और आगे विकास है।

लेनिन-स्तालिनकी शिक्षाएँ आजकल का वैज्ञानिक कम्युनिज़्म हैं। वे वैज्ञानिक और दार्शनिक समझका उच्चतम शिखर, अन्तरराष्ट्रीय सर्वहारा वर्गका विश्व दृष्टिकोण और उसके काम की निदर्शक हैं। वे ऐतिहासिक अनुभवकी कसौटीपर खरी उतर चुकी हैं।

अमर लेनिनके विचारों की पूरी शान, उनकी जीवनशक्ति, गंभीर सचाई और विजय सोवियत संघकी विश्व ऐतिहासिक सफलताओं मे—उस ढंगकी सफलताओंमे जो शान्ति और जनवादका दुर्ग है और जो कम्युनिस्ट समाजकी तरफ विजयी कदम बढा रहा है, मूर्तमान है।

राष्ट्रीय अर्थतंत्र की बहाली और विकास की राज्य योजना के पूरा होने से सोवियत संघ ने १९४९ मे नयी, महत्वपूर्ण सफलताएं पायी हैं। उद्योग के संशोधित वार्षिक लक्ष्य १०३ फी सदी पूरे हुए। अनाज की फसलों की कुल पैदावार ७६ करोड़ पूड हुई। वह लड़ाई से पहले के, १९४० के स्तर से ज़्यादा हुई और पंचवर्षी योजना के आखिरी साल के लिये निश्चित सीमा के पास तक पहुँच गयी।

अमरीका में सरकारी ऑकड़ो तकके अनुसार बेकारोंकी संख्यामें १९४८ की तुलनामें ६४ फी सदी बढती हुई। मगर समाजवादी सोवियत प्रजातंत्र संघमें, जहॉ बेकारी को बहुत पहले ही खतम किया जा चुका है, फैक्टरी और दफ्तरके मजदूरोकी संख्यामें १९४८ की तुलनामें १८,००,००० की बढ़ती हुई, और इसके साथ ही साथ जनताका भौतिक और सस्कृतिक स्तर अधिकाधिक ऊँचा उठा।

लेनिनवादसे, बोल्शेविक पार्टीके नेतृत्वमे और उसके अपूर्व नेता, कामरेड स्तालिनमे समाजवादी सोवियत प्रजातंत्र संघकी जनताकी असीम आस्थाकी बदौलत सोवियत संघ दुनियाकी मेहनतकश जनताके लिये—जिन्दगी, शान्ति और आजादीके लिये लड़नेवालोंके लिये, विश्वास और शक्तिका कभी कम न पड़नेवाला स्रोत बन गया है।

पूँजीवाद से समाजवाद मे परिवर्तनकी राहोके बारेमें लेनिन-स्तालिनकी शिक्षाओ की सचाई का नया शानदार सबूत जनता के जनतंत्रो में मिला है। उन्होंने अपनी आजादी और स्वाधीनता सोवियत फौज की बदौलत हासिल की जिसने जर्मन फासिज्म को, विश्व साम्राज्यवाद के अगले दस्ते को चकनाचूर किया।

इन देशो मे भारी राजनीतिक, समाजिक और आर्थिक परिवर्तन हुए हैं—ऐसे परिवर्तन जो अपने महत्वमे समाजवादी क्रान्तिके बराबर हैं। सत्ता हस्तातरित होकर मेहनतकश जनताके हाथमें आयी है। इनसे लेनिनकी यह थीसिस (धारणा—अनु०) पूरी तरह सही साबित होती है कि पूँजीवादसे कम्युनिज़्मके परिवर्तनकालमें बहुतसे और तरह-तरहके राजनीतिक रूप सामने आते हैं, मगर उनका सार अवश्यम्भावी रूपसे एक ही होगा—यानी **सर्वहारा वर्ग की डिक्टेटरशिप**।

जनता के जनतंत्र सर्वहारा की डिक्टेटरशिप के कामो को सफलतापूर्वक पूरा कर रहे हैं। मध्य और दक्षिण-पूर्वी योरप मे इनके कायम होने ने छिपे और खुले राष्ट्रवादियों के दावोंको, मार्क्सवाद लेनिनवाद से गद्दारी करनेवालो के दावो को छिन्न-भिन्न कर डाला है। उन्होंने इन देशोंके विकास के "खास" और "विशेष" तरीके के बारे मे तुच्छ सिद्धान्त बघारे थे—ऐसे सिद्धान्त जो लेनिनवाद के प्रतिकूल हैं, उसकी तोड़-मरोड़ है और जो सोवियत संघ के ऐतिहासिक अनुभव की तरफ से ऑख मूँदते हैं।

जनताके जनतंत्रोंमे सत्ता मेहनतकश जनताके हाथ में आयी जो सर्वहारा और उसकी हिरावल कम्युनिस्ट पार्टीकी निदर्शक भूमिकाके नीचे थी। यह इस वजहसे संभव हुआ कि मेहनतकश किसानोके साथ मजदूर-वर्गके सहयोगके बारेमे लेनिनके विचारो को कम्युनिस्ट पार्टियोंने चतुरतापूर्वक व्यावहारिक रूप दिया।

इस सहयोग की अधिकाधिक मजबूती, नयी जिन्दगीका निर्माण करनेमें विशाल मेहनतकश जनताकी राजनीतिक चेतना और कियाशीलतामें बढती, अपने राज्यको मजबूत बनानेकी हर मजदूर, किसान और बुद्धिजीवीकी दिलचस्पी, उसकी आर्थिक ताकतमे बढ़ती—समाजवादकी तरफ जनताके जनतंत्रोंकी सफल प्रगतिके लिये यही खास शर्तें है।

लेनिनवाद तमाम कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियोंके लिये विश्व दृष्टिकोण और कामका एकमात्र निर्देशक बन गया है। वह मजदूर वर्ग और तमाम मेहनतकश जनता के हितों के लिये उनकी लडाई मे एक ताकतवर और भरोसे का हथियार बन गया है।

लेनिनवाद के खिलाफ दुश्मनो के हमलो का जवाब देते हुए कॉ. स्तालिन ने लिखा था:

> "क्या लेनिनवाद **सभी** देशो के क्रान्तिकारी आन्दोलन के अनुभव का सार नहीं है? क्या लेनिनवाद के विचारो और कार्यनीति की बुनियादी बाते **सभी** देशो की मजदूर पार्टियों के लिये उपयुक्त, उनके लिये आवश्यक नही हैं? क्या लेनिन सही नहीं थे जब उन्होंने कहा था कि '**बोल्शेविज़्म सभी के लिये कार्यनीति के आदर्श की तरह काम दे सकता है?**' *"

दुनिया की कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियाँ समझती हैं कि हमारे जमाने मे मार्क्स-एंगेल्स-लेनिन-स्तालिनके वैज्ञानिक समाजवादके सिवा दूसरा कोई भी सच्चा समाजवादी सिद्धान्त नहीं है और न हो सकता है। वे मार्क्सवाद-लेनिनवादके लडाकू झण्डेके नीचे इस तरह सगठित हो रही हैं जैसे पहले कभी नहीं हुई थी।

साम्राज्यवादी अपने एजेण्टोको "कम्युनिस्टो" के वेशमे पेश करनेकी कोशिशे करते हैं। ऐसी बातें बताती हैं कि मेहनतकश जनताको मैदानमे उतारने और सगठित करनेमे मार्क्सवाद-लेनिनवादके विचारोंकी ताकत कितनी विशाल है।

अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादी जानते हैं कि उनके वफादार सेवक—बेविन, ब्लुम, शुमेखर और सरागातकी तरहके सोशलिस्ट अपने खुले नाक-रगड़पनके कारण मेहनतकश जनताका समर्थन बुरी तरह खो रहे है। इसलिये वे साम्राज्यवादके मददगार यूगोस्लावियाके "क्युमनिस्ट" शासकोंका सहारा ले रहे हैं।

मगर मालिक और उसके टुकड़खोर, दोनोंकी यह घृणित चाल भी नाकाम कर दी गयी है।

लेनिनवाद सिर्फ मानवजातिके आगे बढे अग मे—दुनियाकी कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियोंमे ही जीवित नहीं है। उसने जनताके दिलोंमे ऐसी जगह पाली है जैसी आजसे पहले कभी न पायी थी।

लेनिन और स्तालिनके नाम मेहनतकश जनताको सबसे ज़्यादा नज़दीक और प्यारे लगते हैं। इन नामोंको वह सबसे ज़्यादा सजो कर रखती है।

आम मेहनतकश जनता हमारे साथ है—लेनिनने लिखा था। हमारी शक्तिका आधार यही है। विश्व कम्युनिज्म की अजेयता का श्रोत इसी मे है।

लेनिन और स्तालिन के विचार, समाजवाद के विचार करोड़ो जनता को सचालित कर रहे हैं। अधिकाधिक जनता, मेहनतकश जनता के नये अंग लेनिन और स्तालिन द्वारा दिखाये रास्ते को अपना रहे हैं। कारण यह है कि वे समझते हैं और

---

* देखिये, स्तालिन: **लेनिनवाद की समस्याएँ**, पृ. २, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस लि., बम्बई ४।

समाजवादी सोवियत प्रजातंत्र संघकी महान मिसालसे देखते हैं कि लेनिन और स्तालिनके रास्तेको छोडकर साम्राज्यवाद, गरीबी और असमानतासे मुक्ति पानेका दूसरा कोई रास्ता नहीं है।

आजकलकी घटनाएँ साम्राज्यवादके लेनिन द्वारा विश्लेषणको सही साबित करती हैं। अमरीकामे और उस पर निर्भर पूँजीवादी देशोंमें आर्थिक संकट पक रहा है और इसके सिलसिलेमे साम्राज्यवादी एक नये विश्व-युद्धकी धुआँधार तैयारियाँ कर रहे हैं। इसके साथ-साथ जनताके साधारण अधिकारो और जनवादी स्वतंत्रता पर हमले किये जा रहे हैं और सामाजिक, राजनीतिक तथा वैचारिक जिन्दगी में प्रतिक्रियावादी कार्रवाइयो को बढाया जा रहा है, राज्य व्यवस्था का फासिस्टीकरण हो रहा है और आबादीके तमाम प्रगतिशील अंगोके खिलाफ, पुलिसका आतंक बे-लगाम बरपा हो रहा है।

जनताके एक नये कत्लेआम के जरिये साम्राज्यवाद अपने हल न होनेवाले अन्तरविरोधोंसे बचनेका रास्ता ढूँढता है।

मगर अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादी आज जिस नये विश्व युद्ध की तैयारी कर रहे हैं वह निश्चय ही पूरी साम्राज्यवादी व्यवस्था को खतम कर देगा।

लेनिन ने इस बात को पहले ही देख लिया था। उन्होने लिखा था कि पृथ्वीको खून से रंगने वाले और मनुष्यजातिको भुखमरी और बर्बरता की भट्ठी में झोकनेवाले पूँजीवाद के मरते समय की हाथ-पैर की पटक मे कैसी भी पाशविकता क्यो न हो, मगर यह लिखा जा चुका है कि वह अवश्यम्भावी रूप से खतम होगा और जल्दी ही।

अमरीकी साम्राज्यवाद द्वारा लादी गयी मार्शल योजना और फौजी गठ-बंधनो के शिकंजे में फंसे और गुलाम बने पूँजीवादी देशो मे जो बडे वर्ग संघर्ष छिड़ रहे हैं वे मेहनतकश जनता की उन्नत राजनीतिक योग्यता दिखलाते हैं और लेनिनवाद के विचारो की जीवन-शक्ति की सचाई को सही साबित करते हैं।

पूँजीवादी देशोंमें और खास तौरसे फ्रांस और इटलीमें कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियाँ मेहनतकश जनताकी लड़ाइयोका कुशलतापूर्वक नेतृत्व कर रही हैं। वे उस मार्क्सवादी-लेनिनवादी रणनीति और कार्यनीतिसे संचालित होती हैं जिन्हें बोल्शेविक पार्टी जॉच चुकी है। वे मजदूर वर्ग और किसानोंके हितोकी लड़ाईको शान्ति और अपने देशोंकी राष्ट्रीय आजादी की लड़ाई के साथ जोडती हैं। यह नीति जनता के राष्ट्रीय हितो के अनुकूल है। वे तमाम जनता की और देशभक्त शक्तियो को अमरीकी साम्राज्यवाद की शर्मनाक गुलामी के खिलाफ संगठित कर रही हैं।

शान्ति के लिये लडाई का झण्डा सबसे पहले लेनिन ने उठाया था। उन्होने कहा था कि हर मेहनतकश इस नारे को समझता है।

मार्क्सवाद-लेनिनवाद के विजयी सिद्धान्तों के हथियार से लैस कम्युनिस्ट पार्टियो साम्राज्यवादियोके खिलाफ उपनिवेशो और अर्द्ध-उपनिवेशोकी जनताके राष्ट्रीय

स्वाधीनताके संग्रामोंका नेतृत्व कर रही हैं। साम्राज्यवादी एक अरबसे ज्यादा जनता का मुट्ठीभर शोषको और उनके दलालोंके हितमें निर्मम-शोषण कर रहे हैं।

कॉमरेड माओ जे-दुंगके नेतृत्वमें वीरतापूर्ण सग्रामके दौरानमें फौलाद बनी चीन की कम्युनिस्ट पार्टीने कुओमिन्ताग और अमरीकी साम्राज्यवादियोंके प्रतिक्रियावादी, जन-विरोधी गुट को धूल चटायी है, जनता का शासन कायम किया है और अब उसे बुनियादी सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनो के रास्ते पर ले जा रही है।

मलाया, इण्डोनीशिया, वियतनाम और पूर्व के दूसरे देशो की जनता मानती है कि उसकी राष्ट्रीय और सामाजिक मुक्ति के लिये आवश्यक है कि उसके आम शत्रु, साम्राज्यवाद के खिलाफ लडाई में उसकी शक्तिशाली ताकतो और पूँजीवादी देशो की मेहनतकश जनता का सयुक्त मोर्चा हो।

ताकतो की इस इस जबरदस्त मोर्चेबन्दी के मुकाबले मे विश्व साम्राज्यवाद के पिछवाडे के खास अड्डे—उपनिवेशो और अर्द्ध-उपनिवेशों की अवस्था, अवश्यम्भावी रूप से भहरा कर गिर जायगी, वही साम्राज्यवाद पर अन्तिम प्रहार होगा और उसकी कपाल-क्रिया हो जायगी।

कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियो के नेतृत्वमें तमाम देशोंकी मेहनतकश जनताका लड़ाकू एका, और सबसे पहले मजदूर आन्दोलन और तमाम जनवादी शक्तियोका एका, विश्व शान्तिको मजबूत बनाने और कायम रखनेकी गारटी करेगा। वह जंगखोरोंकी शैतानी साजिशो को नाकाम करेगा। और वह मजदूर वर्गकी न सिर्फ अपनी बुनियादी जीतोकी हिफाजत करनेमे बल्कि साम्राज्यवादियोंके शासनका खात्मा करनेके लिये सफल लड़ाई लडने मे भी मदद करेगा और समाजका समाजवादी ढंगसे पुनर्सगठन करनेमें मदद करेगा।

लेनिन का ध्येय अजेय है क्योंकि वह ऐतिहासिक विकास की जरूरतो के अनुकूल है, क्योंकि तमाम मेहनत कश जनता की, तमाम शोषितो की उसमें खास दिलचस्पी है।

लेनिन का ध्येय अजेय है क्योकि कॉमरेड स्तालिन उसे आगे बढ़ा रहे हैं।

लेनिन की हिदायतो को याद करके कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियाँ अपनी कतारोके एकेको सैद्धान्तिक और संगठनात्मक दृष्टिसे और भी मजबूत बनायेंगी, विशाल आम मेहनतकश जनताके साथ और भी घनिष्ठता कायम करेंगी और पूँजी-वादी राष्ट्रवादी तत्वो और जनवाद तथा समाजवादके दूसरे दुश्मनोकी साजिशोंके बारे में और भी ज्यादा क्रान्तिकारी जागरूकता दिखायेंगी।

मार्क्स-एंगेल्स-लेनिन स्तालिनके अजेय झण्डे को ऊँचा रखो।

[कम्युनिस्ट और वर्कर्स पार्टियोंके सूचना विभागके मुखपत्र, "फॉर ए लास्टिंग पीस, फॉर ए पीपुल्स डेमोक्रेसी" के २० जनवरी, १९५० के अक का सम्पादकीय।]

औपनिवेशिक क्रांतियाँ और स्तालिन के सिद्धान्त

ए. पेरेताएलो

जातीय और औपनिवेशिक सवाल के बारे मे जोसेफ स्तालिन की शिक्षाएँ क्रान्ति-कारी मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त की सुसंगत इमारत की एक आधार-शिला हैं। व्लादिमिर इलिच लेनिनने कहा था कि जातियो के सवाल पर मार्क्सवादी सिद्धान्त की रचना करनें में सबसे ज्यादा काम जोसेफ स्तालिनने ही किया है। जातियो के सवाल पर जोसेफ स्तालिन की शिक्षाएँ ही उन जातीय परिवर्तनों का आधार हैं जो सोवियत संघमें किये गये हैं। स्तालिनकी जाति सम्बंधी नीतिकी बदौलत ही सोवियत सघने उस जातीय दुश्मनीको हमेशाके लिये जिसे जारशाही रूसके शासक और शोषक वर्गोंनें सदियोंके दौरानमें फैलाया था, मिटा दिया है, और मानव जातिके इतिहासमें पहली बार जनताके बीच अटूट भाईचारेकी मित्रता कायम की है। सोवियत राज्यकी शक्ति और ताकतका यह एक बुनियादी श्रोत है। जारशाही रूसके औपनिवेशिक सीमा-प्रदेश पहले पिछड़े हुए, कंगाल और गुलाम थे। जातियोंकी वास्तविक समानताके स्तालिन-सिद्धान्तके अनुसार उन्हें सचमुच में समान और फूलते-फलते औद्योगिक जातीय प्रजातंत्रोंमें बदल दिया गया था। स्वेच्छासे ही वे महान सोवियत सघमें शामिल हुए।

जातीय और औपनिवेशिक सवालके बारेमे स्तालिनकी शिक्षाओ ने वे सच्चे रास्ते सामने रखे जो साम्राज्यवाद द्वारा उत्पीडित तथा गुलाम औपनिवेशिक और आधीन जनता को मुक्ति की तरफ ले जाते है।

दूसरे इन्टरनेशनल के सोशलिस्टों ने और मजदूर आन्दोलन की कतारों में मौजूद दूसरे अवसरवादियो ने जातीय सवाल के महत्व से इनकार किया, या उसे "सभ्य" योरपीय राष्ट्रों की सीमा के ही भीतर बांधे रखा। साम्राज्यवाद के वफादार सेवकों की तरह उन्होने इस बात तक पर जोर दिया कि "सभ्यता को कायम रखनें के लिये" औपनिवेशिक गुलामी की "जरूरत" है। यहीं कारण है, जोसेफ स्तालिन ने बताया, जिससे कि "सबसे अधिक नग्न और सबसे अधिक पाशविक जातीय उत्पीड़न के शिकार—एशिया और अफ्रीकाके करोड़ो लोगो पर 'सोशलिस्टों' की कभी नजर नहीं पड़ी।" (जोसेफ स्तालिन· **मार्क्सवाद और जातीय तथा औपनिवेशिक सवाल,** अंग्रेजी सं., पृ. १११)। साम्राज्यवाद के हित में रचे गये

इसी तरह के "सिद्धान्त" दक्षिणपन्थी "सोशलिस्टों" के बीच आज भी प्रचलित हैं। जिस तरह वान्डरवाल्डो, कॉट्रिस्क्यो और मकडोनल्टोने अपने जमानेमे किया था, उसी तरह आज एटलियो, बेविनो, ब्लूमो और स्पाकोका गिरोह साम्राज्यवादके हथियार उठाने वाले गुर्गोका काम वफादारी के साथ अंजाम दे रहा है। इस तरह वह बर्मा मलाया, हिन्दचीन, इण्डोनीशिया आदि मे औपनिवेशिक शासन कायम रखने और स्थायी बनाने की कोशिश कर रहा है।

जातियो के सवाल पर मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तो को निर्धारित और विकसित करते हुए जोसेफ स्तालिन ने औपनिवेशिक और अर्द्ध-औपनिवेशिक देशो के राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्रामोके भारी क्रान्तिकारी महत्वको बताया। उन्होने योरप और अमरीकाके पूँजीवादी देशोमे पूँजीके शासनके खिलाफ मजदूर वर्गकी लड़ाई और उपनिवेशो तथा अर्द्ध-उपनिवेशोकी जनताके स्वाधीनता संग्रामोके बीचके निकट जीवित सम्बंधको बताया। इसने "सफेद लोगों और काले लोगोके बीचकी, साम्राज्यवादके "सभ्य" और "असभ्य" गुलामोके बीचकी दीवारको तोड दिया" (वही, पृष्ठ ११२)। जोसेफ स्तालिनने आगे यह भी बताया कि जनता के समान सघर्ष के जरिये साम्राज्यवाद के शासन को खतम किये बिना पश्चिम और पूर्व की जनता की अन्तिम मुक्ति असम्भव है। "जातीय और औपनिवेशिक सवालों को पूँजी की सत्ता से मुक्ति के सवाल से अलग नहीं किया जा सकता"—जोसेफ स्तालिन ने लिखा। (वही, पृष्ठ ११४) इसलिये, जोसेफ स्तालिन ने बताया, "उत्पीड़ित राष्ट्रो का सवाल साम्राज्यवाद के खिलाफ उत्पीडित राष्ट्रोके संघर्ष में, राष्ट्रो की सच्ची समानता और राज्यो के रूप मे अपनी स्वतंत्र हस्ती कायम करने की लड़ाई मे उनको मदद और सहायता देने का, सच्ची और लगातार सहायता देने का सवाल बन गया।" (वहीं, पृष्ठ ११२)

रूस मे १९१७ की अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति ने उपनिवेशो और अर्द्ध-उपनिवेशो के स्वाधीनता संग्राम की परिस्थितियो में बुनियादी परिवर्तन कर दिया। उसने विश्व अर्थतंत्र के औपनिवेशिक क्षेत्र मे भी साम्राज्यवादी मोर्चे में दरार पैदा कर दी। "विश्व साम्राज्यवाद के खिलाफ़, पश्चिम के सर्वहारा वर्ग से रूसी क्रान्ति के जरिये पूर्व के उत्पीडित राष्ट्रो तक की क्रान्तियो की, एक नयी मोर्चेबन्दी" (वही, पृष्ठ ७६) कायम करके, उसने औपनिवेशिक पूर्व की मेहनतकश जनता को जगा दिया।

सोवियत रूस साम्राज्यवादके खिलाफ अपनी आजादी के लिये लड़नेवाली जनता का शक्तिशाली और अजेय दुर्ग बन गया। स्तालिन के जाति सम्बंधी सिद्धान्तो पर आधारित सोवियत सरकार की नीति हमेशा ही उपनिवेश और गुलाम जनता के अधिकारो की मदद और हिफ़ाजत करने की दिशामे, उनकी राष्ट्रीय आजादी और स्वाधीनताको—जिसमे स्वतंत्र राज्य कायम करने का अधिकार भी शामिल है—हासिल कराने की दिशा में रही है। सिर्फ सोवियत सघ की मौजूदगी की बदौलत ही साम्राज्यवादी शासन से उपनिवेशों की मुक्ति के लिये सच्ची परिस्थितियो पैदा हो गयी है। सोवियत संघ, जहाँ स्तालिन के सिद्धान्तो के आधार पर जातीय सवाल को हल किया गया था, तमाम देशो की जनता के लिये एक आदर्श और सुन्दर-

शक्ति रखने वाला उदाहरण बन गया। सोवियत राज्य ने जोसेफ स्तालिन द्वारा निर्धारित किये गये सिद्धान्तके "उत्पीड़ित जनता की मुक्ति के सर्वहारा अन्तर-राष्ट्रीय तरीके" के आधार पर कौमो की पूरी समानता और उनके बीच भाईचारेका सहयोग कायम किया। यह सिद्धान्त पूँजीवादी राष्ट्रवादके एकदम खिलाफ है। पूँजीवादी राष्ट्रवाद राष्ट्रोको अलग-अलग करता है, वह उन्हें कमजोर करने और गुलाम बनानेके लिये जनताके बीच जातीय फूट और नस्ली विद्वेषकी भावना फैलाता है।

जातीय और औपनिवेशिक सवालके बारेमें स्तालिनके सिद्धान्तके अन्दर अत्यधिक महत्वकी एक चीज, राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलनकी प्रेरक शक्तियोके बारेमें उनकी थीसिस (सिद्धान्त) भी है। क्रान्तिकारी आन्दोलनके तेजी पकड़नेके साथ ही बड़े राष्ट्रीय पूँजीपति वर्गने विदेशी साम्राज्यवादके साथ गठबंधन कर लिया। मजदूर-वर्ग और उसकी पार्टियों—यानी कम्युनिस्ट पार्टियोके नेतृत्वमें चलनेवाली मेहनतकश जनता औपनिवेशिक और गुलाम जनताके स्वाधीनता संग्रामकी मुख्य प्रेरक शक्ति बन गयी।

इस बारेमें जोसेफ स्तालिनने बताया कि "क्रान्तिको तब तक आगे नही बढ़ाया जा सकता और पूँजीवादी दृष्टिसे विकसित उपनिवेशो और आधीन देशोकी पूरी आजादी हासिल नही की जा सकती जब तक कि समझौता करनेवाले राष्ट्रीय पूँजीपति वर्गको जनता से अलहदा न कर दिया जाय, जब तक कि निम्न-पूँजीवादी क्रान्तिकारी जनता को इस पूँजीपतिवर्गके असरमे मुक्त न कर लिया जाय, जब तक कि सर्वहारा वर्गका नायकत्व न कायम हो जाय और जबतक कि मजदूर वर्गके आगे बढ़े अगोको स्वतंत्र कम्युनिस्ट पार्टियोंमे न संगठित कर लिया जाय।" (**वही**, पृष्ठ २१५) पूर्वके अनेक देशोमे राष्ट्रीय पूँजीपतिवर्गके नेताओ द्वारा—चीनमे च्यांग काई-शेक, इण्डोनीशियामे हाता द्वारा—की गयी गद्दारी बताती है कि स्तालिनके सिद्धान्तकी इस धारणाका हमारे जमाने मे विशेष रूपसे फौरी महत्व है। उपनिवेशो और अर्द्ध-उपनिवेशोमें स्वाधीनता-संघर्षोका पूरा इतिहास साबित करता है कि सिर्फ वहीं स्वाधीनता संग्राम की विजय हुई है जहॉ नेतृत्व मजदूरवर्ग और उसकी पार्टीके हाथ में है, जहॉ मजदूर वर्ग और किसानोके बीच सहयोग कायम हुआ है, जहॉ मजदूरवर्गके नेतृत्वमे विशाल राष्ट्र-व्यापी साम्राज्यवाद-विरोधी मोर्चा कायम है।

दूसरे विश्व युद्धमे सोवियत संघकी निर्णायक कोशिशोकी वजहसे हुई जर्मन फासिज्म और जापानी फौजीवादकी फौजी हारके परिणामस्वरूप समाजवादी व्यवस्था और पूँजीवादी व्यवस्थाके बीचका शक्ति-संतुलन समाजवादके पक्षमें बुनियादी रूपसे बदल गया है। समाजवाद और जनवादकी शक्तियॉ फैली हैं और ताकतवर हुई हैं और सोवियत संघके नेतृत्वमें तथा लड़ाई के बाद पैदा हुए जनता के जनतंत्रों के नेतृत्वमें एक ताकतवर, जनवादी, साम्राज्यवाद-विरोधी पक्ष कायम हुआ है। फासिस्ट जर्मनी और साम्राज्यवादी जापान की हार के परिणाम--स्वरूप साम्राज्यवादी पक्ष और भी कमजोर हुआ है। इसके साथ ही साथ, जैसा कि जोसेफ स्तालिन ने बताया है, आम जनता दूसरे विश्वयुद्ध के अनुभवसे बुद्धिमान बनी है और उसने समझ लिया

है कि राज्यों का भविष्य ऐसे प्रतिक्रियावादी शासकों के हाथों में नहीं देना चाहिये जो संकुचित, स्वार्थी और जनवाद-विरोधी उद्देश्यों के लिये काम करते हैं। और ठीक इसी कारण से जोसेफ स्तालिनने जोर देकर कहा था कि, " जनता अब पुराने तरीके से नहीं रहना चाहती और वह अपने राज्यों का भविष्य खुद अपने हाथों में ले रही है, जनवादी व्यवस्थाएँ कायम कर रही है और प्रतिक्रियावाद की शक्तियोंके खिलाफ, जंग की आग भड़कानेवालोंके खिलाफ जोरदार लड़ाई लड़ रही है।" (जोसेफ स्तालिन, **सोवियत संघ की फ़ौजों के मन्त्री का आर्डर आफ द' डे, १ मई, १९४६)**

दूसरे विश्वयुद्ध के कारण परिस्थिति में हुआ नया परिवर्तन उपनिवेशों और आधीन देशोंमें इस रूपमें प्रकट हुआ कि औपनिवेशिक व्यवस्था का संकट तेज हुआ और उपनिवेशों तथा आधीन देशोंमें राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलनका नया शक्तिशाली उठान आया। चीनमें प्रतिक्रियावादी कुओमिन्तांग और अमरीकी साम्राज्यवाद के खिलाफ जनता के स्वाधीनता-युद्धने, और वियतनाम, इण्डोनेशिया, वर्मा, मलाया और दूसरे देशों की जनता द्वारा औपनिवेशिकों के खिलाफ— जिन्हें अमरीकी साम्राज्यवादियों का समर्थन प्राप्त है—चलाये जानेवाले आजादी और स्वाधीनताके संग्रामने दिखला दिया है कि उपनिवेशों की जनता अब पुराने ढंगसे और ज़्यादा रहने को तैयार नहीं है। (ज़्दानोव)

अमरीकी, ब्रिटिश, फ्रांसीसी और डच साम्राज्यवादियों ने खूनी औपनिवेशिक युद्धों, फौजी दखलन्दाजी और कुछ उपनिवेशों को खोखली " आजादी " के दान के जरिये अपने औपनिवेशिक शासन को मजबूत बनाने की कोशिशें की, लेकिन ये तमाम कोशिशें उपनिवेशों की और आधीन जनताके—जिसका हिरावल कम्युनिस्टोंकी अगुआई में चलनेवाला सर्वहारा वर्ग है —स्वाधीनता आन्दोलन के शक्तिशाली बढ़ाव को रोकने में असफल रही।

चीनी जनता के स्वाधीनता संग्राम की विशेष रूप से महान विजय हुई।

घरेलू प्रतिक्रियावाद और अमरीकी साम्राज्यवादके ऊपर चीनी जनता की विश्व ऐतिहासिक विजय और चीन में जनता के जनवादी जनतंत्र की स्थापना—उपनिवेशों में राष्ट्रीय क्रांतियों के बारे में स्तालिन की शिक्षाओं की बड़ी ऐतिहासिक विजय है।

चीनी क्रान्तिके स्वरूप, उसकी विशेषताओं और उसकी प्रेरक शक्तियोंके बारेमें जोसेफ स्तालिनके सिद्धान्तोंको ही चीनी कम्युनिस्ट पार्टीने अपने कार्यक्रम, रणनीति और कार्यनीतिका आधार बनाया था। जोसेफ स्तालिनके महान् विचारोंने चीनी जनता को आजादी और स्वाधीनताके लिये लड़ाईका रास्ता बताया और उसे विजय तक पहुँचाया।

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा २८ बरस तक चलायी जाने वाली लड़ाईके नतीजों का सार बताते हुए चीनी जनताके नेता, माओ जे-दुंगने कहा है . " हमने बहुमूल्य अनुभव प्राप्त किया है, और इस अनुभवमें सबसे खास नीचे बतायी गयी तीन बातें हैं मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिनके सिद्धान्तों से लैस एक अनुशासनबद्ध

पार्टी जो, आत्म-समालोचनाका तरीका इस्तेमाल करती हो और जनताके साथ निकटतम रूपसे जुडी हो, इस पार्टीके नेतृत्वमे काम करनेवाली एक फौज हो और समाजके विभिन्न क्रान्तिकारी अगो तथा दलोका एक सयुक्त मोर्चा हो जिसका नेतृत्व इस पार्टीके हाथमें हो। . .इन्हीं तीन बातोको अपना आधार बना कर हमने मुख्य विजय हासिल की है। " (माओ त्से-तुंग **जनताके जनतंत्रकी डिक्टेटरशिप**)

१९२५-२७ मे ही जोसेफ स्तालिन ने बताया था कि चीनी क्रान्तिका एक बुनियादी काम सामन्ती और अर्द्ध-सामन्ती तत्वो के शासन का तख़्ता उलटने के लिये लडना, जागीरो को किसानो को देने के लिये लड़ना है। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने करोडो चीनी किसानो की किसान क्रान्ति का नेतृत्व सम्हाला और चीन की सामन्ती जमीदार शक्तियो के ऊपर विजय हासिल करने मे उनका नेतृत्व किया। जनता की क्रान्ति के परिणाम-स्वरूप कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा शुरू किये गये कृषि सुधारने, जागीरो की जब्ती और किसानो के बीच उनके बॅटवारे ने किसानों के शोषण की अर्द्ध-सामन्ती व्यवस्था पर घातक प्रहार किये और सदियों से चली आयी गरीबी और गुलामी से किसानोको मुक्ति दिलायी।

जोसेफ स्तालिन ने चीनी क्रान्ति का एक और काम भी बताया था जो पहले ही कामके साथ निकट रूपसे जुडा हुआ है—यह काम विदेशी साम्राज्यवादके आधिपत्यके खिलाफ लड़ाई करना था। कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्वमें चीनी जनता ने यह ऐतिहासिक काम भी सफलता-पूर्वक पूरा किया। १९३७-४५ के राष्ट्रीय स्वाधीनता युद्ध मे चीनने अपनेको जापानी गुलाम-बनानेवालोसे मुक्त किया। गृह-युद्धके बरसोमें (१९४६-४९) चीनी जनता ने अपने देश से उन अमरीकी और ब्रिटिश साम्राज्यवादियोको निकाल बाहर किया जो चीन को अपना उपनिवेश और युद्ध की साजिश रचनेवाले अमरीकियो का सैनिक अड्डा बनाने की कोशिश कर रहे थे। इसके जरिये चीनी जनता ने अपने को अर्द्ध-औपनिवेशिक गुलामी से हमेशा के लिये मुक्त किया और अपनी राष्ट्रीय स्वाधीनता हासिल की।

चीनी क्रान्ति की महत्वपूर्ण खास विशेषताओं में जोसेफ स्तालिन ने एक विशेषता यह बतायी थी कि चीन का राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग कमजोर है और सामन्ती तत्वो तथा विदेशी साम्राज्यवाद के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है। इस बात ने सर्वहारा के लिए अपना नायकत्व हासिल करना आसान बना दिया। जोसेफ स्तालिन ने कहा था, "चीनी क्रान्ति की शुरूआत करनेवाले की और नेता की भूमिका, चीनी किसानो के नेता की भूमिका अवश्यम्भावी रूप से चीन के सर्वहारा वर्ग और उसकी पार्टी के हाथ मे आयेगी" (जोसेफ स्तालिन **सम्पूर्ण ग्रन्थावली**, रूसी स. भाग ७, पृष्ठ ३५९)। बड़े राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग ने १९२७ में ही क्रान्तिके साथ गद्दारी की थी और उसे छोड़कर साम्राज्यवाद के पक्षमे जा मिला था। उस समय से ही चीनी सर्वहारा वर्ग चीनी जनताकी मुख्य नायक शक्ति की जगह पर दृढता से कायम रहा है। चीनके मजदूर वर्ग की हिरावल, चीनकी कम्युनिस्ट पार्टी, जिसके

१९२१ में उसकी स्थापना के समय केवल कुछ दर्जन सदस्य थे— वढकर एक आम राजनीतिक पार्टी हो गयी है जिसकी सदस्य सख्या ३० लाखसे ज़्यादा है। उसने चीनके मजदूर वर्गको एकजूट किया। मज़दूर वर्ग और किसानोका अटूट सहयोग उसके नेतृत्वमें कायम हुआ। उसने देशकी तमाम प्रगतिशील और देशभक्त शक्तियोको अपने इर्द-गिर्द सगठित किया। मजदूर वर्ग के समर्थनसे कम्युनिस्ट पार्टीने जनताका विशाल जनवादी मोर्चा कायम किया जिसमें मज़दूर, किसान, निम्न और मंझोला पूँजीपति-वर्ग, चीनी देश की आवादी की वहुत विशाल वहुसंख्या सगठित है। इस तरह उसने कुओमिन्तागी प्रतिक्रियावाद और अमरीकी साम्राज्यवादके खिलाफ लड़ाईमें अपनी ऐतिहासिक विजय हासिल की।

जोसेफ स्तालिनने चीनी जनताकी क्रान्तिकारी फौजको "चीनी क्रान्तिकी एक खास विशेषता और एक सहायक बात" वताया था। (जोसेफ स्तालिनः **सम्पूर्ण ग्रंथावली**, रूसी सं., भाग ९, पृ. ३६३) चीनी कम्युनिस्टों की अगुआई में चलनेवाली चीनी जनता की क्रान्तिकारी फौज, चीनी जनता की आजाद फौज विशाल वनी है और कई वरसो तक लडी गयी क्रान्तिकारी लड़ाइयोके दौरानमे उसने अपनी कतारो को फ़ौलाद वनाया है। गृह-युद्ध के वरसों में उसने अपनी ताकत को वढ़ाकर ४० लाख किया और वह एक सर न की जा सकने वाली और अजेय शक्ति वन गयी। इस फौजने च्यांग काई-शेककी कई लाखकी उस वडी फौजको चकनाचूर कर दिया जिसे अमरीकी साम्राज्यवादियो ने हथियार सप्लाई किये थे और जो अमरीकी सलाहकारों और फ़ौजी विशेषज्ञो द्वारा शिक्षित और संचालित हुई थी। विजयी जनताकी आजाद फौज अव च्याग काई-शेककी प्रतिक्रिया-वादी फौजो के अन्तिम अवशेषोके खात्मेका काम पूरा कर रही है और वह दिन अव दूर नही है जव चीनी जनताके जनतंत्र की पूरी जमीन प्रतिक्रियावादियों से पूरी तरह पाक-साफ हो जायगी।

जोसेफ स्तालिनने इस वातके भारी महत्व पर जोर दिया कि "चीनकी वगलमे सोवियत संघ मौजूद है और विकसित हो रहा है। यह लाजिमी है कि उसके क्रान्तिकारी अनुभव और सहायतासे साम्राज्यवाद के खिलाफ और चीनके सामन्ती मध्ययुगीन अवशेषोंके खिलाफ चीनी जनताकी लड़ाई आसान हो।" (जोसेफ स्तालिन, **सम्पूर्ण ग्रंथावली**, भाग ८, पृ, ३५९) जनवाद और राष्ट्रीय आजादीके लिये चीनी जनताकी लडाई मे सोवियत सघ शुरूसे ही उसका खास मददगार दुर्ग वन गया। सोवियत और चीनी जनताके वीच तीन दशकोसे ज्यादाकी अटूट मित्रता चीनी जनतामे यह पक्का विश्वास पैदा करती है कि अव उसकी ऐतिहासिक विजय के नतीजोको छीननेमे कोई भी सफल न हो सकेगा। माओ जे-डुंगके नेतृत्वमे, चीनी कम्युनिस्ट पार्टी सर्वहारा अन्तरराष्ट्रीयता के स्तालिनी रास्तेपर दृढताके साथ और विना डगमगाये चीनी जनताका नेतृत्व कर रही है। चीनी जनताने सोवियत संघके नेतृत्वमे सगठित विश्व जनताके साम्राज्यवाद विरोधी खेमेमे दृढ़ताके साथ और स्थायी रूपसे अपनी जगह वनाली है।

जोसेफ स्तालिन ने वताया था कि जव मजदूर वर्ग चीनी क्रांति मे नायकत्व हासिल कर लेगा और किसानो तथा शहर और देहात की तमाम मेहनतकश जनता के

साथ अपना सहयोग मजबूत बना लेगा तो वह इस योग्य हो जायगा कि, " पूँजीवादी जनवादी क्रान्तिमें पूरी जीत हासिल करनेके लिये और बाद में धीरे-धीरे उसे समाजवादी क्रान्ति के रास्ते की तरफ उससे पैदा होनेवाले तमाम परिणामो के साथ बढानेके लिए, राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग के विरोध को परास्त कर दे।" (जोसेफ स्तालिन, **सम्पूर्ण ग्रंथावली,** भाग ९, पृ. २२२) जोसेफ स्तालिन ने बताया था कि सर्वहारा के नेतृत्वमें कायम हुआ क्रान्तिकारी शासन " चीनके ग़ैर-पूँजीवादी, या ज़्यादा साफ शब्दो मे, समाजवादी विकास के लिये परिवर्तन काल का शासन होगा" (जोसेफ स्तालिन, **संपूर्ण ग्रंथावली,** रूसी स., भाग ८, पृ ३६६)

चीनी क्रान्तिका विकास उसी रास्ते पर हुआ जो महा प्रतिभाशाली जोसेफ स्तालिन ने सोचा था। कुओमिन्तांगी प्रतिक्रियावाद और अमरीकी साम्राज्य के ऊपर जनता की विजय के परिणाम-स्वरूप कायम हुई सरकार जनता की जनवादी सरकार है जिसमें नेतृत्व मजदूर वर्ग के हाथ में है। मजदूर वर्ग का नेतृत्व, जिसकी अगुआ कम्युनिस्ट पार्टी है—लेनिन और स्तालिन की शिक्षाओ में बताये रास्ते पर चलता है-यह चीन मे जनता की जनवादी डिक्टेटरशिप के सफल विकास की और नये जनता के जनतंत्र के जरिये समाजवाद और कम्युनिज़्म में परिवर्तन की, बुनियादी शर्त है।

चीनी जनताकी क्रान्ति की विजय विश्व ऐतिहासिक महत्व की घटना है। वह शांति और जनवाद के पक्ष को बहुत ज़्यादा मजबूत करती है। चीनी जनवाद की विजय ने एशिया की तमाम जनता के इतिहास मे एक नया अध्याय शुरू किया है। औप-निवेशिक दुनिया के राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम " एक नयी, ऊँची मंजिल पर पहुँच गये हे " (जी एम. मालन्कोव)। चीनी जनता की विजयसे उपनिवेशो और अर्द्ध-उपनिवेशो के स्वाधीनता आन्दोलनने अपने मार्गको दृढ़ता पूर्वक बदल कर मजदूर वर्ग के नेतृत्व में जनताके जनवादके लिये लड़ाई करनेका मार्ग ले लिया है। चीनी जनताकी विजयने नया ऐतिहासिक सबूत पेश किया है जो उपनिवेशोमें राष्ट्रीय क्रान्तिके बारेमे स्तालिन के विचारोकी विलक्षण सार-पूर्णता और जीवन-शक्तिको स्पष्ट रूपसे सही प्रमाणित करता है। ठीक यही कारण है जिससे कि पूर्वकी तमाम उत्पीड़ित और गुलाम जनता चीनी जनताके विजयी उदाहरणकी तरफ चुम्बक-शक्तिसे खिंच रही है।

साम्राज्यवाद द्वारा उत्पीड़ित पूर्व के तमाम देशों में स्वाधीनता आन्दोलन बढ रहा है और ऊँचा उठ रहा है। उपनिवेशो और अर्द्ध-उपनिवेशो की आम जनता कम्युनिस्टो के नेतृत्व मे चलकर अपनी आजादीके लिये, अपनी सामाजिक और राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिये वीरतापूर्ण लड़ाई लड़ रही है। इण्डोनीशिया की जनता एक स्वतंत्र इण्डोनीशियाई प्रजातंत्रके लिये अपनी हथियारबन्द लड़ाईको जारी रखे है। वह हाता-सोकार्नो गुटकी उन विश्वासघाती योजनाओके खिलाफ अपनी लड़ाईको जारी रखे है जिनका उद्देश्य इण्डोनीशिया में साम्राज्यवादियोके औपनिवेशिक शासनको बरकरार रखना है।

[शेष पृष्ठ १६ पर]

मार्क्स द्वारा "प्रजातंत्रवादी" विधानकी आलोचना

[आज से एक शताब्दी पहले मार्क्सने अपनी पुस्तक, "**लुई बोनापार्ट का अठारहवाँ ब्रूमेयर**" में फ्रांसके १८४८ के "प्रजातन्त्रवादी" विधान की अत्यंत सख्त आलोचना की थी। हमे विश्वास है कि उसके जिन अशोंको हम यहाँ दे रहे हैं उनमें पाठकोंकी दिलचस्पी होगी। मार्क्सकी यह आलोचना सभी पूंजीवादी विधानो पर लागू होती है। इसके प्रकाशमें हम उस विधानकी असलियतको भी देख सकेंगे जिसे पूंजीवादी कांग्रेसी नेताओं ने यहाँ पर रचा है और जिसके बारेमें वे आज इतना शोर मचा रहे हैं। —सम्पादक]

नया विधान असल मे १८३० के वैधानिक चार्टरका ही प्रजातान्त्रिक वाना पहनाया हुआ संस्करण था। जूलाई एकराजतंत्र[1] के नीचे सकुचित मताधिकार की— जिसनें पूंजीपति वर्ग तक के एक वड़े भाग को राजनीतिक शासन (मे हिस्सा लेने- अनु) से महरूम कर दिया था— पूंजीवादी प्रजातंत्रके अस्तित्वके साथ पटरी नहीं वैठती थी। इस मताधिकारके स्थानमे फरवरी क्रान्ति[2] ने फौरन प्रत्यक्ष, सार्वजनिक मताधिकार की घोषणा कर दी थी। पूंजीवादी प्रजातंत्रवादी इस घटना को मिटा नहीं सकते थे। उसमे चुनाव क्षेत्रके अन्दर ६ महीनें रहनेकी, उसे सीमित करने वाली शर्त लगाकर ही, उन्हे सन्तोप करना पड़ा। शासन-तंत्रका, म्युनिसिपल व्यवस्था का, न्याय व्यवस्था का, फौज, आदिका पुराना संगठन अक्षत (वैसे का वैसा ही- अनु) बना रहा, या जहाँ पर विधान ने उसमे परिवर्तन भी किये वहाँ पर उस परिवर्तन का सबंध विषय-सूची से था, विषय से नही, नामसे था, चीज से नही।

१८४८ की स्वतंत्रताओ की अनिवार्य कमान को—व्यक्तिगत स्वतंत्रता, प्रेस की, भाषणकी, सगठन की, सभाकी, शिक्षाकी और धर्म, आदिकी स्वतंत्रताको-एक वैधानिक वर्दी मिल गयी जिसने उन्हे अभेद्य वना दिया। क्योंकि इनमेसे हरेक स्वतंत्रताको फ्रासीसी नागरिकका **अटल** अधिकार घोषित किया गया है, लेकिन, साथ ही साथ, उसके हाशिये पर हमेशा यह भी लिखा रहता है कि वह वहीं तक असीमित है जहाँ तक कि "**दूसरोंके समान अधिकार** और **पब्लिक की सुरक्षा**" या वे "कानून" जो इसी सामंजस्य को (व्यक्तिगत स्वतंत्रताओंका एक-दूसरे के साथ और पब्लिक की सुरक्षा के साथ)[3]

१. १८३० में, जूलाई क्रान्ति के बाद फ्रास के ३,४०,००,००० लोगों में से केवल २,५०,००० को वोट देनेका अधिकार था।—सं.

२. १८४८ की फरवरी क्रान्ति।—स.

३. कोष्ठकों के भीतर के शब्द **अठारहवें ब्रूमेयर** के दूसरे संस्करण (१९६९) से लिये गये हैं। सं०

बीच-बचाव करके कायम करने के उद्देश्य से बनाये गये हैं, सीमित नहीं करते। उदाहरण के लिये " नागरिकों को सगठन का, शान्तिपूर्ण और निशस्त्र सभा करनेका, अर्जी देनेका, और अपनी रायोंको, प्रेसमें चाहे कहीं और, प्रकट करनेका अधिकार है। **इन अधिकारोंके उपभोग पर** कोई प्रतिबन्ध नहीं है सिवा **दूसरोंके समान अधिकारों और पब्लिककी सुरक्षाके प्रतिबन्धके** (फ्रांसीसी विधानका अध्याय २, धारा ८) "शिक्षा मुफ्त है। शिक्षाकी स्वाधीनताका **उपभोग** कानून द्वारा निश्चित की गयी परिस्थितियों के अन्दर और राज्यके पूर्ण नियंत्रण में **किया जायगा।**" (वही, धारा ९) .. "हर नागरिकका घर अलंघ्य है, **सिवा** कानून द्वारा निश्चित किये गये तरीकोंसे" (अध्याय १, धारा ३), आदि, आदि। इसलिये विधान बराबर भविष्य के उन (बुनियादी कानूनों से –अनु०) **सम्बंधित** कानूनों का हवाला देता है जो हाशिये पर लिखी इबारत को अमली रूप देंगे और इन अप्रतिबंधित स्वतंत्रताओं के उपभोग को इस प्रकार नियमित करेंगे कि वे न तो एक दूसरे के साथ टक्कर खायेंगी और न पब्लिक सुरक्षा के साथ। और बाद में, व्यवस्था के तमाम मित्रों ने सम्बंधित कानूनों की रचना की और उन तमाम स्वतंत्रताओं को इस तरह से नियमित किया कि उनका उपभोग करनेमें पूँजीपति वर्ग को दूसरे वर्गों के समान अधिकारों के कारण बाधा नहीं पड़ती। जहाँ पर वह "दूसरों को" ये स्वतंत्रताएँ कतई नहीं देता या ऐसी परिस्थितियों के अन्दर उपभोग करने की इजाजत देता है जो कि पुलिस के तरह-तरह के फन्दे ही होती हैं, तो यह हमेशा केवल "**पब्लिक की सुरक्षा**" के हित में, यानी, पूंजीपति वर्ग की सुरक्षा के हित में होता है, जैसा कि विधान में निर्देशित किया गया है। नतीजा यह होता है कि दोनों ही पक्ष पूरे औचित्य के साथ **विधान** में अपील करते हैं व्यवस्था के मित्र भी, जिन्होंने इन तमाम स्वतंत्रताओं को ताक पर रख दिया है, और जनवादी भी जो उन सबको वापिस करनेकी माँग करते हैं। क्योंकि विधानके प्रत्येक पैराके अन्दर उसका प्रतिवाद (विरोधी-तत्व–अनु०), उसीका अपना राजभवन (अपर हाउस) और साधारण-भवन (लोअर हाउस) मौजूद है, अर्थात आम इबारत में तो स्वतंत्रता लिखी गयी है, लेकिन हाशिये की टिप्पणीमें स्वतंत्रताको रद्द कर दिया गया है। इस तरह, जब तक कि आजादीके **नाम** की इज्जत की जाती थी और सिर्फ उसके वास्तविक उपभोग को रोका जाता था—निस्सन्देह, कानूनी ढंग से ही—तब तक, स्वतंत्रता के **दैनिक** अस्तित्व पर चाहे कैसे ही घातक प्रहार किये गये हों लेकिन उसका वैधानिक अस्तित्व बरकरार और अक्षत बना रहा।

इस विधान को इतने चतुर ढंग से अभेद्य बनाया गया था, लेकिन फिर भी वह एचीलीज की तरह, एक स्थल पर-एड़ी में नहीं, बल्कि सिर में,—अथवा कहना चाहिए कि अपने दोनों सिरों में- एक तरफ **धारा सभा** (लेजिसलेटिव असेम्बली) और दूसरी तरफ **राष्ट्रपति** (प्रेसीडेण्ट)—में, जिनमें वह खतम हुआ, भेद्य था। विधान के ऊपर एक नजर डाल जाइए तो आप देखेंगे कि उसके केवल वही पैरा पूर्ण,

निश्चित, विरोध-हीन, तोड़-मरोड़ से परे हैं जिनमें धारासभा के साथ राष्ट्रपति (प्रेसीडेण्ट) का संबंध निर्धारित किया गया है। क्योंकि यहाँ पर पूंजीवादी प्रजातंत्रवादियों द्वारा खुद अपनेको बचाकर रखनेका प्रश्न था। विधानकी ४५ से ७० तक धाराएँ इस तरहसे लिखी गयी हैं कि राष्ट्रीय असेम्बली राष्ट्रपतिको वैधानिक रूपसे हटा सकती है, लेकिन राष्ट्रपति राष्ट्रीय असेम्बलीको केवल अवैधानिक रूपसे, स्वयं विधान को ही ठोकर मारकर हटा सकता है। यहाँ पर, इसलिए, वह अपने बल-पूर्वक विध्वस के लिए चुनौती देता है। वह न सिर्फ अधिकारोंके बँटवारेको पवित्रताका जामा पहना देता है बल्कि, १८३० के चार्टरकी तरह, वह उस बँटवारेको बढाकर एक असहनीय विरोधका रूप दे देता है। १८४८ के विधान में **वैधानिक अधिकारों का खेल**-जैसा कि कानून बनानेवाले और उन्हें लागू करने वाले अधिकारियों की पार्लामेण्टी तू-तू-मैं-मैं के बारेमें गिजोने कहा था—लगातार सब कुछ एक दाँव पर लगाकर खेला जाता है। एक तरफ तो सार्वजनिक मताधिकार के आधार पर चुने गये और फिर से चुने जा सकने वाले ७५० जनता के प्रतिनिधि हैं, वे मिलकर एक ऐसी राष्ट्रीय असेम्बली बनाते हैं जिस पर किसी प्रकार का नियंत्रण नहीं हो सकता, जिसे कोई भंग नहीं कर सकता, जिसे कोई विभाजित नहीं कर सकता, एक ऐसी राष्ट्रीय असेम्बली जो कानून बनाने के संबंध में सर्व शक्तिशाली है, जो अन्ततः युद्ध, शान्ति और व्यापारिक सन्धियों का निर्णय करती है, जिस अकेलीको आम माफी देने का अधिकार है, और जो अपने स्थायित्व के कारण रंगमंच पर हमेशा आगे रहती है। दूसरी तरफ, राष्ट्रपति है जिसे तमाम शाही अधिकार प्राप्त हैं, जिसे राष्ट्रीय असेम्बली से स्वतंत्र रूपसे अपने मंत्रियों को नियुक्त करने और बरखास्त करने के अधिकार हैं, जिसके हाथ में कार्यकारिणी की ताकत के तमाम साधन हैं. वह तमाम जगहों पर तैनातियाँ करता है और इस प्रकार फ्रांस में कमसे कम १५ लाख लोगोंकी किस्मत का वारा-न्यारा करता है, क्योंकि हर श्रेणी के ५ लाख अधिकारियों और अफसरोंके ऊपर इतने ही लोग निर्भर करते हैं। उसके (राष्ट्रपतिके—अनु) पीछे तमाम सशस्त्र फौज है। उसे व्यक्तिगत गुनहगारोंको क्षमा प्रदान करनेका, राष्ट्रीय गार्डोंको मुअत्तिल कर देनेका, काउंसिल ऑफ स्टेट (राज सभा—अनु) की सहमतिसे स्वयं नागरिकों द्वारा चुनी गयी आम, केण्टनकी और म्युनिसिपल काउंसिलों को खतम कर देने का विशेषाधिकार है। दूसरे देशोंके साथ तमाम सन्धियोंके संबंधमें पहलकदमी करने और उनका निर्देशन करनेका अधिकार सिर्फ उसीके हाथमें है। जब कि असेम्बली अपना काम लगातार खुले रंगमंच पर करती है और वह दिनके तीव्र प्रकाशके सन्मुख निरावरण रहती है, वह (राष्ट्रपति—अनु०) एलीशियन (यूनानी पौराणिक कथाओंके स्वर्गके —अनु.) नन्दनवनमें गुप्त जीवन बिताता है, और उसकी आँखों और दिलके सामने विधानकी ४५ वीं धारा रहती है जो नितदिन कहती रहती है. "भैय्या, तुम्हें मरना होगा!" तुम्हारे चुनाव के बादके चौथे वर्षके मईके सुन्दर मासके दूसरे रविवारको तुम्हारी सत्ताका अन्त हो जायगा! तब तुम्हारे यश-वैभवकी इति हो जायगी, यह

मशीन द्वारा नहीं होगा, और अगर तुम्हें किसीका कर्जा चुकाना है तो समय रहते ही उसे विधानके अनुसार तुम्हें जो ६ लाख फ्रैंकका वेतन मिलता है उससे चुका दो, लेकिन अगर, संयोगसे, तुम मईके सुन्दर मास के दूसरे सोमवार को क्लिशी * जाना पसन्द करते हो तो बात दूसरी है। इस तरह, जब कि विधान राष्ट्रपति को वास्तविक सत्ता देता है, राष्ट्रीय असेम्बली के लिये वह नैतिक सत्ता हासिल करने की कोशिश करता है। इस बात के अलावा भी कि नैतिक सत्ता को कानून के पैराग्राफो से नहीं पैदा किया जा सकता, विधान राष्ट्रपति के तमाम फ्रासीसियो द्वारा प्रत्यक्ष वोट से चुने जाने की व्यवस्था करके अपने को एक बार फिर मुअत्तिल कर लेता है। जब कि राष्ट्रीय असेम्बली के सबंध मे फ्रास के वोट ७५० सदस्यो के बीच बंटे हुए हैं, यहॉ पर, उसके विपरीत, वे सब एक व्यक्ति पर केन्द्रित हैं। जब कि जनता का प्रत्येक अलग प्रतिनिधि केवल इस या उस पार्टीका, इस या उस शहर का, इस या उस सीमा-प्रदेश का, या केवल ७५० मे से किसी एक को चुनने की आवश्यकता का ही प्रतिनिधि होता

[पृष्ठ १२ से आगे]

अपने देशकी ९० फी सदीसे ज़्यादा जमीनपर जनता की जनवादी सरकार कायम करनेवाली वियतनाम की जनता फ्रासीसी साम्राज्यवादियो की फौजी दस्तन्दाजी के खिलाफ—जो अपने कठपुतले बाओ दाई के साथ निकट गठजोड़ा बना रहे हैं—सफलता पूर्वक लड रही है। बर्मा की जनता ब्रिटिश औपनिवेशिको और पूंजीवादी राष्ट्रवादी शासक गुटो के बीच सौदे के परिणाम स्वरूप मिली झूठी आजादी से धोखेमे नहीं पडी है। इन देशो मे और पूर्वके दूसरे देशोमे सामन्ती और जमीदारी शोषणके खिलाफ लगातार किसान आन्दोलन और बढता हुआ मजदूर आन्दोलन इस बातका पक्का सबूत पेश करता है कि उपनिवेशो और अर्द्ध-उपनिवेशो की आम जनता आजादी और स्वाधीनताके लिये अपनी लडाईको अन्तिम विजय तक डटकर चलाने के लिए कमर कस चुकी है।

सारी दुनियाकी मेहनतकश जनता और प्रगतिशील लोग जानते है कि सोवियत सघ जनताके जनतत्री और महान चीनी जनताने अपनी ऐतिहासिक विजये सिर्फ इसी बातकी बदौलत हासिल की है कि वे महान स्तालिन द्वारा बताये रास्ते पर चल रहे है। उपनिवेशो और अर्द्ध-उपनिवेशोकी जनता यह भी जानती है कि राष्ट्र-सघमे और दूसरे औद्योगिक सगठनोमे सोवियत सघके प्रतिनिधि उसकी स्वतंत्र और स्वाधीन हस्तीके हक की जो सुसगत और दृढताके साथ रक्षा करते हैं वह बड़ी और छोटी तमाम जनता के राष्ट्रीय अधिकारो के प्रति आदर के स्तालिनी सिद्धान्तो का प्रगट रूप है। यही वजह है कि पृथ्वी के हर भाग मे मेहनतकश जनता **जोसेफ़ स्तालिन** के नाम को गहरे आदर और प्रेम के साथ लेती है—उनका नाम वह अपने सबसे अच्छे दोस्त और शिक्षक के रूप मे लेती है।

[तास के सौजन्य से]

* पेरिस में कर्जदारों का जेल—स.

है जिससे कि न तो उद्देश्य की और न उस व्यक्ति की ही नजदीकसे जॉच-पड़ताल की जाती है; तब वह (राष्ट्रपति—अनु०) राष्ट्र का चुना हुआ व्यक्ति होता है और उसके चुनाव का काम वह तुरुप है जिसे पूर्ण रूपसे स्वाधीन जनता हर चार वर्ष मे एकबार चलती है। राष्ट्रके साथ चुनी हुई राष्ट्रीय असेम्वली का संबंध अति-भौतिक होता है, लेकिन चुने हुए राष्ट्रपति का संबंध उसके साथ व्यक्तिगत होता है। राष्ट्रीय असेम्बली अपने अलग-अलग प्रतिनिधियोंके द्वारा निस्सन्देह राष्ट्रीय भावनाके विभिन्न पहलुओं को प्रदर्शित करती है, किन्तु राष्ट्रपति में तो यह राष्ट्रीय भावना स्वयं मूर्तिमान हो जाती है। असेम्बली के मुकाबले मे उसे जैसे एक दैवी अधिकार प्राप्त होता है; वह जनता की कृपासे राष्ट्रपति होता है।

सागर की देवी, थीटिस ने भविष्यवाणी की थी कि एचीलीज अपनी पूर्ण यौवनावस्था में मर जायगा। विधान को भी—जिसका एचीलीज की तरह अपना कमजोर स्थल था—एचीलीज की ही भांति पहले से भय हो रहा था कि उसे जल्दी ही मृत्यु के मुँहमें जाना होगा। शाहपंथियो, वोनापार्टवादियो, जनवादियो, कम्यु-निस्टो के कानून बनाने के अपने महान कलात्मक कार्य की समाप्ति के नजदीक पहुँचने के साथ-साथ, उसी मात्रा में उनका अहंकार, और साथ ही उनकी अपनी बदनामी दिनों-दिन किस प्रकार बढ़ती जा रही थी, यह देखने के लिये विधान बनानेवाले निर्मल प्रजातंत्रवादियो के लिए अपने आदर्श प्रजातंत्र के ऊंचे स्वर्ग से नीचे की दूषित दुनिया की ओर एक दृष्टि डाल लेना ही काफी था—इसके लिये थीटिसको सागर छोडने और उन्हें भेद बताने की जरूरत न थी। उन्होंने विधानकी एक पकड़के जरिए, उसकी धारा १११ के जरिये किस्मतको धोखा देनेकी कोशिश की। उसके अनुसार आवश्यक था कि विधानको दोहरानेके प्रत्येक प्रस्तावको, क्रमिक रूपसे पूरे एक-एक महीनेके अन्तरसे होने वाली तीन बहसोंमे कमसे कम तीन-चौथाई वोटोंका समर्थन मिलना चाहिए—साथ ही यह भी शर्त जुडी हुई थी कि उसमें राष्ट्रीय असेम्बली के कमसे कम ५०० सदस्यो को वोट देना चाहिए। इस तरह से उन्होंने केवल इस बात की निकम्मी कोशिश की कि पार्लामेण्ट में जब वे अल्पमत मे होजायॅगे—जैसा कि उन्हें खुद अपने मस्तिष्क की ऑखसे भविष्यमें होता दिखलाई दे रहा था—तब वे इस सत्ताका कैसे इस्तेमाल करेंगे, जो वर्तमान समयमें, जब कि पार्लामेण्टके अन्दर उनका बहुमत था और उनके कब्जेमें सरकारी अधिकारोंके तमाम साधन थे, नितदिन अधिकाधिक उनके कमजोर हाथोंसे खिसकती जा रही थी।

एक पैराग्राफ्मे "जागरूक" और "देशभक्त" को न्याय की सर्वोच्च कचहरी (हाई कोर्ट) की—जिसका उसने इसी उद्देश्य से निर्माण किया था-सुकुमार और परिश्रम देखभाल मे सौंप देनेके बाद, अन्तमें, एक नाटकीय पैराग्राफ मे, विधान अपने आपको "तमाम फ्रासीसी जनताकी और प्रत्येक फ्रासीसी की जागरूकता और देशभक्तिकी भावनाको सौंप देता है।

["लुई बोनापार्ट के अठारहवें ब्रूमेयर से";
फुटनोट भी उसके मॉस्को संस्करणसे ही लिये गये हैं। -स०]

★

शान्ति और आज़ादी की लड़ाई में फ्रांसीसी कम्युनिस्टों के काम *

मारिस थोरे

शान्तिके संघर्ष को बढाते समय फ्रासके कम्युनिस्टों को राजनीतिक प्रचार बडे पैमाने पर चलाना चाहिये। उन्हे सोवियत-विरोधी युद्धकी तैयारियो के खिलाफ और वियतनाम मे युद्ध जारी रखनेके खिलाफ असली कार्रवाई भी करनी चाहिये।

युद्ध-सामग्रियो के उत्पादन के खिलाफ राजनीतिक जन संघर्ष को आगे बढाने के सवाल को पार्टी की केन्द्रीय कमिटी के मौन्ट्रीयल सम्मेलन मे उठाया गया था। इस फैसले के व्यावहारिक अमल का जाहिर परिणाम हुआ है, लेकिन हमें अभी और भी ज्यादा हासिल करना है।

आज फ्रास थोडी मात्रा में युद्ध-सामग्रियाँ पैदा करता है। फ्रांस निवासियो को, जिनका तोपों के चारे की तरह इस्तेमाल होगा, पुराने अमरीकी हथियारो से लैस किये जाने की योजना है। इन पुराने अमरीकी हथियारो को खरीदने के लिये युद्ध वजट के अरबों फ्रैंक इस्तेमाल किये जायँगे।

गोकि यह सवाल कि युद्ध-सामग्री के उत्पादन में लगे हुए मजदूर क्या कर सकते है, मुख्य सवाल नही है, लेकिन फिर भी उसकी अवहेलना नहीं की जा सकती।

इस सवाल का हमारा जवाब होना चाहिये हमारे हथियार-घर, सरकारी और कुछ निजी कारखाने, नागरिकों के इस्तेमाल की चीजों का उत्पादन कर सकते हैं।

हॉ, गृहणियो के लिये बर्तन-भांडे उत्पादित किये जा सकते हैं, खेती के लिये ट्रैक्टरो, और उद्योग के लिये मशीनोका उत्पादन हो सकता है और इस तरह उत्पादन और श्रम के उपजाऊपन को बढाया जा सकता है और सही माने मे कारखानोके बने मालो की कीमतो मे कमी की जा सकती है। फ्रास भी और ज़्यादा जहाज बना सकता है और मोटर-लारियॉ और हवाई जहाजो का उत्पादन भी बढा सकता है।

हमे यह समझ लेना चाहिये कि फ्रासीसी सरकार अमरीकी साम्राज्यवाद के हाथो मे आजाद इलाकोंको—ऐसे इलाको को जो सही मानें में विदेशी कब्जे मे होंगे—पूरी तरह से सौंप देगी। मुख्य सवाल युद्ध सामग्रियो को लाने-लेजाने का है।

क्या फ्रास की जनता मौत के हथियारो को अपने देश में उतारने और उसके अन्दर से उसका आवागमन होने देगी?

* फ्रासीसी कम्युनिस्ट पार्टीके दिसम्बर-प्लेनम (बडी मीटिंग) में पार्टीके प्रधान मंत्री, का. थोरेके अन्तिम भाषण का अंश—सं.।

लाजिमी तौरसे शान्तिका संघर्ष अधिकाधिक एक राजनीतिक संघर्षका, विशाल जनताके संघर्षका रूप लेता जायेगा।

क्या यह कहा जा सकता है कि यदि केवल गैर-फौजी सामानो का ही लाना-लेजाना होने लगेगा, तो जहाजी मजदूर, बन्दरगाहोके मजदूर और रेलोंके मजदूर बेकार हो जायेगे ? एलजीयर्स और मार्सेल्सके बन्दरगाहोंके मजदूरोको वियतनाममें युद्धके खिलाफ अपने बहादुराना सघर्षमें तमाम मेहनतकश जनताका और शान्तिके चाहनेवालों का समर्थन हासिल है।

युद्धके खिलाफ संघर्ष की, फौजीवाद और औपनिवेशिक नीतिके खिलाफ संघर्ष की फ्रांसके मजदूर वर्गके आन्दोलनमें एक अत्यंत उच्च परम्परा है। फ्रांसीसी मजदूर वर्गके आन्दोलन का केवल नकारात्मक रूप ही नहीं रहा है।

सघर्षकी कठिनाइयो से दो-चार होते ही पीछे हटने लगने वाले कमजोर लोगोंको लेनिनके इन शब्दोको याद रखना चाहिये कि कुर्वानियोके बिना कोई भी क्रान्तिकारी सघर्ष नहीं हो सकता है, न कभी जीत हो सकती है।

असली हालतो की ओरसे अपनी आँखों को बन्द कर लेना स्वयं अपने को, मजदूर वर्गको और जनताको धोखा देना है।

इससे बिना भय खाये कि यह संघर्ष कुर्वानियोंकी मांग कर सकता है, कम्युनिस्टो का कर्तव्य है कि शान्तिके लिये संघर्षको आगे बढ़ायें।

लेकिन शान्तिके लिये लड़ते समय फ्रासकी कम्युनिस्ट पार्टीको आर्थिक संघर्ष को नही भूल जाना चाहिये।

ट्रेड यूनियनोके सदस्योंने जिन कम्युनिस्टोके ऊपर ट्रेड यूनियनोके नेतृत्वकी जिम्मेदारी सौंपी है उन्हे मेहनतकश जनता की मांगोंको जीतनेके संघर्षमें हमेशा सबसे आगे होना चाहिये।

क्या यह माना जा सकता है कि केवल बातो और सभाओसे मागें जीती जा सकती हैं ? सबसे महत्वपूर्ण चीज़ जनताकी जत्थेबन्दी करना है। सघर्षही फैसला करता है।

इसका मतलब है कि शान्तिके सघर्षको इस तरह संगठित करना चाहिये कि उसमें मेहनतकश जनताके सभी हिस्से, सभी जन-संगठन, और, इन सबसे भी अधिक, सभी ट्रेड यूनियने शामिल हो।

इन्फॉर्मेशन ब्यूरो (कम्युनिस्ट पार्टियोंके सूचना केन्द्र) के प्रस्तावोंमे भी यहीं बताया गया है। उनमे जोर दिया गया है कि इस सघर्षमे सभी बुद्धिजीवियो, राज-नीतिक और सार्वजनिक जीवनके मशहूर लोगोंको लाना चाहिये।

शाति के लिये सगठित किये गये बैलट (वोटो) ने दिखा दिया है कि बहुत बडी सम्भावनाएँ मौजूद है। अक्सर इन सम्भावनाओका पूरी तरह इस्तेमाल नहीं किया जाता है। शाति के पक्षमे जो ७० लाख वोट पड़े थे, उनके अलावा भी लाखों और वोट इकट्ठे किये जा सकते थे।

शान्ति और आजादी के लडाको का संगठन आज अपने कामको जर्मनी के फिर से हथियार वन्द किये जानें के खतरे के सवाल पर केन्द्रित कर रहा है।

शान्ति और आजादी के लड़ाको की दूसरी कॉग्रेस की तैयारियॉ हो रही हैं। इस सगठन द्वारा चलाये जानेवाले इस सघर्षमें सभी कम्युनिस्टो को हिस्सा लेना चाहिये।

उन्हें स्त्रियो और युवको के साहसी कामोका समर्थन करना चाहिये। युद्ध के खिलाफ संघर्ष की उनकी भी एक गौरवशाली परम्परा है।

पिछले सप्ताह क्रिश्चियन युवको के नेता मुझसे मिले थे। उन्होने कहा कि हमारी पार्टी और असेम्वली के हमारे सदस्य उनकी इन मागोका समर्थन करें .

फौजी नौकरीकी तै शर्तें; ज़्यादा तनखा, छुट्टीपर जानेवालों के लिये मुफ्त यात्रा का प्रवंध; चिट्ठी-पत्री मुफ्त भेजनेका अधिकार; सिपाहियोंके परिवारोके लिये ज़्यादा भत्ता, और अच्छा खाना।

मैंने उन युवक कॉमरेडोंसे कहा

"न केवल हम तुम्हारी मागों का समर्थन करते हैं—हमने उन मांगों को निश्चित भी कर लिया है। उदाहरणके लिये १२ महीनेकी फौजी नौकरीके बाद फौजी नौकरीसे छुट्टी, प्रतिदिन ३० फ्रैंक का भत्ता, मुफ्त तम्बाकू; खानेके लिये ज़्यादा भत्ता, और प्रतिदिन आधी लिटर शराब।"

हमारे सदस्यो ने असेम्बली में भी ऐसे ही प्रस्तावो को रखा है और उनके लिये हम लडाई जारी रखेंगे

मेहनतकश जनताकी संयुक्त कार्रवाई

संघर्षको आगे वढानें के लिये संयुक्त कार्रवाई की जरूरत है। असलियत आज यह है कि सयुक्त कार्रवाइयॉ राजनीतिक क्षेत्रकी अपेक्षा आर्थिक क्षेत्रमें ज़्यादा होती हैं।

इसका कारण यह हो सकता है कि युद्धकी नीति और मेहनतकश जनताकी हालतोके वीच क्या सम्वंध है, जनताकी फौरी मागोके संघर्ष और आजादी तथा शान्तिके आम सघर्षके बीच क्या सम्वंध है, इसे काफी साफ तरीकेसे अभी तक कम्युनिस्टोंने जनताको नहीं वताया है।

आर्थिक मागोके लिये संघर्षको आगे वढ़ाने और विभिन्न ट्रेड यूनियनों तथा उनके सदस्योंकी सयुक्त कार्रवाइयोको मजवूत वनानेके लिये तथाकथित 'फोर्स ओवरिये' के फूट परस्त नेताओकी—और पीली ट्रेड यूनियनोके नये अन्तरराष्ट्रीय संगठनकी भी-सख्तीसे आलोचना करना अभी भी आवश्यक है।

हाल ही में "मॉन्दे" मे छपा नीचे लिखा वयान जिक्र करने लायक है:

"यदि अपनी अयोग्यता की वदौलत सोशल डिमोक्रेटिक ट्रेड यूनियने मजबूर होकर मेहनतकश जनता को धीरे-धीरे स्तालिनवादियो के असर मे जाने देती हैं, तो मार्शल योजना और एटलान्टिक पैक्ट का खात्मा हो जाएगा।"

जिससे इस पूंजीवादी पत्रकार को खौफ है, वह चीज सोशलिस्ट पार्टी के नेताओ और "फोर्स ओवरिये" के वावजूद मजदूरो की सयुक्त कार्रवाइयो के जरिये होकर रहेगी।

मजदूर वर्ग की एकता के सवाल पर कॉ. तोग्लियाती की रिपोर्ट के आधार पर मंजूर किये गये इन्फार्मेशन व्यूरो के प्रस्तावने सभी मुख्य वातो के वारे मे, फ्रासकी पार्टी नीति को सही सावित किया है। खास तौर से उसने वतला दिया है कि मजदूर वर्ग, फ्रास और प्रजातंत्र के साथ गद्दारी करनेवाले सोशलिस्ट नेताओं की आलोचना मे रत्ती भर भी कमी किये विना सयुक्त कार्रवाई के लिये पार्टी द्वारा सोशलिस्ट मजदूरो का आह्वान करना बिल्कुल ठीक है। इस आलोचना के बारे में यदि कुछ और कहना है तो वह यही है कि उसे और भी वढ़ाना चाहिये।

सोशलिस्ट पर्टी पूरी तरह छिन्न-भिन्न होनेकी हालतमें है, संकटमें फंसी हुई है, जनताके ऊपरसे उसका असर खतम हो रहा है, उसकी सदस्य सख्या घट रही है, उसके नेता, यहां तक कि वे नेता भी जिन्होंने सबसे कम गद्दारी की है अपनी प्रतिष्ठा खो रहे हैं।

फिर भी जैसा कि पार्टीकी केन्द्रीय कमिटीके प्रस्तावमें ठीक ही बताया गया है, इसका मतलव यह नही होता कि सोशल डिमोक्रेसी अव मौजूद ही नही है, कि वह आखिरी सास ले रही है।

सोशलिस्ट पार्टी में थोड़े ही मजदूर रह गये हैं, लेकिन सोशल-डेमोक्रेटिक विचारधारा मजदूर-वर्ग के कुछ हिस्सो में और उन मध्यवर्गियो में अभी भी मौजूद है जो सोशलिस्ट पार्टी के नेताओंका समर्थन करते हैं।

नीचे की वातो पर जोर देना आवश्यक है.

दक्षिण-पंथी सोशलिस्ट नेता न सिर्फ अपने यहाँ के पूंजीपतियों के गुर्गे हैं, वल्कि वे अमरीकी सम्राज्यवाद के भी खुले दलाल बन गये हैं।

उन्हीं की तरह, "फोर्स ओवरिये" के और दूसरी फूट डालकर वनायी गयी छिट-पुट ट्रेड यूनयनो के नेता भी व्राउनो और उसी की तरह के दूसरे अमरीकी फेड-रेशन ओफ लेवर (मजदूर सघ) और काग्रेस ऑफ लेवर आर्गनाईजेशन्स (मजदूर सगठनों की काग्रेस) के दलालों की मातहती मे काम करते हैं।

पार्टी की केन्द्रीय कमिटी द्वारा मंजूर किये गये प्रस्ताव ने केथोलिक (धर्म को माननेवाले) मेहनतकशो की ओर सहयोग के लिए हाथ वढाने की हमारी नीति के सहीपन को सावित कर दिया है। इस नीति का पालन करते समय न तो हम अपने भौतिकवादी और गैर-मजहवी (धर्मातीत सिद्धान्तों से पीछे हटते हैं और न गिर्जों की

पादरीशाही के खिलाफ, जोकि फ्रांस में प्रतिक्रिया की मुख्य संगठित शक्ति है—अपने राजनीतिक संघर्ष को खतम करते हैं।

यह प्रस्ताव सभी प्रजातंत्रवादियों, देशभक्तों, फ्रांसके सभी स्त्री-पुरुषोंका एक जुट कायम करनेकी नीतिकी उपयुक्तता पर भी मुहर लगाता है।

सरकारके सवाल पर इन्फार्मेशन ब्यूरोका प्रस्ताव बताता है कि शान्तिकी रक्षाके लिये होनेवाला जन-आन्दोलन जनवादी एकताकी सरकार कायम करनेके नारे से भी ज़्यादा व्यापक नारेको जन्म दे सकता है।

इस तरह इस बहुत ही महत्वपूर्ण सवाल पर भी हमारी पार्टी की नीति सही ठहरती है।

सवाल १९३४ और १९३६ की हालत में पीछे लौटजाने का नहीं है। सवाल है—जनताकी कार्रवाईयों के जरिये जो कि इसबार भी निर्णायक होंगी—सत्ता पर एक ऐसी सरकार को बैठानेका जो शान्तिकी और फ्रांस की आजादी की रक्षा करेगी।

अनुभव हमें सिखाता है कि पूंजीपति वर्ग मजदूर वर्ग के आन्दोलन के अन्दर अपने दलालो को भेजता है, कि वह कुछ ऐसे राजनीतिज्ञों को जो इत्तफाक से ही मजदूर-वर्ग की पार्टियों में पहुँच गये हैं घूस देने या धमकाने में भी सफल हो जाता है।

ऐसे मामले मे क्या किया जाना चाहिये? वास्तविकता से भाग जाना चाहिए, उसकी ओर से अपनी आँखें बन्द करलेनी चाहिये? नहीं, गुप्तचरों और भड़कानेवालो का भण्डा-फोड किया जाना चाहिये और उन्हें निकाल बाहर कर देना चाहिये।

बुदापेस्ट और सोफियाके मुकदमोंके सबको को देख कर और स्वयं अपने अनुभवों को भी देखकर, हम पाते हैं कि गुप्तचर और भड़कानेवाले लोग लुक-छिपकर जिम्मेदार पदों तक पहुँच जानेने में केवल इस कारण समर्थ होते हैं कि पार्टीके विभिन्न सगठनो ने जनवादी केन्द्रीयताके सच्चे सिद्धान्तो को छोड़ रखा है।

प्रमुख सस्थाओं का चुनाव करने के तरीके को हमेशा अमलमें नहीं लाया जाता है। पार्टी सदस्य सभी जगह पार्टी मीटिंगो और सम्मेलनो में अपने कामोकी रिपोर्ट नहीं देते। इससे नीचेके सगठनोंके लिए नियंत्रण रखना कठिन हो जाता है।

जब गलतियो को सुधारना होता है तो यह काम आम तौरसे शासनात्मक तरीको पर किया जाता है; खुली और सीधी बहस की बोल्शेविक प्रणाली पर अमल नहीं किया जाता।

यह नुकसानदेह भावना, दलबन्दी और गुटबन्दी की ओर ले जा सकती है। और पुलिसके उकसावा-दलालो के लिये दलबन्दियॉ बड़ी उपजाऊ जमीन होती हैं, क्योंकि ऐसे मामलोंमें गुटबाज एक दूसरेको बचाते हैं और पार्टी अनुशासनकी जगह गुटबन्दी ले लेती है।

पार्टी के सिद्धान्तों की पहरेदारी के लिये

हमारी पार्टी में कितने ही नये सदस्य लिये गये है। (जर्मनी से) मुक्ति के वाद से ७ लाख सदस्य हमारी पार्टी में शामिल हुए हैं। उनमे से कितने ही संघर्ष के दौरान मे या उसके फौरन ही बाद शामिल हुए थे।

बहुत पहले, १९४५ मे ही हमनें नये सदस्यो को लेनिनवाद की भावना मे शिक्षित करने और पुरानोंको भी पुन शिक्षित करने के लिये विस्तृत सैद्धान्तिक काम करने की जरूरतके प्रश्न पर बहस की थी। लेकिन इस क्षेत्रमें अभी भी बहुत काम करना है।

तेज होते हुए वर्ग-संघर्ष की हालतो मे अधिक ढुलमुल लोग लाजिमी तौर पर डगमगाते हैं और भाग खडे होते हैं। वे खौफ खाते हैं और मैदानमें उतरनेसे डरते हैं।

यह चीज उन लोगोपर खास तौरसे लागू होती है जो मध्यवर्गसे, तुलनात्मक रूपसे शान्तिके कालमें पार्टीमे आये हैं। ऐसी हालत कुछ शाखाओंमे देखी जा सकती है।

पार्टी सामाजिक वातावरणसे अलग नहीं है। व्यक्तिगत सदस्य किसी न किसी रूपमें मजदूर-वर्ग-विरोधी विचारधाराके आगे झुक जाते है। इस तरह मध्यवर्ग अपनी शिक्षाके रूपो और अपनी ढुलमुलाहटको कम्युनिस्ट पार्टीके अन्दर ले आता है।

उदाहरण के लिये मजदूरों के बीच सोवियत रूस और जनवादी देशों के बारे मे ढुलमुलाहट या शंका मुश्किल से ही कभी दिखलाई देती है। लेकिन ऐसी शंकाए वैसे कुछ लोगो मे देखी जा सकती हैं जो मध्यवर्ग से आते हैं।

और ये शंकाएँ अक्सर उनके लिए संघर्ष से बचने के एक बहानेका काम करती हैं।

हमारा विश्वास है कि हमें ऐसे लोगोको अपने अन्दर नहीं रखना चाहिये जिनके लिये मजदूर वर्ग, उसके हित, उसके उद्देश्य और उसकी कम्युनिस्ट पार्टी पूरी तरहसे गैर हैं।

हमारी पार्टीके अस्तित्वका उद्देश्य सर्वहारा वर्गकी डिक्टेटरशिप (अधिनायकत्व) कायम करनेके संघर्षको चलाना है। मध्यवर्गसे आये हुए उन पार्टी मेम्बरोंको जो इस उद्देश्यसे सहमत नहीं हैं, जो पार्टीके सिद्धान्तोंके वारेमें शंका प्रकट करते हैं, हम पार्टीमें नहीं रखेंगे।

हम उन्हें अपने अन्दर नहीं रखेंगे। उल्टे, हम उनसे अपना पिण्ड छुडाने की कोशिश करेंगे। जैसा कि लेनिनने कहा है, वे आजादी चाहते हैं ताकि कीचडमें लोट सकें। बहुत अच्छा! उन्हें कीचड़में लोटने दो।

लेकिन उन्हें हमारी आजादी को भी—अपनी पार्टीको अवसरवाद और सोशल डिमोक्रेटवाद के दलदलमें घसीटे जानेसे रोकने की आजादीको भी-मानना चाहिये। इस दलदलसे अधिकाधिक दूर होनेके लिए हमने ३० वर्षोंसे भी ज़्यादा दिनो तक निरन्तर संघर्ष किया है। हम पार्टी नीतिके लिये लडेंगे।

हमारे नियमोंके मुताबिक किसी निर्णय पर पहुँचने के पहले पार्टीके अन्दर प्रत्येक प्रश्न पर बहस करनेकी पूरी आजादी है। उसके बाद फैसलो का पालन हर किसीको बिना किसी शर्तके करना चाहिये।

बेशक, बहस उसूलों के आधार पर होना चाहिये और बहस करने की आजादी का इस्तेमाल हमें इस तरह नहीं होने देना चाहिये कि दुश्मन उसका अपने लिये फायदा उठाये।

हाँ, यह जरूरी है कि उन पार्टी सदस्योंको जो गलती पर हैं, हमें धैर्यके साथ समझाना चाहिए, उन्हें कायल करने के लिए वजनदार दलीलोकी सहायता से, बिना उन्हें नाराज और विरोधी बनाये, लेकिन बिल्कुल ही सीधे-सीधे हर चीज को हमे समझाना चाहिए।

लेकिन बिना राई-रत्ती भी डगमगाये पार्टी नीति के लिये लड़ना, किसी भी भटकाव--अवसरवादिता या तंगनजरी--के खिलाफ लड़ना, जरूरी है।

जब कभी अमली सवालों के बारे में मतभेद होते हैं, तो वे आसानी से हल हो जाते हैं। और सवाल राजनीतिक मतभेद का हो तो हमें उस पर बहस करने से नहीं कतराना चाहिए और तब तक उस बहस को नहीं छोड़ना चाहिये जब तक कि वे मतभेद दूर नहीं हो जाते, जब तक कि पार्टी नीति की फतह नहीं हो जाती।

पार्टीके अन्दर दो नीतियाँ नहीं हो सकतीं। पार्टीका एक रास्ता है—क्रान्तिकारी, सर्वहाराका, कम्युनिस्ट पार्टीका लेनिन-स्तालिनवादी रास्ता। इस आम रास्तेके बारेमें किसीभी पार्टी संगठनमें सवाल नहीं उठाया जा सकता। न तो पार्टीकी एक भी शाखा, या कोई पार्टी संगठन इसकी इजाजत देगा।

अन्तमें, आलोचना और आत्म-समालोचनाकी जरूरत पर एक बार फिर—और हमेशा—जोर देना चाहिये।

बहुत सारी कमजोरियों का कारण हमे आलोचना और आत्मसमालोचना के भयमें मिलता है।

घुटे हुये अवसरवादियो के इस बहाने की आड़ कोई न ले कि हमारी गलतियो और कमजोरियो की खुली आलोचना का तथा-कथित इस्तेमाल दुश्मन कर लेगा और हमारे रास्ते में रोड़ा अटकाने की कोशिश करेगा।

जैसा कि लेनिनने कहा है - भॉडोंको अपना भॉड़पन दिखाने दो! आत्म-समालोचना एक मजबूत और गम्भीर पार्टी की पहिचान है, ऐसी पार्टीकी जो जनता में विश्वास रखती है और जिसे जनता का विश्वास हासिल है, इसलिये ऐसी पार्टी की जो कठिनाइयो से नहीं भागती और जो स्वयं अपनी ही गलतियों से सबक सीखने मे समर्थ होती है ताकि इन गलतियोंके आधार पर मजदूर वर्ग को और आम मेहनतकश जनता को शिक्षित करे।

लेकिन, समालोचना के लिये पार्टी दृष्टिकोण की जरूरत है।

कुछ दिन पहले एक अखबार-नवीस ने मुझे आश्वासन दिया था कि हमारे दुश्मनों का विश्वास है कि हमारी पार्टी के अन्दर, जिसमें हमारा नेतृत्व भी शामिल है, तथाकथित विरोधी धारायें हैं, और यहाँ तक कि उसके अन्दर टीटोके समर्थक भी हैं। [शेष पृष्ठ ४९ पर]

स्तालिन-ग्रंथावली का ११ वाँ भाग

मार्क्सवाद-लेनिनवाद को स्तालिन की देन

पी. यूदिन

स्तालिन-ग्रंथावली के "ग्यारहवें भाग" में जनवरी १९२५ से मार्च १९२९ के कालसे सम्बंधित लेखोंका संग्रह है। यह संक्षिप्त काल पहले दर्जेके महत्वकी घटनाओंसे भरा हुआ था, उन घटनाओंसे जो सोवियत संघर्षमें समाजवादकी विजयके संघर्षमें हमारी पार्टीकी महान उत्प्रेरक और सगठक भूमिका को सामने लायीं।

सोवियत सघकी कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) की १४ वीं काँग्रेसके फैसलों पर चलते हुए, हमारी पार्टीने स्तालिनके देशके औद्योगीकरणके कार्यक्रमको कार्यान्वित करने में महत्वपूर्ण सफलताएँ प्राप्त कीं। सोवियत संघमें भारी उद्योगकी बुनियाद डाली गयी।

औद्योगीकरण के क्षेत्रमें प्राप्त सफलताओं को अपना आधार बना कर, लेनिन और स्तालिन की पार्टीने ताकत जीतने के बादके समाजवादी क्रांतिके सबसे दुष्कर काजको अर्थात् मेहनतकश किसान अवामको व्यक्तिगत किसानी की राहसे हटाकर समाजवादी सामूहिक किसानी की राह पर लगाने को, अपने हाथमे लिया। सोवियत सघकी कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) की पंद्रहवीं काग्रेस द्वारा पास खेतीके सामूहीकरण की नीति पर कामरेड स्तालिनकी रहनुमाईमें अत्यंत सुसगतता के साथ अमल किया गया। एक आम पैमाने के सामूहिक खेती आन्दोलनके लिए जरूरी सभी उपकरण पैदा किये गये।

पार्टीकी नीतिको शहरों और देहातों की मेहनतकश जनता का हार्दिक समर्थन प्राप्त हुआ। जनतामें मेहनतके लिए जोश का जो शक्तिशाली उभाड़ पैदा हुआ उसने समाजवादी स्पर्धा के विस्तार को बढ़ावा दिया। देशने प्रथम पंचवर्षीय योजना की पूर्ति का काम आरंभ किया।

समाजवादी औद्योगीकरण की नीति का सफलतापूर्वक कार्यान्वित होना, उद्योग और तिजारत से व्यक्तिगत सम्पत्तिजीवियों का निर्मूल किया जाना, सोवियत राज्य द्वारा कुलकों के विरुद्ध दृढ जेहाद-इन सारी चीजोंने देश के अदरके मौतका पैगाम पायें हुए पूँजीवादी तत्वों के अंदर पागलों जैसी प्रतिरोध की भावना भर दी।

दक्षिणपंथी आत्मसमर्पणवादियों के रूप में, जिनका मुखिया बुखारिन-राइकोव का दल था, कुलकों और शहरों के पूँजीवादी तत्वों को अपनी विचारधारा पेश करने

वाला और अपना पैरवीकार मिला। इन लोगोंने सोवियत संघ में समाजवादका निर्माण करने की पार्टी की नीति का खुला विरोध किया। कॅामरेड स्तालिन के नेतृत्व में, बोल्शेविक पार्टी ने इन आत्मसमर्पणवादियों तथा पूँजीवादको पुनर्जीवित करनेवालों का परदाफाश कर दिया और उन्हें पूरी तरह परास्त किया।

दक्षिणपंथी अवसरवादियों के विरुद्ध लड़ाइयों में, कामरेड स्तालिन ने पूरी पार्टी को संयुक्त करके कुलकों के खिलाफ—जो कि हमारे देश में पूँजीवादी शोषण के आखिरी गढ़ थे—शानदार आखिरी हल्ला बोल दिया।

कामरेड स्तालिन की ग्रंथावली के "ग्यारहवें भाग" में हमारे महान नेताके इस काल के बहुमुखी राजकीय, पार्टी तथा सैद्धातिक काम की तसबीर जैसी साफ झलक मिलती है। इस भाग में "**कामिन्टर्न के कार्यक्रम पर**", "**औद्योगीकरण तथा अन्नकी समस्या**", "**राष्ट्रीय सवाल और लेनिनवाद**", आदि उनकी चौदह रचनाएँ पहलेपहल प्रकाशित हुई हैं।

"ग्यारहवें भाग" में प्रकाशित लेखोंमें पार्टी को और अधिक मजबूत बनाने तथा उसकी पातको चट्टानकी तरह दृढ़ करनेके बारेमें कामरेड स्तालिनका लगातार यत्न अत्यंत स्पष्टताके साथ प्रगट होता है। कामरेड स्तालिनने पार्टीके मेम्बरोंकी सैद्धान्तिक सतहको ऊँचा उठाने और उनकी चौकसीको बढ़ानेकी आवश्यकता पर जोर दिया है। उन्होंने कार्यकर्ताओंको शिक्षित करनेके बोलशेवी तरीके और समाजवादी समाजके विकासकी एक चालक शक्तिके रूपमें समालोचना तथा आत्म-समालोचनाको ऊँचीसे ऊँची चोटी तक उठानेकी नितांत आवश्यकता पर जोर दिया है।

"ग्यारहवें भाग" में प्रकाशित कामरेड स्तालिनकी किताबोंमें हम अंतरराष्ट्रीय तथा देशकी अन्दरूनी परिस्थितिका गहरा सैद्धातिक विश्लेषण पाते हैं। उनके अदर हम लेनिनके आदेशोंको पूरा करने में त्रात्सकीवादी-बुखारिनवादी दलालोंके खिलाफ संघर्षमें परम दृढता और अटल इच्छाशक्तिका परिचय पाते हैं। और उनके अदर हमे मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धांतकी मूल समस्याओंका तत्व विश्लेषण करनेमें महान प्रतिभाका परिचय मिलता है। ये ही इन लेखोंकी विशेषताएँ हैं।

१

"ग्यारहवे भाग" में प्रकाशित कामरेड स्तालिनकी रचनाओंमें देशके समाजवादी औद्योगीकरणसे सम्बंध रखनेवाली समस्याओंका गहरा सैद्धातिक तत्व-विश्लेषण है, और उनमें औद्योगीकरणकी नीतिको व्यवहारतः कार्यान्वित करनेके पार्टी तथा सोवियत जनताके संघर्ष के प्राप्त अनुभवसे सामान्य सैद्धातिक निष्कर्ष निकाले गये हैं।

सोवियत राज्य ने ज़ारशाही की विरासत में एक टेकनिकल, आर्थिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ मुल्क पाया था। लेनिन ने बार-बार बतलाया था कि

इस पिछड़ेपन को दूर करना समाजवाद के निर्माण के संघर्ष में मजदूर-वर्ग का प्रधान कर्त्तव्य है। सितम्बर १९१७ में ही लेनिन ने अपने विख्यात लेख "**आनेवाली भीषण आपत्ति तथा उसका कैसे मुक़ाबला करें**" में समाजवादी क्रांति में बोल्शेविकों के आर्थिक कार्यक्रम की रूपरेखा बतलाते हुए लिखा थाः—

> "क्रांति के परिणामस्वरूप रूसकी **राजनीतिक** व्यवस्था कुछ ही महीनों के अंदर आगे बढ़े हुए देशों के मुकाबले पर पहुँच गयी है।
>
> "मगर यह काफ़ी नहीं है। युद्ध निर्मम शक्ति है, उसने निष्ठुर सख्तीके साथ हमारे सामने एकमात्र चारा पेश कर दिया है। वह है : या तो **आर्थिक क्षेत्र में भी** आगे बढ़े हुए देशों का मुकाबला करो और उन्हें पिछाड़ दो, नहीं तो खतम हो जाओ।
>
> "......खातमा या पूरे जोर के साथ आगे बढ़ाव। इतिहास ने हमारे सामने यही चारा पेश किया है।" (**लेनिन ग्रंथावली,** भाग २५, पृ. ३३८, रूसी संस्करण)

देशके टेकनिकल और आर्थिक पिछड़ेपन को खतम करने का निर्णायक उपकरण एक शक्तिशाली बिलकुल आधुनिक समाजवादी उद्योग—विशेष कर पैदावार के साधनों को पैदा करने वाले एक उद्योग—का निर्माण करना था।

समाजवादी औद्योगीकरण समाजवाद की भौतिक नींव तैयार करने और सोवियत संघ की राजनीतिक और आर्थिक स्वतंत्रता की हिफाजत करने का निर्णायक उपकरण है, इस सिद्धांत का पूर्ण विस्तार के साथ तत्व-विलेषण करके कामरेड स्तालिन ने लेनिनवाद को एक अमूल्य देन दी।

औद्योगीकरण के संघर्ष में औद्योगिक विकास की रफ्तार का सवाल निर्णायक महत्व रखता था। "देशका औद्योगीकरण तथा सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) में दक्षिणपंथी भटकाव" शीर्षक अपनी विवेचनामें कामरेड स्तालिन ने बतलाया कि बाहरी और अंदरूनी दोनों ही अवस्थाओंका तकाजा है कि औद्योगीकरण की रफ्तार तेज हो। अगर हमारे पास रक्षाका यथेष्ट औद्योगिक आधार न हुआ तो देशकी स्वतंत्रता सुरक्षित नहीं रह सकेगी।

दूसरी तरफ, राष्ट्रीय अर्थनीति, और खासकर कृषिका पिछड़ापन उद्योग के तेज विकास के रास्ते की एक मुख्य बाधा था। हालत यह थी कि या तो देशकी पूरी अर्थनीति, कृषि समेत, आधुनिक बड़े पैमाने के उत्पादन के टेकनिकल आधार पर ले आयी जाय, नहीं तो पूँजीवाद की ओर वापसी रुक नहीं सकती थी।

> "और बिना उद्योगों के और मुख्यतः उत्पादन के साधनोंके, उत्पादन का तेज रफ्तार से विकास किये देशकी अर्थनीति को नये टेकनिकल आधार पर लाना असंभव है," कामरेड स्तालिन ने कहा। (पृ. २५६)

इतिहास की दृष्टि से एक संक्षिप्त कालके अन्दर सोवियत संघ प्रधान पूँजीवादी देशोंकी आर्थिक बराबरी में पहुँच सके और उन्हें पिछाड़ सके, इसके लिये तेज रफ़्तार से देशके औद्योगीकरण की ज़रूरत को कामरेड स्तालिनने वैज्ञानिक रूपसे सिद्ध किया।

इसके साथ ही, कामरेड स्तालिनने इस सवालको पूरे विस्तारके साथ सामने रखा कि औद्योगीकरणके स्रोत क्या होंगे। और ऐसा करते हुए उन्होंने पूँजीवादी औद्योगीकरण तथा समाजवादी औद्योगीकरण के स्रोतोंके प्रतिवादी फ़र्कका उद्घाटन किया। प्रधान पूँजीवादी देशोंके औद्योगीकरण के इतिहास की विवेचना करते हुए उन्होंने दिखलाया कि इग्लैंड में ये स्रोत उपनिवेशों की सदियों की लूट थे; जर्मनी में फ्रास-प्रशा युद्ध के बाद फ्रांस से मिला पाँच अरब का हरजाना औद्योगीकरण का स्रोत बना; और जारशाही रूस के मामले में, औद्योगीकरण का स्रोत विदेशी पूंजीपतियों से मिला बेहिसाब कर्ज था।

सोवियत राज्य के लिए स्वभाव से ही पूँजीवादी औद्योगीकरण के तरीके घृणा-जनक थे। "औद्योगीकरण और अन्न की समस्या" पर केंद्रीय कमेटी की प्लेनम में एक भाषण में, जो पहलेपहल "ग्यारहवें भाग" में प्रकाशित हुआ है, कामरेड स्तालिन ने पार्टी का आह्वान किया कि वह आतरिक संचय न करके उद्योगों का विकास करे, देश का औद्योगीकरण करे।

जैसा कि इतिहास हमें बताता है, कामरेड स्तालिनने तत्व-विश्लेषण करके औद्योगीकरण का जो समाजवादी तरीका बताया वह पूँजीवादी तरीके के मुकाबले में असख्य गुना अधिक कारगर साबित हुआ। तेरह सालके छोटे अरसेके अंदर सोवियत सघ कायापलट होकर एक पिछडे हुए देश से एक महान समाजवादी औद्योगिक ताकत बन गया,—वह एक ऐसी ताकत बन गया जिसने कि प्रायः पूरे योरप के युद्ध उद्योग पर दखल जमा रखने वाले फ़ासिस्ट जर्मनी के हमले को न केवल बर्दाश्त किया बल्कि उसे चकनाचूर कर दिया। और आज, युद्धके बाद, जिस तेजी से हमारी राष्ट्रीय अर्थनीति बरबादी का असर दूर कर पुरानी हालतमें लायी और आगे बढ़ायी जा रही है, वह हर रोज नयी शक्ति के साथ हमारे समाजवादी उद्योग की ताकतको प्रगट कर रही है। ये युग-प्रवर्तक कामयाबियाँ सोवियत संघके औद्योगीकरण की स्तालिन योजना की प्रतिभाशीलता की कीर्ति हैं।

औद्योगीकरण पर स्तालिन के सिखावनों और समाजवाद की औद्योगिक बुनियाद का निर्माण करने में सोवियत संघ के महान अनुभव को अपना पथ-प्रदर्शक बना कर, जनताके जनवादी राज्य आज अपने देशों में औद्योगीकरण की समस्या को सफलता के साथ हल कर रहे हैं। जनताके जनवादी देशोंका सोवियत सघ से कहीं अधिक अनुकूल हालतों में विकास हो रहा है। उनका एक-दूसरेके साथ और सोवियत के साथ मित्रता का सम्बंध है, जो कि समाजवाद की बुनियाद डालने में

उनको ज़बर्दस्त सहायता दे रहा है। उससे उनको अपने आर्थिक पिछड़ेपनको दूर करने में बहुत बड़ी आसानियाँ हासिल होती हैं; और समाजवादी निर्माण की योजनाओं को कामयाबी के साथ पूरा करनेके लिए उसने अनुकूल हालतें पैदा की हैं।

कामरेड स्तालिनका समाजवादी औद्योगीकरणका सिद्धात अंतरराष्ट्रीय महत्वका सिद्धात है। वह कम्युनिस्ट समाजका निर्माण करने में बोल्शेविक पार्टीका वैज्ञानिक कार्यक्रम है।

?

करोड़ों मेहनतकश किसानोंको समाजवादके निर्माण के काम में कैसे शामिल किया जाय, इस सवालका एक पूरा-पूरा जवाब बतलाकर कामरेड स्तालिनने एक बहुत ही बड़ा और ऐतिहासिक काम किया है। कामरेड स्तालिनने किसान समस्याके बारेमें तमाम मार्क्सवाद-विरोधी सिद्धातों की धज्जियाँ उड़ा दीं, और, लेनिन की सहकारी-योजनाको अपना पथ-प्रदर्शक बना कर कृषि के सामूहीकरण का एक सुसंगत सिद्धात विकसित किया।

स्तालिन ग्रंथावली के ग्यारहवे भाग में कृषिके समाजवादी पुनर्निर्माणके बारेमें काफी मसाला दिया गया है। कामरेड स्तालिनने दिखलाया कि कृषिको बडे पैमाने की समाजीकृत अर्थनीति की लीक पर लाने का सवाल सोवियत सघ में समाजवाद के भविष्य का, हमारे देश से पूँजीवाद की जड़ों को उखाड फेंकने का सवाल है।

१९२८ तक देश के सामने बड़ी मुश्किलें पैदा हो गयी थीं जिनका कारण छोटी-जिन्सी, कम-उत्पादक व्यक्तिगत खेती की प्रथा का राज्य की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा न कर पाना था। पूरी तौर से लेने पर खेती लड़ाई के पहले की पैदावार की सतह से ऊपर पहुँच चुकी थी। लेकिन उसकी प्रधान शाखा—अन्न-उत्पादन—की कुल पैदावार लड़ाईके पहले की ९१ फ़ी सदी भर ही थी तथा शहरोंकी ज़रूरतके लिये बेचा जानेवाला कुल फाजिल गल्ला लड़ाई के पहले का ३७ फ़ी सदी मात्र था। इसके अलावा हालतें बतलाती थीं कि जिन्सी गल्ले की पैदावार में और घटती होने का खतरा है।

कामरेड स्तालिनने बतलाया कि अन्न की समस्या को हल करने का मतलब है कृषिका बुनियादी, समाजवादी पुनर्निर्माण करना।

उन्होंने कहा,

"बेअंत तौरसे, अर्थात बहुत ही ज़्यादा लम्बे अरसे के लिए, सोवियत व्यवस्था तथा समाजवादी निर्माण को दो भिन्न बुनियादों पर – एक तो

समाजवादी उद्योग की बुनियाद पर, जो कि सबसे बड़े पैमाने का और सम्पूर्ण है, तथा दूसरा छोटी-जिन्सी किसान उत्पादन की बुनियाद पर, जो कि बेतरह बिखरा और पिछड़ा हुआ है,—रखना असंभव है। हमें क्रमशः किन्तु व्यवस्थित और दृढ़ रूपसे अपनी कृषिको एक नयी टेकनिकल बुनियाद पर, बड़े पैमाने के उत्पादन की बुनियाद पर, रख कर उसे समाजवादी उद्योग की सतह पर ले जाना होगा। या तो हम इस समस्याको हल करें—और तब हमारे देशमें समाजवाद की अंतिम विजय निश्चित हो जायगी—या हम इस समस्या की ओर से मुँह फेर लें, उसे नहीं हल करें और तब पूँजीवाद की ओर लौटना अपरिहार्य हो जा सकता है।" (पृ० २५३-५४)

१९२८ के जनवरी और फरवरी मास में कामरेड स्तालिनने साइबेरिया के कई जिलों का दौरा किया (नावोसिबिर्स्क, बर्नोल, बिस्क, रुबत्सोवस्क, ओम्स्क), पार्टी के पदाधिकारियों तथा सोवियतों के प्रतिनिधि और राज्य के खरीदारी संगठनोंके प्रतिनिधियों की संयुक्त बैठकों में भाग लिया और साइबरिया के विभिन्न जिलों में सभाओं मे भाषण किया। इन भाषणों में, जो कि पहले-पहल "ग्यारहवें भाग" में "गल्लावसूली तथा कृषिके विकास का भविष्यका नकशा" शीर्षकसे प्रकाशित हुए हैं, कामरेड स्तालिन ने पार्टी संगठनों के लिए समाजवादी लीक पर कृषिके पुनर्निमाण तथा कुलकों से लड़ने के कार्यक्रम का एक खाका तैयार किया।

"ग्याहरवें" भाग में प्रकाशित लेखोंमें कामरेड स्तालिन ने शहर और देहात के बीच के, मजदूर-वर्ग और किसानों के बीच के आपसी सम्बंध को दृढ़ करने तथा देहातों में सहकारिता के हर रूप का ज़्यादा से ज़्यादा विकास करने के सवाल पर विशेष ध्यान दिया है। दक्षिणपंथी आत्म-समर्पणवादियों ने मजदूर-वर्ग तथा किसानों के बुनियादी जनवर्ग के आपसी रिश्ते के सम्बंध में लेनिन के विचार को तोड़ने-मरोड़ने की कोशिश की। उन्होंने यह कह कर कि यह तो सिर्फ किसानों के इस्तेमाली सामानों की माँग को पूरा करने का सवाल है इस आपसी रिश्ते में मजदूर-वर्ग की नायक की भूमिका को भुला दिया। दक्षिणपंथी आत्म-समर्पणवादियों के लेनिनवाद-विरोधी विचारों का परदाफाश करते हुए, कामरेड स्तालिनने कहा;

"इस आपसी रिश्ते का लक्ष्य किसानों को मजदूर-वर्ग के, जो कि हमारे पूरे विकास का नेता है, और नजदीक लाना है, किसानों की और मजदूर-वर्ग की मैत्री को जिसमें कि मजदूर-वर्ग मुखिया शक्ति है, मजबूत बनाना है, धीरे-धीरे करके किसानों को, उनके मनोविज्ञान और उनके उत्पादन को, **सामूहीकरणकी भावना से भर कर नये साँचे में ढालना है**, और इस प्रकार वर्गों को मिटाने की अवस्थाएँ तैयार करना है।" (पृ. १६२)

कामरेड स्तालिन की रहनुमाई में कम्युनिस्ट पार्टीने वर्षों दृढ़ता और धैर्य के साथ उन अवस्थाओं को तैयार करने का काम किया जो देहातों के अंदर के महान क्रांतिकारी परिवर्तन के लिए जरूरी थीं, जो ठोस सामूहीकरण और उस आधार पर आखिरी शोषक-वर्ग अर्थात् कुलकोंको मिटाने के लिए जरूरी थीं।

"ग्यारहवें भाग" में संग्रहीत लेख प्रगट करते हैं कि पार्टीको कुलकों के खिलाफ आखिरी लड़ाईके लिए तैयार करने में कामरेड स्तालिनने किस उत्कृष्ट तीक्ष्ण बुद्धि तथा दृढ़ता का परिचय दिया था। इस कामके लिए मेहनतकश जनताको दिमागी तौरसे हथियारोंसे लैस करना जरूरी था, दक्षिणपंथियों के इस मार्क्सवाद-विरोधी पूँजी-वादी सिद्धांत की धज्जियाँ उड़ाकर धर देना जरूरी था कि कुलक लोग समाजवाद में "शांतिपूर्वक विलीन हो जायेंगे।" कामरेड स्तालिनने इस कामको पूरा किया। उन्होंने बतलाया कि मजदूर अधिनायकतंत्र के अधीन पूँजीवादसे समाजवादको रवानगी के बीचके कालमें, वर्ग-संघर्ष ठंडा पड़ने, अपनी मौत आप करने के बदले और तेज हो जाता है।

कामरेड स्तालिनने कहा,

> "ऐसा कभी नहीं हुआ है, और ऐसा कभी नहीं होगा कि मरनेहाल वर्ग बिना मुकाबले की तैयारी किये अपनेआप आत्मसमर्पण कर दें।... उलटे, समाजवाद की तरफ बढ़ावसे शोषक तत्वों द्वारा इस बढावका प्रतिरोध होना लाजिमी है और शोषकों के प्रतिरोधके चलते वर्ग-संघर्षका और धारदार होना लाजिमी है।" (पृ. १७२)

देशके अंदर पूँजीवादी तत्वोंका प्रतिरोध, अनिवार्य रूपसे, सोवियत संघके खिलाफ विदेशी राज्यों के पूँजीपतियोंके संघर्षके साथ मिल कर एक हो गया। इस संघर्षमें साम्राज्यवादियों ने देशके अंदरके चकनाचूर शोषक-वर्गोंकी बची-खुची ताकतों को अपना आधार बनाया।

कृषिके सामूहीकरण के कार्यक्रमको पूरे विस्तारके साथ पेश करते हुए कामरेड स्तालिनने बतलाया कि सामूहीकरण किसानोंके आसान और शांतिपूर्ण तरीके से आकर साझेके खेतोंके शामिल होनेसे नहीं सफल हो सकता बल्कि कुलकोंके खिलाफ किसानों के जन-संघर्ष से ही पूरा होगा। तमाम किसानों के सामने खुली लड़ाई में कुलकों को परास्त करना जरूरी था जिससे कि किसानों को पूँजीवादी तत्वों की कमजोरी का यकीन हो जाय।

"ग्यारहवें भाग" में प्रकाशित "गल्लावसूली आंदोलन के पहले नतीजे और पार्टी के आगे के काम", "सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) की केंद्रीय कमिटी की जुलाई प्लेनम के नतीजे", "औद्योगीकरण और अन्न-समस्या", "मजदूरों और किसानों के आपसी सम्बंध पर और सरकारी-फार्मो पर" तथा दूसरे

लेखोंसे पता चलता है कि किस तरह लेनिन के उद्देश्य के महान जारी रखनेवाले कामरेड स्तालिन के नेतृत्व में पार्टी ने सामूहीकरण का विकास करने तथा आखिरी और संख्यामें सब से अधिक शोषक-वर्ग अर्थात कुलकों का खातमा करने के अत्यंत कठिन कामोंको सफलता के साथ पूरा किया।

कॉ. स्तालिन की रहनुमाई में पार्टी ने अंत में किसानों के बुनियादी जनवर्ग को समाजवाद की राह पर लाने तथा ठोस सामूहीकरण के आधार पर एक वर्ग की हैसियत से कुलकों को निर्मूल करने में सफलता पायी। यह एक गहरी क्रांतिकारी कामयाबी थी। परिणामों की दृष्टि से वह उतनी ही महत्वपूर्ण थी जितनी कि अक्तूबर, १९१७ की क्रांति।

खेती के सामूहीकरण की स्तालिन की योजना की पूर्ति से और बोल्शेविक पार्टी तथा सोवियत जनता के प्रयत्न से सोवियत संघ में दुनिया की सबसे ज्यादा मशीनी पैमाने में सबसे बड़ी और सबसे ज्यादा पैदा करनेवाली खेती की व्यवस्था स्थापित हुई।

सोवियत संघ में कृषिमें समाजवाद की विजय सारी दुनिया के किसानों को समाजवाद की राह दिखलाती है। जनता के जनवादी देश इस समस्या के असली हल के काम मे जुट चुके हैं। कहने की जरूरत नहीं कि हर देश कृषिका समाजवादी पुनर्निर्माण करने के लिए अपने रास्ते आप निकालेगा जो उसके विकास के खास आर्थिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक अवस्थाओं पर निर्भर करेंगे। मगर सोवियत के किसानोंका तै किया हुआ रास्ता आम रास्ता है जो सभी देशों के किसानों के लिए लागू है।

देश के समाजवादी पुनर्निर्माण और कृषिके सामूहीकरण के रास्तों, तरीकों और उपायों पर कामरेड स्तालिन के लेखोंने मार्क्सवाद-लेनिनवाद के इतिहास में एक नया अध्याय तैयार किया है। वे कामरेड स्तालिन के द्वारा बनाये गये नये विज्ञान—समाजवादकी अर्थ नीति—के सबसे महत्वपूर्ण महकमों में हैं।

"ग्यारहवें भाग" में प्रकाशित लेखों से पता चलता है कि कामरेड स्तालिन किस तरह सुसंगत और दृढ रूप से बोल्शेविक पार्टी को मजबूत बनाने, उसके सिद्धांतों को शुद्ध रखने और मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धांत को विकसित करने के संघर्ष को परिचालित करते हैं।

हम सभी जानते हैं कि पंद्रहवीं पार्टी-कांग्रेस ने यह फैसला किया कि त्रात्स्कीवादियों के विचारों का सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोलशेविक) के साथ

कोई मेल नहीं है और उन्हें पार्टी से निकाल बाहर किया। पार्टी द्वारा उनकी विचार-धारा तथा संगठन की धज्जियाँ उड़ जाने के बाद, त्रात्स्कीपंथी राजनीतिक शोहदों और खुदपरस्तों का एक सिद्धांतशून्य गुट—राजनीतिक मक्कारों का एक गिरोह बन गया। "वे पतन के गर्त में पहुँच चुके हैं" शीर्षक अपने लेखमें, जो पहले-पहल "ग्यारहवें भाग" में प्रकाशित हुआ है, कामरेड स्तालिन ने बतलाया है कि त्रात्स्कीपंथी सर्वहारा अधिनायकतंत्र के बैरी, एक सोवियत-विरोधी षड़यंत्रकारी जमात बन गये हैं।

देशमें वर्ग-संघर्षके तेज होनेकी झलक पार्टीके अंदर भी दिखलायी दी। बुखा-रिन-राइकोवका पार्टी-विरोधी दल, जो कुलकों और शहरी पूँजीवादी तत्वोंके हितोंको प्रगट करता था, खुलकर पार्टीकी नीतिका विरोध करने लगा। दक्षिणपंथी आत्मसम-र्पणवादियोंने चुटीला बनकर देशके औद्योगीकरण और खेतीके सामूहीकरणकी नीतिका विरोध करना शुरू किया। कुलकोंको बचानेकी कोशिशमें उन्होंने कुलकोंके खिलाफ पास किये गये विशेष कानूनोंको रद्द कराना चाहा और "वर्ग-संघर्षके लुप्त हो जाने" और कुलकोंके समाजवादमें "शांतिपूर्वक विलीन हो जाने" का लेनिनवाद-विरोधी सिद्धात गढा। दक्षिणपंथियोंका पूरा कार्यक्रम देशको पूँजीवादकी पुनर्स्थापनाकी तरफ़ घसीट ले जानेके उनके अरमानको प्रगट करता था।

१९२८ में मॉस्को कमिटी और सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) के मॉस्को कन्ट्रोल कमीशनके प्लेनममें कामरेड स्तालिनने इस बात पर जोर दिया कि हमें दक्षिणपंथी भटकाव पर चोट केंद्रित करते हुए दो मोर्चोंपर संघर्ष चलाना जरूरी है। कामरेड स्तालिनने कहा कि दक्षिणपंथी पार्टीके अंदर कुलकोंके एजेंटकी हैसियत रखते हैं।

उन्होंने कहा,

"......हमारी पार्टीमें दाक्षिणपंथी भटकावकी जीतसे पूँजीवादकी ताकतोंको खुल कर खेलनेकी आजादी प्राप्त हो जायगी, मजदूर-वर्गकी क्रातिकारी नाकेबंदियों की नींव ढह जायगी और देशमें पूँजीवादके फिर कायम होनेकी सभांवनाएँ बढ़ जायेंगी।" (पृ० २३१)

लेनिनवादके दुश्मनोंके खिलाफ सघर्षमें, कामरेड स्तालिनने पार्टीको सैद्धान्तिक तौरपर हथियारोंसे लैस किया, और पार्टीकी आम नीतिसे पैदा होनेवाले भटकावोंके सार-तत्व और उनकी सामाजिक जड़ोंको बेनकाब किया। उन्होंने लिखा:

"इन भटकावों का सामाजिक आधार यह है कि हमारे देशमें छोटे पैमाने के उत्पादन का बोलबाला है, उनका आधार यह है कि छोटे पैमाने के उत्पादन से पूँजीवादी तत्वों का जन्म होता है और उनका आधार यह है कि हमारी पार्टीके बाज़ हिस्से उस वातावरणके असरमें आ गये हैं।" (पृ. २६९-७०)

दक्षिणपंथी सुधारवादियों को खतम करने के लिये कामरेड स्तालिन पूरी पार्टी ो जंगके मैदान में लाये। विचारधारा और संगठन, दोनों ही क्षेत्रों में दक्षिणपंथी वसरवाद चकनाचूर कर दिया गया। इस संघर्ष से पार्टी विचारधारा तथा संगठन में हले से भी मजबूत होकर निकली।

कामरेड स्तालिन ने बतलाया कि दक्षिणपंथी और "वामपंथी" भटकाव ाक्संवाद-लेनिनवाद के खिलाफ—समाजवादके खिलाफ—पूँजीवादी पुनर्स्थापना की ेचारधारके संघर्ष के ही दो रूप हैं। उन्होंने कहा कि पार्टीको दो मोर्चों पर लड़ाई लानी जरूरी है।

केन्द्रवादका एक राजनीतिक विचित्रता के रूपमें कामरेड स्तालिनने एक बहुत ही ाहरा सैद्धान्तिक विश्लेषण दिया है।

> "केन्द्रवाद को कोई खास धारणा नहीं माना जा सकता : बस एक ओर, मान लीजिये कि दक्षिणपंथी तशरीफ रखते हैं, और दूसरी ओर" वामपक्षी तथा इन दोनोंके बीच हैं केन्द्रवादी। केन्द्रवाद एक राजनीतिक धारणा है, उसकी विचारधारा अपनेको ढालते चलने की धारणा है, **एक शामिल पार्टी के अन्दर** सर्वहारा के हितोंको निम्न-पूंजीवादियों के हितों का मातहत बना देनेकी विचारधारा है। यह ऐसी विचारधारा है जो लेनिनवाद के लिये विदेशी और घृणापूर्ण है।" (पृ. २८२)

पार्टी में मार्क्सवाद-विरोधी भटकाओं के खिलाफ संघर्षकी समस्या पर कामरेड स्तालिनने जो रास्ता निकाला वह एक नये प्रकार की पार्टी, लेनिनवाद की पार्टी के सिद्धांत का और आगे विकास है। वह मार्क्सवाद और लेनिनवादकी रणनीति और कार्यनीतिका और आगे विकास है और पूरे अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलनके लिए भारी महत्व रखता है।

समालोचना और आत्म-समालोचना के विषय पर 'ग्यारहवें भाग' में प्रकाशित उनके लेखों में कामरेड स्तालिन द्वारा व्यक्त विचार भारी और बुनियादी सैद्धांतिक महत्व रखते हैं। कामरेड स्तालिनने "आत्म-समालोचना के नारे को भ्रष्ट रूप देनेके विरुद्ध" शीर्षक अपने लेख में लिखा:—

> "... आत्म-समालोचना बोल्शेविज़्मके तरकश का एक मुस्तकिल तौर पर गुण करने वाला और अति आवश्यक हथियार है, ऐसा हथियार है जो बोल्शेविज़्मके स्वभावके साथ, उसके क्रांतिकारी मिजाजके साथ अभिन्न रूपमें जुड़ा हुआ है।"
>
> "....बिना आत्म-समालोचनाके पार्टीकी, वर्ग की और अवामकी ठीक शिक्षा हो ही नहीं सकती; बिना पार्टीकी, वर्गकी, अवामकी ठीक शिक्षाके बोल्शेविज़्म हो ही नहीं सकता।" (पृ. १२८ और १२९)

समाजवादके सफल निर्माणके लिए पार्टीको जंगके मैदानमें लानेमें, कामरेड स्तालिनने सरकारी शासन-प्रबंध, अर्थनीति और सस्कृतिकी हर शाखाके लिए नये बोल्शेविक कार्यकर्ताओंको तैयार करने की जरूरत पर बहुत ही अधिक जोर दिया।

मई, १९२८ में "नौजवान कम्युनिस्ट लीग" की आठवीं काग्रेस के अपने ऐतिहासिक भाषण में कामरेड स्तालिनने कहा,

> "हमें अब ज्ञान-विज्ञानके भिन्नसे भिन्न विभागोंमे सफल सावित होनेकी योग्यता रखने वाले हजारों और लाखों की तादाद मे नये बोल्शेविक कार्यकर्ताओं की, उनकी पूरी की पूरी जमात की जरूरत है। इसके बिना, देश में समाजवादी पुनर्निर्माण की तेज रफ़्तार की बात करना बे-फायदा है। इसके बिना, हमारे देशके आगे बढ़े हुए पूँजीवादी देशोंका मुकाबला कर सकने और उन्हें पिछाड़नेकी बात करना बेफ़ायदा है।" (पृ. ७७)

नये कार्यकर्ताओं को, जो कि मजदूर-वर्ग से आते हों, तैयार करने की जरूरत-को कामरेड स्तालिनने "केन्द्रीय कमेटी और केंद्रीय कंट्रोल कमीशन की अप्रैल की संयुक्त प्लेनमका काम" पर अपनी रिपोर्ट मे पूरा जोर देकर बतलाया।

पूँजीवादी समाज के लिए, पूँजीपति-वर्ग के ताकत हासिल करने के पहले ही पढ़े-लिखोंका बुनियादी कार्यकर्ता-दल तैयार हो जाता हैं। मगर मजदूर वर्ग को समाजवाद के निर्माण के दौरान में अपनी बुद्धिवादियों की जमात तैयार करनी पड़ती है। बोल्शे विक पार्टी अपने दस्तूर के मुताबिक जोश-खरोश और लगन के साथ इस कठिन समस्या को हल करने के काम में लग गयी, और कामयाबी के साथ उसे हल कर डाला।

"ग्यारहवें भाग" में कामरेड स्तालिनका "लाल सेना की तीन विशेषताएँ" पर विख्यात भाषण है जिसमें उन्होंने बतलाया है कि लाल सेना मुक्त मजदूरों और किसानों की सेना है, हमारे देश के विभिन्न राष्ट्रों के बीच भाईचारे की एक फ़ौज है, एक ऐसी फौज है जो दूसरे देशों की जनता के प्रति सम्मान की भावना, उनके बीच शाति बरक़रार रखने और उसे कायम करने की भावना से भरी हुई है। यही विशेषताएँ सोवियत फौज की शक्ति और पराक्रमका स्रोत हैं जिनका शानदार प्रदर्शन महान देश-प्रेमी युद्ध में देखने को मिला।

४

स्तालिन-ग्रंथावली के "ग्यारहवें भाग" में पहले-पहले प्रकाशित कामरेड स्तालिन का "**राष्ट्रीय सवाल और लेनिनवाद**" मार्क्सवाद-लेनिनवाद को एक शानदार देन है।

हम सभी जानते हैं कि राष्ट्रीय सवाल के मार्क्सवादी सिद्धांत को तैयार और विकसित करके कामरेड स्तालिन ने एक मार्के का काम किया था। १९१३ में लिखे

उनके शास्त्रीय ग्रंथ "**मार्क्सवाद और जातियों का सवाल**" को लेनिन ने राष्ट्रीय सवाल पर मार्क्सवादियों द्वारा लिखी सर्वश्रेष्ठ किताब बतलाया था। इस अद्वितीय पुस्तक के विचारों को और विकसित करते हुए, और समाजवाद, सोवियत जनता के राष्ट्रीय जीवन मे जो सारे परिवर्तन ला रहा है उनसे साधारण सैद्धातिक निष्कर्ष निकालते हुए, कामरेड स्तालिन ने मार्क्सवादी साहित्य में पहले-पहल अपने "**राष्ट्रीय-सवाल और लेनिनवाद**" नामक ग्रंथ में **पूंजीवादी और समाजवादी राष्ट्रों** की थीसिस रची।

समाजवादी राष्ट्रों के बारे में अपने निष्कर्षों पर पहुँचने और इस नयी थीसिस को सिद्ध करने के पहले, कामरेड स्तालिन ने ऊपर से नीचे तक खूब अच्छी तरह पूँजीवादी राष्ट्रों के सवाल का विश्लेषण किया है।

उन्होंने कुछ लेखकों की उन गोबरदिमाग थीसिसों को ठुकरा दिया है जिनका कहना है कि राष्ट्रों का उदय पूँजीवाद के पहले के जमाने में हुआ था और उस जमाने में वे मौजूद थे। कामरेड स्तालिन ने बतलाया है कि पूंजीवाद के पहले राष्ट्रीयता के अलग-अलग तत्व—भाषा, भूमि, समान संस्कृति—जरूर मौजूद थे, मगर ये तत्व अंकुर की हालत में थे और ज़्यादा से ज़्यादा आगे चल कर राष्ट्र के रूप में प्रस्फुटित होने की छिपी हुई सभावना को प्रगट करते थे।

कामरेड स्तालिन का कहना है कि तथाकथित "आधुनिक" कहे जानेवाले राष्ट्रों का उदय पूँजीवाद के उदयसे सम्बंधित है, वे एक खास युगकी, पूंजीवाद के विकास के युगकी सृष्टि हैं। इस युगमें राष्ट्रीय आन्दोलन का भाग्य स्वभावतः पूंजीपति-वर्गके भाग्यके साथ जुडा हुआ है। इस युगमें पूँजीपति-वर्ग और उसकी राष्ट्रीय पार्टियाँ ऐसे राष्ट्रों की प्रधान संचालिका शक्ति थीं और रहीं।

इन राष्ट्रों की विचारधारा और उनके सामाजिक-राजनीतिक सिद्धान्त थें: "राष्ट्रीय एकता" के वास्ते राष्ट्रोंके अन्दर वर्गों में सुलह, दूसरे राष्ट्रों की भूमि जीतकर अपने राष्ट्र की भूमिका विस्तार, दूसरे राष्ट्रों के प्रति अविश्वास और नफरत की भावना, जातीय अल्प-संख्यकों को कुचलना, साम्राज्यशाही के साथ संयुक्त मोर्चा, आदि।

कामरेड स्तालिन कहते हैं,

"ऐसे राष्ट्रों को पूँजीवादी राष्ट्र कहना चाहिए। मसलन, फ्रांसीसी, इंग्लिस्तानी, इटालियन, उत्तरी अमरीकी, और दूसरे इनके ही समान राष्ट्र ऐसे ही राष्ट्र थे। अपने देशमें मजदूरों का अधिनायकतंत्र तथा सोवियत व्यवस्था कायम होनेके पहले ऐसे ही पूंजीवादी राष्ट्र रूसी, यूक्रानी, तातार, आर्मीनियन, जार्जियन और रूसमें दूसरे राष्ट्र थे।

"प्रगट है कि, ऐसे राष्ट्रोंका भाग्य पूंजीवाद के भाग्य के साथ जुडा हुआ था, और पूंजीवाद के पतनके साथ ऐसे राष्ट्रोंका मैदान से लापता हो जाना लाजिमी था।" (पृ. ३६८)

सोवियत संघकी समाजवादी क्रान्ति ने सोवियत जनता के आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन में जड़से तबदीली ला दी और उसकी मनोवृत्ति को बदल डाला। सोवियत संघमें समाजवादी राष्ट्रोंका उदय और विकास हुआ।

"ये सभी नये, सोवियत राष्ट्र हैं, जो पुराने, पूँजीवादी राष्ट्रों के आधार पर, रूस में पूँजीवाद का तख्ता उलटने, पूँजीपति-वर्ग और उसकी राष्ट्रीय पार्टियों का सफाया होने, सोवियत व्यवस्था के क़ायम होने के बाद विकसित हुए और उन्होंने रूप धारण किया।

"मजदूर-वर्ग और उसकी अंतरराष्ट्रीयतावादी पार्टी वह शक्ति है जो इन नये राष्ट्रोंको एक सूत में मजबूती से बाँधती है और उनका संचालन करती है। पूँजीवाद के अवशेषों को मिटाने के वास्ते राष्ट्र के अंदर जातियों तथा जातीय अल्प-सख्यकों की बराबरी और स्वतंत्र विकास के वास्ते मजदूर-वर्ग और मेहनतकश किसानोंकी दोस्ती; राष्ट्रोंके बीच दोस्ती कायम करने और अतरराष्ट्रीयता को पक्का करने के वास्ते राष्ट्रीयता के अवशेषों का खातमा; दूसरे देशों पर कब्जा जमाने और कब्जा जमाने के लिए युद्ध छेड़नेकी नीति के विरुद्ध संघर्ष में, साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्ष में सभी सताये हुए और असमान देशों के साथ संयुक्त मोरचा—यही इन राष्ट्रोंका आत्मिक और सामाजिक-राजनीतिक पहलू है।

"ऐसे ही राष्ट्रों को समाजवादी राष्ट्र कहना चाहिए।" (पृ. ३३९)

कामरेड स्तालिन ने बतलाया है कि समाजवादी राष्ट्रों के बनने का मतलब यह नहीं है कि राष्ट्रों का सामान्य तौरसे सफाया हो जाय, बल्कि उसका मतलब है सिर्फ़ पूँजीवादी राष्ट्रोंका सफ़ाया हो जाना। उन्होंने इस बात पर जोर दिया है कि नये, समाजवादी राष्ट्र किसी भी पूँजीवादी राष्ट्र के मुकाबले में, आपस में अधिक ठोस रूप से जुड़े हुए और एक हैं, क्योंकि जो अमिट वर्ग-विरोध पूँजीवादी राष्ट्रों के अंदर घुन की तरह लगा हुआ है उससे वे बरी हैं और वे किसी भी पूँजीवादी राष्ट्र के मुक़ाबले मे कहीं बड़े पैमाने पर आम जनता के राष्ट्र है।

राष्ट्रोंके भविष्यमें विकासके बारेमे कामरेड स्तालिनने जो तसवीर पेश की है उसका वैज्ञानिक और राजनीतिक दृष्टिकोणसे एक खास महत्व है। लेनिन द्वारा प्रगट किये गये मतोंको अपना आधार बनाते हुए, और १८ मई, १९२५ के अपने "**पूरबकी जनताकी यूनिवर्सिटीके राजनीतिक काज**" नामक भाषणमें पेश की गयी अपनी थीसिसोंको आगे बढ़ाते हुए, कामरेड स्तालिनने दिखाया है कि एक देशमे समाजवादकी विजयके कालमें राष्ट्र मुरझा कर खतम नहीं हो जाते, बल्कि फलते-फूलते और विकसित होते हैं।

अखिल-विश्व सर्वहारा अधिनायकतंत्रकी स्थापनासे भी राष्ट्रों और राष्ट्रीय भाषाओंके मुरझा कर खतम होनेकी क्रिया की शुरूआत, एक अखिल-विश्व भाषाके

विकासकी शुरूआत नहीं होगी। कामरेड स्तालिनकी रायमें राष्ट्रीय भेदोंका खुद-बखुद मिटना शुरू होना और सभी देशोंकी जनताकी एक अखिल-विश्व भाषाका तैयार होना विश्व समाजवादी समाजके केवल उसी कालमें होगा,

> " जब कि विश्व समाजवादी आर्थिक व्यवस्था काफ़ी दृढ़ हो चुकी होगी और समाजवाद जनताके जीवनका अंग बन चुका होगा, जब कि राष्ट्रोंको अमल द्वारा राष्ट्रीय भाषाओंसे एक अखिल-विश्व भाषाके अधिक सुविधाजनक होनेका यकीन हो चुका होगा।..." (पृ. ३४९)

" राष्ट्रीय सवाल और लेनिनवाद " में कॉमरेड स्तालिनने राष्ट्रीय सवालपर बोल्शेविक पार्टीकी नीतिकी एक गहरी और विस्तृत परिभाषा दी है। सबसे पहले उन्होंने कहा है:—

> " रूसी मार्क्सवादियोंने सदा इस मूल प्रस्तावनाको माना है कि राष्ट्रीय समस्या क्रांतिके विकासकी आम समस्या का अंग है, कि क्रांतिकी अलग-अलग मंज़िलोंमें राष्ट्रीय समस्याके अलग-अलग काज हैं जो कि उस ऐतिहासिक घड़ी में क्रांतिका जो स्वरूप रहता है, उसके मुताबिक होते हैं और यह कि राष्ट्रीय समस्या पर पार्टीकी नीति भी इसी मुताबिक बदलती है। " (पृ. ३५०)

रूस में पूँजीपति-वर्गकी सत्ताको खतम कर और मज़दूरोंका अधिनायकतंत्र कायम कर, बोल्शेविक पार्टीने राष्ट्रीय उत्पीड़न की व्यवस्थाको बिलकुल मिटा दिया और हमारे देश में राष्ट्रोंकी समानता कायम की। पार्टीने पहले के उत्पीड़ित राष्ट्रोंको उठने में, अपनी राष्ट्रीय संस्कृतिको पुनर्जीवित और विकसित करने में, और खुद अपनी राष्ट्रीय पार्टी और सोवियत कार्यकर्ता तैयार करने में मदद दी। और इस तरह उसने नये, समाजवादी राष्ट्रोंके मज़बूत बनने और विकसित होनेको बढ़ावा दिया।

पार्टीकी लेनिनवादी-स्तालिनवादी राष्ट्रीय नीति से सोवियत संघ की जनता में एक ऐसी मित्रताका निर्माण हुआ है जो कभी नष्ट नहीं हो सकती। उससे एक बहु-राष्ट्रीय सोवियत राज्य स्थापित और सुदृढ़ हुआ जिसकी ताकत और दृढ़ता पर कोई भी गैर-सोवियत राज्य डाह कर सकता है।

राष्ट्रीय सवाल पर उनकी दूसरी किताबोंकी ही तरह, कामरेड स्तालिनकी " राष्ट्रीय सवाल और लेनिनवाद " सभी देशों की कम्युनिस्ट पार्टियों और मेहनतकश लोगोंके लिए, जो कि अब राष्ट्रीय आज़ादी और समानताके लिए, राष्ट्रीय उत्पीड़न के अंत के लिए, और राष्ट्रोंके बीच दृढ़ मित्रता और सहयोग की स्थापनाके लिए संघर्ष कर रहे हैं, एक अचूक कुतुबनुमा है। कामरेड स्तालिनकी किताबें पूँजीवादी राष्ट्रवाद और सब-देशीपन (कास्मोपोलिटनिज़्म) के ख़िलाफ़ संघर्ष में और सर्वहारा-अंतरराष्ट्रीयता की उच्च भावनाओं की विजय के लिए एक प्रबल बौद्धिक हथियार है।

६

स्तालिन ग्रंथावली के "ग्यारहवें भाग" में प्रकाशित किताबोंमें बहुत काफी जगह अंतरराष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन और बिरादर कम्युनिस्ट पार्टियों के आगे के कामोंको दी गयी है।

कामरेड स्तालिनने महान अक्तूबर समाजवादी क्रांति के और सोवियत संघ में समाजवादी निर्माणके अंतरराष्ट्रीय महत्व पर जोर दिया है। सोवियत संघकी समाजवादी क्रांति, अपने स्वभावसे ही,

> "विश्व-क्रांतिका एक हिस्सा, विश्वके क्रांतिकारी आंदोलनका एक आधार और हथियार है।" (पृ. १५२)

क्रांतिकारी अंतरराष्ट्रीयता का झंडा बुलंद रखते हुए, कामरेड स्तालिन ने सोवियत संघके और दूसरे देशोंके मजदूरों के अंतरराष्ट्रीय कर्तव्यों की चर्चा की है।

> "निस्संदेह, हमारी क्रांतिके अंतरराष्ट्रीय स्वरूप के कारण, सारी दुनिया के सर्वहारा और उत्पीडित अवामके संबंध में सोवियत संघके सर्वहारा-अधिनायकतंत्रके ऊपर कुछ कर्तव्य आ पड़ते हैं।" (पृ. १५१-१५२)

आज पूरी दुनिया देख सकती है कि सोवियत क्रांति किस तरह सफलताके साथ अपना अंतरराष्ट्रीय कर्तव्य पूरा कर रही है। दुनियाके पहले समाजवादी देशने जनताके जनवादी देशोंके मजदूर-वर्गको ताक़त जीतने में ठोस सहायता दी, और अब जनताके जनवादी देशोंको समाजवादका निर्माण करने में मदद दे रहा है।

दुनियाके मजदूर वर्गको सोवियत संघने जो सबसे महान मदद पहुँचायी वह यह है कि उसने प्रतिक्रिया की सबसे घोर ताक़त, जर्मन फासिज़्मको चकनाचूर कर दिया और इस तरह लोगोंको जर्मन साम्राज्यवादियों की गुलामी से बचा लिया।

सोवियत संघ एक सुसंगत वैदेशिक नीति पर चलता है। १९२८ में कहे कामरेड स्तालिनके शब्दोंकी शक्तिशाली गूँज आज सुनायी पड़ती है:

> "अंतरराष्ट्रीय पूँजी हमें चैन से रहने देगी, ऐसा सोचना मूर्खता होगी। नहीं, कॉमरेड्स, ऐसा सोचना गलत है। वर्गों की हस्ती कायम है, अंतरराष्ट्रीय पूँजी मौजूद है, और वह चुप होकर एक ऐसे मुल्कको तरक्की करता नहीं देख सकती जो समाजवादका निर्माण कर रहा है।...या यह, या वह: **या तो** हम अपनी क्रांतिकारी नीति को चलाते रहें, सभी मुल्कों के सर्वहारा और मज़लूमोंको सोवियत संघ के मजदूर-वर्ग के झंडे के नीचे एकत्र करते रहें—और उस वक्त अंतरराष्ट्रीय पूँजी हमारी तरक्की की राह में दखलंदाजी करने के लिए जो भी उपाय बनेंगे करती रहेगी; **नहीं तो** हम अपनी क्रांतिकारी

' नीति को तज दें, और अंतरराष्ट्रीय पूँजी को अनेक बुनियादी छूटें दें—जिस हालत में संभवतः अंतरराष्ट्रीय पूँजी हमें अपने समाजवादी देश को पतन की ओर ले जा कर उसे एक " अच्छा " पूंजीवादी जनतंत्र बना देने के मामले में " सहायता " देना बिलकुल नापसंद नहीं करेगी। " (पृ.५४-५५)

आज सोवियत संघ अतरराष्ट्रीय सर्वहारा और सारी दुनिया की मेहनतकश जनता के प्रति अपने कर्तव्य को पूरा कर रहा है--सफलतापूर्वक कम्युनिज़्म का निर्माण करके, जनता के जनवादी देशों और शोषित-पीड़ित जनता के राष्ट्रीय मुक्ति-सघर्ष को स्वार्थ-हीन रूपसे सहायता दे करके, और शाति की, तथा एक नये महायुद्ध की आग लगाना चाहने वाले साम्राज्यवादियों के विरुद्ध लड़ाई में अगुआ पार्ट अदा करके।

साथ ही साथ, कामरेड स्तालिन ने सोवियत संघ के प्रति अंतरराष्ट्रीय सर्वहाराके जो कर्तव्य हैं उनपर जोर दिया। जुलाई १९२८ में केंद्रीय कमेटी की प्लेनम में " कामिन्टर्न का कार्यक्रम " पर अपने भाषणमें (जो पहले-पहल इस भाग में प्रकाशित हुआ है) कामरेड स्तालिन ने कहाः

" सर्वहारा के ये कर्त्तव्य हैं : सोवियत सघ के अपने भीतरी और बाहरी दुश्मनों के विरुद्ध सघर्ष में, सोवियत संघ में सर्वहारा अधिनायकतंत्र का गला घोंटने का उद्देश्य रखने वाले युद्ध के खिलाफ उसके युद्ध में, उसका समर्थन करना, और यह प्रचार करना कि सोवियत सघ पर हमला होने की हालत में साम्राज्यशाही की फौजें सीधे सोवियत संघ के सर्वहारा-अधिनायकतंत्र की ओर जा मिलें। " (पृ. १५२)

मजदूर-वर्ग के आन्दोलन की ताकत सर्वहारा अतरराष्ट्रीयता की महान भावनाओं के प्रति उसकी वफादारी में है। इन भावनाओं से दूर होने की हर हरकत समाजवाद के आन्दोलन के साथ गद्दारी और पूंजीवादी लश्कर में जा मिलना है। यूगोस्लाविया का टीटो गुट आज यही कर रहा है। अतरराष्ट्रीयता के साथ विश्वासघात करके, टीटो के पूंजीवादी-राष्ट्रवादी गुट ने समाजवाद से फासिज़्म की ओर प्रयाण का शर्मनाक रास्ता तै कर डाला है। वह निश्चित रूप से जनवाद और समाजवाद का खेमा छोड़कर साम्राज्यवाद और फासिज़्म के लश्कर में, सोवियत संघ, जनता के जनवादी देश और विश्व कम्युनिस्ट आंदोलन के जानी दुश्मनों के लश्कर में जा मिला है।

दूसरे देशों की कम्युनिस्ट पार्टियॉ किस तरह सोवियत संघ के अनुभव से लाभ उठा सकती हैं इस पर विचार करते हुए कामरेड स्तालिन ने " नयी आर्थिक नीति " (नेप) के अन्तरराष्ट्रीय महत्व की ओर ध्यान खींचा है।

" क्या पूँजीवादी देश, सबसे ज़्यादा विकसित पूँजीवादी देश भी, पूंजीवाद से समाजवाद की ओर रवानगीके दौरमें विना " नयी आर्थिक नीति " के काम

> चला सकते हैं ? मेरे ख्यालसे, नहीं। किसी न किसी हद तक, सर्वहारा अधिनायक तंत्रके दौरमें हर पूँजीवादी देशके लिये "नयी आर्थिक नीति"—जिसका कि बाजारके साथ लेन-देन रहता है—और इस लेन-देनका इस्तेमाल, बिल्कुल अपरिहार्य होगा।" (पृ. १०१)

ये शब्द कितने सच्चे निकले। आज जनताके जनवादी देशों मे जो आर्थिक नीति चलायी जा रही है, वह नयी आर्थिक नीति के तमाम बुनियादी सिद्धान्तों की ही लीक पर है। इन देशोंमें बुनियादी महत्व की आर्थिक जगहें—थोक व्यापार समेत—राज्यके हाथों में हैं। लेकिन, इसके साथ ही साथ, व्यापार की आजादी भी है। छोटे पैमाने का खुदरा व्यापार बहुत बड़ी हद तक व्यक्तिगत व्यापारियोंके हाथों में है। पूरे तौर पर लेने पर, आर्थिक जीवनमें व्यवस्था और संचालन का काम समाजवादी अंगके, जनताके जनवादी राज्य के, हाथ में हैं।

कामरेड स्तालिनने अत्यंत स्पष्टताके साथ उन तरीकोंको पहले से ही देखा जो साम्राज्यवादी व्यवस्था के दायरे से बाहर निकलने वाले देशोंको अपनी भूमि-समस्या को हल करनेके लिये अपनाने होंगे। उन लोगोंके जवाब में, जो सभी जमीनों का, खास कर पूंजीवादी तौरसे विकसित देशोंमें, फौरन राष्ट्रीकरण करने पर तुले हुए थे, कामरेड स्तालिनने "कामिन्टर्नका कार्यक्रम" पर अपने भाषण में कहा,

> "वे कॉमरेड गलती पर हैं जो यह सोचते हैं कि जितना ही अधिक पूंजीवादी तौरसे विकसित देश होगा उतना ही वहाँ **सभी** जमीनोंका राष्ट्रीकरण करना आसान होगा। उल्टे, जितना ही अधिक पूंजीवादी तौरसे विकसित देश है, उतना ही अधिक **सभी** जमीनोंका राष्ट्रीकरण करना कठिन होगा। कारण यह है कि जमीन की व्यक्तिगत मिलकियत की परम्पराएँ इन देशोंमें और भी अधिक ताकतवर होंगी और फल-स्वरूप इन परम्पराओं को खतम करना और अधिक कठिन होगा।" (पृ. १४९)

इसलिए कामरेड स्तालिनने चेतावनी दी कि सभी जमीनों के राष्ट्रीकरणका एकबारगी, सर्वहारा क्रांतिके पहले ही दिन, ऐलान नहीं कर देना चाहिए क्योंकि मिलकियत की भावना में डूबे किसान-अवाम इस नारेको एकबारगी गलेके नीचे नहीं उतार सकेंगे। स्तालिन की इसी बुद्धिमानी भरी नीति से जनता के जनवादी देशों की कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियाँ आज अपना पथ-प्रदर्शन करके मेहनतकश किसानोंको धीरे-धीरे कृषि-उत्पादनके सामूहिक रूपोंके लिए तैयार कर रही हैं।

साम्राज्यवाद की प्रकृति के बारे में लेनिनकी विवेचना को अपना आधार बना कर कामरेड स्तालिनने साम्राज्यवाद के विकास के नियमों का और पूँजीवाद के आम संकट के काल मे उसके विरोधों का विश्लेषण जारी रखा। मुख्य विरोध—समाजवाद और साम्राज्यवादके पक्षों के विरोध—के सिवा, खुद साम्राज्यवादी पक्ष के अंदर गहरे विरोध मौजूद हैं। साम्राज्यवादी देशों के अंदर के विरोधों से लाजमी तौर से उनके

बीच नयी भिड़ंतें, नये साम्राज्यवादी युद्ध होते हैं। मजदूर और पूँजीपतियों का विरोध तथा उपनिवेशों और प्रभु-देशोंका विरोध हमेशा और भी गहरा होता जाता है। इन सबसे पूँजीवादका पतन अवश्यंभावी रूपसे पास आ रहा है।

कॉमरेड स्तालिनने साम्राज्यवादी ताकतोंमें फूट डालनेवाले मुख्य विरोधोंको बतलाया। १९२८ में उन्होंने कहा कि साम्राज्यवादके मौजूदा विकासकी विशेषता यह है कि—

> "पूँजीवादियों के दल में मौजूद विभिन्न विरोधों में अमरीकी पूँजी और ब्रिटिश पूँजीवाद के बीच का विरोध प्रधान विरोध हो गया है।" (पृ. १९८)

कॉमरेड स्तालिनने इन विरोधोंका ठोस विश्लेषण किया है। उन्होंने दिखलाया है कि अमरीका और ब्रिटेन के बीच तेल के लिए, बिक्री के बाजार के लिए, निर्यात-बाजार के लिए, और बिक्री के बाजार तथा कच्चे माल के स्रोतों तक के आवाजाही के मार्गों के लिए संघर्ष चल रहा है।

> "......ये सारी बुनियादी समस्याएँ एक बुनियादी समस्या की ओर खींच कर ले जाती हैं—अमरीका और ब्रिटेनके बीच विश्व-प्रभुत्व के संघर्षकी ओर।"
> (पृ. १९८)

कॉमरेड स्तालिन का यह निष्कर्ष मौजूदा दुनिया की परिस्थिति की सही समझदारीके लिए आज भी बिलकुल अपरिहार्य है।

साम्राज्यवादी विरोधों का विश्लेषण करते हुये कामरेड स्तालिन ने दिखलाया कि वे नये साम्राज्यवादी युद्धों की ओर ले जा रहे हैं।

> "और," १९२८ की अपनी "सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) की केंद्रीय कमेटी के जुलाई के प्लेनमके नतीजों" पर रिपोर्टमें उन्होंने कहा, "इस सबमें सबसे महत्वपूर्ण चीज यह है कि नयी लड़ाइयों और हस्तक्षेपों की तैयारी करनेके मामले में मजदूर-वर्गके अंदर पूँजीवादका प्रधान खंभा सामाजिक-जनवाद है।" (पृ. २०१)

कम्युनिस्ट पार्टियोंके कामको समझाते हुए, कामरेड स्तालिनने सामाजिक जनवादके खिलाफ चौमुखा और चौकस संघर्ष करने की, और आगे बढ़े हुए देशों के मजदूरों और उपनिवेशोंके मेहनतकश अवाम का साम्राज्यवादी युद्धके खिलाफ एक संयुक्त मोरचा बनाने की जरूरत बतलायी।

कामरेड स्तालिनके ये उपदेश बिरादर कम्युनिस्ट पार्टियोंके लिए उनके तमाम कामोंके सिलसिलेमें महान सैद्धांतिक और राजनीतिक महत्व रखते हैं। वे सभी देशोंके कम्युनिस्टोंको नये युद्धकी आग लगाना चाहने वाले साम्राज्यवादियों और उनके प्रधान सहकारी, आजके दक्षिणपंथी सोशलिस्टोंका परदाफ़ाश करनेमें, तथा जनताको स्थायी जनवादी शांतिके लिए, जनवाद और समाजवादकी विजयके लिए और साम्राज्यवादके खिलाफ जंगके लिए मैदानमें लानेमें मदद करते हैं।

["तास" के सौजन्य से]

राज-भाषाके बारेमें विधान-परिषदका फैसला

रामविलास शर्मा

"विधान परिषद ने फैसला कर लिया है कि अन्तरराष्ट्रीय अंकों के साथ देवनागरी लिपि में लिखी 'हिन्दी' राज-भाषा होनी चाहिये, लेकिन संक्रमण के १५ साल के लिए अंग्रेजी का इस्तेमाल जारी रहना चाहिए।" (**टाइम्स ऑफ इन्डिया,** १५ सितम्बर, १९४९)

राजेन्द्र प्रसाद ने कहा,

"हमने जो सबसे ज्यादा अक्लमंदी का काम संभव था किया है और मैं खुश हूँ। मुझे आशा है हमारी संतति इसके लिये हमें धन्यवाद देगी।"

(**फ्री प्रेस जर्नल,** १५ सितम्बर, १९४९)

बहसके दौरानमें जवाहरलाल नेहरूने कहा, "हम भारतमें भाषावर क्रान्ति के द्वार पर खड़े हैं।" (**टाइम्स ऑफ इंडिया,** १४ सितम्बर १९४९)

राज-भाषा के संबंध में इस फैसले का जिसका नेहरू और राजेन्द्र प्रसाद ने इतने जोर से स्वागत किया है जनता के ऊपर, उसकी भाषाओं और सस्कृति के ऊपर, जनतंत्र और समाजवाद के लिये जनता के संघर्ष के ऊपर किस तरह असर पड़ता है? वे कौन से महान परिवर्तन हैं जो जनता के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में नेहरू इस "भाषावर क्रान्ति" के जरिये लाना चाहते हैं?

इस फैसले में—विधान में मंजूर मुंशी-आयंगर सूत्र में—पहली चीज जो देखने की है वह वह जगह है जो देशके राज और शासनके कामकाजमें अंग्रेजीको दी गयी है।

ऐसे सरकारी कामोंमें जिनके लिये विधानके लागू होनेसे पहले उर्दूका इस्तेमाल होता था, अंग्रेजीका चलन जारी रहेगा।

१५ साल के बाद भी, जिन कामों के लिए वह ठीक समझेगी उनके लिये अंग्रेजी के इस्तेमाल की इजाजत पार्लमेण्ट दे सकेगी।

संघ की इकाइयों में तमाम सरकारी कामों के लिए अंग्रेजीका इस्तेमाल पहले ही की तरह जारी रहेगा, जबतक कि राज्य की धरासभा कोई दूसरा कानून न बना दे।

विभिन्न राज्यों और राज्य और संघके बीच आपसी सूचनाके सरकारी कामोंके लिए अंग्रेजीका इस्तेमाल जारी रहेगा।

सुप्रीम कोर्ट (संघकी सबसे बडी अदालत), हरेक हाईकोर्टकी कार्रवाई अंग्रेजी भाषामें होगी; पार्लमेन्टके कानून, आर्डिनेन्स, आर्डर, नियम, कायदे और उप-नियम, सब अंग्रेजी भाषामें होंगे।

विधान लागू होनेके बादसे १५ साल तक राज-भाषाकी स्थितिको बदलनेके लिये कोई प्रस्ताव (बिल) या संशोधन पेश नहीं किया जा सकता।

इस तरहसे राज-भाषासे सबंधित धारा अंग्रेज़ीकी उसी हैसियतकी कारगर रूपसे गारण्टी कर देती है जो उसे ब्रिटिश साम्राज्यवादने दी थी।

नेहरूने इस चीजको एकदम स्पष्ट कर दिया था जब उन्होंने कहा : "हमारे पास अपनी खुदकी भाषा है, लेकिन अनिवार्य रूपसे, **चाहे आप इसका प्रस्तावमें ज़िक्र करें या न करें**, अंग्रेजी भारतमें एक सबसे अधिक महत्वपूर्ण भाषाके रूपमें जारी रहेगी, जिसको जनताकी एक बड़ी संख्या सीखेगी, और **शायद लाज़िमी तौरसे सीखेगी**।" **(टाइम्स ऑफ इण्डिया,** १४ सितम्बर, १९४९, शब्दों पर जोर मैने दिया है—लेखक)

इसलिये, अमलमें, अंग्रेज़ी लाज़िमी तौरसे राज-भाषाकी तरह जारी रहेगी, इस बातका विधानमें भले ही जिक्र न किया गया हो। लेकिन यह बात विधानमें भी मौजूद है जिसे सब देख सकते हैं। विभिन्न हिन्दुस्तानी भाषाओं पर अंग्रेजी पहले ही की तरह थुपी रहेगी और जहाँ कहीं अंग्रेजी की स्थितिमें थोड़ा भी परिवर्तन किया जायेगा तो वह दूसरी लाज़िमी भाषा, यानी हिन्दीके पक्षमें होगा। जहाँ तक ज़बरदस्तीके तत्व का सबंध है वह तो तब तक रहेगा जब तक कि यह विधान कायम हैं।

साम्राज्यवादके साथ दासता-पूर्ण सहयोग की और आर्थिक सकटके बोझेके खिलाफ़ जनताके सघर्ष पर फ़ासिस्ट हमलेकी उस नीतिका, जिस पर नेहरू सरकार अमल करती रही है, यह स्वाभाविक परिणाम है। भारतीय बड़े पूँजीपतियों के स्वार्थी वर्ग-हितों की नुमाइन्दगी करनेवाली नेहरू-पटेल सरकार अंग्रेजीसे जोकि अंग्रेजों द्वारा शिक्षित नौकरशाही, फौज के अफ़सरों और पुलिसकी भाषा रही है, न अपना नाता तोड़ना चाहती है न तोड़ सकती है। जब कांग्रेसी नेता हिन्दुस्तान की एकता की बात करते हैं तो उनका मतलब सिविल और मिलिट्री सर्विसोंसे सुरक्षित भारत के बड़े पूँजीपतियों के हितों की एकतासे होता है।

अगर आम जनता राज्य सस्थाओंके कामोंमे भाग ले तो ऐसा वह सिर्फ अपनी भाषाओंके ही द्वारा कर सकती है। लेकिन विधानके मातहत जिस पुलिस राज की रचनाकी गयी है वह जनताकी जनवादी कार्रवाइयोंको कुचलनेके लिये बना है। वह इन कारवाईयों में मदद देने के लिये नहीं बना है, जैसा कि उन राज्योंमें होता है जिनका उद्देश्य जमींदारों और पूँजीपतियों की ताकत को नेस्तनाबूद करना होता है।

इस तरह भारत में अंग्रेजीको लाज़िमी राज-भाषा की तरह जारी रख कर विभिन्न जातियों की भाषाओं और सस्कृतियों को कुचला जाता है।

दूसरे, यह जानकर कि अंग्रेजी के उस पर थोपे जाने को जनता अधिक समय तक बर्दाश्त नहीं करेगी, भारतीय पूँजीपति वर्ग हिन्दी के रूपमें एक दूसरी भाषा को भी रखते हैं। विभिन्न जातियों के बीच एकता और सहयोग की जनता की इच्छा का अपने खुद के वर्ग-हित में इस्तेमाल करता हुआ पूँजीपति वर्ग जनता को यह कहकर डरता है कि लाज़िमी राज-भाषा न रखी गयी तो देश में गड़-बड़ी फैल जायेगी।

यह यह कहने के बराबर है कि पूँजीवादियों के शोषण को सहे बिना भारतीय जनता अपने कामकाज को नहीं चला सकती। यह तो यह कहने के बराबर है कि कौमी समनता नामुमकिन है, भाषाओं और संस्कृतियों की समानता नामुमकिन है, क्योंकि पूंजीवादियों के जनवादी अधिकारों की परिभाषा में दो जातियाँ एक-दूसरी का उत्पीड़न किये बिना एक साथ नहीं रह सकतीं। सहयोग का अर्थ-जैसा कि पूँजीवादी अपने अनुभव से जानते हैं—है हावी होना।

जनताके जनतंत्रमें सहयोग का मतलब होगा जातीय स्वतंत्रता और समानताके आधार पर सहयोग करना; उसका मतलब जातीय उत्पीड़नके लिये चिकनी-चुपडी बात करना नहीं होगा।

१५ सालके अर्सेमें या उसके बाद हिन्दीको लाजिमी राज-भाषा बनाकर पूँजी-पति वर्ग जनताके हितोंमें विभिन्न-जातियों का सहयोग नहीं हासिल करेगा; बल्कि पूँजीपतियोंके हितोंमें एक जातिका दूसरी जातियों पर प्रभुत्व कायम कर देगा।

हिन्दीको लाजिमी राजभाषा बनाकर उसके जरिये हिन्दुस्तानकी एकताको कायम रखने के ढोंगका जनताके अपने अनुभवसे खुदही शीघ्र पर्दाफाश हो जायगा।

कांग्रेसी नेताओंने संघ की इकाइयों में भाषाओं की हैसियत के सबंधमें किसी तरह का हस्तक्षेप न करने के बारे में बहुत-सी बातें की हैं। वे जानते हैं कि इस तरह की दखलन्दाजीको जनता आसानी से बर्दाश्त नहीं करेगी। इसलिये सबसे पहले वे विधान में खुद प्रान्तीय खुद मुख्तारी के तमाम दिखावे का अन्त कर देते हैं; वैदेशिक व्यापार, चुंगियों, बन्दरों, यातायात और सूचना के साधनों, रक्षा और रक्षा-सबंधी उद्योगों, इनकम टैक्स, मुद्रा, आदिको एक निरंकुश केन्द्रके हाथोंमें केन्द्रित कर देते हैं। यह केन्द्र न केवल आत्म-निर्णयके अधिकारकी सिर्फ मुखालफत करता है बल्कि भाषाके आधार पर प्रांतोंका दुबारा बनानेकी मांग तकको बर्दाश्त करनेके लिये तैयार नहीं है। और तब वे जातीय प्रदेशोंके अन्दर भाषाकी आजाद हैसियत होनेकी बात करते हैं।

विधान लागू होनेके पाँच वर्ष बाद तक, "केन्द्रको अधिकार होगा कि वह **प्रान्त के अन्दर** कोयला, इस्पात, अबरख, सूती और ऊनी कपड़ों, कागज, खाद्य-पदार्थ (तिलहन और तेल सहित), पेट्रोल तथा उससे बनी चीजें और मशीनसे चलनेवाली गाड़ियोंके फालतू पुर्जोंकी पैदावार, सप्लाई और बँटवारेसे सबंधित व्यापार और खरीद फरोख्तके बारेमें कानून बनाये। इसका मतलब यह है कि प्रान्त की लगभग सभी चीजों का नियंत्रण और विभाजन टाटा, बिड़ला और डालमियाके हितमें होगा।"
मार्क्सवादी-लेख-संग्रह, पृष्ठ २५)

दूसरी जातियों के जीवन पर इस तरह से आर्थिक प्रभुत्व जमा लेने के बाद इजारेदार कहते हैं "हम तुम्हे आजादी देते है कि तुम अपनी भाषा में हमारी तारीफ के गीत-गाओ।"

पाँच सालका अर्सा विभिन्न जातियों के जीवन पर बड़े इजारेदारों द्वारा अपने प्रभुत्व को जारी रखने और उसे और बढ़ाने का पहला कदम है। ग़ैर-हिन्दी इलाकोंमे वहाँ की बोली जानेवाली भाषाओं को दबा कर हिन्दी की स्थितिको मजबूत और सुदृढ

बनाया जा रहा है। विभिन्न कांग्रेसी नेताओं के भाषणों, लेखों आदिसे यह चीज बिलकुल साफ हो चुकी है।

भारत सरकार के सूचना और ब्रॉडकास्टिंग विभाग के राज-मंत्री आर. आर. दिवाकर ने नीचे के शब्दों में इस चीजको पूरी तरह साफ कर दिया है :

"**देखने में** असेम्बली राज्य द्वारा और राज्यके कामोंमें इस्तेमालकी जानेवाली भाषाके संबंधमें बहस कर रही थी। लेकिन **वास्तव में** सवाल वहीं तक महदूद नहीं था; असलमें हम उस भाषाके संबंधमें बहसकर रहे थे जो न सिर्फ राजके कामोंमें बल्कि तमाम अन्तर-प्रान्तीय व्यवहारोंमें भी अंग्रेजीका स्थान ले सके। इसलिये **सारे भारत के लिये** कौनसी भाषा **आम भाषा** के रूपमें मंजूर की जाती है, इसचीज के नतीजे बहुत बड़े, गंभीर और ऐसे होनेवाले थे कि उनका असर **सारे भारतके** बोलचालके बिल्कुल **बुनियादी साधनों पर पड़ेगा**।" (**टाइम्स ऑफ इंडिया** अक्तूबर १९४९, शब्दों पर जोर-मैने दिया है—लेखक)

जो कुछ दिखाई देता है—हिन्दीका लाजिमी राज-भाषाकी तरह लादा जाना—वही काफी जनवाद विरोधी है। उसके नतीजे, **हिन्दी को** हिन्दुस्तानकी **आम भाषा** बनानेका **असली** मकसद,—आदि यह सब एकदम फ़ासिज़्म है।

जातीय सवाल के संबंध में कांग्रेसी नेता और गोलवालकर मंडली दोनों एक हैं। कांग्रेसी नेता जातीय उत्पीड़न को उस हद तक लेजाने को तैयार हैं जहाँ कि पूरे देश के लिये एक आम भाषा हो जाएगी, और दूसरी तमाम भाषाओं के जीवित रहने के अधिकार को छीन लिया जायेगा। राज-भाषा की धारा का **असली** उद्देश्य अन्तमें हिन्दी के पक्ष में तमाम दूसरी भाषाओं को दबा देने के अलावा और कुछ नहीं है, हॉलाकि इस चीज को फौरन **ज़ाहिर** नहीं किया जा रहा है।

गैर-हिन्दी इलाकों के कांग्रेसी नेता जानते थे कि उन इलाकों की जनतासे ये असली और दिखावटी उद्देश्य छिपे नहीं रहेंगे। इसलिये जनता को दिखाने के लिये कि उसकी भाषा के अधिकारों की उन्होंने रक्षा की थी, झूठी लड़ाइयॉ लड़ी गयी थी।

हिन्दुस्तान की तमाम भाषाओं की बराबर हैसियत का सवाल उनमें से किसीने नहीं उठाया। उसे उनमें से कोई उठाभी नहीं सकता था क्योंकि उनके खुदके इरादे पड़ोसी इलाकों, पडोसियों की भाषाओं और उनके खुदके इलाकों में जातीय अल्प-संख्यकों के अधिकारों पर हाथ साफ़ करने के हैं।

इसके बजाय, तथाकथित अन्तरराष्ट्रीय अकों के सवाल पर वे इस तरह लड़े कि मालूम हो कि वह एक बुनियादी चीज है, उसे माने बिना समझौता नहीं हो सकता। कांग्रेस हाई-कमाण्ड (नेताओं) के इन नपुंसक सेवकों की इन झूठी लड़ाइयों की नेहरू ने बुनियादी लोगों द्वारा लड़ी गयीं बुनियादी लड़ाइयॉ कहकर तारीफ की। राजेन्द्र प्रसादने अकोंके संबंध में तथा-कथित समझौते को उत्तर और दक्षिण के दृष्टिकोणों के बीच आपसी सुलह के रूपमें पेश किया।

सचाई यह है कि गैर-हिन्दी इलाकों के कांग्रेसी नेताओंने हिन्दीको राज-भाषा मंजूर करके अपने मत-दाताओंके साथ उतनी ही गद्दारी की है जितनी कि बाकी ने उसे लादकर की है।

यह डर कि कहीं ऐसा न हो कि जनताको उनकी कार्रवाइयाँ जनवादी न लगें, उन के कुछ भाषणोंमें ज़ाहिर हो गया था।

हिन्दी बोलनेवाले मेम्बरोंको जोकि यह कहते थे कि अगर वे अकोंके सवाल पर झुक गये तो उनके लिए अपने मत-दाताओंका सामना करना मुश्किल हो जायेगा, जवाब देते हुये रामलिंगम चेट्टियरने उनसे पूछा: क्या वे यह महसूस करते हैं कि अपनी भाषाको तिलाञ्जली दे देनेके बाद, अकोंके सवाल परभी झुक जानेपर दक्षिणके मेम्बरोंके लिये अपने मतदाताओंका सामना करना और भी कितना अधिक मुश्किल हो जायेगा? (**टाइम्स ऑफ इण्डिया, १४ सितम्बर १९४९**)

इस भाति अकों के प्रश्न पर इस "जीत" का उद्देश्य गैर-हिन्दी इलाकों की जनता की जनवादी भावनाओं को संतुष्ट करना था!

सतीशचंद्र सामंत (पश्चिमी बंगाल) की तरह के कुछ लोगों ने हिन्दुस्तान की राज-भाषा मानने के लिए अपनी भाषा के दावे को आगे पेश किया। कुछ दूसरों ने इस बात पर ऑसू बहाये कि गांधी की हिन्दुस्तानी को राज-भाषा नहीं माना गया। कुछ और ने सस्कृत के राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय गुणों को बखान किया। ये तमाम हल भी अत में मंजूर किये गये हल की बनिस्बत कुछ कम जनवाद विरोधी न होते।

गैर-हिन्दी इलाकों की जनता को धोखा देने के लिए एक और भी चाल चली गयी। उनसे कहा गया कि आम भाषा की उन्नति के लिए उनकी भाषाओं की भी सहायता ली जायगी। यहाँ तक कि हिन्दी के विकासके लिए तमाम दूसरी भाषाओं की सबसे अच्छी चीज़ोंको अपनानेके वास्ते एक एकेडेमी की स्थापनाका भी सुझाव किया गया है। यह अपने जनवाद विरोधी कामों को ढ़कने के लिये जनता की ऑखों में धूल झोंकने की कोशिश के अलावा और कुछ नहीं है।

यह याद रखना चाहिये कि काग्रेसी नेता एक जनवाद विरोधी सिद्धान्त पर चल रहे हैं, यानी वे गैर-हिन्दी इलाकों की भाषाओं को संस्कृत से भरे दे रहे हैं। वहाँकी आम जनताकी बोलियों से सबसे अच्छी चीजोंको लेकर उनका विकास करनेमें वे असमर्थ हैं। पूँजीवादी संस्कृति का पतन आम बोलियों और मुहावरोंके प्रति उनकी घृणामें प्रकट होता है। तब वे उनकी भाषाओं मे से कौनसी सबसे अच्छी चीज ले सकते हैं और दूसरों को दे सकते हैं:

स्तालिन ने कहा है,

> "पूँजीवादके शुरूकी अवस्थाओं में मजदूर वर्ग और पूँजीपतियों की एक "आम संस्कृति" की बात कही भी जा सकती है। लेकिन ज्यों-ज्यों बड़े पैमाने पर उद्योग-धंधोंका विकास होता है और वर्ग संघर्ष अधिकाधिक तेज होता जाता है, त्यों-त्यों इस 'आम-सस्कृति' का पिघलना शुरू हो जाता है। जब कि एक राष्ट्रके मालिक और मजदूर एक दूसरे को समझना बंद कर देते हैं तब कोई भी गंभीरतासे उन राष्ट्रकी 'आम संस्कृति' की बात नहीं कर सकता। जब कि पूँजीपति वर्ग लड़ाईका प्यासा हो और मजदूर 'लड़ाई के ख़िलाफ

लडाई' का एलान करता हो तो 'आम-मंजिल' क्या हो सकती है?"
(मार्क्सवाद और जातियों का प्रश्न, अं० सं०, पृ. ४८)

हिन्दुस्तानी मजदूर वर्ग ने जंगख़ोरों के ख़िलाफ़ लड़ाई का एलान कर दिया है। जबकि पूँजीपति वर्ग साम्राज्यवादी जंगख़ोरों के वफादार कुत्तेका काम करने की जी-जानसे कोशिश कर रहा है तब वह शांतिके लिये लड़ रहा है। दोनोंके बीचकीआम संस्कृति पिघली जा रही है, और यह खाई भाषा के क्षेत्र में भी दिखलाई देती है। मजदूरवर्गके नेतृत्वमें आम जानता तमाम सामाजिक और सास्कृतिक कामोंके लिये अपनी बोलनेकी भाषाओंका विकास करती है। पूँजीपतिवर्ग—जो हावी है वह और जो मातहत है वह भी—या तो पुरानी भाषाओं की ओर ताकता है या अंग्रेजीकी तरफ देखता है, और उनकी अपनी भाषाओं के द्वारा राज्यके कामकाजमें भाग लेनेसे जनता को रोकता है।

पूँजीपतिवर्ग भाषाओंकी कोई भलाई कहीं भी नहीं कर सकता, न उत्तरमें, न दक्षिणमें।

लेकिन वह अपनी पूरी ताकतसे भाषा के प्रश्न पर जातीय स्पर्धा और ईषाको भड़काने की कोशिश कर रहा है। हिन्दुस्तान के हरेक भाग में हर जगह वह प्रश्न को हिन्दी बनाम पंजाबी, या हिन्दी बनाम राजस्थानी, या मराठी बनाम गुजराती (डाँग इलाके में) या हिन्दी बनाम उर्दू आदि के रूप में रखता है। विधान परिषद का फैसला विभिन्न जातियों के बीच शांति और एकता कायम करने के उद्देश्य से नहीं किया गया है; बल्कि उनके बीच कलह और कटुताकी आग भड़काने के उद्देश्य से। इस तरीके से उसका मतलब विभिन्न राष्ट्रों की मेहनतकश जनता के बीच फूट डाल देना और अपने शोषकों के खिलाफ़ आम संघर्ष में एक होने से उन्हें रोकना है। मजदूर वर्ग को दूसरे तमाम जनवादियों और प्रगतिशील बुद्धिजीवियों को साथ लेकर पूँजीपतियों की इस नीच चाल को नाकाम करना चाहिये। उसे सैद्धान्तिक और अमली दोनों रूप में तमाम जातियों की और उनकी भाषाओं की पूर्ण समानता के लिये-खड़ा होना चाहिये।

जनता पर एक लाजिमी राज-भाषा के जबरदस्ती लादे जाने के खिलाफ आम संघर्ष में सब को एक होना चाहिये।

जातीय समानता के जनवादी सिद्धान्त को बुलंद रखना चाहिये।

जातियों के बीच भाषा के सवाल पर घृणा और दुश्मनी भड़कानेवाले लोग जनता के दुश्मन हैं।

मजदूर वर्गकी अन्तरराष्ट्रीय एकता पूँजीपतियोंकी चालोंको परास्त करेगी; और जनताको जनतंत्रके संघर्षका नेतृत्व करते हुये हिन्दुस्तानकी तमाम जातियों और भाषाओं की समानता और पूरी आज़ादीकी वह गारटी करेगी।

[शेष पृष्ठ २४ से]

जवाब में मैंने कहा :

मै अच्छी तरह जानता हूँ कि हमारे दुश्मन राजी-खुशीसे अपनी आकाक्षाओंको अस-लियत मान बैठते हैं; लेकिन मै सिर्फ इतना कह सकता हूँ कि उनकी आशाऍ निर्मूल है।

सोवियत यूनियनकी कम्युनिस्ट (बोल्शेविक) पार्टीमे, स्तालिन मे हमारा विश्वास पूर्ण और अटूट है। हम इस बारेमें रोजही बोलते हैं।

यह किसी "धार्मिक-सम्प्रदाय" का सवाल नही है जैसा कि हमारे दुश्मन दावा करते हैं। सवाल अनुभव के ऊपर आधारित सजग विश्वास का है, राजनीतिक विश्वासका जो स्तालिन के लिए हमारे प्यार को दूर नही करता बल्कि, इसके विपरीत, और भी दृढ़ बनाता है।

हम स्तालिन के लिये, अपने मित्र, अपने नेता के लिये अपने प्यार का ऐलान क्यो न करें?

हमारे दुश्मन हमारे नेतृत्व के अन्दर विरोध देखना पसन्द करेगे। वे हमारे नेताओ के सामाजिक उद्‌गम को देखना नहीं चाहते। वे इस बात को देखने से इनकार करते है कि ये नेता लेनिन-स्तालिन की भावना मे पले है। एक साथ काम करते हुए, एक दूसरेका समर्थन करते हुए और भाई-चारेसे एक दूसरेकी आलोचना करते हुए तथा तमाम परीक्षाओं में से एक ही साथ गुजरते हुए, सामूहिक नेताओंके रूपमें वे पले हैं।

हमारी पार्टी उन्नति कर रही है।

हम सदस्योको, कीमती लोगोंको हासिल कर रहे हैं। इस क्षेत्रमे, खास तौर से बडे कारखानोमे अपने इस कामको हमे बढाना चाहिये।

इसके साथ ही साथ हमे पार्टीकी परिमाणात्मक और गुणात्मक वर्ग-बनावट पर भी ध्यान देना चाहिये। हम ऐसे युगमे प्रवेश कर रहे है जिसमें पार्टीकी गुणात्मक बनावटका निर्णयात्मक महत्व होगा।

हमारा उद्देश्य कारखानो मे और तमाम पार्टी सगठनो के अन्दर मंजे हुए पक्के लोगो को संगठित करना है जिससे कि हमारी पार्टी तमाम जन-आन्दोलनके संचालन, सगठन और पथ-निर्देशन का कार्य निश्चयता और दृढता के साथ कर सके।

इसी नारे के आधार पर हम १२ वी पार्टी काग्रेस की तैयारी करेंगे, जो अगले अप्रैल महीने में **तूलूज** में होगी।

१२ वी पार्टी काग्रेसकी तैयारी करते समय यह जरूरी है कि हम अपने कामोको पूरा करे, अपनी गलतियोको दूर करे और सभी क्षेत्रोंमें अपने कामोको बेहतर बनायें।

हम शान्तिके सघर्षमे हिस्सा लेने मे मजदूर वर्गकी, फ्रासकी जनताकी सक्रिय रूपसे मदद करेंगे।

हम जनवादी एकताकी सरकारकी स्थापना करेंगे जो मेहनतकश जनताकी मॉगो को पूरा करेगी, उनकी आजादीको फिरसे कायम करेगी और उसे बढायेगी और फ्रासको फिरसे जनवाद और शान्ति के खेमेमें ले आयेगी।

इस तरह हम अपने देशको समाजवाद के रास्ते पर ले जायेंगे।

[**"फॉर ए लास्टिंग पीस, फॉर ए पीपुल्स डेमोक्रेसी"** के १६ दिसम्बर, १९४९ के **अंकसे उद्‌धृत**]

अन्तरराष्ट्रीय कम्युनिज़्म की नयी जीतों की ओर

("फ़ॉर ए लास्टिंग पीस, फ़ॉर ए पीपुल्स डेमोक्रेसी"
के ६ जनवरी, १९५० के अंकका सम्पादकीय।)

तमाम देशोंकी कम्युनिस्ट पार्टियों, मजदूर-वर्ग और मेहनत करने वाले लोगोंने—तमाम आगे बढ़ी हुई और प्रगतिशील मानवता ने—कॉमरेड स्तालिन की ७० वीं वर्षगॉठ मनाते हुए नया युद्ध भडकानेवालों के खिलाफ़, शान्ति, जनवाद और समाजवाद के लिये संघर्ष करने की अपनी महान शक्ति, एकता और तैयारी को प्रकट किया है।

कामरेड स्तालिन ने मानव जातिके लिये जो तमाम काम किये हैं, उनके लिये और उनके अमर विचारों में दुनिया की भलाई का, गुलामी और उत्पीड़न से मनुष्य जाति की मुक्ति का जो उज्वल भविष्य निहित है, उसके लिये, दुनिया का एक भी कोना ऐसा नहीं है जहाँ के मेहनत करनेवाले लोग और शांति तथा जनवाद के सभी सच्चे समर्थक कॉ. स्तालिन के प्रति अपार श्रद्धा और अनन्त आभार न प्रकट करते हों।

स्तालिन जन्म दिन के समारोहके संबंधमे-दुनियाने करोडों लोगोंका आन्दोलन देखा—-ऐसा आन्दोलन जिसकी इतिहास में कोई मिसाल नहीं है।

सिर्फ राजनीतिक रूपसे अंधे लोग और मजदूर वर्गके कट्टर शत्रु ही यह देखने मे फेल कर सकते हैं कि पूँजीवाद और औपनिवेशिक गुलामी के जुए को उतार फेंकने का मेहनतकश जनताका संघर्ष, दुनियामे सब जगह समाजवाद की विजयका संघर्ष अब इतना ताकतवर और भव्य हो गया है जितना कि वह पहले कभी नहीं था।

मजदूर-वर्ग के इस बेमिसाल अन्तरराष्ट्रीय आन्दोलन ने इस जानी-मानी बात को पूरी तरह व्यक्त कर दिया है कि कॉ. स्तालिन अन्तरराष्ट्रीय सर्वहारा कम्युनिस्ट आन्दोलन के नेता हैं, कि एक के बाद दूसरे देश मे समाजवाद की विजय के युग में जब कि तमाम मानव जाति कम्युनिज़्म की स्थापना की ओर बढ़ रही है—वह दुनिया भर के मजदूर-वर्ग के नेता है।

इस दिनोंमें दुनियाके मजदूर-वर्ग और मेहनतकश जनताने अन्तरराष्ट्रीय समाजवाद के लिये शक्तिशाली बोल्शेविक पार्टीके महत्व को, उस नये ढंग की सर्वहारा पार्टीके

महत्व को जिसकी बुनियाद डालने वाले और शिक्षक लेनिन और स्तालिन हैं—नयी गंभीरता के साथ आँका।

कम्युनिस्ट पार्टियों और मजदूर वर्गको इस बातका और भी अहसास हुआ कि मजदूर-वर्ग की डिक्टेटरशिपका विजयी होना, मजदूर-वर्ग का पूंजीवाद के जुएसे छुटकारा पाना, मजदूर-वर्ग की एक क्रान्तिकारी पार्टी के बिना, एक ऐसी पार्टी के बिना जो अवसरवाद से मुक्त हो, जो समझौता—परस्तो और घुटनाटेकुओं के प्रति निर्मम हो और जो पूंजीपति-वर्ग और उसकी राजसत्ता के संघर्ष में क्रान्तिकारी दृष्टिकोण रखती हो, असम्भव है। लेनिन और स्तालिन ने ठीक इसी तरहकी पार्टी को शिक्षित किया है।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) सभी देशोंके कम्युनिस्टोंकी नजर में आदर्श पार्टी है, वह ऐसी पार्टी है जिसका अनुकरण किया जाना चाहिये। स्तालिन के नेतृत्व मे सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) का उदाहरण कम्युनिस्ट पार्टियों को शक्तिशाली बनाने में और उनकी कतारों को अवसरवादियोंसे पाक करने में अपार महत्व का रहा है और है।

सोवियत संघकी सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था तमाम जनताके लिये सच्चे जनवादका आदर्श उदाहरण है। सोवियत समाजवादी जनवाद की मौजूदगी ही आगे बढ़नेका एक आह्वान है, दुनिया भरकी मेहनतकश जनता की क्रिया-शीलता के लिये एक कार्यक्रम है।

अन्तरराष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन और भी ऊँचे स्तर पर पहुँच गया है, वह उस सोवियत संघ के इर्द-गिर्द और भी ज़्यादा संगठित और सुदृढ़ हो गया है जो कॉमरेड स्तालिन के नेतृत्व मे कम्युनिज़्म की तरफ़ आगे बढ़ रहा है।

दुनिया की मेहनतकश जनता ने इस बात को बार-बार गर्व के साथ देखा है कि सोवियत राज्य दुनिया का सबसे ज्यादा ताकतवर और स्थायी राज्य है। इससे दुनिया की जनता के सामने एक बार फिर साबित हो जाता है कि जनता की ताकत समाजवाद में ही निहित है।

आज जब पूँजीवादी दुनिया संकट की भँवर में अधिकाधिक डूबती जा रही है, जब अमरीका से लेकर सभी पूँजीवादी देशों में उद्योग बन्द हो रहे हैं, बेकारी रोजाना बढ़ रही है तब सोवियत संघ और जनता के जनतंत्रों में न तो संकट का पता है न बेकारी का।

वे अधिकाधिक आगे बढ़ रहे हैं, अर्थतंत्र प्रगति कर रहा है और मेहनतकश जनताकी हालत सुधर रही है। इस सबसे पूंजीवाद की तुलनामें समाजवाद की उच्चता बिना शक-शुबहेके साबित हो जाती है; यह मजदूर वर्ग को पूंजीवाद के खिलाफ़ लड़ने के लिये संगठित करने मे एक शक्तिशाली क्रान्तिकारी ताक़त का कार्य करता है।

पूंजीवादी देशोमे और खास तौरसे उपनिवेशो और गुलाम देशोमें मेहनतकश किसान बहुत ही कष्टमय जिन्दगी बिताते हैं।

या तो किसानो के पास बिलकुल ही जमीन नहीं होती या वे इतने जरा-जरासे टुकड़े जोतते हैं कि उनसे उनके बालबच्चो का पेट तक नही भरा जा सकता।

उनका निर्ममतापूर्वक शोषण किया जाता है, उन्हे बरबाद किया जाता है और भुखमरी, गरीबी तथा मौतकी भट्टीमे झोंका जाता है। दूसरी ओर सोवियत संघमे सामूहिक फार्मोंके किसान ऐसे शहरी पूँजीपतिके शिकंजेसे बरी हैं जो देहातों को बेरहमीसे लूटता है; वे लुटेरे कुलक सूदखोरोंके शिकंजे से बरी हैं। दुनियाके मेहनतकश किसान इस बात को ज़्यादासे ज़्यादा देख और समझ रहे हैं कि समाजवादके जरिये ही उनकी मुक्ति होगी, कि सिर्फ मजदूर वर्गके नेतृत्वमे और उसके सहयोगमे, लेनिन और स्तालिन द्वारा दिखाये रास्ते पर आगे बढ़ कर ही वे अपनी सदियों पुरानी गुलामी को खतम करने के क़ाबिल हो सकेंगे।

समाजवादी सोवियत प्रजातंत्र संघमे जातीय या नस्ली भेदभाव नही है।

पूँजीवादी और औपनिवेशिक दुनिया मे विभिन्न जातियों की मेहनतकश जनता सोवियत संघ को एक आदर्श के रूप में और ऐसे एकमात्र सच्चे रास्ते के रूप मे देखती है जो उसे उसकी अपनी जातीय आजादी की तरफ ले जाता है।

अन्तरराष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन सैद्धान्तिक दृष्टि से और भी फ़ौलाद बना है। पहले कभी भी मार्क्सवादी-लेनिनवादी रचनाओं की ऐसा आम चलन नहीं था जैसी कि आज हो रहा है। पहले कभी भी दुनिया के कम्युनिस्टों ने लेनिन और स्तालिलन की रचनाओ का ऐसा गहरा अध्ययन नहीं किया था जैसा कि वे आज कर रहे हैं।

मजदूर वर्ग और तमाम मेहनतकश जनता खुद देखती है कि उसकी लड़ाई में लेनिन और स्तालिन की शिक्षाऍ एक शक्तिशाली हथियार हैं।

ये शिक्षाएँ सोवियत समाजवादी समाजकी कामयाबियो मे अपनी पूरी गरिमा के साथ सामने आयी हैं। उन्हें उन महान परिवर्तनों के जरिये हासिल किया जा रहा है जो आज जनताके जनतंत्रों मे हो रहे हैं।

अब वहॉ बडा पूंजीपति वर्ग नहीं रहा है। उद्योगो का राष्ट्रीकरण हो गया है और वे जनताकी सम्पत्ति बन गये हैं। मजदूर वर्ग सिर्फ अब ही ये शानदरा कामयाबियॉ हासिल कर सका है।

मार्शलीकृत पश्चिमी योरप के विपरीत जनताके जनतंत्र लड़ाईके पहले की पैदावार के स्तर से ऊपर उठ गये हैं और वहॉकी जनताकी रहन-सहन का धरातल काफी ऊँचा हो गया है।

जमींदारों को—मुफ्तखोरों, अर्द्ध-गुलामी के युगके शर्मनाक अवशेषों को, मिटा दिया गया है। जमीन सिर्फ उसके जोतने वालों की—मेहनतकश किसानों की

सम्पत्ति है। जनताके जनतंत्रों में खेतीके विकास में लम्बी डगें भरी गयी हैं क्योंकि किसान पहली बार अपने लिये काम कर रहे हैं। उन देशों के बुद्धिजीवी अब अपने को शब्द के सच्चे मानी मे आजाद समझते हैं, यानी थैलीवालों से आजाद; और वे अपनी जनताकी खुशहाली के लिये, अपने देशकी खुशहाली के लिये ईमानदारी से काम कर रहे हैं।

मध्य और दक्षिणी पूर्वी योरप की मेहनतकश जनता लेनिन और स्तालिन के विचारों की महानताको पूरी तरह समझती है। उनकी शिक्षाएँ इन देशोंमें कम्यु-निस्ट और मजदूर पार्टियों के लिये, मजदूर वर्ग और मेहनतकश किसानो के लिये रोजमर्राके रास्ता दिखाने वाले सिद्धात बन गयी हैं।

कॉमरेड स्तालिन की शिक्षाओं की अजेय शक्ति चीन की जनता की महान ऐतिहासिक विजय मे सामने आयी है।

महान चीनी जनता—जिसने कम्युनिस्ट पार्टीकी अगुआईमे जनता की क्रान्ति पूरी की, सामन्तों और अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियोंके पुराने जुएको खतम किया, चीनकी जनताका जनतंत्र कायम किया और अब नये समाजका निर्माण करने की दिशा मे पहले कदम उठा रही है—मार्क्सवाद-लेनिनवाद के विचारो, स्तालिन वाद के विचारो से आलोकित रास्ते पर आगे बढ़ रही है।

कोई भी लोहे का पर्दा, कोई भी पुलिस कार्रवाई, पूँजीपतियो के घृणित सेवक दक्षिण-पन्थी सोशलिस्ट नेताओ और फासिस्ट टीटो गुटकी कोई भी घृणित बात, रोम के पोप और प्रतिक्रियावादी पादरियों की तमाम फौज का कोई भी जहरीला प्रचार मार्क्सवाद-लेनिनवाद जैसे महान विचारो को अन्तरराष्ट्रीय मजदूर वर्ग की चेतना में प्रवेश करने से नहीं रोक सकता।

लेनिन और स्तालिन की सैद्धान्तिक रचनाओं ने और क्रान्तिकारी लडाइ में उनकी मिसाल ने अन्तरराष्ट्रीय मजदूर वर्ग के प्रमुख नेताओं को शिक्षित किया है। क्रान्तिकारी आन्दोलन का सफलतापूर्वक निदर्शन कैसे किया जाय, पूँजीवाद के खिलाफ लड़ाई के लिये जनताको संगठित कैसे किया जाय, इसका उनके सामने जीवित उदाहरण स्तालिन हैं।

अन्तरराष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलनके विकास के लिये कॉमरेड स्तालिन ने जितना सब कुछ किया है उसको बढ़ा कर आँकना मुश्किल है। जहाँ लेनिन ने कम्युनिस्ट पार्टियों के बोल्शेविकीकरण करनेके काम की शुरूआत की थी, वहाँ स्तालिन ने कम्युनिस्ट पार्टियों को ताकतवर, जनताकी लडाकू और नयी तरह की क्रान्तिकारी पार्टियो में बदलने की दिशा में मजदूर आन्दोलन को मोड़ा और संगठित किया है।

स्तालिन मानव जाति के मित्र हैं, मजलूमों और दबे-कुचलों की उम्मीद हैं। स्तालिन और उनके द्वारा निर्देशित समाजवादी सोवियत प्रजातंत्र संघ द्वारा

दुनिया की शान्ति के लिये लड़ी जानेवाली वीरतापूर्ण लड़ाई तमाम देशों की उस मेहनतकश जनता के हितों की रक्षाका आदर्श है जिसके ऊपर साम्राज्यवादियों द्वारा भड़काये जानेवाले नये युद्धका खतरा मंडरा रहा है।

मगर इतिहास अपना फरमान जारी कर चुका है : पूँजीवाद अपने अंत की तरफ तेज़ी से जा रहा है। पूँजीवाद, जिसकी मौतका परवाना कट चुका है, के बारे में इतिहास का यह फ़रमान सोवियत संघ मे कम्युनिज़्म के विजयी अभियान मे अदम्य शक्ति से प्रतिबिम्बित होता है। वह मध्य और दक्षिणी-पूर्वी योरप के देशों के समाजवाद की तरफ विजयी मार्च में प्रतिबिम्बित होता है। वह चीनमें जनता की विजयी क्रान्तिमे प्रतिबिम्बित होता है। वह पूंजीपति वर्ग के खिलाफ़ अन्तरराष्ट्रीय सर्वहारा के बढ़ते वर्ग संघर्ष मे प्रतिबिम्बित होता है। वह उपनिवेशों और गुलाम देशोंमे मेहनतकश जनताके लहरें मारते हुए राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलनमें प्रतिबिम्बित होता हैं।

यह मौतका फरमान कॉमरेड स्तालिन के लिये आनेवाले अनगिनत अभिनन्दनोंमे— गहरा प्रेम, लगन और तमाम देशों की आशाको ज़ाहिर करनेवाले शान्तिके लिये, नये युद्ध की साजिश रचनेवालों के खिलाफ और आर्थिक, राजनीतिक और राष्ट्रीय मुक्तिके लिये लड़ने की ख्वाहिश और अजेय इच्छा-शक्ति को ज़ाहिर करनेवाले अभिनन्दनोंमे, अभूतपूर्व शक्तिके साथ प्रतिबिम्बित होता है।

दुनियाके मजदूर वर्ग और मेहनतकश जनता ने शान्ति के लिये लड़ने की अपनी इच्छा को एक बार फिर दृढ़ता के साथ दिखा दिया है। उसने एक बार फिर ऐलान कर दिया है कि अगर साम्राज्यवादी एक नया विश्व युद्ध शुरू करते हैं तो तमाम जनता साम्राज्यवाद के खिलाफ़ मैदान में उतरेगी और उसे सारी दुनिया में अन्तिम रूप से खतम कर देगी।

दुनिया की सर्वहारा और मेहनतकश जनता को अपने ध्येय की न्यायपूर्णता मे और अपनी ताकत मे पूरा विश्वास है और वह लेनिन-स्तालिन के, अन्तरराष्ट्रीय कम्युनिज़्म के महान और अजेय झण्डे के नीचे शान्ति, जनवाद और समाजवाद के लिये लड़ाई के रास्ते पर आगे बढेगी।

पोलैण्ड में क्रान्तिकारी जागरूकता की लड़ाई*

बोलेस्लाव बीरत

हमारी पार्टीको जिसने बहुत सी सफलताएँ प्राप्त की हैं, अपने विकास के दौरानमे बहुत सी कठिनाइयों और खतरो का भी सामना करना पड़ता है। अगर इन कठिनाइयों और खतरों पर सफलतापूर्वक काबू पाना और उन्हे हटाना है तो पार्टी को उनका मुकाबला करना होगा।

पार्टी अपने कामो को दो परस्पर विरोधी वर्ग-मोर्चों के बीच तेज होते हुए संघर्षों की परिस्थितियोमे पूरा कर रही है। यह संघर्ष हमारे अन्तरराष्ट्रीय सम्बंध और राष्ट्रीय जीवन दोनों मे ही खास तौरसे तीव्र रूपमे प्रकट होता है।

इस संघर्ष का पूरी पार्टीसे, उसकी हर इकाई और हरेक सदस्यसे तीव्र समझदारी और जागरूकताका तकाज़ा है।

सोवियत संघ की निरन्तर बढ़ती हुई शक्ति, चीनी जनता की ऐतिहासिक विजय, जर्मनीमें हुए महान परिवर्तन— जिनका कि पोलैण्डके लिये खास महत्व है— और बढ़ता हुआ शान्ति आन्दोलन तथा साम्राज्यवादी कैम्प के आपसी विरोध . यह सब अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति की निर्णायक घटनाएँ हैं।

इन परिस्थितियों के अन्तर्गत, साम्राज्यवाद की राजनीतिक मशीन को दबाव डालने के नये तरीकों की, धोखा देने के और भी बेशर्म उपायों की तलाश करने क लिए मजबूर होना पड़ता है और मेहनतकश जनता के मुक्ति आन्दोलन मे फूट फैलाने और उसे कमजोर करने के लिए वह और भी गन्दे हथकण्डों का इस्तेमाल कर रहा है।

* पौलैण्डकी मजदूर पार्टीकी केन्द्रीय कमिटीके तीसरे प्लेनम (बड़ी बैठक) के सामने पार्टी के अध्यक्ष, का. बीरत की रिपोर्टका संक्षिप्त भाग और उनका अन्तका भाषण।—स०

मेहनतकश जनता की प्रतिरोध भावना को कुचलने मे पुराने अवसरवादी डेमोक्रेटिक नेताओंकी —जिन्हे पूंजीपति वर्ग प्रधान मंत्रियों और मंत्रियों की गद्दियों पर बैठाता है—भ्रष्टता और गद्दारी अब बहुत कारगर तरीका नही रह गया है।

ऐसी परिस्थितियोंमे असर डालने की राजनीतिक-सैद्धान्तिक चालोंका उपयोग करने के साथ-साथ अनिवार्य रूपसे और अधिकाधिक पुलिस का भी इस्तेमाल किया जाता है, मजदूर वर्गके आन्दोलन पर जबरदस्त जोर डाला जाता है, मजदूरोंके आन्दोलनके अन्दर हर तरहकी राजनीतिक ढुलमुलाहट का फायदा उठाया जाता है और कोशिश की जाती है कि इन ढुलमुलहाटोंको तरह-तरह की गुमराहियोंके अंधे मार्ग पर ले जाया जाये।

क्रान्तिकारी आन्दोलनका इतिहास दिखलाता है कि पार्टीकी मार्क्सवादी-लेनिनवादी नीति से गुमराह होकर गुटबन्दीके आधार पर किया जानेवाला काम मजदूर वर्गके आन्दोलन के अन्दर पुलिस और खुफिया के दलालों और तोड़-फोड़ करनेवाले एजेण्टोंके घुस आने के लिए और राजनीतिक भडकावेके कामोंके लिए विशेष रूपसे अच्छा वातावरण और उपजाऊ जमीन पैदा कर देता है।

आज हम देखते हैं कि साम्राज्यवाद-विरोधी कैम्प के अन्दर राजनीतिक गडबड़ी और फूट-फाट फैलाने की नयी, बडे पैमाने पर कोशिशें की जा रही हैं। इन गड़बड़ियो का आधार भड़कानेवालों और पुलिस के एजेण्टो का वह टीटो गिरोह है जिसे लड़ाई के पहले तीव्र होते हुए वर्ग संघर्ष के काल मे, और लडाई के दिनोंमें बढ़ते हुए राष्ट्रीय आजादी के संघर्ष के दौरानमे साम्राज्यवादियोंने भर्ती किया था।

इन कार्रवाइयों के गन्दे, छिपे रूप को रायक के मुकदमे ने बेनकाब कर दिया है। इसमे जरा भी सन्देह नहीं कि यूगोस्लाविया के षडयन्त्रकारी, भड़कानेवाले साम्राज्यवादी दलाल अपने देशको अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियों के हाथमें सौप देनेके लिए हर तरह से कोशिश कर रहे हैं और इन कोशिशोंको जारी रखेंगे।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शविक) की क्रान्तिकारी जागरूकता और पैनी दृष्टि ने ठीक समय पर दलाल-टीटो की शत्रुता का भण्डाफोड कर दिया।

बुदापेस्त के मुकदमे ने पुलिस और खुफिया के साथ इस गुट के सम्बंधों को खोल कर रख दिया और जाहिर कर दिया कि भड़कानेवालों और साम्राज्यवादी दलालो का यह गिरोह हंगरी तथा दूसरे जनता के जनतंत्रो के अन्दर जनता की सत्ता को उलटनेकी शैतानी साजिशों मे जुटा हुआ है।

इसीलिए, अन्तरराष्ट्रीय पैमाने पर और जनता के जनतंत्रो के अन्दर घरेलू नीतिमे, दोनों ही जगह साम्राज्यवाद की भडकानेवाली चालों और षडयंत्रकारी कार्रवाइयो के प्रति जागरूकता को तेज करने की जरूरत है।

इसमें जरा भी सन्देह नहीं हो सकता कि जनता की सत्ता को उलटने के लिए भडकाना और अपने साम्राज्यवादी दलालोंके द्वारा अच्छी तरह से छुपी-छिपी साजिशें करवाना ही दुश्मनकी कोशिशो के मुख्य तरीके हो गये हैं। इसलिए पार्टी के सम्बंध में दुरंगी चाले चलना और धोखेबाजी करना दुश्मन के काम के व्यापक तरीके हो गये हैं।

क्या हम कह सकते हैं कि अपने राज-तंत्र और अर्थ-तंत्र के अन्दर—और पार्टीके अन्दर की तो बात ही छोडिए—साम्राज्यवादी दलालोंको घुसेडनेकी साजिशो के सम्बंधमे हम काफी जागरूक रहे हैं?

इस चीजका उल्लेख करना जरूरी है कि हमारे बहुतसे कामरेडो के, जिन्हे पार्टीने जिम्मेदार जगहो पर रखा है, व्यावहारिक कामोंमे ढीलढाल और आराम-तलबीसे पैदा होनेवाली लापर्वाही झलकती है, चाहे वह एकदम खुलकर न भी जाहिर होती हो।

रायक मुकदमेके बहुत पहले, कई महीनो तक पार्टीके नेतृत्वने हमारे राज्यतंत्र के कुछ सबसे महत्वपूर्ण अंगोंकी जॉच-पडताल की थी। उस जॉच-पड़तालने दिखला दिया था कि उनके अन्दर जागरूकताकी और वातावणरके नकारात्मक प्रभावोसे बचनेके प्रयत्नोंकी कमी थी।

आसान और आरामतलबीके जीवनकी इच्छा, नौकरशाही आदते, जनताकी जरूरतोंके प्रति उदासीनता—यही वे कारण हैं जो लापर्वाही और बे-फिक्रीको जन्म देते हैं।

अपनी खुदकी या हमारी सामान्य सफलताओंमे मगन हो जाना, घमण्ड करने लगना, विदूषकों की तरह हंसी-दिल्लगीमें लग जाना, अनिवार्य कठिनाइयोंको देखनेसे मुंह चुराना, दुश्मनकी हरकतोंकी तरफसे ऑख बन्द कर लेना—ये प्रवृत्तियॉ, दुर्भाग्यसे, ऊँचे स्थानोंपर काम करनेवाले हमारे कार्यकर्ताओंमे भी मिलती हैं।

इस तरह का दृष्टिकोण अवसरवादी लापर्वाही को जन्म देता है। अच्छी तरह से नकाबपोश दुश्मन को फौरन पहचान लेना चूंकि मुश्किल होता है, इसलिए नतीजा निकाल लिया जाता है कि दुश्मन कहीं है ही नहीं।

साम्राज्यवादी दलालों की षडयंत्रकारी शैतानी हरकतों का—जिनका रायक के मुकदमे में पर्दाफाश हो चुका है—एक आम अन्तरराष्ट्रीय स्वरूप है और इसलिए, कम से कम इसी खयाल से, उनको कम करके नहीं ऑकना चाहिए।

पोलैण्ड की विशेष परिस्थितियों का थोड़ा ही और गहरा विश्लेषण करके हम देख सकते हैं कि हमारे देश मे, वस्तुगत और मनोगत दोनोंही रूपमं, खुफिया-गीरी, तोड़फोड, तथा साजिशों और आतंक की षड्यंत्रकारी कार्रवाईयोंके खतरेके लिए दूसरे किसी भी देश से अधिक बड़ा आधार है।

वस्तुगत रूपसे इसलिए कि हमारे राज-संगठनने बहुतसे पुराने अधिकारियों को अपने अन्दर ले लिया था। इसमे भी जरा भी सन्देह नहीं कि पोलैण्डके शासक वर्गोके, जिनकी सत्ता छीन ली गयी है, बचे-खुचे दलाल जो अब देशके बाहर हैं— संख्या में अपेक्षाकृत अधिक हैं और अधिक क्रियाशील हैं, और अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियोंके षडयंत्रकारी खुफिया जालके साथ उनका दृढ़ सम्बंध है।

चतुर "सनाकजा द्रोव्का" (पुराने पोलैण्ड के सेनापति-मण्डलका दूसरा विभाग जिसका काम मजदूर वर्ग और किसानो के सगठनो के भीतर भडकानेवालो और जासूसों को भरना था—सं.) के पुराने अफसर, बदनाम "डिफेन्स्यावा" (गुप्त पुलिस) के भेडिये और जासूस, सार्वजनिक जीवन से अलग रहने के बजाय तमाम देशमें फैल गये हैं, और उन्होने जनवादी संगठनो की,—जिनसे, दुर्भाग्य से हमारी पार्टी भी बाहर नहीं है, सदस्यता के कार्ड बहुतायत से हासिल कर लिये हैं।

अन्तमें, आज इस बात के अकाट्य सबूत मौजूद हैं कि हिटलरी कब्जे के दिनोंमे अण्डरग्राऊण्ड (भूमिगत) प्रतिक्रियावादी संगठनों के प्रमुख और मझोले नेताओंने पोलैण्ड की मजदूर पार्टी और लुडोवा गार्ड द्वारा संगठित किये गये राष्ट्रीय आजादी के आन्दोलन के खिलाफ़ जर्मन हमलावरो के संघर्ष मे व्यापक रूपसे जर्मनोके साथ सहयोग किया था।

देशकी आजादी के बाद, षड़यंत्रकारी खुफिया कामों मे दक्ष इस प्रतिक्रियावादी अण्डरग्राऊण्ड (भूमिगत) फौज के लोगों को जनता की सत्ताके खिलाफ़ काम करनेवाले हथियारबन्द गिरोहों के मुख्य केन्द्रोंके रूपमें संगठित कर दिया गया था।

यह याद रखना चाहिये कि इन प्रतिक्रियावादी लोगों की सहायता केवल कब्जा करनेवाले अधिकारी ही नहीं, बल्कि पोलैण्डमे जनता की सत्ता की विजय से डरनेवाले अंग्रेज-अमरीकी "मित्र" भी करते थे।

देशके अन्दर और बाहर बचे-खुचे हुए इन प्रतिक्रियावादियों पर भरोसा करके साम्राज्यवादियों ने बराबर हमारी राजसत्ता के विभिन्न विभागों और आर्थिक सगटनो के अन्दर अपने एजेण्टों को संगठित करने की कोशिश की है और अब भी कर रहे हैं।

हमें यह याद रखना चाहिए कि कम्युनिस्ट-विरोधी कार्रवाइयोंमे लगे सनाकूजा (प्रतिक्रियावादी—सं.) सगठन और फ़ासिस्ट मुल्को के इसी तरह के संगठनों के बीच दूसरे महायुद्ध के बहुत पहलेसे ही बहुत व्यापक समझौता था।

आज हमारे पास इस बातके अनेक अकाट्य सबूत है कि सनाकूजाके बडे नेताओंने आस्ट्रिया के खुफिया विभाग के भड़ैत दलालों और उसके हुक्म बजानेवालोंकी हैसियत से अपनी नौकरीका जीवन शुरू किया था।

फिर इसमें क्या ताज्जुब है कि "द्वाज्का" (दूसरे विभाग) के उनके वारिसो ने हिटलरके खुफिया विभागकी सेवा की और आज वे अपने अमरीकी आकाओंके जूते चाट रहे हैं। न इसीमे कोई ताज्जुबकी बात है कि वे अपने तमाम नपुंसक क्रोधको जनताके पौलैण्डके खिलाफ, आजाद जनताके खिलाफ लगा रहे हैं।

जारोस्जे-विक्ज और लेशोविक्जके नेतृत्वमे काम करनेवाले दूसरे विभागके एक पुराने गुटकी तरफ पार्टीके जिम्मेदार पदो पर स्थित हमारे कुछ कामरेडोंके रवैयमें, राजनीतिक अंधेपन और अक्षम्य अवसरवादी लापर्वाहीका बहुत स्पष्ट मजाहरा हुआ था।

इस गुटने षड्यंत्रकारी और खुफियागीरी के उद्देश्योसे मार्क्सवादी संगठनों, अर्थात पोलैण्ड की मजदूर पार्टी और लुडोवा गार्डके अन्दर घुसनेकी कोशिश की थी।

इस परिस्थिति के लिए सबसे अधिक कौन जिम्मेदार था?—कामरेड स्पाई-चाल्स्की, जो लुडोवा गार्ड के और बादमे लुडोवा फौज के सूचना विभाग के प्रधान थे; कामरेड गोमुल्का, पार्टी के मंत्री, जिनकी सहमति से का. स्पाईचाल्स्की काम करते थे और जिन्होंने खुद ऐसे बहुत से लोगों को पश्चिमी प्रदेश के मंत्री-विभाग में रख दिया था; और कामरेड क्लिश्को, जो आजादी के बादसे पिछले वर्ष के सितम्बर तक पार्टी कादरो (कार्यकर्ताओं) से सम्बंधित नीतिके संचालक थे।

अवसरवादिता, वर्ग जागरूकता की भावना का कुन्द हो जाना और सैद्धातिक आधारका मिट जाना—यही इस तरहके कामों के स्रोत थे—जिन्होंने नकाबपोश दुश्मनो, भडकानेवालो, तोड-फोड करनेवालों और गद्दारों को अपनेको वीरोंके रूपमे पेश करनेमे मदद दी—जिन्होंने उन्हें पार्टी की सदस्यताके कार्डोंकी आड़में और उस जनवादी पोलैण्डके जिम्मेदार पदोंकी आडमें छिपनेमे मदद दी—जिसे सोवियत सैनिकों और पोलैण्डके छापेमारों और सैनिकोंने संयुक्त रूपसे अपना खून बहाकर हासिल किया था। इस तरह की चीजोंका हम क्या कारण बता सकते हैं? इन चीजोंके लिए संकुचित व्यावहारिक कामो पर अत्यधिक ध्यान केन्द्रित करने की जिम्मेदारी कुछ थोडी नहीं है। लेकिन क्या हर चीजका जबाब केवल इसीसे दिया जा सकता है? हर्गिज नहीं।

इस बीमारी का स्रोत निस्सन्देह राजनीतिक आधार का गायब हो जाना, वर्ग जागरूकता का कुन्द हो जाना और क्रान्तिकारी दृष्टिकोण से, मार्क्सवादी-लेनिनवादी दृष्टिकोण से भटक जाना है। मजदूर वर्ग के साथ सम्पर्क का कमजोर हो जाना भी इस बीमारी का स्रोत है।

कामरेड स्तालिनने आगाह किया था कि एक साधारण वर्ग शत्रु की अपेक्षा जो जनताकी सत्ता से खुले-खुले नफरत करता है, वह दुश्मन कहीं ज्यादा खतरनाक है जो अन्दर से छिपकर विच्छिन्न करता है, तोड-फोड़ करता है और दोगली चालें

चलता है और इन कामों के लिए पार्टी कार्ड का इस्तेमाल करता हैं; वह जो ऊपर की कमिटियो की जागरूकता को धोखे मे डालने के लिए कपटपूर्ण मौखिक श्रद्धा के द्वारा; बेहद परिश्रम के ढोंग द्वारा, बनावटी लच्छेदार बातोंके द्वारा या निकृष्ट चापलूसी के द्वारा अक्सर अपनी असलियत को छिपाये रहता है।

हमारा बुनियादी और जरूरी काम है कि हम उस दुश्मन को पहिचानना सीखे जो चतुरता से अपने को छिपाने की, छिपकर आराम से जम जानेकी, अक्सर पार्टी-कार्ड के द्वारा अपनी असलियत पर पर्दा डालने की और गुप्त रूपसे अपने षडयंत्रकारी कामो को आगे बढाने की कोशिश करता है।

इसे कैसे सीखा जा सकता है ? उसे सीखनेका एकमात्र मार्ग यह है कि ऊपरसे नीचे तक पार्टीकी तमाम कमिटियोंके कामको हम ऊँची सतह पर ले जायँ; काम करनेके अपने ढंगमे बुनियादी परिवर्तन करे; अपनी पार्टी, शासन-तंत्र और अर्थ-तंत्रके कार्यकर्ताओकी शिक्षाकी गतिको और तेज करें, उनके राजनीतिक ज्ञानको बढाये, और उनकी सैद्धान्तिक दृढताको और मजबूत बनाये।

सैद्धान्तिक-राजनीतिक शिक्षा हमारी पूरी पार्टीका और हरेक सदस्यका एक प्रमुख काम बन जाना चाहिए। निम्न पूंजीवादी मनोवृत्तिके अवशेषोका, जो हमारी पार्टी की जागरूकता और उसकी लड़ाकू शक्ति को कमजोर बनाते हैं, और भी जोरो से मुकाबला करना जरूरी है।

जरूरी हैं कि सड़े हुए उदारवाद को खतम कर दिया जाय और विरोधी वातावरण के साथ सम्पर्क और सम्बंधो के सिलसिले मे पार्टी सदस्यों के प्रति और भी ज़्यादा नैतिक और सैद्धान्तिक सख्ती बरती जाय।

पार्टी को जानना चाहिए कि उसके सदस्यों का पिछला जीवन क्या था और उनके आज के जीवन का भी सार-तत्व क्या है।

यह आवश्यक है कि पार्टी संगठन का कामकाज प्रत्येक कामरेड को, जिसे पार्टी किसी भी विभागका कार्य सौपती हैं, हर तरह से मदद करे, और उसके काम, जीवन, सैद्धान्तिक दृढता, राजनीतिक ज्ञान और पेशेवर निपुणता की उन्नति को नियंत्रित करे।

आवश्यक है कि पार्टी के जिम्मेदार स्टाफ को उन तमाम पदलोलुपों, अकस्मात आजानेवाले लोगों और सैद्धान्तिक दृष्टिसे विरोधी तत्वों के जो शत्रुतापूर्ण वातावरण के दबावके सामने आसानी से झुक जाते हैं, बोझसे मुक्त किया जाय।

उन ज़िम्मेदार कामरेडो की नौकरशाही, खुदग़र्ज़ और समाज-विरोधी आदतों के सम्बंधमे, जो पार्टी के साथ सम्पर्क खो देते हैं और पार्टीके नियंत्रण से बचने की

प्रवृत्ति दिखलाते हैं, सोशल-डेमोक्रेटवादी उदारता दिखलानेके रवैये का अन्त कर दिया जाना चाहिए।

पूरे पार्टी संगठन की और उसकी प्रत्येक इकाई की जागरूकता को तेज बनाने के लिए यह सबसे पहली शर्त है।

* * *

पोलैण्ड की अर्थव्यवस्था को फिर से जमाने की तीन-वर्षीय योजना १ नवम्बर को, यानी कार्यक्रम से दो महीने पहले ही, पूरी हो गयी थी।

योजना के पूरे होने से सम्बंधित आँकड़े उद्योग-धंधों और कृषि के तेज विकास के सबूत हैं।

हमारा आर्थिक निर्माण का कार्य, हमारे देशके समाजवादी निर्माण का कार्य भीषण वर्ग संघर्षकी परिस्थितियोंके दरम्यान चल रहा है, वह पूंजीपति-वर्गोंके जिनकी मौतका परवाना कट चुका हैं, हिंसापूर्ण विरोध की परिस्थितियों के दरम्यान, जनता के पोलैण्ड की प्रगति और विकास के मार्ग मे अडंगे अटकाने के लिए अमरीकी, ब्रिटिश तथा दूसरे साम्राज्यवादियों द्वारा हमारे देशमे भेजे गये दलालों, जासूसों, तोड़-फोड करनेवालों, और विध्वंसकारियों की लगातार कारंवाइयों की परिस्थितियों के दरम्यान चल रहा है।

इस चीजको साफ-साफ कहना चाहिये कि आर्थिक निर्माण के क्षेत्र में हमारी पार्टी की बहुत सी इकाइयॉ और हमारे आर्थिक संगठन की बहुत सी प्रमुख इकाइयॉ वर्ग शत्रु के अस्तित्व को भूल गयी हैं।

अन्दरूनी और बाहरी वर्ग शत्रुओंके अस्तित्वके सम्बंधमे यह भुलक्कडपन राज्य के और सरकारी भेदोको सुरक्षित रखनेके सम्बंधमें दिखलाये गये हल्के दृष्टिकोणसे जाहिर होता है, यह दृष्टिकोण हमारी आर्थिक, राज्यकी और यहॉतक कि पार्टीकी संस्थाओमें भी व्यापक रूपसे प्रचलित है।

वर्ग-शत्रुके अस्तित्वके संबंधमे भुलक्कडपन, और जागरूकताका लगभग पूर्ण अभाव हमारे आर्थिक संगठनोकी कई इकाइयोंके कार्यकर्ताओके संबंधमें लागू की जानेवाली नीतिमें जाहिर होते हैं।

वर्ग शत्रुके संबधमे कुन्द हुई जागरूकता और इस शत्रुका मुकाबला करनेकी जरूरतके बारेमें भुलक्कडपन श्रम-अनुशासन (लेबर डिसिप्लिन) के प्रश्नके सम्बंधमे कुछ कामरेडोंके गलत, गैर-पार्टी अवसरवादी रुख़मे भी जाहिर होते हैं।

इन सब चीजोको देखते हुए एक जरुरी और अत्यंत महत्वपूर्ण समस्या उठती है—हमारे सक्रिय कामरेडो की पार्टी शिक्षा को काफी ज्यादा बढ़ानेकी समस्या। इस समस्या को फ़ौरन हाथमे लिया जाना चाहिए और उसे हल करनेके उपाय निकाले जाने चाहिए।

इसी प्रसंग मे, बहसके दौरान मे तथा-कथित जन-मोर्चे का प्रश्न भी उठाया गया था। (हिटलरी–अनु०) कब्जे के दिनोंमें पोलिश मजदूर पार्टी ने हिटलरी हमलावरोंके खिलाफ़ संघर्ष मे जन मोर्चे का नारा दिया था। क्या यह नारा सही था ?

कामरेड गोमुल्काने यहॉ पर कहा है कि उनका दिमाग इस संबंध में आज तक साफ नहीं है कि जन मोर्चे का नारा सही था या नहीं। इसमे जरा भी सन्देह नहीं कि हिटलरी हमलावरों के खिलाफ संघर्ष के लिए जन मोर्चे का नारा सही और आवश्यक था।

नारा अपने आप में सही था। जो सही नहीं था वह यह कि इस नारेको अमली रूप देते समय कुछ कामरेड सर्वहाराकी वर्ग स्थितिसे फिसल गये थे।

हमलावरोके खिलाफ़ संघर्ष, वह संघर्ष जिसमे मजदूर, किसान, बुद्धिजीवी और निम्न-पूंजीवादी, सब हिस्सा ले सकते थे, कब्जेके दिनोंमें जन मोर्चेका आधार था।

निस्सन्देह उसके अन्दर पूंजीपतियों, और जमीदारोके ऊपरी हल्कोंके लोगोंको और धन्नासेठोके गुटको नहीं शामिल किया जा सकता था, क्योंकि उनके और हमलावरोके बहुत से हित समान थे। निर्णायक प्रश्न यह है: जन मोर्चेको किसके नेतृत्वमे, किसके नायकत्वमे कायम करना चाहिए ?

जन मोर्चे के संबंध मे हमारा विचार हमेशा यही रहा है कि मजदूर वर्ग और उसकी पार्टी ही पथ-प्रदर्शक शक्ति है। जन मोर्चे की और कोई दूसरी कल्पना नुक़सानदेह और अवसरवादी है।

यह अवसरवाद कुछ कामरेडो मे स्पष्ट था जो अन्तमे फिसलकर राष्ट्रवाद के दलदल मे जा पहुँचे, और, और भी कई महत्वपूर्ण प्रश्नो के संबंध मे उन्होने गल्तियॉ कीं।

जागरूकता का अभाव अवसरवाद का परिणाम है। काम करने की वह शैली जिसके अन्दर लोगों के काम की जॉच करने के संबध मे कोई भी सीधे-सीधे अपनी जिम्मेदारी नही महसूस करता सोलहो आना अवसरवादी है, वह नुकसानदेह है और उसके बहुत कड़ुए नतीजे निकलते है।

दक्षिण-पंथी राष्ट्रवादी भटकावके प्रतिनिधि अब खामोश रहना पसन्द करते हैं। लेकिन इस वक्त जब कि बेल्ग्रेड साम्राज्यवादी साजिशोंका केंद्र बन गया है, क्या कोई खामोश रह सकता है ?

और क्यो न हो! दाक्षिण–पंथी राष्ट्रवादी गुटने टीटो-पंथियो की मदद करनेकी कोशिशकी थी, और उधर, टीटो-पंथी पोलैण्डके अन्दर इस गुटके ऊपर भरोसा करते थे।

क्या ऐसे वक्तमे कोई खामोश रह सकता है जबकि लन्दन में जनताके जनतंत्रों में रहनेवाले अमरीकी राजदूतों का सम्मेलन किया गया—ऐसा सम्मेलन जिसका उद्देश्य जनता के जनतंत्रों के अन्दर खुफियागीरी, तोड-फोड और राज्य-द्रोही षडयंत्रो की कार्य-प्रणाली को पूर्ण बनाना था ?

क्या ऐसे वक्तमें कोई खामोश रह सकता है जब कि "अमरीका की आवाज" और "ब्रिटिश ब्राडकॉस्टिंग कॉर्पोरेशन" (अमरीकी और ब्रिटिश रेडियो) मेहनतकश जनता को धोखा देनेके लिए गला फाड-फाड़ कर चिल्ला रहे हैं, और इस

सिलसिलेमें अक्सर कामरेड गोमुल्का का भी नाम लेते हैं, जब कि पादरी-वर्ग का प्रतिक्रियावादी भाग अपनी साजिशा को और भी बढ़ा रहा है ?

कामरेड गोमुल्का, क्लिको और स्पाईचाल्स्की के वक्तव्यों के बारे में कहा जा सकता है कि दुश्मनके दलालों के खिलाफ़ संघर्ष में उन्होंने पार्टीकी मदद नहीं की है, कि उनकी आत्म-आलोचना पाखण्डपूर्ण थी और वे अभी तक अपने पार्टी विरोधी विचारो से चिपके हुए है ।

जागरूकता का,—जिसे कि हमे अपने काम के हर क्षेत्रमे हर प्रकार से बढ़ाना है,—अविश्वास के साथ, काम और संघर्ष मे पारम्परिक विश्वास के अभाव के साथ, जरा भी संबंध नही है । इसके विपरीत, हमारी जागरूकता की ही तरह हमारा काम और संघर्ष भी क्रांतिकारी साधारण सदस्यो और उनके नेतृत्व के बीच उनके और मजदूर वर्ग, मेहनतकश जनता, और तमाम जनता के बीच निकट से निकट संबंध के ऊपर आधारित है ।

पोलैण्डके क्रान्तिकारी आन्दोलन का, उस आन्दोलन का जिसकी अन्तरराष्ट्रीय सर्वहारा क्रान्ति के महान नेताओ, लेनिन और स्तालिन ने इतनी अधिक प्रशंसा की है, अभिमान—उचित अभिमान का क्या कारण है ? यह कि पोलैण्ड का मजदूर वर्ग अपनी उन्नत मजदूर पार्टी के साथ सदैव सर्वहारा अन्तर-राष्ट्रीयता के क्रान्तिकारी सिद्धान्तों के प्रति हमेशा सच्चा रहा है और सच्चा रहेगा, यह कि साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्षमे उसने मेहनतकश जनता के अन्तरराष्ट्रीय सहयोग के झण्डे को हमेशा ऊंचा रखा है; यह कि उसने बराबर मजदूर वर्ग के आन्दोलनकी एकता के लिए संघर्ष किया है, इस एकता को कायम किया है और दुश्मन की ताकतों की तमाम साजिशों से इस एकता की वह अपनी आँख की पुतली की तरह रक्षा करेगा ।

अवसरवादके खिलाफ समझौता-विहीन संघर्ष के दौरान में पार्टी इस एकता को और सुदृढ़ बनायेगी; वह अपनी क्रान्तिकारी जागरूकता और सैद्धान्तिक अडिगता की रक्षा करेगी और उन्हे और भी मजबूत बनायेगी ।

हमने अपनी गल्तियो और खामियो को निःसंकोच—और हो सकता है कि कुछ को वह तीक्ष्ण तक लगा हो—ज़ाहिर कर दिया है ।

हम ऐसा कर सके क्योंकि हमे अपनी ताक़त पर और अपने सदस्यो की सुदृढ़ता पर विश्वास है; क्योंकि हम चाहते हैं कि हमारी पार्टी एक नयी तरहकी पार्टी, मार्क्सवादी लेनिनवादी पार्टी, एक ऐसी पार्टी बन जाय जो महान और वीर सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) की वफादार सहयोगी हो: क्योंकि हमारी पार्टीको सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) के महान नेता और दुनियाके मजदूर वर्ग के शिक्षक कामरेड स्तालिनकी सलाह राह दिखाती है । इन सिद्धान्तोंके प्रति सच्चे रहते हुए हम विजयी होंगे और पोलैण्डमे समाजवादका निर्माण करेंगे ।

[" फ़ॉर ए लास्टिंग पीस, फ़ॉर ए पीपुल्स डेमोक्रेसी " के
९ दिसम्बर १९४९ के अंकसे उद्धृत.]

जार्जी दिमित्रोव की महत्वपूर्ण पुस्तक

समाजवाद का रास्ता

आज वल्गेरिया मे मेहनतकश जनता का राज है और वह जनता के जनतंत्रके जरिये समाजवाद के रास्ते पर आगे बढ रही है। वहाँ राजनीतिक सत्ता मेहनतकश जनता के हाथ मे कैसे आयी? वल्गेरिया की जनता की जनवादी क्रान्ति का नेतृत्व करने वाले मजदूर वर्ग की हिरावल, बल्गेरिया की कम्युनिस्ट पार्टी का निर्माण कैसे हुआ, उसने अपने जन्म कालसे ही दक्षिणपन्थी अवसरवाद और उग्र निम्न पूँजीवादी क्रान्तिवाद के हानिकारक भटकावो के खिलाफ किस तरह निर्मम सघर्ष किया, किस तरह पार्टी का वोल्शेवीकरण हुआ, वह मार्क्स-एगेल्स-लेनिन-स्तालिन के वैज्ञानिक सिद्धान्तो से, सर्वहारा के सर्व शक्तिमान हथियार से लैस हुई, उसने मजदूर वर्ग के नेतृत्व मे मजदूरो और किसानो का अटूट एका कायम किया, जनता का जनवादी मोर्चा "फादरलैण्ड फ्रन्ट" कायम किया और क्रान्ति को सफल बना कर पूँजीपतियो-जमीदारो की सत्ता का तख्ता उल्टा और मेहनतकश जनता का राज कायम किया?—इन सभी वातो को इस किताब में—जो वल्गारी कम्युनिस्ट पार्टी की पाँचवी कांग्रेस (१९४८) मे कॉ दिमित्रोव द्वारा पेश की गयी रिपोर्ट है—विशद रूप मे समझाया गया है। पुस्तक का महत्व साफ है, फौरन मंगाइये। **मूल्य १ रुपया**

★

कम्युनिस्ट पार्टी के संगठन के सिद्धान्त

कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल द्वारा स्वीकृत इन सिद्धान्तो के महत्व और आवश्यकता को वताने की जरुरत नही है। कॉ स्तालिन के शब्दो में आवश्यकता है "एक लडने वाली पार्टी की, एक क्रातिकारी पार्टी की, ऐसी साहसी पार्टी की जो राजशक्ति पर अधिकार करने के सघर्ष मे सर्वहारा वर्ग का नेतृत्व कर सके, ऐसी अनुभवी पार्टी की जो क्रान्तिकारी परिस्थिति की अत्यंत जटिल अवस्थाओ मे भी दिशा-निर्देश कर सके, ऐसी कार्य-कुशल पार्टी की जो क्रातिके जजहा को पार्टी के अन्दर छिपी हुई चट्टानो से वचाते हुई उसके लक्ष्य तक पहुँचा दे"। ऐसी पार्टी का आधार सगठन के मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त ही हो सकते है।

मूल्य ८ आना
डाक खर्च अलग

पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस लि., बम्बई ४.

इस अंक में—

- कार्ल मार्क्स—ले० एंगेल्स
- लेनिन-स्तालिन के अजेय झंडे के नीचे कम्युनिज़्म की ओर
- कम्युनिस्ट पार्टियों के विकास का नियम—आलोचना और आत्मालोचना
- पूँजीवादी दुनिया आर्थिक संकट की छाया में
- चीनी जनता की विजय का ऐतिहासिक महत्व
- सोवियत-चीन सन्धि अमर हो !

१२

एकमात्र मार्क्सवादी-लेनिनवादी हिन्दी मासिक

कार्ल मार्क्स

(१८१८-१८८३)
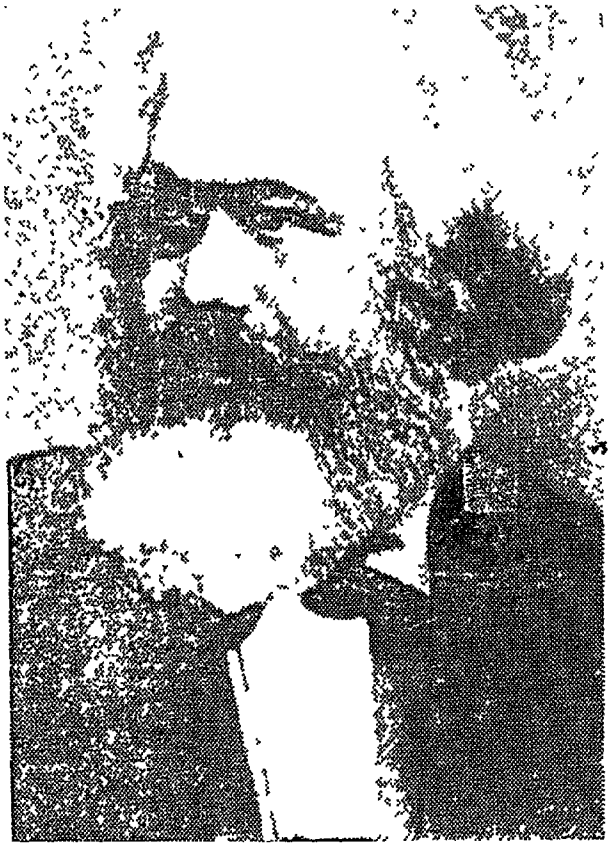
"मार्क्स और एंगेल्स की सबसे बड़ी और ऐतिहासिक देन यह है कि उन्होंने संसार के सभी देशों के मज़दूरों को उनका कर्त्तव्य और उनकी भूमिका बतायी और उनसे कहा कि उन्हें सबसे पहले उठकर पूँजी के ख़िलाफ़ क्रांतिकारी लड़ाई शुरू करनी चाहिये और इस लड़ाई में सभी मेहनतकशों और शोषितों को अपने साथ लाना चाहिये।

"हम बड़े युग में रह रहे हैं जब महान समाजवादियों की भविष्य वाणी पूरी होने लगी है।"

—लेनिन

(७ नवम्बर, १९१८ को मार्क्स और एंगेल्स के स्मारक का उद्घाटन करते हुये)

मार्च, १९५०	अंक १२	मूल्य ८ आना
	चन्दा	
वार्षिक ५ रु.	छमाही ३ रु.	तिमाही १ रु. ८ आ.

वी. एम. कौल द्वारा न्यू एज. प्रिं. प्रेस, १९० बी, खेतवाडी मेनरोड, बम्बई ४ में मुद्रित और "जनवादी" आफ़िस, राजभवन, सैण्डहर्स्ट रोड, बम्बई ४ से प्रकाशित और संपादित।

दुनिया के मज़दूरो एक हो !

कार्ल मार्क्स

फ्रेडरिक एंगेल्स

कार्ल मार्क्स, वह व्यक्ति जिसने सबसे पहले समाजवादको और उसके जरिए हमारे जमाने के सम्पूर्ण मजदूर आन्दोलन को एक वैज्ञानिक आधार दिया, १८१८ में त्रीव्स में पैदा हुए थे। उन्होंने बॉन और बर्लिन में पढाई की, पहले उन्होंने कानून लिया था, लेकिन शीघ्र ही वह अकेले इतिहास और दर्शन के अध्ययन में लग गये, और १८४२ में दर्शन के लेक्चरर (अध्यापक—अनु०) होने ही वाले थे कि फ्रेडरिक विलियम तीसरे की मौतके बादसे उठ खड़े होनेवाले राजनीतिक आन्दोलनने उनके जीवन के क्रमको एक भिन्न ही मार्ग में मोड़ दिया। उनके सहयोग से राइन के उदारवादी पूंजीपतियों के नेताओं कैम्पहॉसेन, हैन्सेमान, आदि ने कोलोन में **राइनिश ज़ाइटुंग** (नामक पत्र—अनु०) की स्थापना की थी, और १८४२ की शरद-ऋतु में मार्क्स को, जिनकी रीनिश प्रान्तीय डायट की कार्यवाहियों की आलोचना ने अत्यधिक ध्यान उत्तेजित किया था, उस पत्रका सम्पादक बना दिया गया था। **राइनिश ज़ाइटुंग** स्वाभाविक रूपसे ही सेंसर-शिपके नीचे निकलता था, लेकिन सेंसरवाले उसका मुकाबला नहीं कर पाते थे।[2] **राइनिश ज़ाइटुंग** लगभग हमेशा ही उन लेखोंको जो महत्वके थे निकाल लेता था, सेंसर को काटने के लिये पहले महत्वहीन चीजें दे दी जाती थीं जब तक कि या तो वह खुद ही छोड़ देता था या उसे इस धमकी से कि फिर तो अगले दिन पत्र नहीं निकलेगा छोडनेके लिये मजबूर

---

१. यह जीवन चित्र सबसे पहले ब्रुंसविकसे निकलनेवाले, १८७८ **फ्रोक्सकेलेण्डर** में प्रकाशित हुआ था।—स.

२. **राइनिश ज़ाइटुंग** का पहला सेंसर पुलिस काउंसिलर डॉलेशैल था, वही आदमी जिसने एक बार फाइलेलीथ्स, [बाद में सैक्सनी का बादशाह जॉन] द्वारा किये गये दान्तेकी **दैवी कमिडी** (हास्य-गल्प) के अनुवाद के विज्ञापन को **कोलनिशे ज़ाइटुंग** में यह टिप्पणी लिखकर काट दिया था : दैवी बातोंकी कमिडी (मज़ाक) किसीको नहीं बनाना चाहिए। [**एंगेल्सकी टिप्पणी**]

कर दिया जाता था। **राइनिश ज़ाइटुंग** की ही हिम्मत रखनेवाले दस और पत्र होते जिनके प्रकाशक कम्पोज पर कुछ सौ और थेलर्स खर्च करने देते—और जर्मनी में सरकारी काट-छॉट (सेन्सरशिप) १८४३ में ही असंभव कर दी जाती। लेकिन जर्मन समाचार-पत्रों के मालिक टुच्चे दिमाग के, डरपोक बाबू थे और **राइनिश ज़ाइटुंग** अकेला ही लोहा लेता रहा। उसने एक के बाद दूसरे सेन्सर को पस्त कर दिया, अन्तमें उसके ऊपर दोहरा सेन्सर होने लगा; पहली काट-छॉटके बाद **रेजीयरुंग्सप्रासीडेण्ट**[1] को उसे एक बार और अन्तिम रूपसे सेन्सर करना होता था। उससे भी कोई काम न बना। १८४३ के आरंभ में सरकार ने ऐलान किया कि इस पत्र को रोकके अन्दर रखना असंभव है और बिना और किसी झमेले के उसे बन्द करा दिया।

मार्क्स, जिन्होंने इसी दरम्यान फॉन वेस्टफेलेनकी—जो बादमें प्रतिक्रियावादियों का मंत्री बना था—बहिनसे शादी कर ली थी, पैरिस चले गये, और वहॉ, ए. रूजके साथ मिलकर उन्होंने **डियूत्श-फ्रांन्ज़ोसिशे जाहरबूखेर** प्रकाशित किया जिसमें अपनी समाजवादी रचनाओं की लेखमाला की उन्होंने **क्रिटिक डर हेगेलशेन रेख्तफिलासफ़ी (क़ानून के हीगेलवादी दर्शन की एक आलोचना)** से शुरुआत की। इसके अलावा एफ. एंगेल्स के साथ मिलकर (उन्होंने) **डाई हीलीगे फैमिली, गेगेन ब्रूनो बेयर उण्ड कोन्सोर्टेन (पवित्र परिवार, ब्रूनो बेयर एण्ड कम्पनी के खिलाफ़)** (लिखा), जो कि जर्मनी के दार्शनिक आदर्शवाद द्वारा धारण किये गये उस वक्त के सबसे ताजे रूप की व्यंग्यात्मक आलोचना थी।

राजनीतिक अर्थ-शास्त्र और महान फ्रांसीसी क्रान्ति के इतिहास के अध्ययन के बाद भी प्रशाकी सरकार के ऊपर कभी-कभी हमला करनेके लिये मार्क्स के पास काफी समय बच जाता था। और उसने गिजो मंत्रिमण्डल के जरिये १८४५ के वसन्त में मार्क्स को फ्रास से निकलवा कर अपना बदला लिया। कहा जाता है कि हर अलेक्जेण्डर फॉन हम्बोलडट ने बिचवईका का काम किया था। मार्क्स ने बदलकर ब्रसेल्स को अपने रहने की जगह बनाया और वहॉ से उन्होने १८४७ में प्रूधोकी किताब **फ़िलासफ़ी द' ला मिज़ेर (ग़रीबी का दर्शन)** की आलोचना **मिज़ेर दि' ला फ़िलासफ़ी (दर्शन की ग़रीबी)** को, और १८४८ में **डिस्कोर्स सुर ले लिबरे इचेन्ज (स्वतंत्र व्यापार पर विचार)** को फ्रासीसी भाषामें प्रकाशित कराया। उसी समय उन्होंने अवसरका उपयोग करके ब्रसेल्समें एक जर्मन मजदूर सोसायटी की नीव डाली और इस तरह अमली आन्दोलन शुरू किया। यह आन्दोलन उनके लिये तब और भी ज़्यादा महत्वपूर्ग हो गया जब वह और उनके राजनीतिक मित्र १८४७ में उस गुप्त **कम्युनिस्ट लीग** में दाखिल हुए जो पहले ही कई बरसों से मौजूद थी। अब उसका पूरा ढॉचा बुनियादी रूपसे बदल गया। इस संघ को जो पहले कमोवेश षड़यंत्रकारी था, बदल कर कम्युनिस्ट प्रचार का

---

[1] **रेजोयरुंग्सप्रासीडेन्ट :** प्रशामें केन्द्रीय कार्यकारिणीका प्रादेशिक प्रतिनिधि—स.

सीधा-सादा संगठन बना दिया गया। वह, जर्मन सोशल डेमोक्रेटिक पार्टी का पहला संगठन, गुप्त था तो सिर्फ इसलिये कि जरूरत ऐसा करने को बाध्य करती थी। जहाँ कहीं जर्मन मजदूरों की यूनियनें थी वहाँ लीग मौजूद थी। इंग्लैण्ड, बेल्जियम, फ्रांस और स्विटजरलैण्ड में लगभग इन सभी यूनियनों में और जर्मनी की बहुत सी यूनियनों में प्रमुख सदस्य लीग के लोग थे और नवजात जर्मन मजदूर आन्दोलन में लीग का हिस्सा बहुत काफी था। और फिर, हमारी ऐसी पहली लीग थी जिसने पूरे मजदूर आन्दोलन के अन्तरराष्ट्रीय स्वरूप पर जोर दिया था और उसे अमल में हासिल किया था। अंग्रेज, बेल्जियन, हंगारी, पोल आदि उसके सदस्य थे और उसने अन्तरराष्ट्रीय मजदूर मीटिंगें सगठित की थीं—विशेष रूप से लन्दन में।

लीग का कायाकल्प १८४७ में हुई दो कांग्रेसों में हुआ। उनमें से दूसरी ने फैसला किया कि पार्टीके बुनियादी सिद्धान्तोंको एक घोषणापत्रमें, जिसे मार्क्स और एंगेल्स तैयार करें, विशद रूपमें बनाया जाय और उसे प्रकाशित किया जाय। इस तरह **कम्युनिस्ट पार्टीका घोषणापत्र** सामने आया जो १८४८ में फरवरी क्रान्ति से थोड़ा ही पहले प्रकाशित हुआ और जिसका तबसे योरपकी लगभग सभी भाषाओं में अनुवाद हो चुका है।

ड्यूत्शे ब्रसेलेर ज़ाइटुंग, जिसमें मार्क्स लिखते थे और जो पितृ-देशके पुलिस **शासन** के आर्शीवादों का निर्ममता से पर्दाफाश करता था, की वजह से प्रशा की सरकार ने मार्क्स को निकाल बाहर कराने की एक बार फिर कोशिश की, मगर बेकार। लेकिन जब फरवरी क्रान्ति के परिणाम-स्वरूप बेल्जियम में भी जन-आन्दोलन हुए और बेल्जियम में बुनियादी परिवर्तन की घड़ी सामने दिखायी देने लगी तो बेल्जियन सरकार ने बिना किसी आडम्बर के मार्क्स को गिरफ्तार कर लिया और उन्हें निकाला दे दिया। इसी बीच फ्रांस की आरजी सरकार ने फ्लोको[1] के जरिये उनको पैरिस वापस आने की दावत दी थी और उन्होंने इस आह्वान को स्वीकार कर लिया।

पेरिसमें उन्होंने विशेष रूप से उस धोखेबड़ी की आलोचना की जो वहाँ जर्मनों के बीच खूब चल रही थी। फ्रांस में जर्मन मजदूरों के हथियारबन्द दस्ते बनाये जाते थे ताकि क्रान्ति और प्रजातंत्र को जर्मनी में ले जायें। एक तरफ तो अपनी क्रान्ति खुद जर्मनी को करनी थी, और, दूसरी तरफ, आरजी सरकार के लमार्तिन[2] फ्रांस में बने हर क्रान्तिकारी विदेशी दस्तेकी खबर उखाड़ी जानेवाली सरकारको पहले ही दे देते थे जैसा कि बेल्जियम और बेडेनमें हुआ।

---

१. फर्डिनेल्ड फ्लोको (१८००—६६) पैरिस के अखबार ला रिफ़ौर्मे के सम्पादक—स०

२. एलफोन्से दे लमार्तीन (१७९०-१८६९) फ्रांसीसी कवि और नरमदली प्रजातन्त्री राजनीतिज्ञ। वह उस आरजी सरकार का वैदेशिक मन्त्री और लगभग नायक था जो फरवरी १८४९ की क्रान्ति की विजय के बाद फ्रांस में कायम हुई थी।—स०

मार्चकी क्रान्तिके वाद मार्क्स कोलोन चले गये और वहॉ उन्होने **न्यू राइनिश ज़ाइटुंग** कायम किया जो १ जून १८४८ से १९ मई १८४९ तक चलता रहा। वह ऐसा अकेला अखवार था जो उस समय के जनवादी आन्दोलनमें सर्वहारा का दृष्टिकोण मामने रखता था। यह वात १८४८ में पेरिस के जून विद्रोहियो के उसके द्वारा वेहिचक समर्थन में दिखायी पड़ी जिसकी वजह से अखवार को अपने लगभग सभी साझेदार गंवाने पड़े। वादशाह और **राइखफरवैसर** (शासनके वाइस-रीजेन्ट) से लेकर पहरेदार तक हरेक पवित्र चीज पर **न्यू राइनिश ज़ाइटुंग** जिस 'चिम्वोराजो धृष्टता' के साथ हमला करता था—और वह भी प्रशा के गैरीसन (फौज) के शहर मे जहॉ उस समय ८,००० फौज थी—**क्रौयुज़्जीटुंग** ने निरर्थक ही वताया। राइन के उन उदारदली वावूवादियो का गुस्सा भी निरर्थक था जो यकायक प्रतिक्रियावादी वन गये थे। १८४८ के पतझड़ में कोलोन मे मार्शल लॉ के जरिये अखवार को एक लम्बे समयके लिये निरर्थक ही वन्द किया गया। फ्रैंकफोर्ट में राइखके न्याय (मंत्री) विभाग ने भी निरर्थक ही लेख पर लेखकी कोलोनके सरकारी वकीलके सामने निन्दा की ताकि न्याय सम्बंधी कार्रवाइया की जाये। फौजी रक्षको की ऑखो के सामने ही पत्र सम्पादित और मुद्रित होता रहा, और सरकार और पूंजीपतियो पर उसके हमलो की तीव्रता के साथ उसकी विक्री और प्रसिद्धि भी वढती गयी। नवम्वर १९४८ मे जव प्रशा मे कुद्देता (शासनतंत्र मे वलपूर्वक परिवर्तन–अनु) हुआ तो **न्यू राइनिश ज़ाइटुंग** हर अक मे, ऊपर जनता से अपील करता कि टैक्स देने से इन्कार करो और हिंसा का मुकावला हिंसा से करो। १८४९ के वसन्त में इसके, और एक दूसरे लेख के कारण जूरी के सामने उस पर मुकदमा चला, लेकिन वह दोनो वार वरी कर दिया गया। अन्त में १८४९ में जव ड्रेस्डन और राइन प्रान्तोंमें मई विद्रोह दवा दिया गया और जव वहुत काफी फौज केंद्रित करके और मैदान मे उतार कर वाडेन-पैलेटिनेट विद्रोह को दवाने के लिए प्रशा की चढाई शुरू हो गयी थी तो उसने अपने आप को इतना ताकतवर माना कि वह **न्यू राइनिश ज़ाइटुंग** को वलपूर्वक वन्द कर सकती है। उसका अन्तिम अक—जो लाल स्याही में छपा था–१९ मई को प्रकाशित हुआ।

मार्क्स फिर पेरिस गए; लेकिन १३ जून १८९४ के प्रदर्शन के कुछ हफ्ते वाद ही फ्रासीसी सरकार ने उनके सामने या तो ब्रिटनी चले जाने या फिर फ्रांस को विलकुल ही छोड़ देने का प्रस्ताव रखा। उन्होंने दूसरी वात को पसन्द किया और वह लन्दन चले आए, जहॉ वह तवसे निरन्तर रहते आये हैं।

न्यू राइनिश ज़ाइटुंग को एक पत्रिका (रिव्यू) के रूप मे (हम्वुर्गमें, १८५०) जारी रखने की कोशिश को कुछ अरसे के वाद छोड़ देना पड़ा क्योकि प्रतिक्रियावादियो की हिंसा वरावर वढती जा रही थी। दिसम्वर १८५१ मे फ्रान्स में वलपूर्वक शासन परिवर्तन (कुद्देता) के फौरन ही वाद मार्क्स ने **डर १८ व्रुमेयर देस**

लुइ बोनापार्ट ("लुई बोनापार्ट का १८ वॉ ब्रुमेयर") प्रकाशित किया (बोस्टन १८५२, दूसरा संस्करण युद्धके कुछ ही पहले, हम्बुर्ग से १८६९ में)। १८५३ में उन्होंने **एन्थुलुन्जेन उबेर डेन कोलनर कॉम्युनिस्टेन प्रोजेस (कोलोन के कम्युनिस्ट मुकदमेका रहस्योद्घाटन)** लिखी (सबसे पहले वास्ले में, बाद में बोस्टन में, और अभी हालमें लीपजिग में मुद्रित)।

कोलोन में कम्युनिस्ट लीग के सदस्यों के सजा पाने के बाद मार्क्स राजनीतिक आन्दोलन से दूर हो गए और दस साल तक उन्होंने अपनेको एक तरफ ब्रिटिश म्युजियम की लाइब्रेरी में अर्थशास्त्र पर उपलब्ध विशाल सामग्री का अध्ययन करने में और दूसरी तरफ "**न्यूयार्क ट्रिब्यून**" में लिखने में लगाया। अमरीका के गृहयुद्धके आरम्भ तक वह न सिर्फ उनके नाम के साथ लेखों को बल्कि एशिया और योरप की परिस्थितियों पर भी उनके द्वारा लिखे अनेक प्रमुख लेखोंको छापता रहा। इंग्लैण्ड के सरकारी कागज-पत्रोंके विस्तृत अध्ययन के आधार पर उन्होंने लार्ड पामर्स्टन पर जो हमले किये थे उन्हें लन्दन में पुस्तिकाओं के रूपमें प्रकाशित किया गया था।

अर्थशास्त्रके उनके कई बरसके अध्ययनके प्रथम फल के रूपमें १८५९ में; **जर क्रिटिक डर पौलिटिश्येन ओइकोनोमी, अरस्टेस हेफट (अर्थशास्त्र की समालोचना पर विचार, भाग १)** (बर्लिन डुंकर) प्रकाशित हुआ। मूल्यके मार्क्सीय सिद्धान्त की, मय मुद्राके सिद्धान्तके, पहली सम्यक् व्याख्या इस किताब में है। इटली के युद्धके दौरानमें मार्क्सने (लन्दनमें प्रकाशित जर्मन अखबार "**दास फोल्क**") बोनापार्ट-वाद और उस समय प्रशाकी नीति, दोनों ही की तीव्र आलोचना की। पहला उस समय उदारदली होने का स्वांग रच रहा था और उत्पीड़ित जातियों के उद्धारक बनने की भूमिका खेल रहा था। और उस समय की जर्मन–नीति तटस्थताके बहाने अनुकूल स्थिति का फायदा उठाने की कोशिशमें थी। इस सम्बन्ध में हर कार्ल फोग्ट की तीव्र आलोचना करना भी आवश्यक था जो उस समय राजकुमार नेपोलियन (प्लों-प्लों) की आज्ञा से और लुई नेपोलियन से धन पाकर जर्मनी की तटस्थता के लिये ही नहीं, उसकी सहानुभूति के लिये भी आन्दोलन कर रहा था। फोग्ट ने जब उन पर सबसे ज़्यादा भद्दी और जानबूझ कर रची हुई झूठी बदनामियाँ थोपी तब मार्क्स ने **हर फ़ौग्ट** (लन्दन १८६०) के रूप में जवाब दिया। उसमें फौग्ट और साम्राज्यवादी गुट के दूसरे नकली जनवादी लोगों की बखिआ उधेड़ कर रख दी गयी थी और स्वयं फौग्टको बाहरी और भीतरी सबूतों के आधार पर दिसम्बर साम्राज्य से घूस लेने का अपराधी ठहराया गया था। दस साल बाद पक्का सबूत भी मिल गया। १८८० में तुइलेरी में मिली और सितम्बर सरकार द्वारा प्रकाशित बोनापार्ट के दलालोंकी सूची में फ अक्षर के नीचे यह लिखा था—"फोग्ट—अगस्त १८५९ में उसे ४०,००० फ्रैंक भेजे गये।"

अन्त में, १८६७ में हम्बुर्ग में, मार्क्स की मुख्य कृति **दास कापीटाल, क्रिटीक देर पौलिटिश्येन ओइकोनोमी**, अरस्टर बाण्ड (पूंजी, पूंजीवादी

उत्पादन का एक आलोचनात्मक विश्लेषण, भाग १) प्रकाशित हुई। वह उनके आर्थिक-समाजवादी विचारों के आधार की व्याख्या करती है और वर्तमान समाज की और पूँजीवादी उत्पादन और उसके फलाफल की उनकी आलोचना की खास-खास बातें देती है। इस युग-प्रवर्तक पुस्तक का दूसरा सस्करण १८७२ में प्रकाशित हुआ। लेखक दूसरे भाग के विस्तार में लगे हुए हैं।

इसी वीच योरप के विभिन्न देशों मे मजदूर-आन्दोलन इतना जोर पकड़ चुका था कि मार्क्स अपनी पुरानी गहरी आकांक्षाको हासिल करनेका विचार कर सकते थे : यानी ऐसे मजदूर संगठन की नीव डालना जिसमें योरप और अमरीका के सब से अग्रसर देश शामिल हों, और, जो यो कहिये कि एक संगठन के रूपमें सोशलिस्ट आन्दोलन के अन्तरराष्ट्रीय स्वरूप को खुद मजदूरों तथा पूंजीपतियों और सरकारों दोनोंके सामनें सावित करे, जिससे सर्वहारा वर्ग को प्रोत्साहित और संगठित किया जाय और उसके शत्रुओ के दिलोंमें डर पैदा किया जाय। पोलैण्ड, जिसे रूस उसी समय कुचल रहा था, के समर्थन मे सेन्ट मार्टिन हाल लंदन में २८ सितम्बर १८६४ को हुई आम सभा ने मामले को सामनें लाने का अवसर भी पेश कर दिया जिसका उत्साह-पूर्वक फायदा उठाया गया। **अन्तरराष्ट्रीय मज़दूर संगठन (इण्टरनेशनल वर्किंगमेन्स एसोसिएशन)** की नीव डाली गई। इस मीटिंग में एक आरजी कार्यकारिणी (जनरल काउन्सिल) चुनी गई जिसका आफिस लन्दन में रहा। और इसके-जैसे कि वादकी हेग काग्रेस तक की सभी कार्यकारिणियों के—प्राण मार्क्स थे। १८६४ के **उद्घाटन भाषण** से लेकर १८७० के **फ्रांस के गृहयुद्ध पर भाषण** तक इण्टरनेशनलकी जनरल काउन्सिलनें जितनें भी कागज-पत्र निकाले, उनमेंसे लगभग हरेक को उन्हींने लिखा था। इन्टरनेशनलमें मार्क्सके कार्योंका वर्णन करना इस सगठनका इतिहास लिखने के समान है, जो योरप के मजदूरोकी स्मृति में अभी भी जीवित है।

पेरिस कम्यून की हार से इण्टरनेशनल की स्थिति असम्भव हो गयी। योरप के इतिहास मे वह ऐसे समयमें सामने रख दिया गया था जब सभी कहीं सफल असली काम की सभावना से वह वंचित किया जा चुका था। जिन घटनाओ नें उसे सातवी महान शक्ति वना दिया था, उन्होंने साथ ही साथ उस पर यह रोक भी लगा दी थी कि वह अपनी ताकतों को मैदान मे उतार न सके, और उन्हें काममे इस्तेमाल न कर सके, जिसको न माननें का परिणाम अवश्यम्भावी पराजय होता, जिससे मजदूर आन्दोलन कई दशकों के लिए पिछड जाता। इसके सिवा, विभिन्न कोनो से ऐसे लोग अपने को आगे बढ़ा रहे थे, जिन्होंने इन्टरनेशनलकी असली स्थितिको समझे विना या उसकी तरफ ध्यान दिये विना हीं उसकी अचानक वढी हुई ख्यातिका अपनें व्यक्तिगत घमण्ड या व्यक्तिगत ख्वाहिशके लिये फायदा उठानेकी कोशिश की। एक वीरतापूर्ण निर्णय करना था और एक वार फिर यह मार्क्स ही थे जिन्होंनें यह निर्णय किया और हेग काग्रेसमें उसे पास

भी करा लिया। इन्टरनेशनलने एक गंभीर प्रस्तावके जरिये अपनेको उन वाकूनिन-पंथियो * के कार्योंकी जिम्मेदारीसे अलग किया जो ज्ञानरहित और अस्वादिष्ट तत्वोंका केन्द्र थे। तव यह देखते हुए कि व्यापक प्रतिक्रियाके सामने उन वढ़ी हुई मागोंको पूरा करना असम्भव है जो उसके सामने आ रही थी, और अनेक वलिदानों के विना, जिससे मजदूर आन्दोलन की जीवन-शक्ति खिंच जाती, उसके पूरे कारगर-पनको कायम रखना असंभव है—इस परिस्थितिको देखते हुए जनरल काउंसिलको अमरीका भेज कर इण्टरनेशनल कुछ समय के लिए मैदानसे हट गया। उस समय और उसके वाद भी वहुत अक्सर इस निर्णय पर टीका-टिप्पणी हुई है, लेकिन उसके परिणामों ने सावित कर दिया कि निर्णय कितना सही था। एक ओर तो इससे इन्टरनेशनल के नाम पर जगह-जगह शासन-सत्ता पर अधिकार करने के वेकार प्रयत्न वन्द हो गये। दूसरी ओर विभिन्न देशो की सोशलिस्ट मजदूर पार्टियो के वीच जारी निकट सम्पर्कने सावित कर दिया कि इन्टरनेशनल ने सभी देशोंके सर्वहारा के हितो की समानता और सहयोग की जो चेतना जगायी थी, वह एक वाकायदा अन्तरराष्ट्रीय संगठनके तन्तुके विना भी-जो कि इस समय एक वन्धन वन गया था, व्यक्त हो सकती थी।

आखिर को हेग काग्रेस के वाद मार्क्स को फिर अपना सैद्धान्तिक कार्य करने के लिए शान्ति और समय मिला। और यह आशा है कि वह शीघ्रही **पूँजी** के दूसरे भाग को भी प्रेसके लिये तैयार कर लेंगे।

मार्क्स ने जिन अनेक महत्वपूर्ण वातोका पता लगाकर विज्ञान के इतिहास में अपना नाम अमर किया है, उसमें से हम यहाँ दो का ही उल्लेख कर सकते हैं।

पहली तो वह क्रान्ति है जो ससार के इतिहास को देखने-परखने के पूरे दृष्टिकोण में उन्होंने ला दी है। इतिहास को देखने-परखने का पिछला पूरा दृष्टिकोण इस धारणा पर आधारित था कि सभी तरह के ऐतिहासिक परिवर्तनों के मूल कारण मनुष्यों के परिवर्तनशील विचारो मे ढेखने चाहियें, और सभी तरहके ऐतिहासिक परिवर्तनों में सवसे महत्वपूर्ण राजनीतिक परिवर्तन है तथा सम्पूर्ण इतिहास मे उन्हीं की प्रधानता है। लेकिन यह सवाल न किया गया था कि मनुष्योंके दिमागमें यह विचार आते कहाँ से हैं और राजनीतिक परिवर्तनोंके प्रेरक कारण कौनसे हैं। केवल नयी धाराके फ्रांसीसी और कुछ-कुछ अंग्रेज इतिहासकारोंको भी वरवस यह धारणा वनानी पड़ी थी कि कमसे कम मध्ययुगसे, सामाजिक और राजनीतिक प्राधान्यके लिए उदीयमान पूंजीवादी-वर्गका सामन्ती नवावशाहीके खिलाफ सघर्ष ही योरपके इतिहासकी प्रेरक शक्ति रहा है। मार्क्सने अव सिद्ध कर दिया है कि पहलेका सारा इतिहास वर्ग-सघर्षोंका इतिहास है, कि विभिन्न और जटिल तमाम राजनीतिक सघर्षोंमें अकेला सवाल सामाजिक वर्गोंके सामाजिक और राजनीतिक शासन का रहा है, पुराने वर्गों द्वारा आधिपत्य कायम रखने और नये उठते हुए वर्गों द्वारा आधिपत्य स्थापित करने का रहा है। लेकिन इन वर्गों के जन्म और उनकी जारी मौजूदगी के कारण क्या हैं? उनके कारण वे विभिन्न

भौतिक और गोचर परिस्थितियाँ हैं जिनके बीच समाज किसी भी समय में अपने जीवन-यापनके साधनोंका उत्पादन और विनिमय करता है। मध्य युगके सामन्ती शासनका आधार छोटे कृषक समुदायोकी अपनेमें काफी अर्थ-व्यवस्था थी। वे अपनी लगभग सभी जरूरतोको खुद ही पैदा कर लेते थे। उनमें विनिमय लगभग नहीं था और वे हथियारवन्द सरदारोंके जरिये वाहरी हमलों से रक्षा पाते थे और राष्ट्रीय या कमसे कम राजनीतिक एकता पाते थे। जब शहरोका अभ्युदय हुआ और उनके साथ अलग से दस्तकारी, उद्योग और परस्पर व्यापार—पहले भीतरी और फिर अन्तर-राष्ट्रीय-पैदा हुआ, तो शहर का पूँजीपति वर्ग विकसित हुआ और मध्य-युग के दौरान में ही उसने सरदारों से संघर्ष करके अपने को एक विशेषाधिकारी अग के रूप में सामन्ती व्यवस्था में शामिल करा लिया। मगर १५ वीं शताब्दी के मध्य के वाद से योरप के वाहर की दुनिया का पता लगने पर इस पूँजीपति वर्ग को व्यापार के लिये कहीं अधिक विस्तृत क्षेत्र मिला और उसके साथ अपने उद्योग के लिये उसे नयी स्फूर्ति मिल गयी। सवसे खास शाखाओं में मशीनो ने दस्तकारी की जगह ले ली—अव फैक्टरी के पैमाने पर-और फिर उसकी भी जगह बड़े पैमाने के उद्योग ने ले ली। यह सभव हुआ पिछली शताब्दी के आविष्कारो, और विशेष रूप से भाफ से चलनेवाले इंजिन के आविष्कार की वजहसे। और इसका व्यापार पर यह प्रभाव पड़ा कि पिछड़े हुए देशो में पुराना दस्तकारी श्रम खतम हो गया और ज़्यादा आगे बढ़े देशों मे आजकलके नये सूचना-सम्वंधो के साधन, भाफ के इंजिन, रेल, बिजली की टेलीग्राफी जारी हो गये। इस प्रकार पूँजीपति वर्ग सामाजिक दौलत और सामाजिक शक्तिको अपने हाथोमें ज़्यादा से ज़्यादा जोडने लगा। लेकिन वह अभी काफी अरसे तक राजनीतिक ताकतसे अलग रहा जो सरदारों और सरदारो द्वारा समर्थित राजशाही के हाथो मे थी। मगर एक मंजिल पर—फ्रांस में महान क्रान्ति के बाद—उसने राजनीतिक सत्ता भी जीत ली और उस समय से वह सर्वहारा और छोटे किसानो के ऊपर शासन करनेवाला वर्ग बन गया। इस दृष्टिकोण से—समाजकी विशेष आर्थिक परिस्थितिका काफी ज्ञान होनेसे इतिहास की तमाम बातो की बड़ी सरलतासे व्याख्या की जा सकती है। यह सही है कि हमारे पेशेवर इतिहासकारोंमें इस ज्ञानका सर्वथा अभाव है। इसी प्रकार हर ऐतिहासिक युग की धारणाओ और विचारों की व्याख्या उस दौर के जीवन की आर्थिक परिस्थितियो से और सामाजिक व राजनीतिक सम्बंधो से —जिन्हें कि वे आर्थिक परिस्थितियाँ ही निर्धारित करती हैं— वडी आसानी से की जा सकती है। इतिहास को पहली वार उसके वास्तविक आधार पर खडा किया गया। स्पष्ट, मगर पहले पूरी तरह नजर-अन्दाज की गयी यह बात कि मनुष्य आधिपत्य के लिये लड़ सके और राजनीति, धर्म, दर्शन, आदि को समय दे सके, इस सवसे पहले उन्हे खाना, पीना, रहना और कपडे पहनना और इसलिये **काम करना** होता है—इस स्पष्ट वात को आखिरकार अपना ऐतिहासिक आधार प्राप्त हुआ।

इतिहासकी यह नयी धारणा समाजवादी दृष्टिकोणके लिये वहुत ज़्यादा महत्वकी थी। इसने दिखाया कि पहलेका तमाम इतिहास वर्ग-विरोधों और वर्ग संघर्षोंके

बीच चला है, कि शासन और शासित, शोषक और शोषित वर्ग हमेशा मौजूद रहे हैं, और यह कि मनुष्य जातिके अधिकाश भागके पल्ले हमेशा सिरतोड़ मेहनत पड़ी है, और आराम कम। ऐसा क्यों है? सिर्फ इस वजह से कि मनुष्य-जाति के विकास की पहले की सभी मंजिलो में उत्पादन का विकास इतना कम हुआ था कि ऐतिहासिक विकास इस विरोधी रूप मे ही आगे वढ सकता था, कि समूची ऐतिहासिक प्रगति एक छोटीसी विशेषाधिकार प्राप्त अल्प-सख्या पर निर्भर थी जव कि विशाल जनताको अपनी मेहनतसे अपने जीवन-यापन के लिये थोडे से साधन और साथ ही विशेषाधिकार प्राप्त लोगों के वढ़ते जाते प्रचुर साधन पैदा करने पड़ते थे। पिछले वर्ग शासन को, जिसे पहले मनुष्य की दुष्टता से ही समझा जाता था, समझने का यह स्वाभाविक और न्याय-सगत तरीका मिला है। मगर इतिहास की यही छान-वीन यह समझ भी पैदा करती है कि आजकल इतनी वेहद वढ़ी हुई उत्पादक शक्तियों के परिणाम-स्वरूप कमसे कम सवसे आगे वढे हुए देशोंमे मनुष्य-जाति के शासको और शोषितों के बीच वँटने का आखिरी वहाना भी गायव हो गया है; कि शासन करनेवाले वड़े पूँजीपति वर्ग ने अपना ऐतिहासिक कार्य पूरा कर लिया है, कि अव वह समाज का नेतृत्व करने के योग्य नहीं रहा है और वह पैदावार के विकास के रास्ते मे वाधा भी वन गया है जैसा कि व्यापार के सकटो ने और विशेष रूपसे पिछले भयानक पतन और सभी देशो मे उद्योग के मन्द पड जाने ने सावित कर दिया है, कि ऐतिहासिक नेतृत्व अव सर्वहारा के हाथ मे पहुँच गया है—उस वर्ग के जो समाज में अपनी पूरी स्थिति की वजह से अपने को सिर्फ़ तभी आजाद कर सकता है जव वह तमाम वर्ग-शासनको, तमाम गुलामी और तमाम शोषणको पूरी तरह खतम करे, और यह कि समाज की वे उत्पादक शक्तियॉ जो पूँजीपति वर्ग के नियंत्रण की सीमाओ से आगे वढ चुकी हैं अव केवल इस वात की राह देख रही हैं कि सगठित सर्वहारा वर्ग उनपर अधिकार करले ताकि वह ऐसी परिस्थितियॉ पैदा करे जिनमे समाजका हर सदस्य न सिर्फ उत्पादनमे ही वल्कि सामाजिक सम्पत्तिके वितरण और संचालनमे भी भाग लेनेके योग्य होगा। और वे परिस्थितियॉ समाजकी उत्पादक शक्तियों को और पूरे उत्पादनको योजना-पूर्वक चलाकर उसकी देनको इतना वढायेंगी कि हरेककी सभी उचित जरूरतोंकी वरावर वढती मात्रामे पूर्तिकी गारटी होगी।

मार्क्स ने जिस दूसरी महत्वपूर्ण वात का पता लगाया है वह पूँजी और श्रम के वीच सम्वंध की अन्तिम व्याख्या है। दूसरे शब्दो मे वह यह वताना है कि मौजूदा समाज में और पैदावार के मौजूदा पूँजीवादी तरीकेके अन्तर्गत पूँजीपति द्वारा मजदूरों का शोषण किस तरह होता है। जव से राजनीतिक अर्थशास्त्र ने यह सिद्धान्त सामने रखा था कि सभी सम्पत्ति और सभी मूल्यका स्रोत श्रम है तवसे ही यह सवाल

× **वाकूनिनवादी :** मिखाइल वाकूनिन (१८१४-७६) के अनुयायी; अराजकतावाद का सिद्धान्त-शास्त्री और मार्क्सवाद का कट्टर दुश्मन।—सं०

अनिवार्य हो गया : "तो हम इसका मेल इस तथ्य से कैसे करें कि मजदूर अपने श्रमसे जिस मूल्यका निर्माण करता है वह पूरा उसे नहीं मिलता, बल्कि उसका एक हिस्सा उसे पूँजीपति को सौंपना पड़ता है?" पूंजीवादी अर्थशास्त्रियों और सोशलिस्टों दोनो ने ही इस सवाल का वैज्ञानिक दृष्टि से संगत उत्तर देने की कोशिश की—मगर बेकार। आखिरकार मार्क्स ने हल सामने रखा। यह हल इस प्रकार है। उत्पादन की वर्तमान पूंजीवादी पद्धति पहले से ही समाज के दो वर्गोंका अस्तित्व मानती है : एक तरफ पूँजीपतियों का जिनके कब्जे में उत्पादन और जीविका के साधन हैं, और, दूसरी तरफ, सर्वहारा का जिसके पास इस कब्जे से दूर होने की वजह से बेचने को सिर्फ एक ही माल—अपनी श्रम-शक्ति है, और इसलिये जिन्हें अपनी यह श्रमशक्ति बेचनी पड़ती है ताकि वे जीवन-यापन के साधन हासिल कर सकें। पर माल का मूल्य उसके उत्पादन मे और इसलिये उसके पुनर्उत्पादन में भी निहित सामाजिक दृष्टि से आवश्यक श्रम की मात्रा से निश्चित होता है। इसलिये औसत आदमी की एक दिन, महीने या साल की श्रम-शक्ति का मूल्य श्रम की उस मात्रा से निश्चित होता है जो एक दिन, महीने या साल के लिये इस श्रम-शक्ति को बनाये रखने के लिये आवश्यक जीविका के साधनों की मात्रा में शामिल होता है। हम मान लें कि एक मजदूर की एक दिन की जीविका के साधनों के उत्पादन के लिये ६ घंटे के श्रम की जरूरत है—या, जो कि वही चीज है—यह कि उनमें जो श्रम शामिल है वह ६ घंटे के श्रमकी मात्रा है। तब एक दिन की श्रम-शक्ति का मूल्य जिस रकम में ज़ाहिर किया जायगा—वह भी ६ घंटेकी मेहनतका मूर्त रूप है। हम यह भी मान लें कि जो पूंजीपति हमारे मजदूरको काम पर रखता है वह उसे यह रकम बदलेमें देता है और इसलिये उसकी श्रम-शक्तिका पूरा मूल्य उसे अदा करता है। अब अगर मजदूर दिनमें ६ घंटे पूंजीपतिके लिये काम करता है तो वह उसके खर्चेको पूरी तरह बराबर कर देता है—६ घंटे के श्रम के लिये ६ घंटेका श्रम। मगर तब फिर पूँजीपतिके लिये इसमें से कुछ भी न मिलेगा और इसलिये वह मामले को दूसरी तरह से देखता है। वह कहता है "मैने इस मजदूर की श्रम-शक्ति को ६ घंटो के लिये नहीं, बल्कि पूरे दिन के लिये खरीदा है", और इसलिये वह, परिस्थितियों के अनुसार, मजदूरो से ८, १०, १२, १४, या और ज़्यादा घंटे काम कराता है : इस तरह सातवें, आठवें और बादके घंटो की पैदावार बिना वेतन श्रमकी पैदावार है और वह प्रारंभ में ही पूंजीपति की जेब मे चली जाती है। इस प्रकार पूंजीपति के यहॉं काम करनेवाला मजदूर न सिर्फ अपनी उस श्रम-शक्ति के मूल्य का फिर से उत्पादन करता है जिसके लिये वह तनखा पाता है, बल्कि इस सबके अलावा वह **अतिरिक्त मूल्य** भी पैदा करता है जो शुरू में ही पूँजीपति द्वारा हड़पा जाकर अपने बाद के दौर में निश्चित आर्थिक नियमों के अनुसार पूरे पूँजीपति वर्ग में बॅटता है और वह मूल रकम बनता है जिससे मूल पूँजी का किराया (ग्राउंड रैन्ट), मुनाफा, पूँजीका जमा

होना—संक्षेप मे गैर-मेहनतकश वर्गों द्वारा हजम की जाने वाली या जमा की जाने वाली तमाम सम्पत्ति पैदा होती है। मगर इस बात ने साबित किया कि आजकलके पूँजीपतियों द्वारा धन का हासिल किया जाना ठीक उसी तरह दूसरो की बिना वेतन मेहनतको हडपना है जिस तरह गुलामो के मालिक या अर्ध-गुलामों का शोषण करनेवाले सामन्ती सरदार करते थे; और यह कि शोषणके इन सब रूपोंमे फर्क है तो सिर्फ उन तरीकों और कायदोका जिनके जरिये बिना वेतनका श्रम हडपा जाता है। लेकिन इसने धनी वर्गोंके इस तमाम पाखण्डपूर्ण शब्द-जालके अखिरी औचित्यको भी खतम कर दिया कि मौजूदा समाज-व्यवस्थामे हक और न्याय, हकों और कर्तव्यो की समानता और हितों मे व्यापक साम्य का चलन है। अपने पूर्व गामियों की ही तरह मौजूदा पूँजीवादी समाज का भी एक ऐसी विशाल सस्था के रूप में पर्दाफाश हो गया जिसका काम एक छोटी, बराबर कम होती जाती अल्प-संख्या द्वारा जनता की विशाल बहु-सख्या का शोषण करना है।

आज का वैज्ञानिक समाजवाद इन्हीं दो महत्वपूर्ण बातो पर आधारित है। **पूँजी** के दूसरे भाग में समाज की पूँजीवादी व्यवस्था से सम्बंधित इनको और दूसरी वैज्ञानिक खोजों को जो जरा भी कम महत्वपूर्ण नहीं हैं, विकसित किया जायगा और इसके जरिये राजनीतिक अर्थशास्त्र के उन पहलुओं का भी क्रांतिकरण होगा जिन्हे पहले भाग में नहीं किया गया था। मार्क्स उसे प्रेस के लिये जल्दी तैयार कर सकें, यही हमारी कामना है।

★

लेनिन-स्तालिनके अजेय झण्डेके नीचे कम्युनिज़्म की ओर

[लेनिन की मृत्यु की २६ वीं बरसी के अवसर पर मास्को की स्मृति सभा में का० पी० एन० पोस्पेलोव द्वारा २१ जनवरी १९५० को दी गयी रिपोर्ट]

कॉमरेड्स,

२१ जनवरी १९२४ के उस दुखदायी दिन के बाद से जब हमारी सोवियत क्रान्ति के पिता, बोल्शेविक पार्टी और समाजवादी राज्य के जन्मदाता और सारी दुनिया की मेहनतकश जनता के महान शिक्षक, नेता और दोस्त, व्लादिमीर इलिच लेनिनकी मृत्यु हुई थी, छब्बीस बरस बीत चुके हैं।

लेनिन का नाम वह नाम है जिसे मेहनतकश और शोषित जनता सबसे ज़्यादा प्यार करती है। लेनिनका अमर ध्येय जीवित है और युग-युगान्तर तक जीवित रहेगा। अक्तूबर १९१७ में महान समाजवादी क्रान्तिके पूरी होनेके लिये हमारी जनता और तमाम प्रगतिशील मेहनतकश मानव-जाति व्लादिमीर इलिच लेनिनकी ऋणी है जिन्होंने उसकी तैयारी की थी—उस क्रान्ति की जिसने विश्व इतिहास में एक नये युग की, पूंजीवादके पतन और समाजवाद की विजयके युग की, शुरुआत की जोकि मानव-जाति के सच्चे इतिहास की शुरुआत थी।

लेनिन ने बताया कि "पूँजीवाद का ख़ात्मा और उसके बाद की स्थिति—कम्युनिस्ट व्यवस्था की नीव रखना-उस नये युग की विषय-वस्तु है जो विश्व इतिहास में अब शुरू हुआ है"। (लेनिन, **संपूर्ण ग्रंथावली**, भाग २५, पृ. ४६९, रूसी संस्करण)

व्लादिमीर इलिच लेनिन ने कम्युनिस्ट पार्टी को जन्म दिया और बड़ा किया जो लड़ाइयों की आग में तपकर दक्ष बनी। उनके नेतृत्व में हमारी जनताने दुनिया में मजदूरों और किसानों के पहले समाजवादी राज्य का निर्माण शुरू किया और साम्राज्य-वादियों तथा सफेद गार्डों की लड़ाई से अपने सोवियत राज्य की रक्षा की। लेनिन ने

हमारे देश में समाजवाद का निर्माण करने के महान ध्येय को बताया और इस ध्येय की तरफ बढने के मुख्य रास्ते की रूपरेखा खींची।

लेनिन के साथ-साथ कामरेड स्तालिन ने पार्टी का निर्माण किया, महान अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति की अगुआई की और सोवियत राज्य की रचना की। लेनिन के साथ साथ उन्होंने गृहयुद्ध और दखलन्दाजी के दिनोंमें समाजवादी मातृभूमि की रक्षाके काम का संचालन किया और शान्तिपूर्ण निर्माण में संक्रमण का सचालन किया। यह हमारे देशका और तमाम प्रगतिशील मानवजाति का महान सौभाग्य है कि लेनिनके ध्येयको उनके वफ़ादार शिष्य, मित्र और सहयोगी कॉमरेड स्तालिनने आगे बढ़ाया है और आगे बढा रहे हैं (ज़ोरसे और देर तक तालियों की गड़गड़ाहट)। कॉमरेड स्तालिन लेनिनवादी बुद्धिमता के साथ हमारी जनताका और तमाम प्रगतिशील मानवजाति का इतिहासके नये रास्तों पर नेतृत्व कर रहे हैं। वह मार्क्सवाद-लेनिनवादके वैज्ञानिक सिद्धान्तके प्रकाशसे करोड़ों मेहनतकश जनताके संघर्ष और विजयोंके रास्तेको आलोकित करते हैं। हम कॉमरेड स्तालिनके ऋणी हैं जो समाजवाद की महान विजयोंके लिये लेनिनके आदेशोंको पवित्रता के साथ पूरा कर रहे हैं। ये विजयें पीढ़ियों के भविष्य के लिये वास्तवमें निर्णायक हैं।

हमारे देशमें लेनिनके आदेशोंके अनुसार और कॉमरेड स्तालिनके नेतृत्वमें समाजवादी समाजका निर्माण हुआ है और कम्युनिज़्मके निर्माण का काम सफलता-पूर्वक आगे बढ रहा है। सोवियत संघ एक ऐसा शक्तिशाली समाजवादी राज्य, एक ऐसी महत्वपूर्ण अन्तरराष्ट्रीय शक्ति बना दिया गया है जो पूरी अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति पर असर डाल रही है और उसे मेहनतकश जनता के हित में बुनियादी रूप से बदल रही है। योरप की और सारी दुनिया की जनता को फ़ासिस्ट गुलामी से बचानेवाला समाजवाद का देश, जनता की समानता और मित्रता का देश, शान्ति, जनवाद और समाजवाद का एक अभेद्य दुर्ग बन गया है।

यही वजह है कि हमारे देश की और सारी दुनिया की मेहनतकश जनताने लेनिन के ध्येय को आगे बढ़ाने वाले महान व्यक्ति, कामरेड स्तालिन के ७० वें जन्म-दिनको इतने हार्दिक प्रेमके साथ मनाया। (ज़ोरके साथ और देर तक तालियों की गड़गड़ाहट) जोसेफ़ विज़ारियानोविच स्तालिन के ७० वें जन्म-दिनका उत्सव उन तमाम शान्तिप्रेमी जनता, तमाम देशोंकी मेहनतकश जनताके सहयोग और मित्रता का अभूत-पूर्व रूपसे शक्तिशाली और शानदार प्रदर्शन बन गया जो कॉमरेड स्तालिन को अपना प्यारा शिक्षक और मित्र और शान्तिका तथा मानवजाति की आज़ादी और खुशहाली की तरफ़ प्रगतिका फरहरा मानती है। (तालियों की ज़ोरदार गड़गड़ाहट)

१

लेनिनके आदेशोंको पूरा करके सोवियत जनता की कम्युनिज़्मकी तरफ़ विश्वासके साथ प्रगति

हमारे देश में समाजवाद की विजय को सफल बनाने में और अपनी मातृभूमि को टैकनीक की और आर्थिक दृष्टि से एक पिछड़े हुए देश से बदलकर एक शक्तिशाली समाजवादी ताकत बनाने में अकल्पित मुश्किलों पर काबू पाना पड़ा था। लेनिन और स्तालिन की पार्टी ने हमारी जनता का समाजवाद की विजय की तरफ़ नेतृत्व किया। वह योरप और एशियाके अनेक देशोंमें समाजवाद और जनवादकी ऐतिहासिक विजयोंके लिये निर्णायक परिस्थितियाँ पैदा करने में सफल हुई। इसका पहला और सबसे खास कारण यह है कि वह एक मार्क्सवादी पार्टी है, एक लेनिनवादी पार्टी है, कि पार्टीकी नीति समाजके मार्क्सवादी-लेनिनवादी विज्ञानके आधार पर बनती है, तमाम ऐतिहासिक तूफ़ानों और इतिहासके टेढ़े-मेढ़े रास्तोंके बीच लेनिन और स्तालिनकी पार्टीकी तमाम कार्रवाइयोंका निदर्शन मार्क्सवाद-लेनिनवादकी उस सर्वविजयी शिक्षाके सच्चे कुतुबनुमासे हुआ है और होता है जिसे कॉमरेड स्तालिन विकसित कर रहे हैं और संपन्न बना रहे हैं।

वैज्ञानिक कम्युनिज़्म के सिद्धान्त की रचना करनेवाले पहले व्यक्ति मार्क्स और एंगेल्स थे। वैज्ञानिक तरीके से उन्होंने साबित किया कि ऐतिहासिक दृष्टिसे पूँजीवाद एक अस्थायी समाज-व्यवस्था है। उन्होंने पूँजीपति वर्गके पतन और सर्वहारा वर्ग द्वारा राजसत्ता पर कब्ज़ा करनेकी अवश्यम्भाविताको, पूँजीवादकी जगह समाजवादकी स्थापना की अवश्यम्भाविताको साबित किया। मार्क्स और एंगेल्सने मज़दूर वर्गको अपनी शक्ति के प्रति जागृत होना, अपने इस ऐतिहासिक ध्येय के प्रति जागृत होना सिखाया कि वह पूँजीवादी व्यवस्थाकी कब्र खोदनेवाला है। सर्वहारा वर्गको उन्होंने एक शक्तिशाली वैचारिक हथियार— क्रांतिकारी सिद्धान्त—दिया।

अपने ज़माने के मज़दूर आन्दोलनके साथ, उसके प्रमुख लड़ाकोंके साथ मार्क्स और एंगेल्सका घनिष्ठ सम्बंध था। क्रान्तिकारी मज़दूर आन्दोलन को और मार्क्सके निदर्शनमें स्थापित अन्तरराष्ट्रीय मेहनतकश संगठनको उन्होंने उस नये समाजके हरकारे के रूपमें देखा जो पुराने पूँजीवादी समाजकी जगह लेनेके लिये जन्म ले रहा है।

अन्तरराष्ट्रीय मेहनतश संगठन की जनरल काउंसिल के पहले ऐलानमें फ्रांसीसी–प्रशन युद्धके बारेमे लिखते हुए मार्क्सने भविष्यवाणी की थी कि,

"...आर्थिक दुखों और राजनीतिक सन्निपातों वाले पुराने समाज के बर-खिलाफ एक नया समाज पैदा हो रहा है जिसका अन्तरराष्ट्रीय नियम शान्ति होगा, क्योंकि उसका राष्ट्रीय शासक हर जगह एक ही—श्रम होगा।"

अक्तूबर १९१७ में हमारे देश में जो नया समाजवादी समाज पैदा हुआ उसने सोवियत सत्ताको, मेहनतकश जनता की सत्ता को कायम किया और शान्तिको अपना अन्तरराष्ट्रीय सिद्धान्त बनाया। उसने हमारे अमर शिक्षक लेनिन के इन शब्दों की महान सचाई को सबके सामने साबित कर दिया कि

"समाजवादमे विशाल शक्तियाँ अन्तर्निहित हैं और अब मानवजाति विकास की एक नयी मंजिलमें दाखिल हो गयी है जिसमें अपूर्व रूपमे शानदार सभावनाएँ भरी हुई हैं।" (लेनिन, **सम्पूर्ण ग्रंथावली**, भाग २७, पृ. ४१५, रू. स.)

मार्क्स और एंगेल्स ऐसे युगमें हुए थे जब पूंजीवाद निरन्तर ऊपर ही की ओर विकसित हो रहा था, जब तक कि सर्वहारा क्रान्ति सीधे अमली रूपमें अवश्यम्भावी नहीं बनी थी। पूंजीवादी व्यवस्थाका ढहना और उस नये समाजकी स्थापनाको देखना उनके हिस्से में नहीं था जिसके जन्मकी उन्होंने वैज्ञानिक निश्चितता के साथ भविष्यावाणी की थी।

मार्क्स और एंगेल्सके ध्येयको लेनिन और स्तालिन ने नये युग की, साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रान्तियों के युग की परिस्थितियोंमें आगे बढाया है। लेनिनने साम्राज्यवाद के युगमें पूँजीवादके विकास के नियमों को खोल कर रखा—उस समय जब वह अपने पतनकी ओर चल पडा था, जब एक वक्तका "फूलता-फलता" पूँजीवाद एक मरते हुए और क्षय-ग्रस्त पूँजीवादमें बदल गया था। एक देशमे समाजवाद की विजय की सभावनाको लेनिन ने सैद्धान्तिक रूपसे साबित किया।

लेनिन और स्तालिनके नेतृत्वमें विश्व साम्राज्यवादी मोर्चे की पहली कडियाँ तोडी गयीं, महान अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति विजयी हुई।

मज़दूर वर्गके ध्येय के लिये, समाजवादकी विजयके ध्येयके लिये लेनिनने अपनी पूरी जिन्दगी अर्पण की। समाजवादकी विजयकी तरफ ले जाने वाले रास्तोंको लेनिनने साफ-साफ और ठोस तरीकेसे देखा। पार्टीको और जनताको उन्होंने आदेश दिया कि हमारे देशमें और अन्तरराष्ट्रीय पैमाने पर समाजवादकी विजयको सफल बनानेके लिये किस रास्ते पर चलना चाहिये।

समाजवाद की तरफ प्रगति के रास्तों को बताते हुए व्लादिमीर इलिच लेनिन ने हमारे देशके औद्योगीकरण करने के काम को उसके पूरे महत्व के साथ उठाया और चेतावनी दी कि औद्योगीकरण के बिना आम तौरसे एक स्वतंत्र देश के रूप में हम

मिट जायेंगे। लेनिनवादी रणनीति का उद्देश्य यह था कि किसानों का नेतृत्व मजदूर वर्ग के हाथ में कायम रखते हुए बड़े पैमाने पर मशीन उद्योग की बहाली और विकास की और बिजलीकरण की योजना को पूरा करनेकी पक्की व्यवस्था की जाय और इस आधार पर छोटे पैमाने की किसानी अर्थ-व्यवस्था का समाजवादी पुनर्निमाण हासिल किया जाय।

लेनिनने भविष्यवाणी की थी कि,

"अगर रूसमें बिजलीघरों और विशाल टैक्नीकल कारखानोंका घना ताना बाना बिछा दिया जाता है तो हमारा कम्युनिस्ट आर्थिक निर्माण भविष्यके समाजवादी योरप और एशिया के लिये आदर्श बन जायगा।" (लेनिन, **संपूर्ण ग्रंथावली**, भाग २६, पृ. ४८, रू. सं.)

लेनिनवादके दुश्मनोंके खिलाफ़ संघर्षमे कॉमरेड स्तालिनने एक देशमें समाजवादकी विजयकी सभावना के सिद्धान्त की रक्षाकी और उसे विकसित किया। समाजवादका निर्माण करनेकी लेनिनवादी रणनीति सम्बंधी योजनाको, जिसका प्रारम्भिक बिन्दु औद्योगीकरणका विचार था, उन्होंने ठोस रूप दिया।

कॉमरेड स्तालिनने लेनिनके आदेशोंपर चलते हुए बड़ी स्पष्टताके साथ पार्टी और जनताके सामने समाजवादी औद्योगीकरणका तेजीके साथ विकास करनेका काम रखा ताकि हमारी समाजवादी मातृभूमिकी स्वतंत्रता कायम रखी जा सके और समाजवाद की विजयकी गारंटी की जा सके। फ़रवरी १९३१ में, कारोबारी अधिकारियोंके पहले सम्मेलनमें कॉमरेड स्तालिनने कहा था:

"आगे बढ़े हुए देशों से हम ५० या १०० बरस पीछे हैं। हमें दस बरस के भीतर इस दूरीको पूरा करना है। या तो हम यह करते हैं या वे हमें कुचल देंगे।"

हमारे देशने समाजवादी औद्योगीकरण के महान ध्येयको ऐतिहासिक समयमें, कॉमरेड स्तालिन द्वारा बताये गये समयमें पूरा किया है। ठीक यही कारण है कि जब दस बरस बाद, १९४१ में हिटलरी जर्मनी विश्वासघाती हमला करके हमारे देश पर टूट पड़ा तो वह हमें घबड़ा न सका। हिटलरी जर्मनी ने तमाम योरप के अर्थ-तंत्र को अपनी खिदमत में लगा लिया था, पर समाजवाद का देश फ़ौजी तथा टेकनीकल आर्थिक शक्ति में उससे आगे रहा। फासिज़्म के खिलाफ जिन्दगी और मौत की लड़ाई से समाजवाद का देश विजयी होकर निकला। योरप की जनता को फासिस्ट गुलामी से उसने आजाद किया।

समाजवाद की इस युग-निर्माणकारी विजय के लिये सोवियत जनता, सबसे पहले और मुख्य रूप में, पार्टी और जनता के महान नेता और शिक्षक के बुद्धिमता-पूर्ण

निदशनकी, इतिहासके सबसे बड़े रणनीतिज्ञ और कैप्टन, कामरेड स्तालिन की ऋणी है। (ज़ोरके साथ और देर तक तालियों की गड़गड़ाहट)

लेनिन और स्तालिनकी पार्टीने हमारे देशमें समाजवादका निर्माण करनेके महान कार्यक्रमके लिये जनतामे उत्साह भरा। उसने उन गद्दारों और घुटना टेकनेवालों को परास्त किया जो समाजवादकी विजयकी सभावनामें मेन्शेविक तरीके की आस्थाकी कमी का जहर पार्टी और जनताके बीच फैलाना चाहते थे और जिन्होंने हमारे देशको पूँजीवादके पुनर्स्थापनके रास्ते पर पहुँचाने की कोशिश की थी। ये तमाम मेन्शेविक टुकड़खोर—ट्राट्स्कीवादी, जिनोवियेववादी, बुखारिनवादी, पूँजीवादी राष्ट्रवादी—कभी भी मार्क्सवादी नहीं थे। " उन्होंनें सिर्फ़ बाना पहना था ", मार्क्सवादी होने का झूठा दिखावा किया था। उनकी विश्वास-घाती स्थितिका, उनके पूँजीवादी घिराव के सीधे एजेन्टोंमें, मातृभूमि के गद्दारोंमें—बदल जाने का आधार पूँजीवादी व्यवस्था की खयाली ' सर्वशक्तिशालिता ' के प्रति उनका सबसे गन्दा, नाक-रगड़ू दामन थाम कर चलनेका रवैया था।

हमारे देश में समाजवाद की विजय की सम्भावना का लेनिनवादी सिद्धान्त जनता को सचारित करनेके बाद एक जबरदस्त भौतिक शक्ति बन गया। पंच वर्षी स्तालिन योजनाओंके दौरानमें वह सोवियत जनताकी वीरतापूर्ण मेहनतमें जाहिर हुआ। ऐतिहासिक दृष्टिसे सबसे कम समयमें हमारे देशका पूरा नक्शा बदल दिया गयाहै। पिछले जमानेसे विरासत में पाये हुए सदियोंके पुराने पिछड़ेपनको सदा-सर्वदाके लिये खतम कर दिया गया है।

समाजवादकी युग-निर्माणकारी विजयमें हमारी जनताका कॉमरेड स्तालिनने नेतृत्व किया है। लेनिनकी भविष्यवाणी चमत्कारिक शक्तिके साथ हमारे जमानेमें सच्ची साबित हुई है—हमारा कम्युनिस्ट आर्थिक निर्माण योरप और एशियाकी जनताके लोकशाही देशोंके लिये आदर्श बन गया है।

क्रान्तिके एक महा प्रतिभाशाली व्यक्तिकी दृष्टि रखनेवाले लेनिनने अपनी दूर-दर्शितासे भविष्यमें दसियों बरस आगे तक देखा। अन्तरराष्ट्रीय पैमानेपर कामोंको सफलता-पूर्वक हल करनेके साथ हमारे घरेलू कामोंके हलको लेनिनने अभिन्न रूपसे जोड़ा। ये काम थे : किसानोंके सम्बंधमें सर्वहारा वर्गकी प्रमुख भूमिकाको कायम रखना, देशका औद्योगीकरण करना और किसानोंको कोओपरेटिव (सहयोगी) योजना के आधारपर समाजवादके रास्ते ले जाना।

सर्वहारा का वह महान रणनीतिज्ञ उन विशाल ऐतिहासिक प्रक्रियाओं की शुरुआत को ही देखनेमें सफल हो गया था जो साम्राज्यवाद द्वारा उत्पीड़ित जनताके बीच उठ रहीं थी। उन्होंने दसियों बरस आगे देखा कि पूँजीवादी गुलामी के खिलाफ़, उसके सबसे बुरे रूप–साम्राज्यवाद के खिलाफ, नित नये करोड़ों लड़ाके उठ रहे हैं।

लेनिन ने बताया कि हालाँ कि साम्राज्यवादी पूँजीपति " वर्ग अपनी खतम होती पूँजीवादी गुलामीको कायम रखने के लिये हर तरह की बर्बरताओं, पाशविकताओं और अत्याचारों के लिये तैयार है," मगर दुनिया की आबादी की बहुत विशाल बहुसख्या ऐतिहासिक विकास के दौर की वजह से ही अपनी मुक्ति के संघर्ष में असाधारण तेजी के साथ खिचती आ रही है, और इसलिये " समाजवाद की अन्तिम विजय पूरी तरह और एकदम निश्चित है।" (लेनिन, **संपूर्ण ग्रंथावली**, भाग २७, पृ. ४१७, रू. स.)

" किसानों के साथ दस-बीस बरस तक उचित सम्बंध और दुनिया के पैमाने पर (सर्वहारा क्रान्तियों में, जो बढ रही हैं, देरी होने पर भी) जीत निश्चित है। वरना फिर सफेद गार्डों के आतंक की बीस-चालीस बरस तक यातनाएँ।

" यह, या वह। कोई तीसरा रास्ता नहीं है"—लेनिनने १९२१ में लिखा था। (लेनिन, **संपूर्ण ग्रंथावली**, भाग २६, पृ. ३१३, रू. स.)

सामूहिक खेतीकी व्यवस्थाके मेमार, कॉमरेड स्तालिनके बुद्धिमत्तापूर्ण नेतृत्व के नीचे हमारी पार्टीने किसानो के प्रति लेनिनवादी नीति की सफलताको पक्का बनाया। उसने सत्ता पर कब्जेके बाद सर्वहारा क्रान्तिके सबसे मुश्किल कामको सफलतापूर्वक हल किया—यह काम था करोडों किसानों को समाजवाद के रास्ते पर लगाना, इसके आधार पर सबसे बहु-सख्यक शोषक वर्ग—कुलकों का खातमा करना, और इस तरह, सामूहिक खेती की व्यवस्था की सुदृढ़ता और विकास को निश्चित बनाना।

काश, हमारे अमर पिता, महान लेनिन अपनी ऑखोंसे देख सकते कि कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत जनता ने एक शताब्दी के चतुर्थांश में क्या कामयाबियाँ हासिल की हैं।

काश, महान लेनिन हमारी मातृभूमि की उस विशाल भूमि पर जहाँ १९२१ तक भी पितृ-सत्तात्मक व्यवस्था और अर्द्ध-बर्बरता का राज्य था, हजारों-लाखों ट्रैक्टरों, सैकडों अव्वल दर्जे के कारखानों, पावर स्टेशनों, खानों, लोहे के कारखानों और तेल के कुओंको देख सकते! काश, महान लेनिन हमारे हजारों प्रमुख स्तखानोव-वादियों को, सामूहिक खेती करनेवाले हमारे प्रमुख स्त्री-पुरुष किसानों को और समाजवादी मेहनतके उन हजारों शानदार वीरोंको देख सकते जिनके निस्वार्थ रचनात्मक कामने मेहनतकी सबसे ज़्यादा उत्पादन-शक्तिकी वे मिसालें पेश की हैं जो कम्युनिज़ममें धीरे-धीरे सक्रमण करनेके लिये ज़रूरी हैं!

काश, महान लेनिन सामूहिक खेतों और राज्यके खेतोंको देखने आनेवाले जनता की लोकशाहीके देशोंके दर्जनों और सैकड़ों किसान प्रतिनिधि-मण्डलोंको देख सकते!

हमारी पार्टी के लिये, हमारी जनताके लिये कितने गर्वके साथ व्लादिमीर इलिच लेनिन अपनी उस भविष्यवाणी को दुहराते जो उन्होंने पार्टी की ग्यारहवीं कांग्रेस में की थी,

"लाखों और करोड़ों जनता पर उसने कैसी भी शैतानी, मुश्किलें और मुसीबतें क्यों न ढायी हों—पर पृथ्वी पर ऐसी कोई भी ताकत नहीं है जो हमसे हमारी क्रान्तिकी मुख्य सफलताओंको छीन सके; क्योंकि ये अब सिर्फ 'हमारी' सफलताएँ नहीं रह गयी हैं, बल्कि दुनियाकी ऐतिहासिक सफलताएँ बन गयी हैं।" (लेनिन, **संपूर्ण ग्रंथावली**, भाग २७, पृ. २७१, रू. सं.)

लेनिनके आदेशोंको पूरा करती हुई सोवियत जनता कम्युनिस्ट पार्टीके नेतृत्वमें और लेनिनके अमर ध्येयको आगे बढ़ानेवाले महान व्यक्ति कॉमरेड स्तालिन के बुद्धिमत्तापूर्ण निदर्शन में कम्युनिज़्म की तरफ विश्वास के साथ कदम बढ़ा रही है।

व्लादिमीर इलिच लेनिन की मृत्यु की छब्बीसवीं बरसी को सोवियत जनता सोवियत अर्थतंत्र और संस्कृति के सभी क्षेत्रों में एक नयी, शक्तिशाली लहर के बीच मना रही है। आज सारी दुनिया को साम्राज्यवादी मण्डली की आदमी से घृणा करनेवाली इन उम्मीदों के ढह जाने का यकीन हो गया है कि दूसरे विश्व युद्ध में हर एक से ज़्यादा मुसीबतें और नुकसान उठानेवाला सोवियत संघ, लड़ाई के बादकी आर्थिक बहाली की मुश्किलों से पार न पा सकेगा। फासिस्ट बर्बरों द्वारा मिस्मार कर दिये गये सोवियत शहर और गॉव राख और ईंट–पत्थरों के ढेरोंसे फिर उठ रहे हैं। हिटलरियोंने जिन विशाल कारखानों, पावर-स्टेशनों, खानोंको बरबाद कर दिया था, वे सोवियत देशभक्तों की वीरतापूर्ण मेहनत की बदौलत अभूतपूर्व रूपसे थोड़े समयमें फिर बन गये हैं। लड़ाई के बाद की पंचवर्षी योजनाके पहले चार बरस के दौरान में हमारे देशमें ५ हज़ार २ सौ राज्य के औद्योगिक-धन्धे बने हैं, फिरसे खड़े किये गये हैं और उनको काम सौंपा गया है। भारी उद्योग-धंधोंके निर्माणके इतने तेज विकासकी मिसाल इतिहासमें कभी नहीं देखी गयी है। जो क्षेत्र दुश्मनके कब्जेके शिकार हुए थे उनमें औद्योगिक पैदावार का लड़ाईसे पहले का स्तर फिरसे हासिल हो गया है।

लड़ाईके बादकी पंचवर्षी स्तालिन योजना का कार्यक्रम समयसे पहले पूरा किया जा रहा है। पूरे उद्योगने १९४९ के बढ़ाये हुए कार्यक्रमको भी १०३ फी सदी पूरा किया। समाजवादी सोवियत प्रजातंत्र सघमें पिछले वर्ष कुल औद्योगिक पैदावार लड़ाईसे पहलेके बरस १९४० से ४१ फी सदी ज्यादा हुई और १९४९ के चौथे चतुर्थांशमें औद्योगिक पैदावारका आम स्तर लड़ाई के पहले के स्तरसे ५३ फी सदी ऊँचा था।

उद्योग और कृषिमें लड़ाई से पहलेका स्तर फिर से हासिल करने और फिर इस स्तर से काफ़ी मात्रा में आगे बढ़ जानेका जो काम कॉमरेड स्तालिन ने ९ फरवरी १९४६ को वोटरों के सामने अपने ऐतिहासिक भाषण में रखा था उसे सोवियत जनता इसी तरह से पूरा कर रही है।

कृषि में भी बहाली और लड़ाई के बाद की प्रगति के कामों को इसी तरह से सफलता-पूर्वक पूरा किया जा रहा है। अनाज का सवाल हल हो गया है। कृषि के मौजूदा दौर के खास काम को पूरा करने,—मवेशी बढ़ाने की तीन बरसी योजना को पूरा करने के काम में बराबर प्रगति हो रही है। इससे पाले हुए जानवरों की पैदावार में १९५१ मे १९४८ की तुलना में कम से कम डेढ़ गुनी ज़्यादा बढ़ती हो जायगी।

प्रकृति का पुनर्निमाण करने की स्तालिनी योजनाको जो अपने पैमानेके लिहाज से इतिहास में बेजोड़ है, पूरा करने में सामूहिक खेतों के करोड़ों स्त्री-पुरुष किसान बेहद उत्साह के साथ अपनी रचनात्मक पहलकदमी का परिचय दे रहे हैं। इस योजना के पूरे होने से ज़्यादा और स्थायी फसल और प्राकृतिक तत्वोंके उत्पातोंसे मुक्ति निश्चित हो जाती है। हमारे देशमें खपतके सामानों की पूरी बहुतायत पैदा करनेका वह एक निर्णायक हथियार है। वह समय आ गया है जब सोवियत जनता प्रकृतिका पुनर्निमाण सफलतापूर्वक कर रही है और उसे अपने आधीन बना रही है। इसी बात मे आते हुए कम्युनिज़्मके महान युगका लक्षण दिखायी देता है।

लडाई के बाद के दौर में कृषि की उत्पादक-शक्तियाँ समाजवादी उद्योग की सहायता से बराबर बढ़ रही हैं। खेती के लिये हज़ारों-लाखों ट्रैक्टर, कम्बाइने, खेती की नयी से नयी मशीनें और जंगलात लगाने के स्टेशनों को लैस करने के लिये शक्तिशाली यंत्रादि एक निरन्तर बढते हुए प्रवाह में कृषि को पहुँच रहे हैं। टैक्नीकल सुविधाओं में बढ़तीकी वजहसे समाजवादी खेती की दक्षता बराबर ऊँचेसे ऊंचे स्तर पर पहुँच रही है। ऐसे कार्यकर्त्ताओं का एक समूह, जो समाजवादी खेती का वास्तविक सुनहरा कोष है, तैयार हो गया है और उनकी संख्या बराबर बढ़ती जा रही है। खेती की टैक्नीक और खेतीके विज्ञान पर अपने अधिकार को वह लगातार बढाता जाता है। सामूहिक फार्मों (खेतों) के गाँवों में बिजलीकरण और रेडिओ और सिनेमा का प्रवेश अधिकाधिक बड़े पैमाने पर बढ़ रहा है और शहरी तरीक़े पर नये घर बनाने का काम वहाँ शुरू हो रहा है। शहर और देहात का युगों पुराना फर्क अधिकाधिक ख़तम किया जा रहा है, मिटाया जा रहा है— जो कि कम्युनिज़्म में धीरे-धीरे सक्रमण की एक खास प्रारम्भिक शर्त है।

राष्ट्रीय आर्थिक योजनाओ का सफलतापूर्वक पूरा होना और और ज़्यादा पूरा होना तथा लडाईके बादकी पंच-वर्षी स्तालिनी योजनाको जल्दी पूरा करने के लिये चौतरफा विशाल समाजवादी प्रतियोगिता का चलना—समाजवादी व्यवस्था की महान जीवनमय रचना-

त्मक शक्तिका, पूंजीवादी व्यवस्थाके ऊपर उसकी श्रेष्ठताका एक नया, स्पष्ट सबूत पेश करते हैं। सोवियतकी सामाजिक और राज्य-व्यवस्था दूसरी किसी भी गैर-सोवियत समाज-व्यवस्थाकी तुलनामें समाजके संगठनका बेहतर रूप है, यह बात लड़ाईके बादके दौरमें निर्विवाद तथ्योंसे और नयी शक्तिके साथ सारी दुनियाके सामने साबित हो चुकी है।

स्तखानोववादियों के अखिल संघ सम्मेलन के सामने अपने भाषण में कॉमरेड स्तालिन ने कहा था :

> "हमारी ही क्रान्ति अकेली ऐसी है जिसने न सिर्फ पूंजीवाद की जंजीरों को तोड़ दिया है और जनता को आज़ादी दी है, बल्कि, जो जनता की खुशहाल जिन्दगी के लिये भौतिक परिस्थितियॉं पैदा करनेमें भी सफल हुई है। हमारी क्रान्ति की शक्ति और अजेयता इसी बात में है।"

सोवियत संघ में राष्ट्रीय अर्थतंत्र की बढ़ती के आधार पर रूबल की खरीदने की शक्ति बराबर बढ़ रही है, मज़दूरों, दफ्तर के कर्मचारियों और बुद्धिजीवियों की असली तनखाएँ बढ़ रही हैं; किसानोंकी आमदनी सामूहिक आम फ़ार्मों (खेतों) की अर्थ-व्यवस्था तथा सहायक और निजी घरों, दोनों से बढ़ी है; तैयार माल ख़रीदने के किसानों को खर्चे को कम कर दिया गया है; खपत के माल की कीमते व्यवस्थित रूपसे घटायी जा रही हैं; और, शहर तथा देहात की मेहनतकश जनता का भौतिक और सास्कृतिक स्तर ऊँचे उठ रहे हैं। यह हमारी समाजवादी क्रान्ति के सार-तत्व का, सोवियत की सामाजिक और राज्य व्यवस्था के सार-तत्व का परिणाम है।

१९३५ की मई दिवस की परेड के शरीक होनेवालों के स्वागत के समय के अपने भाषण में कॉमरेड स्तालिन ने अपने और अपने और अपने सहयोगियों के बारे में कहा थाः

> "जहॉं तक हमारा, केन्द्रीय कमिटी के सदस्यों, सरकार के सदस्यों का सवाल है, हमारे महान ध्येयकी जिन्दगीके सिवा; जनताकी आम खुशहालीके लिये, तमाम मेहनतकश जनताकी, करोड़ों आम जनता की खुशीके लिये सघर्ष की जिन्दगी के सिवा, हमारी और कोई जिन्दगी नहीं है।"

संसार में और किसी ने भी इस महान ध्येयके लिये—जनताकी आम खुशहाली, तमाम मेहनतकश जनता की खुशी और भलाई पैदा करनेके लिये इतना नहीं किया है जितना कि लेनिन और स्तालिनने किया है।

सोवियत जनता जानती है कि हर बरसके बीतनेके साथ-साथ हम लेनिन और स्तालिनकी पार्टी द्वारा निर्धारित महान ध्येयके, उस कम्युनिस्ट समाजकी सृष्टिके ज़्यादा से ज़्यादा करीब़ पहुँचते जायेंगे जहाँ सामाजिक जीवनकी आधार-शिला "हरेकको उसकी योग्यताके अनुसार, हरेक को उसकी जरूरत के अनुसार" का कम्युनिस्ट सिद्धान्त होगा।

और दुनियामें ऐसी कोई भी शक्ति नहीं हैं जो कम्युनिज़्मकी तरफ़ सोवियत जनताके अदम्य बढ़ावको रोके। **(तालियों की ज़ोरदार गड़गड़ाहट)**

२

लेनिनवाद, शान्ति, जनवाद और समाजवाद के संघर्ष का फरहरा

लेनिनवाद की महान शिक्षा तमाम देशों की मेहनतकश जनता को उन अभूतपूर्व मुसीबतों के खिलाफ संघर्ष का रास्ता दिखाती है जो साम्राज्यवाद ने मानव जाति पर ढ़ायी हैं और ढ़ा रहा है। लेनिनवाद साम्राज्यवादके जुएसे मुक्तिका सच्चा रास्ता और नयी, समाजवादी जिन्दगीका निर्माण करनेका रास्ता बताता है।

मार्क्सने अत्यंत तीक्ष्ण भाषामे बतलाया था कि पूँजीवादी व्यवस्था जनता की आर्थिक गरीबी की और उन हावी वर्गोंके राजनीतिक पागलपन की व्यवस्था है जो संकटों और पूँजीवाद के अन्तर-विरोधोंसे बचने का रास्ता एक नये विश्व युद्ध में ढूँढ़ते हैं। मार्क्स के यह शब्द पूँजीवाद के आम संकट को इस युग में जो पहले विश्व युद्ध और महान अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति के परिणाम-स्वरूप शुरू हुआ है और भी जोरों से गूँजते हैं।

पूँजीवाद की लाइलाज बीमारियों के तथाकथित अजमूदा इलाज के रूप में, हल न होने वाले अन्तरविरोधों के गिरिफ्त में फँसी पूँजीवादी अर्थ-व्यवस्था की बहाली के "सबसे नये" तरीके के रूप में, युद्ध और हथियारों की तैयारी की घुडदौड़ का जंगखोरों ने पूँजीवादी दुनिया में इतने नंगे रूप में और खुले तौर पर पहले कभी भी प्रचार नहीं किया था।

अमरीकी इजारेदारों के ऐलानों से ऐसे अनेक उद्धरण दिये जा सकते हैं कि सच्ची शाति का मतलब उनके लिये बरबादी होगा क्योंकि उससे हथियार तैयार करने के विशाल आर्डरों से वे वंचित हो जायेंगे।

अमरीकी पत्रिका "यूनाइटेड स्टेट्स न्यूज एण्ड वर्ल्ड रिपोर्ट"ने "बिजिनेस मण्डली" के दृष्टिकोण को जाहिर करते हुए अप्रैल १९४९ में साफ़-साफ़ लिखा कि "हथियार तैयार करने का कार्यक्रम अर्थ-व्यवस्था को बनावटी तरीकेसे खड़ा करनेका एक अत्यंत ही महत्वपूर्ण नया तरीका है।"

तथाकथित "नियमित अर्थ-व्यवस्था" की नीति—यानी बेहद फूले हुए युद्ध--उद्योगको बनावटी रूपसे सहारा देकर खड़ा रखनेकी नीति जो आज अमरीकाकी शासक-मण्डली चला रही है—फौजवादके बौखलाये शासनकी नीति है, साम्राज्यवाद और युद्धकी नीति है, तथाकथित "ठण्डे युद्ध" की लपटोंको भडकानेकी और स्थायी शान्ति तथा राष्ट्रोंकी सुरक्षाके इरादेसे रखे गये प्रस्तावोंको नाकाम करनेकी नीति है।

इसे सब कोई जानता है कि अमरीका के १९५० के बजट में फौजी खर्चे की मदमें ७१ फ़ी सदी रखा गया है, जब कि सार्वजनिक शिक्षा और सार्वजनिक स्वास्थ्यकी मदों के लिये २ फ़ी सदी से ज़्यादा नहीं है। १९३९ से १९५० में अमरीकाके फौजी ख़र्चे में बीस गुने से ज़्यादा बढती हुई है।

मगर हथियारों पर इस राक्षसी और बराबर बढ़ते जाते खर्चेसे, शान्तिपूर्ण परिस्थितियों में देशको बनावटी रूपसे युद्ध की अर्थ-व्यवस्थाकी रीति पर चलानेसे, अबाध रूपसे बढ़ते आ रहे आर्थिक संकटको केवल थोड़े समयके लिये ही टाला जा सकता है। उसके साथ ही साथ पूँजीवादके तमाम अन्तरविरोध और भी तेज हो उठेंगे और एक अत्यंत गहरे तथा बरबादी ढानेवाले संकट की ज़मीन तैयार हो जायेगी।"

अमरीकामें और दूसरे पूँजीवादी देशोंमें फ़ौजी ख़र्चा और "ठण्डे युद्ध" में फूंकी जानेवाली रकमें आर्थिक संकटको रोक नहीं सकती। यह इस बातसे जाहिर है कि हालाँकि १९४८ के पतझड़में अमरीका का फौजी खर्चा लड़ाई के बादके पिछले बरसों की तुलना में सबसे ऊंचे शिखर पर था, मगर ठीक १९४८ के पतझड़ में ही अमरीका में तेज आर्थिक गिरावट शुरू हुई। यह जानी हुई बात है कि अक्तूबर १९४८ से अक्तूबर १९४९ के बीच के बरस में अमरीका में औद्योगिक पैदावार का स्तर २२ फ़ी सदी नीचे गिरा, कि इस बरसमें घटाये हुए सरकारी आँकड़ों के अनुसार भी बेकारों की संख्या में ६४ फ़ी सदी बढती हुई। अमरीका में बेकारों और आधे-समय बेकारों की कुल संख्या अभी १ करोड़ ४० लाखसे ज्यादा है, जबकि तमाम पूँजीवादी देशोंमें बेकारों और आधे समय बेकारों की कुल संख्या ४ करोड़ से ऊपर है।

मार्शल योजना की फॉस के नीचे अमरीकी "सहायता" के फन्देमें फंसनेवाले योरपके पूंजीवादी देशोंकी अर्थ-व्यवस्था गहरी और आशा-रहित अव्यवस्थाकी हालतमें है। औद्योगिक पैदावार कम हो रही है, बेकारी और गरीबी बढ़ रही है, मुद्रा-प्रसार बढ रहा है, कीमतें चढ़ रही हैं, फैक्टरियों और दफ्तरोंके मज़दूरों की तनखाएँ नियमित रूपसे कम की जा रही हैं और छोटे किसान तथा कारीगर बरबाद हो रहे हैं।

गरीबी और कंगाली का निराशापूर्ण समुद्र, पूँजीवादी देशों में मेहनतकश जनता के आँसुओं और दुख-दर्द का समुद्र हर महीने गुज़रने के साथ-साथ बढ़ता जा रहा है। इन परिस्थितियों में योरप की मेहनतकश जनता को नये युद्ध की आग भड़काने वालों के जैसे कि ब्रिटिश फील्ड मार्शल मोण्टगोमरी के आदमख़ोर भाषणों पर विशेष रूप से गुस्सा और क्रोध होता है। जैसी कि ब्रिटिश (अख़बार) "रेनाल्ड न्यूज" में रिपोर्ट छपी थी, मौण्टगोमरीने हाल ही में कहा था कि एक नया युद्ध "हमारे लिये एक वास्तविक छुट्टी का दिन होगा और हम बहुत से आदमी मारेंगे।"

यह आकस्मिक बात न थी कि हौलेण्ड के मेहनतकश जनता के जनवादी संगठनों ने मॉग की इस घृणित जंगख़ोर को हौलैण्ड की राजधानी एमस्टरडम से

फौरन हटा दिया जाये। यह कह देना बे मौका नहीं होगा कि ये बेशर्मीसे डींगें मारने वाले और एक विश्व युद्धका " उत्सव मनाने "का इरादा रखनेवाले ठीक वही ब्रिटिश और अमरीकी जनरल हैं जो जनवरी १९४५ में दर्जन भर हिटलरी डिवीजनोंके हमले के आगे सिट्टी खो बैठे थे, वे वही योद्धा हैं जिन्हें सिर्फ सोवियत फौजने एक जबरदस्त हमला शुरू करके डूबनेसे बचा दिया था।

एक अमरीकी पत्रकार द्वारा पूछे गये सवालोंके जवाबमें लेनिनने भविष्यवाणी की थी कि जनताको कत्ले-आममें फेंकनेवाली साम्राज्यवादी व्यवस्थाका ढहना ऐतिहासिक रूपसे अवश्यम्भावी है :

" आम रूप से टैकनीक में और विशेष रूप से सूचना सम्बंधों के साधनों में विशाल प्रगतिने और बैंकों में पूंजी की बेहिसाब बढ़ती ने पूँजीवाद को पक्का हुआ, और ज़्यादा पक्का हुआ बना दिया है। वह अपने समयसे ज़्यादा रह चुका है। मानव प्रगति के रास्ते में वह एक प्रतिक्रियावादी रोड़ा बन गया है। वह मुट्ठीभर अरबपतियों और करोड़पतियों की सर्वसत्ता बन गया है जो जनताको कत्लेआम की तरफ़ ढ़केलते हैं।......

" पूँजीवाद का ढहना अवश्यम्भावी है। ...... अपने लिये, सबसे अच्छी परिस्थितियों में पूँजीपति वर्ग एक या दूसरे अकेले देश में सैकड़ों हज़ारों मज़-दूरों और किसानों को और कत्ल करके समाजवाद की विजय में देरी करा सकता है। मगर पूँजीवादको वे बचा नहीं सकते। " (लेनिन, **संम्पूर्ण ग्रंथावली**, भाग २४, पृ ४०४, रू. स०)

पूंजीवादके आम संकट और आगे विकास और तेज होनेकी अवश्यम्भाविताके बारेमें, पूंजीवादी व्यवस्थासे कई देशों के क्रान्तिकारी ढंगसे और टूटनेकी अवश्यम्भा-विताके बारेमें, सर्वहारा वर्गके महान रणनीतिज्ञों—लेनिन और स्तालिनकी बुद्धिमत्तापूर्ण वैज्ञानिक दूर-दर्शिताको ऐतिहासिक विकासके पूरे दौरने सही साबित कर दिया है।

दूसरे विश्व युद्धमे फासिस्ट जर्मनी और साम्राज्यवादी जापानके ऊपर समाजवाद के देशकी युग-निर्माणकारी विजय; इस विजयके आधारपर योरप और एशियाके अनेक देशोंमें जनताकी लोकशाहीके राज्योंकी स्थापना; इन राज्योंका पूँजीवादी व्यवस्थासे टूट कर अलग होजाना—ये सब बातें पूँजीवाद के आम संकटके ज़्यादा गहरे होनेको सबूत हैं। वह अपनी पुरानी " स्थिरता "को अधिकाधिक खो रहा है। औपनिवेशिक और अर्ध-औपनिवेशिक देशोंमे साम्राज्यवादके आधिपत्य की जड़ें अधिकाधिक कट रही हैं।

महान चीनी क्रान्तिकी ऐतिहासिक विजय विश्व साम्राज्यवादकी एक गंभीर पराजय थी।

लेनिन ओर स्तालिन की विलक्षण दूर-दर्शिता सही साबित हुई है। उन्होंने हमेशा बताया था कि चीनमें क्रान्ति महान जनताकी क्रान्ति है जो अस्थायी हारों और पीछे हटने के बावजूद अजेय है और उसके पास विशाल ओर अकूत शक्तियाँ हैं।

विदेशी हस्तक्षेप-कारियों और सफ़ेद गार्डोंके ख़िलाफ़ लाल फ़ौज की वीरता पूर्ण विजयी लड़ाईका जिक्र करते हुए लेनिनने इस बात पर ज़ोर दिया था कि लाल फौज की लड़ाई और जीत का विशाल, विश्व व्यापी महत्व है। लेनिनने बताया था कि लाल फ़ौज की जीत पूर्व की जनताको दिखायेगी कि,

"वह जनता कितनी भी कमजोर क्यों न हो और लड़ाई में इंजीनियरिंग और फ़ौजी कलाके तमाम चमत्कारों का इस्तेमाल करनेवाले योरपीय उत्पीड़कों की ताकत कितनी भी अजेय क्यों न दिखायी पड़े—मगर फिर भी उत्पीड़ित जनता द्वारा लड़े जानेवाले युद्ध— अन्दरके अगर यह युद्ध करोड़ों मेहनतकश और शोषित जनता को जगाने में सचमुच सफल होगा तो, ऐसी संभावनाएँ मौजूद हैं और ऐसे चमत्कार मौजूद हैं कि अब पूरब की जनता की मुक्ति पूरी तरह सभव है।" (लेनिन, **सम्पूर्ण ग्रंथावली**, भाग २४, पृ.५४४ रू. सं.).

चीनी क्रान्ति की मुश्किल घड़ियों में कॉमरेड स्तालिनने चीनी कम्युनिस्टों और चीनी जनता के दिल में क्रान्ति की विजय के सम्बंध में हमेशा दृढ़ विश्वास का संचार किया। १९२७ मे जब साम्राज्यवादियों ने नानकिंग पर तोपों से गोलीबारी करके चीनी क्रान्ति को कुचलने की कोशिश की तो कॉमरेड स्तालिन ने कहा था:

"एक बार फिर अपने बचपने में पहुँच जानेवाले लोग ही यह सोच सकते हैं कि तोपन्दाजी के नियम इतिहास के नियमों से ज़्यादा ताकतवर हैं, कि नानकिंग पर गोले बरसा कर इतिहास के चक्र को उल्टा घुमाया जा सकता हैं......धमकाने की नीतिकी साम्राज्यवाद के इतिहास में अपनी "ज़मीन" है। लेकिन इस बात मे मुश्किल से ही कोई शक हो सकता है कि यह नीति अनुपयुक्त है और अपने उद्देश्य तक नहीं पहुँचती।" (स्तालिन, **संपूर्ण ग्रंथावली**, भाग ९, पृ. २००, रू. सं.)

इतिहासने लेनिन और स्तालिनकी भविष्यवाणियोंको सही साबित किया। यह चीनी जनताके प्रजातंत्र की महान विजय से साबित होता है जो चीन की जनता ने बहादुर चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और उसके यशस्वी नेता माओ त्से-तुंग के नेतृत्व में हासिल की है। (**ज़ोरदार तालियों की गड़गड़ाहट**) यह साबित होती है चीन में साम्राज्यवादियों की नीति के पूरी तरह से बंटाढ़ार होने—इस तरह से बंटाढ़ार होने से कि अमरीकी साम्राज्यवाद के सिद्धान्त-शास्त्री तक उसे मानने पर मजबूर हैं।

च्यांग काई-शेकके पहले के राजनीतिक सलाहकार, लैटीमोर द्वारा एशिया की स्थिति पर लिखी गयी किताब में हम नीचे लिखी दिलचस्प स्वीकारोक्ति पाते हैं।

उसने लिखा है : ...जो एशिया अठारहवीं और उन्नीसवी शताब्दियों में विजेताओं द्वारा इतनी आसानी से और तेजीसे गुलाम बनाया गया था, उसने हवाई, जहाजों, टैंकों, मोटर गाड़ियों और चलती-फिरती तोपों से लैस आधुनिक फौजों का डटकर मुकाबला करने की आश्चर्यजनक योग्यता दिखायी है।

पहले एशिया में विशाल इलाकों को छोटी सी शक्तियोंसे जीत लिया गया था। पहले लूटसे, फिर सीधे टैक्सोंसे, और अन्त में, व्यापार, लगायी गयी पूँजी तथा लम्बे समय के शोषण से होनेवाली आमदनी से फौजी कार्रवाइयों का खर्चा अकल्पित तेजी के साथ पूरा हो जाता था। ताकतवर देशों के लिये यह हिसाब सबसे बड़ा लालच था। अब लैटिमोर बताता है कि उन्हें दूसरे हिसाब का मुकाबला करना पड़ रहा है और इससे वे पस्त-हिम्मत होते हैं।

हाँ, हिसाब बिलकुल भिन्न है। यह वह नहीं है जो अमरीकी साम्राज्यवादियों ने लगाया था। वास्तवमें तो, चीनमें गृह-युद्धकी आगको तेज करनेके लिये ६०० करोड़ डॉलर खर्च करके और च्यांग काई-शेकके कुओमिन्तागी फासिस्ट गुटको हथियारों से लैस करके, अमरीकी साम्राज्यवाद के सरदारोंने उम्मीद की थी कि वे चीन में "कम्युनिज़म को पूरी तरह खतम" कर देंगे, और साथ ही साथ सोवियत संघ के खिलाफ हमले के लिये एक विशाल अड्डा कायम करेंगे। फिर भी नतीजा यह हुआ कि चीनी जनता की महान क्रान्ति की पूर्ण विजय हुई है और शान्ति, जनवाद तथा समाजवाद के पक्ष की शक्तियाँ आम तौरसे और सुदृढ़ हुई हैं, (तालियोंकी जोरदार गड़गड़ाहट)

साम्राज्यवाद और लड़ाई उकसानेवालोंका पक्ष ठीक इसीलिये फुंकारता और गुर्राता है कि वह अपनी भीतरी कमजोरी और ऐतिहासिक अन्तका अनुभव करता है।

साम्राज्यवादी सरदार "ठण्डा युद्ध" जारी रखनेकी नीति पर, हथियारोंकी पैदावारकी दौड़ की और नया विश्व युद्ध छेड़नेकी नीति पर चल रहे हैं, तो इस कारण से कि उन्हें अपनी आन्तरिक शक्तियों पर विश्वास नहीं है, और वे पागलपन के ख्वाब देख रहे हैं कि मुमकिन है कि एक नये युद्ध के जरिये अंग्रेज-अमरीकी पूँजीवाद पकते हुए आर्थिक संकट से बच जाय और दुनिया पर आधिपत्य हासिल कर ले।

मगर ऐसी बहुत सी चीजे हैं जो दुनिया पर आधिपत्य कायम करने के इस सन्निपाती विचार को जिसे अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियों ने हिटलर से उधार लिया है, छूँछा बनाती है।

एटम पर अमरीका की ख्याली इजारेदारीके बारेमें भ्रम चूर हो चुका है। यह बात पक्की हो चुकी है कि शान्ति पक्षके नायक, सोवियत संघके पास १९४७ से ही एटम हथियार मौजूद है। चीनमें अमरीका की दखलन्दाजीने मुँह की खाई है।

चीनी जनता की महान विजय ने दिखा दिया है कि अब जब कि जनता की क्रान्ति करोड़ों मेहनतकश जनता को जगाती है और सक्रिय लड़ाई में खींच लाती है तो साम्राज्यवाद अपनी हथियार-बन्द शक्ति से भी उसे नहीं कुचल सकता।

शान्ति, समाजवाद और जनवाद की शक्तियाँ अकूत रूप में बढ़ रही हैं, और ताकत हासिल कर रही हैं। जनता के लोकशाही देशों की राजनीतिक और आर्थिक ताकत बढ़ रही है और इन देशोंमें मेहनतकश जनता की स्थिति बराबर सुधर रही है।

अनेक योरपीय देशोंमे (फ्रास, इटली तथा दूसरो में) शान्तिके लिये और जंगखोरों के खिलाफ एक शक्तिशाली आन्दोलन खड़ा हो गया है। जर्मनी की मेहनतकश जनता कॉमरेड स्तालिनके इन शब्दोंके अत्यंत सारपूर्ण ऐतिहासिक महत्व को ज़्यादासे ज़्यादा समझ रही है:

> "शान्तिपूर्ण सोवियत सघ की मौजूदगी के साथ-साथ, शान्ति-प्रेमी और जनवादी जर्मनी की मौजूदगी योरप में नये युद्धों की संम्भावना को दूर कर देती है, योरप में खून-खराबीको खतम कर देती है और विश्व साम्राज्यवादियों द्वारा योरपीय देशों का गुलाम बनाया जाना असंभव बना देती हैं।"

इतिहास में पहली बार शान्ति के समर्थकों का एक ऐसा संगठित मोर्चा कायम हुआ है जिनमें न सिर्फ जनताकी लोकशाही के देशोंकी मेहनतनकश जनता, बल्कि पूंजीवादी देशोंके तमाम प्रगतिशील पुरुष और स्त्री भी शामिल हैं।

अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में अपने तमाम ऐलानोमें सोवियत संघ अनथक रूप से शान्ति का समर्थन करता है, और नये युद्ध को भड़कानेवालोंके खिलाफ और अन्तरराष्ट्रीय सहयोग तथा स्थायी शान्ति की स्थापना के लिये प्रस्ताव रखता है। शान्ति की स्तालिनवादी रणनीति को जिसका श्रोत लेनिन के आदेश हैं, बराबर अधिकाधिक समर्थक मिल रहे हैं। सोवियत प्रजातंत्र ने जिस शान्ति की लड़ाई को हमेशा लड़ा है, उसके बारे में लेनिन ने कहा था:

> "शान्तिकी लड़ाईको हमने विशेष शक्तिसे चलाया था। इस लड़ाईके शानदार नतीजे होते हैं।" (लेनिन, **सम्पूर्ण ग्रंथावली**, भाग २५, पृ. १०२, रू. सं.)
>
> "हमारी पूरी नीति और प्रचारका उद्देश्य जनता को लड़ाईमें फँसाना क़तई नहीं है, बल्कि लड़ाई को खतम करना है।" (लेनिन, **सम्पूर्ण ग्रंथावली**, भाग २६, पृ. ११, स.)

स्तालिनकी शाति और राष्ट्रोंकी सुरक्षाकी रणनीतिका आधार दोनों व्यवस्थाओं का काफ़ी समय तक साथ-साथ मौजूद रहना और उसमें शातिपूर्ण होड़ है। वह समाजवादी और पूंजीवादी व्यवस्थाओंमें शातिपूर्ण सहयोगकी संभावनाके आधार पर चलती है।

कॉमरेड स्तालिनने कहा है,

"दो व्यवस्थाओंके बीच सहयोगका विचार पहले लेनिनने प्रकट किया था। लेनिन हमारे शिक्षक हैं और हम सोवियत के लोग लेनिन के अनुयायी हैं। हमने लेनिन की शिक्षाओंको कभी नहीं छोड़ा है और न कभी छोड़ेंगे।"

सोवियत की, स्तालिनवादी वैदेशिक नीति, जो हमेशा शान्ति की अलमबरदार रही है और शान्ति के ध्येय की रक्षा करती है, इन्हीं सिद्धान्तों से पैदा होती है।

लेनिन और स्तालिन के फरहरे के नीचे शान्ति की शक्तियाँ बढ़ रही हैं और ताकत हासिल कर रही हैं और उनकी जागरूकता तथा तैयारी बढ़ायी जा रही हैं।

बिरादराना कम्युनिस्ट पार्टियाँ शान्तिके महान संघर्षमें आगे-आगे चल रही हैं। उनके नेतृत्वमें तमाम देशों की मेहनतकश जनता नये युद्ध की आग भड़कानेवालो की शैतानी योजनाओंके खिलाफ अपने विरोध को तेज कर रही है।

दुनियाकी जनता कामरेड स्तालिन को शान्ति का ऐसा सबसे दृढ़, सबसे अधिक अनथक और बुद्धिमान योद्धा मानती है जो नये युद्ध की आग भड़काने-वालों की आदमखोर योजनाओं को नाकाम बनानेके लिये सब कुछ करते हैं। वह उन्हें शान्ति, जनवाद और समाजवाद के सम्पूर्ण शक्तिशाली पक्षके महान नेता और शिक्षक के रूपमें देखती है। (**ज़ोरके साथ और देर तक तालियों की गड़गड़ाहट**)

३

लेनिन और स्तालिन की पार्टी सोवियत समाजकी नायक और निदर्शक शक्ति

लेनिन और स्तालिन की गौरवशाली पार्टी सोवियत समाज की नायक और निदर्शक शक्ति है। वह कम्युनिज्म के रास्ते पर हमारी जनता की प्रगति का नायकत्व कर रही। अपनी तमाम सफलताओं के लिये हम महान कम्युनिस्ट पार्टी के, लेनिन और स्तालिन के नेतृत्व के, और लेनिनवाद के प्रति वफ़ादारी के ऋणी हैं।

लेनिन और स्तालिन सिखाते हैं कि अगर पार्टी आलोचना और आत्मालोचना से नहीं डरती तो वह अजेय है।

कॉमरेड स्तालिन बताते हैं कि हमें हवा की तरह, पानी की तरह, आत्मालोचना की जरूरत है; कि आत्मालोचना के बिना हमारी पार्टी बढ़ नहीं सकती थी, हमारे कमज़ोर स्थल खोलकर नहीं रख सकती थी, हमारी कमज़ोरियों को दूर नहीं कर सकती थी।

"आलोचनाके बिना आगे कदम बढ़ाना असंभव है। 'यह सचाई निर्मल और स्फटिक की तरह साफ है, जैसाकि सोते का पानी निर्मल और स्फटिक की तरह साफ़ होता हैं" कॉमरेड स्तालिन ने कहा है।

कॉमरेड स्तालिनने कहा है कि,

"पार्टी को, बोल्शेविकोंको और हमारे देशके तमाम ईमानदार मज़दूरों और मेहनतकश तत्वोंको हमारे काम की कमियाँ, हमारे निर्माण-कार्यकी कमियाँ बतानी चाहिये। वे हमारी कमियों को दूर करने के तरीके बतायें ताकि हमारे काममें, और हमारे निर्माण-कार्यमें कोई ठहराव न हो, काई या क्षय न लगे; ताकि हमारा तमाम काम, हमारा तमाम निर्माण-कार्य हर रोज़ सुधरे, एक कामयाबीसे दूसरी की तरफ़ आगे बढ़े।" (स्तालिन, **संपूर्ण ग्रंथावली**, भाग ११, पृ. ३०, रू. सं.)

कॉमरेड स्तालिन हमारे कार्यकर्त्ताओं को सिखाते हैं कि वे अहंकारी न बनें, सफलताओं से ही सन्तुष्ट होकर न बैठ जायें, सफलताओं को उचित रूपसे जाँचें और साथ ही साथ दृढ़तापूर्वक अपने काम में कमियाँ बतायें, आलोचना और आत्म-लोचना के प्रति ईमानदारी बरतें, कमियों को सुधारें और लगातार नयी विजयों की तरफ आगे बढ़ें।

कॉमरेड स्तालिन बताते हैं कि जो कोई अपने को आलोचक दृष्टि से जाँचने और आलोचना को साहसपूर्वक स्वीकार करने में असमर्थ है वह आगे बढ़ने के अयोग्य है। अपने हर रोज़ के काम का सारांश निकालना ज़रूरी है। अपने से यह पूछना ज़रूरी है: क्या मै इससे ज़्यादा अच्छा न कर सकता था? कामरेड स्तालिन बताते हैं कि सिर्फ़ इसी तरह से हम अपने कामको सुधार सकते हैं और आगे बढ़ा सकते हैं।

ढीलढ़ाल और अहंकार जिनका नतीजा काममें ठहराव होता है—बोल्शेविज़्मकी क्रान्तिकारी और आलोचनात्मक भावनाके लिये घृणित हैं। जो लोग आलोचना और आत्मालोचना बर्दाश्त नहीं करते, जो आलोचना और आत्मालोचनाका गला घोंटने और मुँह बन्द करनेका वातावरण पैदा करते हैं, वे पार्टी संगठनोंकी पहल-कदमीकी जड़ काटते हैं और पार्टी तथा सोवियत संगठनोंकी जिन्दगीमें नौकरशाहोंकी, पार्टीके कट्टर दुश्मनोंकी आदतोंका प्रवेश कराते हैं। जो कार्यकर्ता इस खतरनाक रास्ते पर बहक जाते हैं, उन्हें पार्टी दृढ़ताके साथ सुधारती है, वह आलोचना और आत्मालोचनाके साहसपूर्ण और निर्भय विकासकी माँग करती है।

लेनिन और स्तालिन सिखाते हैं कि अगर पार्टी आम विशाल जनताके साथ अपने सम्बंधों को कायम रखने और मज़बूत बनाने में समर्थ है तो वह अजेय है।

लगभग २० बरस पहले, अपनी प्रसिद्ध रचना, "सामूहिक फ़ार्म के कॉमरेडस् को जवाब" में कॉमरेड स्तालिन ने लिखा था,

" समाजवाद के लिये लड़ाई में कम्युनिस्ट अपने को गौरव से विभूषित करने में क्यों सफल हुए और कम्युनिज़्म के दुश्मनों ने क्यों मात खायी इसका एक कारण यह था कि कम्युनिस्ट जानते थे कि ग़ैर-पार्टी जनता के बीच से सबसे अच्छे तत्वों को ध्येय के लिये किस तरह लगाया जाय; उन्होंने अपनी शक्तियाँ ग़ैर-पार्टी जनता के विशाल अंगोंसे हासिल की थी और वे जानते थे कि सक्रिय ग़ैर-पार्टी जनताके विशाल अगोंको किस तरह पार्टी के इर्द-गिर्द जमा करें।" (स्तालिन, **संपूर्ण ग्रंथावली**, भाग १२, पृ. २२७, रू. सं.)

उसी समय से पार्टी ने जनता के लेनिनवादी-स्तालिनवादी नेतृत्व की नयी विलक्षण मिसालें कायम की हैं और जनता के साथ उसका मित्रता और भाईचारे का सम्बंध और ज़्यादा बढ़ा है।

लेनिन और स्तालिन बताते हैं कि कम्युनिस्टों को ग़ैर-पार्टी जनता को न सिर्फ़ सिखाना चाहिये, बल्कि, उससे सीखना भी चाहिये; ग़ैर-पार्टी जनता की सलाह को, जनता की आवाज़ को ध्यानपूर्वक सुनना चाहिये और उसके रचनात्मक अनुभवों और उसकी पहल-कदमीको लेकर उसका सार निकालना और उसे फैलाना चाहिये। पार्टीने अपने शिक्षकों की इन हिदायतों को हमेशा याद रखा है और उनके अनुसार चल कर हमेशा नयी कामयाबियाँ हासिल की हैं।

समाजवादी सोवियत प्रजातंत्र संघकी सुप्रीम (सर्वोच्च) सोवियतके लिये होनेवाले चुनाव सबसे ज़्यादा व्यापक समाजवादी जनवादके आधार पर और सोवियत जनताके पूर्ण नैतिक और राजनीतिक एके के वातावरणमें होंगे। आम विशाल जनताके साथ लेनिन और स्तालिनकी पार्टीके सम्बंधों को वे और भी ज़्यादा मज़बूत करेंगे।

लेनिन और स्तालिनकी पार्टी कम्युनिज्मकी तरफ़ बढ़ते हुए सोवियत समाजकी प्रगतिका संचालन कर रही है, और हमारे तमाम आर्थिक और सांस्कृतिक निर्माण को इस महान ध्येय की प्राप्ति के काम में जुटाती है, समाजवादी समाजका निर्माण पूरा होने और कम्युनिज़्म में धीरे-धीरे संक्रमण के काल में मेहनतकश जनता की कम्युनिस्ट शिक्षा, लेनिनवाद के विचारों के आधारपर हमारे तमाम कार्यकर्ताओं की और तमाम जनता की शिक्षा और उनके अन्दर जीवनदायी सोवियत देशभक्ति को बढाने और मज़बूत करने के काम का विशेष महत्व हो जाता है।

लेनिन के सर्व-विजयी विचार स्तालिन की प्रतिभाशाली रचनाओं में रचनात्मक रूपसे और भी ज़्यादा विकसित हुए हैं। हमारे देश में समाजवाद के निर्माण के और अन्तरराष्ट्रीय मज़दूर आन्दोलन के महान अनुभव का वे सैद्धान्तिक सार हैं। सोवियत जनता और तमाम देशों में मेहनतकशों के प्रगतिशील प्रतिनिधि लेनिन और स्तालिन की रचनाओं से लेनिन और स्तालिन के महान ध्येयकी अजेयतामें विश्वास पाते हैं, अपनी शक्तियों में और कम्युनिज़्म की विजय में विश्वास पाते हैं। वे उन्हें अपने कामकी पथ-प्रदर्शक मानते हैं। हमारे सोवियत युगमें हमारे देशमें मार्क्स,

एंगेल्स, लेनिन और स्तालिनकी रचनाएँ कुल ७८ करोड़ ८० लाख प्रतियों के संस्करणों में निकली हैं।

लेनिन और स्तालिनकी हमारी महान पार्टी लेनिनवादके प्रति अपनी वफ़ादारीकी बदौलत ताक़तवर और अजेय है। वह अपनी केन्द्रीय कमिटीके और नयी विजयोंकी तरफ़ हमारा निदर्शन करने वाले उसके अपूर्व शिक्षक और नेता, कॉमरेड स्तालिनके इर्द-गिर्द आज जिस तरह संयुक्त और जमा है वैसी पहले कभी न थी। (**ज़ोरके साथ और देर तक तालियों की गड़गड़ाहट**)

*　　　　*　　　　*

कॉमरेड्स, हम उस युगमें रह रहे हैं जब विश्व इतिहासके उस दौरमें वह तेज़ी सचमुच आगयी है जिसका लेनिनने स्वप्न देखा था और जिसकी उन्होंने भविष्य-वाणी की थी।

मार्क्सके शब्दोंमें, पुरानी दुनियाके पागल कुत्तों और सुअरोंको अपने इस भ्रमसे सान्तवना लेने दो कि अपने बगल-बच्चों—दक्षिण-पन्थी सोशलिस्टों और दूसरे गद्दारोंकी मददसे वे पूंजीवादी गुलामीकी उस दुनियाको बरकरार रखनेमें सफल होंगे जिसका खतम होना लिखा जा चुका है।

इतिहास को धोखा नहीं दिया जा सकता, और न उसे पीछे ही घुमाया जा सकता है। इतिहास के नियमों की जगह किसी भी तरह के उन हथियारों के नियमों को स्थापित नहीं किया जा सकता जिनकी नये युद्ध की साज़िश रचनेवाले सपने देखते है। अवश्यम्भावी पतन उनका इन्तजार कर रहा है।

महान स्तालिन युग, समाजवाद की विजय और कम्युनिज़्म के निर्माण का युग उत्पादक शक्तियों की बढ़ती के लिये और खुशी और प्रसन्नता की ज़िन्दगी के लिये असाधारण रूपसे अपूर्व अवसरों को मानव जाति को देता है।

लेनिन और स्तालिन का महान और अजेय फरहरा ज़िन्दाबाद!

लेनिन और स्तालिन की हमारी बहादुर पार्टी जिन्दाबाद!

महान सोवियत जनता ज़िन्दाबाद!

सारे संसार के शान्ति के लड़ाके जिन्दावाद!

हमारे प्यारे नेता, पिता और शिक्षक, मानवजाति के अपूर्व प्रतिभाशाली व्यक्ति, सोवियत जनता की कम्युनिज़्म की विजय की तरफ नेतृत्व करनेवाले कॉमरेड स्तालिन, ज़िन्दाबाद!

(**देर तक तालियों की गड़गड़ाहट जो हर्षोन्माद में बदल जाती है। सब उठते हैं। जोसेफ़ स्तालिन के लिये अभिनन्दन और बधाइयाँ पूरे हॉल में गूँजती हैं।**)

★

कम्युनिस्ट पार्टियों के विकास का नियम—आलोचना और आत्मालोचना

समाजको बदलने के लिये क्रान्तिकारी मार्क्सवादी पार्टियों के कामोंका आधार ऐतिहासिक विकास के नियमोंका एक गहरा वैज्ञानिक ज्ञान है। मार्क्सवाद-लेनिनवाद सर्वहारा पार्टियों के हाथमें सबसे बड़ा क्रान्तिकारी हथियार है।

मार्क्सवादी पार्टियों की रणनीति और कार्यनीति क्रान्तिकारी रणनीति और क्रान्तिकारी कार्यनीति होती है। उनमें दुस्साहिसकता और जनताकी तरफ़ ग़ैर-जिम्मेदारी का अश लेशमात्र भी नहीं होता।

पूँजीवाद का तख़्ता उलटने और एक नये समाजवादी समाज की रचना करने की महान ऐतिहासिक भूमिका अपने ऊपर लेनेवाली सर्वहारा की क्रान्तिकारी पार्टियाँ मेहनतकश जनताकी अक्षय शक्तिमें अपार आस्था रखती हैं। सर्वहारा के अपूर्व नेता, लेनिन और स्तालिनने जनताके सम्बंध में विश्वास, जनतामे विश्वास और जनताकी ईमानदारीके साथ तथा निस्वार्थ सेवाको सबसे पहला स्थान दिया है।

करोड़ों जनता को क्रान्ति की तरफ ले जाने में लाजिमी तौरसे बहुत ज़्यादा बलिदान देने होते हैं। यह काम सिर्फ़ वही पार्टियाँ कर सकती हैं जिनकी जनता में असीम आस्था है, सिर्फ वही पार्टियाँ कर सकती हैं जिनमें जनता को अगाध विश्वास है।

यही वजह है कि मार्क्सवादी पार्टियाँ उन तमाम चीजों की क्रान्तिकारी निर्भयता के साथ निर्मम आलोचना और आत्मालोचना करती हैं जिनसे जनता के साथ उनका सम्बंध कमज़ोर होता है।

आलोचना और आत्मालोचना वह क्रान्तिकारी हथियार है, वह परखा हुआ तरीका है जिसकी मदद से मार्क्सवादी पार्टियाँ अपनी कतारों के बीच से उस सब

विरोधी तत्व, उस सब पूँजीवादी तत्व को निकाल बाहर करती हैं जो अभी भी उनकी कतारों में बना हुआ है।

आलोचना और आत्मालोचना सिर्फ़ क्रान्तिकारी मार्क्सवादी-लेनिनवादी पार्टियों के ही लिये स्वाभाविक चीज़ है। सुधारवादी, सोशल–डेमोक्रेट और दक्षिण-पन्थी सोशलिस्ट पार्टियोंसे कम्युनिस्ट पार्टियॉ इसी बात में भिन्न हैं कि वे दुखदायी सवालों से कभी नहीं कतरातीं, उन्हें कभी दबा छिपाकर खतम नहीं करती और न कभी उन्हे नज़रअन्दाज़ करती हैं, बल्कि वे हमेशा खुले तौरपर, गहरी तरह से और एक सिद्धान्त के रूपमें अपनी गलतियों को खोलकर रखती हैं, और उनकी आलोचना करती हैं। आलोचना और आत्मालोचना से वे नयी शक्ति हासिल करती हैं और अपना काम सुधारने तथा अपने विकास की गारंटी करने के लिये नया उत्साह और कार्य-शक्ति पाती हैं।

पूँजीवादी, दक्षिणपन्थी सोशलिस्ट पार्टियाँ जनता के आगे झूठ बोलने, जनता को धोखा देने को अपने तमाम कामों का आधार बनाती हैं। यही वजह है कि वे जनता से डरती हैं और इसीलिये उन्हें हिम्मत नहीं होती कि अपनी कार्रवाइयों को खुले तरीके से और ईमानदारी के साथ जनता के सामने रखें और उसे अपना जज बनायें।

यह स्वाभाविक है कि अगर कम्युनिस्ट पार्टियाँ अपने अस्तित्व के एक बुनियादी सिद्धान्त—आलोचना और आत्मालोचना को, विस्मृति के गर्भ में फेंक देती हैं और उसके खिलाफ जाती हैं तो वे अपने को क्रान्तिकारी पार्टियों के रूप में कायम नहीं रख सकतीं, क्योंकि उसका मतलब जनता से सम्बंध तोड़ना होगा, पार्टी को खतम करना होगा।

> "अपनी गलतियों की तरफ एक राजनीतिक पार्टी का रुख़," लेनिनने लिखा था, "पार्टी की गंभीरता को और इस बातको जॉचने की सबसे खास और सबसे पक्की कसौटी है कि वह अपने वर्गकी तरफ़ और मेहनतकश जनता की तरफ अपने कर्तव्यों को अमलमें किस तरह **पूरा करती** है। अपनी ग़लती को खुलेआम मानना, उसके कारणों का पता चलाना, उसे पैदा करनेवाली परिस्थितियों का विश्लेषण करना और उसे सुधारनेके तरीकों का ध्यान-पूर्वक अध्ययन करना—ये सब एक गंभीर पार्टी के लक्षण हैं; इसका मतलब अपने कर्तव्यों को पूरा करना होता है; इसका मतलब **वर्ग**को, और बादमें **जनता**को शिक्षित और ट्रेन करना होता है।"

उन राज्योंकी पार्टियोंके कन्धोंपर विशेष जिम्मेदारी है जहॉ सर्वहाराकी डिक्टेटरशिप कायम की जा रही है, जहाँ समाजवादका निर्माण किया जा रहा है। कॉमरेड

स्तालिनने लिखा था कि आत्मालोचनाका नारा सर्वहाराकी डिक्टेटरशिपके शासनका आधार है। जनताकी लोकशाही की व्यवस्था सर्वहाराकी डिक्टेटरशिपका एक रूप है। उन देशोंमें बिना किसी अपवादके हर चीज कम्युनिस्ट पार्टीकी सही नीति पर निर्भर करती है जो राजसत्तामें खास नायक शक्ति है।

आलोचना और आत्मालोचना का उद्देश्य जनता की लोकशाही के देशों की कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियों की मदद करना है, ताकि वे बुनियादी आर्थिक और सामाजिक सुधारों के रास्ते पर लगातार बिना डगमगाये आगे बढ़ती जायें, आर्थिक और सास्कृतिक काम के तमाम क्षेत्रों में, ध्वस्त पूँजीवादी जिन्दगी के अवशेषों के खिलाफ संघर्ष में; राष्ट्रवाद, विश्व-वाद और पूँजीवादी विचार धारा के दूसरे हानिकारक असरों के प्रकट रूपों के खिलाफ संघर्ष में, साम्राज्यवादी गुप्तचरों—चाहे वे कोई भी बाना क्यों न धारण करें—की साजिशों के खिलाफ संघर्ष में, अनथक रूप से, ज़्यादा से ज्यादा सफलताएँ हासिल करती जायें और जनता को समाजवाद के ध्येय के सम्बंध में अडिग विश्वास की भावना में शिक्षित करें।

अहंभाव, बद-दिमागी, अपने को बढ़ा-चढ़ा कर दिखाना, डींगें मारना, खुशामद, बेफ़िक्री और जनता से अलहदगी कम्युनिस्टोंके, मार्क्सवादी-लेनिनवादियों के स्वभाव के ही खिलाफ है। लेकिन फिर भी कम्युनिस्टोंके बीच ऐसे काफ़ी लोग हैं जो अपने तथाकथित या बढाये-चढ़ाये गुणों की तारीफ पर फूलकर कुप्पा हो जाते हैं। ऐसे कम्युनिस्ट प्रशंसा और बेलगाम तारीफ की झोंक में जिम्मेदारी की तमाम भावना भूल बैठते हैं और अपने "विशेष", "महान", "ऐतिहासिक" ध्येय के सिलसिले मे अपने को बेअख्तियार धोखा देने लगते हैं। यह एक ऐसा वातावरण है जो हमारे उन दुश्मनोंके ही सबसे ज्यादा अनुकूल है जो अपनी जन-विरोधी कार्रवाइयाँ करनेके लिये किसी भी कमजोरी वाले अधिकारी की तारीफ़ करने और उसके अहंभाव का फ़ायदा उठाने का मौका कभी नहीं चूकते।

इन कमजोरियों का—जोकि कम्युनिज़्म की विरोधी हैं, पूरे संगठनों और व्यक्तिगत कम्युनिस्टों की भी विरोधी हैं—सबसे अच्छा इलाज आलोचना और आत्मालोचना है।

आलोचना और आत्मालोचना का उद्देश्य जनताकी लोकशाही के देशोंमें सरकारी जगहों पर मौजूद पार्टी कार्यकर्ताओं की शान्ति-प्रियता और आत्म-संतोष से, अहंभाव, अक्खड़पन और डींगे मारने की आदत से रक्षा करना है; आर्थिक नेतृत्व तथा सांस्कृतिक काम के कर्तव्यों को ज्यादा गहरे तरीके से और गंभीरता-पूर्वक करने मे और जनताकी सफलताओंकी जागरूकताके साथ रक्षा करनेमें मदद देना है। पार्टीके कार्यकर्ताओंको शिक्षित करने और क्रांतिकारी रूपमें फ़ौलाद बनानेका सबसे खास तरीका

आलोचना और आत्मालोचना है। आलोचना और आत्मालोचनाके विना ठहराव और पतन आवश्यम्भावी है।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) का अनुभव एक सच्ची बोल्शेविक और प्रकाश देने वाली आलोचना व आत्मालोचना का उदाहरण है। उसकी शानदार परम्परा और उसका वीरतापूर्ण इतिहास हमें सिखाता है कि एक मार्क्सवादी पार्टी करोड़ों मजदूर वर्ग और आम मेहनतकश जनता का नेतृत्व करने के योग्य एक सच्ची जन-पार्टी ऐसी ही हालत में बन सकती है जबकि वह अपने को संकुचित पार्टी दायरे में ही बन्द नहीं कर लेती, जबकि वह अपने को जनता से दूर नहीं कर लेती और जबकि वह उसकी आवाज को ध्यान-पूर्वक सुनती है। न सिर्फ़ जनता को सिखाने बल्कि उससे सीखने की भी तत्परता के बिना और नेताओं के अनुभव के साथ जनता के अनुभव को भी जोड़ने की योग्यता के बिना कोई सही नेतृत्व नहीं हो सकता।

जैसा कि कॉमरेड स्तालिन ने कहा है: अगर हम बोल्शेविक, जो सारी दुनिया की आलोचना करते हैं और जो, मार्क्स के शब्दों में आकाश को हिला रहे हैं, इस या उस कॉमरेड की दिमाग़ी शान्ति के लिये आत्मालोचना को तिलांजलि दे देते हैं, तो क्या यह बात स्पष्ट नहीं है कि इसका नतीजा हमारे महान ध्येय की बरबादी ही हो सकता है और कुछ नहीं।

नये लोकशाही देशोंमें समाजवादका निर्माण तेज होते हुए वर्ग संघर्षकी परिस्थितियोंके बीच हो रहा है। पूँजीवादी तत्व, हर तरहके धूर्त और बदमाश और साम्राज्यवादी खुफिया विभागके एजेन्ट विशेष रूपसे उसी पार्टीमें घुसते और उससे चिपकते हैं जो राजसत्ताकी नायक है। ताकि वे कम्युनिस्ट पार्टीके नामकी आड़में अपनी दुश्मनीकी कार्रवाइयोंको छिपा सकें।

यूगोस्लाव कम्युनिस्ट पार्टी खतम होगई तो ठीक इसी कारण से कि वह यूगोस्लावियाके मजदूर वर्ग की पार्टी न रही, कि साम्राज्यवादी खुफिया विभागके एजेन्टों, टीटो-गुटके गुप्तचरों और हत्यारों ने जो घुसकर पार्टीके नेतृत्वमें दखल जमा बैठे थे, पार्टीको पुलिस की बैरकमें बदल दिया और तमाम सच्चे कम्युनिस्टों को खूनी आतंक और पाशविक हिंसा के जरिये चुप किया; और पार्टीके अन्दर "गलती न करनेवाले नेताओं" —जो असल में यूगोस्लाव जनता के सबसे कट्टर दुश्मन हैं— के आगे घुटने टेक कर मातहती करने का उन्होंने गन्दा वातावरण फैलाया।

इसलिये हर क्रान्तिकारी मार्क्सवादी पार्टीका यह कर्तव्य है कि वह विशेष रूपसे जागरूक रहे, अपने सदस्यों की तरफ़ कड़ी और उनसे काम लेने वाली रहे और आलोचना तथा आत्म-लोचना का हमेशा सख्तीके साथ इस्तेमाल करे।

पूँजीवादी देशोंकी कम्युनिस्ट पार्टियोंके लिये आलोचना और आत्मालोचना वह अकेला हथियार है जो इन पार्टियोंके कार्य-कर्ताओं को क्रान्तिकारी विकास की भावना में शिक्षित करनेमें जरूर मदद करेगा; जो दुश्मनके एजेन्टोंके अन्दर घुस आनेसे, पूँजीवादी विचार-धाराके खराब करनेवाले असरसे और अवसरवाद तथा साम्राज्यवाद के बेईमान बगल-बच्चे दक्षिणपन्थी सोशलिस्टोंसे उनकी हिफ़ाजत करेगा; सामाजिक विकास और सर्वहारके वर्ग-संघर्षके नियमोंकी स्पष्ट समझसे उन्हें लैस करेगा और उनके भीतर जनवाद और समाजवादके ध्येयकी अन्तिम विजयमें अडिग विश्वास भरेगा।

पूँजीवादी देशों की क्रान्तिकारी पार्टियों के कार्यकर्त्ता सिर्फ साहसपूर्ण और स्पष्ट आत्मालोचना के जरिये ही दुश्मन की ताक़त बढ़ा कर ऑकने और खुद अपनी ताकत और कमजोरियों को कम मानने से बच सकते हैं।

> "तमाम क्रान्तिकारी पार्टियाँ जो आज से पहले खतम हो गयीं"—लेनिन ने सिखाया है—"तो उसकी सिर्फ यही वजह थी कि उनमें अहंभाव भर गया था। वे यह न देख सकी थीं कि उनकी शक्ति कहाँ निहित है और उन्हें अपनी कमजोरियों को कहने में डर लगता था।"

आत्मालोचना एक पार्टी की शक्ति की निशानी है, उसकी कमज़ोरी की नहीं। मजदूर वर्ग के प्रति अगाध वफादारी, अपनी शक्तिमें अडिग विश्वास, लड़ने की अटल इच्छा, अपने ध्येय के रास्तेमें आनेवाली हर मुश्किल का सामना करने और हर बाधा पर काबू पाने की तत्परता— यही उन क्रान्तिकारी लड़ाकों के विशेष गुण हैं। जो मार्क्सवादी पार्टियों द्वारा आलोचना और आत्मालोचनाके आधार पर शिक्षित होते हैं।

(कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियोंके सूचना-केन्द्रके मुखपत्र, "**फॉर ए लास्टिंग पीस, फॉर ए पीपुल्स डेमोक्रेसी के ३ फ़रवरी के अंक ५ से**)

पूंजीवादी दुनिया आर्थिक संकट की छाया में

ए० मैनूक्यान

पूंजीवादी दुनिया १९५० में एक आर्थिक संकट की छाया के नीचे प्रवेश कर रही है। संयुक्त राष्ट्र अमरीका और पश्चिमी योरप की अर्थ-व्यवस्था पर इस संकट का अधिकाधिक गंभीर रूप से असर पड़ रहा है।

इस वास्तविकता से जो उनके आकाओं को इतनी नापसन्द है, पूंजीवादी अर्थ-शास्त्रियों ने बारम्बार इनकार करने की कोशिश की है। पूंजीवादी अखबारों ने अंध-विश्वासी ढंगसे "संकट" शब्द तक से बचने की कोशिश की है; आर्थिक परिस्थिति को बयान करने के लिये उन्होंने दूसरे शब्दों को, जो उनके कानों को इतने कर्कश नहीं लगते, चुना है। लेकिन पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था के ये फ़कीर सिर पटक कर मर गये किन्तु सकट को वश में करने का कोई मंत्र न पा सके।

आँकड़ोंका काला जादू और अमरीकी वास्तविकताएँ

१९४९ के बीच तक पहुँचते-पहुँचते ही सयुक्त राष्ट्र अमरीका की औद्योगिक पैदावार की अंक-सूचिका नीचे गिरने लगी। अक्तूबर १९४८ में वह १९५ पर (१९३५ में १०० पर मानकर) थी, जुलाई १९४९ में वह १६२ पर पहुँच गयी। अगले महीनों में पैदावार में कुछ मौसमी बढ़ती हुई (अंक सूचिका अगस्त में १७० और सितम्बर में १७४ पर थी) तो पूंजीवादी हल्कोंमें फिर आशाभरी भविष्यवाणियों की लहर आ गयी। लेकिन अक्तूबर भी नहीं बीतने पाया था कि व्यापारिक काम-काज के सरकारी नाप-यंत्रों ने बताया कि अंक-सूचिका गिर कर फिर १५२ पर पहुंच गयी थी।

यह सच है कि अमरीकी पब्लिक पर इस अंकका जो प्रतिकूल असर पड़ा उसे देख कर सरकारी सस्थाओं ने जल्दबाजी से ऐलान किया कि उनका हिसाब-किताब गलत था। कुछ इधर-उधर की जोड-तोड़ करके उन्होंने बताया कि पैदावार में सिर्फ ६ फी

सदी या, इससे भी कम, ४-६ फी सदी, कमी हुई थी। लेकिन इस भौंड़ी "डाक्टरी" ने अमरीका के आर्थिक आंकड़ोंके अजीबों-ग़रीब रूप को ही जोरोंसे खोल दिया।

याद होगा कि वाशिंगटन् के शासकों ने दावा किया था कि मार्शल-योजना और हथियारों (को बनाने) के कार्यक्रम की मदद से अमरीका को वे संकटसे उबार लेंगे। ये सब दावे बुरी तरह से मिट्टी में मिल गये। आर्थिक हालत को बदल सकने में निराश होकर ट्रूमेन सरकारने फैसला किया, जैसा कि जाहिर है, कि उसके बदले आर्थिक ऑकड़ों को ही बदल दिया जाय, जोकि कहीं ज़्यादा आसानी से किया जा सकता है। लेकिन, बिला शक, झूठे बनाये हुए सूचना-अंक, वे चाहे सबसे ऊँचे क्यों न हों, बढ़े हुए व्यापारिक व्यवहार की जगह नहीं ले सकते; और इसलिये, जर्नल ऑफ कामर्स (व्यापार-पत्रिका) ऐसे प्रतिक्रियावादी प्रकाशन तक ने इस चीज की टीका की। "खास कतर-ब्योंत" के उस काले जादू का, जिसके ज़रिये अक्तूबर के सूचक-अंकोंको उठाकर ऊपर पहुँचा दिया गया था, उसने जोरोंसे मज़ाक बनाया; और, १४ नवम्बर के अपने अंक में सुझाया कि सरकार ने ऑकड़ों को घुमाने-फिराने में जो हस्त-लाघव दिखाया है उसे "ऑकड़ों के बारे में इस साल की सबसे बढ़िया हाथ की सफाई" का सर्टीफिकट मिल सकता है।

इस धोखे-धड़ी को छोड़ दिया जाये तो पता चलता है कि अक्तूबर १९४९ में अमरीका की औद्योगिक पैदावार की अंक-सूचिका १९४८ के उसी महीने की तुलना में २२ फी सदी नीचे (१५२) थी; और वास्तवमें, लड़ाई के बादकी पैदावार की सबसे निचली सतह—फरवरी १९४६ की सतह पर—पहुँच गयी थी। इस तरह, १९४९की शरद्-ऋतु तक लड़ाई के बाद उत्पादन में जो बढ़ती हुई थी उसका कुछ भी बाकी नहीं रह गया, और अमरीका के उद्योग-धंधे फिर उसी बहुत ही निचली सतह पर पहुँच गये जहाँ पर वे लड़ाई के ठीक बाद थे।

सरकारी आंकड़े-बाजों द्वारा कतर-ब्योंत की गयी अक्तूबर की अंक-सूचिका (१६६) में कोयले और इस्पात के उद्योगों में होनेवाली हड़तालोंके असरको नहीं शामिल किया गया। लेकिन "डाक्टरी" किये हुए आंकड़ोंके मुताबिक भी एक साल में अमरीकाकी औद्योगिक पैदावार १५ फी सदी कम होगयी, यानी वह उतनी ही कम होगयी जितनी कि १९२९-३३ के संकट के पहले वर्ष में हुई थी।

संयुक्त राष्ट्र अमरीकामें बढ़ते हुए संकटका एक पक्का लक्षण (उद्योग-धंधोंमें) लगी हुई अचल पूंजीमें भारी कमीका होना है। १९४९ के वसंत और ग्रीष्म में ही नये उद्योग-धंधोंको शुरू करने के सम्बंध में जबरदस्त अनिच्छा दिखलायी देने लगी थी और नये निर्माण की मात्रामें बड़ी कमी हो गयी थी। लेकिन (नये उद्योग-धंधों के) निर्माण और उन्हें (नयी और अधिक मशीनों आदि से) लैस करनेका

कुल ख़र्चा फिर भी उस समय काफ़ी ऊँचा रहा, क्योंकि जिन योजनाओं के सम्बंध में काम पहले ही शुरू हो गया था वह जारी था। अब अचल लागत पूँजीकी मात्रा तेज़ीसे और बेरोक-टोक गिर रही है।

१९४९ के चौथे तिमाहे में (उद्योग-धंधों में) लगाई जानेवाली पूंजी साल के किसी भी दूसरे तिमाहे में लगाई गयी पूजीसे कम थी, गोकि आम तौरसे आखिरी तिमाहेके आकड़े सबसे ज़्यादा हुआ करते हैं। वे १९४८ के चौथे तिमाहे से २१.५ फी सदी कम थे। कारखानों के उद्योग-धंधों, रेलों के उद्योग और आर्थिक जीवन के दूसरे मुख्य क्षेत्रों में लगी पूंजी में ३०-३२ फी सदी कमी खास तौर से महत्वपूर्ण है।

सामानों के आर्डरों में भी ज़बरदस्त कमी हुई है। १९४९ के दौरान में यह कमी २६ फी सदी तक हो गयी। उदाहरण के लिये रेलों के डिब्बे बनाने वाले उद्योगके पास एक साल पहले एक लाख ग्यारह हज़ार डिब्बों-वैगनों आदि के आर्डर थे जो उसे पूरे करने थे; दिसम्बर १९४९ के शुरू होते-होते उसके पास कुल आर्डर सिर्फ १४,१०० डिब्बों और वैगनों का था। अक्तूबरमें सिर्फ २०१ डिब्बोंका आर्डर मिला, जबकि १९४७-४८ में माहवारी आर्डरोंकी सख्या १६-१७ हज़ार, जितनी ऊँची थी। रेलके इंजिनों के आर्डर आधे हो गये थे—१,६३० की जगह वे ८३३ रह गये थे।

बढ़ते हुये संकट का दूसरा बहुत ही महत्वपूर्ण लक्षण खुदरा बिक्री में कमी का होना है। १९४८ के सतह की तुलना में डिपार्टमेण्ट स्टोरों (बड़ी दूकानों) की बिक्री हर महीने गिरती गयी है। सितम्बर और अक्तूबर में खास तौर से उसमें कमी होगयी थी। पिट्सबर्ग जैसे बड़े औद्योगिक केन्द्र में अक्तूबर के मध्यमें पिछले साल के इसी महीने की तुलना में खुदरा बिक्री ३० फी सदी कम थी; बरमिंघम में वह २७ फ़ी सदी कम हो गयी थी; इंडियानापोलिस में २१ फ़ी सदी, डिट्रोयट में १६ फी सदी, स्प्रिंग-फील्ड में २२ फ़ी सदी, एक्रोन में २१ फी सदी, और इसी तरह दूसरी जगह खुदरा बिक्री घट गयी थी। पब्लिक की खरीदनेकी शक्ति की कमी के सबंध में टीका करते हुए **बिज़िनेस वीक** ने अपने २९ अक्तूबर के अक में कहा था कि यह "आम तौर से व्यापार के लिये सकट की निशानी हो सकता है"।

जनता अधिकाधिक गरीबी में मुब्तला होती जा रही है। वह जीवन की आवश्यकताओं के बिना काम चलाने के लिये मजबूर हो रही है। इससे देश के धन के बँटवारे की भयानक असमानता हमेशासे भी ज़्यादा वीभत्स रूपसे ज़ाहिर हो जाती है। खुद इजारेदारों के अखबारों में छपे हुये आंकड़े इसे ज़ाहिर करते हैं। **फेडरल रिज़र्व बुलेटिन** ने अगस्त १९४९ मे लिखा थी कि देशकी आबादी के ४० फी सदी भाग को कुछ भी बचत नहीं हुई है। कुल बचत (देशकी) का ८ फ़ी सदी भाग अमरीका की ३० फी सदी आबादीके पास है। दूसरी तरफ "ऊपर के" २० फी सदी लोगों के हाथमें कुल संचित बचतका ८३ फी सदी भाग है। उससे भी ऊपर के

धन्ना-सेठोंके गिरोहके हाथमें—जोकि आबादीके १० फी सदी भागसे अधिक नहीं हैं—तमाम संचित बचत का ६६ फी सदी, यानी राष्ट्रकी ७० फी सदी आबादीसे भी ज़्यादा भाग की बचतसे आठ गुना ज़्यादा है।

जैसा कि लोगोंको आम तौरसे मालूम है, संयुक्त-राष्ट्र अमरीकाकी आर्थिक हालत का एक महत्वपूर्ण चिन्ह (सूचक) मोटर उद्योग की दशा है। अगस्त १९४९ तक मोटरोंके उत्पादनमें बढ़ती दिखलाई देती थी। लेकिन सालके अंत तक इस उद्योगमें अति-उत्पादन एक वास्तविकता बन गया था, जैसा कि खुदरा व्यापारियोंके हाथमें मोटरोंकी काफी बड़ी सख्या (६ लाख तक) से और, इसके परिणाम-स्वरूप दो हफ्तेसे चार हफ्तेके लिये बहुतसी फैक्टरियों के बंद हो जानेसे जाहिर हो जाता है। उड़ाया यह जाता था कि ये फैक्टरियाँ "स्टॉकका हिसाब-किताब करनेके लिये" बंद की जा रही थीं। फोर्ड, क्रिसलर और कैसर-फ्रेज़रके बड़े-बड़े कारखानों और दूसरी फैक्टरियोंको नवम्बर और दिसम्बरमें मोटरोंके उत्पादनको बंद करनेके लिये मजबूर होना पड़ा, और जनरल-मोटर्सके कारखानोंने हफ्तेमें चार दिन काम करना शुरू कर दिया।

अमरीकी अख़बार जो एकदम हाल तक (उत्पादनके) उन "रिकार्डों" की बात करते थे जो मोटर-शाह १९४९ में कायम करनेवाले थे, अब मोटर उद्योग की हालत के सम्बंध में ख़तरे की घण्टी बजा रहे हैं। उदाहरण के लिये **नेशन्स बिज़िनेस** कहता है कि मोटरों की पैदावार में कमी हो जाने का मतलब है कम लोगों को काम मिलना, लोगों की ख़रीदने की ताकत में कमी होना और कच्चे माल और अर्द्ध-तैयार मालों की माँग का घट जाना।

> "मोटर के उत्पादन में किसी कमी का असर," वह लिखता है, "न सिर्फ़ डिट्रोयट में महसूस किया जायेगा, बल्कि मोटरों के हिस्सों को बनाने वाले क्लीवलैण्ड के कारखानों, पिट्सबर्ग और शिकागो की इस्पात की मिलों, मिडिल वेस्ट की खानों, एक्रोन की रबर फैक्टरियों, टोलेडो के कांचके कारख़ानों, न्यू-इंगलैण्ड की कपड़े की मिलों और मोटरोंको तैयार करनेके (तमाम हिस्सों को लेकर जोडने के) तमाम देशके कारखानों में भी महसूस किया जायेगा।"

अमरीकामें कारख़ानों का बनाना १९४८ में ही १९४७ की अपेक्षा कम था। १९४९ में वह २८ फ़ी सदी और कम हो गया। जिसे व्यापारिक निर्माण (दूकानों, रेस्ट्राँ, आदिका बनाना) कहा जाता है, वह लगभग २३ फी सदी कम हो गया। इसके अलावा यह भी कहना जरूरी है कि लड़ाई के बाद निर्माणका जो काम हुआ है उसके साथ गिरवी रख कर हासिल की गयी रकम (तथा दूसरे तरह-तरहके कर्ज भी) अत्यधिक बढ़ गयी है। निर्माणके खर्चे को गिरवी रख कर (तथा दूसरे तथा कर्जों आदि,) से प्राप्त की गयी रकमों से भरा गया है।

१९४५ के आखिर में गिरवी का कर्ज़ा शहरके लोगों के ऊपर २,७८० करोड़ डॉलर था; १९४८ के आखिर तक बढ़कर वह ४,६४० करोड़ डॉलर हो गया। इसी अर्सेमें लोगों का तमाम कर्ज़ा (जिसमें किश्तों पर खरीदी हुई चीजोंका देना भी शामिल है) ५,५४० करोड़ डॉलर से बढ़कर ८,४६० करोड़ डॉलर हो गया।

इसी समय, औद्योगिक और दूसरी फर्मों का कर्ज़ा ९,९५० करोड़ डॉलर से बढ़कर १३,२०० डॉलर हो गया। यह आंकड़े दिखलाते हैं कि पूँजीवादी अर्थ-शास्त्रियों के इस तरहके बयान कि लड़ाईके बाद अमरीकामें कर्ज़ा नहीं बढ़ा है और यह कि इस दिशासे संकटका कोई खतरा नहीं है कितने झूठे और बेबुनियाद हैं।

अति-उत्पादनके संकटके कारण पिछले महीनोंमें इस्पात और कोयले की पैदावार बहुत काफी घट गयी है। यह दावा कि उत्पादन इन उद्योगोंमें होनेवाली महज़ हड़तालोंकी ही वजहसे गिर गया है, सचाईके सामने क्षण भर भी नहीं टिक सकता। उदाहरणके लिये कोयलेकी खानोंमें ईंधनके जरूरत से ज़्यादा स्टॉक को कम करने के लिये हड़तालसे पहले ही कामको घटा कर हफ्तेमें तीन दिन कर दिया गया था। सच तो यह है कि इस्पातके धंधोंके मालिकोंने अपने संचित स्टॉकके एक हिस्सेको निकालने के लिये हड़तालका फायदा उठाया। **बिज़िनेस वीक**ने बिलकुल खुले-खुले कहा था कि "हड़तालने इस्पातके जमा भारी स्टॉकोंकी सफाई कर दी है।"

कोयलेकी पैदावारमें कमी होना अमरीकाकी खराब होती हुई आर्थिक हालतकी बहुत स्पष्ट निशानी है। १९४९ के जनवरी और १२ नवम्बरके बीच बिटूमिनस कोयले (कोयलेकी एक किस्म—अनु०) का उत्पादन १९४८ के इसी कालकी तुलनामें १५ करोड़ ८० लाख टन, यानी ३१ फी सदी कम था।

अक्तूबर १९४९ में रेलों पर लादा गया तैयार माल (जोकि खपत की सतह का बहुत सच्चा आयना है) पिछले साल के इसी महीने के मुकाबले में २० फी सदी कम था।

अपनी सारी कोशिशोंके बावजूद, अमरीकाके सरकारी आँकड़े बढ़ती हुई बेकारी को—जिसका कि संकट से चोली-दामन का अनिवार्य साथ है—छिपा सकने में असमर्थ हैं। सरकारी आकड़ों के मुताबिक, जोकि जाहिर ही कम करके बताये गये हैं, अक्तूबर १९४९ के शुरू में पूरे तौर से बेकार लोगों की संख्या ३५ लाख ७६ हज़ार या अक्तूबर १९४८ की बनिस्बत, २० लाख ज़्यादा थी। इसमें उस श्रेणीके लोगोंको जोड़ना चाहिए जिसे सरकारी खातोंमें चालाकी से " नौकरी है लेकिन काम नहीं है " वालोंकी श्रेणी में लिखा जाता है। इस रहस्यमयी श्रेणीमें, अगस्त १९४९ मे (आखिरी महीना जिसके आँकड़े मिलते हैं) ४० लाख ९४ हज़ार व्यक्ति उद्योग-धंधोंके और २ लाख २८ हजार लोग खेती-किसानी के थे। आखिर में, **मन्थली लेबर रिव्यू** के आकड़ों के अनुसार पिछले अगस्तमें ६५ लाख लोग ऐसे थे जो

हफ्तेमें ३५ घण्टेसे भी कम काम कर रहे थे। इस तरह सरकारी जरियोंसे मिले कुल ऑकड़ोंके मुताविक भी अमरीकामें पूरे तौरसे और ऑशिक बेकार लोगोंकी कुल संख्या डेढ़ करोड़ के करीब पहुँचती है।

खुद अमरीकी अखबारोंको कबूल करनेके लिए मजबूर होना पड रहा है कि सरकारी सस्थाओं की तमाम बातों और वादों के बावजूद देशके ३५ औद्योगिक इलाकों को "मंदी के इलाके" मानना चाहिए! इन शब्दोंका मतलब निस्सन्देह भयानक है, क्योंकि उनका मतलब ऐसे इलाकों से है जहॉ पर बेकारी खास तौरसे बहुत ज्यादा है।

और इस तरह, औद्योगिक पैदावार में २२ फी सदी की कमी, लगी हुई अचल पूंजी की मात्रा में २१'५ फी सदी की घटती, डिपार्टमेण्ट स्टोरों (बड़ी दूकानों) की बिक्री में १२-१४ फ़ी सदी की गिरावट, कोयले की पैदावार में ३१ फी सदी और रेलों पर लदनेवाले तैयार माल की मात्रामें २० फी सदी की कमी और आख़िरमें, लगभग डेढ करोड बेकार और आंशिक-बेकार लोगों की फ़ौज—अमरीका मे बढते हुए आर्थिक सकट की यही तस्वीर है।

इसके अलावा इस चीजको भी ध्यान में रखना चाहिये कि अमरीका में यह आर्थिक सकट ऐसे समयमें उठ रहा है जब कि वहॉ पर हथियार बनाने की एक भयानक घुड दौड़ जारी है जो देशके बजट के बहुत बडे हिस्से को लील जाती है और इजारेदारों की तिजोरियों में करोड़ों-अरबों डालर पहुँचाती रहती है। अमरीकाके शासकोंने उत्पादनकी घटतीको फौजी ठेकों की मददसे थामने की आशा की थी। लेकिन बढे हुए फ़ौजी खर्च की वजहसे टैक्सोंमें होनेवाला इजाफा जनता की खरीदने की शक्ति को और भी चूस लेता है, देशके बाज़ारको और भी छोटा बना देता है और, अन्तमें, अति-उत्पादन के सकटको और भी अधिक बढ़ा देता है।

रक्षक नहीं, भक्षक

पश्चिमी योरप की अमरीका की "निःस्वार्थ मदद" की तारीफ में पूँजीवादी अखबारी गुलामोंने रीमों कागज काला किया। गुलामी के उस अस्त्र को—मार्शल योजना को, उन्होंने सागर-पार से आनेवाले उद्धारक—"डूबते के सहारे" के रूप में चित्रित किया। लेकिन वास्तव में पश्चिमी योरप के गले में वह एक चक्की का पाट साबित हुआ है जो उसे धीरे-धीरे, लेकिन निस्सन्देह, तले की ओर डुबाये लिये जा रहा है।

पश्चिमी योरप के आर्थिक जीवन के फ़ौजीकरणने, हथियार बनाने की पागल दौड़ और उसके साथ होनेवाली फौजी खर्चे की बढ़ती ने, और अमरीकी मालों से देश के बाजारों को पाटकर राष्ट्रीय उद्योगों का गला घोंटने की नीति ने मार्शल-कृत देशों

में संकट को और जल्दी बढ़ा दिया है। योरप के पूंजीवादी देशों में संकट के लक्षण अधिकाधिक स्पष्ट होते जा रहे हैं। सबसे पहले और मुख्य रूपसे ये लक्षण जाहिर होते हैं बढ़ती हुई बेकारी के रूप में।

इटली में लेबर एक्सचेंजों (जहाँ बेकारों के नाम लिखे जाते हैं) में सरकारी तौरसे दर्ज किये गये लोगोंकी सख्या आम तौरसे २० और २४ लाखों के बीच बढ़ती-घटती रहती है, और १८ लाख से नीचे वह कभी नहीं गिरती। इसका मतलब यह है कि मजदूर वर्ग'का एक बहुत भारी हिस्सा बेकार है, और भविष्य में भी काम मिलने की उसे कोई आशा नहीं है।

स्थिति की गंभीरता का अन्दाजा इस बातसे भी लगाया जा सकता हैं कि डि' गेस्पेरी तक को बराबर चली आनेवाली बेकारी के अस्तित्व को मानने के लिये मजबूर होना पड़ा है। उसने सुझाया है कि हर साल साढ़े तीन लाख आदमियोंको संगठित रूपसे देशसे बाहर भेजा जाए। पूँजीवादी व्यवस्था के आंतरिक निपट दीवालियेपनका एक खास तौर से जबरदस्त उदाहरण इटली में मिलता है।

बेकारी ने बेल्जियम में काफी जबरदस्त रूप धारण कर लिया है; और पश्चिमी जर्मनीमें जहाँ नवम्बर के अंत में १३,८७,५०० आदमी बेकार थे और पश्चिमी बर्लिन में भी जहाँ १५ नवम्बर को बेकारों की सख्या २,६३,५०० थी, उसने काफी विकराल रूप धारण कर लिया है। और इसी तरह योरप के दूसरे सभी पूँजीवादी देशों में बेकारों की फौज भयानक रूप से बराबर बढ़ती जा रही है।

मार्शल योजना वाले १९ देशोंकी नवम्बरकी मीटिंगके लिये तैयार की गयी प्रारंभिक रिपोर्टमें स्वीकार किया गया था कि बिना किसी अपवादके तमाम मार्शली-कृत देशोंमें बेकारी बढ़ गयी है। कुल पूँजीवादी दुनियामें पूरे या आंशिक बेकारों की संख्या ४ करोड तक पहुँच गयी है।

ज्यों-ज्यों आर्थिक-संकट बढता है त्यों-त्यों पश्चिम-योरपीय देशोंकी मुद्रा सम्बंधी और पैसा चुकानेकी कठिनाइयाँ अधिकाधिक बढ़ती जाती हैं। इन देशोंके मुद्राके मूल्य काट ने, जिसे उन्होंने अमरीकी दबाव की वजह से किया था, उनकी एक भी समस्या को हल नहीं किया है और न उनकी एक भी परेशानी को दूर किया है। योरप की विनमय-दर को बहुत नीचा कर देनेके केवल दो ही तीन महीने बाद स्विजरलैण्ड के विनिमय-बाजार में पौंड का मूल्य इस नयी दरसे भी १२ से लेकर ३६ फी सदी तक कम आँका गया था, और फ्रासीसी फ्राक का ९ फी सदी, इतालवी लिरा का ११ फी सदी, स्वीडेन के क्रोना का १६ फी सदी, डेनमार्क के क्रोन का २१ फी सदी और पश्चिमी-जर्मनी के मार्क का ३४ फ्री सदी कम मूल्य आँका गया था। यही पश्चिमी योरपकी मुद्राकी और आम आर्थिक स्थितिकी अत्यन्त अस्थिर अवस्थाके सम्बधमें रुपयेके बाजार की प्रतिक्रिया थी। आयातों के बढनेके बजाए, जिनके सहारे मार्शली-कृत देशोंके शासक

अपनी कठिनाइयों को हल करनेकी उम्मीद करते थे, इनमें से अधिकांश देशोंका आयात घट गया है और उनके आयात-निर्यात व्यापार का अनुपात बहुत बुरी तरह बिगड़ गया है।

१९४९ के दूसरे तिमाहे में मार्शली-कृत देशोंके व्यापारके आयात-निर्यात अनुपात मे कुल घाटेकी रकम १६० करोड़ डॉलर की सबसे ऊँची संख्या तक पहुँच गयी थी। वर्षके पहले तिमाहे (१४० करोड़ डॉलर) और १९४८ के आखिरी तिमाहे (१३० करोड़ डॉलर) की तुलनामें यह घाटा बहुत बढ़ गया था। इस कुल घाटे में से १०० करोड़ डॉलर का घाटा अमरीका के साथ व्यापारसे हुआ है और ३० करोड़ डॉलर का पश्चिमी गोलार्द्धके दूसरे देशोंके व्यापार से।

वह दिन हमेशा के लिये लद गये जब योरप के 'पूँजीवादी देश बाजारों की चिन्ता किये बिना अपने उत्पादन को बढाते जा सकते थे। आज न सिर्फ साधारण इस्तेमाल के गौण सामानों के अनचाहे स्टॉक जमा हैं और उनके निर्यात के सम्बंध मे बाधाओं का सामना करना पडता है, बल्कि, कोयला, इस्पात और औद्योगिक सामान के सम्बध में भी यही कठिनाइयाँ हैं। इसके परिणाम-स्वरूप बिना किसी अपवाद के तमाम पश्चिम योरपीय देशों को वैदेशिक व्यापार में बहुत गंभीर कठिनाइयों का सामना करना पडता है।

नार्वे के आयात-निर्यात व्यापार के अनुपात का घाटा, जो १९४८ के पहले ९ महीने में ७० करोड क्रोनर हुआ था, १९४९ के उतने ही समय में बढ़कर वह ९४ करोड़ क्रोनर का घाटा होगया। डेनमार्क का १९४९ के सात महीनों का घाटा ६१ करोड़ ५४ लाख क्रोनर हुआ जबकि १९४८ के इसी काल में वह २८ करोड़ ५३ लाख क्रौनर था। १९४९ के दूसरे तिमाहेमें फ्रांस का निर्यात ६,६४० करोड़ फ्रांक था, इसकेमुकाबले में तीसरे तिमाहे मे वह ५,८३० करोड़ रह गया। इटलीका निर्यात १९४८ के आठ महीनों के ७६ करोड़ ५ लाख डालर की तुलना में १९४९ के ८ महीनों में ६३ करोड़ ४० लाख डॉलर ही रह गया और इटली के आयातके कम होनेके बावजूद उसका घाटा ३५ करोड डॉलरसे बढ़कर ३९ करोड़ ४० लाख डॉलर हो गया। आस्ट्रिया का घाटा १९४९ के पहले ६ महीनों में, १९४८ के पहले ६ महीनों के ३३ करोड़ ४८ लाख शिलिंग के घाटे के मुकाबले में, बढ़कर ४१ करोड़ २५ लाख शिलिंग हो गया। यहा तक कि बेल्जियम को भी, जिसके अयात निर्यात व्यापार का १९४९ के पहले सात महीनों में अच्छा (यानी उसके पक्षमें) अनुपात था, अगस्त के बाद से काफी घाटा हुआ है। अगस्त और सितम्बर के दो महीनों मे यह घाटा ६७ करोड बेल्जियन फ्रॉकोंके बराबर था।

ब्रिटेन के आयात-निर्यात व्यापार का अनुपात भी बदतर होता जा रहा है; मूल्य-काट, उसके घाटे को कम करने मे असफल रहा है।

पश्चिम योरपीय देशों में औद्योगिक पैदावारमें, जो १९४८ और १९४९ के शुरू में एक ही जगह टिकी हुई थी, मार्च-मई १९४९ से गिरावट की प्रवृत्ति स्पष्ट नजर आने लगी है। अति-उत्पादन जो पिछली गर्मियों तक मुख्यतया हल्के उद्योग-धंधों में ही नजर आता था, अब भारी उद्योग-धंधों पर भी असर डालने लगा है।

इटलीमें जहाँ कि पैदावारके आंकड़े अभी तक १९३८ की पैदावारके आंकड़ोंसे नीचे हैं, १९४९ के पहले ९ महीनोंमें इस्पातका उत्पादन १९४८ की सतहकी तुलना में १०.१ फी सदी और फरटीलाइज़रोंका उत्पादन ४२.८ फी सदी घट गया। मज़दूर मंत्रीके विभागके एक सरकारी बयानके मुताबिक सितम्बर-अक्तूबर १९४९ में तमाम कारखानोंमें से ८ फी सदी बिलकुल बेकार पड़े थे; और खानोंके सम्बंधमें यह संख्या बढ़ कर २५ फी सदी तक पहुँच गयी थी। कुल मजदूरोंमें से लगभग २२.६ फी सदी हफ्तेमें ४० घंटेसे भी कम काम करते हैं।

नीदरलैण्ड (हालैण्ड) की औद्योगिक पैदावार की अंक-सूचिका जो मई-जुलाई १९४९ में (१९३८ में १०० पर मानकर) १२५ पर थी, अगस्त में ११४ पर गिर गयी। इस तरह औद्योगिक उत्पादन में १९४८ की तुलना में जो बढ़ती हुई थी वह सब फिर खतम हो गयी।

ब्रिटेन की औद्योगिक पैदावार की अंक-सूचिका मार्च-मई १९४९ में, **लंदन और केम्ब्रिज इकोनॉमिक सर्विस** के तखमीनोंके मुताबिक (१९४६ में १०० पर मानकर) १३०-३१ पर थी, जुलाई-अगस्त में वह ११५ १७ से ऊपर न थी।

फ्रांस मे १९४९ के तीसरे तिमाहे में, इस्पात के उद्योगके आर्डर पहले तिमाहे की तुलना में २९ फी सदी कम थे, मशीन-टूलोंके (मशीनों को बनाने के औजार बनानेवाले) कारखानोंमें काम के हफ्तेको बहुत ज़्यादा कम कर दिया गया है, सरकारी रेलों ने डिब्बों-वैगनों आदि के अपने आर्डरों को कम कर दिया है और कुछ को तो बिलकुल ही खतम कर दिया है; ट्रेक्टरों की बिक्री गिर गयी है।

पश्चिमी जर्मनी में आर्थिक कठिनाइयाँ उद्योग-धंधों की नित-नयी शाखाओं में फैल रही हैं। कुछ विदेशी निरीक्षक इस नकली राज्य की आर्थिक परिस्थिति का मंदी के रूप में वर्णन भी करने लगे हैं। लोहे और इस्पात के उद्योग को बाजार की कठिनाइयों का अधिकाधिक सामना करना पड़ रहा है, और मजदूरों को भारी सख्या में कामसे अलग किया जा रहा है। लिप्पे-वर्क का एल्यूमीनियम का कारखाना जो पश्चिमी योरप का सबसे बड़ा कारखाना है, बंद किया जा रहा है। ब्रेमेन के शिप-यार्डों मे ३,००० मजदूरों को और हेम्बर्ग में १,५०० को निकाल दिया गया है। कैसल के हेन्शेल इंजिन बनाने के कारखाने में उसके सात हज़ार मजदूरों में से ७०० को बर्खास्त कर दिया गया है; इत्यादि।

बढ़ते हुये संकट के चिन्ह सबसे ज़्यादा स्पष्टता से **बेलजियम** में दिखलाई देते हैं जो कि अभी हाल तक अपनी तुलनात्मक खुशहाली के लिये मशहूर माना

जाता था। यह सच है कि बेलजियम के आर्थिक जीवन को १९४७-४८ में होनेवाले कॉच और चमड़े के मालों के अति-उत्पादन से नुकसान पहुँचा था; लेकिन कोयले और इस्पात की पैदावार—जिसके बेचनेमें कोई कठिनाइयॉ नहीं नजर आती थी—के बढ जाने की कृपा से उसके व्यापारका आम धरातल काफी ऊँचा रहा था। अब, ठीक इन्हीं दोनों "खुशहाल" उद्योग-धंधों में भारी गिरावट शुरू हो गयी है।

कोयले का उत्पादन मार्च १९४९ के २६ लाख १९ हजार टन से घटकर जुलाई मे १८ लाख ६९ हजार टन रह गया; इसके बाद यद्यपि वह थोड़ा बढ़ा लेकिन सितम्बर-अक्तूबर में फिर वह केवल २०—२०½ लाख टन हो गया। तिसपर भी खानोंमे कोयले का स्टॉक अक्तूबर में २६ लाख १० हजार टन होगया एक साल पहले वह ११ लाख २७ हजार टन था। बेलजियमके कोयलेके निर्यात को हर जगह मार्शल योजना के मातहत मॅगाये जानेवाले अमरीकी कोयलेके साथ होड़का सामना करना पड़ता है।

जहाँ तक बेलजियम की इस्पातकी पैदावार का सवाल है वह मार्च १९४९ की ४ लाख १६ हजार टन की पैदावारसे घटकर नवम्बरमें २ लाख ७५ हजार टन रह गयी। और इसके बाद भी, १९५० में प्रवेश करते समय, बेलजियम के पास १० लाख टन इस्पात जमा है जिसके लिये उसे कहीं खरीदार नहीं मिलते।

कोयले, लोहे और इस्पातके उद्योगोंके अन्दर प्रकट होनेवाले संकटके लक्षणोंका बेलजियमके तमाम औद्योगिक उत्पादनके ऊपर विनाशकारी असर पड़ा है। मार्च १९४९ में उसकी अंक-सूचिका १३२४ पर थी, जुलाईमें वह गिरकर १०४·४ पर आ गयी (२१ फी सदी नीचे गिर गयी)। और अक्तूबरमें ११५ ५ तक ऊपर उठनेके बाद भी मार्च १९४९ की सतहसे वह १३ फी सदी, और अक्तूबर १९४८ की सतहसे ११ फी सदी, नीचे ही है।

कोयले और इस्पातके उद्योगोंके उत्पादनमें रुकाव आजाने या उसके गिरने लगनेको सबसे अधिक महत्वकी नयी चीज माना जा सकता है—एक ऐसी चीज जोकि पश्चिमी योरप की पूरी अर्थ-व्यवस्था पर असर डालती है और जो उसके संकट की अवस्था मे पहुँचने का खास तौरसे जोरदार सबूत पेश करती है।

ब्रिटेनमें पहले की बनिस्बत अब कम ब्लास्ट फर्नेसें (भट्टियां) काम कर रही हैं, उद्योगके अन्दर धातुका जितना स्टाक जमा हो गया है उतना बहुत वर्षों में कभी नहीं हुआ था, और नये आर्डर जो आ रहे हैं वे इतने काफी नहीं हैं कि उत्पादनको मौजूदा सतह पर कायम रख सकें। पश्चिमी जर्मनी में भी इस्पातका उत्पादन गिर गया है; अगस्त में वह ८ लाख ३४ हजार टन था, अक्तूबरमें सिर्फ ६ लाख ९२ हजार टन, और नवम्बर में रूर में उत्पादन १०—१५ फी सदी और घट गया। लेकिन इस के बाद भी मिलों के पास कुछ बेबिका इस्पात पड़ा हुआ है।

२३ दिसम्बर को **न्यू यार्क टाइम्स** ने रिपोर्ट किया था कि पश्चिमी-योरप के केवल चार मार्शलीकृत देशों में लगभग ६० लाख टन इस्पात तैयार करने की शक्ति इस समय बेकार पड़ी हुई है।

रूर के कोयले के बँटवारे के सम्बंध में होनेवाले झगड़ों और तू-तू मैं-मै को हुए अभी कितने दिन बीते हैं ? और अब मार्शलीकृत देश रूर के कोयले और कोक (कच्चे कोयले) को, जो उनके हिस्सेमें पड़ा था, लेनेसे इनकार कर रहे हैं। उदाहरण के लिये अक्तूबर १९४९ मे निर्यातके लिये तै किये हुए कोयलेमें से केवल तीन-चौथाई भाग के लिये पश्चिमी योरप में ख़रीदार मिल सके।

पश्चिम-योरपीय देशों की नयी पूंजी लगाने की और उत्पादन-शक्ति को बढ़ाने की हवाई योजनाएँ शुरू होते सकट के थपेड़ोंसे ताश के घरों की तरह बैठ गयी हैं।

पूंजीवादी योरप और अमरीका की स्थिति की सोवियत सघ और जनता के जनतंत्रों द्वारा—जो साहस पूर्वक युद्ध के पहले के उत्पादन से आगे निकल रहे हैं—की गयी जबरदस्त आर्थिक प्रगतिसे तुलना करते समय जी. एम. मालेनकोव के निम्न वक्तव्य की याद आये बिना नहीं रहती :

> "यह कहा जा सकता है कि दुनिया में परिस्थिति ऐसी है कि उन देशो और लोगों का कामकाज अच्छी तरह हो रहा है जो अमरीका की तथाकथित मदद के बिना चल रहे हैं; और हमें विश्वास है कि समय बीतने के साथ-साथ वह और भी अच्छा होता जायेगा। दूसरी ओर, अमरीकाका और उन देशों का जिनकी वह "मदद कर रहा है" कामकाज बद से बदतर होता जा रहा है।"

अमरीका और मार्शली-कृत देशों की आर्थिक स्थिति की इस आम तस्वीर मे हथियार बनाने के बड़े राक्षसी खर्च के बोझ को और जोड़ देना चाहिए। यह अनुपजाऊ खर्च आर्थिक जीवन को चूसे डाल रहा है और उसे अन्दर से खोखला बना रहा है, अर्थ-व्यवस्था को बिगाड़ रहा है और जनता में भयानक गरीबी फैला रहा हैं। ब्रिटेन के लेबर ("मजदूर") शासक अपने देश की मेहनतकश जनता से कहते हैं कि अपने पेट की पट्टियों को वे और कसने की कोशिश करें—और यह सब उनके लिये जिसे वह घृणित पाखण्ड के साथ "राष्ट्र के सर्वोच्च हित" कहते हैं। तिस पर भी विदेशों में ब्रिटेन के फ़ौजी खर्च को दुगुना करने के लिये वे दुर्लभ मुद्रा—उसके स्टॉक में इतनी कमी होने पर भी —पा जाते हैं। १९४९ के पहले ६ महीनों में इस मदमें वे ११ करोड़ २० लाख पौण्ड तक झोंक चुके हैं।

पूंजीपति वर्ग कोशिश कर रहा है, जैसा कि वह हमेशा करता है, कि आते हुए आर्थिक संकट के पूरे बोझ को मजदूर वर्ग के ऊपर डाल दे। "बोझ को फिर से बॉटने" के इस कार्य को इजारेदारों ने योरपियन मुद्राओं के मूल्य—काट के अस्त्रसे पूरा करने की कोशिश की थी।

अमरीका की राष्ट्रीय वैदेशिक व्यापार समिति के अध्यक्ष, राबर्ट एफ० लोरी ने एक पत्र को एक भेंट देते समय बिल्कुल साफ़-साफ कहा था कि ब्रिटेन के "उत्पादनके खर्चेमें कमी" "श्रमको और ब्रिटेनके मजदूरोंके जीवन-स्तरको घटाकर की जानी चाहिए।" और, यह तो कहनेकी जरूरत नहीं कि, ये हृदय-हीन कुटिल योजनाएँ केवल ब्रिटेन पर नहीं, बल्कि पूँजीवादी दुनियाके हर देश पर लागू होती हैं। पूँजीपति वर्ग केवल वास्तविक मजदूरीको ही नहीं कम करना चाहता है, बल्कि कामके घंटोंको बढाना और नकद मज़दूरीको भी वह घटाना चाहता है। ऑस्टिन मोटर कम्पनी ब्रिटेनकी एक प्रमुख मोटर बनानेकी कम्पनी है। अभी हाल ही में उसके अध्यक्षने बिल्कुल खुले आम ऐलान किया था कि उसे इस चीज़ का कोई कारण नहीं दिखता कि मजदूरों से उनकी मौजूदा तनखा पर ही हफ्तेमें ४-५ घण्टा और ज़्यादा काम क्यों न कराया जाय।

यह भी विशेष बात है कि ठीक इसी समय पर जब कि मुद्राओं का मूल्य गिर रहा है और मुद्रा-प्रसार अधिकाधिक फैलता जा रहा है,—इजारेदारी के शाहों का, जो उनके आक़ा हैं, हुक्म पाकर ट्रेड यूनियनों के प्रतिक्रियावादी नौकरशाह मजदूरों से कहते हैं कि वे मजदूरी बढ़ाने की माँग न करें। सामूहिक सौदे के समझौतों को भी—जिनमें कि रहन-सहन के खर्चे में वृद्धिके साथ मजदूरी में भी वृद्धि करने की शर्ते शामिल है—वे रद्द कर देना चाहते हैं।

× × ×

नये वर्षके द्वार पर खडी पूंजीवादी दुनिया की यही आर्थिक स्थिति है। अमरीका और पूंजीवादी योरप का पूंजीपति वर्ग और उसके दक्षिण-पंथी सोशलिस्ट दलालोंका गिरोह अगर यह सोचता है कि संकट से मजदूर वर्ग और भी दब जायेगा तो उसे भारी निराशा का सामना करना पड़ेगा। इसमें ज़रा भी सन्देह की गुँजाइश नहीं कि १९५० का वर्ष मजदूरों द्वारा अपने आर्थिक और राजनीतिक हितों की रक्षामें लडी गयी और भी जुझारू लड़ाइयों का वर्ष होगा; वह विशाल वर्ग-संघर्षों का, पूंजीवाद के दीवालिया शासकों के खिलाफ मेहनतकश जनता के बढ़ते हुए विद्रोह का, शान्ति के लिये और जंगखोरों की—जो दुनिया को एक बार फिर खून में नहलाकर संकट से वचना चाहते हैं—शैतानी साजिशों के खिलाफ़ जनता के और भी ज़्यादा तेज संघर्ष का वर्ष होगा।

[**न्यू टाइम्स** के १ जनवरी १९५० के अंक (१) से]

★

चीनी जनता की विजयका ऐतिहासिक महत्व

ई. जुकोव

१९४९ का वर्ष घटनाओं से भरा हुआ था। वह प्रथम श्रेणी के महत्वकी ऐसी अन्तरराष्ट्रीय घटनाओं से भरा हुआ था जो इतिहास में मनुष्य की प्रगति-यात्रा के, कम्युनिज्म की ओर उसकी प्रगति के सीमा-चिन्हों के रूपमें अमर रहेगी। और पिछले वर्ष की घटनाओं में एक सबसे महत्व-पूर्ण घटना निस्सन्देह चीनी जनता के जनतंत्र का जन्म थी।

चीनी जनताकी विजय, जोकि साथ ही साथ शान्ति, जनवाद और समाजवाद के महान पक्ष की भी विजय है, निस्सन्देह विश्व-व्यापक महत्व की है।

अन्तरराष्ट्रीय दृष्टिसे, चीनी जनता की क्रान्ति की विजय का महत्व सबसे पहले और सबसे मुख्य रूपसे इस बात में है कि वह शान्ति के मोर्चे को शक्तिशाली बनाती है, कि वह जगखोरों के मार्ग मे एक और भारी रुकावट खडी कर देती है।

अमरीकी इजारेदार बहुत दिनों तक सचमुच विश्वास करते थे कि सोवियत संघ और दूसरे जनवादी राज्यों के खिलाफ अपनी आक्रमणकारी योजनाओं मे वे चीन के फ़ौजी अड्डेका और कुओमिन्तांग की "देशी" फौजों का इस्तेमाल कर सकेंगे। च्यांग काई-शेक के जन-विरोधी शासनको खड़ा रखने के लिये और कुओमिन्तांगी फ़ौजोंको लैस करनेके लिये अमरीका ने ६ अरब डॉलर क्यों खर्च किये थे—इसका उत्तर इन्हीं आक्रमणकारी मन्सूबों में मिलता है। लेकिन अमरीकी तोपों और टैंकोंने कुमिन्तांग के प्रतिक्रियावादियों की फ़ौजों को पूर्ण पराजय से बचाने के बजाय उनकी मौतको और भी जल्दी ला दिया। चीनकी जनताकी आज़ाद फ़ौजने पराजित कुओमिन्तांगी डिवीजनों के हाथसे छीने अमरीकी हथियारों से अपने को और सशक्त बनाया। अमरीका के चीन के साथ सम्बंधों के बारेमें अमरीका के राज्य विभाग के श्वेत-पत्रने अमरीकाके नानकिंग-स्थित राजदूतावासके एक फ़ौजी अफसरकी दिसम्बर १९४८ की एक रिपोर्टको उद्धृत किया है, जिसमें कहा गया कि,

"लड़ाईके खोये हुए साजो-सामानकी मात्राका निश्चय करनेके लिये यह मान लेना कि अमरीका के कुल समान का ८० फ़ी सदी खो गया, एक सही आधार होगा—इसमें से गोला-बारूद के अलावा कमसे कम ७५ फ़ी सदी पर कम्युनिस्टोंने कब्जा कर लिया है"

१९४९ में जनता की आज़ाद सेना द्वारा कब्ज़ा किये गये हथियारोंका अनुपात और भी ज़्यादा था। कुओमिन्ताग के प्रतिक्रियावादियों की मदद करने के व्यापार में—फ़ौजी-राजनीतिक अर्थ में, और अधिक संकुचित "व्यापारिक" अर्थ, दोनों ही में—अमरीका के शासक हल्कों को निश्चित रूपसे घाटा हुआ।

चीन के फ़ौजी अड्डे को और चीन को अमरीका का एक उपनिवेश बना देने की आशा को, दोनों ही के खो बैठने के बाद अमरीका के अभागे युद्ध-विशारदों की क्रोधपूर्ण बौखलाहट को आसानी से समझा जा सकता है। चीनमें अमरीकी नीति की शर्मनाक और पूर्ण पराजय को किसी तरह ढकने के लिये सावधानी से चुनकर और उनकी "डाक्टरी" करके राज्य विभाग ने बहुत से भारी-भरकम दस्तावेजों को प्रचलित किया है। लेकिन दस्तावेजें उसकी असफलता को ही साबित करती हैं।

राज्य विभाग के श्वेत-पत्र में च्यांग काई-शेक और उसके जनरलों की कई जगहों पर बहुत ही जली-भुनी आलोचना है। चीन में अमरीकी साम्राज्यवादियों की ताकतों की और सामन्ती प्रतिक्रियावाद की हार का सारा इल्ज़ाम उसमें कुओमिन्तांग गुट के मत्थे मढने की कोशिश की गयी हैं।

लेकिन अपने तमाम हथकण्डों और चीन की घटनाओं की प्रगति के सम्बंध में अपनी तमाम गलत-बयानियों के बावजूद राज्य-विभाग के अधिकारी इस मुख्य चीज को छिपाने में असमर्थ हैं कि चीन के अन्दरूनी मामलात में अमरीकियों ने बड़े पैमाने पर दखलन्दाज़ी की थी, कि अमरीकाने वहाँ पर सीधे रूपमें सशस्त्र हस्तक्षेप किया था और यह कि च्यांग काई-शेक की दुस्साहिसकता के पीछे वास्तव में अमरीकी साम्राज्यवादियों की ही ताकत काम कर रही थी।

दूसरे विश्व-युद्धके बादकी चीनकी परिस्थितिके सम्बंधमें श्वेत-पत्र अमरीकाके सरकारी स्मृति-पत्रों और निरीक्षण-रिपोर्टोंमें से लम्बे-लम्बे उद्धरण देता है। वह १९४६ के जनरल मार्शलके "बीच-बचाव वाले" मिशनको लेकर बहुत-सा स्थान काला करता है; और इरादेके साथ तथा झूठमूठ उसे इस तरह पेश करनेकी कोशिश करता है कि उसके पीछे अमरीकाकी यह "निस्वार्थी" इच्छा काम कर रही थी कि चीनके अन्दर जल्दीसे जल्दी आन्तरिक शान्ति स्थापित हो जाय। लेकिन इस बातको खुद श्वेत-पत्र में दिये गये तथ्य ही पूर्ण रूपसे झूठा साबित कर देते हैं।

१९४६ के अन्दर चीनकी लड़ाई की प्रगति का हाल बताते हुए श्वेत-पत्र कबूल करता है कि जिस कालमें जनरल मार्शल उस देशमें मौजूद था उसी काल में

कुओमिन्तांग ने जनता की आज़ाद फौजको नुकसान पहुँचा कर अपनी फ़ौजी स्थिति को काफी सुधार लिया था। अमरीकाका "बीच-बचाव" एक सुविधाजनक पर्दा था जिसकी आड़में चीनके प्रतिक्रियावादियों ने जनवादी शक्तियों पर आक्रमण करनेके लिये अपने को ताकतवर किया था।

अमरीकी साम्राज्यवादी इस चीज को छिपाने की कोशिश कर रहे हैं कि चीनी जनताके खिलाफ़ कुओमिन्तांगके क्रान्ति-विरोधी युद्ध के असली संचालक वही थे। लेकिन श्वेत-पत्र की कई दस्तावेजें उनका सारा भांडा फोड़ देती हैं।

उदाहरण के लिये, कुओमिन्तांग की फौजोंको ट्रेनिंग देनेके लिये फॉरमोसा में एक अमरीकी केन्द्र खोलने के बारेमें युद्ध विभाग के पास राज्य विभाग द्वारा भेजे गये स्मृति-पत्रकी एक टिप्पणी देखिये:

> "इस काम का मतलब गृह-युद्धमें अमरीका का सीधा-सीधा हिस्सा लेना है—यह चीज़ बाहर कमसे कम मालूम हो इसकी हर तरहसे कोशिश की जायेगी।"

च्याग काई-शेकके सदर दफ्तर में अमरीकाके प्रमुख फ़ौजी सलाहकार, जनरल बारने—जिसकी रिपोर्टों से श्वेत–पत्र में उदाहरण दिये गये हैं—खुद कुछ महत्वपूर्ण बाते स्वीकार की हैं। यह अमरीकी फौजीशाह इस चीज़ को स्वीकार करनेमें अत्यधिक आनाकानी करता है कि चीनकी आज़ाद फौज ने अमरीकी फ़ौजी योजनाओं के खोखलेपनको भी साबित कर दिया। एक बाहरी निरीक्षक का स्वॉग करता हुआ वह अपने दोस्तों और चेलों—कुओमिन्ताग के जनरलों की तीव्र आलोचना करते हुए वह कहता है,

> "उनकी! ज़बरदस्त फौजी पराजयों का तमाम कारण मेरी राय में दुनिया का सबसे ख़राब नेतृत्व कहा जा सकता है।"

तिस पर भी इस श्वेत-पत्र से ही साफ है कि चीन में अमरीका के संयुक्त फौजी सलाहकार दल के डाइरेक्टर की हैसियत से जनरल बार ही वह व्यक्ति था जिसने खुद न सिर्फ च्याग काई-शेक को "निजी और गुप्त आधार पर" सलाह-मशविरा दिया था; बल्कि, कुओमिन्तांग की तमाम बड़ी फ़ौजी कार्रवाइयों की योजना बनाने में भी उसने सीधे-सीधे हिस्सा लिया था।

चीनमें सशस्त्र सघर्ष के सम्बंध में अमरीकी प्रचार की करुण हास्य-जनित चीख-पुकार में, संयुक्त-राष्ट्रों के सामने कुओमिन्तांग की इस बनावटी "शिकायत" ने कि चीनके युद्धमें सोवियत सघने दखलन्दाज़ी की थी, चार-चाँद और जड़ दिये थे। लेकिन यह वकीलोंवाली क्षुद्र बहस इतनी स्पष्ट रूप से उकतानेवाली और बेहूदी थी कि अंग्रेज़-अमरीकियों का फरमाबरदार बहुमत भी जनरल असेम्बली के चौथे अधिवेशन मे उसका खुलेआम समर्थन करनेकी जोखिम उठानेका साहस न कर सका।

× × ×

शान्ति के ध्येय के लिये चीनी जनतंत्र की विजय का मूल्य केवल इसी बात में सीमित नहीं है कि उससे चीन में अमरीका की आक्रमणकारी नीति ने बहुत बुरी तरह से मात खाया है, यद्यपि यह चीज़ भी उन अन्तरराष्ट्रीय ताकतों की स्थिति को जो शांति चाहती हैं और जंगखोरों के खिलाफ हैं, काफी मज़बूत बनाती है। चीनी जनता के जनतंत्र की स्थापना—जो इस बातका प्रमाण है कि शान्ति का दृढ़ मोर्चा अब दक्षिण चीन सागर तक फैल गया है—साम्राज्यवादियों के पिछवाड़े को असंगठित कर देती है; दक्षिण-पूर्वी एशिया के देशों में जहाँ कि उत्पीड़ित जनता का राष्ट्रीय आज़ादी का संघर्ष दिनों-दिन बढ और फैल रहा है—साम्राज्यवादियों की स्थितिकी अस्थिरता को और बढ़ाती है; जंग-खोरों की पैंतरेबाजी की ताकत को सीमित बनाती है और इस तरह शांति के ध्येय-को क्रियात्मक रूप में मदद पहुँचाती है।

चीनी लोकशाहीकी विजयने न सिर्फ चीनी जनताके इतिहासमें, बल्कि साम्राज्यवादियों द्वारा उत्पीड़ित एशियाकी तमाम जनताके इतिहासमें एक नया अध्याय शुरू कर दिया है। एशियाकी जनता और तमाम औपनिवेशिक दुनियाकी जनताके राष्ट्रीय आज़ादीके संघर्षको उसने एक नये और उच्चत्तर धरातलपर उठा दिया है।

चीनी जनताके जनतंत्रके लाल झण्डेके ऊपर दमकते हुये सुनहरे सितारे एशिया के राष्ट्रीय आज़ादीके आन्दोलनों—और केवल एशियाके ही नहीं, बल्कि, तमाम औपनिवेशिक दुनियाके राष्ट्रीय-आज़ादीके आन्दोलनों —की विजयकी व्यूह-रचनामे एक नयी मंज़िलके प्रतीक हैं। अपनी स्वतंत्रताके लिये, साम्राज्यवादी गुलाम बनानेवालोंसे अपनी मुक्तिके लिये लड़ते देशोंमें, चीनी जनता की विजय की प्रतिक्रियाओं का होना लाज़िमी है। इसके परिणाम–स्वरूप साम्राज्यवादी प्रभुत्व का दायरा अनिवार्य रूप से और संकुचित हो जायेगा; उपनिवेशों और पराधीन देशों में कच्चे मालके श्रोतों, बाजारों और पूँजी लगानेके क्षेत्रों पर पूँजीवादी शोषकों द्वारा इजारेदारी कायम करनेके मौके और कम हो जायेंगे। इससे उपनिवेशों और अर्ध-उपनिवेशों के " देशी लोगों " का, साम्राज्यवादी फौजों में सैनिकों की तरह, नये विश्व-युद्ध में तोपों के चारे की तरह इस्तेमाल करने की जंग–खोरों की आशाये भी अंतिम रूप से चकनाचूर हो जायेंगी।

अपनी कम्युनिस्ट पार्टी के नायकत्व में लड़नेवाली चीनी जनता को अपने संघर्ष में अक्तूबर क्रान्ति के महान विचारों से, सोवियत-सघ की जनता द्वारा पूँजीवादी गुलामी के जुएको उतार फेंकने और समाजवाद का निर्माण करनेके उदाहरणसे प्रेरणा मिली थी। अब दूसरे देशोंकी जनता के लिये सोवियत-संघके उदाहरण की चुम्बक-शक्तिके साथ-साथ न सिर्फ मध्य और दक्षिण-पूर्वी योरप में बल्कि चीन ऐसे विशाल देशमे भी जनता की लोकशाहियों के निर्माण का अनुभव जुड़ जायेगा—ऐसे देशमें जिसकी दुनियामें सबसे बड़ी आबादी है और जो अभी हाल ही तक साम्राज्यवादी गुलामीमें घुट रहा था।

चीनी जनता के नेता माओ त्से-तुंग ने नये चीनकी राजनीतिक व्यवस्था का निम्न-प्रकार से बयान किया था :

"जनता के जनवादी अधिनायकत्व (डिक्टेटरशिप) का आधार मजदूर वर्ग, किसान वर्ग और शहरके निम्न-पूँजीवादी वर्ग (मध्य-वर्ग—अनु.) की मैत्री, और मुख्यतया मजदूर वर्ग और किसान वर्गकी मैत्री है, क्योंकि उनकी संख्या चीनकी आबादी का ८० से ९० फीसदी तक है। मुख्य रूपसे यह मजदूर वर्ग और किसानों की ताकत है जिसने साम्राज्यवाद और कुओमिन्तागके प्रतिक्रिया-वादी गुटका तख्ता उल्टा है। नये जनवादसे समाजवादकी तरफ आगे बढ़ना मुख्य रूपसे इन्हीं दो वर्गोंकी मैत्रीके ऊपर निर्भर करता है। जनताके जनतंत्र के अधिनायकत्व (डिक्टेटरशिप) को मजदूर वर्गके नेतृत्व में होना चाहिए, क्योंकि केवल मजदूर वर्ग ही सचमुच दूरदर्शी, न्यायपूर्ण, निःस्वार्थ और सुसंगत रूपसे क्रान्तिकारी वर्ग है। तमाम क्रान्तियों का इतिहास दिखलाता है कि अगर क्रान्तिका नेतृत्व मजदूर वर्ग द्वारा नहीं किया जाता तो क्रान्तिका असफल होना निश्चित है। लेकिन मजदूर वर्गके द्वारा नेतृत्व किये जाने पर क्रान्ति सफल होगी।"

उन दिशाएँ गुंजानेवाली विजयों को जिन्होंने चीन के रूप को बदल दिया है, चीन के मजदूर-वर्ग और उसकी पार्टी के नेतृत्व मे हासिल किया गया है। चीनी क्रान्ति की विजय का कारण यह है कि वह सर्वहारा वर्ग के नायकत्व में हो रही है और उसका पथ-निर्दशन लेनिन और स्तालिन की महान शिक्षायें करती हैं। तमाम देशोंके जनतंत्र और आजादी का महान रक्षक सोवियत-सघ की मौजूदगी का सहारा पाकर और बोल्शेविक पार्टी और सोवियत-जनता के क्रान्तिकारी सघर्ष के अनुभव से लगातार सीखते हुये चीनी लोकशाहीने साम्राज्यवादी हस्तक्षेपकारियों और उनके कुओमिन्तांगी एजेन्टों के ऊपर विजय हासिल की और उसके जरिये नये जनवादी चीनके समाजवादी विकास के मार्ग पर कदम-ब-कदम बढ़ने की परिस्थितियाँ पैदा कर दी।

चीनकी कम्युनिस्ट पार्टीके पथ निर्देशन मे मंजूर किये गये जनता की राजनीतिक सलाहकार समिति-के आम कार्यक्रममे क्रमश गहरी सामाजिक, आर्थिक और सास्कृतिक सुधारों की योजना की रूपरेखा दी गयी है। उनका मकसद चीन के सामन्ती पिछड़ेपन को और योरप और अमरीका की बड़ी पूँजीवादी ताकतो के एक शताब्दी से ज़्यादा के कु-शासन, शोषण, हिंसा और गारतगरी के तमाम अस-रोंको जल्दी से जल्दी खतम कर देना है और स्वतंत्र जनवादी चीनको एक शक्तिशाली और सम्पन्न राज्यमे बदल देना है।

इस कार्यक्रम मे निश्चित किया गया है कि चीनी जनता का जनतंत्र साम्राज्य-वादियो के तमाम विशेषाधिकारों को रद्द कर देगा, "नौकरशाही पूँजी" को, यानी

उन वड़े इजारेदारों की पूँजी को जिनका कुओमिन्तांग के नेताओं से बहुत नजदीकी सम्बंध था, जब्त कर लेगा और उसे राज्य की सम्पत्ति बना देगा; भूमिके स्वामित्व की सामंती और अर्ध-सामंती व्यवस्था को किसानों के स्वामित्व की व्यवस्था में बदल देगा; राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था को विकसित करेगा और चीन को खेतिहर देश से एक औद्योगिक देश में तबदील कर देगा। कार्यक्रम में कहा गया है कि नये चीन के पॉच आर्थिक भागो—राज्य के भाग, सहयोगी भाग, व्यक्तिगत-किसानी भाग, व्यक्तिगत पूंजीवादी दस्तकारी के भाग और राज्यके पूँजीवादी भाग—में से प्रमुख भूमिका राज्य के आर्थिक भाग की होगी जिसका रूप समाजवादी है। अट्ठाइसवी धारा कहती है कि "वे तमाम उद्योग जिनका देश के आर्थिक जीवनके लिये और जनताकी खुशहालीके लिये काफी महत्व है, राज्य की संयुक्त-शासन व्यवस्था के मातहत होगे।" इस चीज को बताकर कि सहयोगी भाग अर्ध-समाजवादी है, कार्यक्रम कहता है कि जनता की सरकार उसके विकास को बढ़ावा देगी, और निजी उद्योगो के विकास को भी जो "राष्ट्रीय भलाई और जनता की खुशहालीके लिये लाभदायक हैं" प्रोत्साहित करेगी।

इस कार्यक्रममें चीनकी आर्थिक व्यवस्थाको योजनानुसार विकसित करनेकी वात कही गयी है। औद्योगीकरण के आधार के रूप में योजना के अनुसार और व्यवस्थित रूप से भारी उधोग-धंधो की पुन.स्थापना करने और उनका विकास करने की आवश्यकता पर वह खास तौरसे जोर देता है।

३४ वी धारा में कहा गया है कि भूमि सुधार के, जिसका उद्देश्य ज़मीन को उसके जोतनेवालों को दे देना है, पूरे होने के बाद, जनता का जनतंत्र "स्वेच्छित आधार पर और सबके फायदे के सिद्धान्त के अनुसार एक दूसरे के काममें मदद देने, और सहयोग में उत्पादन करने के विभिन्न रूपों का धीरे धीरे इस्तेमाल करने में" किसानों का पथ प्रदर्शन करेगा।

इस तरह हम देखते हैं कि चीन के जनता के जनवादी राज्य के आर्थिक कार्य-क्रमका उद्देश्य देश का निरंतर विकास करना है जिससे कि वे आवश्यक परिस्थितियॉ तैयार हो जाएँ जिनके आधार पर समाजवादके निर्माण कार्य का श्रीगणेश किया जा सके।

अपनी पैनी दृष्टि से दूर तक देखकर कॉ. स्तालिन ने चीनी क्रान्ति के भविष्य-विकास के पथ को १९२६ में हीं स्पष्ट कर दिया था। उन्होंने कहा था कि, उस वक्त भी, असमान संधियों को रद्द करने की मॉग काफी नहीं थी, और उससे आगे वढना जरूरी है :

> "यह भी आवश्यक है कि रेलो के राष्ट्रीकरण को भविष्य के एक कार्य के रूप में सामने रखा जाये। यह आवश्यक है और उसकी तैयारी की जानी चाहिए।

"यह भी आवश्यक है कि सबसे महत्वपूर्ण मिलो और फैक्टरियोके राष्ट्रीकरण को भी भविष्यके एक कार्यके रूपमे सामने रखा जाये। इस सम्बंधमें पहला काम होगा उन मालिको के कल-कारखानो का राष्ट्रीकरण करना जो चीनी जनताके प्रति खास दुश्मनी और आक्रमणकारी-पनके लिये प्रसिद्ध हैं। इसके बाद चीनी क्रान्तिके भविष्य विकासके प्रश्नसे उसे जोड़ते हुए किसानो के सवाल के सम्बंध मे कार्रवाई करना आवश्यक होगा। मै सोचता हूँ कि अन्तिम रूपसे, जिस चीज़ की हमे तयारी करनी चाहिए वह किसानो के पक्षमे जमीदारियो का ज़ब्त कर लेना और जमीनका राष्ट्रीकरण करना है।"

चीन में विजयी जन-क्रान्ति के आर्थिक कार्यक्रम की मुख्य बातों को कॉ. स्तालिन ने आजसे बीस बरस पहले कहे गये इन शब्दो मे वैज्ञानिक ढंग से स्पष्ट कर दिया था।

चीन की जन-सरकार के सामने जो काम हैं वे सचमुच विराट हैं। यह एक विशाल देश को, जिसमें मनुष्य-जाति की एक-चौथाई से थोड़ी ही कम आबादी रहती है, समाजवादी विकास के मार्ग पर लगा देने का प्रश्न है—एक ऐसे देशको जिसकी सस्कृति प्राचीन है, लेकिन जिसने औपनिवेशिक परतंत्रता की जंजीरों को—जो उसकी उत्पादक-शक्तियों के विकास में एक भयानक रोड़ा थी—अभी ही तोड़ा है। लेकिन यह महान जनता जो विदेशी साम्राज्यवाद और सामन्ती-जमींदारी प्रतिक्रियाके जुएको उतार फेंकनेमें अपनी योग्यता साबित कर चुकी है, देशके आर्थिक पिछड़ेपनको खतम करनेके लिये और मेहनतकश जनताके हितोंमें अपनी उत्पादक-शक्तियोंका तेजीसे विकास करनेके लिये भी निस्सन्देह शक्ति बटोर सकेगी। वी० एम० मोलोतोफके शब्दोंमे मुख्य चीज यह है कि "महान चीनी जनताके सामने आज़ादी और सुखकी नयी राहे खुल गयी हैं।"

चीनी जनताका जनतंत्र शान्ति, जनवाद और समाजवादके पक्षके दूसरे देशोंके साथ घनिष्ठ बिरादराना सहयोग मे, और सबसे पहले, समाजवादके शक्तिशाली दुर्ग, सोवियत संघ के साथ घनिष्ठ मित्रतामें आगे बढ़नेके लिये दृढ़ सकल्प है।

चीनी जनता की राजनीतिक सलाहकार काउंसिलके कार्यक्रममें कहा गया है कि

"चीनी जनता का जनतंत्र दुनिया के तमाम शान्तिमय और स्वतंत्रता-प्रेमी देशों और जनताके साथ, और पहले और मुख्य रूपसे सोवियत सघ, जनताके जनतंत्र और तमाम उत्पीड़ित देशो के साथ कँधा मिलायेगा। वह अन्तरराष्ट्रीय शान्ति और जनवादके पक्षमें खड़ा होगा और साम्राज्यवादी आक्रमणके खिलाफ और दुनिया की स्थायी शान्ति की रक्षाके लिये संयुक्त रूप से सघर्ष करेगा।"

इसका मतलब है कि नये चीन के प्रगतिपूर्ण विकास के लिये बहुत ही माफिक परिस्थितियॉं होंगी; क्योंकि वह सम्पूर्ण साम्राज्यवाद-विरोधी पक्ष पर और उस पक्ष की नायक शक्ति, बलशाली सोवियत सघके समर्थन पर निर्भर कर सकेगा।

चीनी क्रान्तिकी इस बहुत बडी सुविधा की बात पर चीनी जनता के नेता, माओ जे-दुंग ने बारम्बार जोर दिया है। उन्होंने लिखा है,

> "अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में हम साम्राज्यवाद-विरोधी मोर्चे के अग हैं, जिस का नायकत्व समाजवादी सोवियत प्रजातंत्र सघ के हाथ में है; और हम उस मोर्चे से सच्ची मित्रतापूर्ण सहायता की आशा कर सकते हैं...स. सो. प्र. संघ की कम्युनिस्ट पार्टी हामारी सर्वश्रेष्ठ शिक्षक है जिससे हमें अवश्य सीखना चाहिए। अन्तरराष्ट्रीय और घरेलू परिस्थिति हमारे माफिक है।"

स्वतंत्र जनता के जनतंत्र की स्थापना करके और का. माओ जे-दुंग के नेतृत्वमें अपनी केन्द्रीय जन-सरकार कायम करके चीनी जनता ने एक महान ऐतिहासिक विजय हासिल की है। लेकिन सघर्ष अभी खतम नहीं हुआ। कुओमिन्तांगी प्रतिक्रियावादियों से चीन की पूरी भूमि अभी भी पाक नहीं हुई है। किन्तु इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि वे फॉरमोसासे भी खदेड दिये जायेगे।

× × × ×

सोवियत सरकारने ही, नयी चीनी जनता की सच्ची सरकार को सबसे पहले मानता दी और चीनी जनता के जनतंत्र के साथ राजनीतिक सम्बंध कायम किये।

इसने, और चीनके और जनता के दूसरे जनवादी राज्यों के बीच राजनीतिक सम्बंधों की स्थापना ने चीनी जनतंत्र की अन्तरराष्ट्रीय स्थिति को काफी मजबूत बना दिया है।

चीनकी नयी जन-सरकार को मानता देनेके प्रश्न पर साम्राज्यवादी पक्ष में आपसी मतभेदके कुछ चिन्ह नजर आ रहे हैं। वाशिंगटनको इस बातसे जबरदस्त नाराजी हुई है कि ब्रिटेन और उससे सम्बंधित देशो का गुट अमरीका के राज्य विभाग की नीतिके खिलाफ गया और उसने ऐलान कर दिया कि चीनी जनताके जनतंत्र के साथ साधारण राजनीतिक सम्बंध स्थापित करने के लिये वह तैयार है। इससे वास्तविकताओ की शक्ति साबित होती है, जिसे कि प्रतिक्रियावादी से प्रतिक्रियावादी पूँजीवादी राजनीतिज्ञो को भी झख मार कर माननें के लिये मजबूर होना पडता है; क्योकि चीनी जनतंत्र की विजय एक ऐसी वास्तविकता है जिससे इनकार नहीं किया जा सकता।

साथ ही साथ चीनी जनताके जनतंत्रको ब्रिटेन और उसके पिछलगुए देशों द्वारा मानता दे दिया जाना अग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियोंके आपसी अन्तरविरोधोंको भी प्रतिबिम्बित करता है। ये विरोध सब जगह प्रकट होते हैं जिसका सूदूर पूर्व भी अपवाद नही है। चीनमें अमरीकी नीतिकी शर्मनाक असफलताका फायदा ब्रिटेनके कुछ हल्के अपने हितोके लिये निस्सन्देह उठाना चाहेंगे।

न किसीको उग्र जबरदस्त उत्साहकी भावनाके असरको ही नजर-अन्दाज करना चाहिये जिसे चीनी जनतंत्रकी विजयने हिन्दुस्तान, पाकिस्तान और बर्मा की विशाल जनता के अन्दर जगा दिया है। इन देशो के शासक, जो अपने देशवासियो के हितो के खिलाफ साम्राज्यवादियों के तलुए सहलानेकी अपनी नीतिको जनता की दृष्टिमें सही साबित करने के लिये बुरी तरह से चिन्तित हैं, चीनी जनता के प्रति करोडो लोगो के मैत्री और सहानुभूति के अपने आप होनेवाले प्रदर्शनो की अवहेलना नहीं कर सकते थे।

जनता के जनवादी चीन के साथ कई पूंजीवादी देशो द्वारा, जिनमे ब्रिटेन भी शामिल है, राजनीतिक सम्बंधोंका स्थापित किया जाना सुदूर पूर्व मे अमरीका की आक्रमणकारी नीति की असफलताको और भी अधिक स्पष्टता से जाहिर कर देता है। स्वभावत इससे वाशिंगटन मे घबराहट फैल रही है और अमरीका के विभिन्न क्षेत्रोंमें होनेवाली राज्य विभाग की आलोचना में कटुता बढ़ रही है।

अगर श्वेत-पत्रका विश्वास किया जाये तो एक वर्ष पहले, ३ जनवरी १९४९ को अमरीकी राजदूत स्टुअर्टने नानकिंग से अपने एक सदेश मे कहा था, कि "कम्युनिटो के जोरदार उद्देश्य के और अपने खुद की कमियो के" कारण "कुछ भी हो कुओमिंताग की हार लाजिमी है।" किन्तु अगर भविष्य के बारेमें अमरीका की कूटनीतिका पूरे एक साल भर पहले यह अनुमान था तो हम इस चीजको कैसे साफ कर सकते हैं कि अमरीका का राज्य विभाग अब भी च्याग काई-शेक के "शासन" से चिपका हुआ है और राष्ट्र-संघ में चीन का "प्रतिनिधित्व" करने के उसके हास्यास्पद दावे का समर्थन करता है? क्या इससे यह नहीं जाहिर होता कि अमरीका के शासक—जो चीन के ऊपर लगायी गयी अपनी राजनीतिक और रणनीति सम्बंधी आशाओं के पूर्णरूपसे चौपट हो जानेकी बातको माननेसे इनकार कर रहे हैं—वास्तविकताकी सारी समझ खो बैठे हैं?

स्पष्ट है कि जंगखोरो को अपने भ्रमो को छोड़ना कठिन लग रहा है। उन्हे अब भी आशा है कि वे चीनी जनता के नियमित प्रतिनिधियोंको राष्ट्रसघ मे उस जगह को लेने से रोक देंगे, जिस पर उनका न्यायपूर्ण अधिकार है।

जनरल असेम्बली (आम सभा) के अभी हाल के चौथे अधिवेशन मे सोवियत के प्रतिनिधि-मण्डल ने सरकारी तौरसे संयुक्त राष्ट्रों को सूचित किया कि चीनी जनता के जनतंत्र के वैदेशिक मंत्री, चाओ एन-लाई के उस वक्तव्य का जिसमे उन्होने ऐलान किया था कि कुओमिन्तागी "प्रतिनिधि-मण्डल" को चीन का प्रतिनिधित्व करने का या चीनी जनता की ओर से बोलने का कोई अधिकार नहीं है, वह समर्थन करता है।

राष्ट्र सघके चार्टर के मुताबिक एक बड़ी ताकत होनेके नाते चीन सुरक्षा समिति के पाच स्थायी सदस्यों में से एक है। चीनी जनता के जनतंत्र के कार्यक्रम का वैदेशिक नीति वाला भाग कहता है कि उसका सिद्धान्त है,

" देशकी आजादी स्वतंत्रता, भूमि की अखण्डता और सर्वोच्च सत्ता की हिफाजत करना, तमाम देशोंकी जनता के बीच सार्वभौमिक स्थायी शान्ति और मैत्रीपूर्ण सहयोग का समर्थन करना, और आक्रमण और युद्ध की साम्राज्यवादी नीति का मुकाबला करना।"

यह अन्तरराष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा के हितों के पूर्णरूपसे अनुरूप है और संयुक्त राष्ट्रोंके चार्टर के साथ पूर्णरूपसे मेल खाता है। चीनी जनता के जनतंत्र की केन्द्रीय जन-सरकार के पास यह घोषणा करने के लिये हर कारण था और जैसा कि उसने ८ जनवरी के अपने तार में घोषणा की कि वह

" संयुक्त राष्ट्रों की सुरक्षा समिति के अन्दर चीनी कुओमिन्तांग के प्रतिनिधियों की मौजूदगी को गैर-कानूनी मानता है" और माँग करता है " कि उन प्रतिनिधियों को सुरक्षा समिति से निकाल बाहर किया जाये।"

सुरक्षा समिति में सिर्फ सच्चे, जनताके जनवादी चीन का ही प्रतिनिधित्व होना चाहिये और होगा।

चीनी जनताके जनतंत्र का उदय अन्तरराष्ट्रीय दुनिया में एक शक्तिशाली नयी ताकत है जो जंगखोरों का मुकाबला करनेवाली शक्तियों को और भी अधिक शक्ति देती है। और जो सार्वभौमिक शान्ति को दृढ़ बनाने में काफी मदद देगी।

* * *

२१ दिसम्बर १९४९ जनता की स्मृति में उस दृढ़ सहकारिता के प्रदर्शन के लिये अमर रहेगा जिसके साथ तमाम देशो के, तमाम नस्लों और जातियों के करोड़ों मेहनतकश लोग मनुष्यजाति के महान प्रतिभाशाली व्यक्ति का. स्तालिन के चारों ओर सगठित हुए हैं। उस दिन दुनिया की तमाम भाषाओं में उस आदमी के प्रति आदर, प्यार और कृतज्ञता के शब्द प्रकट किये गये जिसने लेनिन के साथ मिलकर मेहनतकश जनता की आजादी का मार्ग आलोकित किया, समाजवाद के पक्ष को सैद्धान्तिक रूपसे साबित किया और मनुष्य-जातिके इस भव्य स्वप्न को वास्तविक बना दिया।

उस स्मरणीय दिन के अवसर पर चीनी जनता के नेता और उसकी कम्युनिस्ट पार्टी के प्रमुख माओ जे-दुंगने बधाई के अपने भाषण में उस अभूतपूर्व सहकारिता का जिक्र किया था जो दुनिया के मजदूर वर्गने कॉ. स्तालिन के पथ-प्रदर्शन में हासिल की है। माओ जे-दुंगने कहा,

" कॉ० स्तालिन तमाम दुनिया की जनता के शिक्षक और मित्र हैं, वह चीनी जनता के शिक्षक और मित्र हैं।"

चीन की गौरवशाली कम्युनिस्ट पार्टी अपनेको महान विभूतियों, लेनिन और स्तालिन का योग्य अनुयायी साबित कर चुकी है।

चीनी लोकशाहीने १९४९ में अपनी ऐतिहासिक विजय को लेनिन और स्तालिन के झण्डे के नीचे हासिल किया है। इसमें जरा भी शक नहीं हो सकता कि भविष्य में इसी झण्डे के नीचे और भी अनेक विजयें हासिल की जायेंगी।

[**न्यू टाइम्स** के १८ जनवरी १९५० के अंक (नं० ३) से]

सोवियत-चीन सन्धि अमर हो !

(सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) की केन्द्रीय कमिटी के मुखपत्र "प्रावदा" (दैनिक) के १६ फरवरी १९५० के अंक ४७ (११,५१९) का मुख्य सम्पादकीय लेख)

सोवियत संघ और चीनी जनता के जनतंत्र के बीच मित्रता, सहयोग और परस्पर सहायता की सन्धि और चीनी चागचुन रेलवे, पोर्ट आर्थर और डैलनी के बारेमें समझौता और सोवियत सरकार द्वारा चीनी जनता के जनतंत्र की सरकारको लम्बे समय के लिये आर्थिक कर्जा देनेके बारेमें समझौता भी—जिन पर क्रेमलिनमें १४ फ़रवरी को दस्तख़त हुए और जो कल **प्रावदा** में छपे थे—सचमुच में भारी ऐतिहासिक महत्व की दस्तावेज़ें हैं। वे सोवियत संघ और चीन की जनता के बीच की मित्रता के विकास और मज़बूती में एक नये युग की, अन्तरराष्ट्रीय सम्बंधों के विकास मे एक नयी मंज़िल की शुरुआत करते हैं; और सारी दुनिया में शान्ति और जनवाद को बल पहुँचाने के ध्येय के लिये वे भारी मदद हैं।

ये दस्तावेज़े मॉस्को में हुई उन बातचीतों का नतीजा हैं जिनमें सोवियत संघ की तरफ़ से स. सो. प्र. सं. के मंत्रिमण्डल के चेयरमैन **कॉमरेड जोसिफ़ स्तालिन** और स. सो. प्र. सं. के वैदेशिक मामलात के मंत्री **आन्द्रिए विशिंस्की** ने और चीन की तरफ़ से चीनी जनता के जनतंत्र की केन्द्रीय जन-सरकार के चेयरमैन **कॉमरेड माओ ज़े-दुंग** और चीनी जनता के जनतंत्र के राजकीय शासन मण्डल के प्रधान मंत्री तथा वैदेशिक मामलात के मंत्री **चाओ एन लाई** ने भाग लिया।

बातचीतोंके परिणाम-स्वरूप और मित्रता, सहयोग और परस्पर सहायता की सन्धि के और चीनी चांगचुन रेलवे के बारेमें समझौते के भी होने के सिलसिले में सोवियत संघ और चीनी जनताके जनतंत्र के वैदेशिक मामलात के मंत्रियों ने पत्रों की अदला-बदली की। उनसे यह तै हुआ कि १४ अगस्त १९४५ को हुई सोवियत-चीनी सन्धि और चीनी चांगचुन रेलवे के बारे में समझौतेका अब मूल्य नहीं रहा है। उनसे यह भी तै हुआ कि १९४५ के आम मतदान के फल स्वरूप कायम होनेवाले मंगोली

जनता के जनतंत्र की स्वतंत्र हस्ती की पूर्ण सुरक्षा की बात को और चीनी जनता के जनतंत्र और मंगोली जनता के जनतंत्र के बीच राजनीतिक सम्बंधों की स्थापना को दोनों सरकारें मंजूरी देती हैं।

* * *

दस्तखत की जाने वाली इन दस्तावेजों के बहुत बड़े महत्वको बढ़ाकर आँकना मुश्किल है जो स. सो. प्र. स. और चीनके बीच ऐतिहासिक सम्बंधोंको मजबूत करती हैं और गहरी तथा दृढ़ मित्रता को और आगे बढ़ाती हैं। ये दस्तावेजों सोवियत संघ द्वारा बरती जानेवाली स्तालिनकी वैदेशिक नीतिकी महानताका एकदम स्पष्ट रूप हैं। साथ ही साथ ये दस्तावेजों उन बुनियादी परिवर्तनों को भी प्रतिबिम्बित करती हैं जो सुदूरपूर्व की परिस्थिति में १९४५ के बाद हुए हैं।

चीनी जनताके साथ, सामन्ती और साम्राज्यवादी उत्पीड़नसे मुक्ति और राष्ट्रीय आजादीके लिये डटकर लड़ी जानेवाली उनकी लड़ाईके साथ सोवियत जनताने हमेशा गहरी और अपरिवर्तित सहानुभूति रखी है। १९२५ में ही कॉमरेड स्तालिनने कहा था:

> "चीनमें क्रान्तिकारी आन्दोलन की ताकतें अकूत हैं। अभी उन्होंने अपने को अच्छी तरह से बाअसर नहीं बनाया है। लेकिन भविष्य में वे अपने को बाअसर बनायेंगी। पूरब और पश्चिम के जो शासक इन ताकतों को नहीं देखते और उनको पूरा महत्व नहीं देते वे इससे नुकसान उठायेंगे।... यहाँ पर सचाई और न्याय पूरी तरह से चीनी क्रान्तिके पक्ष में है। यही कारण है कि चीनी जनना को साम्राज्यवादी जुए से मुक्त करने और चीन को एक राज्य में संगठित करने की उसकी लड़ाई में चीनी क्रान्ति के साथ हम सहानुभूति रखते हैं और सहानुभूति रखेंगे।"

* * *

चीन की विशाल जनता ने सोवियत सघ को हमेशा अपना सच्चा और पक्का दोस्त माना है। महान अक्तूबर क्रान्ति ने, जो मानवजाति के विश्व इतिहास में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन का प्रतीक थी, चीन के इतिहास में भी एक नयी मंजिल की शुरुआत की थी। औपनिवेशिक और साम्राज्यवादी गुलामी की जंजीरों से उसकी मुक्ति की लड़ाई में चीन की मेहनतकश जनता को लेनिन और स्तालिन के महान और अमर विचारों ने प्रेरित किया।

चीन की जनता ने देखा कि सोवियत सघ का यह रुख चीन की तरफ पूँजीवादी राज्यों के रुख से क्रान्तिकारी और बुनियादी रूप से भिन्न है। अपने जीवन के शुरू के दिनोंसे ही सोवियत सरकार ने ऐलान किया कि "जापान, चीन और पुराने सहयोगियों के साथ की गयी तमाम गुप्त संधियाँ खतम कर दी गयी हैं—वे संधियाँ जिनके जरिये जारशाही सरकारने सहयोगियोंके साथ मिलकर पूरबकी जनताको और खास तौरसे चीनी

जनताको हिंसा और घूसके जरिये गुलाम बनाया था। ..." (चीनी जनता और दक्षिणी और उत्तरी चीनकी सरकारोंको जनताके कमिसारोंके मण्डलके २० अगस्त १९१९ के पत्र से)

चीनके सबसे अच्छे लोगोंने, सच्चे चीनी देशभक्तोंने साफ-साफ समझा कि सिर्फ महान सोवियत जनताके साथ मित्रता और सहयोगमें ही चीनकी जनता अपनी आज़ादी और स्वाधीनता हासिल कर सकती है। ११ मार्च १९२५ को स. सो. प्र. सं. की केन्द्रीय कार्य समितिके नाम अपनी मृत्यु-शैय्या से भेजे पत्र में सन यात-सेन ने लिखा था :

> "प्यारे कॉमरेड्स, तुमसे विदा लेते हुए मै यह आशा प्रगट करता हूँ कि वह दिन जल्दी ही आयेगा जब स. सो. प्र सं. शक्तिशाली और स्वतंत्र चीन का एक मित्र और एक सहयोगी के रूपमें स्वागत करेगा और दुनियाकी उत्पीड़ित जनताकी मुक्ति के महान सघर्ष मे दोनों सहयोगी हाथ मे हाथ लेकर विजय की तरफ़ बढ़ेंगे"

और चीनी जनता की मुक्ति का दिन आ गया है। चीनी जनता ने एक ऐतिहासिक जीत हासिल की है, सड़े हुए कुओमिन्तागी शासन को पूरी तरह खतम किया है और साम्राज्यवादी उत्पीड़न की जंजीरों को हटाकर फेंक दिया है। चीन की जनता के नेता माओ जे-दुग की अगुवाई मे चलनेवाली चीन की शानदार कम्युनिस्ट पार्टी राष्ट्रीय स्वाधीनता के संग्राम की और चीनी जनता की ऐतिहासिक विजयों की प्रेरक और संगठन-कर्त्ता रही है।

* * *

चीनी जनता की निर्णायक विजय जर्मन फासिज़म और जापानी साम्राज्यवाद की उस हारके परिणाम-स्वरूप संभव हुई जो महान स्तालिन की अगुआई मे चलनेवाले सोवियत सघकी निर्णायक भूमिकाके कारण हुई थी। चीन की जनता अपनी किस्मत की स्वामी बन गयी है और उसने शान्ति, जनवाद और समाजवाद के शिविर मे एक इज्जतदार स्थान ले लिया है।

> माओ जे-दुंग ने कहा है— "चीन और सोवियत सघ की महान जनताके बीच एक गहरी और स्थायी मित्रता मौजूद है।"

चीनी जनताने अपने इतिहास मे पहली बार सच्ची आज़ादी, स्वतंत्रता और राष्ट्रीय स्वाधीनता हासिल की है। चीनी जनता ने एक नये, जनता के जनवादी चीन का निर्माण किया है। यही वजह है कि समाजवादी सोवियत प्रजातंत्र संघ और चीनी जनता के जनतंत्र के बीच हुई सन्धि और समझौतों का विशेष महत्व हो गया है। अब से स. सो. प्र. सं. की और चीनकी जनता के बीच मित्रता एक नयी बुनियाद पर आधारित है जो चट्टान की तरह दृढ और स्थायी है।

* * *

हमलावर और लूट की कोशिशें सोवियत संघ और चीनी जनता के जनतंत्र, दोनों के विपरीत हैं। उनकी नीति शान्ति और जनता की सुरक्षा के लिये लड़ने की है। सोवियत संघ और चीनी जनता के जनतंत्र के बीच मित्रता और सहयोग को और विकसित करके स्थायी शान्ति को मजबूत बनाने की यह इच्छा १४ फ़रवरी को हुई मित्रता, सहयोग और परस्पर सहायता की सन्धि में व्याप्त हैं; वह सन्धिकी हर धारामें व्याप्त है। सन्धिका ख़ास काम जापान द्वारा या जापानके साथ हमलेकी कार्रवाइयोंमें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे एक होनेवाले किसी दूसरे राज्य द्वारा हमलेकी कार्रवाईकी पुनरावृत्ति और शान्तिका किसी भी रूपमें भंग किया जाना रोकना है।

आज जब अमरीकी कब्ज़ा करनेवाले आधिकारियों की छत्रछाया के नीचे जापान में प्रतिक्रियावाद ज़्यादा से ज़्यादा खुले रूप में अपना सिर उठा रहा है और उसने अपने बदला लेने के इरादोंका खुलेआम ऐलान शुरू भी कर दिया है; आज जब जापान को स. सो. प्र. स. और जनता के जनवादी चीनके ख़िलाफ़ भौगालिक दृष्टि से महत्वपूर्ण अपनी एक चौकीमें बदलने के लिये अमरीकी साम्राज्यवाद अपनी तमाम कोशिशें कर रहा है--तब यह साबित करने की ज़रूरत नहीं है कि समस्या कितनी वास्तविक है। यही वजह है कि अमरीका की शासक मण्डली जापान के साथ शान्ति सन्धि होने में ढेरी कर रही है, और ऐसी अलग सन्धि करने के तरीके ढूंढ रही है जिससे अपने कब्जे को अनिश्चित समय तक लम्बा खींचना और अपनी फ़ौज को ज़्यादा समय तक रखना उसके लिये संभव होगा।

* * *

नयी सन्धि के ज़रिये सोवियत संघ और चीनी जनता के जनतंत्र ने प्रतिज्ञा की है कि जितनी जल्दी सभव हो सकेगा, उतनी जल्दी वे दूसरे विश्व-युद्ध में सहयोगी अन्य देशों के साथ मिल कर जापान के साथ शान्ति सन्धि करेंगे।

समझौता करने वाले दोनों पक्षों ने फैसला किया है कि शान्ति और सुरक्षा को मजबूत करने के लिये किये जानेवाले तमाम अन्तरराष्ट्रीय कामों में वे सच्चे सहयोग की भावना के साथ हिस्सा लेंगे। उन्होंने फ़ैसला किया है कि सोवियत संघ और चीन के समान हितों पर असर डालने वाले तमाम ख़ास अन्तरराष्ट्रीय मामलों के बारे में वे एक दूसरे से सलाह-मशविरा करेंगे और इसमें वे शान्ति और सार्वत्रिक सुरक्षा को मजबूत बनाने के हितों से संचालित होंगे।

मित्रता, सहयोग और परस्पर सहायता की सन्धिने समानता के सिद्धान्तों के अनुसार तथा आपसी हितों और राजकीय स्वाधीनता और इलाके की सुरक्षा और दूसरे देश के मामलों मे गैर-दखलन्दाजी के प्रति आपसी आदर के भी साथ स. सो. प्र. स. और चीन के बीच आर्थिक और सास्कृतिक सम्बंधों को बढ़ाने और मज़बूत बनाने का विचार किया है।

सन्धि ३० बरस के काल के लिये हुई है।

* * *

१९४५ के बाद से सुदूर पूर्व की परिस्थितिमें जो बुनियादी परिवर्तन हो गये हैं : यानी साम्राज्यवादी जापान का मात खाना, प्रतिक्रियावादी कुओमिन्तांग सरकारका तख़्ता उल्टा जाना, चीन में जनता के जनतंत्र का ऐलान और माओ जे-दुंग के नायकत्वमें चीन में जनता की सरकार का बनना--ऐसी सरकार का जो सोवियत सघके साथ दोस्ती बरतती है—इनने नयी परिस्थितियाँ कायम कर दी हैं जो चीनी चांगचुन रेलवे, पोर्ट आर्थर और डैलनीके बारेमें नया दृष्टिकोण संभव बनाती हैं। इस सवालपर हुए नये समझौतेमें यह तै हुआ है कि चीनी चागचुन रेलवेके संयुक्त शासनमें अपने तमाम अधिकारोंको और उसकी तमाम सम्पत्तिको सोवियत सरकार बिना किसी हरजाने के चीनी जनताके जनतंत्रकी सरकारको हस्तांतरित करती है।

यह बदली जापानके साथ शान्ति सन्धि के होनेके फौरनही बाद—लेकिन १९५२ के अन्तके पहले—कर दी जायगी।

चीनी चांगचुन रेलवे के बारे में समझौता सोवियत संघ की स्तालिनी वैदेशिक नीति के उच्च सिद्धान्तों और सुसंगतता को, उसकी अद्वितीय महानता को साफ़ तरीक़े से ज़ाहिर करती है। चीनी चांगचुन रेलवे के बारे में समझौता चीनी जनता की राष्ट्रीय स्वाधीनता और राष्ट्रीय अधिकारों तथा हितों के लिये सोवियत संघ के आदर को प्रदर्शित करता है।

* * *

चीनी जनता की राष्ट्रीय स्वाधीनता और राष्ट्रीय अधिकारों तथा हितों के लिये ऊँचे आदर की यही भावना समझौते की उस धारा में भी व्याप्त है जिसने तै किया है की संयुक्त रूप से इस्तेमाल किये जाने वाले पोर्ट आर्थर के जहाज़ी अड्डे से सोवियत फौजें वापस बुलायी जायेंगी और इस क्षेत्र की इमारतों को चीनी जनता के जनतंत्र की सरकार के हवाले किया जायगा। सोवियत फौजों की वापसी और इमारतों का तबादला जापान के साथ शान्ति-सन्धि होने के फ़ौरन बाद—लेकिन १९५० के अन्त के पहले ही—किया जायगा। समझौते में तै किया गया है कि १९४५ के बाद से स. सो. प्र. सं. द्वारा क़िले-बन्दियों को फिर से खड़ा करने और बनाने में सोवियत संघ ने जो खर्चा किया है उसे चीनी जनता के जनतंत्र की सरकार वापस करेगी।

पोर्ट आर्थर के बारेमें समझौता बताता है कि अगर समझौता करनेवाले पक्षोंमें से किसी एक पर जापान या उससे जुड़ने वाले किसी राज्य द्वारा हमला होता है और इसके परिणाम-स्वरूप वह लड़ाईमें शामिल हो जाता है तो ऐसी हालत में चीनी जनता के जनतंत्र की सरकार के प्रस्ताव पर और सोवियत सरकार की रज़ामन्दी से चीन और सोवियत संघ पोर्ट आर्थरके जहाज़ी अड्डेको हमलावरके खिलाफ संयुक्त फ़ौजी कार्रवाइयाँ चलाने के लिये संयुक्त रूप से इस्तेमाल कर सकते हैं।

डैलनी के बन्दरगाह के सवाल पर जापान के साथ शांति सन्धि होने के बाद फिर विचार किया जायगा।

* * *

चीनी जनता के जनतंत्र को सोवियत संघ द्वारा लम्बे समय के लिये कर्जा देने के सवाल पर समझौतेका आधार समझौता करनेवाले दोनों पक्षोंका यह इरादा है कि वे स. सो. प्र. सं. और चीन की जनता के बीच आर्थिक और सांस्कृतिक सम्बंध मजबूत करेंगे; और यह इच्छा है कि वे एक दूसरे को हर संभव आर्थिक सहायता देंगे। इस समझौतेकी हर धारा इस बातकी गवाही देती है कि लम्बी फौजी कार्रवाइयों के कारण बरबाद हुई देश की आर्थिक व्यवस्था को पुनर्स्थापित और विकसित करनेमें चीनकी जनताको हर सभव सहायता देनेके लिये सोवियत जनतामें सचमुच भाईचारापूर्ण तत्परता है। चीनी जनताके प्रति उदारता और भाईचारेकी यही भावना सोवियत सरकारके इस फैसलेमें व्याप्त है कि सोवियत आर्थिक सगठनों द्वारा मंचूरिया मे जापानी मालिकोंसे ली गयी सम्पत्तिको वह बिना हरजानेके चीनी जनताके जनतंत्रकी सरकारके हवाले कर देगी। वह सोवियत सरकार के इस फ़ैसले में भी व्याप्त है कि पेकिंग की पुरानी फौजी छावनी की तमाम इमारतों को वह चीनी जनता के जनतंत्र की सरकार को दे देगी।

यह बात समझना मुश्किल नहीं है कि १४ फरवरी को जिन दस्तावेज़ों पर दस्तख़त हुए वे सोविवत संघ और चीनी जनता के जनतंत्र के बारे में महत्वपूर्ण राजनीतिक और आर्थिक सवालों के विशाल पैमाने को अपने में समेटे हैं। दस्तावेज़ों की विषय-वस्तु इस बात को एकदम साफ़-साफ़ बताती है कि सोवियत–चीनी बातचीत के दौरान में जिन सवालों पर बहस हुई वे सची मित्रता और गहरी परस्पर समझ की भावना के साथ हल हुए। हम पूरे विश्वास के साथ कह सकते हैं कि सोवियत चीनी सम्बंधों के विकास में एक नया युग कायम हो गया है, ऐसा युग जिसका चिन्ह दोनों देशों की महान जनता के बीच मित्रता और सहयोग का और मजबूत होना है। साथ ही साथ सहयोग और मित्रता के आधार पर स. सो. प्र. सं. और चीन की जनता के बीच व्यापक और घनिष्ट सहयोग से शान्ति और सार्वत्रिक सुरक्षा के लिये संघर्ष करनेवाले पक्ष को चौतरफा बल भी पहुँचेगा।

ऊपर बतायी गयी सन्धि और समझौते का सोवियत जनता सोवियत संघ और चीनी जनता के जनतंत्र के बीच मित्रता के सुदृढ़ होने के एक नये सबूत के रूप में गहरे सन्तोष के साथ स्वागत करेगी। शान्ति, जनवाद और प्रगति के तमाम दोस्त भी सोवियत-चीनी मित्रता की मजबूती का इतने ही संतोष के साथ स्वागत करेंगे।

सोवियत संघ और चीनी जनता के जनतंत्र की जनता के बीच एका और मित्रता मज़बूत हो और सदा-सर्वदा कायम रहे।

Regd. No. B5607

मार्क्सवादी-लेनिनवादी साहित्य

मार्क्स-एंगेल्स

१. कम्युनिस्ट घोषणापत्र	१ रु. १२ आ.
२. मजूरी और पूँजी	८ आ.
३. समाजवादः काल्पनिक और वैज्ञानिक	८ आ.

लेनिन

४ कार्ल मार्क्स और उनके सिद्धान्त	१४ आ
५ दो कार्य-नीतियाँ	२ रु. ४ आ.
६. १९०५ की क्रान्ति	१२ आ.
७. मजदूर क्रान्ति और गद्दार काट्स्की	१ रु.
८. गाँव के गरीबों से	१ रु
९. साम्राज्यवाद, पूँजीवाद की चरम अवस्था	१ रु. ४ आ.
१०. धर्म पर लेनिन के विचार	१ रु. ४ आ

स्तालिन

११. सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी का इतिहास	६ रु. ४ आ.
१२. लेनिनवाद के मूल सिद्धान्त	१ रु.
१३. लेनिनवाद की समस्याएँ	१२ आ.
१४. अक्तूबर क्रान्ति और रूसी कम्युनिस्टों के काम	४ आ.
१५. समाजवादी सोवियत संघ का शासन विधान	१ रु.

कम्युनिस्ट इण्टरनेशनल

१६, कम्युनिस्ट अन्तरराष्ट्रीय का कार्य-क्रम	१० आ.
१७ कम्युनिस्ट पार्टी के संगठन के सिद्धान्त	६ आ.

हिन्दुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टी

१८ राजनीतिक प्रस्ताव	१ रु.
१९. जनता के जनतंत्र और समाजवाद के लिये संघर्ष	१२ आ.
२०. जनवादी क्रान्ति और किसानों का सवाल	१० आ.
२१. हम क्रान्ति के किस दौर में हैं ?	२ आ.

मिलने का पता — डाक खर्च अलग

पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, लि.

१९० बी, खेतवाडी मेन रोड, बम्बई ४.

इस अंक में—

इन्फर्मेशन ब्यूरो के मुखपत्र के सम्पादकीय लेख "उपनिवेशों और पराधीन देशों में राष्ट्रीय आज़ादी के आन्दोलन का शक्तिशाली बढ़ाव" पर

सम्पादक-मण्डल का वक्तव्य

उपनिवेशों और पराधीन देशों में राष्ट्रीय आज़ादी के आन्दोलन का शक्तिशाली बढ़ाव

हिन्दुस्तानी जनता के मुक्ति-संघर्ष की नयी मंज़िल

चीनी क्रान्ति और स्तालिन

१

एकमात्र मार्क्सवादी-लेनिनवादी हिन्दी मासिक

जनवादी में प्रकाशित लेख

(अंक नं १ से नं १२ तक)

अंक १ फरवरी, ४९

अंक २ मई, ४९

अंक ३ जून, ४९

अंक ४ जुलाई, ४९

अंक ५ अगस्त, ४९

अंक ६ सितम्बर, ४९

अंक ७ अक्तूबर, ४९

(शेष कवर के ३ रे पृष्ठ पर)

अप्रैल, १९५० अंक १ [१३] मूल्य ८ आना

चन्दा

वार्षिक ५ रु छमाही ३ रु. तिमाही १ रु. ८ आ

दुनिया के मज़दूरो एक हो !

इन्फार्मेशन ब्यूरोके मुखपत्रके सम्पादकीय लेख "उपनिवेशों और पराधीन देशोंमें राष्ट्रीय आज़ादीके आन्दोलनका शक्तिशाली बढ़ाव" पर

सम्पादक-मण्डलका वक्तव्य

कम्युनिस्ट और मजदूर (वर्कर) पार्टियोंके इनफार्मेशन व्यूरो (सूचना-केन्द्र) के मुखपत्र "**फॉर ए लास्टिंग पीस, फॉर ए पीपुल्स डेमोक्रेसी**" की संख्या ४ (६४), तारीख २७ जनवरी, १९५० के अंकमें प्रकाशित "**औपनिवेशिक और पराधीन देशोंमें राष्ट्रीय आज़ादीके आन्दोलनका शक्तिशाली बढ़ाव**" शीर्षक सपादकीय लेख राष्ट्रीय आजादी और जनताके जनतंत्रके लिये हिन्दुस्तानी जनताके सघर्षको एक शानदार देन है।

हिन्दुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टीके लिये यह लेख सही नेतृत्व है और सामयिक चेतावनी है कि अपनी वास्तविक कामयाबियोंमें वह उन क्रांतिकारी सघर्षोंके बढ़ते हुये वेग और फैलावकी विशाल सभावनाओसे **पिछड़ रही है** जिन्हें राष्ट्रीय आजादी के लिये और उपनिवेशी गुलामीके खिलाफ हिन्दुस्तानी जनता अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियोंके और उनके हिन्दुस्तानी सहयोगियोंके विरोधमें चला रही है।

> "मौजूदा अन्तरराष्ट्रीय परिस्थितिकी सबसे बड़ी विशेषताओंमे एक है," उस सम्पादकीय लेखमें कहा गया है, "उपनिवेशी और गुलाम देशोंकी जनताके क्रांतिकारी सघर्षका अभूतपूर्व विस्तार। बहुतसे देशोंमें वह संघर्ष हथियारबन्द रूप धारण कर चुका है, पूरबके देशोंके दसियो करोड मेहनतकश लोग जिसमें हिस्सा ले रहे हैं।"

जैसा कि सम्पादकीय लेखमे बतलाया गया है, उपनिवेशों और अर्ध-उपनिवेशोंके लड़ाईके बादके क्रांतिकारी स्वाधीनता-सघर्षका वह शक्तिशाली बढ़ाव, जिसने विश्व-साम्राज्यवादकी पूरी व्यवस्थाकी बुनियाद तकको हिला दिया है, नीचे लिखी मुख्य बातोंकी वजहसे संभव हुआ है —

१. महान अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति, सोवियत समाजवादी प्रजातंत्र संघमे समाजवादकी विजय, तथा लेनिन-स्तालिनी जातीय (राष्ट्रीय) नीति जिसने पहले की उत्पीड़ित जनताको समान समाजवादी जातियों (राष्ट्रों) मे बदल दिया ।

२. फासिज़्मके खिलाफ सोवियत समाजवादी प्रजातंत्र सघके नेतृत्वमे जनता का विजयी स्वाधीनता-संग्राम, जर्मन और जापानी साम्राज्यवादकी हार, तथा ब्रिटेन, फ्रांस, इटली, हॉलैण्ड और बेलजियम जैसी उपनिवेशवाली शक्तियोका कमजोर पड़ जाना ।

३. मध्य और दक्षिण-पूर्वी योरपके देशोमें जनताके जनतांत्रिक राज्यों की स्थापना ।

४. उपनिवेशी जनताकी आजादीके प्रधान उत्पीड़को, ब्रिटिश और अमरीकी साम्राज्यवादके खिलाफ सोवियत समाजवादी प्रजातंत्र संघकी अगुआईमे जनवादी पक्षका दृढ सघर्ष ।

५. प्रतिक्रियावादी कुओमिन्तांग और अमरीकी साम्राज्यवादकी संयुक्त शक्तियोके ऊपर चीनी जनताकी विश्व-ऐतिहासिक जीत ।

इन तमाम बातोने साम्राज्यवादकी पूरी व्यवस्थाको कमजोर कर दिया है तथा उपनिवेशी और गुलाम देशोमे राष्ट्रीय स्वाधीनता-आन्दोलनोके संघर्षके लिये और जीतके लिये अनुकूल परिस्थितियॉ पैदा कर दी हैं ।

इस प्रकार यह सम्पादकीय लेख हिन्दुस्तान और पाकिस्तानमें कम्युनिस्ट पार्टीको उस बड़ी दूरी (पिछडाव) की तीक्ष्णता से याद दिलाता है जो अपनी-अपनी कम्युनिस्ट पार्टियोके नेतृत्वमे आगे बढती हुई पूरी उपनिवेशी दुनिया की महान शक्तियो के और हिन्दुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टीके नेतृत्वमे चलनेवाले हिन्दुस्तानी जनताके स्वाधीनता-आन्दोलनके बीच मौजूद है ।

इस दूरी (पिछडावे) को पूरा करनेकी बडी जिम्मेदारी हिन्दुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टीके ऊपर है । मौजूदा समयमें तो यह और भी जरूरी बन गया है जबकि ब्रिटिश और अमरीकी साम्राज्यवादी हिन्दुस्तानके बड़े पूँजीपतियो और दूसरे प्रतिक्रियावादियोकी सक्रिय मददसे हिन्दुस्तान और पाकिस्तान, दोनोकी जनताकी आजादी तथा राष्ट्रीय स्वाधीनताको कुचल करके तथा उनके विशाल भौतिक साधनो पर अपना एकाधिकार क़ायम करके, हमारे देश पर अपनी पकड़ मजबूत बनाने की बेतहाशा कोशिशें कर रहे हैं ताकि पूरे देशको वे एक फौजी अड्डा बना डालें, दक्षिण-पूर्वी एशियाके देशोमे—मलाया, बर्मा, वियतनाम तथा इण्डोनीशिया के राष्ट्रीय स्वाधीनताके सघर्षोको कुचल दें, और सोवियत सघके खिलाफ, जनताके जनवादी चीनके खिलाफ तथा मध्य तथा दक्षिणपूर्वी योरपकी जनताके जनतंत्रोके खिलाफ युद्ध छेड़ दें ।

सम्पादकीय लेखमे हमे चेताते हुए कहा है —

"चीनमे क्रातिकी जीतने तथा उपनिवेशोमें राष्ट्रीय स्वाधीनताके संघर्षोंके वढावने साम्राज्यवादियोंके अदर जोकि उपनिवेशोपर अपनी पकड़ वनाये रखनेके लिये बेतहाशा कोशिशें कर रहे है, बौखलाहट पैदा कर दी है। हार खानेवाले साम्राज्यवादियोकी इन बौखलाहटपूर्ण सरगर्मियोको कम करके आकना एक भूल होगी।"

साम्राज्यवादियों, वड़े पूंजीपतियो, सामन्ती नरेशो और जमीदारोंके प्रतिक्रिया-वादी गुट के खिलाफ मजदूर वर्ग, किसान और दूसरी प्रगतिशील ताकते—जैसे कि विद्यार्थी, जनवादी युवक और औरते— भारतीय सघ और पाकिस्तानमे कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में जो दृढ़ संघर्ष चला रही हैं, उससे; इस बातसे कि वहुत से शहरो और जिलो में ये संघर्ष नये और ऊँचे रूप अख्तियार कर रहे हैं —इन सारी चीजोसे पता चलता है कि हिन्दुस्तानी सर्वहारा वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टी हिन्दुस्तानी जनताके राष्ट्रीय स्वाधीनता सघर्षके नेतृत्व के धरातल को उठ रहे हैं, और यह पता चलता है कि इस सघर्षकी जीतके लिये तथा अग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियो और उनके हिन्दुस्तानी सहयोगियोकी मातके लिये हालते तेजीसे पक रहीं है।

ये वाकयात बतलाते हैं कि जो पिछडाव मौजूद हैं वे अनिवार्य नहीं हैं, कि वे मिटाये जा सकते हैं और उन्हे मिटाया जाना चाहिये। उन्हे राष्ट्रीय स्वाधीनता के रध\-'की अगुआई करनेवाली कम्युनिस्ट पार्टियों की रणनीति और कार्यनीति के बारेमें लेनिन-स्तालिन की उन शिक्षाओको सही-सही अमलमें ला कर—जिन्होने चीनी जनता की स्वाधीनता-क्राति की विश्व-ऐतिहासिक जीतमें अपनी शानदार सफलता दिखलायी है, मिटाया जा सकता है और मिटा दिया जाना चाहिए।

इस सम्बंधमे सम्पादकीय लेखने हिन्दुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टीका ध्यान चीनमें जनताकी जनवादी क्रातिके वहुमूल्य अनुभवोकी ओर खासतौरसे खीचा है—जिस क्रान्तिका नेतृत्व करके चीनकी कम्युनिस्ट पार्टी और उसके नेता माओ जे-तुंग ने उसे अतिम और अमिट जीतकी मंजिल पर पहुँचाया है। सम्पादकीय लेखने जोर देकर कहा है कि "चीनी जनताने जो राह ली...वह वही राह है जिसे राष्ट्रीय आजादी और जनताके जनतंत्रके लिये अपने सघर्ष मे वहुतसे उपनिवेशी और गुलाम देशोंकी जनता को अपनाना चाहिये।"

सम्पादकीय लेखने उन दो प्रधान सबको पर तीक्ष्णतासे जोर दिया है जो चीनी जनताके विजयी राष्ट्रीय स्वाधीनताके सघर्षका अनुभव हमें सिखलाता है —

(१) "मजदूर वर्गको ऐसे सभी वर्गो, पार्टियों, दलो, और सगठनोके साथ एकता करनी चाहिये जो साम्राज्यवादियो और उनके भाड़के टट्टुओंके खिलाफ लड़नेके लिये, और मजदूर वर्ग तथा उसकी हिरावल-कम्युनिस्ट पार्टीकी अगुआई में एक व्यापक राष्ट्रव्यापी सयुक्त मोर्चा कायम करनेके लिए राजी हो—ऐसी कम्युनिस्ट पार्टी जो

मार्क्सवाद-लेनिनवादके सिद्धान्तोसे लैस है; जो क्रांतिकारी रणनीति और कार्यनीति की कला मे पारंगत हो चुकी है, जो जनताके दुश्मनोंके खिलाफ क्रातिकारी समझौता-हीनता की भावना, जनताके जन-आन्दोलन में सर्वहारा सगठन और अनुशासनकी भावना फूंकती है।"

(२) "राष्ट्रीय आजादीके सघर्षके विजयी परिणामके लिये एक फैसलाकारी शर्त यह है कि जब उसके लिये आवश्यक अन्दरूनी हालतें इजाजत दें तो कम्युनिस्ट पार्टीके नेतृत्वमें जनताकी मुक्ति-फौजोकी स्थापना की जाय।"

इन सबकोकी रोशनीमे पार्टी नेतृत्व अपने सभी प्रस्तावोंकी, जिनमे रणनीति और कार्यनीतिके ऊपर रिपोर्ट भी शामिल है, फिरसे जाच करेगा।

हिन्दुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टीकी दूसरी काग्रेस पार्टीकी जिन्दगीमें एक बड़ा कदम थी। इस काग्रेस द्वारा मंजूर **राजनीतिक प्रस्तावने** हिन्दुस्तानमें जनताकी जनवादी क्रातिका बुनियादी कार्यक्रम और उसकी रणनीति तथा कार्यनीति निर्धारित की। **राजनीतिक प्रस्ताव** ने जनताके एक ऐसे जनवादी मोर्चे को सभी तरीकोसे गठित करनेके सघर्षको नयी मंजिलका सबसे महत्वपूर्ण कर्तव्य बतलाया, जिसे कि मजदूर वर्गके नेतृत्वमे, मजदूर वर्ग, किसानो और शहरी निम्न-पूंजीवादियोकी मित्रता का मूर्तिमान रूप होना चाहिये।

भारतीय सघ और पाकिस्तानमें जनताके स्वाधीनता-संघर्षोको उन्मुक्त करनेमें तथा उनमें सर्वहारा वर्गके नायकत्वको मजबूत बनानेके लिये यह काग्रेस प्रस्थान विंदु तथा एक भारी आगिल कदम बन गयी।

रणनीति और कार्यनीति पर रिपोर्टने **राजनीतिक प्रस्ताव** की नीतिको बहुतसी बातो पर सही-सही लागू किया और पार्टीके अदर घुसे हुए उस सुधारवादी प्रभावका खंडन किया जो मजदूरों तथा मेहनतकश जनताके सघर्षोंका साहसपूर्ण नेतृत्व करनेके रास्तेमे रोड़ा बना हुआ था। इसका सबूत यह है कि पिछले एक सालमें देशके कितने ही हिस्सोंमे मजदूरों, किसानो और उत्पीड़न निम्न-पूंजीवादियोके सघर्षोंका विकास तथा नेतृत्व करनेमें—जिनमे दसियों हजारो लोगोको गोलवन्द किया गया है—मजदूर वर्ग तथा कम्युनिस्ट पार्टीने काफी सफलता हासिल की है।

मगर ऐसे समयमें जबकि बढते हुए आर्थिक सकटके दबावके कारण, और साम्राज्यवादके पूंजीवादी चाकरोंके खिलाफ जनताके क्रोध और श्रम-हीनताके लगातार बढते जानेके कारण, इस बात की वस्तुगत संभावना मौजूद है कि सभी वर्गों, पार्टियों तथा दलों और सगठनोंके करोड़ो लोगो को, जो कि साम्राज्यवादियो और उनके भाड़के टट्टुओं के खिलाफ लड़नेके लिये राजी है, गोलवन्द किया जाय तथा जनता के राज्य लिये क्रातिकारी सघर्षमें उन्हें एकताबद्ध किया जाय—ऐसे समय में कम्युनिस्ट पार्टी दसियो हजारो लोगोको जगाकर तथा उनका नेतृत्व करके ही संतोष नहीं कर सकती।

इस पिछड़ाव का कारण यह है कि सुधारवादके खिलाफ—जोकि मजदूरों और मेहनतकश जनताके संघर्षोंको उन्मुक्त करने और साहसपूर्वक उनका नेतृत्व करने में एक रुकावट बना हुआ था—संघर्ष करते हुए पार्टीके केन्द्रने मतवादिता तथा संकीर्णताकी दिशामें कुछ गलतियाँकी जिन्होंने इन संघर्षों के फैलाव को बाध दिया और उनके अन्दर व्यापकसे व्यापक जन-समूहको गोलबन्द करनेसे रोक दिया है।

दमनके सामने पीछे हटते हुए तथा क्रान्तिकारी संघर्षों से भागते हुए सुधारवादियो का खंडन करते समय पार्टी केन्द्र के विभिन्न प्रस्तावोंने, खास कर रणनीति और कार्यनीति-सम्बंधी रिपोर्ट ने, इस बात पर ठीक ही जोर दिया है कि कम्युनिस्ट पार्टी तथा जनवादी शक्तियो के खिलाफ काग्रेसी सरकार द्वारा शुरू किया गया देश-व्यापी हमला प्रतिक्रियावादी पक्ष की ताकत का नहीं, बल्कि उसके सकटका चिन्ह है, उसकी बढती हुई कमजोरी तथा आसन्न पतन का चिन्ह है। पूँजीवादी व्यवस्था के बढते हुए सकट का पार्टी केन्द्र ने ठीक ही निर्देश किया, और सर्वहारा के नेतृत्व मे जनताके सघर्ष जो क्रान्तिकारी वेग और फैलाव हासिल कर रहे थे उन पर जोर दिया, ओर कम्युनिस्टों की ओरसे इन सघर्षों का अडिग और दृढ रूपसे नेतृत्व करने के लिये आह्वान किया। मगर यह करते हुए पार्टी केन्द्र इस बात को साफ-साफ दिखलानेमें नाकामयाब रहा कि डोमीनियन स्टेटस के रूपमें नकली आजादी के बख्शे जाने से हिन्दुस्तानकी अर्थ-व्यवस्था के औपनिवेशिक रूप में कोई फर्क नहीं हुआ, उस की महत्वपूर्ण जगहे अब भी विदेशी साम्राज्यवादियोंके कब्जेमें हैं। इस दोषपूर्ण समझ के फलस्वरूप हमारा प्रधान जोर इस बात पर नहीं रहा है कि हमारे सघर्ष का स्वरूप अब भी प्रधानतया साम्राज्यवाद-विरोधी, सामन्तवाद-विरोधी और राष्ट्रीय स्वाधीनता का बना हुआ है। जब तक इस बुनियादी बातको ठिकाने से आँख के सामने नहीं रखा जाता, तब तक (राष्ट्रीय) आन्दोलन के नेतृत्वकी जगहसे राष्ट्रीय पूँजीपतिवर्ग को हटाने और उसे जनता से काटने का कर्तव्य, जो राष्ट्रीय स्वाधीनता के सघर्ष मे मजदूर वर्ग के नायकत्व की स्थापना के लिये एक सबसे महत्वपूर्ण शर्त है, कारगर तौरपर पूरा नहीं किया जा सकता।

सुधारवादियो का खंडन करते हुए जिनका कहना था कि माउंटबेटन फैसले के फलस्वरूप कोई परिवर्तन नहीं हुआ है, पार्टी केन्द्रके प्रस्ताव ने ठीक ही कहा था कि पूँजीपतियो ओर जमींदारो के स्वार्थों का प्रतिनिधित्व करनेवाली नेहरू-पटेल सरकार साम्राज्यवाद के पक्षमें चली गयी है, मगर इस बात पर जोर देनेमें हम नाकामयाब रहे कि इस नकली आजादीमें—जिसका हमने सही पर्दाफाश किया था ब्रिटिश साम्राज्यवाद का स्वार्थ "पवित्र और अनुल्लंघनीय" बना हुआ है और "माउण्टबेटन आदि चले गये है पर ब्रिटिश साम्राज्यवाद मौजूद है और आक्टोपस (आठ पैरवाले एक जानवर-अनु०) की तरह हिन्दुस्तानको अपने खूनी पंजोंमे जकड़े हुए है"। इससे दो भारी ग़लतियाँ हुईं:

एकः "साम्राज्यवादी-पूँजीवादी-सामन्ती गँठजोड़में" राष्ट्रीय पूँजीपति वर्गको हमने अगुआ शक्ति (सबसे सक्रिय लड़ाकू हिस्सेदार) कह कर बतलाया; जबकि

असलियत यह है कि साम्राज्यवादियों और उनके हिन्दुस्तानी पिछलगुओं के गुट में साम्राज्यवादी ही अगुआ शक्ति बने हुए हैं। नेहरू-पटेल सरकार अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियोंका हुक्म वजा रही है।

दो रणनीति और कार्यनीति पर रिपोर्ट हिन्दुस्तान के बड़े पूँजीपतियो और पूँजीवादी वर्गके दूसरे हिस्सोमें भेद करनेमें, यह वतलानेमे कि वड़े पूँजीपति वर्गको ही शासन की गद्दी पर वैठाया गया है और साम्राज्यवादियोके साथ उनके पिछलगुओके रूपमें सहयोग कर रहा है, नाकामयाव रही।

कम विकसित जातियो (राष्ट्रो) के पूँजीपतियोंके खिलाफ संघर्ष न करनेकी वकालत करनेवाली सुधारवादी स्थितिका खण्डन करते हुए पार्टी केन्द्रके प्रस्तावोंने ठीक ही कहा कि हर रंगके पूँजीवादी राष्ट्रवादके खिलाफ निर्मम संघर्ष चलाना तथा साम्राज्यवाद और उसके सहयोगियोंके खिलाफ सघर्षमें सभी जातियो (राष्ट्रो) के मजदूरों और मेहनतकश जनताकी आम जनताके एक क्रांतिकारी मोर्चेके अन्दर एकता कायम करना, हिन्दुस्तानी क्रातिकी जीतके लिये जरूरी शर्तोंमे से एक है। मगर पार्टी केन्द्र यह वतलाने मे नाकामयाव रहा कि पूँजीवादी वर्गके भिन्न-भिन्न हिस्से जो प्रधानतया अविकसित जातियो (राष्ट्रों)के हैं, राष्ट्रीय स्वाधीनताके सघर्षमे अब भी, एक या दूसरे समय, "सह-यात्री" की भूमिका अदा कर सकते हैं; और यह कि साम्राज्यवादके खिलाफ, सामन्तवादके खिलाफ और प्रधानतया गुजराती तथा मारवाडी पूँजीपतियोका प्रतिनिधित्व करनेवाले राष्ट्रीय वड़े पूँजीपतियोके खिलाफ, समान सघर्षमें मजदूर वर्ग पूँजीवादी वर्ग के उन (उपरोक्त) हिस्सोंके साथ राष्ट्रीय जनवादी सवालो पर अस्थायी समझौते कर सकता है। साथ ही साथ हमे यह भी ध्यानमें रखना चाहिये कि पूँजीवादके आम संकटकी अत्यअधिक तीव्रताकी वर्त्तमान अवस्थाओंमें, जबकि अन्तरराष्ट्रीय पैमाने पर तथा हर पूँजीवादी देशकी सीमाओके अन्दर अलग-अलग भी, वर्ग शक्तियो का खासतौरसे तेज पृथक्करण हो रहा है, इन हालतो में हिन्दुस्तानी पूँजीपति वर्ग के विरोधी स्तरोको किसी भी तरह साम्राज्यवाद-विरोधी पक्षका विश्वसनीय या स्थिर सदस्य नहीं मानना चाहिये।

सुधारवादी तत्वों का खंडन करते हुए, जो धनी किसानों के हितके लिये खेत-मजदूरो और गरीव किसानों के संघर्षों को कमजोर वना रहे थे तथा इन तबको को धनी किसानो के राजनीतिक असर से छुड़ाने से इनकार कर रहे थे, **किसानों के सवाल पर** प्रस्ताव ने तथा इसी तरह के दूसरी और दस्तावेजो ने खेत-मजदूरो पर और किसानो के आम जनसमूह पर दृढतापूर्वक भरोसा करने के भारी महत्त्व पर ठीक ही जोर दिया। यह इसी रणनीति का परिणाम है कि कई एक प्रान्तों और जिलों मे कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व मे शक्तिशाली किसान संघर्ष विकसित हो गये हैं। उल्लिखित प्रस्तावने, मजदूरो और किसानो की मित्रता के सामन्त-विरोधी रूप पर जोर देने के वजाय, गलत ढंगसे धनी किसानो को जमींदारो के साथ जोड़ दिया है। और उन्हें (धनी किसानो को) देहाती इलाको मे पूंजीवादी-सामन्ती प्रतिक्रिया का

अगुआ बतलाया है। वह प्रस्ताव यह बतलाने में नाकामयाब रहा कि हिन्दुस्तानी क्रान्तिकी वर्तमान मंजिल के प्रधान नारे—बिना मुआवजा जमींदारी का अन्त तथा जमीन जोतनेवालो को—समूचे किसान समूह के हितों के अनुरूप है।

इनफार्मेशन व्यूरो के मुखपत्र के उल्लिखित लेखने यह बतलाते हुये इस भारी गलती को सुधार दिया है कि,

> "इन हालतो में, चीन तथा दूसरे देशोके राष्ट्रीय स्वाधीनता-आदोलनो के अनुभवसे सबक लेते हुये हिन्दुस्तानी कम्युनिस्टोंका कर्त्तव्य स्वाभावत यह है कि **कुल** किसानोंके साथ मजदूर वर्ग की मित्रताको मजबूत बनाये, तुरत जरुरी किसान सम्बंधी सुधारो के लिये लड़े .. " (जोर हमारा)।

इसमे कोई शक नहीं कि गॉवोके अन्दर धनी किसानोके राजनीतिक असरके खिलाफ़ लड़ना चाहिये, किसान जन-समूहको उनके असरसे निकाल लाना चाहिये और आम किसान आन्दोलनमे सर्वहारा नेतृत्व और अनुशासन की स्थापना करनी चाहिये। मगर बिना मुआवजा जमीदारी प्रथाको अत करने तथा जोतनेवालोको जमीन देनेके—जो कि तुरत जरुरी किसान सम्बंधी सुधार है—संघर्षके लिये समूचे किसानोको इकट्ठा करनेके हितो की दृष्टिसे, तथा मजदूर वर्गकी कुल किसानोके साथ मित्रता को मजबूत बनाने के हितोकी दृष्टिसे, कुल जमीनका राष्ट्रीकरण जैसे सुधारोको तात्कालिक मागके तौर पर नहीं उठाना चाहिये, तथा धनी किसानोकी सम्पत्तिको छीननेका नारा नहीं लगाना चाहिये। मजदूर आन्दोलनको किसान आदोलनका सक्रिय रूपसे समर्थन करना चाहिये। किसानो की आम तथा आंशिक जनवादी मागोके लिये कम्युनिस्ट पार्टी को किसान जन-समूहको सगठित करके सघर्ष मे ले जाना चाहिये।

कुल किसानोके साथ मजदूर वर्गकी मित्रताके सही नारेको अमलमे लाते समय, सुधारवादी इस प्रकार उसके सही अर्थको तोडने-मरोड़नेकी कोशिश करेंगे कि उससे धनी किसानोका स्वार्थ खतरेमे पड़ता है, इस बिना पर वे खेत-मजदूरो और बटाईदारों के आंशिक सघर्षोका त्याग कर देनेका प्रचार करेंगे। किसान आन्दोलन पर मजदूर वर्गका नेतृत्व कायम करनेके लिये तथा उस आन्दोलनको क्रातिकारी शक्ल देने के लिये इस तरहकी तोड़-मरोडका मुकाबला करना चाहिये। किसानोके आम सघर्षोके रास्तेमे रोड़े अटकानेके लिये, सुधारवादी और भी इस नारेकी तोड़-मरोड़ करेंगे—इस बिना पर कि उन (सघर्षो) से धनी किसान बिगड़ जायेंगे। इस तरह के भटकावोंसे लड़ करके ही किसान सघर्ष आगे बढ़े हैं और आगे बढ़ेंगे।

किसानोंके सवालपर पार्टी केन्द्रके सकीर्णतावादी भटकावकी विचारधारात्मक जड़ इस चीजसे पैदा हुई थी: हिन्दुस्तानकी कृषिमे पूँजीवादी सम्बंधोके विकासको और उससे पैदा होनेवाले किसानो के वर्ग-भेदको जहां ठीक ही दर्शाया गया है, वहाँ हम यह देखने मे नाकामयाब रहे कि कृषि अर्थतत्रमे सामन्ती जमींदारी ही शोषण का प्रधान रूप है। और यह इस बातसे पैदा हुई है कि हिन्दुस्तान किसान आन्दोलन के साम्राज्यवाद विरोधी और राष्ट्रीय स्वाधीनतावाले स्वरूपको समझनेमें हम नाकामयाब रहे।

सामन्ती सम्पत्ति-सम्बंधोंके ढाचेके भीतर कृषिमें पूँजीवादी सम्बंधोंके विकासकी और हिन्दुस्तानी किसानो की कतारमें उससे पैदा हुए वर्ग-भेद की समझदारीने पार्टीको इस योग्य बनाया कि किसान-क्रांतिका विकास करनेमें तथा जमींदारी-प्रथाका खातमा करनेके क्रांतिकारी संघर्षमें किसानोंके व्यापक जन-समूहको खींच लानेमें खेत-मजदूरोंकी जो अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका होनी चाहिये, उसे वह समझे। उसने (समझदारीने) पार्टीको इस योग्य बनाया कि सुधारवादकी गड्ढारके अंदरसे निकल आये और जमीनके लिये किसान जनताके जंगजू संघर्षोंकी तथा ऊँची मजदूरी के लिये खेत मजदूरों के हड़ताल संघर्षों आदि की दिशा में किसान अन्दोलन को मोड़ दे। लेकिन सामन्ती जमींदारोंको गौणरूपका प्रधान रूप मानने में और हिन्दुस्तानी अर्थ-तंत्र का उपनिवेशी स्वरूप समझनेमें नाकामयाबीके कारण, या दूसरे शब्दोंमें, यह समझने में नाकामयाबी के कारण कि साम्राज्यवाद और सामन्ती जमींदारोंके खिलाफ संघर्ष ही समूचे किसानोंके हितकी एकताका आधार है, देश-व्यापी पैमाने पर किसान-संघर्षों का वेग और फैलाव सीमित हो गया है।

इनफार्मेशन व्यूरोके मुखपत्रके सम्पादकीय लेखने नीचे लिखे शब्दोंमें हमारे महत्वपूर्ण कर्त्तव्यको सही तौर पर निर्धारित किया है –

> "देशकी आजादी और राष्ट्रीय स्वाधीनताके लिये समान संघर्षके आधारपर, अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियोंके खिलाफ जो कि उसपर (देश पर) उत्पीड़न कर रहे हैं तथा प्रतिक्रियावादी बड़े पूँजीपतियों और सामन्ती नरेशोंके खिलाफ जो कि उनसे (साम्राज्यवादियों से) सहयोग कर रहे हैं, ऐसे सभी वर्गों, पार्टियों, दलों और संगठनों को एक सूत्रमें बाधना चाहिये जो हिन्दुस्तान की आजादी और राष्ट्रीय स्वाधीनताकी हिफाजत करनेके लिये राजी हैं।"

दूसरी पार्टी कांग्रेसके राजनीतिक प्रस्तावमें दिया हुआ जनताके जनवादी मोर्चेका कार्यक्रम इस व्यापक संयुक्त मोर्चेका आधार है। जाहिर है कि इस तरहके संयुक्त मोर्चे पर मजदूर वर्गका नेतृत्व होना चाहिये तथा सोवियत समाजवादी प्रजातंत्र संघकी अगुआईमें चलते अंतरराष्ट्रीय जनवादी साम्राज्यवाद-विरोधी मोर्चेका उसे मित्र होना चाहिये।

जनताके व्यापकसे व्यापक हिस्सोंको क्रान्तिकारी संघर्षोंमें खींच लानेके लिये तथा साम्राज्यवादियों और उनके हिन्दुस्तानी सहयोगियोंका शासन खतम कर देनेके योग्य जनता के जनवादी मोर्चेका निर्माण करनेके लिये, हमें नीचे लिखे बुनियादी कर्त्तव्योंके महत्व पर जोर देना चाहिये —

१. शांति-आन्दोलनका, जोकि पहलेही से एक व्यापक आधार पर शुरू हुआ है, देशभरमें उस रास्ते पर विकास करना चाहिये जो "शांतिकी रक्षा और जंगखोरोंके खिलाफ संघर्ष" के ऊपर इनफार्मेशन व्यूरोके प्रस्तावमें तै कर दिया गया है। उसे पार्टी और जन-संगठनों की तमाम कार्रवाइयों का केंद्र-बिन्दु बन जाना चाहिये। यह हमारा कर्त्तव्य है कि कांग्रेसी और लीगी सरकारोंकी—जो अंग्रेज और अमरीकी साम्राज्यवादियोंकी प्रत्यक्ष गुमाश्ता बन गयी हैं तथा सोवियत समाजवा[illegible]

प्रजातंत्र संघके खिलाफ, जनताके जनतंत्रोके खिलाफ, और एशियाकी जनताके स्वाधीनता-संघर्षोंके खिलाफ हिन्दुस्तानको लड़ाईका अड्डा वना डालने की कोशिश कर रही हैं—राष्ट्र-विरोधी और धोखेवाज नीतिका अथक पर्दाफाश करते हुए, राष्ट्रीय स्वाधीनता के लिये सघर्ष को शाति के लिये सघर्षके साथ मिलाकर एक कर दे।

२. राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन काग्रेस (आई. एन टी यू. सी.) तथा सोशलिस्ट पार्टी के नेताओं की तरह के फूटपरस्तो का ढंगपूर्वक पर्दाफाश करके, सुधारवादियो के असर के आम मजदूरों को मजदूर वर्गी एकता के उद्देश्यके महत्व को वारवार समझा करके, असगठित मजदूरो को अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन काग्रेस से जुडी हुई यूनियनों के अन्दर ला करके, मजदूर वर्गके अधिकारों और हितोकी हिफाजत के लिये सभी यूनियनो के साथ सयुक्त हड़ताल-कमिटियाँ कायम करके, तथा आम मजदूरों की व्यापक आधारवाली मिल-कमिटियो, कारखाना-कमिटियो, आदिकी स्थापना करके मजदूर वर्ग की कतारोमे एकता की अनवरत कोशिश होनी चाहिये। उनकी तात्कालिक और अत्यंत आसानी से समझमें आनेवाली मॉगो के लिये लड़ने के वास्ते मजदूरो के व्यापक से व्यापक जन-समूह को इकट्ठा करनेमें कम्युनिस्ट पार्टीको और उसके नेतृत्वमें चलनेवाली लड़ाकू यूनियनो को सर्वोसे आगे रहना चाहिये; और इस प्रकार सर्वहारा वर्ग की कतारोमे स्थायी एकता कायम करने मे मदद देनी चाहिये। मजदूर वर्ग की एकता न सिर्फ उसके रोज-रोज के हितो की सफल हिफाजतके लिये ही जरूरी है, बल्कि जनता के स्वाधीनता-संग्राम मे नेतृत्व और संगठनकी उसकी भूमिका को ठोस वनानेके लिये भी वह जरूरी है ।

३. मजदूरी और जमीनके लिये खेत-मजदूरोके संघर्षोका विकास करने और स्वतंत्र खेत-मजदूर यूनियनोंका सगठन करने के लिये ढंगपूर्ण कोशिशें होनी चाहिये। साथ ही साथ इस बात का अत्यधिक महत्व है कि सामन्ती जमीदारो और पुलिसके जुल्मके खिलाफ तथा जमीनपर कब्जा करनेके लिये चलनेवाले सघर्षोको व्यापक आधार तथा अखिल भारतीय रूप देनेमे पड़े पिछडाव को दूर किया जाय, जो खेत-मजदूरों और सर्वहारा-वने किसानोके क्रातिकारी नेतृत्व मे विकसित हो रहे हैं और देशके अनेक हिस्सो मे (सघर्ष के) ऊँचे रूपों की सतह को उठ रहे है। गाधी-वादके विचार-शक्ति को जड़ वनानेवाले असरको फैलानेवाले काग्रेसी और सोशलिस्ट नेताओंके खिलाफ जो किसान जन-समूहको क्रातिकारी सघर्षसे विमुख कर देने और देहातोमे वढती हुई मजदूर-किसान मैत्रीको छिन्न-भिन्न कर देनेकी कोशिश कर रहे हैं, सिर्फ दृढता-पूर्वक सघर्ष करके ही जमीनके लिये, तथा जमींदारी प्रथाके खात्मेके लिये क्रातिकारी संघर्षमे किसानों के व्यापकसे व्यापक समूहको खींच लाना सभव हो सकेगा। जन खेत-मजदूर यूनियनो और जन किसान सभाओका निर्माण करना और अखिल भारतीय पैमाने पर उन्हें एक सूत्रमें वाधना तथा उनका नेतृत्व करना, तथा काग्रेसी और सोशलिस्ट नेताओ की ओर से जिनकी स्थापना की कोशिश की जा रही है उन

समानान्तर किसान सगठनोका पर्दाफ़ाश और उन्हें जनतासे अलग करना, ये अत्यंत ही महत्वपूर्ण कर्तव्य है जो सर्वहारा वर्ग तथा कम्युनिस्ट पार्टीके नेतृत्वमे विकसित होते हुए किसानो के क्रातिकारी संघर्षोंके साथ घने तौर पर जुड़े हुए हैं।

४. इस वातका अत्यधिक महत्व है कि कांग्रेसी शासकोकी उस फासिस्ट दमननीतिके खिलाफ, सभी जनवादी अधिकारो और आजादियोका उनके द्वारा पैरों तले रोद दिये जानेके खिलाफ— जिससे कि जनताके व्यापक हिस्सोंमें क्रोध पैदा हो रहा है और उसके भरम मिट रहे हैं, एक व्यापक आधार के संघर्ष का विकास किया जाय। 'इस उद्देश्यके लिये हमें ऐसी सभी पार्टियो, दलों, संगठनो और व्यक्तियोको--जो जनताके नागरिक अधिकारो, राजनीतिक स्वतंत्रताओं और जनवादी अधिकारोकी हिफाजत करनेके लिये तैयार हैं–नागरिक आजादीकी हिफाजत के आंदोलनके अदर लाकर उसे व्यापक वना देना चाहिये।

शातिपूर्ण विधानवादकी सीमाओमें जन-संघर्षोंको बांध रखनेवाले सुधारवादी-वंधनो का तथा जनताकी शिरकतसे रहित तथाकथित "जंगी" कार्रवाइयोकी वकालत करनेवाले निम्न-पूँजीवादी क्रातिवादका, दोनोंका सही तौरपर खंडन करते हुये पार्टी केन्द्रके प्रस्तावोने देशके विभिन्न हिस्सोमें जनताके आन्दोलन के असमान विकासको ध्यान में रखकर, संघर्ष के सभी रूपोंको मिलाकर प्रयोग करनेके बड़े महत्व पर ठीक ही जोर दिया है। विभिन्न सवालोपर विभिन्न रूपोमे कम्युनिस्ट पार्टीके नेतृत्वमे चलनेवाले देशव्यापी सघर्षोंके अनुभवो के साराश को निचोड़कर इन आदेशोमे रखा गया था। चीनी क्रातिके अनुभव और दूसरे उपनिवेशी देशोके राष्ट्रीय स्वाधीनता सघर्ष के अनुभवके साराश पर जोर देते हुये संपादकीय लेखने ठीक ही कहा है कि

> "राष्ट्रीय आजादी के सघर्ष के विजयी परिणाम के लिये एक फैसलाकारी शर्त यह है कि जब उसके लिये आवश्यक अन्दरुनी हालतें इजाजत दें, तो जनताकी मुक्ति-फौजोकी स्थापना की जाय।"

इनफार्मेशन व्यूरोके मुखपत्र के सम्पादकीय लेखके विशाल महत्व को भली तरह समझना चाहिये। एशियाकी जनताके राष्ट्रीय स्वाधीनता-आन्दोलनको खूनमें डुबो देनेके लिये अग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादी व्याकुल आतुरता के साथ युद्धकी तैयारी कर रहे हैं। साम्राज्यवाद के खिलाफ राष्ट्रीय आजादी और जनताके जनतंत्रके लिये करोड़ो नर-नारियोको गोलबन्द करके हिन्दुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टीको अपनी ऐतिहासिक भूमिका खेलनी चाहिये।

साम्राज्यवादियोंके हाथ राष्ट्रीय आजादीको बेच देनेवाली और अपने साम्राज्य-वादी मालिको के हुक्मपर जनता को खूँख़ारीसे कुचलनेवाली कांग्रेसी सरकार के ख़िलाफ जनता की घृणा और क्रोध ऊँचा उठ रहा है, अपने उत्पीड़कों के खिलाफ जनता के सघर्ष देश के अनेक हिस्सोमे ऊँचे रूपो और स्तर पर पहुँच रहे हैं। साम्राज्यवादियो की नींव डोल रही है।

सम्पादकीय लेखमें निहित कार्यनीति की धारा का सही तौरपर इस्तेमाल करके कम्युनिस्ट पार्टी सच्ची राष्ट्रीय आजादी और जनताके जनतंत्रके लिये होनेवाले राष्ट्र-व्यापी संघर्षों के अगुआकी जगह पर पहुँचने के योग्य वन जायेगी।

साम्राज्यवादियोकी गुलाम वनानेकी योजनाओका हर दिन, हर कदमपर पर्दाफाश करके, अग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियो के दलालोका पार्ट खेलनेवाले काग्रेसी और सोशलिस्ट नेतृत्व के असरसे जन-वर्गको छुड़ा करके, सघर्षके सभी रूपोको मिलाकर प्रयोग करके, तथा सभी जनवादी ताकतोंको गोलबन्द करके हम उस दूरी (पिछडाव) को मिटानेमे समर्थ हो सकेंगे जो हिन्दुस्तानी जनता और दक्षिण-पूर्वी एशियाके देशोकी दूसरी जनताके राष्ट्रीय स्वाधीनताके सघर्षोंके बीच मौजूद है। राष्ट्रीय स्वाधीनता, शाति और जनतंत्रके लिये देशभक्तिपूर्ण आह्वानकी अपील इतनी व्यापक है कि अग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियोंके नेतृत्वमे कायम राष्ट्र-विरोधी गुटके खिलाफ करोड़ों मेहनत-कश लोगो को तथा दूसरी जनवादी ताकतोको गोलबंद करना कम्युनिस्ट पार्टीके लिये सभव है।

साम्राज्यवादी उपनिवेशपतियो की ढहती हुई उपनिवेशी व्यवस्थाको वचानेके लिये काग्रेसी सरकार जनताके आन्दोलन, मजदूर वर्ग तथा कम्युनिस्ट पार्टी पर निर्दय होकर वार कर रही है। मगर जैसा कि सम्पादकीय लेखने वतलाया है .

> "जब कोई जनता डटकर सघर्ष में उतर पड़ती है और जब कम्युनिस्ट पार्टियॉ इस संघर्ष की अगुआई करनेमे समर्थ होती है, तो अन्दरूनी प्रतिक्रान्ति और विदेशी साम्राज्यवादियो की कोई भी ताकत उस जनता के जनसमूह को नहीं कुचल सकती जो इन्कलाव मे जुट गयी है।"

इनफार्मेशन ब्यूरोके मुखपत्रका सम्पादकीय लेख पार्टीकी कतारो मे एकता लाने के लिये एक वड़ी देन है। दूसरी पार्टी काग्रेस के वादसे पूरी पार्टी द्वारा चलाये गये सुधारवादके खिलाफ कठोर संघर्षने पार्टीकी कतारो मे एकता लाने तथा उसे संघर्षशील जनताका अगुआ वनानेमें वड़ा काम किया है। इनफार्मेशन ब्यूरोका सम्पादकीय लेख उस संघर्ष को मजवूत वनाता है, और साथ ही साथ, मार्क्सवाद–लेनिनवादके पथसे हमारे संकीर्णतावादी भटकावको दुरुस्त करता है। सभी इतर-वर्गीय प्रवृत्तियोके खिलाफ लड़नेके लिये लेनिन और स्तालिन की शिक्षाओके सही प्रयोग पर आधारित इस हथियारसे लैस होकर हमें साम्राज्यवाद और उसके हिन्दुस्तानी दोस्तों के खिलाफ पूरी पार्टी को दृढ चट्टानकी तरह एकतावद्ध करलेना चाहिए।

२२-२-१९५०

औपनिवेशिक और पराधीन देशों में राष्ट्रीय आज़ादी के आन्दोलनका शक्तिशाली बढ़ाव

[कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियोंके इन्फार्मेशन ब्यूरो (सूचना-केन्द्र) के मुखपत्र, "फॉर ए लास्टिंग पीस, फॉर ए पीपुल्स डेमोक्रेसी" के २७ जनवरी १९५० के अंक ४ (६४) का सम्पादकीय लेख]

मौजूद अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति की सबसे बड़ी विशेषताओंमें से एक है उपनिवेशों और गुलाम देशोंकी जनता के क्रान्तिकारी संघर्ष का अभूतपूर्व विस्तार।

बहुतसे देशों में वह संघर्ष हथियारबन्द रूप धारण कर चुका है, पूरब के दसियों करोड़ मेहनतकश लोग जिसमें हिस्सा ले रहे हैं। जिस पैमाने पर और जिस रूपमें यह संघर्ष—जिसका नेतृत्व मजदूर वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टियाँ कर रही हैं—चल रहा है वह दिखाता है कि औपनिवेशिक और पराधीन देशोंकी जनता ने औपनिवेशिक गुलामी के खिलाफ़ और अपनी राष्ट्रीय आज़ादी के लिये क्रान्तिके मार्ग को दृढ़तापूर्वक अपना लिया है।

पराधीन औपनिवेशिक देशोंमें युद्धके बादके क्रान्तिकारी, आजादीके संघर्षके शक्तिशाली बढ़ावने विश्व साम्राज्यवादकी सम्पूर्ण व्यवस्थाकी नीवों तकको हिला दिया है। वह दिखलाता है कि उपनिवेशोंकी जनता अब पुराने तरीकेसे रहनेसे इनकार कर रही है और साम्राज्यवादी देशोंके शासक वर्ग पुराने तरीकेसे उन पर हुकूमत करने में अब असमर्थ हैं।

महान अक्तूबर समाजवादी क्रांतिने औपनिवेशिक देशोंकी उत्पीड़ित जनताकी क्रांतिकारी शक्तिके बांधों को खोल दिया था, उनकी आज़ादी और राष्ट्रीय स्वतन्त्रताकी लड़ाईको तमाम देशोंकी मेहनतकश जनताके क्रांतिकारी संघर्ष के साथ जोड़ दिया था और इस तरह उनकी आजादी का मार्ग उन्मुक्त कर दिया था।

जातियों के सम्बंध में लेनिन स्तालिन की नीतिने, सोवियत संघमें समाजवादकी विजयने—जिसने कि रूसके दूर-दूर तक फैले हुए प्रदेशोंकी पहलेकी उत्पीड़ित जातियों

को उन समान समाजवादी जातियोंमें बदल दिया जो आज सोवियत जनताके महान भाईचारेमय परिवार की सदस्य हैं ---उपनिवेशोंकी और पराधीन देशों की जनताको औपनिवेशिक और साम्राज्यवादी गुलामी के खिलाफ उसके संघर्ष में जबरदस्त बढ़ावा और समर्थन दिया है और बराबर दे रही है।

फ़ासिज़्म के खिलाफ जनता की आजादी के विजयी युद्धने---जिसका सोवियत सघने नायकत्व किया था, जर्मन तथा जापानी साम्राज्यवाद की पराजयने, और ब्रिटेन फ्रान्स, इटली, हॅालैण्ड और बेल्जियम जैसी औपनिवेशिक ताकतों के काफी कमजोर हो जाने ने भी---इन सबने औपनिवेशिक और पराधीन देशों में संघर्ष के लिये और राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन की विजय के लिये अनुकूल परिस्थितियॅा तैयार कर दी।

योरपके मध्य और दक्षिण-पूर्व के देशोंमे जनताकी जनवादी ताकतकी स्थापनाने, समाजवादी सोवियत प्रजातंत्र सघ और जनताके जनतंत्रों की बढ़ी हुई राजनीतिक और आर्थिक शक्तिने, औपनिवेशिक जनता की आजादीके मुख्य उत्पीड़क अमरीकी और ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ सोवियत सघके नायकत्वमें चलनेवाले जनवादी पक्षके दृढ़ और सुसंगत संघर्ष ने, साम्राज्यवाद की संपूर्ण व्यवस्था को कमजोर कर दिया और उसे कमजोर किये बिना वे रह भी न सकते थे। इस तरह उपनिवेशोंकी जनताको उसके राष्ट्रीय आजादी और स्वतंत्रता के सघर्ष में इन चीजोंने निर्णायक मदद दी है और बराबर दे रही हैं।

प्रतिक्रियावादी कुओमिन्ताग और अमरीकी साम्राज्यवाद की सयुक्त ताकतों के ऊपर चीनी जनता की विश्व-ऐतिहासिक विजय राष्ट्रीय आजादी के सघर्ष के बढावका, तथ इस सघर्ष का नायकत्व करनेवाली कम्युनिस्ट पार्टियों की रण-नीति और कार्य-नीति के सम्बंध में लेनिन-स्तालिन की सीखों की विजयका ज्वलन्त सबूत हैं।

औपनिवेशिक और पराधीन देशों के राष्ट्रीय आजादी के संघर्ष को मजबूत बनाने के लिये चीनी जनता की विजय का बहुत भारी महत्व है।

एशिया और ओशीनिया के देशों की पेकिंग ट्रेड यूनियन कान्फ्रेन्स के सामने अपने भाषण मे विश्व मजदूर सघ के उप-सभापति, लिउ शाओ-चीने चीनी जनता की आजादी की क्रान्ति की विजयकी परिस्थितियों का विश्लेषण करते हुए कहा था,

> "चीनी जनताने जो राह ली है...वही वह राह है जिसे राष्ट्रीय आजादी और जनता के जनतंत्र के लिये अपने सघर्ष मे बहुत से उपनिवेशों और गुलाम देशों की जनता को अपनाना चाहिये।"

चीनी जनता की राष्ट्रीय-आजादी के विजयी सघर्ष का अनुभव सिखाता है कि मजदूर वर्गको ऐसे सभी वर्गों, पार्टियों, दलों और सगठनों के साथ एकता करनी चाहिये जो साम्राज्यवादियों और उनके भाड़ेके टट्टुओं के खिलाफ लड़ने के लिये, और मजदूर वर्ग तथा उसकी हिरावल---कम्युनिस्ट पार्टी---की अगुआई में एक व्यापक राष्ट्र-व्यापी सयुक्त मोर्चा कायम करने के लिये राजी हों---उस पार्टी के नायकत्व मे जो मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्तों से लैस है, जो क्रान्तिकारी रणनीति और

कार्यनीति की कला में पारगत हो चुकी है; जो जनताके दुश्मनों के खिलाफ क्रान्तिकारी समझौता-हीनता की भावना, जनता के जन-आन्दोलन में सर्वहारा सगठन और अनुशासन की भावना फूंकती है।

राष्ट्रीय आजादी के संघर्ष के विजयी परिणाम के लिये एक फैसलाकारी शर्त यह है कि जब उसके लिये आवश्यक अन्दरूनी हालतें उसकी इजाजत दें तो कम्युनिस्ट पार्टीके नेतृत्व में जनता की मुक्ति फौजों की स्थापना की जाय।

जैसा कि चीन, वियतनाम, मलाया और दूसरे देशों का उदाहरण दिखाता है, बहुतसे औपनिवेशिक और पराधीन देशोंमें सशस्त्र सघर्ष ही अब राष्ट्रीय आजादी के आन्दोलनका मुख्य रूप बनता जा रहा है।

वियतनाममें सशस्त्र जनताने अपने देशकी ९० फी सदी भूमिको फ्रासीसी साम्राज्यवादियोंके कब्जेसे आजाद कर लिया है। वियतनाममें मौजूद डेढ़ लाख फ्रासीसी फौजें कब्जे के शहरोंको छोड़नेसे डरती हैं। वियतनामी जनतंत्र की हथियारबन्द फौजोंने उन्हें घेरकर बन्द कर रखा है।

दक्षिणी कोरियाके अन्दर छापेमारोंके दल अमरीकियों द्वारा गद्दी पर बैठाये गये कठपुतले, सिंघम री के पुलिस दलोंकी जिन्दगी को असह्य बना रहे हैं।

मलायामें मलायी जनता की राष्ट्रीय मुक्ति फौज को कुचलनेकी बेकार कोशिश में ब्रिटिश फौजों के १ लाख २० हजार सिपाही फँसे पड़े हैं। अमरीका के " आदर्श " उपनिवेश, फिलिपीन मे कठपुतली कुइरिनो सरकार को छापेमार रणक्षेत्र में लोहे के चने चबवा रहे हैं।

इण्डोनीशिया में डच फौजों और हाता के जयचन्दों दोनों की संयुक्त ताकत के खिलाफ देशप्रेमी ताकतें लड़ रही हैं। आधा बर्मा ब्रिटिश साम्राज्यवादियों के दलालों के खिलाफ लड़नेवाली जनताकी ताकतों के हाथ में है। दक्षिणी अमरीका, अफ्रीका और निकट पूर्व में राष्ट्रीय आजादी का आन्दोलन चारों तरफ दूर-दूर तक फैल रहा है।

उपनिवेशों और अर्ध-उपनिवेशों की जनता के जन-आन्दोलन ने—उस आन्दोलन ने जो युद्ध के बाद उठा था और जो बढ़कर सशस्त्र सघर्ष बन गया है—ब्रिटिश साम्राज्यवादियों को कार्यनीतिके रूपमें पीछे हटने के लिये मजबूर कर दिया। हिन्दुस्तान को एक झूठी आजादी दे दी गयी। लेकिन ब्रिटिश साम्राज्यवाद के हित " पवित्र और अनुलंघनीय " बने हुए हैं। माउण्टबैटन आदि चले गये हैं पर ब्रिटिश साम्राज्यवाद मौजूद है, और एक विशाल आक्टोपस (आठ पैरोंवाले जानवर—अनु.) की तरह हिन्दुस्तानको अपने खूनी पंजों में जकड़े हुए है।

इन हालतों मे चीन तथा दूसरे देशो के राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलनों के अनुभव से सबक लेते हुए—हिन्दुस्तानी कम्युनिस्टोंका कर्त्तव्य स्वाभावतः यह है कि कुल किसानों के साथ मजदूर वर्ग की मित्रता को मजबूत बनायें; तुरंत जरूरी किसान सम्बंधी सुधारों के लिये लड़ें; और देशकी आजादी और राष्ट्रीय स्वाधीनता के लिये

आम संघर्ष के आधार पर अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियों के खिलाफ जो कि देश का उत्पीडन कर रहे हैं और उनका साथ देनेवाले प्रतिक्रियावादी बडे पूंजीपतियों और सामन्ती राजे-नरेशों के खिलाफ उन तमाम वर्गों, पार्टियों, दलों और सगठनों को एक सूत्र में बांधें जो हिन्दुस्तान की राष्ट्रीय आजादी और स्वतंत्रता की रक्षा करने के लिये राज़ी हैं।

चीनमें क्रान्ति की जीतने तथा उपनिवेशोंमें राष्ट्रीय स्वाधीनता के संघर्षों के बढ़ाव ने साम्राज्यवादियों के अन्दर—जो कि उपनिवेशोंके ऊपर अपना पंजा जमाये रखने के लिये बेतहाशा कोशिशें कर रहे हैं—बौखलाहट पैदा कर दी है। हार खानेवाले साम्राज्यवादियों की इन बौखलाहटपूर्ण सरगर्मियों को कम करके आंकना एक भूल होगी।

औपनिवेशिक और पराधीन देशोंमें कम्युनिस्ट पार्टियों, मजदूर सभाओं और तमाम जनवादी सगठनों को मेहनतकश जनता और तमाम प्रगतिशील ताकतों की जत्थेबन्दी करनी चाहिए; विदेशी साम्राज्यवादियों की उपनिवेश बनानेवाली योजनाओं का और साम्राज्यवादियों का साथ देनेवाले प्रतिक्रियावादियों की विश्वासघाती, जन-विरोधी भूमिका का रोज-ब-रोज उन्हें पर्दाफाश करना चाहिए।

साम्राज्यवादी देशों में कम्युनिस्टों को—जिनका कर्तव्य औपनिवेशिक जनता के समर्थन में जनवादी ताकतों की जत्थेबन्दी करना और उन्हें एक करना है—कॉमरेड स्तालिन के शब्दों को याद रखना चाहिए:

> "औपनिवेशिक और पराधीन देशों में कोई भी स्थायी विजय तब तक नहीं हासिल की जा सकती, जब तक कि उनकी आजादीके आन्दोलन और पश्चिम के अधिक उन्नत देशोंके सर्वहारा आन्दोलन के बीच एक वास्तविक सम्बंध नहीं कायम किया जाता।"

फ्रांसके मार्साई, सें नजायर तथा दूसरे बन्दरगाहोंमें जहाजियों, डॉक-मजदूरों और रेल-मजदूरोंने वियतनाम के औपनिवेशिक युद्ध के लिये जानेवाली युद्ध-सामग्री को छूने से इनकार करने के अपने वीरतापूर्ण काम के जरिये मजदूर वर्गके अन्तरराष्ट्रीय सहयोगकी एक शानदार मिसाल पेश की है।

रूस, चीन और जनताके जनतंत्रोंकी क्रान्तिका अनुभव सिखाता है कि जब कोई जनता सघर्ष में डटकर उतर पडती है और जब कम्युनिस्ट पार्टियॉ इस संघर्ष की अगुआई करने में समर्थ होती हैं, तब अन्दरूनी प्रति-क्रान्ति और विदेशी साम्राज्यवादियोंकी कोई भी ताकत उस जनता के जनसमूह को नहीं कुचल सकती जो क्रान्ति में जुट गया है।

पश्चिम की मेहनतकश जनता और औपनिवेशिक और पराधीन देशोंकी क्रान्तिकारी जनताके बीच सहयोगके भाईचारेमय सम्बंध कायम हो रहे हैं। करोड़ों-अरबों जनताका यह सहयोग ही वह चट्टान है जिससे टकरा कर साम्राज्यवादका जनाजा निकलेगा।

हिन्दुस्तानी जनता के राष्ट्रीय मुक्ति-संघर्ष की नयी मंज़िल

वी. बालाबुशेविच

[मास्कोकी प्रसिद्ध पत्रिका
" अर्थशास्त्र की समस्याएँ "
संख्या ८ से उद्धृत]

मार्क्सवाद-लेनिनवाद सिखाता है कि सर्वहारा वर्ग का नायकत्व उपनिवेशों और पराधीन देशोंकी जनता के राष्ट्रीय मुक्ति के संघर्ष की सफलता की निर्णायक शर्त है। केवल मजदूर वर्गके—सुसंगत रूपसे एकमात्र क्रान्तिकारी वर्गके-नेतृत्व के नीचे चलकर ही उपनिवेशों और पराधीन देशोंकी जनता साम्राज्यवादी जुएसे छुटकारा पा सकती है और सच्ची आजादी हासिल कर सकती है। पूँजीवाद के आम संकटके अत्यधिक तीव्र हो जाने, औपनिवेशिक व्यवस्थाके संकटके और अधिक गहरे हो जाने और औपनिवेशिक और पराधीन देशोंकी जनताके राष्ट्रीय मुक्तिके आन्दोलनके अभूतपूर्व बढ़ावकी परिस्थितियोंमे इस धाराकी प्रधान प्रवृत्ति—साम्राज्यवादी उत्पीडकों और देशके प्रतिक्रियावादियोंके खिलाफ उत्पीडित जनताके संघर्षके और अधिक व्यापक और तीक्ष्ण होनेकी तथा राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलनमें मजदूर वर्गकी प्रमुख भूमिकाके सुसंगत रूपसे मजबूत होने की प्रवृत्ति अपने-आपको और भी अधिक स्पष्ट रूपसे प्रकट करती है। आज अधिकांश औपनिवेशिक देशों के अन्दर मजदूर वर्ग साम्राज्यवादी उत्पीड़न के खिलाफ आम जनता के संघर्षका माना हुआ नेता बन चुका है। यह इस बातका सबूत है कि यह संघर्ष अपने विकास की नयी, उच्चतर अवस्था में पहुँच गया है।

* * *

आकार और जन-संख्या की दृष्टिसे औपनिवेशिक देशोंके अन्दर हिन्दुस्तानकी एक पहली जगह है। उसका भूमिक्षेत्र ४० लाख वर्ग किलोमीटर* से अधिक है और

* १ किलोमीटर=लगभग पौन मील

उसकी ४० करोड़ की जन-संख्या ब्रिटिश साम्राज्य की आबादी के तीन-चौथाई भागसे बड़ी और पूरी औपनिवेशिक दुनिया की आबादी के आधे से भी ज़्यादा है। यह स्वाभाविक है कि हिन्दुस्तानी जनताके स्वतंत्रता के संघर्षका तमाम जनवादी पक्षके लिये महान महत्व है।

हिन्दुस्तान एक बिल्कुल खेतिहर देश है। हिन्दुस्तान को फतह करने के बाद ब्रिटेनने उसे अपना खेतिहर और कच्चा माल देनेवाला पुछल्ला बना दिया। हिन्दुस्तानकी आबादो की बहुत बड़ी बहुसंख्या खेती-बारी करती है। मर्दुमशुमारी (१९४१) के आंकड़ों के मुताबिक ३३ करोड़ ९३ लाख आदमी या देशकी पूरी आबादी का ८७ फ़ी सदी से भी अधिक भाग गाँवों मे रहता है, और केवल ४ करोड़ ९७ लाख आदमी (आबादी के १३ की सदी के करीब लोग) शहरो मे रहते हैं।

प्राकृतिक और आबोहवा सम्बंधी परिस्थितियों के अत्यधिक अनुकूल होने के बावजूद हिन्दुस्तान की कृषि-व्यवस्था बिगड़ रही है और उत्पादन शक्तियों के विकास का अत्यंत नीचा स्तर ही उसकी विशेषता है। एक बहुत बड़ा खेतिहर देश होनेके बावजूद हिन्दुस्तान अपने ही देशकी आबादीका पेट नहीं भर सकता। न सिर्फ उसने अन्नका निर्यात (बाहर भेजना) बन्द कर दिया है, बल्कि वह उसका आयात करने (बाहर से मंगाने) के लिये मजबूर है। हिन्दुस्तान अकालोंका एक प्रख्यात देश है—ऐसे अकालोंका जो लाखों-करोड़ों मेहनतकशोंकी जिन्दगियों का नियमित रूपसे अन्त कर जाते हैं।

हिन्दुस्तानकी कृषि-व्यवस्थाके क्षयका कारण ब्रिटिश साम्राज्यवादका लम्बा शासन और भूमिके स्वामित्व के सामन्ती रूपके ऊपर आधारित खेतिहर सम्बंधों की वह व्यवस्था है जिसे ब्रिटेन के औपनिवेशिकों ने जमाया और पाल-पोसकर बढ़ाया है। कुल जितनी भूमि पर खेती होती है उसका दो-तिहाई से ज़्यादा भाग अंग्रेज और हिन्दुस्तानी जमींदारों की मुट्ठी में केन्द्रित है।

हिन्दुस्तान के जमींदारों का बहुत बड़ा भाग अपनी जमीनको बड़े-बड़े काश्तकारोंको पट्टे पर उठा देता है, ये काश्तकार उसे और भी छोटे-छोटे टुकड़ोंमें बाँटकर फिर खुद पट्टे पर दूसरों को उठा देते हैं। हिन्दुस्तान में शिकमी दर शिकमी काश्तकारों की यह "श्रृंखला" कभी—कभी बीसवीं या उससे भी अधिक कड़ी तक पहुँचती है। जमीन के मालिक के और उन किसानों के जो उस पर खेती करते हैं दर्म्यान किसानों की गर्दन पर सवार मुफ्तखोर दलालों के अनेक स्तर पर स्तर होते हैं। ज़मींदार हिन्दुस्तान में ब्रिटिश साम्राज्यवाद का एक मुख्य आधार-स्तंभ का काम देते हैं। हिन्दुस्तान के देहात हर तरह के ऐसे सामन्ती अवशेषों के जाल में जकड़े हुए हैं जो देश के आर्थिक विकास के मार्गमें बाधा बने हुये हैं और उसकी कृषि-व्यवस्था के क्षय को और भी गहरा बना रहे हैं।

इस बात के बावजूद कि हिन्दुस्तान औद्योगिक रूप से सबसे ज़्यादा विकसित उपनिवेशोंमें से एक उपनिवेश हैं, उसके उद्योग-धंधे बहुत ज़्यादा नहीं हैं। कपड़े और जूट के उद्योग पिछली शताब्दी के उत्तरार्ध में ही उत्पन्न हो गये थे और वे भारतीय उद्योग की सबसे विकसित शाखाएँ हैं। उनके बाद, दो विश्व-युद्धों के बीचके काल में, और खास तौर से, दूसरे विश्व युद्ध की पूर्व-वेला मे, धातुकारी (धातुशोध) का एक उद्योग विकसित हुआ। लेकिन यह वास्तविकता है कि लोहे और इस्पात के उद्योग का उत्पादन बिल्कुल थोड़ा है, १९४८ में वह सिर्फ़ १४,७०,००० टन कच्चे लोहे और ८,५४,००० टन इस्पात के बराबर था। दूसरे विश्व युद्ध ने रसायन उद्योग के विकास को—जो कि इस समय तक देशमे लगभग था ही नहीं—बढ़ावा दिया। चीनी, खाद्य-पदार्थों और चमड़े के उद्योग भी दोनों विश्व युद्धो के दर्म्यान काफ़ी बढ़े।

लेकिन, भारतीय उद्योगकी कुछ शाखाओं की उन्नतिके बावजूद, हिन्दुस्तान के औद्योगिक विकास का आम स्तर आज भी बहुत ही नीचा है। इस बातके बावजूद कि पूरी दुनिया की आबादी का लगभग छठवाँ भाग हिन्दुस्तान में बसता है, हिन्दुस्तान का औद्योगिक उत्पादन उसके तमाम उत्पादनके कुल मूल्य का केवल २० फी सदी होता है, और पूंजीवादी देशोंके औद्योगिक उत्पादन के २ फी सदी से भी कम के बराबर होता है। अकेली यह बात ही हिन्दुस्तान के उस अजहद पिछड़ेपन को खूब अच्छी तरह से साबित कर देती है जो ब्रिटिश साम्राज्यवाद के लुटेरे शासन का सीधा परिणाम है।

हिन्दुस्तान के उद्योग का रूप बिल्कुल औपनिवेशिक है। वह पूर्ण रूपसे ब्रिटिश पूँजी के ऊपर निर्भर है।

आज भी हल्के उद्योगोकी शाखाएँ—सूती कपड़े, जूट, खाद्य-पदार्थ आदि के उद्योग ही प्रमुख हैं। पहले ही की तरह आज भी देशकी कुल औद्योगिक पैदावार के अन्दर भारी उद्योगकी शाखाओं का और सबसे पहले धातुके उद्योगका खास अनुपात महत्वहीन बना हुआ है। इस तरह, १९४७ में, सूती कपड़े और जूटके उद्योग मे नौकर मजदूरों की संख्या हिन्दुस्तान के कारखानों के तमाम मजदूरों की संख्या के ४४ फी सदी से भी ज़्यादा थी; और धातुओं के और तथाकथित मशीन-बनाने के (जिनमे कि हिन्दुस्तान के पूंजीपतियों के ऑकडे तमाम तरह की मशीनोंको और दीगर वर्क-शापों को शामिल करते हैं) उद्योग मे लगे हुए मजदूरों की संख्या कुल १४ फी सदी थी। पाँच वर्षों में (१९३९ से १९४४ तक) हिन्दुस्तान के कारखानों में काम करने वाले कुल मजदूरो की संख्या के अन्दर धातु और और मशीन बनाने के उद्योगों के मजदूरों की संख्याका खास अनुपात कुल मिलाकर सिर्फ़ ३ फी सदी बढ़ा। युद्ध के वर्षों में हिन्दुस्तान के औद्योगीकरण के तेज गति से

बढ़ने के बारे में ब्रिटिश औपनिवेशिकों की मनगढ़न्तों का ये अंक-सूचिकाएँ खण्डन कर देती हैं। मशीन बनाने का उद्योग जो कि सच्चे औद्योगीकरण की बुनियाद और किसी देश की आर्थिक स्वतंत्रता का आधार होता है, हिन्दुस्तान में लगभग है ही नहीं। उद्योग की इस शाखाके पैदा होने और बढ़ने को रोकने के लिये दूसरे विश्व युद्ध के दर्म्यान भी ब्रिटिश साम्राज्यवादियों ने हर हरबे का इस्तेमाल किया था।

ब्रिटिश साम्राज्यवादकी एड़ीके नीचे दो शताब्दियोंकी औपनिवेशिक गुलामी और बहुत ही मजबूत सामन्ती अवशेषोंने हिन्दुस्तानकी उत्पादन शक्तियोंको बढ़नेसे रोके रखा है और इस देशको, जो प्राकृतिक साधनोंमे इतना सम्पन्न है, दुनिया के एक सबसे गरीब देशमें बदल दिया है और हिन्दुस्तानके करोड़ों मेहनतकशोंको ऐसा कंगाल बना दिया है कि वे भूखों मरते हुए अपनी जिन्दगीके बोझको घसीट रहे हैं।

अगस्त १९४७ मे ब्रिटिश साम्राज्यवाद द्वारा हिन्दुस्तान के दो हिस्सों में-हिन्दुस्तान और पाकिस्तान मे-बँटवारा कर देने ने और इन दोनों हिस्सो को डोमीनियन स्टेटस के रूपमें झूठी आजादी दे देने ने इन डोमीनियनों की अर्थ-व्यवस्था के औपनिवेशिक रूप मे कोई तब्दीली नही की है। बँटवारेका एक सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य ही यह था कि हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की अर्थ-व्यवस्था के पिछड़ेपन को और पक्का बनाया जाय, उनके स्वतत्र विकास के मार्ग मे मुश्किले खडी की जायें और ब्रिटिश पूंजी के ऊपर ज़्यादा से ज़्यादा निर्भर रहने की गारण्टी कर दी जाय। हिन्दुस्तान के बँटवारे ने देशके विभिन्न भागों के आर्थिक सम्बंधों को नष्ट कर दिया और दोनों डोमीनियनो को पहले से भी ज़्यादा कठिन आर्थिक स्थिति मे डाल दिया।

पाकिस्तान एक पिछडा हुआ खेतिहर देश है, जिसके पास खाद्य-पदार्थों और कुछ किस्मो के खेतिहर कच्चे माल (जूट, लम्बे रेशेवाली कपास) के तो काफी साधन हैं; लेकिन बडे कारखानों के उद्योग का वहाँ सर्वथा अभाव है। रेलकी वर्क-शापों को छोड़कर इस डोमीनियन का पूरा उद्योग बस १ ऊनी और १४ सूती कपडे की मिले, तथा ९ चीनी के, ५ सीमेण्ट के, ४ काँचके और २ तेल साफ़ करने के कारखाने हैं। कोयलेकी औसत सालाना खपत ३४ लाख टन है, लेकिन पाकिस्तान साल भरमे सिर्फ़ ३ लाख टन ही पैदा कर सकता है—और वह भी बहुत ही बुरी किस्म का। धातुशोध के उद्योगका पाकिस्तान में पूर्णतया अभाव है।

हिन्दुस्तानी डोमीनियन में ऐसे क्षेत्र हैं जो तुलनात्मक दृष्टिसे औद्योगिक रूपमें अधिक विकसित हैं। बँटवारे के समय तक देशके कारखानेवाले बडे पैमाने के सम्पूर्ण उद्योगका लगभग ९० प्रतिशत भाग यहीं पर था। इसके अलावा, हिन्दुस्तानी डोमीनियनको खाद्य-सम्बंधी पैदावारों और खेतिहर कच्चे मालकी कुछ

किस्मों के सम्बंध में बहुत बड़ी मुश्किलों का सामना करना पड़ रहा है, क्योंकि देश के महत्त्वपूर्ण खेतिहर क्षेत्र पाकिस्तान में चले गये हैं। जूट—जो कि हिन्दुस्तानी उद्योग की सबसे बड़ी शाखा है—लगभग पूर्ण रूप से उस इलाके में केन्द्रित है जो हिन्दुस्तानी डोमिनियन में चला गया है।

देश के बँटवारे के परिणाम-स्वरूप जूट का उद्योग देशी कच्चे माल से वंचित हो गया है, क्योंकि जूट की पूरी पैदावार का ७३ प्रतिशत पाकिस्तान की जमीन में केन्द्रित है। बम्बई और अहमदाबाद की कपड़ा मिलों का सम्बंध पंजाबके जिलों के उन इलाकों से खतम हो गया है जहाँ लम्बे रेशेवाली कपास पैदा की जाती है, क्योंकि वे पाकिस्तान में चले गये हैं। हिन्दुस्तानके बँटवारे ने दोनों डोमीनियनों की आर्थिक निर्भरताको बढ़ा दिया है और उनकी आर्थिक स्थितिको और भी तेजी से खराब कर दिया है और उनकी उत्पादन शक्तियों के विकासको और भी अधिक रोक दिया है।

इस सबसे ब्रिटिश साम्राज्यवादियों के लिये पाकिस्तान और हिन्दुस्तान दोनों को ब्रिटेन के खेतिहर और कच्चे माल सप्लाई करनेवाले पुछल्लों की हैसियत में बनाये रखने के लिये अनुकूल परिस्थितियाँ पैदा हो जाती हैं। हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की अर्थ-व्यवस्था पतन की स्थिति में है। दोनों ही डोमीनियनें ब्रिटेन के —और अब अमरीकी साम्राज्यवादियों के भी—लुटेरे शोषण और डाकूगिरी की बदस्तूर शिकार बनी हुई हैं। इस समय दोनों ही डोमीनियनों के औद्योगिक उत्पादन का स्तर युद्ध के जमाने में पहुँचे हुए स्तर से नीचा है। जूटके उद्योग का उत्पादन तो युद्ध के पहले के स्तर से भी नीचे गिर गया है। १९४६-४७ में सूती कपड़े का उत्पादन ३८,००,००,००,००० गज, या युद्ध के जमाने के सबसे अधिक उत्पादन का ७९ प्रति शत और १९३८-३९ के उत्पादन का ९० प्रति शत था; १९४७-४८ में कच्चे लोहे का गलाना युद्ध के दिनों के सबसे ऊँचे स्तर की तुलना में ७४.५ प्रतिशत और १९३८-३९ के स्तर से नीचा था। इस्पात और इस्पात की छड़ों का उत्पादन हालाँकि युद्ध के पहले के स्तर से काफी ऊँचा है फिर भी युद्ध के दिनों के उत्पादन के सबसे ऊँचे स्तर से नीचा है, और पिछले तीन सालों से वह बराबर गिरता जा रहा है।

हिन्दुस्तानके बँटवारेके बाद भी वास्तवमें दोनों ही डोमीनियनोंका ग्रेट ब्रिटेन के ऊपर आर्थिक, राजनीतिक और सैनिक रूपसे निर्भर रहना जारी है। और देश के बँटवारे के बाद भी ब्रिटिश पूंजीने हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की अर्थ-व्यवस्था के अन्दर अपनी प्रभुत्वपूर्ण हैसियतको बनाये रखा है और उसे और भी बढ़ा रही है। उदाहरण के लिये, यह चीज इस बातसे साबित हो जाती है कि दोनों डोमीनियनोंके उद्योग-धंधा की विभिन्न शाखाओं के अन्दर ऐसी बहुत-सी ब्रिटिश-हिन्दुस्तानी ज्वाइण्ट-स्टॉक (मिली-जुली पूंजीवाली—अनु) कम्पनियाँ कायम की गयी हैं जिनके

अन्तर्गत ब्रिटिश पूंजी के प्रमुख स्थान की गारण्टी है। इन कम्पनियों के अन्दर अपनी स्थितिका इस्तेमाल ब्रिटिश पूंजीपति हिन्दुस्तान के औद्योगीकरण के हित में करने की कतई कोशिश नहीं कर रहे हैं। यह भी सब को अच्छी तरह मालूम है कि बहुत सी संयुक्त कम्पनियाँ अपनी मुहर देकर हिन्दुस्तान में ऐसी चीजें पेश कर रही हैं जो कि मुख्यतया ब्रिटेन में तैयार की गयी हैं।

हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के शासक हल्कों ने जनता के हितों के साथ ग़द्दारी की है और अब अपनी सारी ताकत वे इन दोनों डोमीनियनों के अन्दर विदेशी पूँजी के प्रभुत्व के लिये अधिक से अधिक अनुकूल परिस्थितियाँ पैदा करने में लगा रहे हैं। बहुत दिन नहीं बीते जब कि इण्डियन एसोसियेटेड चेम्बर्स ऑफ कामर्स की वार्षिक सभाके सामने भाषण देते हुए भारत सरकार के अर्थ मंत्री, मथाई ने ब्रिटिश पूंजीपतियो को यह आश्वासन दिया था:—"हमारा इरादा ऐसा कोई भी कदम उठाने का नहीं है जो कि छोटी से छोटी मात्रा मे भी ब्रिटेन के हितों के लिये किसी प्रकार नुकसानदेह हो। इसके विपरीत अगर, वे हित जिनका आप प्रतिनिधित्व करते हैं देशमें कायम रहते हैं और उनका फलना-फूलना जारी रहता है तो हमें खुशी होगी।" (**पीपुल्स एज**, १९ सितम्बर १९४८) पाकिस्तान के शासक हल्को के प्रतिनिधि भी देश को विदेशी इजारेदारो के हितों का गुलाम बनाने के सम्बंध में अपनी आकाक्षाओं को ज़ाहिर करने के मामले में कुछ कम स्पष्ट-भाषी नहीं हैं!

युद्ध के बाद के वर्षों मे अमरीकी पूँजी हिन्दुस्तान की अर्थ व्यवस्था के अन्दर और भी तेज़ीसे घुस रही है। हिन्दुस्तान के आयात में अमरीका का खास अनुपात (वजन) १९३८ के ७.४ फी सदी से बढ़कर १९४७ में ३०.३ फी सदी हो गया और ब्रिटेन के भाग के बराबर हो गया जोकि उस वर्ष हिन्दुस्तान के कुल आयात का ३०.२ फी सदी था (१९३८ मे वह ३१.४ फी सदी था)। १९४८ में हिन्दुस्तानके आयात में अमरीका का खास अनुपात कुछ कम हुआ जबकि ब्रिटेन के भाग में थोड़ा-सा इजाफा हुआ। अमरीकी इजारेदार हिन्दुस्तानमें अपनी स्थिति को दृढ़ बनाने के लिये हर तरहसे कोशिश कर रहे हैं। हिन्दुस्तान और पाकिस्तान दोनों में भारतीय-अमरीकी ज्वाइण्ट स्टॉक कम्पनियों और कारबारों की स्थापना क्यों हो रही है, इसका उत्तर सबसे पहले इसी चीजसे मिलता है। इसी चीजसे इस बात का भी उत्तर मिलता है कि पुनर्निमाण और विकास का अन्तरराष्ट्रीय बैंक (इण्टरनेशनल बैंक ऑफ रिकन्स्ट्रक्शन एण्ड डेवलप-मेण्ट) ने हिन्दुस्तानको क्यों कर्जे दिये हैं—कर्जे जिन्हें कि बेशक, देशके औद्योगीकरण करनेके लिये नहीं, बल्कि खेती-किसानी और आवागमनके साधनोंका कास करनेके लिये सुरक्षित रखा गया है। हिन्दुस्तानी पूंजीपतियोंके मुखपत्र, **द 'ईस्टर्न इकनामिस्ट** ने अपने १४ जनवरी, १९४९ के अंकमें लिखा था

" हिन्दुस्तानको बहुत वर्षों तक विदेशी टेकनीकल अनुभवकी जरूरत होगी। और यह सब मुख्य-तया अमरीका और ब्रिटेनसे आना चाहिए।"

दुनिया के तमाम भागों में, और खास तौर से हिन्दुस्तान और पाकिस्तान में, उनके आपसी विरोधो और होड़ के संघर्ष के बावजूद ब्रिटिश और अमरीकी साम्राज्यवादी, दोनों ही राष्ट्रीय मुक्ति के संघर्ष को कुचलने में और दोनों डोमीनियनों के स्वतंत्र आर्थिक विकास के मार्ग मे कठिनाइयाँ पैदा करने में दिलचस्पी रखते हैं। हिन्दुस्तान और पाकिस्तान मे तथा एशिया महाद्वीप के दूसरे देशों मे भी अमरीकी और ब्रिटिश नीतिके उद्देश्य का आधार पहले ही की तरह आज भी साम्राज्यवादी शासन को मजबूत करना और उनके औद्योगीकरण को हर प्रकार से रोकना है जिससे कि ये देश औपनिवेशिक खेतिहर कच्चे मालके पुछल्ले और शासक साम्राज्यवादी राज्य के मालों के लिये बाजार बने रहें।

अंग्रेज़-अमरीकी महाजनी (फिनान्स) पूंजी का हुक्म पाकर इंगलैण्ड और अमरीका के प्रतिक्रियावादी पत्रों ने हालमें इस झूठी बात (थीसिस) के प्रचार को बढ़ा दिया है कि पूर्व के देशों में भारी उद्योग-धंधो का विकास इन देशोंकी आवश्यकताओं के अनुकूल नहीं है, कि उन्हे मुख्यतया खेती-किसानी की चीजों के पैदा करने के सम्बंध मे ही कोशिशे करनी चाहिये। इस तरह की बकवासके जरिये ब्रिटिश और अमरीकी साम्राज्यवादी अपनी नीति के असली उपनिवेशी-करण सम्बंधी सार को ढंकने की, और एशिया के देशों में अपने प्रभुत्व के पुराने आर्थिक आधार को बनाये रखने और उसे बढ़ाने की गारण्टी करने की कोशिश कर रहे हैं।

हिन्दुस्तान और पाकिस्तान मे औद्योगिक साजो-सामान के आयात को अमरीका और ब्रिटेन अब भी हर तरह से रोक रहे हैं। इन डोमीनियनों के साथ उनके व्यापार का रूप आज भी स्पष्ट तौर पर औपनिवेशिक है।

इन तथ्यों के बावजूद हिन्दुस्तान और पाकिस्तानकी शासक पार्टियों—राष्ट्रीय कांग्रेस और मुस्लिम लीग—के नेता इस तरह बातें करते हैं जैसे कि उनके देश मे एक " रक्तहीन क्रान्ति " हो गयी है, जैसे कि उन्हे " आजादी " हासिल हो गयी है और जैसे कि दोनों डोमीनियनों के " तेज औद्योगीकरण " के लिये पूर्व परिस्थितियाँ पैदा हो गयी हैं। ऊपर उद्धृत किये गये तथ्य इस तरह के झूठ का निर्णायक रूपसे खण्डन करते हैं। यह चीज बिल्कुल साफ़ है कि साम्राज्यवादी देशों की इजारे-दारियों के प्रभुत्व की परिस्थितियों के अन्तर्गत जिनमें कि हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के शासक इल्के शोषक वर्गों के हितों द्वारा निर्धारित नीति पर अमल कर रहे हैं, किसी भी प्रकार की आर्थिक प्रगति कर सकना असंभव है। साम्राज्यवादी उत्पीडन और औपनिवेशिकों द्वारा पाले-पोसे गये सामन्ती अवशेषों से पूर्ण मुक्ति और हिन्दुस्तान और पाकिस्तान का बुनियादी तौर से जनवादी पुनःनिर्माण ही

उन स्थायी पूर्व-परिस्थितियों को पैदा कर सकता है जिनसे कि उनके आर्थिक पिछड़ेपन.को खतम किया जा सके और उनकी उत्पादन-शक्तियों का तेजी से विकास किया जा सके।

* * *

दूसरे विश्व युद्धके बाद हिन्दुस्तान मे जो साम्राज्यवाद-विरोधी जन-आन्दोलन अभूतपूर्व शक्तिके साथ विकसित हुआ वह उपनिवेशों और पराधीन देशों की जनता के राष्ट्रीय मुक्तिके संघर्षके आम क्रान्तिकारी बढ़ाव का ही एक अभिन्न अंग था। इस आन्दोलनने नयी विशेषताएँ हासिल कीं जो कि सार रूपमे उसे हिन्दुस्तान की आम जनता के क्रान्तिकारी संघर्ष की पिछली तमाम मंजिलों से भिन्न बना देती हैं। युद्ध के बाद, हिन्दुस्तान की जनता के राष्ट्रीय मुक्तिके आन्दोलनने एक नयी मंजिल में प्रवेश किया। यह मंजिल सबसे पहले इस बात से निर्धारित होती है कि उसमें आम जनता के, और साम्राज्यवादी जुए से मुक्ति, वास्तविक स्वाधीनता, और देशके जनवादी पुनर्निमाण के लिये उसके संघर्षके आगे-आगे, मजदूर वर्ग था जिसका नेतृत्व कम्युनिस्ट पार्टी कर रही थी। वह इस बात से भी निर्धारित होती है कि अब हिन्दुस्तान के बड़े पूंजीपति खुले तौर से प्रतिक्रिया और साम्राज्यवाद के पक्षमे जाकर मिल गये हैं।

राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के कर्तव्य भी बढ़ गये हैं। आज हिन्दुस्तान की जनता के संघर्ष का उद्देश्य विदेशी साम्राज्यवाद के खिलाफ़, और देशमें जनवादी परिवर्तनों को भी, और सबसे पहले, खेतिहर क्रान्ति को निर्णायक रूप से पूरा करना, दोनों है, जिसके बिना देशको आर्थिक भंवर से उबारना और विशाल किसान जनता को मजदूर वर्ग की तरफ जीतना असंभव है।

देशके अन्दर वर्ग शक्तियों की नयी जत्थेबंदी होना और हिन्दुस्तानी जनताके जन-आन्दोलन के नेता के रूप में सर्वहारा वर्ग का उदय होना और साथ ही साथ, संघर्ष के कर्तव्यों के तत्व का अधिक व्यापक होना, ये सब इस चीज को जाहिर करते हैं कि हिन्दुस्तान के राष्ट्रीय मुक्ति के आन्दोलन ने अपने विकास की एक नयी और अधिक ऊंची अवस्थामें प्रवेश किया है और यह कि अब वह और भी तेज गति से आगे बढ़ेगा।

हिन्दुस्तान के राष्ट्रीय मुक्ति के आन्दोलन का नेतृत्व मजदूर वर्ग के हाथमें जा पहुँचे, इस स्थिति को देश के ऐतिहासिक और सामाजिक-आर्थिक विकास के पूरे दौरने पैदा किया था।

पूंजीवादी उद्योग-धंधोंके विकास के साथ-साथ--जिसे कि ब्रिटिश औपनिवेशिक अपनी कोशिशों के बावजूद पूर्ण रूपसे रोकने में समर्थ नहीं हुए

थे—देशमें एक ऐसा मजदूर वर्ग भी उठा, विकसित हुआ और सुदृढ़ बना जिसके ऊपर कि राष्ट्रीय और सामाजिक मुक्ति के लिये हिन्दुस्तान की आम मेहनतकश जनता के संघर्ष का नेतृत्व करने और उसे विजय की मंजिल तक ले जाने की जिम्मेदारी है।

कामरेड स्तालिन ने १९२५ में ही, पूर्व के मेहनतकशों के विश्वविद्यालय के सामने पूर्व के औपनिवेशिक और पराधीन देशों के विकास की खास विशेषताओं के सम्बंध में बात करते समय अपने ऐतिहासिक भाषण में बताया था कि इनमें से कुछ देशों मे, उदाहरण के लिये हिन्दुस्तान मे, देशी सर्वहारा का एक कमोबेश बड़ी संख्या वाला वर्ग उत्पन्न हो गया है, और "इस तरह के देशों में सर्वहारा वर्ग के नायकत्व का और जनताको समझौतावादी राष्ट्रीय पूंजीपति वर्गके असरसे मुक्त करनेका सवाल अधिकाधिक फौरी रूप धारण करता जा रहा है।" (स्तालिन; **पूर्व के मेहनतकशों के विश्वविद्यालय के सामने भाषण**, १८ मई, १९२५; पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस द्वारा प्रकाशित अंग्रेजी लेख संग्रह: **औपनिवेशिक प्रश्न पर**, पृष्ठ १६)

उस समयसे हिन्दुस्तान के औद्योगिक सर्वहाराकी संख्या काफी बढ़ गयी है। १९४७ मे हिन्दुस्तानके कारखानो वाले उद्योग-धंधों में, खानों में और रेलवेके याता-यात में लगभग ३५ लाख लोग काम करते थे। बेशक, ४० करोड़ आबादी के एक देश के लिये यह बहुत ही छोटी संख्या है, और वह हिन्दुस्तान के औपनिवेशिक पिछडेपन का सबूत देती है। यह सच है कि चायबागानो, सिंचाई के कारबारों आदि में भी मजदूरों की काफी संख्या है। अन्तमें, सरकारी आंकड़ों के मुताबिक़ भी हिन्दुस्तानके खेतिहर मज़दूरों की संख्या कई करोड़ है।

लेकिन, क्रान्तियों में, राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलनों में, सर्वहारा वर्ग की भूमिका और महत्व उसकी संख्या से इतने नहीं निर्धारित होते जितने कि, सबसे पहले, उसके संगठन से, तमाम मेहनतकशों के साथ उसके सम्बंधों की दृढ़ता से। सर्वहारा वर्ग ही एक ऐसा वर्ग है जो अन्त तक क्रान्तिकारी है, और इसी हैसियत से उसके ऊपर उत्पीडकों और शोषकों के खिलाफ़ तमाम मेहनतकशों के संघर्ष का नेता बनने की, उनका नायक होने की जिम्मेदारी है। उपनिवेशों में जहाँ कि किसानों के—जो कि आबादी का अधिकांश भाग होते हैं—शोषण के रूप भयानक होते हैं, सर्वहारा वर्ग द्वारा किसान जनता के साथ एक स्थायी मैत्री पैदा करने के लिये, सर्वहारा वर्ग द्वारा किसानों के ऊपर अपने विचारधारात्मक और संगठनात्मक नेतृत्वको हर प्रकार से सुदृढ़ करने के लिये तथा साम्राज्यवाद और अन्दरूनी प्रतिक्रियावादियों के खिलाफ जनता के संघर्ष में मजदूर वर्ग द्वारा अपना नायकत्व कायम करने के लिये एक व्यापक आधार मौजूद होता है।

(शेष पृष्ठ ४३ पर)

चीनी क्रान्ति और स्तालिन

चेन पो-ता

चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय
कमिटी के सूचना विभाग के उप-प्रधान

स्तालिनकी साठवीं वर्षगाँठ मनाने के लिये हुई येनान की मीटिंगमें कॉमरेड माओ जे-दुंग ने कहा था :

" स्तालिन विश्व क्रान्तिके नेता हैं। यह एक सर्वोच्च महत्व की चीज है। यह एक बड़ी घटना है कि मानवजातिके पास स्तालिन हैं। चूंकि वह हमारे पास हैं, इसलिये चीजें ठीक तरह चल सकती हैं। जैसा कि आप सब जानते हैं, मार्क्स की मृत्यु हो चुकी है और इसी तरह एंगेल्स और लेनिन की भी। अगर स्तालिन न होते तो संचालन करने वाला कौन होता ? मगर वह हैं—और यह सचमुच एक सौभाग्य की चीज है। आज दुनियामें एक सोवियत सघ, एक कम्युनिस्ट पार्टी और एक स्तालिन मौजूद हैं। इस तरह दुनियाका कामकाज ठीक तरहसे चल सकता है।"

हमारी चीनी पार्टी के कॉमरेडों को कॉमरेड माओ जे-दुंग ने बताया :

" हमें उनका अभिनन्दन करना चाहिये, उनका समर्थन करना चाहिये और उनसे सीखना चाहिये। हमें उनसे दो चीजें सीखनी चाहिये : उनका सिद्धान्त और उनका काम।"

मार्क्सवाद–लेनिनवाद को विकसित करने में स्तालिन की खूबियों को कॉमरेड माओ जे–दुंग ने समझाया। उन्होंने समझाया कि सोवियत सघमें समाजवादी निर्माण का काम पूरा करने में स्तालिन का निर्देशन " एक विशाल महत्व की चीज " थी। उन्होंने समझाया कि सिद्धान्त और भौतिक सहायता, दोनों से स्तालिनने चीनी जनता के ध्येय की मदद की थी। कॉमरेड माओ जे-दुंगने कहा,

" भूतकालमें मार्क्सवाद-लेनिनवाद विश्व-क्रान्तिका सैद्धान्तिक निर्देशन करता था। अब उसमें कुछ और जुड़ गया है, यानी यह कि विश्व क्रान्तिको भौतिक सहायता दी जा सकती है। इसका महान श्रेय स्तालिन को है।"

दस वरस और बीत गये हैं और अब हम कॉमरेड स्तालिन की सत्तरवीं वर्षगॉठ मना रहे हैं। यह वर्षगॉठ मानवजातिके दूसरे विश्व युद्ध से गुजर चुकने और सोवियत संघ की अगुआई में दुनिया की जनता द्वारा जर्मनी, इटली, जापान, तीन फ़ासिस्ट साम्राज्यवादी देशोंको हरा चुकने के बाद पड़ी है। वह ऐसे समय में पड़ी है जब दुनिया में जनता के अनेक नये जनतंत्रों का उदय हो चुका है। वह ऐसे समयमें आयी है जब कि चीनी जनता जापानी साम्राज्यवादको हरा चुकी है; और उसके बाद, कुओमिन्ताग के क्रान्ति-विरोधी शासन का तख़्ता उलटने और अमरीकी साम्राज्यवाद की हमलावर शक्तियों को निकाल बाहर करने के लिये आगे बढ़कर उसने चीनी जनताके प्रजातंत्रकी स्थापना कर ली है। वह ऐसे समय में आयी है जब दुनिया में सोवियत संघ अतुलनीय रूपसे शक्तिशाली हो गया है जबकि विश्व साम्राज्यवादी व्यवस्था, जिसमें आगे-आगे अमरीकी साम्राज्यवाद है, लड़खड़ा रही है। पिछले दस वरसों के दौरान में एक के बाद दूसरी जो महान ऐतिहासिक घटनाएँ हुई हैं उन्हें स्तालिन के नाम से जुदा नहीं किया जा सकता। और न उन्हें स्तालिनके कामसे या हर देश की जनताको स्तालिन की मददसे ही जुदा किया जा सकता है। दुनिया की पिछले दस बरसों की इन ऐतिहासिक घटनाओं ने यह भी साबित कर दिया है कि स्तालिन न सिर्फ सोवियत जनताकी, बल्कि दुनियाकी तमाम प्रगतिशील मानवजाति की भी विजयका फरहरा हैं। उन्होंने उस बातका भी और सबूत दिया है जो कॉमरेड माओ जे-तुंग ने दस बरस पहले बतायी थी :

> " स्तालिन विश्व क्रान्तिके नेता हैं। यह सर्वोच्च महत्व की चीज है। यह सचमुच एक बड़ी घटना है कि मानवजाति के पास स्तालिन हैं। चूँकि हमारे पास वह हैं, इसलिये चीजें ठीक तरह से चल सकती हैं। " दुनिया में स्तालिन हैं, यह " सचमुच एक सौभाग्य की घटना है। "

दुनिया के लिये स्तालिन का जन्म-दिन " मानवजाति का दिन '' है। जिसके सम्बंध सबसे ज्यादा संसार-व्यापी रहे हैं और मार्क्स, एंगेल्स और लेनिन के बाद से मानवजाति की मुक्ति के ध्येय के लिये जिसके काम सबसे ज़्यादा विशाल रहे हैं, संसार की ऐसी महान विभूति की, इस अपूर्व रूपसे प्रतिभाशाली शिक्षक की सत्तरवीं वर्षगाँठको चीनी जनता सोवियत जनताके और दुनिया भर की तमाम प्रगतिशील मानवजातिके साथ-साथ मना सकती है, यह बात खुद ही उसका बड़ा सौभाग्य है। यह उत्सव मनुष्य जातिकी मुक्तिका और मानवताकी आशा और भविष्यका अभिनन्दन है।

पर स्तालिनका अभिनन्दन करनेके लिये हम चीनी लोगों के पास विशेष कारण हैं। वे हैं : चीनी क्रान्ति के साथ स्तालिन का निकट सम्बंध; चीनी जनता के भविष्य के बारे में उनकी फ़िक्र, और चीनी क्रान्तिके सवालों के सम्बंध में उनकी महान सैद्धान्तिक देन।

१

द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के इस महान वैज्ञानिक, विश्व क्रान्तिके शिक्षक, स्तालिनने चीन की पहली महान क्रान्तिके समय चीन की ठोस परिस्थितियों का ठोस विश्लेषण करके चीनी क्रान्तिके बारेमें अनेक सवालों की स्थापना की, और उन्होंने उनके अत्यंत ओजस्वी हल बताये। इस तरह उन्होंने क्रान्ति-विरोधी ट्राटस्कीवादियों द्वारा चीनके सवाल पर की गयी बकवासको खतम कर दिया और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को बोल्शेविज़्म के रास्ते पर चलने में मदद दी। इस दौरमें चीनके बारेमे लिखे गये स्तालिन के अनेक लेख क्रान्तिकारी सिद्धान्त और क्रान्तिकारी अमलके मेलके आदर्श उदाहरण हैं; मानवजाति के भविष्य के बारेमें मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त के भाण्डार के वे एक महत्वपूर्ण अंग हैं। वे न सिर्फ उस समय ही सही थे, बल्कि पिछले लगभग बीस बरसके दौरानमें चीनी क्रान्तिके व्यावहारिक अनुभव ने भी उन्हें पूरी तरह सही साबित कर दिया है।

जब चीनी जनताकी क्रान्तिकारी किरणें प्रकट ही हो रही थीं स्तालिनने तभी समझ लिया था कि चीनी क्रान्तिके भीतर असीम शक्ति है। हालमें अक्तूबर क्रान्तिकी सालगिरहके उत्सवके अवसर पर एक रिपोर्टमें मालेन्कोव ने उस भविष्यवाणी को खास तौरसे याद किया था जो स्तालिन ने १९२५ में ही की थी :

> "चीनमें क्रान्तिकारी आन्दोलन की ताकतें अकूत हैं। अभी उन्होंने अपने को अच्छी तरह बाअसर नहीं बनाया है। लेकिन भविष्य में वे अपने को बाअसर बनायेंगी। पूरब और पश्चिमके जो शासक इन ताकतों को नहीं देखते और उनको पूरा महत्व नहीं देते वे इससे नुकसान उठायेंगे।"

स्तालिन की इस भविष्य-वाणी का आधार चीन की राजनीतिक, आर्थिक और दूसरी परिस्थितियों का मूल्याकन, और चीनी समाज के भीतर शक्तियों का आपसी सम्बंध था। उसका आधार दुनिया की राजनीतिक, आर्थिक और दूसरी परिस्थितियों का मूल्याकन और दुनिया की विभिन्न शक्तियों का आपसी सम्बंध भी था।

१९२६ के नवम्बर में जब स्तालिन ने चीनी क्रान्ति की, भावी संभावनाओं के बारे में लिखा था तो चीन के बारे में उन्होंने यह महत्वपूर्ण मूल्यांकन किया था :

> "चीनी क्रान्ति की पहल-कदमी करनेवाले की और नेता की भूमिका, चीनी किसानों के नेता की भूमिका अवश्यम्भावी रूपसे चीन के सर्वहारा वर्ग और उसकी पार्टी के हाथ में आयेगी।"

स्तालिन द्वारा यह मूल्याकन चीनके राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग की कमजोरीको ध्यान में रखकर किया गया था। यह मूल्याकन अत्यधिक महत्व रखता है। क्योंकि अगर

चीनका सर्वहारा वर्ग चीनी क्रान्तिका नेतृत्व सम्हाल सकता, तो चीनके किसान और दूसरी तमाम आम जनता चीन के सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में अपनी क्रान्तिकारी शक्ति को पूरी तरह विकसित कर सकती थीं। और, दुनिया की लगभग एक-चौथाई आबादी वाले इस देश की जनता के इस चीज़को पूरा कर लेने पर दुनिया के नक्शेका बदल जाना लाज़िमी है।

यह ज़ाहिर ही है कि जहाँ तक दुनिया का सवाल था, स्तालिन उस प्रसिद्ध नियम को आधार बनाकर चले जो पूँजीवादी देशोंमें असमान राजनीतिक और आर्थिक विकासके बारेमें और साथ ही साम्राज्यवाद के युगमें उनके अन्तरविरोधों के अभूतपूर्व रूपसे तेज़ होनेके बारे में लेनिनने खोजा था। इसके आधार पर उन्होंने (स्तालिनने—अनु.) भविष्यवाणी की कि, रूसकी अक्तूबर क्रान्ति के बाद, यह संभव है कि चीनी क्रान्ति साम्राज्यवादी मोर्चे के अन्दर पूरब में दरार डालना जारी रखे। सोवियत संघ की मौजूदगी और उसकी ताकत को भी स्तालिन ने अपनी इस बातका आधार बनाया था। अपने लेख "**चीनी क्रान्ति की भावी सम्भावनाएँ**" में उन्होंने बताया था :

> "चीन की बगल में सोवियत संघ मौजूद है और विकसित हो रहा है। यह लाज़िमी है कि उसके क्रान्तिकारी अनुभव और सहायतासे साम्राज्यवादके ख़िलाफ़ और चीनके मध्ययुगीन सामन्ती अवशेषोंके ख़िलाफ़ चीनी जनता के संघर्ष आसान बनें।"

चूँकि स्तालिन की भविष्यवाणी का आधार दृढ़ सैद्धान्तिक बुनियाद थी, इसलिये चीनी जनता के संघर्ष के असाधारण तौर पर गहरे रूपको उन्होंने समझ लिया था। इसलिये चीनी क्रान्तिके हर कालमें, और चाहे उसे कितनी ही गंभीर हारों का सामना क्यों न करना पड़ा हो, उन्हें पूरा विश्वास था कि आख़िर में वह आगे बढ़ेगी और फ़तह हासिल करेगी।

१९२७ में क्रान्ति के साथ च्यांग काई-शेक की गद्दारी के बाद जब ट्राटस्कीवादी गुट ने अपनी बकवास के ज़रिये चीनी क्रांति का तुर्की की "क्रांति के कमालवादी रूप" के साथ घुटाला किया तो स्तालिन ने उस गुटका खण्डन किया। स्तालिन ने चीन और तुर्की के फ़र्कका विश्लेषण किया और बताया कि चीन में "क्रांति के कमालवादी रूप" की संभावना नहीं है। स्तालिन ने कहा :

> "चीन में अपनी पुरानी जगहों को या कम से कम उसके एक हिस्से को बनाये रखने के लिये साम्राज्यवाद को राष्ट्रीय चीन के जीवित शरीर पर प्रहार करके उसको छोटे-छोटे टुकड़ों में काटना पड़ता है और उसके पूरे के पूरे प्रान्तों को छीनना पड़ता है।

"इसलिये हालाँकि तुर्की में साम्राज्यवाद के ख़िलाफ लड़ाई कमालवादियों की अपूर्ण साम्राज्यविरोधी क्रान्ति के साथ खतम हो सकती है, पर चीन में उसे एक गहरा जनता का और साफ-साफ राष्ट्रीय रूप अख्तियार करना होगा और कदम-ब-कदम इतना फैलना होगा कि वह साम्राज्यवाद के ख़िलाफ़ एक संगीन सग्राम का रूप ले ले, और सारी दुनिया में साम्राज्यवाद की बुनियादों तकको हिला दे।" (स्तालिन : **सुन यात-सेन विश्व-विद्यालय के विद्यार्थियोंसे बातचीत**)

स्तालिनने यह भी बताया :

"चीनमें या तो चाग सो-लिन और चाग सुंग-चांग जैसे चीनी मुसोलिनी जीतेंगे और बादमें किसान क्रान्तिके उठानके द्वारा उनका तख्ता उल्टा जायगा, या फिर वूहान जीतेगा (यह हवाला उस समय के क्रान्तिकारी वूहान का है— चेन पो-ता)। इन दो पक्षोंके बीच, दर्म्यानी रास्ता ढूँढ़ने की कोशिश करने में च्यांग काई-शेक और उसके अनुयायी लाजिमी रूपसे खतम होकर चाग सो-लिन और चाग सुंग-चागकी ही गति पायेंगे।" (स्तालिन : **सुन यात-सेन विश्व-विद्यालयके विद्यार्थियों से बातचीत**)

च्याग काई-शेक के कदमों पर चलकर जब वाग चिंग-वाई ने भी क्रान्ति के साथ गद्दारी की और ट्राटस्कीवादी गुट चीनी क्रान्तिके दिवालियेपन के बारेमें बड़-बड़ाने लगा तो भी स्तालिनने इस गुटका खण्डन करना जारी रखा। उन्होंने जोर देकर कहा कि चीनमें सुधारवाद की कोई गुंजाइश नहीं है। स्तालिनने कहा :

"खुद पुराने और नये फौजीशाहों के ही बीच नये सिर से लड़ाई छिड़ गयी है, और यह लाजिमी है कि इससे प्रतिक्रान्ति की ताकत कमजोर हो, किसानों की बरबादी हो तथा उनके अन्दर कटुता फैले।

"अभी चीनमें ऐसा एक भी दल या सरकार नहीं है जो स्तोलिपिनों जैसे सुधार करने के योग्य हो जिससे कि शासक दलको शक्ति पानेका सहारा मिले।

"जिन लाखों किसानों ने जमींदारों की जमीन पर कब्जा कर लिया है उनको थामना और दबाना आसान नहीं है।

"मेहनतकश जनताके बीच सर्वहारा वर्ग की प्रतिष्ठा दिनोंदिन बढ़ती जा रही है और उसकी ताकत खतम होनेसे बहुत दूर है।"

(स्तालिन : **आजकी घटनाओं पर· टिप्पणी : चीन पर**)

भविष्यवाणियों की कसौटी घटनाओं का विकास है।

१९२७ के बादसे चीन में अनेक घटनाएँ हुई हैं : च्यांग काई-शेक चीन का मुसोलिनी बना और चांग सुंग-चांग की जगह ली; कुओमिन्ताग के नये और पुराने

युद्धबाज सरदारों के बीच उलझी हुई लड़ाइयाँ हुईं; चीनकी किसान क्रान्तिका उठान आया; कुओमिन्तांग के क्रान्ति-विरोधी शासन की तरफ़ से की गयी "सुधारवाद" की तमाम कोशिशें दिवालिया हुईं; चीन के काट-काट कर हिस्से कर लिये गये— पहले जापानी साम्राज्यवादियों द्वारा, फिर अमरीकी साम्राज्यवादियों द्वारा; चीनी जनता ने जापानी और अमरीकी साम्राज्यवादके खिलाफ जिन्दगी और मौत की लड़ाई शुरू की; इन लड़ाइयों ने सारी दुनिया में साम्राज्यवाद की नींव को हिला दिया, **च्यांग-काई-शेक की भी चांग सो-लिन और धांग सुंग-चांग जैसी गति हुई और वह क्रान्तिविरोधी राजनीतिक मंच से नीचे गिर गया है।** घटनाओं के इस क्रमने स्तालिन की उन भविष्यवाणियोंको पूरी तरह सही साबित किया जो उन्होंने बीस बरस से पहले की थीं।

लगभग २० बरस की उसकी लड़ाई के दौरान में चीनी जनता को स्तालिन की भविष्यवाणियों ने उत्साहित किया है। उन्होंने साफ-साफ दिखा दिया है कि क्रान्तिकारी विज्ञान एक अदम्य शक्ति है। साथ ही साथ उन्होंने उस शर्मनाक तरीकेका भी पर्दा-फाश कर दिया जिसके जरिए ट्राटस्कीवादी और तमाम क्रान्ति-विरोधी विदूषक च्यांग काई-शेक और वाग चिंग-वाईको उछाल रहे थे।

३

चीनी क्रान्तिके रूपके सवालके सम्बंधमें १९२७ की मई में स्तालिनने यह आम परिणाम निकाला था :

> "आज की चीनी क्रान्ति क्रान्तिकारी आन्दोलनों की दो धाराओं का— सामन्ती अवशेषों के खिलाफ और साम्राज्यवादके खिलाफ़ आन्दोलनों का— मेल है। चीनकी पूँजीवादी जनवादी क्रान्ति सामन्ती अवशेषों के खिलाफ़ लड़ाई और साम्राज्यवादके खिलाफ लड़ाई का मेल है।" (स्तालिन: **चीनी क्रान्ति और कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल के कर्तव्य**)

इस निष्कर्ष पर स्तालिन चीनी समाजके अपने गहरे विश्लेषणके जरिये पहुँचे। चीनी क्रान्तिके सवालोंके सम्बंधमें इस निष्कर्ष का बहुत भारी ऐतिहासिक महत्व था। जैसा कि स्तालिनने बताया था: उस समय "चीनी क्रान्तिके सवालों पर कौमिण्टर्न की पूरी नीति की शुरुआत इसीसे होती है।"

ठीक तभी ट्राटस्कीवादी इस नीतिका विरोध कर रहे थे। वे सोचते थे कि विदेशोंके सम्बंधमें चीनका सवाल सिर्फ़ कस्टम्स (चुंगियों) का सवाल है। इस तरह वे चीनी क्रान्तिके साम्राज्यवाद-विरोधी रूपका विरोध करते थे। चीनके सामन्ती

अवशेषोंके अत्यंत प्रधान असरसे उन्होंने इन्कार किया; इस तरह वे चीनी क्रान्तिके सामन्त-विरोधी रूपका विरोध करते थे।

स्तालिन ने बताया कि ट्राटस्की और उसके बगलबच्चों का दृष्टिकोण चांग सो-लिन और च्याग काई-शेक का क्रान्ति-विरोधी दृष्टिकोण था। जैसा कि सभी जानते हैं, चूँकि चीन के ट्राटस्कीवादियों ने ट्राटस्की के तमाम क्रान्ति-विरोधी विचारों को और साथ ही चीन के बारे में ट्राटस्की के इन क्रान्ति-विरोधी विचारों को अपना आधार बनाया, ठीक इसी वजहसे दूसरे देशोंके ट्राटस्कीवादियों के साथ-साथ उन्होंने प्रतिक्रान्ति का रास्ता अख्तियार किया।

स्तालिन ने कहा :

> "चीन की पूँजीवादी जनवादी क्रान्ति की धार सिर्फ सामन्ती अवशेषों के खिलाफ ही नहीं है। उसकी धार साथ ही साथ साम्राज्यवाद के खिलाफ भी है।" (स्तालिन, **चीनी क्रान्ति और कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल के कर्त्तव्य**)

चीन की सामाजिक परिस्थितियों के आधार पर जब क्रान्ति का यह रूप निश्चित हो जाता है, सिर्फ तभी किसी भी ठोस ऐतिहासिक परिस्थिति में वर्ग सम्बंधों में ठोस परिवर्तनों का हमारी पार्टी सही-सही मूल्याकन कर सकती है जिससे कि वह क्रान्ति के विशिष्ट कर्तव्यों को निर्धारित करे, क्रान्तिकारी मोर्चे को सगठित करे, क्रान्तिका नेतृत्व करके उसे आगे ले जाये, और चीनी क्रान्ति के लिये ऐसी संभावना पैदा करे कि चीनी मजदूर वर्ग के नेतृत्व में वह पूँजीवादी जनवादी क्रान्ति से आगे बढ़कर समाजवादी क्रान्तिका रूप ले ले।

१९२७ में चेन तू-सियू के अवसरवाद ने स्तालिन के ठीक इसी द्वन्द्वात्मक विश्लेषण का विरोध किया था। बाद में चेन तू-सियू आदि अवसरवादी क्रान्ति-विरोधी ट्राटस्कीवाद में मिल गये। इस बात को हरेक जनता है, इसलिये उसके बारे में और ज़्यादा न कहेंगे।

यहाँ पर यह बात बता देनी चाहिये कि १९२७ के बाद के लगभग २० बरसके दौरान में हमारी पार्टी के भीतर दायें या "बायें" अवसरवाद की जो गलतियाँ हुई हैं उनका कारण, आम तौर पर, सबसे पहले, साम्राज्यवाद-विरोधी या सामन्तवाद-विरोधी पहलू को नजरअन्दाज करके क्रान्तिके रूपके बारेमें स्तालिन के इस द्वन्द्वात्मक विश्लेशण को भंग करना ही था।

मिसालके लिये, दस बरस के गृह-युद्ध के दौरमें जिन कॉमरेडों ने "बायें" अवसरवाद की गलतियाँ की थी उन्होंने बहुत अरसे से (संघर्ष के—अनु०) साम्राज्यवाद-विरोधी पहलू को नजरअन्दाज किया था। उन्होंने उस चीज की अवहेलनाकी जो

स्तालिन ने बतायी थी :

> " चीन की पूँजीवादी जनवादी क्रान्ति की विशेषता साम्राज्यवाद के खिलाफ़ लड़ाई का तेज़ होना है।" (स्तालिन : **चीनी क्रान्ति और कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल के कर्त्तव्य**)

इसलिये, वे इसमें दक्ष न थे कि स्थिति का फ़ायदा उठाकर साम्राज्यवाद-विरोधी मोर्चेको सही तरह सगठित कर सकें जिससे कि किसान क्रान्तिके संघर्षों से उसे मिला सकें और अपने अकेलेपनको खत्म कर सकें। इस दौरमें उन्होंने " समाजवादी क्रान्ति में परिवर्तन" करने का मुहिमबाजी नारा भी समय से पहले ही उठा दिया।

एक और मिसाल लें : जिन कॉमरेडोंने पहले " बायें" अवसरवाद की ग़लती की थी, जापान विरोधी युद्धके दौरानमें वे दायें अवसरवादकी ग़लती में जा फंसे। उनके विचार ठीक वैसे ही थे जसे १९२७ में चेन तू-सियूके अवसरवादके, क्योंकि उन्होंने सामन्तवादका विरोध करनेके पहलूको नजरअन्दाज़ कर दिया था। उन्होंने " सिर्फ़ पूँजीपति वर्ग को देखा" और " चीनी किसानोंके क्रांतिकारी आन्दोलनके निर्णायक महत्व को वे न देख सके।" " किसानों को क्रान्ति में खींचने से सयुक्त साम्राज्य-विरोधी मोर्चा टूट जायगा, इस डरसे वे देहातों में क्रान्तिको स्वतंत्रतापूर्वक फैलने देने के लिये राजी नहीं हुए।"

ऐसे गलत विचार स्पष्ट ही स्तालिन के विचारों के ठीक उल्टे थे। क्योंकि स्तालिन के अनुसार,

> " जितनी जल्दी और जितनी पूर्णताके साथ चीनी किसानको क्रान्तिमें खींच लाया जायेगा, चीनका साम्राज्यवाद-विरोधी संयुक्त मोर्चा उतना ही अधिक मजबूत और ज़्यादा ताकतवर होगा।" (स्तालिन : **चीनी क्रान्तिकी भावी सम्भावनाएँ**)

चूँकि इस तरह के दायें अवसरवादियों ने इस दौरमें सामन्तवाद-विरोधी पहलू से इनकार किया, इसलिये जिस तरह १९२७ में चेन तू-सियू आदि अवसरवादियों ने किया था ठीक उसी तरह इन्होंने सर्वहारा वर्ग के नायकत्व को तिलाजली दे दी। उन्होंने सिर्फ पूँजीपति वर्ग का ही भविष्य देखा और जनता की क्रान्तिकारी विजय और समाजवाद के भविष्य को देखने में वे असफल रहे।

यह बात बहुत साफ है कि चीनी क्रान्ति के रूप का सवाल इस क्रान्ति की हर मंजिलमें ठोस कार्यनीतियों के सवाल से जुड़ा हुआ है।

जो कोई क्रान्ति के रूप के बारे में गलतियाँ करता है, वह ठोस क्रान्तिकारी कार्यनीतियों के बारे में भी लाज़िमी तौर से ग़लतियाँ करेगा।

चीनके सवाल पर ट्राट्स्कीवादियोंकी बकवासका खण्डन करते हुए स्तालिनने लेनिन-वादके मुख्य कार्यनीति सम्बंधी सिद्धान्तों को साफ़ तरीके से विशेष रूपसे स्पष्ट किया था :

> " (१) प्रत्येक राष्ट्र के मजदूर आन्दोलन के लिये कॉमिन्टर्न की निदर्शक हिदायतें तै करते समय उस राष्ट्रकी राष्ट्रीय खासियतों और राष्ट्रीय विशेषताओं को ध्यान में रखने की ज़रूरत का सिद्धान्त।

" (२) प्रत्येक देशमें कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा सर्वहारा वर्ग के जन सहयोगी हासिल करने के लिये—भले ही वे अस्थायी, हिचकिचाते, ढुलमुल या बे-भरोसे के हों—छोटी से छोटी संभावना का फायदा उठानेकी जरूरत का सिद्धान्त।

" (३) इस सच्चाईको ध्यान मे रखनेकी जरूरतका सिद्धान्त कि करोड़ों जनता की राजनीतिक शिक्षा के लिये सिर्फ प्रचार और आन्दोलन ही काफ़ी नहीं है, बल्कि उसके लिये जनताका खुद अपना राजनीतिक अनुभव भी आवश्यक है।"
(स्तालिन **आजकी घटनाओं पर टिप्पणी : चीन पर**)

इसके बाद स्तालिन ने आम मार्क्सवादी–लेनिनवादी सिद्धान्तों को राष्ट्रीय विशेषताओं के साथ मिलाने के सवाल पर जोर दिया। उन्होंने लिखा :

" हमारी पार्टी के सैद्धान्तिक विकास के बावजूद दुर्भाग्यसे उसके अन्दर कुछ इस तरहके नेता हैं जो सच्चाई के साथ इस चीज़को मानते हैं कि चीनकी क्रान्तिको कॉमिन्टर्न के प्रसिद्ध, सब जगह स्वीकृत आम सिद्धान्तोंके आधार पर, एक तरहसे नारोंके जरिये चलाना संभव है, और जो चीनी अर्थतंत्र, चीनी राजनीति, चीनी संस्कृति, चीनी रीति-रिवाज और परम्पराओं की राष्ट्रीय विशेषताओ पर विचार नहीं करते। असली नेताओं से इन नेताओं में यह फर्क है कि ये लोग हमेशा अपनी जेबों में दो-चार तैयार सूत्र रखे रहते हैं जो सब देशों के लिये उपयुक्त होते हैं और तमाम परिस्थितियों के अन्दर 'लाज़िमी' होते हैं। हर देश के राष्ट्रीय रूप और राष्ट्रीय विशेषताओं पर विचार करने का उनके लिये कोई सवाल नहीं उठता। उनके लिये कॉमिन्टर्न के आम सिद्धान्तों का हर देश में क्रान्तिकारी आन्दोलन की राष्ट्रीय विशेषताओंके साथ मेल कराने का कोई सवाल, कौमिन्टर्न के आम सिद्धान्तों को हर देश के राष्ट्रीय राज्य की विशेषताओं के अनुकूल बनाने का कोई सवाल नहीं उठता।

"वे यह नहीं समझते कि आज के जमाने में जब कम्युनिस्ट पार्टियाँ विकसित हो चुकी हैं और जन-पार्टियाँ बन चुकी हैं तब नेतृत्व का खास कर्तव्य यह है कि वह हर देश में आन्दोलन की राष्ट्रीय विशेषताओं का पता चलाये, उन्हें समझें और कॉमिण्टर्न के आम सिद्धान्तों के साथ कुशलतापूर्वक उनका मेल करायें ताकि कम्युनिस्ट आन्दोलन के बुनियादी उद्देश्यों को आगे बढ़ाया जा सके और अमल में पूरा किया जा सके।

" इसीसे तमाम देशोंके नेतृत्व को एक ही साँचे मे ढालने की कोशिश पैदा होती है। इसीसे हर देश के क्रान्तिकारी आन्दोलन की ठोस परिस्थितियों पर ध्यान दिये बगैर कुछ आम सूत्रों को मशीन की तरह लागू करने की कोशिश पैदा होती है। इसीसे सूत्रों और हर देश के क्रान्तिकारी आन्दोलनके बीच का वह अन्तहीन संघर्ष पैदा होता है, जो इन अभागे नेताओं के नेतृत्व का जरूरी परिणाम है।" (**वही**)

चीनी क्रान्तिके रूपके सवालको स्तालिनने खास तौरसे इसीलिए उठाया कि इस क्रान्तिमे कार्यनीतियोंके सवालको वह स्पष्ट कर सकें, और इस तरह उन्होंने चीनी क्रान्तिके रूप और उसकी कार्यनीतियोंके बारेमें ट्राटस्कीवादी बकवासका खण्डन किया। स्तालिनने इस क्रान्तिकी राष्ट्रीय विशेषताओंको बताते हुए और उनका आम परिणाम निकालते हुए चीनी क्रान्तिके रूपके सवालको उसकी कार्यनीतियोंके सवालसे जोड़ा।

कॉमरेड माओ त्से-तुंग के शब्दों में कहें तो यहाँ बताये गये स्तालिन के विचार मार्क्सवाद-लेनिनवाद की सर्वव्यापी सचाई का चीनी क्रान्ति के ठोस अमल के साथ मेल हैं।

१९२७ के बादसे हमारी पार्टी में मतवादियों की, जो "बायें" या दायें अवसरवादी भी हैं, गलतियाँ ठीक यही थी कि वे स्तालिन द्वारा ट्राट्स्कीवादियों के खण्डन के सबकों को भूल गये। उन्होंने सोचा कि चीनी क्रान्तिका नेतृत्व करने के लिये इतना ही काफ़ी है कि दो-चार ऐसे तैयार सूत्रों को अपनी जेबोंमें रखे रहें जो हर देशके "अनुकूल" और हर परिस्थितिमें "लाजिमी" होते हैं। चीनी की राष्ट्रीय खासियतों या राष्ट्रीय विशेषताओं पर विचार करनेका उनके लिये कोई सवाल ही नहीं था। इसलिये मशीन की तरह लागू किये गये उनके अनेक सूत्रों और चीन की ठोस क्रान्तिके बीच अन्तहीन संघर्ष पैदा हुए।

हमारे मतवादियोंने सिर्फ निराकार सूत्रों और सरल ऐतिहासिक तुलनाओं तक ही अपने को सीमित रखा और चीनकी ठोस परिस्थितिसे उन्होंने शुरुआत नहीं की।

इसलिये चीनी क्रान्ति के रूपके सवाल पर उन्होंने किसी न किसी समय एक या दूसरी गलती लाजिमी तौर पर की। इसी वजह से ठोस परिस्थिति में परिवर्तनोंके अनुसार सिद्धान्तों को वे लचकीलेपनके साथ न लागू कर सके। एक शक्तिशाली दुश्मन को हराने के लिये वे वह न कर सके जो स्तालिन ने कहा था :

> "सर्वहारा वर्गके लिये एक लचकीली और अच्छी तरह सोची-विचारी नीति रखना और दुश्मनके शिविरकी हर दरारका फ़ायदा उठानेमें तथा अपने लिये सहयोगी ढूँढने में दक्ष होना जरूरी है।" (स्तालिन : **आजकी घटनाओं पर टिप्पणी : चीन पर**)

दस बरस के गृह-युद्ध के दौरान मे हमारे मतवादियों ने सबका तख्ता उलटने का नारा उठाया—या, जैसा कि कॉमरेड माओ त्से-तुंग ने उनका मज़ाक बनाते हुए कहा था :

> "तुम उनका तख्ता नहीं उलट सकते जिनके हाथ में सत्ता है, इसलिये तुम उनका तख्ता उलटना चाहते हो जिनके हाथमें सत्ता नहीं है। उनके हाथमें सत्ता नहींहै, तिस पर भी तुम उनका तख्ता उलटना चाहते हो।"

मगर दूसरी ऐतिहासिक परिस्थितिमें, मिसाल के लिये, जापान-विरोधी युद्ध की परिस्थिति मे, वे सबके साथ मेल करने का प्रचार करने की दिशामें बहक गये। वे

इस चीज़से इनकार करने लगे कि जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे में बायें, केन्द्रीय और दायें, तीन दल हैं; और इस बात से इनकार करने लगे कि इन तीन दलों की तरफ़ हमारी पार्टी की कार्यनीतियों में फ़र्क होना चाहिये। इसी वजह से ठोस परिस्थितियोंके अनुसार वे जनता के साथ वास्तविक सम्बंध न कायम कर सके; बल्कि इसके बजाय उन्होंने जनता को लगातार मजबूर किया कि वह उनके हुक्मों को जबरन पूरा करे। स्तालिन ने कहा है :

"यह जरूरी है कि कुओमिन्तागी नेताशाही के अविश्वसनीय, प्रतिक्रियावादी और क्रान्ति-विरोधी रूपको जनता खुद अपने अनुभव से समझे।"

मगर हमारे मतवादी स्तालिन की शिक्षाओं को भूल गये और उन्होंने सोचा कि अगर थोड़ेसे "नेता" उसे समझते हैं तो वे हुक्म जारी कर सकते हैं जिनका जनता पालन करेगी। स्तालिन ने बताया है,

"क्रान्ति सिर्फ़ आगे बढ़े हुए दल द्वारा ही नहीं, सिर्फ पार्टी द्वारा ही नहीं, सिर्फ व्यक्तियों द्वारा ही नहीं—चाहे वे 'महान व्यक्ति' ही क्यों न हो—बल्कि, सबसे पहले, और बुनियादी रूपसे आम जनता के लडाकों द्वारा चलायी जाती है।"

मगर हमारे मतवादी स्तालिन की शिक्षाओं को भूल गये और विश्वास करने लगे कि क्रान्तिका संचालन सबसे पहले और बुनियादी रूपसे ये थोडे से मतवादी ही, अपने मुँह बने ये "प्रमुख व्यक्ति" ही कर सकते हैं।

पिछले तीस बरस की चीन की घटनाओं ने चीनी क्रान्ति के अत्यंत जटिल और कठिन रूप को दिखा दिया है। वे यह भी दिखाती हैं कि यह विशेष रूपसे साम्राज्यवाद-विरोधी और सामन्तवाद-विरोधी लड़ाइयोंका जटिल और टेढे-मेढ़े ढंगसे एक दूसरे में पिरो जाना ही वह चीज़ थी जिसने इन विशेषताओं को जन्म दिया। इस तरह इन बातोंने क्रान्तिकारी कार्यनीतिके बारेमें अनेक सवालोंको—संयुक्त मोर्चेके और शहर तथा देहाती इलाकों की क्रान्ति के बीचके सम्बंधके बारेमें—जन्म दिया। साथ ही साथ उन्होंने फौजी लड़ाई में बुनियादी रणनीति के सवालको जन्म दिया।

जैसा कि स्तालिन ने कहा था : "चीन में सशस्त्र प्रतिक्रान्ति का मुकाबला सशस्त्र क्रान्ति कर रही है।" तब फिर सशस्त्र लड़ाई में अलग-अलग समय पर हमले के मुख्य स्थान क्या होने चाहिये? क्या हमलों के दौरान मे भी बचाव की कार्रवाइयाँ या पीछे हटना होता है? हमले या बचाव या पीछे हटने को हमले में कैसे बदलना चाहिये? हरेक जानता है कि अवसरवाद (कभी मुहिम-बाज़ी के रूपमें और कभी पलायनवाद के रूपमें) के खिलाफ कॉमरेड माओ त्से-तुंग की लम्बी लड़ाई का बड़ा हिस्सा ऐसे ही अनेक सवाल थे। जिन्होंने कॉमरेड माओ त्से-तुंग का विरोध किया, वे सब स्तालिनका विरोध कर रहे थे।

१९२७ में च्यांग काई-शेक द्वारा शंघाईमें गद्दारीकी कार्रवाई किये जानेके बाद क्रान्तिकारी लडाईके रणनीति सम्बंधी सवाल सबसे आगे आ गये । उस समय ट्राटस्की-वादियोंने शंघाईपर चढ़ाई का नारा उठाया । स्तालिनने ऐसी मुहिम-बाजीका विरोध किया । स्तालिनने उस समय कहा : "शंघाई साम्राज्यवादी दलोंके खास हितोंके एक दूसरे में गुथनेका विश्व केन्द्र है । " स्तालिनने नीति रखी - "काफी फौजी शक्ति खडी करना, किसान क्रान्तिका पूरा विकास करना, च्याग काई-शेक के पिछवाड़े में और सामने उसकी जड काटने के कामको तेज करना और तब, उसके बाद शंघाई का पूरा सवाल उठाना । " (स्तालिन : **सुन यात-सेन विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों से बातचीत**) क्योंकि "प्रतिकूल परिस्थितियों में निर्णायक लड़ाई से न बचनेका (जबकि उससे बचा जा सकता है) मतलब क्रान्ति के दुश्मनों के मकसद को आसान बनाना है । " (स्तालिन, **चीनी क्रान्तिके सवाल**)

मगर दस बरस के गृह-युद्ध के दर्म्यान हमारे 'बायें' अवसरवादियों ने भारी मुश्किलों के बीच बड़े शहरों पर चढ़ाई की ऐसी ही सीधी, अन्धी और मुहिमबाजी की नीतिका नारा लगाया । उन्होंने प्रतिकूल परिस्थितियों में दुश्मन के साथ निर्णायक लड़ाई लड़ने का नारा उठाया ।

स्तालिन ने कहा है :

"कुछ कॉमरेड सोचते हैं कि इस समय तमाम मोर्चोंपर चढ़ाई करना ही क्रान्तिकारी होने का बुनियादी लक्षण है । नहीं, कॉमरेड्स, यह बात सही नहीं है । आज की घडी में (च्याग काई-शेक द्वारा क्रान्ति के साथ गद्दारी के बाद—लेखक) तमाम मोर्चों पर चढाई करना बेवकूफी है । यह क्रान्तिकारी होना नहीं है । बेवकूफी का क्रान्तिकारी होने के साथ घुटाला कभी मत करो । "
(स्तालिनः **सुन यात-सेन विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों से बातचीत**)

मगर दस बरस के गृह-युद्ध के दर्म्यान हमारे "बायें" अवसरवादियों ने मोर्चे किन हालतों में हैं इसकी परवाह न करते हुए तमाम मोर्चों पर चढ़ाई की नीति का नारा उठाया, इस तरह उन्होंने बेवकूफी करने को क्रान्तिकारी होना समझा ।

स्तालिन ने कहा है,

"क्रान्तिकारी आन्दोलन को हमेशा एक ऊपर चढते हुए आन्दोलन के रूप में नहीं माना जा सकता । क्रान्ति के बारे में यह एक किताबी और अवास्तविक धारणा है । क्रान्ति हमेशा टेढ़े-मेढ़े रास्ते से बढती है । कुछ जगहों पर वह चढ़ाई शुरू करती है और पुरानी अवस्था को खतम कर देती है, जब कि कुछ दूसरी जगहों पर आंशिक रूपसे उसकी हार होती है और उसे पीछे हटना पड़ता है । "
(स्तालिन : **सुन यात-सेन विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों से बातचीत**)

मगर दस बरस के गृह-युद्ध के दर्म्यान हमारे "बायें" अवसरवादियोंने सोचा कि क्रान्तिकारी आन्दोलन हमेशा ऊपर उठते जानेवाले आन्दोलन के सिवा और कुछ हो ही नहीं सकता और टेढ़े-मेढ़े रास्ते पर चलना उसके लिये संभव ही नहीं है। इसलिये उन्होंने सोचा कि अगर चढ़ाई जरूरी है तो वह तमाम मोर्चों पर चढ़ाई ही हो सकती है—या, जैसा कि वे उसे पुकारते थे. "चौतरफ़ा हमला"। अगर दूसरी जगह पीछे हटते हुए कोई एक जगह हमला बोलनेकी जरूरत बताये तो वे जोर देकर कहते कि यह तो "अवसरवाद" है।

स्तालिन ने कहा है,

"तमाम कामों को एक साथ ही हम अपने जिम्मे नहीं ले सकते, वरना हम अपने को जरूरत से ज़्यादा थका डालेंगे,।" (स्तालिन: **सुन यात-सेन विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों से बातचीत**)।

मगर दस बरस के गृह-युद्ध के दर्म्यान जब हमारी क्रान्तिकारी ताक़त अभी भी बहुत नाकाफी थी तब हमारे "बायें" अवसरवादियों ने ठीक उसी चीजको रखा—यह

कि "सबका तख़्ता उलटने" और "तमाम मोर्चों पर चढ़ाई करने" के तमाम कार्यों को और पूँजीवादी जनवादी क्रान्ति और समाजवादी क्रान्ति के तमाम कामों को हम एक साथ ही अपने ऊपर ले लें। अगर कोई ऐसे काम की यह कह कर आलोचना करता कि इसमें "अपने को जरूरत से ज़्यादा थका देने का खतरा" है, तो यह निश्चित बात थी कि वे ऐसे व्यक्ति पर "अवसरवादी" होने का ठप्पा लगा देते।

यह बात साफ़ है कि १९२७ के बादसे हमारी पार्टीमें जिन कॉमरेडोंने कामरेड माओ त्से-तुंग की सही नीतिके खिलाफ तरह-तरहकी अवसरवादी गलतियाँ लगातार की हैं, उन्होंने ऐसा इसलिये किया कि १९२७ में स्तालिन द्वारा ट्राटस्की-वादियोंके खण्डन के हर सबक को वे सब भूल गये थे। बात यही थी—मसला चाहे कुछ भी रहा हो: क्रान्ति के रूपका या कार्यनीति का, चाहे राजनीतिक रहा हो, चाहे फ़ौजी। इस सब की वजह से अपनी प्रगति के दौरान में हमारी क्रान्ति को बहुतसी कटु मुश्किलें उठानी पड़ीं।

कामरेड माओ-त्से-तुंग सही हैं। उनके नेतृत्व में हमारी पार्टी ने टेढ़े-मेढ़े रास्तों को तै करके अन्त में वस्तुगत मुश्किलों और मनोगत गलतियों, दोनों पर काबू पाया और क्रान्ति को विजय पर पहुँचाया। यह इसलिये हुआ कि चीनी क्रान्ति के रूप और कार्यनीतियों के बारे में कॉमरेड माओ त्से-तुंग के विचार स्तालिन के विचारों के ही

अनुरूप थे। और फिर, इस क्रान्ति के ठोस अमल के दौरान में चीनी क्रान्ति के बारेमें स्तालिन के सिद्धान्त को उन्होंने और विकसित किया।

पहली महान क्रान्ति (१९२५-२७ की क्रान्ति—स.) के दर्म्यान चेन तू-सियू के दायें अवसरवाद का विरोध करते हुए उन्होंने जोर के साथ कहा था कि साम्राज्य-वाद के खिलाफ़ लड़ाईमें मदद पहुँचाने के लिये सर्वहारा वर्ग को चाहिये कि वह सामन्तवाद के खिलाफ़ किसानों के क्रान्तिकारी आन्दोलन का नेतृत्व करे।

दस बरसके गृहयुद्ध के दर्म्यान—यद्यपि वे उस समय के किसानों के क्रान्तिकारी आन्दोलन के बीच में थे—कॉमरेड माओ जे-दुंग साम्राज्यवाद-विरोध जैसी अत्यंत महत्वपूर्ण राजनीतिक बात को एक क्षण के लिये भी नहीं भूले, और "बायें" अवसरवाद का उन्होंने विरोध किया।

क्रान्तिकारी अड्डों को कायम करने के लिये रणनीति सम्बंधी योजनाएँ बनाते समय और साथ ही साथ हर वर्ग की तरफ नीतियाँ तै करने में, जैसे कि मध्यवर्ग को जीतने की बात, आदि के सम्बंध में, साम्राज्यवाद का विरोध करने की इस चीज को कॉमरेड माओ जे-दुंग ने हमेशा ध्यान में रखा।

जापान के खिलाफ मुकाबले के युद्ध के दर्म्यान कॉमरेड माओ जे-दुंग का विश्वास था कि सर्वहारा वर्ग और उसके हिरावलको चाहिये कि वह किसान जनताको चलाय-मान करे, ताकि जापान-विरोधी युद्धका जन आधार व्यापक हो सके और इस तरह उसके जनताकी विजयके रूपमें खतम होनेकी सभावना हो जाये। इसलिये दायें अवसर अवसरवादके खिलाफ़ उन्होंने बहुतही निर्मम लड़ाई चलायी।

इतिहासने साबित कर दिया है कि कामरेड माओ जे-दुंग द्वारा—जिनके विचार स्तालिन के शब्दोंके अनुकूल हैं—हर क्रान्तिकारी दौर में चलायी गयी ये लड़ाइयाँ सही थीं। चीनी क्रान्ति की वर्तमान विजय की सम्पूर्ण स्थिति पर पार्टी नीति के बारे में उन सघर्षों का ख़ास तौर से निर्णायक असर हुआ जो जापान-विरोधी युद्धके शुरू और बीच में हुई थीं।

मगर एक बात साफ कर देनी चाहिये : १९२७ से पहले जब चेन तू-सियू पार्टी पर कब्जा किये बैठा था, और बाद में भी एक बहुत काफी लम्बे समय तक, अवसरवादियोंने चीन के सवाल पर स्तालिन की अनेक रचनाओंके चीनी पार्टीके भीतर प्रचारित होने मे जाने या अनजाने बाधा डाली थी। भाषा की मुश्किलें भी थीं और क्रान्ति-विरोधी नाकेबन्दियाँ थी। इन वजहों से हमारी पार्टी में ऐसे बहुत से कॉमरेड थे जो वास्तव में चीनी क्रान्ति का नेतृत्व कर रहे थे मगर जिन्हें चीन के बारे में स्तालिन की अनेक रचनाओं का ढंगपूर्वक अध्ययन करने का अवसर नहीं मिला था। कॉमरेड माओ जे-दुंग भी उन्हीं मे से एक थे।

१९४२ में सैद्धान्तिक रूपसे पुनः सस्कार करनेके आन्दोलन के बाद ही चीन पर स्तालिन की रचनाओं को हमारी पार्टीने ढंगपूर्वक सम्पादित किया। बहुत समय

नहीं हुआ जब कॉमरेड माओ जे-दुंग के एक फ़ैसले के बाद "**चीनके बारे में लेनिन और स्तालिन के विचार**" पुस्तकका सम्पादन किया गया था और उसे कार्य-कर्ताओं के पढ़ने के लिये लाजिमी बारह पुस्तकोंमें से एक करार दिया गया था।

हमारी पार्टी का यह बड़ा दुर्भाग्य था कि अपनी गलत धारणाओं और सुझावों को प्रचलित कराने के ख्याल से अवसरवादियों ने चीन पर स्तालिन की रचनाओं को जाने या अनजाने में रोके रखा था।

मगर ऐसी स्थिति के बावजूद मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन के बुनियादी क्रान्तिकारी विज्ञान के आधार पर खुद अपने स्वतंत्र चिन्तन के जरिये कॉमरेड माओ जे-दुंग अनेक बुनियादी सवालों पर स्तालिन के ही निष्कर्षों पर पहुँचने मे सफल हुए। इस तरह उनका और उनके सहयोगियों का सही रास्ता कायम रहा।

स्तालिन की रचनाओंको विस्तृत रूपसे पढ़नेका मौका कॉमरेड माओ जे-दुंगको केवल जापान-विरोधी युद्धके दर्म्यान ही मिला। स्तालिन की तमाम प्राप्त रचनाओंको उन्होंने अत्यधिक उत्साह के साथ पढ़ा और उन पर विचार किया। जैसा कि सब कोई जानते है, "**नये जनतंत्र**" में लिखते हुए कामरेड माओ जे-दुंगने बताया है कि स्तालिनकी रचनाएँ उनके लिये ज्ञानका कितना बड़ा स्रोत थीं। कामरेड माओ जे-दुंगने समझाया था कि चीनी कम्युनिस्टों की यह सही थीसिस कि चीनी क्रान्ति विश्व समाजवादी क्रान्तिका एक हिस्सा है, स्तालिन के सिद्धान्त के आधार पर बनायी गयी थी। स्तालिन के इसी सिद्धान्त के आधार पर कामरेड माओ जे-दुंगने सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व के विचार को विकसित किया। अपनी इस प्रसिद्ध लड़ाकू रचना मे उन्होंने प्रतिक्रियावादियों के चीनमें पूँजीवादी डिक्टेटरशिप कायम करने के सपने पर शक्तिशाली प्रहार किये। साथ ही पार्टी के भीतर के उन अवसरवादियों पर भी उन्होंने घातक प्रहार किये जो सर्वहारा वर्ग को पूँजीपति वर्ग का पुछल्ला बना देने की कोशिश कर रहे थे।

जापान-विरोधी युद्ध के बाद की अपनी अनेक रचनाओं में कॉमरेड माओ जे-दुंग को स्तालिनके इस प्रसिद्ध कथन पर विचार करना विशेष रूप से पसन्द रहा है कि "**चीनी क्रान्ति की विशेषता इस बात में है कि सशस्त्र प्रतिक्रान्ति का वहाँ पर सशस्त्र जनता मुक़ाबला कर रही है,**" और यह कि "**औपनिवेशिक और अर्ध-औपनिवेशिक सवाल सार रूप मे किसानों का सवाल है**"। चीनी परिस्थितियों के आधार पर कॉमरेड माओ जे-दुंग ने स्तालिन के इन दो प्रसिद्ध कथनों का सम्बंध जोड़ा और उन्हे विकसित किया।

जापान-विरोधी युद्धके दर्म्यान उन्होंने हमारी पार्टीके उन अवसरवादियोंकी सख्तीसे निन्दा की जो इस सबसे बुनियादी धारणा और नीतिकी अवहेलना करते थे कि किसान युद्धका नेतृत्व सर्वहारा वर्गको करना चाहिये।

हमारी क्रान्तिकारी फ़तहकी तैयारी करनेके लिये १९४१-४२ में कॉमरेड माओ जे-दुंगने हमारी पार्टीमे सैद्धान्तिक पुन संस्कार आन्दोलन शुरू किया। उस समय

सिद्धान्त और अमल के सम्बंध के बारे में स्तालिन के उस कथन का बार-बार हवाला देना उन्हें विशेष रूप से प्रिय था, जो "**लेनिनवाद के मूल सिद्धान्त**" में—उस महान रचना में निकला था जिसने सारी दुनिया के बोल्शेविकों को सैद्धान्तिक हथियार से लैस किया है।

माओ जे-दुंग ने कहा है,

"एक बार फिर स्तालिन ही सही थे जब उन्होंने कहा था कि 'अगर सिद्धान्त को क्रान्तिकारी अमल के साथ न जोड़ा जाय तो वह दिशाहीन हो जाता है।' और निश्चय ही उनका यह कहना भी सही था कि, 'अगर क्रान्तिकारी सिद्धान्त से अमल का रास्ता रोशन नहीं होता तो वह अंधेरे में भटकता रहता है।"

कामरेड माओ जे-दुंग ने हमारी पार्टीके भीतर के मतवादियों का विरोध करने के लिये स्तालिन के पहले कथन का इस्तेमाल किया और हमारी पार्टी के अनुभव-वादियों का विरोध करने के लिये स्तालिन के दूसरे कथन का इस्तेमाल किया।

बोल्शेवीकरण की बारह शर्तों और **सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) के इतिहास के** निष्कर्ष की अन्तिम ६ बातों पर स्तालिन की रचनाओंको कॉमरेड माओ जे-दुंग ने हमारी पार्टीके सैद्धान्तिक पुनःसंस्कार आन्दोलन के लिये सबसे बुनियादी दस्तावेज़ों के रूपमें चुना। स्तालिन की इन दो दस्तावेज़ों पर हमारे कॉमरेड गहराईसे विचार करें, इसलिये कॉमरेड माओ जे-दुंग ने एक विशेष रूपसे लम्बा भाषण दिया जिसमें उन्होंने बताया कि ये दोनों दस्तावेज़ें एक समान हैं: उन दोनोंमें सौ बरसके कालमें क्रान्तिकारी नेतृत्वके मार्क्सवादी-लेनिनवादी अनुभवका साराश है। उन्होंने हमारी पार्टी के बीस बरसके अनुभवके आधार पर इन दो दस्तावेज़ोंकी एक-एक बातको लेकर समझाया और सच्चे मार्क्सवाद-लेनिनवाद और झूठे मार्क्सवाद-लेनिनवाद का फर्क बताया। सैद्धान्तिक पुनःसस्कार आन्दोलनके दर्म्यान इन दो दस्तावेजों ने मतवाद और अनुभववाद पर भारी प्रहार किये।

"**अपनी पढ़ाई सुधारो**" नामक अपने लेख में कॉमरेड माओ जे-दुंगने जोर देकर कहा कि हमारी पार्टी में मार्क्सवाद-लेनिनवाद का अध्ययन करने के लिये स्तालिन की महान रचना "**सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) का इतिहास** मुख्य पाठ्य-पुस्तक के रूप में इस्तेमाल किया जाय। कॉमरेड माओ जे-दुंग ने लिखा:

"**सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) का इतिहास** पिछले सौ बरस के विश्व कम्युनिस्ट आन्दोलनका सबसे ऊँचा समन्वय और सारांश है। वह सिद्धान्त और अमल के मेलका आदर्श है और सारी दुनिया में एकमात्र वही पूर्ण रूपसे सही आदर्श है। मार्क्सवाद-लेनिनवाद की सर्व-व्यापी सचाइयों को

लेनिन और स्तालिनने सोवियत क्रान्तिके ठोस अमलके साथ किस तरह जोड़ा और किस तरह मार्क्सवादको विकसित किया—इसको देखकर हम जान सकते हैं कि चीनमें किस तरह काम किया जाना चाहिये "।

कामरेड माओ त्से-तुंग स्तालिनके शिष्य और निकट सहयोगी हैं। वह स्तालिन के प्रमुख शिष्य बननेमें और चीनकी विजयी क्रान्तिके नेता बननेमें समर्थ हो सके क्योंकि उनके काम के तरीके और उनकी विचार-धारा के तरीके स्तालिन के ही हैं। स्तालिन का अध्ययन करने के लिये उन्होंने स्तालिन के तरीकों को अपनाया। ये रचनात्मक मार्क्सवादियों के वे तरीके थे जिनका लेनिन के पचासवें जन्म-दिन के अवसर पर लिखे अपने प्रसिद्ध लेख में स्तालिन ने हवाला दिया था :

"यह दल अपनी दिशाओं और आदेशों को ऐतिहासिक समानताओं और अनुरूप घटनाओं से नहीं तै करता, बल्कि आस-पास की परिस्थितियों के अध्ययन द्वारा तै करता है। वह अपने कामों का आधार उद्धरणों और सूत्र-वाक्यों को नहीं बल्कि, व्यवहारिक अनुभवों को बनाता है। हर कदम को वह अनुभव से जाँचता है, अपनी गलतियों से सीखता है, और दूसरों को सिखाता है कि नयी जिन्दगी का निर्माण कैसे किया जाय। इसीसे असल में यह बात साफ़ हो जाती है कि इस दलकी कार्रवाइयों में और बातोंमें कोई फर्क क्यों नही हैं और क्यों मार्क्स की शिक्षाएँ उनमें अपनी जीवित क्रान्तिकारी शक्तिको पूर्ण रूपसे बनाये रखती हैं।"

ठीक यही वजह है कि स्तालिनके विचार और शिक्षाएँ जब कॉमरेड माओ त्से-तुंग के हाथोंमें आती हैं तो वे ठीक इसी तरह "अपनी जीवित, क्रान्तिकारी शक्तिको पूर्ण रूपसे बनाये रखती हैं।"

हमारी पार्टीमें ऐसे कुछ लोग हैं जो, जिन मतवादियोंका हमने ऊपर जिक्र किया है, उन्हींकी तरह मनोगत रूपसे शायद अध्ययन करना चाहते हों, मगर जो ऐसा करनेमें स्तालिन-विरोधी तरीके इस्तेमाल करते हैं। जैसा कि कॉमरेड माओ त्से-तुंग ने कहा है: "मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिनका अध्ययन करनेका उनका तरीका मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिनका ठीक उल्टा है।" उनका तरीका उन मतवादियों जैसा है जिनका लेनिनके पचासवें जन्मदिनके अवसरपर लिखे गये स्तालिन के लेख में जिक्र है:

"वह अपनी कार्रवाइयों को अनुभव पर, अमली काम जो सिखाता है उस पर नहीं, बल्कि मार्क्स के उद्धरणों पर आधारित करता है। वह अपने आदेश और दिशाएँ असली वास्तविकताओं के विश्लेषण के द्वारा नहीं, बल्कि समानताओं और ऐतिहासिक अनुरूप घटनाओं से तै करता है। बातों और काम

के बीच फ़र्क इस दल की ख़ास बीमारी है। इसीलिये उसे निराशा और उस किस्मत के खिलाफ़ सदा शिकायत होती है जो बार-बार उसे धोखा देती है।"

स्तालिनकी शिक्षाओं, तरीकों और सिद्धान्तों ने—उनके कॉमरेड माओ जे-दुंग द्वारा चलाये और लागू किये जानेके बाद— चीनी कम्युनिस्टों के राजनीतिक और सैद्धान्तिक दृष्टिकोणको बहुत विस्तृत कर दिया। उन्होंने चीनी कम्युनिस्टों की मार्क्सवादी-लेनिनवादी चेतना को ऊँचा उठाया और तमाम क्रान्ति-विरोधी दुश्मनों और क्रान्ति की प्रगति को रोकने वाले दूसरे दुश्मनों को हराने के लिये काफी सैद्धान्तिक ताकत हासिल करने में हमारी पार्टी की मदद की है।

हम एक क्रान्तिकारी फ़तह हासिल कर चुके हैं। हमें बराबर विजयी होते रहना चाहिये। मगर हम अपनी निरंतर विजयकी गारंटी कैसे कर सकते हैं? जैसा कि कॉमरेड माओ जे-दुंगने हमसे अक्सर कहा है: हमें सीखनेमें पटु होना चाहिये। हमें स्तालिन से— जो मानव-जाति की महान विजय के फरहरे और हमारे शिक्षक हैं—सीखने में पटु होना चाहिये। हमें सोवियत संघ की महान कम्युनिस्ट पार्टी से सीखने में पटु होना चाहिये। इसके अलावा हमें कॉमरेड माओ जे-दुंग की तरह अपने अध्ययन में मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन के तरीके को अपनाना चाहिये। संक्षेप में, हमें सिद्धान्त और अमल का मेल करने का तरीका लागू करना चाहिये।

दस बरस पहले स्तालिन की साठवीं वर्षगाठ मनाते समय कॉमरेड माओ जे-दुंग ने जो कहा था उसे हम एक बार फिर दुहराये:

"हमें उनका अभिनन्दन करना चाहिये, उनका समर्थन करना चाहिये और उनसे सीखना चाहिये।"

स्तालिन से सीखें—स्तालिन की सत्तरवीं वर्षगाँठ मनाते समय भी हमारा यही मुख्य निष्कर्ष है।

मनुष्य जाति की खुशी और उसके भविष्य के लिये सर्वोच्च, गौरवशाली और महान स्तालिन चिरजीवी हों!

जोसेफ़ स्तालिन की सत्तरवीं वर्षगांठ
के अवसर पर दिया गया भाषण

[चाइना डाइजेस्ट के
१ जनवरी १९५० के अंक
(खण्ड ७, सं० ७) से]

हिन्दुस्तानी जनता के राष्ट्रीय मुक्ति-संघर्ष की नयी मंजिल

(पृष्ठ २४ से)

सामन्तवादी-पूंजीवादी शोषकों के खिलाफ़, और अपने हालात को सुधारने के लिये, हिन्दुस्तान के मजदूर वर्ग का संघर्ष बिल्कुल शुरू से ही साम्राज्यवादके खिलाफ़ संघर्ष के साथ घनिष्ट रूपसे जुड़ा हुआ था। औपनिवेशिक हालात में, शोषण के पूंजीवादी और पूंजीवादसे पूर्वके रूपोंके एक दूसरेके साथ गुंथ जानेके परिणाम-स्वरूप जनताका ग़रीब बनना--जो कि उत्पादनके पूंजीवादी तरीके के साथ अनिवार्य रूपसे जुड़ा होता है—खास तौर से तीव्रता के साथ और खास तौर से तेज गति से जारी है। अपने अति मुनाफ़ों की दौड़ मे साम्राज्यवादी उपनिवेशों के मजदूर वर्ग का शोषण करनेके लिये अधिक से अधिक अमानुषिक और लुटेरे तरीकों का इस्तेमाल कर रहे हैं। इसके परिणाम-स्वरूप उपनिवेशों में मजदूरों के अपनी फौरी माँगो को पूरा कराने के, अपने आर्थिक हालात को बेहतर बनाने के संघर्ष को, साम्राज्यवादी उत्पीड़न के खिलाफ़ संघर्ष से, आजादी और स्वतत्रता के संघर्ष से अलहदा नहीं किया जा सकता। जिस मात्रामें उनके वर्ग संगठन मजबूत हुए हैं उसी मात्रा में हिन्दुस्तान के मजदूर और भी अधिक दृढ़तापूर्वक देश के राष्ट्रीय क्रान्तिकारी आन्दोलन मे एक नायक शक्ति के रूपमे आगे आये हैं। हिन्दुस्तान का राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन अधिकाधिक जनता का और क्रान्तिकारी आन्दोलन बन गया, इसका सबब मजदूर वर्ग का कार्य और विशाल किसान जनता के ऊपर उसका असर ही था।

उठते हुए सर्वहारा वर्ग के रूप में बीसवीं शताब्दी के आरम्भ मे ही, हिन्दुस्तानके राजनीतिक मंच पर एक ऐसी शक्ति का आगमन हुआ जिसमें ब्रिटिश साम्राज्यवाद के आधिपत्य का तख्ता उलटने के संघर्ष में आम मेहनतकश जनताको एकजूट करने की और उसकी रहनुमाई करने की सामर्थ्य थी। हिन्दुस्तान के मजदूर वर्ग की पहली राजनीतिक जन-कार्रवाई-- हिन्दुस्तान के जनवादी, तिलक की सजा के विरोध में बम्बई के कपड़ा मजदूरों की आम हड़ताल—के सम्बंध में लेनिन ने १९०८ में बताया था कि, "हिन्दुस्तान का सर्वहारा वर्ग इतना काफी परिपक्व हो चुका है, कि एक वर्ग-चेतन और राजनीतिक जन संघर्ष चला सके; और जब परिस्थिति यह है तो हिन्दुस्तान के अन्दर अंग्रेज-रूसी तरीक़ों के दिन लद गये हैं।" (लेनिन, **सम्पूर्ण ग्रंथावली**, रूसी संस्करण, भाग १५, पृष्ठ १६१)। उस समयसे हिन्दुस्तान का मजदूर वर्ग, वर्ग और साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष की कठिन पाठशाला से गुजर चुका है और राजनीतिक और संगठनात्मक दृष्टि से अकूत मात्रामें तरक्की कर चुका है। उसने रूस के मजदूरों से—जिन्होंने अपने देशमें पूंजीवादी व्यवस्था को अक्तूबर १९१७ में नष्ट कर दिया था—बहुत सीखा है।

हिन्दुस्तान में मजदूर वर्ग के आन्दोलन का पहला अवामी बढ़ाव भी संगठनात्मक रूप से रूस की महान अक्तूबर साम्राजवादी क्रांति के प्रभाव के अन्तर्गत होने वाले १९१८-२२ के देश-व्यापी राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष के बढाव के साथ जुड़ा हुआ था। इस चीज के बावजूद कि देश के अन्दर अभी तक कम्युनिस्ट पार्टी नहीं थी और मजदूर सभाओं का बनना अभी-अभी शुरू ही हुआ था, मजदूर वर्ग ने इन वर्षों में साम्राज्यवादी उत्पीड़न और औपनिवेशिक शोषण के खिलाफ़ जनता के संघर्ष में सबसे अधिक सक्रिय भाग लिया।

१९३० से शुरू होनेवाले राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के नये बढ़ाव के कालमे देशका मजदूर वर्ग उसके एक सर्व प्रमुख दस्ते के रूपमें, एक स्वतंत्र राजनीतिक शक्ति की हैसियत से आगे आ चुका था; और उसने बिल्कुल शुरू से ही राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के नेतृत्व के लिये लड़ाई चलायी थी। आन्दोलन मे यह एक नयी और अत्यधिक महत्वपूर्ण चीज थी। लेकिन उस समय तक भी क्रान्तिकारी मजदूर सभाएँ केवल कुछ बड़े शहरों मे ही मौजूद थीं; एक अखिल भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी अभी तक नहीं बनी थी, यद्यपि कम्युनिस्ट दल कई एक प्रान्तों और कुछ औद्योगिक केन्द्रों मे काम कर रहे थे।

दूसरे विश्वयुद्ध के पहले के वर्षों में साम्राज्यवाद-विरोधी जन आन्दोलन की ज्वाला के हिन्दुस्तान में एक बार फिर भड़क उठने पर मजदूर वर्ग की भूमिका और भी अधिक बढ़ गयी। यह चीज मुमकिन हो सकी इसका सबसे पहला कारण यह था कि १९३३ में विभिन्न कम्युनिस्ट दलों की एकता के परिणाम-स्वरूप एक अखिल भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी बन गयी थी। मजदूर वर्ग के और आम जनता के साम्राज्यवाद-विरोधी आन्दोलन के आगे विकास के लिये एक अखिल भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी का बनना जबरदस्त महत्व का था। साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष के दौरान में कम्युनिस्ट पार्टी ने अपना असर फैलाना शुरू किया; और किसानों को राष्ट्रीय कांग्रेस के पूंजीवादी नेतृत्व के असर से छुड़ाने के लिये अपनी कोशिशके द्वारा वह उन्हें अपनी तरफ करने मे लग गयी।

दूसरे विश्व युद्ध के दर्म्यान हिन्दुस्तान का मजदूर वर्ग राजनीतिक और संगठनात्मक दोनों दृष्टियों से काफी मजबूत हो गया था।१९३७-३८ से १९४२-४३ तक मजदूर सभाओं में संगठित मजदूरों की संख्या ३,९०,००० से बढ़कर ६,८५,०००, यानी ७५ फी सदी ज़्यादा हो गयी। युद्ध के अन्त के करीब मजदूर सभाओं के सदस्यों की संख्या दस लाख से ज़्यादा थी। बननेवाली अधिकांश मजदूर सभाओं की प्रमुख कमिटियों मे कम्युनिस्ट चुने गये। कम्युनिस्ट पार्टी देश के मजदूर वर्ग के आन्दोलन के अन्दर प्रमुख शक्ति बन गयी। युद्ध के वर्षों में कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्वमें मजदूर वर्ग ने मेहनतकशों की हालतों को सुधारने के लिये, और राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन की मॉगो को पूरा कराने के लिये संघर्ष का

तफ़सील से एक कार्यक्रम पेश किया। हिन्दुस्तान की आम जनताके अन्दर मज़दूर वर्ग और उसकी पार्टी के असर को बढ़ाने में इसने काफी हद तक मदद पहुँचायी। हिन्दुस्तान के मेहनतकश इस चीज़ के बारे में अधिकाधिक कायल होते जाते हैं कि कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में मज़दूर वर्ग ही ठीक वह शक्ति है जिसमें तमाम मेहनतकशों को बटोर कर देश के साम्राज्यवादी उत्पीड़कों के खिलाफ़ और "देशी शोषकों" के खिलाफ हर संघर्ष में उनका नेतृत्व करने की योग्यता है और राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के कर्तव्यो को पूरा करने की योग्यता है।

इस समय राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन का नायकत्व हासिल करने के संघर्ष में हिन्दुस्तान के मज़दूर वर्ग ने काफी सफलता पा ली है। इस चीज़ को हिन्दुस्तान का तमाम घटना-क्रम, और खास तौर से दूसरे विश्व युद्ध के बादका घटना-क्रम, सही साबित करता है।

* * *

राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन का नायकत्व हासिल करने के संघर्ष में हिन्दुस्तान के मज़दूर वर्ग की सफलताएँ सर्वप्रथम सर्वहारा वर्ग के हिरावल दस्ते—कम्युनिस्ट पार्टी की सगठनात्मक और विचारधारात्मक उन्नति में व्यक्त होती है। इस का बहुत बड़ा महत्व है, क्योंकि, जैसा कि कामरेड स्तालिन हमें सिखाते हैं:

"सर्वहारा वर्ग का नायकत्व केवल कम्युनिस्ट पार्टी के द्वारा ही तैयार किया जा सकता है" (स्तालिनः **पूर्व के मेहनतकशों के विश्वविद्यालय के सामने भाषण, १८ मई १९२५; औपनिवेशिक प्रश्न पर,** अंग्रेजी, पृष्ठ १९)

कम्युनिस्ट पार्टी की दूसरी कॉंग्रेस जो १९४८ की फरवरी के आखीर में और मार्च के शुरू मे हुई थी, हिन्दुस्तान की कम्युनिस्ट पार्टी के जीवन में एक महत्वपूर्ण कदम और देश में एक बड़ी राजनीतिक घटना थी। कांग्रेस ने दिखाया कि कम्युनिस्ट पार्टी के असर में बड़ा इजाफ़ा हो गया था।

कांग्रेस ने तै किया कि नयी मंजिलका सबसे अधिक महत्वपूर्ण कर्तव्य हर तरहसे जनता के जनवादी मोर्चे को दृढ़ करना है। इस मोर्चे को मज़दूर वर्ग के नेतृत्व में मज़दूर वर्ग, किसान और शहरों के निम्न-पूंजीवादी वर्ग की मैत्री का मूर्त रूप होना चाहिए। कांग्रेस ने हिन्दुस्तान के राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन की वर्तमान मंजिल में जनता के जनवादी मोर्चे के केन्द्रीय नारों के रूपमे निम्न मॉंगों का ऐलान कियाः—

(१) पूर्ण राष्ट्रीय स्वतंत्रता, ब्रिटिश साम्राज्य और अंग्रेज़-अमरीकियों के प्रतिक्रियावादी गुट से सम्बंध-विच्छेद, और सच्चे माने में जनवादी देशों, और सर्वप्रथम, सोवियत सघ के साथ घनिष्ट आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक सम्बंधों की स्थापना करना।

(२) ज़मींदारी का बिना मुआवजेके खात्मा करना और ज़मीन का जोतने-वालों के बीच बँटवारा करना।

(३) हिन्दुस्तान का दृढ़ता-पूर्वक जनवादीकरण करना और आत्म-निर्णय के सिद्धान्त के आधार पर उसे राष्ट्रीय, जनता के जनवादी प्रजातंत्रों के एक संघ में बदलना; राजाओं की रियासतों को खतम करना।

(४) उद्योग-धंधों की मुख्य शाखाओं का राष्ट्रीकरण करना और विदेशी, और सर्व प्रथम, ब्रिटेन के कारबारों को जब्त करना; मज़दूर वर्ग की स्थितिमें बुनियादी तौर पर सुधार करना।

कम्युनिस्ट पार्टी ने अपने सामने एक खास तौर से महत्वपूर्ण कार्य के रूप में भारतीय संघ और पाकिस्तान के बीच एकता कायम करना रखा, और ज़ोर दिया कि यह एकता दोनो डोमीनियनों को साम्राज्यवादी उत्पीड़न से मुक्त करनेकी अनिवार्य शर्त और हिन्दुस्तान के इन दोनों भागो का वास्तविक जनवादीकरण करने के लिये सफल संघर्ष की सबसे महत्वपूर्ण पूर्व-आवश्यकता है।

कम्युनिस्ट पार्टी का प्रभाव दोनो डोमीनियनों के मज़दूरों के अन्दर काफी बढा है। इसका मुख्य कारण यह है कि साम्राज्यवाद और औपनिवेशिक उत्पीड़न के खिलाफ़ संघर्ष के बुनियादी प्रश्न पर और मज़दूरो की हालतों मे सुधार करने के लिये वह अपने खुदके ऐसे कार्यक्रमको लेकर आगे बढ़ी है जो आम भारतीय जनताकी आकाक्षाओ और आशाओको व्यक्त करता है।

दूसरे विश्व युद्धके दर्म्यान और उसके खतम होनेके बाद हिन्दुस्तानके मजदूर वर्गकी—जोकि पहले भी फाकेकशीकी जिन्दगी बिता रहा था—हालत और भी तीव्र रूपमें बिगड़ गयी है। हिन्दुस्तानके बँटवारेने मज़दूर वर्गके निरपेक्ष और सापेक्ष रूपसे ग़रीब बनने की क्रिया को और भी अधिक बढ़ा दिया है। हिन्दुस्तानी पूंजीपतियो और अंग्रेज़-अमरीकी इजारेदारों ने हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की सरकारो के साथ-साथ दोनों डोमीनियनों के मजदूरो के और तमाम मेहनतकशों के रहन-सहन के स्तर पर अपने हमले को और तेज कर दिया है।

खाद्य-पदार्थों और आम खपत के तैयार माल की कीमतों की वृद्धि ने हिन्दुस्तानी और विदेशी पूंजीपतियों की तथा व्यापारियो और सट्टेबाजों की तिजोरियों में और भी दौलत भर दी है और उसकी वजह से मज़दूरों के रहन-सहन का स्तर और भी नीचे गिर गया है। सरकारी, झूठे बनाये हुए आँकड़ों के मुताबिक भी मजदूर वर्ग के रहन-सहन के खर्चे का सूचक–अंक बराबर बढ़ता जा रहा है। बम्बई में, जो कि देश के सबसे बड़े औद्योगिक केन्द्रों में से है, १९३९ के १०३ की तुलना में १९४७ में बढ़कर वह २६५ हो गया, और मार्च १९४९ तक २९६; नागपुर में इसी क्रम के अनुसार वह १०४, ३२० और ३७४ था; कानपुर में १०५, ३७८ और ४६८ (**द' ईस्टर्न इकनॉमिस्ट**, १ जुलाई, १९४९, पृष्ठ ३६)।

वर्तमान कालमें भी, कीमतों के लगातार बढ़ते जाने के परिणाम-स्वरूप, मजदूरों की असली मजदूरी निरन्तर कम होती जा रही है। हर जगह, पैदावार का "रेशने-लाइजेशन" करने की आड़में, मजदूरों का शोषण बढ़ रहा है और उनसे अधिकाधिक मेहनत करायी जा रही है। बेकारो की फ़ौज बढ़ती जा रही है। शहरों के "एम्पलायमेन्ट एक्सचेंजों" (नौकरी केंद्रों) में दर्ज बेकारों की संख्या ही १९४८ में २० लाख आदमी से ज़्यादा थी।

युद्धके बाद हिन्दुस्तानके मजदूर वर्गका संघर्ष अत्यधिक व्यापक हो गया। हड़तालोंकी अपूर्व रूपसे बाढ़ आ गयी। १९४७ में केवल भारतीय डोमीनियनमें लगभग २० लाख मजदूरों और कर्मचारियोंने आर्थिक हड़तालोंमें भाग लिया था; इन हड़तालोंके परिणाम-स्वरूप लगभग १ करोड़ ६० लाख दिनोंका नुकसान हुआ था। हिन्दुस्तानमें युद्धके बादके वर्षोंमें होनेवाली हड़तालोंकी विशेषता उनका जन (सामुदायिक) स्वरूप, उनकी दृढ़ एकता और उनमें मजदूरोंकी सक्रिय भूमिका, और सर्वहारा वर्ग और मेहनतकशोंके नये अंगों—छोटे कारखारोंके मजदूरों, देशी रियासतों के मज़दूरों, सरकारी और निजी कारखारों में नौकर लोगों आदि, आदि का व्यापक पैमाने पर उनमे शामिल होना है। यह लाक्षणिक चीज़ है कि हड़ताली लड़ाइयों मे विभिन्न औद्योगिक केन्द्रों (बम्बई, कलकत्ता और दूसरे शहरों में आम हड़तालों की संख्या) और सम्पूर्ण प्रान्तों (मध्य प्रान्त और बरारके कपड़ा मजदूरोंकी आम-हड़ताल, बम्बई प्रान्त, पंजाब और संयुक्त प्रात में शिक्षकों की आम हड़तालें) दोनों मे ऐसी हड़तालो का जिनमें मजदूरों और कर्मचारियों के व्यापक स्तर शामिल होते हैं, विशेष अनुपात बढ़ रहा है। एक ही उद्योग की विभिन्न शाखाओंके मजदूरो ने भी राष्ट्र-व्यापी पैमाने पर हड़तालें की हैं (पोस्ट और टेलीग्राफ मजदूरोंकी आम हडताल)। हिन्दुस्तानके मजदूर वर्गकी हड़ताली लड़ाइयोंकी अत्यंत विस्तृत व्यापकताने आम जनताकी क्रान्तिकारी चेतनाको बढ़ानेमें और उसे सर्वहारा वर्गके इर्द-गिर्द जत्थेबन्द करनेमें बड़ी भूमिका अदा की है।

हिन्दुस्तानका मजदूर वर्ग जो अपनी आर्थिक मॉगोंको पूरा करानेके लिये लड़ रहा है, साथही साथ, ब्रिटिश शासन के खिलाफ जनताकी साम्राज्यवाद-विरोधी लड़ाइयों का भी अग्रदूत और नेता है। कलकत्ता और दूसरे शहरोंमें नवम्बर १९४५ और फ़रवरी १९४६ में ब्रिटिश-विरोधी जन-प्रदर्शनों और बम्बईमे जनवरी-फ़रवरी १९४६ की खूनी टक्करों के और "बैरीकेड" खड़े करके लड़ी गयी लड़ाइयोंके दर्म्यान, मजदूर वर्गने आम जनताको अपने पीछे व्यापक रूपसे खींच लिया था और उसकी सक्रिय भूमिकाके परिणाम-स्वरूप इन लड़ाइयोंने जंगजू और क्रान्तिकारी रूप अख्तियार कर लिया था।

१९४६ की फ़रवरीमें बम्बई तथा दूसरे शहरोंमें होनेवाला नाविकोंका विद्रोह मजदूर वर्गके सक्रिय समर्थनके बिना असंभव होता। नाविकोंके साथ एकता प्रकट

करनेके लिये की गयी बम्बई के कपड़ा मजदूरों की आम हड़तालने—जो कि बराबर तीन दिनो तक " बैरीकेड "की लड़ाइयो के रूपमें चलती रही थी--तथा देशके दूसरे केन्द्रोंमे हुई भाईचारेकी हड़तालोंने हिन्दुस्तानके मेहनतकशोंके साम्राज्यवाद-विरोधी आन्दोलनमे मजदूर वर्गकी प्रमुख और निदर्शनकारी भूमिकाको स्पष्ट रूपसे दिखला दिया था। मजदूर वर्गकी हिरावलकी भूमिका उन आम आन्दोलनोंमें भी दिखलाई दी जो युद्ध के अन्तके बाद सामन्ती रियासतों (त्रावणकोर, हैदराबाद, इन्दौर, वगैरा) में —प्रतिक्रियाके इन गढ़ोंमें—फूट पड़े थे। मजदूरोके संघर्षने सामन्ती राजाओं और ब्रिटिश शासनके खिलाफ़, सामन्ती व्यवस्थाका अन्त करनेके लिये, उनका जनवादीकरण करने के लिये एक जन आन्दोलन की शुरुआत का द्वार खोलने का काम किया।

हिन्दुस्तान के दो डोमीनियनों में बॅट जाने के बाद मजदूरों तथा तमाम मेहनत-कशोंके रहन-सहन के स्तर पर पूंजीपतियों और शासक हल्कों के हमले के खिलाफ़ हड़ताली संघर्ष खतम नहीं हो गया है। भारतीय डोमीनियन मे १९४८ में १,६३४ आर्थिक हड़तालें हुई जिनमे १२ लाख मजदूरोंने भाग लिया था।

देशके बॅटवारे के बाद हिन्दुस्तान में कांग्रेसी सरकार की और पाकिस्तान में मुस्लिम लीग सरकार की जन विरोधी नीतियों के खिलाफ़, कम्युनिस्ट पार्टियों, अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस, और दूसरे प्रगतिशील जनवादी संगठनों के ऊपर दोनो डोमीनियनों द्वारा दमन के खिलाफ़, राजनीतिक हड़तालों और मजदूरों के सामुदायिक संघर्षोंने एक व्यापक रूप ले लिया है।

कांग्रेस सरकार द्वारा (दिसम्बर १९४७ में) मूल्य-नियंत्रण (कण्ट्रोल) के उठा लेने के खिलाफ़ विरोधके रूपमें बम्बई के ७ लाख मजदूरों की एक दिन की आम हड़ताल, (जनवरी १९४८ में) बंगाल धारा सभा द्वारा बंगाल सरकार को असाधारण रूपसे बड़ी ताकत से लैस करनेवाले कानून को पास करने के विरोध में कलकत्ता के १ लाख मजदूरों की एक दिन की आम हड़ताल, (मार्च १९४८ में) सरकार की मजदूर वर्गविरोधी नीति के खिलाफ़ मध्य-प्रान्त और बरार के २ लाख मजदूरों की एक दिन की हड़ताल, (जुलाई १९४८ में) मजदूर वर्ग विरोधी क़ानून के लागू किये जाने के विरोध के रूपमे कलकत्ता के ५० हजार मजदूरों की एक दिन की हड़ताल, तथा बहुत से दूसरे बड़े राजनीतिक संघर्ष और साथ ही कम्युनिस्ट पार्टी के ऊपर दमन के खिलाफ हुई बहुत सी विरोध हड़ताले—सर्वहारा वर्ग के इस तरह के राजनीतिक संघर्ष ही हिन्दुस्तान के जीवन की सब से महत्वपूर्ण घटनाएँ थीं।

चीन की मुक्ति फ़ौजों की शानदार सफलताने हिन्दुस्तान और पाकिस्तान में व्यापक सहानुभूति पायी। दोनों ही डोमीनियनों के बहुतसे शहरों में चीनी जनता के साथ सह-भावना प्रकट करने के लिये कम्युनिस्ट पार्टी तथा दूसरे प्रगतिशील संगठनों के नेतृत्वमें सभाएँ और प्रदर्शन हो रहे हैं। हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के राष्ट्रीय

मुक्ति के आन्दोलन के और अधिक व्यापक तथा गहरे होने पर आजादी और जन-वाद के लिये चीनी जनता के वीरतापूर्ण संघर्ष का बड़ा प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सकता।

हिन्दुस्तानके सर्वहारा वर्ग का बढ़ता हुआ राजनीतिक संघर्ष इस बातको स्पष्ट रूपसे प्रमाणित करता है कि न केवल वह अपने खुद के आर्थिक हितोंकी हिफाजतके लिये दृढ़तापूर्वक आगे आ रहा है, बल्कि व्यापक मेहनतकश जनता के हितों की हिफाजत के लिये और साम्राज्यवादियों, बड़े पूँजीपतियों और जमींदारों के प्रति-क्रियावादी गुटके खिलाफ होनेवाले संघर्ष का भी वह नेतृत्व कर रहा है। इस तरह, व्यवहार में वह आम संघर्ष के नेताके स्तर पर पहुँच जाता है।

जनताका समर्थन हासिल करनेके लिये अपने संघर्षमे हिन्दुस्तानके मजदूर वर्ग और उसकी पार्टीको गंभीर कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करनी होगी, और सबसे बढ़कर, उसे खुद अपनी सफोंमे एकता कायम करनेके लिये संघर्ष करना चाहिये। भारतीय संघमें राष्ट्रीय काग्रेस और सोशलिस्ट पार्टीकी प्रतिक्रियावादी नेताशाही ट्रेड यूनियन आन्दोलनमे फूट डालनेकी कोशिश कर रही है। बँटवारेके बादसे देशके अन्दर अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन काग्रेसके अलावा जिसका नेतृत्व प्रगतिशील नेताओंके--जिनमे कम्युनिस्ट भी शामिल हैं—हाथमे है, तीन और विरोधी ट्रेड यूनियन केन्द्र उठ खडे हुए हैं: इण्डियन नेशनल ट्रेड यूनियन काग्रेस, जो कि सरकार और मालिकों का संगठन है और जिसे राष्ट्रीय काग्रेस के नेताओं और पटेल-नेहरू सरकार ने जन्म दिया है, हिन्द मजदूर सभा, जिसकी स्थापना सोशलिस्ट पार्टी के नेताओं की इच्छा से हुई है, और ट्रेड यूनियनों की संयुक्त काग्रेस, जो अभी हालमे कलकत्ता में बनायी गयी है। और इस बात के बावजूद कि अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन काग्रेस की तुलनामें ये पिछले तीनो संगठन काफी कमजोर है, उनके नेताओ की फोड़ने और फूट डालनेवाली कार्रवाइयॉ मजदूर वर्गके संवर्षके रास्तेमे एक बड़ी बाधा हैं। इस चीजका स्पष्ट प्रमाण हमे सोशलिस्ट नेताओं द्वारा ८ लाख रेलवे मजदूरोंकी उस आम हडतालमें डाली गयी फूटमें मिलता है जो मार्च १९४९ में होनेवाली थी और जिसके पक्षमे रेलवे मजदूरोंकी तमाम ट्रेड यूनियनों के ९५ फी सदी सदस्यों ने अपना वोट दिया था। पाकिस्तान के मजदूर आन्दोलनमे भी फूट डाली गयी है।

हिन्दुस्तानके मजदूर वर्ग मे एकता की कमी का कारण बहुत हद तक यह बात भी है कि उसके कुछ हिस्से अभी तक पूंजीवादी राष्ट्रीय सुधारवादके असर से बरी नहीं हुए है। राष्ट्रीय सुधारवाद गाधीवाद के—जोकि अब भी पूंजीवादी वर्ग का सबसे महत्वपूर्ण विचारधारात्मक अस्त्र है—प्रतिक्रियावादी रूपमें और सोशलिस्ट तथा दूसरी "वामपक्षी" पार्टियों के "वामपक्षी" रूपमे भी सामने आता है। वर्तमान कालमें, "वामपक्षी" राष्ट्रीय सुधारवाद—जो कि विदेशी और देशी पूँजीकी

अपनी गुलामीको, उनके सामने अपने दुम हिलानेको बड़ी-चढ़ी बातों और झूठे-क्रान्तिकारी नारोंके द्वारा छिपानेकी कोशिश कर रहा है—मजदूर आन्दोलनके लिये एक बडा खतरा है। देशमे साम्राज्यवादी औपनिवेशिक गुलामी और पूँजीवादी उत्पीडनको बनाये रखनेकी कोशिश सोशलिस्ट पार्टीकी नेताशाहीकी तमाम कार्रवाइयों में दिखलायी देती है। सोशलिस्ट पार्टी अपनी फूटकी कार्रवाइयोंको मजदूरों किसानों और युवकोंके तथा दूसरे संगठनोमे तेज कर रही है।

*　　　　*　　　　*

राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के ऊपर अपना नायकत्व कायम करने की एक निर्णायक शर्त सर्वहारा के लिये यह है कि अपने विचारधारात्मक और संगठनात्मक प्रभाव को वह किसानों के ऊपर--जोकि इस ठेठ खेतिहर देशमे आबादी का विशाल अधिकाश हैं--दृढ बनाये। किसान वर्ग औपनिवेशिक क्रान्ति की सबसे महत्वपूर्ण प्रेरक शक्ति है, और साम्राज्यवाद के खिलाफ़ राष्ट्रीय मुक्ति और जनवादी ढंग से पुनर्संगठन के लिये मजदूर वर्ग के संघर्ष मे वह उसका मुख्य सहयोगी है। इस संघर्ष की सफलता उस मात्रा पर निर्भर करती है जिसमें कि औपनिवेशिक उत्पीडन के खिलाफ़, सामन्तवाद के अवशेषोंके खिलाफ और जनवादी पुनर्संगठन के लिये क्रान्तिकारी संघर्ष में भारतीय किसान वर्ग का अधिकाश मजदूर वर्ग के साथ और उसके नेतृत्व मे खिंच आता है।

ब्रिटिश साम्राज्यवाद के प्रभुत्व और सामन्तवाद के मजबूत अवशेषों ने करोड़ो आम किसानों को अत्यद्द तंगी और भयंकर कष्टों की भट्ठी मे डाला है और—कृषि-व्यवस्था को पतन की अवस्था में पहुँचा दिया है। हिन्दुस्तान के किसानों की मुफलिसी इस हद तक पहुँच गयी है कि गरीब बे-जमीन या लगभग बे-जमीन—किसान ही आज देहात का मुख्य प्राणी है। किसानों की गरीबी कितनी बढ़ी है यह चीज खेतिहर किसानों की संख्या की लगातार वृद्धि से भी स्पष्ट रूपसे जाहिर हो जाती है। हिन्दुस्तान में खेतिहर सर्वहाराकी संख्या १८८२ में ७५ लाख थी, १९२१ में बढ़कर वह २ करोड १० लाख हो गयी और १९३१ तक लगभग ३ करोड़ ३० लाख। अब खेतिहर मजदूरों की संख्या और भी ज्यादा बढ़ गयी है, और हिन्दुस्तानके पूंजीवादी अर्थ-शास्त्रियों के अनुसार भी देशके कुछ जिलोंमे वह खेती-किसानीमें लगी सम्पूर्ण आबादी के लगभग आधे भाग के बराबर हो गयी है।

खेतिहर सर्वहारा वर्ग की यह बडी फ़ौज इस बात का स्पष्ट चिन्ह है कि खेती के ऊपर अवलम्बित आबादी की संख्या हिन्दुस्तान में सापेक्ष रूपसे बहुत बढ़ गयी है। हिन्दुस्तान के खेतिहर मजदूर उन्नत पूंजीवादी देशों के खेतिहर मजदूरों से बुनियादी तौरसे भिन्न हैं। कुलक (धनी किसान) और

जमींदारोंके खेतों पर नौकर (आम तौरसे रोजाना मजदूरीके आधार पर और वर्ष में तीन-चार महीने से अधिक नहीं) मजदूरों के साथ-साथ खेतिहर मजदूरोंकी विशाल संख्यामें वे भी होते हैं जो गुलाम बना लिये गये है—तथाकथित खेतिहर नौकर, कर्जेके गुलाम तथा, सामन्तवादी शोषण से कुचले हुए गाँवों की—आबादी के लुटे हुए स्तरों के दूसरे लोग। इसी श्रेणी में गरीब और सर्वहारा हो गये देहात के कारीगर (कुम्हार,चमार, लुहार, आदि) होते हैं। जमीन के अत्यंत छोटे-छोटे टुकड़ों पर खेती करते छोटे मालिकों और छोटे काश्तकारों की स्थिति खेतिहर मजदूरों की स्थिति से बहुत ही कम भिन्न होती है। यह बात पूर्ण रूपसे स्वयं-स्पष्ट है कि सामाजिक सम्बंधों में केवल बुनियादी परिवर्तन, केवल एक खेतिहर क्रान्ति ही, सामन्ती अवशेषों को मिटा सकती है और हिन्दुस्तान के किसानों और खेतिहर सर्वहारा वर्ग की हालत मे सुधार कर सकती है।

अनकथ तंगीसे कुचले और जमीन से सामूहिक रूपसे निकाले हुए हिन्दुस्तान के करोड़ों मेहनतकश किसान सर्वहारा वर्ग के सबसे महत्वपूर्ण सहयोगी बने बिना नहीं रह सकते। किसान अपनी मुक्ति केवल सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में हासिल कर सकते हैं, उसी तरह जिस तरह कि सर्वहारा वर्ग औपनिवेशिक क्रान्ति को केवल किसानों की मैत्रीमें और उनका नेतृत्व करके ही विजयकी मंजिल तक ले जा सकता है।

सामन्तवादी-जमींदारी शोषणके खिलाफ, ब्रिटिश औपनिवेशिकोंके जुएके खिलाफ़ हिन्दुस्तानकी आम किसान जनताके संघर्षने उन्नीसवीं शताब्दीके उत्तरार्ध में भी काफी बड़ा रूप धारण कर लिया था। लेकिन हिन्दुस्तानमें एक व्यापक किसान आन्दोलन १९१८–२२ में ही शुरू हुआ। लेकिन उस समय, इस चीजके बावजूद कि वह मजदूर वर्गके हड़ताल आन्दोलनके प्रभावके अन्तर्गत बढ़ रहा था, किसान आन्दोलनका रूप एक अपने-आप और छिट-पुट उठनेवाले ऐसे आन्दोलनका था, जो अक्सर धार्मिक नारों के मातहत चलता था। १९३०–३२ के साम्राज्यवाद-विरोधी जन-आन्दोलन के दर्म्यान किसानों के संघर्ष ने और भी ज़्यादा व्यापक विस्तार हासिल किया। लेकिन उस समय भी, अधिकाश मात्रा में किसान आन्दोलन अपने–आप बढ़ा। किसान जनता अब भी राष्ट्रीय काग्रेस की पूंजीवादी नेताशाही के असर में और खासतौर से गाधीवाद के असर में थी। तब भी कई जगहों पर किसान संघर्षों का रूप लड़ाकू और क्रान्तिकारी था। कुछ स्थानों मे स्वतंत्र किसान संगठन भी बनने लगे।

किसान जनताके ऊपर मजदूर वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टीके असरमें विषेश वृद्धि दूसरे विश्व युद्ध से पहले हुई। क्रान्तिकारी तत्वो के नेतृत्व में देशमें किसान यूनियनों (किसान सभाओं) की काफी बड़ी तादाद पैदा हो गयी। किसानों के बहुत से जन-संघर्ष कम्युनिस्टों के नेतृत्व में क्रान्तिकारी नारो को लेकर होने लगे। युद्ध के वर्षों में, और खास तौर से युद्ध के बाद के काल में, अखिल भारतीय किसान सभा में सगठित किसान सभाएँ काफी मजबूत बनीं; और अब जन-किसान

अन्दोलन का नेतृत्व कर रही हैं। इस समय किसान सभाएँ देशभर मे और देशी राज्यों मे भी मौजूद हैं जिनका नेतृत्व क्रान्तिकारी तत्वोंके हाथ में है। दक्षिण भारत मे खास तौर से उनका जबरदस्त असर है।

युद्ध के बाद हिन्दुस्तान का किसान आन्दोलन मजदूर वर्ग और किसानों की मैत्रीको दृढ़ करने के नारे के मातहत आगे बढ़ रहा है; और आम जनवादी आन्दोलन के साथ, जो मजदूर वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में विकसित हो रहा है, वह घनिष्ट रूप से जुड़ा हुआ है। लेकिन इस चीजको नोट करना चाहिये कि बावजूद इस बात के कुछ जिलोंमें किसान आन्दोलन ऊँचे स्तर पर पहुँच गया है, उसकी विशेषता अब भी यही है कि उसका विकास बहुत असमान है और उसका रूप अभी तक अखिल भारतीय नही है। पाकिस्तानमे खास तौर से किसान आन्दोलन विकास की कमजोर अवस्था मे है।

पूर्व और उत्तरी बंगालमें तथा उड़ीसा के कुछ जिलों मे किसान फसल मे जमींदार के हिस्से को कम करानेके लिये संघर्ष कर रहे हैं। युद्ध के बाद ही बंगालमे इस आन्दोलनने अत्याधिक व्यापक और लडाकू रूप ले लिया था। प्रान्त के बीस ज़िलों के किसानोंने खेतोंमे जमा गल्ले को जमींदार की खत्तियो में ले जाना बन्द कर दिया और आधी फसलको—जिसकी जमीदार मॉग कर रहे थे—देने से उन्होंने इनकार कर दिया। फसल को उन्होंने अपने पास रख लिया और जमींदारों को पैदावारके एक-तिहाई भागसे ज़्यादा नही दिया। बंगालके किसानोंका यह आन्दोलन जो "तेभागा" (जिसका मतलब है एक-तिहाई, अर्थात लगानको फसलके एक तिहाई भाग के बराबर करानेके लिये संघर्ष) के नामसे मशहूर है, वास्तवमे, लगभग पिछले तीन वर्षोंसे चल रहा है, कभी वह ठण्डा पड़ जाता है, फिर, फिर उभड़ पडता है।

बिहार और उडीसा (हिन्दुस्तान) और पश्चिमी पंजाब और सीमा प्रान्त (पाकिस्तान) के कई जिलों मे काश्त की हुई जमीन पर से जमींदारों द्वारा की जाने-वाली सामूहिक बेदखलियोंके खिलाफ किसानोंका संघर्ष फैल रहा है। किसान अक्सर काश्त किये हुए अपने खेतोंको छोडने से इनकार कर देते हैं और पुलिस के साथ खुली टक्कर लेते हैं।

मद्रास प्रान्त मे जहॉ कि बुरी फसलों और अकाल ने पिछले वर्षोंमें किसानों की हालत खास तौर से बुरी कर दी है किसान आन्दोलनने बहुत ही तीव्र रूप धारण कर लिया है। इस प्रान्त मे न सिर्फ़ पूरे गावके गाव, बल्कि पूरे जिलेके जिले क्रान्तिकारी किसान सभाओंके पीछे इकट्ठे हो रहे हैं। यहॉ पर किसान संघर्ष मुख्यतया जमीदारोंके गल्ले को जब्त कर लेने का रूप लेता है। बाद मे किसान सभाएँ इस गल्लेको खास तौरसे जरूरत मन्द किसानों मे बॉट देती हैं। बहुत अक्सर, और खास तौरसे हडतालों के समय, जब्त किये हुए अनाज के एक हिस्से को किसान मजदूरोंमें बॉट देते हैं (चिरकल तथा दूसरे जिलों में ऐसाही हुआ था)। जमींदारों के

कोठारों मे भरे गल्ले को छीनने का आन्दोलन उत्तरी मलबार में खास तौर से व्यापक रूप में बढ़ा और बहुत अक्सर उसने पुलिस और फ़ौज के दस्तों के खिलाफ किसान जनता की खुली लडाई का रूप लिया। मद्रास प्रान्तके कुछ जिलोंमें (कृष्णा, गोदावरी, गुन्टुर) किसान छापेमारोंके दस्ते काम कर रहे हैं।

देशके बहुतसे ज़िलोंके किसान आन्दोलनमें खेतिहर मजदूर—जोकि लाज़िमी तौरसे बढती हुई खेतिहर क्रान्तिकी एक अत्यंत महत्वपूर्ण शक्ति हैं—बहुत बडी भूमिका अदा कर रहे है। बिहारमें खेतिहर मजदूरोंकी हड़तालोंका किसान आन्दोलन की प्रगतिपर निर्णायक असर पड़ा। बंगालमें—उसके उन ज़िलोंमे जहाँ "तेभागा" आन्दोलन बढ़ रहा है—हड़तालें चलानेमें खेतिहर मजदूर किसानोंके साथ कन्धेसे कन्धा मिलाकर भाग ले रहे हैं। किसानोंकी सभाओं और प्रदर्शनों मे भी वे सक्रिय रूप से हाथ बँटा रहे हैं। मद्रास प्रान्त में खेतिहर मजदूरो की यूनियनोंमें संगठित खेतिहर मजदूर किसानों के साथ-साथ ज़मींदारोंका गल्ला जब्त करने का काम कर रहे हैं। युक्त प्रान्त और दूसरे प्रान्तोंमें भी खेतिहर मजदूरों का संघर्ष तीक्ष्ण हो रहा है। गोरखपुर जिले में एक जगह जब उनसे उनकी ज़मीनों को अपने लिये जोतने का अधिकार छीनने की कोशिश की गयी तो उसके जवाब मे १५०० खेतिहर मजदूरोंने उस ज़मीनको अपनी घोषित कर दिया और वहाँ पर लाल झण्डा फहरा दिया। बम्बई प्रान्त (हिन्दुस्तान) और पूर्वी बंगाल (पाकिस्तान) मे खेतिहर मजदूरों (बम्बई प्रान्त के वारलियों और हालियों तथा बंगाल के नानकारियों) द्वारा अपनी मुक्ति के लिये और नकद मजदूरी के लिये चलाये गये संघर्षने काफी बड़ा रूप धारण कर लिया।

ज़मींदारो की ज़मीन को बिना मुआवज़ा जब्त करलेने और उसे किसानो के बीच बॉट देने की मॉग हिन्दुस्तान और पाकिस्तान दोनों में किसान अधिकाधिक बार उठा रहे हैं। इस मॉग को मद्रास, बम्बई और बिहार प्रान्तों में, पश्चिमी और पूर्वी बंगाल में, उत्तर-पश्चिमी सीमा प्रान्त में तथा दूसरी जगहो में हुई अनेक सभाओ और सम्मेलनो ने उठाया है। हिन्दुस्तान मे कांग्रेसी सरकारकी और पाकिस्तानमें लीगी सरकारकी मामूली से मामूली जनवादी खेतिहर सुधार करने की सम्पूर्ण असमर्थता के और सामन्ती-ज़मींदारों की प्रतिक्रियावादी ताकतों के प्रति उनके खुले समर्थन के कारण किसान आन्दोलनका मजबूत होना और उसका और ऊँची अवस्थामें पहुँचना लाज़िमी है।

कम्युनिस्ट पार्टी के ऊपर दमन और कम्युनिस्टो की आम गिरफ्तारियों के विरोधमें होनेवाली किसान सभाएँ और प्रदर्शन, किसानों के ऊपर मजदूर वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टीके बढ़ते हुए प्रभाव का, और किसानों की राजनीतिक सरगर्मियों की वृद्धिका सबूत है।

मद्रास प्रान्त के गुन्टुर ज़िले में कई हजार किसानों ने इस नारे के साथ प्रदर्शन किया कि "हम मॉग करते हैं कि कम्युनिस्ट पार्टी के खिलाफ दमन बन्द किया जाय"। किसान जनसंख्याने प्रदर्शन का हृदय से स्वागत किया। अन्त में वह एक सभा मे खतम हुआ जिसमे १० हजार लोग जमा हुए थे।

बेतिया (बिहार) मे किसान सभा द्वारा बुलाई गयी एक सभा में ७,००० किसान शामिल हुए। वहॉ से उन्होंने मॉग की कि ज़मींदारों की जमीन को बिना मुआवजा फौरन जब्त किया जाय, गिरफ्तार कम्युनिस्टोंको रिहा किया जाय और पश्चिमी बंगाल मे कम्युनिस्ट पार्टी के ऊपर से पाबन्दी उठायी जाय।

दरभंगा (बिहार) मे जहॉ राष्ट्रीय काग्रेसकी प्रान्तीय कमिटी की एक बैठक हो रही थी, १५ हज़ार किसानों ने निम्न नारो के साथ प्रदर्शन निकाला : "किसानों के खिलाफ दमन बन्द हो! कम्युनिस्ट पार्टी जिन्दाबाद!" किसानो ने एक सरकारी मंत्री को जो सम्मेलन मे मौजूद था भाषण नहीं देने दिया और उसे मजबूर होकर मंच छोडना पड़ा। हर जगह किसानोंकी इसी प्रकारकी सभाएँ और प्रदर्शन हो रहे हैं। युद्धके बादके कालमें किसान आन्दोलन अपने सबसे ऊँचे शिखर पर हैदराबादकी देशी रियासतके इलाके तेलंगानामें पहुँचा। किसान, जो मुख्यतया तेलगू (या आंध्रा) जातिके हैं, सामन्ती शोषणके खिलाफ लड़नेके लिये उठ खड़े हुए; और साथ ही साथ उन्होंने मॉग की कि उनकी राष्ट्रीय भूमिको जो हैदराबादमें थी भारतीय संघके अन्दर उनकी राष्ट्रीय भूमिके साथ मिला दिया जाय। जिस चीजने तेलंगानाके किसान संघर्षको इतनी तीव्रता प्रदान की वह थी सामन्तवाद-विरोधी और राष्ट्रीय संघर्ष का मिल जाना। तेलंगाना में जमींदारों के खिलाफ और निजाम की निरंकुश ताकत के खिलाफ किसानों के आन्दोलन ने एक सशस्त्र विद्रोह और खेतिहर क्रान्तिका रूप धारण कर लिया। इसके परिणाम-स्वरूप रियासत के छठे हिस्से में जिसकी आबादी ४० लाख है निजाम और जमींदारों की हुकूमत का तख्ता उलट दिया गया। तेलंगाना के २,५०० गाँवों में जमींदारों की जमीन को ऐसे किसानों के जिनके पास जमीन नहीं थी या बहुत कम थी, और खेतिहर मजदूरों के बीच बॉट दिया गया; मजदूरों के ऊपर जमींदारों और साहूकारों के कर्ज-को मन्सूख कर दिया गया; —जनता की चुनी हुई कमिटियॉ और कचहरियॉ कायम कर दी गयीं; और जनता की एक फौज बनायी गयी। सितम्बर १९४८ मे किसानों के क्रान्तिकारी संघर्ष को दबाने के लिये भारतीय डोमीनियन की सरकारने तेलंगाना मे अपनी सशस्त्र फ़ौजें भेजी। इन दण्डकर दस्तों को तेलंगाना में पागलों की तरह ज़ुल्म-जबरदस्ती करते तबसे एक वर्ष बीत चुका है, लेकिन वे किसानों की लड़ाकू भावना को नही मिटा सके हैं और न उनके वीरतापूर्ण संघर्ष को ही कुचलने में सफल हुए हैं। किसान संघर्ष जारी है—बहुत अक्सर वह छापेमार लड़ाई का रूप ले लेता है और पड़ौस के

जिलों मे और खास तौर से मद्रास प्रान्त के उन जिलो में जहॉ आंध्रा लोग रहते हैं—फैल रहा है।

तेलंगाना का किसान आन्दोलन हैदराबाद के मजदूरों के संघर्ष के साथ घनिष्ट रूपसे जुड़ा हुआ है, और मजदूर वर्ग तथा गरमदली संगठनों के नेतृत्व मे चलाया जा रहा है। तेलंगाना की घटनाएँ जमीन और जनता के जनतंत्र के लिये होनेवाले क्रान्तिकारी संघर्ष का सबसे ज्वलन्त उदाहरण है। हिन्दुस्तान मे जनता के जनतंत्र की स्थापना करने की दिशा में वे पहला प्रयत्न हैं। और यद्यपि यह प्रयत्न अपने पैमाने और रूप के लिहाज से सीमित है, तब भी हिन्दुस्तान और पाकिस्तान में आम जनवादी आन्दोलन के आगे विकास होने और तेज होने के सम्बंध मे निर्विवाद रूप से उसका बहुत भारी महत्व है। तेलंगाना का संघर्ष खेतिहर क्रान्ति का अग्रदूत और हिन्दुस्तान के राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष की वर्तमान मंजिल का सबसे महत्वपूर्ण तत्व है।

हिन्दुस्तान और पाकिस्तान दोनों के विभिन्न भागों मे एक न एक मात्रा में किसानो ने तेलंगाना के उदाहरण का अनुकरण करना शुरू भी कर दिया है। युक्त प्रान्त, मध्य प्रान्त तथा दूसरे प्रान्तों के अनेक देहाती जिलोंमे जमींदारो के जोरो-जुल्म के खिलाफ किसानों के विद्रोह अधिकाधिक बार हो रहे हैं। प्रेस ट्रस्ट ऑफ इण्डिया की अखबार एजेन्सी के कथनानुसार केवल युक्त प्रान्त में १९४९ के पहले ६ महीनों में २,०५७ किसान विद्रोह और संघर्ष हुए।

किसान वर्ग को अपने साथ लानेके लिये हिन्दुस्तान के मजदूर वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टी को गंभीर कठिनाइयों पर काबू करना है। किसानों के ऊपर प्रतिक्रियावादी गांधीवाद का असर अब भी मजबूत है। राष्ट्रीय कांग्रेस के ऊपर के प्रमुख हिस्सों की दगाबाजी और गद्दारी के बावजूद, किसान जन-समुदायके अन्द कांग्रेस अब भी काफी असर रखती है; और इस बातका उत्तर कि पटेल और नेहरूके दलालों (रंगा आदि) के नेतृत्व मे चलनेवाली फूटवादी अखिल भारतीय किसान कांग्रेसको किसानोंके बीच अपनी विश्वासघाती हरकतें करनेके लिये जमीन मिल जाती है, इसी चीजसे मिल सकता है कि राष्ट्रीय कांग्रेसके बारेमे उनके अन्दर भ्रम हैं जो अभी तक मिटाये नहीं जा सके हैं। सोशलिस्ट नेता भी किसान जन-समुदायके बीच अपनी फूट डालनेवाली कार्रवाइयाँ करनेकी कोशिश कर रहे हैं। बहुत दिन नहीं हुए जब किसानोंके बढ़ते हुए क्रान्तिकारी संघर्ष को और कम्युनिस्ट पार्टी के असर की बढ़ती को धक्का पहुँचाने के उद्देश्य से उन्होंने एक प्रतिद्वन्द्वी किसान संगठन खड़ा किया था।

आजादी स्वतंत्रता और जनवाद की लडाई में हिन्दुस्तान के सर्वहारा वर्ग का एक महत्वपूर्ण सहयोगी शहर के निम्न-पूंजीवादियोंका काफी बडा हिस्सा भी है।

निम्न-पूंजीवादियों की कठिन परिस्थितियो और विदेशी और देशी पूंजीपतियों के द्वारा उनका शोषण उनके विस्तृत स्तरों को सर्वहारा वर्ग के साथ आम संघर्ष के मार्ग पर अधिकाधिक ढकेल रहा है। हाल के वर्षो मे शहर के निम्न-पूंजीवादियों के निचले स्तरो पर मजदूर वर्ग का प्रभाव काफी दृढ़ हुआ है। कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व मे होनेवाली जनता की लडाकू राजनीतिक लड़ाइयों मे उनका सक्रिय रूप से भाग लेना इस बात का प्रमाण है। हाल के वर्षो मे कम्युनिस्टो का प्रभाव जनवादी विद्यार्थियो, युवकोंके तथा दूसरे अनेक प्रगति शील जन संगठनो के अन्दर बढा है। इसके बावजूद राष्ट्रीय सुधारवाद का असर शहर के निम्न-पूजीपतियो के काफी बडे भाग पर अब भी मजबूत है। यह बात इससे खास तौरसे जाहिर होती है कि कुछ प्रान्तोंमे ऐसी निम्न-पूंजीवादी पार्टियो और दलों की संख्या कुछ कम नहीं है जो अपने को "बॉये" लेबलों की ओट मे छिपाये हुए हैं। वास्तविक अमल मे उनका इस्तेमाल प्रतिक्रियाकी ताकतों द्वारा जनवादी आन्दोलन के खिलाफ संघर्ष मे किया जाता है।

* * *

राष्ट्रीय पूंजीपतिवर्ग को आन्दोलनके नेतृत्वकी जगह से हटाना और जनता से अलहदा करना राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलनके ऊपर मजदूर वर्ग का नायकत्व कायम करने के लिये एक सबसे महत्वपूर्ण शर्त है।

भारतीय पूंजीपति वर्गके—सिर्फ व्यापारिक पूंजीपति नहीं, बल्कि बडे औद्योगिक पूंजीपतियोंके भी—काफी हिस्से अपने जन्म-कालसे ही विभिन्न सूत्रोंके जरिये ब्रिटिश साम्राज्यवाद के साथ घनिष्ट रूपसे जुड़े हुए थे। ये सम्बंध उधार व्यवस्था के जरिये कायम और मजबूत किये गये थे, क्योंकि हिन्दुस्तान की तमाम मुख्य बैंके ब्रिटिश पूंजी की मुट्ठी मे हैं। उन्हें तथाकथित "मैनेजिंग एजेन्सी" की प्रथा के जरिये भी जोकि हिन्दुस्तानी उद्योग-धंधों की ब्रिटिश महाजनी सेठों के गुट की गुलामी का एक खास रूप है, कायम और मजबूत किया गया है। दूसरे उपायों से भी इन सम्बधों की स्थापना की गयी है। हिन्दुस्तान और ब्रिटेन के पूंजीवादी सहयोग के अन्दर प्रभुत्वपूर्ण स्थिति हमेशा ब्रिटेनके पूंजीवादी धन्ना-सेठों की रही है।

हिन्दुस्तानके औद्योगिक पूंजीपति वर्ग के काफी स्तर सामन्ती जमींदारों के साथ, और बहुत अक्सर सूदखोर महाजनो के साथ, घनिष्ट रूप से जुडे हुए हैं। यह चीज बहुत हद तक देश के औद्योगिक विकास को रोकने की ब्रिटिश नीतिके कारण हुई है।

अन्त में, हिन्दुस्तान के बडे पूँजीपति वर्ग की एक खास विशेषता को और देखना चाहिये। जैसा कि लोगोंको अच्छी तरह मालूम हैं, हिन्दुस्तान एक बहु-जातीय देश है और जातियो के बनने की क्रिया देशके अन्दर असमान रूपमें चल

रही है। उन प्रदेशो के साथ-साथ जो पूंजीवादी रूपमें अधिक उन्नत हैं और जिनमें जातियाँ बन चुकी हैं, देशमें ऐसे भी काफी प्रदेश मौजूद हैं जो आर्थिक दृष्टिसे अत्यंत पिछडे हुए हैं और जिनमे जातियोंके बननेकी क्रिया पूरी होनेसे अभी बहुत पीछे है। हिन्दुस्तान की विभिन्न जातियोंके पूंजीपति वर्गके बनने और बढ़नेकी क्रिया पूंजीवादी विकास और जातियोंके बननेकी क्रियाके साथ अभिन्न रूपसे जुडी हुई है। वर्तमान कालमें हिन्दुस्तानके अन्दर न सिर्फ देशी पूंजीपतियोंके बड़े-बड़े कारोबार मौजूद हैं, बल्कि राष्ट्रीय इजारेदारी के गिरोह भी क़ायम हो गये हैं (बिडला, टाटा और डालमिया आदिकी संयुक्त कम्पनियाँ) जो देशकी अर्थ-व्यवस्थामें बड़ी भूमिका पूरी करते हैं। निस्सन्देह, इन इजारेदारियोंका एक खास औपनिवेशिक रूप होता है; वे विदेशी पूंजीके साथ घनिष्ट रूपसे सम्बंधित हैं और सीधे-सीधे उसके ऊपर निर्भर करती हैं। इन इजारेदारी गिरोहों के अन्दर पूंजीपति वर्ग के गुजराती और मारवाड़ी दलों का प्रभुत्व है और राष्ट्रीय कांग्रेस की दक्षिण-पंथी नेताशाही और हिन्दुस्तानी डोमीनियन की सरकार मुख्यत: इन्ही गिरोहों का प्रतिनिधित्व करती है।

देशके अन्दरूनी बाजार पर अपना प्रभुत्व कायम करने के लिये इन बन चुके इजारेदार गिरोहों की कोशिशों को हिन्दुस्तान के उन जातीय उठते हुए पूंजीपति वर्गोंके विरोध सामना करना पडता है जो अपने पूंजीवादी विकास के धरातल की दृष्टिसे अधिक पिछडे हुए हैं।

पाकिस्तान में, जहाँ के औद्योगिक विकास की और पूंजीवादी सम्बंधों की विशेषता अब भी उनका अत्यधिक पिछडापन है, बड़ा औद्योगिक पूंजीपति वर्ग सापेक्ष रूप से कमजोर है। पाकिस्तान की सरकार और मुस्लिम लीग के उच्च स्तरों दोनों मे, मुख्य स्थान प्रधानतः सामन्ती-जमींदार तत्वों के कब्जे मे हैं।

हिन्दुस्तान के बड़े पूंजीपति वर्ग की वे विशिष्ट खासियतें जिन्हे ऊपर नोट किया गया है और जो हिन्दुस्तान के औपनिवेशिक विकास की खास विशेषताओं से निर्धारित होती हैं, ब्रिटिश साम्राज्यवाद के सम्बंधमे और आम जनताके संघर्ष के सम्बंध में हिन्दुस्तान के पूंजीपति वर्ग की स्थिति को समझने के लिये बहुत महत्व की हैं।

ब्रिटिश साम्राज्यवादकी नीतिका—जिसका उद्देश्य हमेशा हिन्दुस्तानके औद्योगिक विकासको रोके रखना रहा है—नतीजा निश्चय ही हिन्दुस्तानके बड़े पूंजीपति वर्गके अन्दर असन्तोष उत्पन्न होनेके अलावा और कुछ नहीं हो सकता था। हिन्दुस्तानके पूंजीपति वर्ग और ब्रिटिश साम्राज्यवाद के बीच गंभीर मतभेद थे। फिर भी, हिन्दुस्तान के बडे पूंजीपति वर्ग के अन्दर जो कि अपने जन्मकाल से ही ब्रिटिश पूंजी के साथ और देश के अन्दर की सामन्ती प्रतिक्रिया की ताकतों के साथ घनिष्ट रूपसे सम्बंधित था, साम्राज्यवाद के खिलाफ किसी प्रकार का सक्रिय संघर्ष छेड़ने की काबलियत नहीं थी और न उस दिशामे उसका झुकाव था।

यह सच है कि हिन्दुस्तान के पूंजीपति वर्गने राष्ट्रीय काग्रेस की नेताशाही के जरिये जन-आन्दोलन का इस्तेमाल ब्रिटिश साम्राज्यवाद से अपने फायदे के लिये कुछ सुविधाएँ हासिल करने के लिये मोल-तोल करने मे किया। फिर भी, हिन्दुस्तान के पूंजीपति वर्ग की निर्णायक और निरन्तर कोशिश हमेशा यही रही है कि विस्तृत मेहनतकश जनता के स्वतंत्रता और आजादी के संघर्ष को सक्रिय और व्यापक रूप न लेने दे; क्योंकि साम्राज्यवाद के युग मे वास्तविक आजादी के माने केवल उपनिवेशोंके उत्पीडन से आजादी नही, बल्कि अपने "खुद" के राष्ट्रीय पूंजीपति वर्ग के उत्पीड़न से भी आजादी है। हिन्दुस्तान के बडे पूंजीपति वर्गने हमेशा साम्राज्यवादके साथ समझौता कर लिया है और हिन्दुस्तान के सर्वहारा वर्ग और मेहनतकश जन-समुदाय के खिलाफ अपनी लड़ाईमे उसकी मददका भरोसा किया है।

१९२० मे भी लेनिनने जोर दिया था कि,

> "शोषक देशों के और औपनिवेशिक देशो के पूंजीपति वर्ग के बीच एक प्रकार का समझौता-सा हो गया है, जिससे कि बहुत अक्सर, शायद अधिकाश बार तक, जहाँ पर पूजीपति वर्ग राष्ट्रीय आन्दोलन का साथ देता है, तो साथ ही साथ, वह साम्राज्यवादी पूंजीपति वर्ग के साथ भी मिलकर काम करता है, अर्थात तमाम क्रान्तिकारी आन्दोलनों और क्रान्तिकारी वर्गों के खिलाफ लडने मे वह उसके साथ मिल जाता है।" (लेनिन, "कम्युनिस्ट इण्टरनेशनल की दूसरी काग्रेस मे राष्ट्रीय और औपनिवेशिक प्रश्नोंके कमीशनकी रिपोर्ट", जुलाई २६, १९२०, **संक्षिप्त ग्रंथावली**, लारेंस एण्ड विशर्ट, लन्दन, भाग १०, पृ. २४१)

हिन्दुस्तानके पूंजीपति वर्गकी स्थिति एक उदाहरण है जो इस लेनिनवादी समझको स्पष्ट रूपसे सच्चा साबित करता है। राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलनकी प्रथम मंजिलोंमे ही, जब कि आन्दोलनकी दिशा मुख्यतः विदेशी उत्पीड़नके ही खिलाफ थी और जब कि हिन्दुस्तानका सर्वहारा वर्ग एक स्वतंत्र राजनीतिक शक्ति नही बन पाया था, हिन्दुस्तानके बडे पूंजीपति वर्ग ने ग़द्दारीका रास्ता, राष्ट्रीय विश्वासघात और साम्राज्यवादके साथ समझौता करनेका रास्ता अपना लिया था।

१९१८–२२ के जन आन्दोलन तकने बता दिया था कि हिन्दुस्तानका बडा पूजीपति वर्ग, जिसका प्रतिनिधित्व राष्ट्रीय काग्रेसकी नेताशाही करती है, एक समझौतावादी पूंजीपति वर्ग है, और साम्राज्यवाद के विरुद्ध लडाईमे उसे एक क्रान्तिकारी शक्ति नहीं माना जा सकता। कॉमरेड स्तालिन ने बताया था :

> "साम्राज्यवादसे ज़्यादा क्रान्तिसे डरनेवाला, अपने देशके हितों से ज्यादा अपनी थैलियो के बारेमें चिन्तित, पूंजीपति वर्गका यह अंग, सबसे ज़्यादा धनी और सबसे ज़्यादा असरवाला अंग, खुद अपने देश के मजदूरों और किसानों

के खिलाफ साम्राज्यवाद के गुटमे शामिल होकर क्रान्तिके निर्मम दुश्मनों के पक्षमे पूरी तरह जा रहा है।" (स्तालिन : "पूर्वके मेहनतकशों के विश्व-विद्यालय के सामने भाषण," १८ मई १९२५, लेनिन, स्तालिन, ज्दानोव, **औपनिवेशिक समस्याके बारेमें** (अंग्रेजी) पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, १९४८, पृष्ठ १९)

१९३०-३२ में भी हिन्दुस्तान के मेहनतकशों के राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलन के बढ़ाव के समय, बड़े पूंजीपति वर्ग ने जनता के साथ विश्वासघात किया था और ब्रिटिश साम्राज्यवाद के साथ समझौता कर लिया था।

दूसरे विश्व युद्ध के बाद और उसके परिणाम-स्वरूप राष्ट्रीय मुक्ति के आन्दोलन ने एक अभूतपूर्व व्यापकता हासिल कर ली, उसका नेतृत्व अधिकाधिक मजदूर वर्ग के हाथ में जाने लगा। हिन्दुस्तान का बड़ा पूंजीपति वर्ग खुले-आम प्रतिक्रिया और साम्राज्यवाद के शिविर मे चला गया और देश के जनवादी आन्दोलन का बर्बरतापूर्वक दमन करने लगा। सोवियत संघ के नेतृत्व मे तमाम दुनिया की जनवादी ताकतों की बढ़ती और पारस्परिक सहयोग के परिणाम-स्वरूप और चीनमें दक्षिणपूर्व के देशों के क्रान्तिकारी आन्दोलन के अभूतपूर्व बढ़ाव के और राष्ट्रीय मुक्ति की फ़ौजो की शानदार विजयो के परिणाम-स्वरूप अपनीही मेहनतकश जनता से उसका (बडे पूजीपति वर्ग का—अनु०) डर बढ़ रहा है।

पहले अगर अपनी गद्दारियो की और साम्राज्यवाद के सामने घुटना टेक देने की श्रृंखला के बावजूद हिन्दुस्तान का बड़ा पूजीपति वर्ग साम्राज्यवादका थोड़ा-बहुत विरोधी भी था, तो अब इस काल में वह पूर्ण रूप से और खुले तौर पर साम्राज्य-वाद के शिविर में चला गया है।

यह चीज कि न सिर्फ मुस्लिम लीग के ऊपर के जमींदार-पूंजीपति स्तरोंने,—बल्कि राष्ट्रीय काग्रेस की पूंजीवादी-जमींदारवादी नेताशाही ने भी "माउण्टबैटन योजना" को पूर्ण रूपसे मान लिया इस बातको साबित करती है कि हिन्दुस्तान का बडा पूंजीपति वर्ग खुले तौर पर प्रतिक्रियाके शिविर में जा मिला है। इस योजना के व्यवहारमें कार्यान्वित होनेके परिणाम-स्वरूप ग्रेट ब्रिटेन के ऊपरदोनों डोमिनियनोंको निर्भरता जारी है, हालॉकि इस निर्भरता के रूप बदल गये है और हालॉकि दोनों डोमिनियनों में ब्रिटिश सामाज्यवादियोंने गद्दी देशी शोषक वर्गों को पर बैठ जाने दिया है। दोनों डोमीनियनोंके शासक हल्कोंकी पूरी घरेलू और विदेशी नीति भी साबित करती है कि हिन्दुस्तान और पाकिस्तानके बड़े पूंजीपति वर्गने राष्ट्रीय हितोंके साथ ग़द्दारीकी है।

हिन्दुस्तान और पाकिस्तानके प्रमुख हल्कोंकी अन्दरूनी नीति हिन्दुस्तानके बडे पूंजीपति वर्ग, जमींदारों और सामन्ती राजा-महाराजाओंके हितोंकी ख़िदमतमे पूर्ण रूपसे लगी हुई है। सत्ता हासिल करनेके बाद हिन्दुस्तानके बडे पूंजीपति वर्गने सामन्ती राजे-महाराजों जैसे मध्य-युगके अवशेषों और प्रतिक्रियाके गढ़ोंको—हिन्दु-

स्तानमें साम्राज्यवादके आधारोंको—कायम रखनेके लिये हर तरहसे कोशिश की। वह जमींदारीको—जोकि सामन्ती अवशेषोंका मुख्य आधार और वर्तमान काल में भारतीय किसान वर्ग के ऊपर उत्पीड़न करने का मुख्य रूप है—बचाये रखने के लिये अपनी तमाम ताकत लगा रहा है। खेतिहर सुधारों के लिये भारतीय डोमीनियन के कई प्रान्तोमे जो बिल तैयार किये जा रहे हैं, वे इस बात को स्पष्टरूपसे साबित करते हैं। सामन्तवाद और जमींदारी के अवशेषों को ये सुधार हर जगह कायम रखते हैं। लेकिन हिन्दुस्तान के शासक हल्के इन सुधारो का भी लागू किया जाना रोक रहे हैं। राष्ट्रीय कांग्रेस के नेताओ के पहले क्या बढ़े-चढ़े बयान दिये थे इसकी पर्वाह किये बिना, हिन्दुस्तान के शासक बड़े पैमाने के उद्योग-धंधोंका राष्ट्रीकरण करने से इनकार कर रहे हैं। पाकिस्तान के शासक हल्को की तरह वे भी विदेशी पूंजी के लिये अपने द्वार पूर्ण रूपसे खोल रहे हैं और ब्रिटिश और अमरीकी इजारेदारियों के ऊपर दोनों डोमीनियनों की आर्थिक और राजनीतिक निर्भरता को अब और भी बढ़ा रहे हैं।

मजदूर वर्ग और उसके संगठनों के खिलाफ तथा तमाम जनवादी तत्वों के खिलाफ दोनों डोमीनियनों के शासक हल्के बर्बर दमन चला रहे हैं। प्रगतिशील ताकतों के खिलाफ और खास तौर से कम्युनिस्ट पार्टी के खिलाफ अपने जेहाद में वे बुनियादी तौर से फासिस्ट तरीकों का इस्तेमाल कर रहे हैं। मजदूर सभाओ और किसान संगठनों पर जिनका नेतृत्व जनवादी लोगों के हाथ मे है बर्बरतापूर्ण दमन किया जा रहा है।

हजारो जनवादी नेताओं को जेलोंमें डाल दिया गया है। हिन्दुस्तानमें फरवरी १९४९ में तीन हजार से अधिक आदमी केवल रेलवे मजदूरों की आम हड़ताल होने के डर के सिलसिले मे गिरफ्तार कर लिये गये थे। हिन्दुस्तान के कोने-कोने से हडताली मजदूरो पर, किसान सभाओ पर और विद्यार्थियों के प्रदर्शनोपर पाशविक गोलीबारोकी खबरें आ रही हैं। इस समय ऐसे कानून तैयार किये जा रहे हैं जो कि वास्तवमें हडतालो को पूर्णरूपसे गैर-कानूनी करार दे देंगे। विधान परिषद की एक बैठकमें नेहरूने कम्युनिस्ट पार्टीको जो कि अब भी अर्ध गैर-कानूनी परिस्थितियोंमें काम कर रही है गैर-कानूनी कर देनेकी धमकी दी। अपनी विदेशी नीति में हिन्दुस्तान की शासक-मण्डली अंग्रेज-अमरीकी गुट के मालिको का हुक्म बजा रही है। जनता की मांगो की अवहेलना करके आज्ञाकारी ढंग से उन्होंने डोमीनियन की हैसियत से, और फिर ब्रिटिश साम्राज्य के अन्दर, रहने की रजामन्दी जाहेर कर दी है। दक्षिण-पूर्व एशिया के देशो का एक गुट कायम करने और प्रशान्त (पैसिफिक) पैक्ट के बनने की कार्रवाइयों में वे सक्रिय भाग ले रहे हैं।

ट्रेड यूनियन आन्दोलन के अन्दर हिन्दुस्तानी पूंजीपति वर्ग और उसके दलाल अंग्रेज-अमरीकी प्रतिक्रियावादियों की योजनाओंको कार्यान्वित कर रहे हैं

और दक्षिण-पूर्वी एशिया के देशों के मजदूर वर्ग के आन्दोलन में फूट डालने के काम मे उन्होने पहल कदमी की है। ट्रेड यूनियनों के एशियाई संघ की स्थापना राष्ट्रीय काग्रेस द्वारा संगठित की गयी प्रतिक्रियावादी इण्डियन नेशनल ट्रेड यूनियन काग्रेसकी सीधी और सक्रिय शिरकतसे हुई थी।

तथ्य इस बातको अकाट्य रूपसे साबित कर देते हैं कि पूर्वी एशिया के देशो में उत्पीडित जनता के राष्ट्रीय मुक्ति आन्दोलनके खिलाफ, उन ताक़तों के खिलाफ जो स्थायी जनवादी शान्तिकी समर्थक हैं, तमाम प्रतिक्रियावादी तत्वों को इकट्ठा करके अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादियोंके दलालो की भूमिका करनेका काम हिन्दुस्तान के बड़े पूंजीपति वर्गने राजीखुशीसे अपने ऊपर ले लिया है।

इसलिये, भारतीय डोमीनियन के कुछ प्रमुख राजनीतिज्ञों द्वारा हिन्दुस्तान के एक "स्वतंत्र" या "तटस्थ" वैदेशिक नीति पर चलने के सम्बंध में, अन्तरराष्ट्रीय सम्बंधों के क्षेत्रमे खास तौर से उसके द्वारा एक "तीसरे" मार्गका अनुसरण करने के सम्बंध मे दिये गये वक्तव्य बिल्कुल ही कायल नहीं करते। इस सब बात का उद्देश्य आम जनता को ठगना और देशके भीतर और बाहर के जनमत को धोका देना है। वास्तविक अमलमे, हिन्दुस्तान और पाकिस्तान दोनोंके प्रतिक्रियावादी हल्के अपने देशोंको अंग्रेज—अमरीकी साम्राज्यवादी गुटके पिछलगुओं की भूमिका के लिये तैयार करने के मार्ग पर चल रहे हैं। हिन्दुस्तान के कुछ पूंजीवादी पत्रकारों तक को इस बात को मानने के लिये मजबूर होना पड़ा था कि वह "बीचका मार्ग", जिसका अपनी अन्तरराष्ट्रीय नीतिमें हिन्दुस्तान अनुसरण करता है, पश्चिमी ताकतों और उनके पिछलगुओं की नीतिसे बहुत ही कम भिन्न हैं।

हिन्दुस्तान को अंग्रेज-अमरीकी गुटके साथ बँधा रखने के पूंजीवादी हथकण्डों का हिन्दुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टी दृढ़तापूर्वक भण्डाफोड़ कर रही है। कम्युनिस्ट पार्टीने हिन्दुस्तानको ब्रिटिश साम्राज्यके अन्दर बनाये रखने के तथाकथित लन्दन समझौते का आगे बढ़कर विरोध किया है और इस समझौते को हिन्दुस्तान को अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्यवादी गुट का पिछलगुआ बनाने के मार्ग मे एक और आगे कदम बताया है। कम्युनिस्ट पार्टी ने बताया है कि दक्षिण-पूर्वी एशिया का गुट और साम्राज्यवादियों द्वारा बनाया गया पैसिफिक पैक्ट आक्रमणकारी उत्तरी एटलाटिक पैक्ट का पूरक है, और दक्षिण-पूर्वी एशिया के देशों में उठते हुए राष्ट्रीय आजादी के आन्दोलनों के खिलाफ संघर्ष करने के लिये एक अस्त्र है और सोवियत समाजवादी प्रजातंत्र संघ के ऊपर हमला करने के लिये पूर्व में एक अड्डा बनाने की तैयारी है। कम्युनिस्ट पार्टी जोर देकर कहती है कि हिन्दुस्तान की मेहनतकश जनता विश्व प्रतिक्रिया के खिलाफ संघर्ष में सोवियत संघ को प्रमुख शक्ति मानती है और सोवियत संघके नेतृत्व में चलने वाले जनवादी पक्ष में दृढ़ता पूर्वक सम्मिलित हो रही है।

हिन्दुस्तान और पाकिस्तान दोनो मे स्थायी शान्ति और जनवाद के लिये और युद्ध की आग भडकानेवाले अंग्रेज-अमरीकियों और उनके बगल-बच्चों के खिलाफ जनता का आन्दोलन दिनोंदिन अधिकाधिक व्यापक होता जा रहा है। हाल ही मे शान्ति की रक्षा के लिये हुई फीरोजाबाद की एक बड़ी सभा मे निम्न प्रस्ताव पास किया गया था :

> "शान्ति और जनवाद के सबसे बड़े रक्षक, सोवियत संघ के विरुद्ध हिन्दुस्तान के मजदूर कभी, किन्हीं भी परिस्थितियोंमे हथियार नहीं उठायेंगे। साम्राज्यवादी अगर हमारे देशको सोवियत संघके ऊपर हमला करनेका एक अड्डा बनाने की कोशिश करेंगे तो हिन्दुस्तानकी जनता उन्हे मुँहतोड जवाब देगी। हिन्दुस्तान का मजदूर वर्ग तमाम दुनिया के वर्ग के साथ-साथ शान्ति, जनवाद और समाजवाद के लिये लड़ेगा।" (**प्रावदा, १९ अगस्त, १९४९**)

हिन्दुस्तानके बडे पूंजीपति वर्गके प्रतिक्रिया और साम्राज्यवादके शिविरमें अन्तिम रूपसे चले जानेसे यह बात नहीं खतम हो जाती कि साम्राज्यवाद और हिन्दुस्तान मे उसके मित्रोंके खिलाफ़ संघर्ष में राष्ट्रीय पूँजीपति वर्गके वैयक्तिक दल किसी न किसी समय, किसी न किसी कालमे, अब भी, जनवादी शक्तियोंके सह-यात्री बन सकते हैं। सबसे पहले उनमें पूंजीपति वर्गके वे तत्व आते हैं जिनके हित उस विदेशी पूंजीसे जो अधिकाधिक मात्रामें देशमे बढ़ती चली आ रही है विशेष रूपसे खिलाफ हैं। उनमें उन जातीय (राष्ट्रीय) प्रदेशोंके उठते हुए पूंजीवादी भी आते हैं जो अपने विकासमें अधिक पिछडे हुए हैं। पहले ही बन चुके इजारेदार दलोंके प्रभुत्वसे ये पूंजीवादी असन्तुष्ट होते हैं। साथही साथ इस चीजको भी ध्यानमें रखना जरूरी है कि पूंजीवादके आम संकटके अत्यधिक तीव्र हो जानेकी वर्तमान परिस्थितियोंके अन्तर्गत, जब कि अन्तरराष्ट्रीय पैमाने पर और अलग-अलग प्रत्येक पूंजीवादी देशकी सीमाओं के अन्दर, दोनो जगह, वर्ग शक्तियों का ध्रुवीकरण खास तौरसे तीक्ष्ण हो रहा है, हिन्दुस्तानी पूंजीपतियों के इन विरोधी स्तरो को साम्राज्य-वाद-विरोधी शिविर के विश्वसनीय या स्थायी सदस्य किसी प्रकार नही माना जाना चाहिए।

हिन्दुस्तान के बड़े पूंजीपति वर्ग के अन्तिम रूप से अंग्रेज-अमरीकी साम्राज्य-वादियो की खिदमत में चले जाने के साथ घनिष्ट रूपसे सम्बंधित भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की—जिसका नेतृत्व हमेशा पूंजीपतियो और नरमदली जमींदारों के हाथमे रहा है —नीति पर भी विचार करना आवश्यक है। वर्तमान कालमें राष्ट्रीय कांग्रेस अन्तिम रूप से हिन्दुस्तान के बड़े पूंजीपतियों, जमींदारो, और सामन्ती नरेशो के प्रतिक्रियावादी गुट की पार्टी बन गयी है। इस गुट के अन्दर पूंजीवादियों की प्रमुख स्थिति कायम है।

जनता के अन्दर राष्ट्रीय कांग्रेस का अब भी कुछ असर है, इस चीज को न देखना असंभव है। आंशिक रूप से उसका कारण परम्पराको कहा जा सकता है, क्योंकि एक लम्बे काल तक कांग्रेसको हिन्दुस्तान में ब्रिटिश साम्राज्यवादकी नीति का काफी विरोधी माना जाता था। आंशिक रूप से उसका कारण कांग्रेसी नेताओं की राष्ट्रीय लेक्चरबाजी है जिसके ज़रिए वे ब्रिटिश साम्राज्यवाद के साथ अपने समझौते को ढँकने की कोशिश कर रहे हैं। लेकिन राष्ट्रीय कांग्रेस की प्रतिक्रियावादी नीतिने मजदूरों के अन्दर अधिकाधिक असन्तोष और गुस्से को जगाना शुरू कर दिया है। राष्ट्रीय कांग्रेस की पूंजीवादी-जमींदारवादी नेताशाही की प्रतिक्रियावादी और विश्वासघातिनी भूमिका का और प्रतिक्रियावादी गांधीवाद का पर्दाफाश होने के साथ-साथ जनता के ऊपर राष्ट्रीय कांग्रेस का असर भी अधिकाधिक तेज़ीसे मिटता जा रहा है।

हिन्दुस्तान के मजदूरों के व्यापक जन-समुदाय के सामने यह बात अधिकाधिक स्पष्ट होती जा रही है कि राष्ट्रीय आजादी के आन्दोलन का नेता बनने की जिम्मेदारी केवल मजदूर वर्ग के ऊपर है और केवल उसी के नेतृत्व मे चलकर मेहनतकश जनता की फ़तह को गारण्टी हो सकती है।

[सोवियत पत्रिका,
"**अर्थशास्त्र की समस्याएँ,**"
संख्या ८ से उद्धृत]

★

(२ रे पृष्ठ का शेष)

अंक ८ नवम्बर, ४९

३६. अक्तूबर क्रान्तिका अन्तरराष्ट्रीय स्वरूप; ३७. चीनमें जनताकी जनवादी क्रान्ति की महान विजय; ३८. सोवियत संघकी कम्युनिस्ट पार्टीके संगठनके सिद्धान्त; ३९. हर विलयम पीक और हर ऑटो ग्रॉटेवौलके नाम कॉ. स्तालिन का संदेश, ४० जर्मन जनवादी जनतंत्र की स्थापना का ऐतिहासिक महत्व; ४१. विश्व शांतिका रक्षक और पहरुआ सोवियत रूस;—भारत में भाषा की समस्या (गतांक से आगे)

अंक ९ दिसम्बर, ४९

४२. कॉ स्तालिन विश्व सर्वहारा के महान नेता ४३ सोवियत संघकी कम्युनिस्ट (बोल्शेविक) पार्टी की केन्द्रीय कमिटी द्वारा कॉ स्तालिनका अभिनन्दन. ४४ स्तालिन का शांति आह्वान: ४५ शांति, जनवाद और समाजवादका आधार-स्तम्भ सोवियत रूस, ४६ अक्तूबर समाजवादी क्रान्तिका चीनी क्रान्ति पर प्रभाव; —भारत में भाषा की समस्या (गतांकसे आगे);

अंक १० जनवरी, ५०

४७ कॉ. स्तालिन की ७० वीं वर्ष-गांठ के अवसर पर "**जनवादी**" के सम्पादक-मण्डल का अभिनन्दन प्रस्ताव , ४८. लेनिन—रूसी कम्युनिस्ट पार्टीके संगठनकर्त्ता और नेता, ४९ अ भा. शांति-सम्मेलन का ऐतिहासिक महत्व, ५०. गांधीवादका वर्गसार ५१ मजदूर वर्ग के एके के लिये संघर्ष—कम्युनिस्ट पार्टियोंका सबसे जरूरी काम ; ५२ नये साल में—नयी कामयाबियों की तरफ,

अंक ११ फरवरी ५०

५३. लेनिनवाद—विश्व सर्वहाराके संघर्षका फरहरा, ५४ औपनिवेशिक क्रान्तियाँ और स्तालिन के सिद्धान्त , ५५ मार्क्स द्वारा प्रजातंत्री विधान की आलोचना, ५६ राजभाषा के बारेमें विधान-परिषद्का फैसला ; ५७ मार्क्सवाद—लेनिनवाद को स्तालिन की देन , ५८. अन्तरराष्ट्रीय कम्युनिज़्म की नयी जीतो की ओर ५९ शांति और आज़ादी की लड़ाई में फ्रांसीसी कम्युनिस्टो के काम ६० पोलैण्डमें क्रान्तिकारी जागरूकताकी लड़ाई

अंक १२ मार्च, ५०

६१ कार्ल मार्क्स—फ्रे० एंगेल्स, ६२. लेनिन-स्तालिनके अजेय झंडेके नीचे कम्युनिज्मकी ओर ६३. कम्युनिस्ट पार्टियोंके विकासका नियम—आलोचना और आत्मालोचना ६४ पूंजीवादी दुनिया आर्थिक संकटकी छाया में ६५ चीनी जनताकी विजयका ऐतिहासिक महत्व ६६ सोवियत-चीन सन्धि अमर हो !

पी. एम. कौल द्वारा न्यू एज प्रि. प्रेस, १९० बी, खेतवाडी मेनरोड, बम्बई ४ में मुद्रित और " जनवादी " आफिस, राजभवन, सैण्डहर्स्ट रोड, बम्बई ४ से प्रकाशित और प्रचारित।